महात्मा गांधी

पूर्णाहुति

प्रथम खण्ड

लेखक

प्यारेलाल

अनुवादक

रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मंदिर

अहमदाबाद - १४

अर्पण

महादेव देसाईको

मूक दरिद्र-नारायणोके अन्तरमें वसनेवाले प्रभुके सिवा अन्य किसी ईश्वरको म नहा पहचानता। और म इस मूक जनताकी सेवाके द्वारा ही परमेश्वरको सत्यके रूपमें अथवा सत्यको परमेश्वरके रूपमें पूजता हू।

महात्मा गाधी

प्रकाशकका निवेदन

'महात्मा गांधी पूर्णाहुति' का यह प्रथम खण्ड गांधीजीके नि॰ दिवसके अवसर पर हिन्दीमें भारतकी जनताके समक्ष प्रस्तुत करते हुए आनन्द होता है। गांधीजीके जीवनके अंतिम, रोमांचक और सबसे यश भागका निरूपण करनेवाले 'महात्मा गांधी . दि लास्ट फेज' नामक श्री प लालके बृहद् ग्रन्थका यह हिन्दी अनुवाद है। मूल अंग्रेजी ग्रन्थ दो बृहदा खण्डोंमें प्रकाशित हुआ है। पाठकोंकी सुविधाकी दृष्टिसे हिन्दी अनुवादको खण्डोंमें प्रकाशित करनेकी हमारी योजना है। अंग्रेजी ग्रन्थका भारतमें विदेशोंमें हार्दिक स्वागत हुआ है। आशा है, इस हिन्दी संस्करणका भी दे जनताकी ओरसे वैसा ही स्वागत होगा।

इस पुस्तकमें आये हुए काव्यांशोंका हिन्दी पद्यानुवाद श्री गो॰ व्यासने किया है, जिसके लिए हम उनके अत्यन्त आभारी हैं।

२६–१–'६५

प्रस्तावना

इस ग्रथके लेखकका कोई परिचय देनेकी आवश्यकता नही। वे लम्बे समय तक महात्मा गाधीके निजी सचिव और महादेव देसाईकी मृत्युके बाद महात्मा गाधीके 'हरिजन' साप्ताहिकोके सम्पादक रहे थे। 'यग इडिया' और 'हरिजन' मे लिखित अपने लेखो द्वारा और गाधीजीके जीवन-कालमे तथा उसके वाद प्रकाशित गाधीजीसे सम्वन्धित अपनी पुस्तको द्वारा उन्होने यह ख्याति प्राप्त कर ली है कि वे गाधीजीके जीवन और उनके दर्शनके विश्वसनीय और प्रमाणभूत इतिहासकार तथा भाष्यकार है। प्रस्तुत ग्रथमे महात्मा गाधीकी जीवन-यात्राके अतिम भागका निरूपण किया गया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ महात्माजी द्वारा लिखी हुई 'सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा' नामक पुस्तककी पूर्ति करता है। उस पुस्तकका सम्बन्ध अधिकतर गाधीजीके जीवनके उस भागसे है, जिसे उनका निर्माण-काल कह सकते है। उस समय वे अपने भावी महान कार्यके लिए तैयारी कर रहे थे। प्रस्तुत ग्रन्थमे उनके जीवनके अन्तिम वर्षोकी कथा लिखी गई है, जव कि उनके जीवन भरके सारे प्रयोगोके परिणामोकी कडीसे कडी और अन्तिम परीक्षा हुई थी।

गाधीजीको जिन वाधाओका सामना करना पडा, वे केवल पार्थिव अथवा भौतिक ही नही थी; अधिकतर वे वाधायें नैतिक और आध्यात्मिक स्तरकी थी। ये वाधायें हमेशा उनके तथाकथित विरोधियोकी ओरसे ही नही आई, परन्तु अनेक अवसरो पर उन लोगोकी ओरसे आई, जिनके साथ उन्होने दक्षिण अफ्रीकासे भारत लौटनेके वाद तीस वर्षकी लम्बी अवधि तक कार्य किया था और जिन पर उन्हे ऐसा विश्वास था कि उनके देहान्तके वाद वे उनकी जलाई जोतको जलती रखेगे; जिन्हे गाधीजी छोड़ नही सकते थे और जिनका काम गाधीजीके विना नही चल सकता था। इस ग्रन्थमे जो कुछ लिखा गया है उसका सार देनेका प्रयत्न न तो सभव ही है और न वाछनीय है। कुछ उदाहरणो द्वारा मैं इस वातका सकेतमात्र यहा करूगा कि यह कार्य कितना कठिन और नाजुक था और ग्रथकारने उसे कितने सुन्दर ढगसे पूरा किया है, जिससे इस ग्रथमे पाठकोको जो अति स्वादिष्ट भोजन मिलनेवाला है उसके लिए वे तैयार हो जाय।

सत्याग्रहका सिद्धान्त कोई नया सिद्धान्त नही है। प्राचीन कालमे पतजलिने विस्तारसे इसका प्रतिपादन और निरूपण किया था। गाधीजीने केवल

प्रस्तावना

इस ग्रथके लेखकका कोई परिचय देनेकी आवश्यकता नही। वे लम्बे समय तक महात्मा गाधीके निजी सचिव और महादेव देसाईकी मृत्युके बाद महात्मा गाधीके 'हरिजन' साप्ताहिकोके सम्पादक रहे थे। 'यग इडिया' और 'हरिजन' मे लिखित अपने लेखो द्वारा और गाधीजीके जीवन-कालमें तथा उसके बाद प्रकाशित गाधीजीसे सम्बन्धित अपनी पुस्तको द्वारा उन्होने यह ख्याति प्राप्त कर ली है कि वे गाधीजीके जीवन और उनके दर्शनके विश्वसनीय और प्रमाणभूत इतिहासकार तथा भाष्यकार है। प्रस्तुत ग्रथमे महात्मा गाधीकी जीवन-यात्राके अतिम भागका निरूपण किया गया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ महात्माजी द्वारा लिखी हुई 'सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा' नामक पुस्तककी पूर्ति करता है। उस पुस्तकका सम्बन्ध अधिकतर गाधीजीके जीवनके उस भागसे है, जिसे उनका निर्माण-काल कह सकते है। उस समय वे अपने भावी महान कार्यके लिए तैयारी कर रहे थे। प्रस्तुत ग्रन्थमे उनके जीवनके अन्तिम वर्षोंकी कथा लिखी गई है, जब कि उनके जीवन भरके सारे प्रयोगोके परिणामोकी कडीसे कड़ी और अन्तिम परीक्षा हुई थी।

गाधीजीको जिन बाधाओका सामना करना पडा, वे केवल पार्थिव अथवा भौतिक ही नही थी; अधिकतर वे बाधाये नैतिक और आध्यात्मिक स्तरकी थी। ये बाधायें हमेशा उनके तथाकथित विरोधियोकी ओरसे ही नही आई, परन्तु अनेक अवसरो पर उन लोगोकी ओरसे आई, जिनके साथ उन्होने दक्षिण अफ्रीकासे भारत लौटनेके बाद तीस वर्षकी लम्बी अवधि तक कार्य किया था और जिन पर उन्हे ऐसा विश्वास था कि उनके देहान्तके बाद वे उनकी जलाई जोतको जलती रखेगे, जिन्हे गाधीजी छोड नही सकते थे और जिनका काम गाधीजीके बिना नही चल सकता था। इस ग्रन्थमें जो कुछ लिखा गया है उसका सार देनेका प्रयत्न न तो सभव ही है और न वाछनीय है। कुछ उदाहरणो द्वारा मै इस बातका सकेतमात्र यहा करूगा कि यह कार्य कितना कठिन और नाजुक था और ग्रथकारने उसे कितने सुन्दर ढगसे पूरा किया है, जिससे इस ग्रथमे पाठकोको जो अति स्वादिष्ट भोजन मिलनेवाला है उसके लिए वे तैयार हो जाय।

सत्याग्रहका सिद्धान्त कोई नया सिद्धान्त नही है। प्राचीन कालमें पतजलिने विस्तारसे इसका प्रतिपादन और निरूपण किया था। गाधीजीने केवल

सत्याग्रहको अपने जीवनमें उतार कर ही नहीं परन्तु ऐसी कार्य पद्धतिका निर्माण करके जिससे जनता सामूहिक रूपमें उसका प्रयोग कर सके, तथा जनताको सत्याग्रहका उपयोग करना सिखाकर व्यक्तिगत और सामाजिक प्रश्न हल करनेकी सत्याग्रहकी संभावनाओंका दर्शन जगतको करा दिया था। यह वस्तु गांधीजीको बहुत बड़ा यश दिलानेवाली है। विभिन्न परिस्थितियों संयोगों, ध्येयों तथा प्रश्नों और विशेष रूपसे प्रत्येक उदाहरणमें सम्बन्धित मानव-सामग्रीके अनुसार सत्याग्रहकी कार्य-पद्धतिमें समय समय पर परिवर्तन करना पड़ता था। परन्तु मूलभूत सिद्धान्त तो सर्वत्र वही रहता था।

गांधीजीने सत्याग्रहके विस्तृत निरूपणके लिए शास्त्रीय ढंगकी कोई पुस्तक तो नहीं लिखी है परन्तु रोज रोज सामने आनेवाली और हल चाहनेवाली समस्याओंके सिलसिलेमें सत्याग्रहके प्रयोगों द्वारा उसके असंख्य प्रत्यक्ष उदाहरण अवश्य प्रस्तुत किये हैं। ये समस्याएं व्यक्तियोंसे भी सम्बन्ध रखती थीं और समाज देश तथा सारी मानव-जातिसे भी सम्बन्ध रखती थीं। शास्त्रीय पुस्तक लिखनेकी गांधीजीकी अनिच्छाका कारण सत्याग्रहका मूल स्वरूप था। सत्याग्रह एक सजीव सिद्धान्त है उसको किन्हीं निश्चित और अविचल सूत्रोंके रूपमें सार-तत्त्व नहीं दिया जा सकता। उसका विकास भी संयमको और जीवनकी एक विशिष्ट पद्धतिका अनुसरण करके ही साधना पड़ता है। उसमें सिद्धान्तोंको सही रूपमें समझनेकी जरूरत तो होती है किन्तु उससे भी अधिक जरूरत विभिन्न परिस्थितियों और समस्याओं पर उन सिद्धान्तोंको ठीक ढंगसे लागू करनेकी होती है। इसलिए सत्याग्रहके सिद्धान्तोंका इतना महत्त्व नहीं है जितना उसके अमलका है। गांधीजीने लिखा है सच तो यह है कि मेरे लेखोंको भी मेरे शरीरके साथ ही जला देना चाहिये। मैंने जो कुछ किया है वही सदा टिकेगा न कि वह जो मैंने कहा है या लिखा है। मैंने अक्सर यह कहा है कि हमारे सारे धर्मग्रंथ नष्ट हो जायें तो भी हिंदू धर्मका निष्कर्ष बतानेके लिए ईशोपनिषदका एक ही मंत्र पर्याप्त है। परन्तु यदि उसके अनुसार जीवन बितानेवाला कोई नहीं होगा तो वह मंत्र भी व्यर्थ होगा।

इसलिए गांधीजीने जो कुछ किया जिस तरह किया और जिसके लिए किया उसके एक सर्वग्राही अधिकृत और विस्तृत विवरणकी जरूरत है। जो निरूपण गांधीजीके छोटे और बड़े कार्योंका एक विविधतापूर्ण तथा सुरम्य दृश्य प्रस्तुत करे उसीमें महात्मा गांधीके जीवन तथा उपदेशोंका सच्चा हृदयको हिला देनेवाला जीवनदायी अद्भुत तथा सत्य शिव-सुन्दर चित्र देखनेको मिल सकता है। प्रस्तुत ग्रंथमें उन लोगोंके लिए जिनको इसमें रस है यह प्रयत्न किया गया है और एक ऐसे व्यक्तिके द्वारा किया गया

है, जिसे अपनी वर्णित घटनाओको प्रत्यक्ष देखने और जाननेका सौभाग्य मिला था और जिसमे उनका सही विवरण देने और व्याख्या करनेकी योग्यता और सूक्ष्म दृष्टि है।

उदाहरणके लिए, जीवनमे सत्य और अहिसाके सिद्धान्तको गाधीजी द्वारा उन समस्याओ पर लागू किये जानेकी वातको ही लीजिये, जो समाजके लगभग प्रत्येक नेताके सामने रोज-रोज आती है। गाधीजीमे अपना सग्राम स्वयको अलग रखकर अनासक्त भावसे चलानेकी अनोखी शक्ति थी। इससे विरोधी लोगोका विरोध धीरे-धीरे कम होता जाता था और अन्तमे उनके दिल जीत कर गाधीजी उन्हे अपना वना लेते थे। आखिरमे जीत या हारकी कोई भावना वाकी नही रहती थी और दोनो पक्ष एक ही सत्यको खोजने-वाले साथी वन जाते थे। इस कार्य-पद्धतिमें असफलता जैसी कोई चीज नही होती, प्रत्येक अनुभवसे एक नये सत्यका आविष्कार होता चलता है और सफलताकी ओर वढनेमें मदद मिलती है। यही कारण है कि गाधीजीकी सगतिमे किसीको निराशा या पराजयकी भावनाका कभी अनुभव नही होता था, परन्तु हमेशा यही अनुभव होता था कि प्रत्यक्ष असफलता और पीछे-हटके वावजूद हम उद्देश्यकी ओर वरावर आगे वढ रहे हैं।

एक और सार्वत्रिक सिद्धान्त, जो सत्य और अहिसाकी गाधीजीकी वुनि-यादी कल्पनाका ही एक पहलू है और जिसका गाधीजीके जीवन और उपदेशोके प्रत्येक अभ्यासीको वहुत ध्यानसे अध्ययन करनेकी जरूरत है, 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' के सूत्रमें प्रगट होता है। गाधीजीका कहना था कि मनुष्य यदि अहिसक जीवन-पद्धतिको सिद्ध करना चाहता हो और यदि उसका प्रयत्न वाछित दिशामे आगे वढता न दिखाई दे, तो उसका कारण उसे अपने ही भीतर ढूढना चाहिये। यही सत्य दूसरी अनेक कहावतोमे निहित है। जैसे, "दूसरोके साथ तुम वही करो जो तुम उनसे अपने साथ कराना चाहते हो।" "दूसरोके प्रति की गई वुराई अपने ही अनिष्टका रूप ले लेती है।" और अंतमें जुगका यह कथन देखिये . "आपके चित्तपट परसे जो कुछ अदृश्य हो जाय, उसके विरोधी पडोसीके गुप्त वेशमे वापिस लौटनेकी पूरी सभावना है। वहा वह अनिवार्य रूपमे आपके क्रोधको भडकायेगा और आपको आक्रामक वनायेगा। आपका सवसे कट्टर शत्रु स्वय आपके हृदयमे ही रहता है, यह जान लेना निश्चित ही ज्यादा अच्छा है।" परन्तु पाठक इस ग्रन्थके पृष्ठोमे देखेंगे कि इस सिद्धान्तको अपने जीवन तथा अपने कार्योमें वैज्ञानिक रीतिसे लागू करनेका कार्य तथा जव मनुष्यको अपना आगेका रास्ता वन्द दिखाई देता है और उसके सामने ठोस दीवार-सी खडी हो जाती है, ऐसे समय कार्यकी नई दिशाये खोलनेकी उस सिद्धान्तकी शक्ति प्रदर्शित करनेका कार्य गाधीजीने ही किया है।

उनकी कार्यपद्धतिका भारतमें सबसे पहला प्रयोग चम्पारनमें हुआ। और एक अर्थमें यह सबसे उल्लेखनीय प्रयोग था क्योंकि यह ऐसे समय हुआ था जब महात्मा गांधी सार्वजनिक जीवनमें उतरे। सहसा महान पुरुष नहीं हुए थे जितने वे बादमें बन गये। इस प्रसंगमें तो उनकी कार्यपद्धति परिपक्व अवस्थामें साफ़ नज़र दिखाई देती है। कोई सौ वर्ष पहलेसे निल्हे चम्पारनमें नीलकी खेती करते आ रहे थे। उससे रंग निकाला जाता था। ऐसा करते हुए उन्होंने जमींदारी और किसानोंसे सिर्फ़ लगानी जमीन ही नहीं हथिया ली थी बल्कि वे तरह तरहके अत्याचारी उपायोंसे उन्हें अपनी जमीनोंमें भी नीलकी खेती करनेको मजबूर करते थे। नतीजा यह होता था कि [illegible] उन्हें बड़ा मुनाफा होता था और किसानोंको दुःख और कष्ट भोगना पड़ता था। इसके विरुद्ध नाराजी प्रगट की जाती थी, आन्दोलन भी होता था। बीच बीचमें हिंसा भी फूट पड़ती थी और हत्या तथा अग्निकाण्डकी वारदातें भी होती थीं। परन्तु उनसे कोई फल नहीं निकला। जब किसानोंके निमंत्रण पर गांधीजी उनके कष्टोंकी जांच करने गये तो चम्पारन पहुंचकर पहली घोषणा उन्होंने यह की कि वे निलहोंको अपने दुश्मन नहीं समझते और उनका भला चाहते हैं। उस समय यह बात न सिर्फ़ किसानोंकी ही समझमें नहीं आई — क्योंकि उनके सामने अपने अन्यायपूर्ण और दीर्घकालीन लाभका सम्पूर्ण हानिका प्रश्न था — बल्कि हममें से भी बहुतोंकी समझमें नहीं आई। निलहोंको इस घोषणा पर भरोसा नहीं हुआ, बल्कि शंका भी हुई। परन्तु जैसे जैसे गांधीजीसे उनका सम्पर्क बढ़ता गया और वे गांधीजीको अधिकाधिक समझने गये वैसे वैसे उनका अविश्वास और सन्देह आनन्दयुक्त आश्चर्यमें बदलने लगा। और जब उस जांच-कमिटीका विवरण पूरा हुआ, जिसे सरकारने किसानोंकी शिकायतोंकी जांचके लिए नियुक्त किया था और जिसके महात्मा गांधी भी एक सदस्य थे तब तक तो निलहे गोरे गांधीजीको अपना सच्चा हितैषी मानकर उनका आदर करने लगे थे। बादकी घटनाओंने तो इसे असन्दिग्ध रूपमें सिद्ध भी कर दिया था। गांधीजीके व्यक्तिगत सम्पर्कके जादूके अलावा उन लोगों पर सबसे ज्यादा असर कमिटीके सदस्यकी हैसियतसे गांधीजीके आचरणका हुआ। पचासों बरसकी अदालती कारवाइयों और लगातार कई सरकारी अफसरोंकी रिपोर्टोंके आधार पर ऐसे बहुतसे प्रमाण सामने आये जिनसे निलहों और उनके गुमाश्तोंके विरुद्ध अत्याचार, भ्रष्टाचार और तानाशाहीकी लगभग प्रत्येक शिकायतका समर्थन होता था। और यदि जांच-कमिटी उन पर अपना निर्णय रिपोर्टमें दर्ज करती तो निलहे और उनके गुमाश्ते दोषी सिद्ध हुए बिना नहीं रह सकते थे। परन्तु गवाहोंकी कैफ़ियतें दर्ज हो जानेके बाद उन पर हो रही चर्चाके आरम्भ कालमें ही गांधीजीने कमिटीके निलहे प्रतिनिधिको निर्भय कर दिया था और

यह घोषणा करके उसका पूरा विश्वास प्राप्त कर लिया था कि उन्हे भूतकालसे इतना वास्ता नही है जितना वर्तमान और भविष्यसे है; और वे यह आग्रह नही करेगे कि जो शिकायते दर्ज की जाय उन पर कोई निर्णय दिया जाय। अगर नीलकी खेतीकी अत्याचारी प्रथा उठा ली जाय और निलहोके जुल्म वन्द हो जाय, तो इतनेसे उन्हे सन्तोष हो जायगा। भूतकालमे किसानोका जो निर्दय शोषण किया गया था, उसका भी पूरा मुआवजा दिलानेका गाधीजीका आग्रह नहीं था। उन्होने कहा कि भविष्यमें किसानोका ऐसा शोषण न हो सके, इसकी गारंटीके तौर पर किसानोसे जवरन् वसूल की गई रकमकी एक-चौथाई रकम भी वापस कर दी जाय, तो वे सन्तुष्ट हो जायगे। इसके फलस्वरूप ऐसा समझौता हो गया, जिससे दोनो पक्ष खुश हुए। किसानोको यह खुशी हुई कि नीलकी खेती और उसके साथ लगे हुए अत्याचार और उत्पीडनका अन्त हो जायगा; और निलहोको — दौलत तो वे पहले ही कमा चुके थे — यह खुशी थी कि वे अत्याचारी और उत्पीडकके रूपमे सारी दुनियाके सामने धिक्कारे नही जायगे और उन्होने गैर-कानूनी ढगसे जो रुपया वटोरा था वह साराका सारा उनसे उगलवाया नही जायगा। विधान-सभामे उनके प्रतिनिधिके समर्थनसे कानून पास हुआ। उन्होने किसानोके वच्चोकी शिक्षाके लिए खोले गये और चलाये जा रहे ग्रामीण स्कूलोके लिए आर्थिक मदद दी और एक-दोके सिवा अन्य सव निलहोने गाधीजीको दूसरी मदद भी दी। तीन-चार सालके भीतर यह देखकर कि दूसरी फसलोकी खेती नीलकी खेतीके वरावर लाभदायक नही है, निलहोने धीरे धीरे थोडी थोडी करके अपनी जमीन उन्ही काश्तकारोको वेच दी, जिन्हे वे लम्वे अर्सेसे सताते आ रहे थे और जमीनकी अच्छी कीमत पाकर उन्हे खुशी हुई। किसानोको अपनी जमीन वापस मिलने और निलहोके पजेसे छुटकारा पा जानेकी खुशी थी, और पहले जहा निलहोके विशाल और विलासपूर्ण वगले खडे थे वहा आज जिले भरमें किसानोके घर और मवेशियोके छप्पर दिखाई देते है।

जननेताओमें महात्मा गाधीका लगभग अनोखा स्थान इसलिए था कि वे अत्यन्त भिन्न और कभी कभी परस्पर विरोधी दृष्टिकोणोमें भी इस तरह सुमेल और सामजस्य करानेकी क्षमता रखते थे, जिससे समान ध्येयकी प्राप्तिमें वाधक वननेके वजाय वे एक-दूसरेके पूरक और सहायक वन जाते थे। काग्रेस सगठनमे उनसे मतभेद रखनेवाले अपने साथियोसे गाधीजी जिस तरह निवटते थे, उसमे उनके इस गुणका हमें एक उत्तम उदाहरण मिलता है। यह उदाहरण सभी सस्थाओके कार्यकर्ताओके लिए अच्छे मार्गदर्शकका काम दे सकता है, जहा वहुतोको एकसाथ काम करना पडता है और वुनियादी ढगके मतभेदोके वावजूद सवके पूरे सहयोगके विना काम नही चल सकता। १९२१ में सभी काग्रेसियो और खिलाफतवालोके वीच व्यावहारिक कार्यक्रमके वारेमें एकमत

था यद्यपि मूलभूत सिद्धान्तके विषयमें पूरी पूरी सहमति नही थी और वहुनाके मनमें तो शका भी थी। परतु १९२२ मे महात्मा गाधीके बद हो जानके बाद कामके व्यावहारिक कार्यक्रमके सम्बन्धमें स्पष्ट मतभेद सामने आये — खास तौर पर १९२० के सविधानके अनुसार चुनाव लडने और विधान-सभाओमें जानके प्रश्न पर। इससे काग्रेसमें फट पड गई। एक दल, जिसके नेता देशबन्धु चित्तरजन दास, पडित मोतीलाल नेहरू, नरसिंह चिंतामणि केल्कर एम० आर० जयकर हकीम अजमलखा और दूसरे स्वराज्यवादी थे विधान सभामें प्रवेश करनेका हिमायती था। दूसरा दल, जिसके नेता चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, सरदार वल्लभभाई पटेल और सेठ जमनालाल वजाज थे विधान-सभा प्रवेशका विरोधी था। दिसम्बर १९२२ में काग्रेसके गया अधिवेशनमें जिसके सभापति देशबन्धु दास थे, विधान-सभा प्रवेशका विरोध करनेवाला प्रस्ताव बडे बहुमतसे पास हुआ यद्यपि स्वय अध्यक्षने अपने भाषणमें विधान-सभा प्रवेशके पक्षमें जोरदार वकालत की थी। यह विवाद उस समय तक चलता रहा जब तक कि १९२३ के उत्तरार्द्धमें दिल्लीके विशेष काग्रेस अधिवेशनमें समझौता नही हो गया। उसके अनुसार जो लोग *विधान-सभाके चुनाव लडना चाहें उन्हे उसकी इजाजत दी गई बशर्ते वे* अपने बनाये हुए स्वराज्य-दलकी ओरसे लडें — न कि काग्रेसकी ओरसे और चुनावमें काग्रेसका रुपया काममें न लिया जाय। नवम्बर दिसम्बर १९२३ के *चुनाव काग्रेसवालोने स्वराज्य दलकी ओरसे लडे और वे जीते।* जब गभीर बीमारीके कारण १९२४ के शुरूमें महात्मा गाधी जेलसे छूटे, तो वे दोनो दलोमें समझौता करानेके काममें जुट गये यद्यपि स्वय उनकी यह पक्की राय थी कि काग्रेसियोको विधान-सभाओमें नही जाना चाहिये और वे तथाकथित अपरिवर्तनवादियोसे सहमत थे। अहमदाबादमें हुई अखिल भारतीय काग्रेस कमिटीकी बैठकमें सीधे इस सवाल पर तो मत नही लिया गया परतु एक और प्रश्न पर लिया गया जिसे देशबन्धु दास और पडित मोतीलाल नेहरूका समर्थन प्राप्त था। वे अपने समर्थको सहित सभासे बाहर चले गये और उनकी अनुपस्थितिमें उनका प्रस्ताव थोडेसे बहुमतसे गिर गया। परतु महात्मा गाधीने, वैधानिक अधिकार होते हुए भी विजयका दावा करनेके बजाय यह घोषणा की कि यह प्रसग उनके लिए गर्वका नही किन्तु विनम्रताका है — उनकी जीत नही बल्कि हार हुई है। कुछ महीने बाद देशबन्धु दासका अव सान हो जाने पर एक और कदम गाधीजीने उठाया। उन्होने यह घोषणा की कि *पार्लमेटरी प्रवृत्ति अब घर कर चुकी है और इसे स्वीकार करके* उन्होने काग्रेस सगठनको विधान-सभा प्रवेशका कार्यक्रम चलानेके लिए स्वराज्यवादियोके सुपुर्द कर दिया और खुदने रचनात्मक कार्य सभाल लिया। उन्होने खादीको फिरसे जीवित करने और फैलानेके लिए अखिल भारत चरखा-सघकी स्थापना

की। नतीजा यह हुआ कि १९२६ के आगामी चुनावोमे काग्रेसको १९२३ से ज्यादा सफलता मिली। साथ ही खादीके पुनरुज्जीवन और प्रसारका काम वडी तेजीसे आगे वढा। दोनो दलोने अपने अपने दृढ विचारोको छोडे विना एक-दूसरेकी सहायता की। वादमे जव सत्याग्रह करनेका प्रसग आया तव जो लोग काग्रेसकी तरफसे विधान-सभाओमे गये थे वे वाहर आ गये और उन्होंने सत्याग्रहके कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेके लिए महात्मा गांधीको कांग्रेसका सर्वाधिकारी (डिक्टेटर) वनानेके पक्षमे अपना मत दिया।

१९४०–४१ में ऐसी ही किन्तु कुछ अधिक कठिन परिस्थिति उत्पन्न हुई, जव भारतको ब्रिटिश सरकारने दूसरे महायुद्धके समय युद्धके समर्थक देशके रूपमें घोपित कर दिया। ब्रिटिश सरकार चाहती थी कि काग्रेस उसके युद्ध-प्रयत्नोका पूरा समर्थन करे। काग्रेसके भीतर ऐसे अनेक लोग थे जो सपूर्ण समर्थन देनेको तैयार थे, वगर्ते कि ब्रिटिश सरकार भारतको सत्ता तथा जिम्मेदारी सौप दे और शासनमें — जिसमे प्रतिरक्षा और युद्ध-प्रयत्न शामिल माने जाये — पूरा हिस्सा दे। महात्मा गाधी केवल नैतिक समर्थन देनेको तैयार थे और किसी भी हालतमें जन-धनकी सहायता देनेके विरुद्ध थे। काग्रेस कार्यसमितिने इस वातकी चर्चा की और जव गाधीजी अपने साथियोको अपनी रायका नही वना सके, तो वे काग्रेस कार्यसमितिकी चर्चाओसे अलग हो गये। इस तरह गाधीजीने उन लोगोके लिए अपना कार्य आगे वढानेकी सुविधा कर दी, जिनके साथ उनका मतभेद था। न तो गाधीजीने उनके कार्यमें कोई हस्तक्षेप किया और न अपने विचारोसे सहमत होनेवाले लोगोकी ओरसे काग्रेस महासमितिकी वैठकमे उनके कार्यका विरोध किया। परन्तु ब्रिटिश सरकारने काग्रेसका प्रस्ताव नही माना, इसलिए काग्रेसके सहयोगका प्रश्न पैदा ही नही हुआ। किन्तु इस अवगणनाके वावजूद काग्रेसमे वहुतोको यह आशा वनी रही कि जव युद्ध तेज होगा तव ब्रिटिश सरकार ढीली पडेगी और काग्रेसकी शर्तो पर काग्रेसका सहयोग लेगी। १९४२ के शुरूमें सर स्टैफर्ड क्रिप्सके साथ इसी आशाके आधार पर चर्चा हुई थी। लेकिन ढीला पडनेके वजाय ब्रिटिश सरकारका रवैया और भी कड़ा हो गया और युद्ध-प्रयत्नके खिलाफ भारतीय विरोध 'न एक भाई न एक पाई' के नारेके रूपमें प्रगट हुआ। व्यक्तियोने ब्रिटिश युद्ध-प्रयत्नमे किसी भी तरहकी मदद न देनेकी दूसरोको सलाह देकर सत्याग्रह किया और उसके लिए वे जेल गये। इस व्यक्तिगत सत्याग्रहके उम्मीदवारोका चुनाव गाधीजी स्वय करते थे। उनमे से अधिकतर लोग जनताके चुने हुए प्रतिनिधि थे — जैसे विधान-सभाओके, जिला वोर्डो और म्युनिसिपैलिटियोके, काग्रेस कमिटियोके और दूसरी निर्वाचित सस्थाओके सदस्य। इससे यह प्रगट होता था कि भारतकी सारी जनता सरकारके युद्ध-प्रयत्नके विरुद्ध है। क्रिप्स-मिशनकी सधिवार्ताके असफल

होनेके बाद इस आंदोलनका परिणाम १९४२ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलनमें आया। उस समय महात्मा गांधीको फिरसे कांग्रेसका नेतृत्व संभालनेके लिए कहा गया और उन्होंने उसे संभाल लिया। इस आन्दोलनके फलस्वरूप कांग्रेसियों और कांग्रेसके समर्थकोंकी एकसाथ बहुत बड़ी संख्यामें गिरफ्तारियां हुई और वे १९४५ में युद्धका अंत होने तक जेलके सींकचोंमें बन्द रहे।

महात्मा गांधीका अपने साथियोंसे मौलिक मतभेद था। अहिंसाके प्रश्न पर गांधीजी कोई समझौता करनेको तैयार नहीं थे। भले उसमें स्वराज्यका आभास दिलानेवाली कोई वस्तु मिलती हो तो भी एक हिंसक युद्धके समर्थनमें किसी भी प्रकारके प्रयत्नमें भागीदार बननेसे उन्होंने इनकार कर दिया। परन्तु अपने सिद्धान्त पर डटे रहते हुए भी उन्होंने अपने साथियोंको उनकी बुद्धिके अनुसार देशकी सेवा करनेका पूरा मौका दिया। इससे एक परिणाम यह निकला कि दोनोंके बीच न सिर्फ आपसी विश्वास ज्योंका त्यों टिका रहा और अत्यन्त घनिष्ठ और निजी सम्बन्ध बने रहे, बल्कि जिनका गांधीजीसे मतभेद था वे भी अन्तमें समझ गये और कुछ कालके लिए अपना कार्यक्रम छोड़ कर उनके नेतृत्वमें काम करने लगे।

देशके विभाजनके प्रश्न पर अपने स्वयंसे भी गांधीजीने साथियोंकी रायके लिए ऐसे ही आदरका परिचय दिया था, यद्यपि उनके साथ गांधीजीका तीव्र मतभेद था। गांधीजी भारतके विभाजनके कट्टर विरोधी थे और उसे वे भारतका अंग-छेदन कहते थे। सारे कांग्रेसी भी — चाहे वे हिन्दू हों, मुसलमान हों या किसी दूसरे धर्मके अनुयायी हों — दो राष्ट्रोंके सिद्धांत और भारतके विभाजनकी मांगके प्रबल विरोधी थे। परन्तु कांग्रेसी नेताओंको अंतरिम सरकारमें जो अनुभव हुआ उसके बाद चित्र बदल गया। महात्मा गांधीकी अनुमतिसे ब्रिटिश सरकारके साथ हुए सफल वार्तालापके परिणाम-स्वरूप सितम्बर १९४६ में कांग्रेसने पद-ग्रहण किया और कांग्रेसी नेता केन्द्रीय सरकारके मंत्री बने। देशके विभाजनके लिए मुस्लिम लीगका आन्दोलन जारी रहा और उसके फलस्वरूप देशके अलग अलग हिस्सोंमें गंभीर कौमी दंगे हुए। बादमें जब मुस्लिम लीग केन्द्रीय सरकारमें सम्मिलित हुई तब उसके सदस्योंने जिन विषयोंमें कोई मतभेद नहीं था उनमें भी कांग्रेसी मंत्रियोंके साथ सहयोग करनेसे इनकार कर दिया। केन्द्रीय मंत्रि-मण्डलमें मुस्लिम लीगी सदस्य अपने कांग्रेसी साथियोंके रास्तेमें हमेशा रुकावटें डालते रहे। केन्द्रीय मंत्रि-मण्डलमें एकरसताके इस अभावके कारण प्रान्तोंमें शान्ति और व्यवस्था जब खतरेमें पड़ती तो केन्द्रीय सरकार उसकी रक्षा करनेमें असमर्थता महसूस करती थी। ऐसी परिस्थितियोंमें कांग्रेसके जो नेता सरकारमें थे उन्होंने अनुभव किया कि शासन चलाना असंभव है। उन्हें लगा कि ऐसी परिस्थितियोंमें मुस्लिम लीगको पाकिस्तान मिलता हो तो भले मिल जाय।

विभाजनके वाद जो प्रदेश भारतमे रह जायंगे, कमसे कम उनमे तो वे सक्रिय और सक्षम रूपमे शासन चला सकेंगे। मुस्लिम लीगके प्रचारके कारण अनेक स्थानो पर जो सामूहिक हिंसा और हुल्लडवाजी भड़क उठी और उसके जवावमे जो हिंसा हुई उससे गाधीजीको अपार पीडा और यातना हुई। परन्तु वे इसके लिए तैयार नही हुए कि एक राष्ट्रका सिद्धान्त छोडकर उसके वजाय मुस्लिम लीग द्वारा प्रतिपादित दो राष्ट्रोका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाय अथवा दगोको दवा देनेके लिए सेनाकी सहायता ली जाय। उनका कहना यह था कि दगो और तूफानोका नियत्रण जननेताओको सव जातियोके लोगोकी सद्भावनाओको जाग्रत करके और जरूरत पडे तो इस पागलपनको दवानेकी कोशिशमे अपने आपको मिटा कर भी करना चाहिये। उन्हे विश्वास था कि गलत सिद्धान्त पर आधारित और अत्यन्त आपत्ति-जनक उपायो द्वारा किया गया देशका विभाजन हिन्दुओ और मुसलमानोको —भारत और पाकिस्तान दोनोको —ऐसी हानि पहुचायेगा, जिसकी क्षतिपूर्ति कभी नही हो सकती। परन्तु जो नेता सरकारमे रहकर देशका शासन चलाते थे, उन्हीकी निर्णय-शक्ति पर गाधीजीने इस प्रश्नको छोड दिया था। और एक वार जव उन लोगोने विभाजनके पक्षमें निर्णय कर लिया तो फिर गाधीजीने उनका विरोध नही किया, यद्यपि अपनी खुदकी रायको उन्होने न तो कभी उनसे छिपाया, और न कभी देशसे छिपाया। अखिल भारतीय काग्रेस कमिटीकी बैठकमे इस प्रश्न पर विचार किया गया तव उन्होने पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेलके रुखका जोरोसे समर्थन किया और जो लोग पुराने काग्रेसी नेताओके खिलाफ वगावत करना चाहते थे उनका विरोध किया। गाधीजी निष्क्रिय भी नही रहे। अपने ही साथियोके विरुद्ध प्रचार करने और दलवन्दी खडी करनेके वजाय उन्होने विभाजनके पहले और उसके वाद हुई देशकी और विशेष रूपसे साम्प्रदायिक एकता तथा शान्तिकी व्यापक हानिको दूर करनेका कार्य अद्भुत शक्तिके साथ आरम्भ कर दिया। उनके शब्द आदेश वन गये, और जहा पुलिस और सेना भी लाचारी महसूस करती या खूनकी नदी वहानेके वाद ही सफल हो पाती, वहां गाधीजीकी उपस्थिति ही तूफानकी आगको रोकनेके लिए पर्याप्त सिद्ध हुई। इस ग्रन्थमें विशेष रूपसे गाधीजीके जीवन और कार्यके इस अतिम भागका ही निरूपण किया गया है, और यह कार्य सू म दृष्टि, समझ और सयमके साथ तथा निश्चितताका अतिशय ध्यान रख कर किया गया है।

भारतने स्वाधीनता तो प्राप्त कर ली, परन्तु अपनी एकता व अखडताकी वलि देकर। यह वह स्वतत्रता नही थी, जिसे गाधीजी या काग्रेसने सिद्ध करनेका वीडा उठाया था। परन्तु गाधीजीको इसमें निराशाका कारण दिखाई नही दिया, असफल अहिंसा नही रही, परन्तु अहिंसाका पालन करनेमें भारतकी

जाता असफल रही अथवा यो कहिये कि अपनी कल्पनाकी अहिंसा जनतामें उत्पन्न करनेमें गाधीजीकी कार्य-पद्धति असफल रही। अत गाधीजी इस दोषको दूर करनेके प्रयत्नमें लग गये। इस ग्रथके वे पृष्ठ सबसे अधिक मोहक है जिनमें बदली हुई परिस्थितियोमें अपने स्वप्नोके अनुसार नई समाज-व्यवस्था सिद्ध करनेके मार्ग पर भारतको ले जानेकी नवीन कार्य-पद्धतिया खोजनेके लिए चलनेवाले गाधीजीके मनोमथनका तथा उनके मनमें आकार ग्रहण कर रही योजनाओका वर्णन किया गया है। उस समाज-व्यवस्थाकी रचना एकता और शाति समानता और भ्रातृभाव तथा सबके लिए अधिकसे अधिक स्वतत्रताकी नीव पर होनेवाली थी। अब समय आ पहुचा था जब कि तीस वर्षसे अधिक समय तक भारतीय स्वतत्रताकी लडाईका सचालन करके जो अनुभव और जो प्रतिष्ठा उन्होने प्राप्त की थी, उसके बल पर वे अपना कार्यक्षेत्र अधिक बढायें और पहलेसे भी अधिक अशुभ सयोगो तथा विरोधी परिस्थितियोमें करणीय कार्योंका बीडा उठायें और इस तरह यह साबित कर कि सर्वथा प्रतिकूल परिस्थितियोमें भी अहिंसा अपना चमत्कार दिखा सकती है। ठीक इसी समय भगवानने उन्हे उठा लिया। परतु उनके प्रयोगोकी सभावनायें अभी समाप्त नही हुई है। और सभव है कि जिन विचारो और बलोको उन्होने जन्म दिया है वे उनके अवसानके बाद ऐसी आश्चर्यजनक वस्तुए सिद्ध कर दिखायें, जिनकी सपनेमें भी कल्पना नही की गई है और जो उनके जीवन कालकी सिद्धियोंसे भी अधिक चमत्कारी हो।

उन्होने जो काम हाथमें लिया था वह सिर्फ राजनीतिक स्वतत्रता प्राप्त करनेका ही नही था बल्कि ऐसी समाज-व्यवस्था स्थापित करनेका भी था जिसका आधार सत्य और अहिंसा हो। शायद उनके प्रयोगका यह अधूरा रहा भाग स्वातत्र्य प्राप्तिसे ज्यादा कठिन था। राजनीतिक सघर्षमें लडाई एक विदेशी सत्ताके विरुद्ध थी और या तो सब लोग उसमें शरीक हो सकते थे और हुए भी थे अथवा कमसे कम उसकी सफलता चाहते थे और उसका नैतिक समर्थन करते थे। गाधीजीके आदर्शकी समाज-व्यवस्था स्थापित करनेमें तो हमारे अपने ही लोगोके समूहो और वर्गोंके बीच सघर्ष होनेकी पूरी सभावना थी। अनुभव बताता है कि मनुष्यके लिए अपने प्राणोंसे भी अधिक अपनी सम्पत्तिका महत्त्व होता है क्योकि सम्पत्तिमें उसे एक ऐसा साधन दिखाई देता है जिससे उसके शरीरके मिट्टीमें मिल जानेके बाद भी उसका नाम उसकी सन्तानके द्वारा हमेशा बना रह सकता है। यह नई समाज-व्यवस्था मनुष्योकी सम्पत्ति-सम्बन्धी मनोवृत्तिका आमूल बदले बिना स्थापित नही की जा सकती और किसी न किसी समय अमीरोको गरीबोके लिए जगह करनी ही पडेगी। हमारे अपने ही जमानेमें हम एक प्रकारकी समानतावादी समाज-व्यवस्थाके स्थापनाके प्रयत्न और उसकी स्थापनाके बाद व्यवहारमें उसका चित्र भी देख

चुके है। परन्तु यह काम ज्यादातर शरीर-बलका उपयोग करके किया गया है। नतीजा यह है कि यह कहना असभव नही तो कठिन अवश्य है कि सम्पत्तिके संग्रहकी भावना जड़से उखड़ गई है या कि किसी दूसरी शकलमे वह अधिक बुरे रूपमे फिरसे प्रगट नही होगी। यह भी सभव है कि धातुके पात्रमें अतिशय दबाकर रखी हुई गैस अथवा बड़े भारी बाधके पीछे रोका हुआ पानी जिस प्रकार अपनी बाधाको नष्ट-भ्रष्ट कर देता है, उसी प्रकार समानताका बाह्य स्वरूप स्थापित करने तथा उसे टिकाये रखनेके लिए उपयोगमे ली गई हिंसाके जितनी ही व्यापक और तीव्र हिंसा एक दिन उस समानताको जड-मूलसे नष्ट कर दे। जबरदस्तीकी बुनियाद पर रचे गये इस समतावादके मूलमे उसके अपने ही विनाशके बीज निहित है। वर्ग-सघर्षका मूल कारण तो सम्पत्तिकी लालसा या परिग्रह-वृत्ति है। जब तक अधिकाधिक सम्पत्ति पर, ऊंचेसे ऊचे जीवन-स्तर पर जोर दिया जाता रहेगा, तब तक सम्पत्तिकी लालसा बनी ही रहेगी। जब तक अधिकसे अधिक भौतिक सुख प्राप्त करनेका आदर्श सामने रखा जायगा, तब तक सम्पत्तिका लोभ न तो दबेगा और न मिटेगा। यह तो ऐसी ही बात होगी जैसे पानीके बजाय पेट्रोल डाल कर आग बुझानेकी कोशिश की जाय। इससे तो वह अपनी खुराक पाकर और बढेगी। यह लोभ चाहे थोड़ेसे आदमियोमे सीमित रहे या बहुत लोगोमे व्याप्त रहे, वह है सम्पत्तिका लोभ ही। यदि समानतावादको टिके रहना है तो उसका आधार थोडेसे या सब लोगोके पास अधिकसे अधिक भौतिक सम्पत्तिका होना नहीं, बल्कि स्वेच्छापूर्वक स्वीकृत और ज्ञानयुक्त त्याग होना चाहिये। जिसमे दूसरे लोग हिस्सेदार न हो सके या जिसका उपयोग हम दूसरोको हानि पहुचा कर ही कर सकते है, उस वस्तुका हमे त्याग करना होगा। इसके लिए निरे भौतिक मूल्योकी जगह आध्यात्मिक मूल्योकी स्थापना करनी होगी। सासारिक सुखोके जिस स्वर्गको आजकल कभी कभी प्रगति बताया जाता है, उसमें न तो शान्ति है, न प्रगति। महान विचारक और मनोवैज्ञानिक जुगने हमें चेतावनी दी है कि, "हम पृथ्वी पर स्वर्गका निर्माण नही कर सकते; और यदि हमने कर भी लिया, तो थोड़े ही समयमे हमारा हर तरहसे पतन हो जायगा। हम अपने स्वर्गको नष्ट करके प्रसन्न होगे और फिर उतनी ही मूर्खताके साथ आश्चर्य करेगे कि हमने यह क्या कर डाला!"

महात्मा गाधीने हमें दिखा दिया है कि कैसे मनुष्यके जन्मजात सम्पत्ति-लोभका रूप अमीरो द्वारा गरीबोके हितमे सरक्षकताका आदर्श अपनानेसे आमूल बदला जा सकता है। अमीर इस आदर्शको स्वीकार करे तो सम्पत्तिके लोभकी यह वृत्ति शोषण और संघर्षको जन्म देनेके बजाय समाजके सुधार और उन्नतिकी साधक और प्रेरक बन जाय। इस ध्येयकी प्राप्तिमे जबरदस्त

कठिनाई है गांधीजी जैसा तपस्वी ही सामूहिक पैमाने पर इस ध्येयको सिद्ध कर सकता था। गांधीजी जो चाहते थे वह कुछ हद तक वैसा ही था जिसके लिए आजकल विनोबा भावे प्रयत्न कर रहे हैं। वे चाहते थे कि लोग केवल अपने लिए ही सम्पत्ति न पैदा करें और उसे न रखें बल्कि सबके लिए पैदा करें और रखें अपनी जरूरतसे ज्यादा सम्पत्ति रखनेको चोरी समझें और अपनी जरूरतों पर भी स्वयं ही रोक लगायें। यही समानतावाद स्थायी हो सकता है और उसकी स्थापना सत्य और अहिंसाकी चट्टान पर ही की जा सकती है।

गांधीजीकी शिक्षाका मर्म केवल उनके देश भारत या यहांकी जनताके लिए ही सीमित नहीं था। वह सारा मानव-जातिके लिए था और वह केवल वर्तमान कालके लिए ही नहीं परन्तु त्रिकालके लिए सत्य है। वे चाहते थे कि सारे मानव स्वतंत्र हों जिससे वे अपना अबाधित विकास करके पूर्ण आत्म साक्षात्कार कर सकें। वे मनुष्यका मनुष्य द्वारा होनेवाला सभी प्रकारका शोषण मिटा देना चाहते थे क्योंकि शोषण करना और शोषणका शिकार होना दोनों ही पाप हैं—न केवल समाजके प्रति बल्कि नैतिक नियमके प्रति भी हमारे जीवनके नियमके प्रति भी। इसलिए उनका कहना था कि इस उद्देश्यके अनुरूप ही साधन भी सर्वथा नैतिक अर्थात विशुद्ध सत्य और अहिंसा पर आधारित होने चाहियें। अनेक विदेशियोंने अपने देशोंमें गांधीजीको बुलाया था ताकि वे अपना सदेश उन्हें स्वयं दे सकें। परंतु गांधीजीने ये निमंत्रण स्वीकार नहीं किये। उन्होंने कहा कि सत्य और अहिंसाके विषयमें उनका जो दावा है उसे पहले उन्हें अपने ही देशमें पूरा करना चाहिये उसके बाद ही वे संसारका हृदय जीतने या उसके विचार बदलनेका भगीरथ कार्य हाथमें ले सकते हैं। सीमित रूपमें ही सही और पालनमें अनेक अपूर्णताएं रहनेके बावजूद भी उनकी अहिंसक कार्य-पद्धतिका अनुसरण करके जब भारतने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली तब किसी हद तक दूसरे देशोंमें उनका संदेश ले जानेकी वह पूर्वशर्त पूरी हो गई। और यद्यपि देशके विभाजनके कारण ऐसे आघात लगे और ऐसी समस्याएं पैदा हुईं जिन पर उन्हें अपना सारा समय और सारी शक्ति लगानी पड़ी फिर भी वे अपनी व्यस्तताओंके बीच भी इस विशाल और व्यापक प्रश्नकी ओर ध्यान देनेकी क्षमता रखते थे। परन्तु विधाताको कुछ और ही स्वीकार था। भगवान करे कोई व्यक्ति या राष्ट्र ऐसा आगे आये जो गांधीजीके आरंभ किये हुए प्रयासको उस समय तक जारी रखे जब तक उनका प्रयोग पूरा न हो जाय कार्य समाप्त न हो जाय और उद्देश्य सिद्ध न हो जाय।

राष्ट्रपति भवन नई दिल्ली

नववर्ष दिवस १९५६

राजेन्द्रप्रसाद

निवेदन

'महात्मा गाधी : पूर्णाहुति' का इतिहास कुछ आकस्मिक स्वरूपका है। 'ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस' (शातियात्रा) नामक मेरी एक पूर्ववर्ती पुस्तकके अनुसधानमें उतनी ही बडी एक और पुस्तक लिखनेका मेरा इरादा था। 'ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस' में सीमाप्रान्तके पठानोमें अहिंसाका प्रचार और प्रसार करनेके गाधीजीके मिशनका वर्णन किया गया है। इस दूसरी पुस्तकमें उनके सर्वांगीण जीवन-चरित्रकी भूमिकाके रूपमे उनके नोआखालीके 'करो या मरो' मिशनकी कहानी देनी थी। परन्तु दो अग्रेज मित्रोने उसकी पाडुलिपि देख कर यह निश्चित मत दिया कि यदि इसी पुस्तकमें गाधीजीके विहारके मिशनकी कहानी नही दी जायगी, तो जो चित्र सामने आयेगा वह अधूरा, एकागी और असंतुलित होगा। मुझे उनके इस तर्कमे तथ्य मालूम हुआ और मैंने निर्णय किया कि प्रस्तावित पुस्तकमें गाधीजीके विहारके शान्ति और सान्त्वनाके मिशनकी कहानी भी शामिल कर ली जाय। लेकिन जब मैं अपने काममें आगे बढा तो मुझे पहली ही बार कुछ तथ्यो और घटनाओकी जानकारी हुई। उनके बारेमें अब तक मुझे बहुत थोडा और सुना-सुनाया ज्ञान ही था, क्योकि उस समय मैं गाधीजीसे दूर नोआखालीमें था। गाधीजीको जब नोआखालीसे विहार और बादमें दिल्ली जाना पडा, तब वे साम्प्रदायिक एकता पुन स्थापित करनेके अपने कार्यको आगे बढानेके लिए अपने सारे पुराने साथियोको नोआखालीमें छोड गये थे। इस प्रकार जो चित्र प्रकट हुआ उसका गूढ अर्थ और गंभीरता इतनी अधिक थी कि उसकी तुलनामे अन्य सब बाते मुझे क्षुद्र और तुच्छ मालूम होने लगी। इसलिए गाधीजीके नोआखाली तथा विहारके शाति-मिशनकी कथाके लिए पहले जो नाम 'दि लोनसम वे' (एकला चलो रे) सूचित किया गया था, उसे छोड कर मैंने निश्चय किया कि पुस्तकका क्षेत्र बढाकर गाधीजीके जीवनके अतिम भागकी एक पूरी, विस्तृत और अधिकृत कहानी पाठकोको भेंट की जाय। गाधीजीके जीवनका यह अतिम भाग ऐसा है, जिसमें उनकी आध्यात्मिक शक्तिया परिपक्वताके शिखर पर पहुचकर काम करती दिखाई देती है। गाधीजीकी ये शक्तिया उस आत्मबलके रहस्यकी शोध करनेवाले उनके चित्त और आत्माकी अंतिम गतिकी झाकी हमें कराती है, जो आत्मबल पशुबल तथा सत्ताको अकुशमे रख सकता है और पशुबलकी चुनौतीका तथा लोकतत्र और विपुलता, समानता और व्यक्ति-स्वातंत्र्य, प्रगति

और शातिके बीच रहे विरोधका — ये सब विरोध आजकी दुनियाके समक्ष खडे हैं — उत्तर दे सकता है। इस कारण पहलेके मसौदेके पृष्ठोके अध्याय बने और उसकी कडिकाओके पृष्ठ तथा अध्यायोके विभाग बन गये। स्वय ग्रथको भी दो खण्डोमें बाटना पडा। पहले खण्डमें गाधीजीकी १९४४ में हुई जेल मुक्तिसे लेकर लार्ड माउटबेटनके भारतमें आने तकके कालका वणन है, दूसरे खण्डमें गाधीजीके जीवनके अतिम क्षण तककी कहानी है।

मुझे स्वीकार करना चाहिये कि जब मने यह काम अपने हाथमें लेनेका साहस किया तब मुझे शायद ही इस बातकी कल्पना थी कि यह कसा भगीरथ काय है और इसके मागमें कितनी भारी कठिनाइया बाधाए और अडचनें आयेंगी। यदि म पहलेसे यह बात जानता होता, तो मुझे इसे हाथमें लेनेमें सकोच होता अथवा मने इसे दूसरी तरह आरभ किया होता। प्राप्त होनेवाली जानकारीमें गभीर कमिया थी गाधीजी तथा उनके साथियोके बीच हुई नाजुक और अटपटी चर्चाओकी बहुतसी तफसील तथा स्वतत्रता और विभाजनके पूव और उसके पश्चात ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधियोके साथ हुई गाधीजीकी वार्ताओकी रिपोट लिखी नहा गई थी। कभी कभी ऐसी नोधें मौजद तो थी परतु या तो वे अप्राप्य थी अथवा दी नही जाती थी। कभी कभी नाटकके ये पात्र उन्हीके कहे अनुसार अपना मुह इतनी बुरी तरह बद रखते थे" कि बादमें अपने पत्र-व्यवहारके कुछ अस्पष्ट उल्लेख वे स्वय भी समझानेमें असमय रहते थे अथवा वे उल्लेख जिन घटनाओ या प्रसगोसे सम्बध रखते थे उन्हे वे (पात्र) फिरसे याद नही कर पाते थे। प्राप्त रेकाडके साथ जो लोग स्वय ही न्याय कर सकते थे उनकी अनुपस्थितिमें उसका सच्चा अथ घटानेके लिए बीचकी छूटती कडिया जोडनेके लिए, छुटपुट असम्बद्ध जानकारीको इस तरह व्यवस्थित करनेके लिए कि उसमें से स्पष्ट और सुसगत अथ निकल सके और भिन्न भिन्न स्थानोसे प्राप्त प्रमाणोके आधार पर वस्तुत बडे प्रयत्नके बाद खोजी हुई कडियोकी सहायतासे किसी बातकी उलझी हुई पहेलीको सुलझानेके लिए योगीका धय और भविष्य कथनकी सिद्धि (अपने भीतर यह सिद्धि होनेका दावा म नहा कर सकता) आवश्यक होती है और कुछ हद तक परोकी निशानी खोजनेवाले गुप्त चरकी निपुणताकी भी आवश्यकता होती है। यह काम है तो बडा दिलचस्प लेकिन इसमें बेहद समय खच होता है। समयकी परवाह न करके इस अवधिमें गाधाजी द्वारा मेरे नाम लिखे गये पत्रोसे और इस जगतमें उनकी यात्राके अतिम दो मासोमें — दयानिधि प्रभुने इस अरसेमें मुझे फिरसे उनके पास पहुचा दिया था — उन्होने मुझसे जो कुछ बातें कहा उनमें से मिलने-वाले सूचना तथा निर्देशो द्वारा ही यह काय पूरा किया जा सका है।

जल्दी ही मुझे इस वातका भी पता चल गया कि इस सकट-कालमें मनुष्योके विपयमे और घटनाओके विषयमे किसी महत्त्वकी आलोचनाका अथवा उन पर आधारित अपने निर्णयोका मै उल्लेख करूगा, तो उसे अवश्य ही चुनौती दी जायगी। इस कारणसे प्रत्येक उदाहरणमे मेरे कथनो तथा मेरे निर्णयोके समर्थनमे आवश्यक प्रमाण व्योरेवार देना जरूरी हो गया। इसीलिए इस ग्रन्थमे पाठकोको स्थान स्थान पर दिये गये प्रमाण देखनेको मिलेगे। इससे प्रस्तुत ग्रन्थका आकार वढ गया है और उसके लिए मै वहुत लज्जित हू।

इस ग्रन्थके लेखनमे मैंने सर्वप्रथम गाधीजीके ऑफिसके रेकार्ड तथा जानकारी, 'यग इडिया' और 'हरिजन' में लिखे उनके लेख, अखवारोमें छपे उनके वक्तव्य और अखवारोके प्रतिनिधियोको दी गई उनकी मुलाकातोकी रिपोर्ट, उनका मौन-दिवस हो तव कागजकी पर्चियो पर लिखी हुई उनकी नोधो तथा उनके द्वारा दी गई सूचनाओ और अन्य कागज-पत्रोके साथ साथ उनका पत्र-व्यवहार —— ये सव साधन मैंने सुरक्षित रख लिये थे —— आदिका वहुत हद तक आधार लिया है। जेसा कि गाधीजी कभी कभी विनोदमे कहा करते थे, कागज-पत्रो और दस्तावेजोके सम्वन्धमे तो —— इन चीजोको वे परिग्रहका एक रूप मानते थे —— वे 'सहारक' ही थे। महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहारके कागजोको —— यदि उनकी पीठ कोरी होती —— अकसर सूचनाये लिखनेके लिए तुरन्त पर्चियोमे वदल डाला जाता था और यदि उनका ऐसा उपयोग न हो सके तो उन्हे "गलत स्थान पर पडी हुई चीज" मान कर कचरेकी टोकरीमे फेक दिया जाता था। कोई साथी समय पर उन्हे सुरक्षित स्थान पर रख देता अथवा टोकरीसे उनका उद्धार कर देता, तो ही वे वच पाते थे। परन्तु उनके जीवन तथा कार्योसे सम्वन्ध रखनेवाले कागजात इकट्ठे करके सुरक्षित रखनेका मेरा उत्साह जानकर और दूसरे लोग शायद इस व्यसनसे मुक्त होगे ऐसा मान कर, नोआखालीमें और उसके वाद भी, कभी कभी ऐसा स्वादिष्ट व्यजन वे पसद करके 'प्रेमके प्रतीको' के रूपमे मेरे पास भेज दिया करते थे। इसके सिवा, आधारके लिए मेरे पास मेरी अपनी नोटवुक और डायरिया तथा उनकी मडलीके कुछ और सदस्योकी नोटवुक और डायरिया थी; साथ ही गाधीजीके मुहसे तथा अन्य लोगोके मुहसे स्वय मेरी सुनी हुई जानकारी भी थी। और अन्तमें इतनी ही महत्त्वपूर्ण उनकी डायरी (जर्नल) पर मैंने आधार रखा है। मई १९४६ मे, दूसरी शिमला परिषद्के समय, "स्वयंको एकमात्र ईश्वरके सहारे छोड देनेके लिए" जव गाधीजीने अपने समग्र सचिव-मडलको दिल्ली लौटा दिया था (देखिये पृ० २६५), तव मेरी अनुपस्थितिकी पूर्ति करनेके लिए उन्होने यह डायरी रखना शुरू किया था। उनकी यह डायरी ठेठ २५ जुलाई, १९४७ तक लिखी जाती रही

अनुक्रमणिका

महात्मा गांधी : पूर्णाहुति

पहला भाग

परतंत्रताका सन्ध्याकाल

पहला अध्याय

स्वतंत्रताका उषाकाल

जीवन उस ऊषामे, अनुपम आनन्द-रूप;
किन्तु धरा स्वय स्वर्ग, स्पदित यदि यौवन हो।

१

"आप मजाक तो नही कर रहे है?" गाधीजीने आश्चर्यचकित होकर पूछा।

जेलोके इन्स्पेक्टर जनरलने उत्तर दिया, "नही, मै गभीरतासे कह रहा हू। रिहाईका आदेश मुझे आज ही मिला। आप चाहे तो आराम लेनेको कुछ दिन यहा और ठहर सकते है। परन्तु पहरा कल प्रात ८ बजे उठा लिया जायगा।"

दूसरे महायुद्धमे जिस दिन मित्रराष्ट्रोकी सेनाये हिटलर पर अपना अतिम आक्रमण करनेके लिए उत्तर फ्रासमे नार्मण्डीके समुद्र-तट पर उतरी और जिसके फलस्वरूप ठीक ११ महीने बाद लगभग उसी दिन जर्मनीकी अतिम पराजय हुई, उससे एक माह पूर्व ५ मई १९४४ के दिन बम्बई राज्यके जेलोके इन्स्पेक्टर जनरल कर्नल भडारी शामके समय — सामान्यत भडारी साहब इस समय नही आते थे — पूनाके समीप स्थित आगाखा महलके नजरबदी कैम्पमे आये, जहा गाधीजीको कडे पहरेमे नजरबन्द रखा गया था। आते ही उन्होने गाधीजीसे कहा कि आपको और आपकी मडलीके लोगोको कल सुबह आठ बजे बिना किसी शर्तके छोड़ दिया जायगा।

गाधीजी इस समय तक आश्चर्यके आघातसे सभल गये थे। उन्होने कुछ विनोद और कुछ गभीरतासे मुसकरा कर पूछा, "लेकिन मै कुछ दिन पूनामे ठहर जाऊ, तो मेरे रेल-किरायेका क्या होगा?" जेलके नियमानुसार कैदीको गिरफ्तारीके स्थान तकका किराया मिल सकता है।

"आप जब पूनासे जायगे तब आपको किराया मिल जायगा।"

"ठीक, तो मै दो-तीन दिन पूना ठहरूगा।"

कर्नल भंडारीने यह भी कहा, "अब कृपा करके लौट कर न आइये। देखिये, चिन्तासे मेरे बाल सफेद हो गये है।"

गाधीजीके अन्तिम कारावासके इक्कीस मास यो पूरे हुए। यह सजा उन्हे ८ अगस्त १९४२ की रातमे ब्रिटिश सरकारको यह अतिम चेतावनी देन पर मिली थी कि वह भारतसे चली जाय और भारतको स्वाधीन घोषित

कर दे ताकि भारत जापानके आक्रमणका विना किसी वचनके सामना कर सके और लोकतत्रकी रक्षामें अपना भाग सफलतापूर्वक अदा कर सके।

इस घटनासे पहले कई दिन तक हवामें यह जोरदार अफवाह थी कि गाधीजी पूनासे हटाये जायगे। जेलोके इन्स्पेक्टर जनरल जब तीन दिन पहले कैम्पमें आये थे, तो उन्होंने बात-बातमें पूछा था कि क्या डाक्टरोकी रायमें गाधीजी मोटर या रेलसे सौ मीलकी यात्रा करनेके काबिल है। लेकिन इस बारेमें अधिक प्रश्न करने पर उन्होंने रहस्यमय मौन धारण कर लिया था।

गाधीजीने बार बार सरकारसे यह अनुरोध किया था कि उन्हे आगाखा महलसे हटाकर किसी मामूली जेलमें भेज दिया जाय। गाधीजीको यह बात बुरी तरह खटकती थी कि उनके कारण इतने बडे मकानके — वह मकान बडा जरूर था लेकिन जैसा अमरीकी पत्रिका 'टाइम' ने कहा था वह भद्दा भी था — किराये और निर्वाह-खर्चका इतना बोझ उठाया जाय और उसके चारो तरफ लम्बा चौडा सशस्त्र पहरा रखा जाय। उनका कहना था "यह रुपया जो सरकार खर्च कर रही है उसका नही है। यह रुपया तो मेरा है — भारतकी गरीब जनताका है। और सरकार मेरे लिए इतने सारे पहरेदार क्या रखना चाहती है? वह जानती है कि मैं भागूगा नही।

बाहरके मित्र लोग गाधीजीको इस स्थानसे हटानेके लिए आन्दोलन कर रहे थे क्योकि इस स्थानके साथ दो प्रियजनोकी मृत्युकी दुखद स्मृतिया जुड गई थी — उनकी पत्नी कस्तूरबा गाधी और उनके सचिव महादेव देसाईकी। इसके सिवा वहा मलेरियाका बडा जोर था। खुद गाधीजीको मलेरिया हो गया था और कुछ समयसे उन्हें तेज बुखार रहने लगा था। इससे जेलके अधिकारियोको चिन्ता हो गई थी।

कैम्पके वातावरणमें बडा तनाव था। सबको लगता था कि गाधीजीका तबादला होने ही वाला है। क्या उन्हें किसी मामूली जेलमें भेजा जायगा? क्या उनके दलको भग कर दिया जायगा? क्या इन परिवर्तनोके बोझको गाधीजीका स्वास्थ्य सहन कर लेगा? ये प्रश्न गाधीजीके सिवा हम सबको सता रहे थे। उन्हें तो एक ही बातकी चिन्ता थी देश पर उनके सबका इतना भारी बोझ दूर होना ही चाहिये।

जेलसे मुक्त होनेकी बात तो उनकी कल्पनामें भी नही थी। उन्हें विश्वास हो गया था कि सरकार विश्वयुद्ध बन्द होनेसे पहले उन्हें कभी नही छोडेगी, और स्वास्थ्यके कारण तो निश्चित ही नही छोडेगी। युद्धके जल्दी बन्द होनेके कोई आसार दिखाई नही देते थे। इसलिए गाधीजी इस नतीजे पर पहुच गये थे कि उन्हें कमसे कम सात साल तो जेलखानेमें रहना ही होगा। उनमें से अभी मुश्किलसे दो वर्ष उन्होने पूरे किये थे।

जब साथी सारी रात सामान बांधनेमे लगे हुए थे, तब गांधीजी बिस्तरमे पडे पडे विचार-मग्न स्थितिमे जागते रहे। सब लोगोकी आंखे उन्ही पर लगी हुई थी। क्या वे हमारी आशाए और आकाक्षाये पूरी कर सकेगे? वे दुःखी मालूम हुए। जेलखानेमे बीमार होना वे एक सत्याग्रहीके लिए पापके समान समझते थे। उन्होने अपने आपसे पूछा, "क्या सरकार सचमुच मुझे स्वास्थ्यके कारण छोड रही है?" परन्तु तुरन्त स्वस्थ होकर बोले, "खैर, मेरे लिए तो यही ठीक है कि जैसा सरकार कहती है वैसा ही मै मान लू।"

६ मईको सुबह ७-४५ पर जेलोके इन्स्पेक्टर जनरल आये। गाधीजीने अपनी लाठी उठाई और चलने लगे।

कर्नल भडारी मुसकरा कर बोले, "नही, महात्माजी, कुछ मिनट और ठहरिये।"

आठ बजते ही कर्नल भडारी आगे हो लिये और गाधीजी काटेदार तारोसे बाहर निकल गये।

जब मोटर पर्णकुटी—श्रीमती ठाकरसीका भवन जहा गाधीजी पूनामे ठहरनेवाले थे—की दिशामे चली तो वे विचार-मग्न हो गये। वे कस्तूरबा और महादेवकी स्मृतिमे डूब गये थे। वे धीमे स्वरमे बोले, "बा जेलसे निकलनेको कितनी उत्सुक थी? फिर भी मै जानता हू कि इससे अधिक उदात्त मृत्यु उसे प्राप्त नही हो सकती थी। परन्तु बाने और महादेवने स्वतत्रताकी वेदी पर अपने प्राणोका बलिदान दे दिया। दोनो अमर हो गये।"

२

दो वर्ष बाद—और अगस्त १९४२ में अग्रेजोसे 'भारत छोडो' की माग करनेके लिए गांधीजीको और राष्ट्रीय काग्रेसको जेलके सीखचोमे बन्द करनेके ४४ मास बाद—मार्च १९४६ मे गाधीजी पूनाके पास बसे एक मनोहर गाव उरुलीकाचनमे बैठकर ग्रामजनोंको प्राकृतिक चिकित्साकी बाते समझा रहे थे। उनके जीवनके सध्याकालमे निसर्गोपचार उनके लिए अतिशय रसका विषय बन गया था। ऐसे समय उन्हे ब्रिटिश कैबिनेट-मिशनकी तरफसे आग्रहपूर्ण निजी सन्देश मिला कि वे अप्रैल १९४६ के पहले सप्ताहमे दिल्ली आये और उनसे चर्चा करे कि अग्रेज जल्दीसे जल्दी भारत छोड कर कैसे जा सकते है। विशेष सन्देश-वाहक श्री सुधीर घोष अपने ड्राइवरके देरसे पहुचनेके कारण चमत्कारिक रूपमे मौतसे बच गये। वे शाही वायुसेनाके उस विमानको पकड नही सके, जिसमे उनकी जगह सुरक्षित की गई थी, जो आधे घटे बाद चकनाचूर हो गया और जिसके सारे यात्री तत्काल मर गये।

कैबिनेट-मिशनके नेता और भारत-मत्री लॉर्ड पेथिक-लॉरेंसका सन्देश इस प्रकार था "मै बडी आशा लगाये हुए हू कि आपसे दुबारा मिलकर ४०

गाधीजीके कमरेके सामने, शामियानेके बाहरका फर्श फूलोसे सजाया गया था। अगरबत्ती जल रही थी। दरवाजो पर हरे हरे पत्तोकी वन्दनवारे लटक रही थी। ऊपर दो सुन्दर राष्ट्रीय झडे फहरा रहे थे। वातावरण गभीर भावोसे परिपूर्ण था। एक वार तो अज्ञेयवादके अभिमानी पडित नेहरू भी अपनी शेखी भूल गये। उस दिन उन्होने जो वक्तव्य प्रकट किया उसका आरभका सूचक वाक्य यह था· "यद्यपि मै प्रार्थनाका आदी नही हू, फिर भी मै इस कामको प्रार्थनामय वृत्तिसे हाथमे लेता हूं।"

मत्रियोको दिये गये अपने सन्देशका सार समझाते हुए गांधीजीने शामकी प्रार्थना-सभामे एक मर्मस्पर्शी भाषण दिया। उसमे इस शुभ दिनका, जिसकी भारत लम्बे समयसे प्रतीक्षा कर रहा था, स्वागत करते हुए गाधीजीने उसे भारतके इतिहासमे सुनहला दिन बताया। उन्होने भारत और ब्रिटेनके बीचके एक पुराने झगडेको शान्तिपूर्ण ढगसे हल कर देनेके लिए ब्रिटिश सरकारको बधाई दी। उन्होंने कहा, यह पुराने अन्यायोको याद करने या कटु स्मृतियोको ताजा करनेका अवसर नही है। मुस्लिम लीग सरकारमे नही आई है। मुसलमान आज शोक-दिवस मना रहे है। इसलिए हिन्दुओ और दूसरे लोगोका काम है कि वे आज आनन्द न मनाये, भोजन-समारभ न करे, परन्तु उपवास और प्रार्थनाके द्वारा मुसलमानोके ज्यादासे ज्यादा नजदीक आनेका प्रयत्न करे। हिन्दू धर्म, इस्लाम और ईसाई धर्म सबके आदेशके अनुसार ऐसा पवित्र अवसर मनानेका सही ढग यह है कि इस समय आमोद-प्रमोदके बजाय उपवास किया जाय। उन्हे चाहिये कि इस अवसरका उपयोग वे आत्म-निरीक्षण करनेमे और यह पता लगानेमे करे कि सचमुच तो उन्होने अपने मुसलमान भाइयोके साथ कोई अन्याय नही किया है। इसी तरह मुसलमानोके लिए यह अनुचित होगा कि वे हिन्दुओको अपना शत्रु समझे और इस बातको भूल जाय कि वे सदियो तक अच्छे पड़ोसी बनकर साथ-साथ रहे है, इसी धरती पर पले-पुसे है और अन्तमे इसीमे समा जायगे. "जो लोग इस देशमे पैदा हुए है और इसे अपनी मातृभूमि समझनेका दावा करते है, वे सब भाई-भाई है। हमे जन्म देनेवाली मरणशील माता हमारी श्रद्धा और पूजाकी अधिकारिणी है। ऐसी पूजासे आत्मा पवित्र होती है। तब फिर हमारी विराट् अविनाशी माता, जिसके वक्षस्थल पर हमने जन्म लिया है और जिसके वक्षस्थल पर हम मरेगे, हम सबकी वफादारी और पूज्यभावकी कितनी अधिक अधिकारिणी है?"

अन्तरिम राष्ट्रीय सरकारके पदारूढ होनेके बाद गाधीजी जल्दीसे जल्दी अपने सेवाग्राम आश्रमको लौट जानेके लिए उत्सुक थे। परन्तु नई सरकारके सदस्योने उन्हे समझा-बुझा कर दिल्लीमे अधिक ठहरनेको राजी कर लिया,

वर्ष पहले आरम्भ हुए परिचय और मित्रताको फिरसे ताजा करें। भारत रवाना होनेके पहले मेरी पत्नीने मुझसे कहा था कि यदि मैं आपसे मिलूं तो उनकी हार्दिक शुभ कामनाएं आप तक पहुंचा दूं।

गांधीजीके पुराने मित्र और प्रतिनिधि मंडलके दूसरे सदस्य सर स्टैफर्ड क्रिप्सने लिखा : मैं अनुभव करता हूं कि हमारे वर्तमान कार्यका भार बहुत भारी है और हमें जो भी सहायता मिल सकती है उस सबकी हमें इस काममें जरूरत है। परन्तु जो सहायता आपसे मिल सकती है उससे अधिक स्वागत करने योग्य और सयानी सहायता दूसरी कोई नहीं हो सकती।

कैबिनेट मिशन अप्रैल मई और जूनके तीनों महीनोंमें अपने प्रयत्न करता रहा और फिर २९ जूनको विलायत जानेके लिए दिल्ली छोड़ कर स्वदेश लौट गया। उसके जानेके बाद वाइसराय लार्ड वेवेलने उसके आरम्भ किये हुए प्रयत्नको जारी रखा और २४ अगस्तको उन्होंने वाइसरॉयकी कार्यकारिणी परिषदके बजाय एक अन्तरिम राष्ट्रीय सरकारकी रचनाकी घोषणा की। तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष पण्डित नेहरू इस सरकारके उपाध्यक्ष बनाये गये। मुस्लिम लीगने इस सरकारमें शरीक होनेसे इस कारण इनकार कर दिया कि मंत्रिमंडलमें तमाम मुसलमान सदस्य नियुक्त करनेका अधिकार लीगको नहीं दिया गया।

गाधीजीके कमरेके सामने, शामियानेके वाहरका फर्श फूलोसे सजाया गया था। अगरवत्ती जल रही थी। दरवाजो पर हरे हरे पत्तोकी वन्दनवारे लटक रही थी। ऊपर दो सुन्दर राष्ट्रीय झडे फहरा रहे थे। वातावरण गभीर भावोसे परिपूर्ण था। एक वार तो अज्ञेयवादके अभिमानी पडित नेहरू भी अपनी शेखी भूल गये। उस दिन उन्होने जो वक्तव्य प्रकट किया उसका आरभका सूचक वाक्य यह था "यद्यपि मै प्रार्थनाका आदी नही हू, फिर भी मै इस कामको प्रार्थनामय वृत्तिसे हाथमे लेता हू।"

मत्रियोको दिये गये अपने सन्देशका सार समझाते हुए गाधीजीने शामकी प्रार्थना-सभामे एक मर्मस्पर्शी भापण दिया। उसमे इस शुभ दिनका, जिसकी भारत लम्वे समयसे प्रतीक्षा कर रहा था, स्वागत करते हुए गाधीजीने उसे भारतके इतिहासमे सुनहला दिन वताया। उन्होने भारत और ब्रिटेनके वीचके एक पुराने झगडेको शान्तिपूर्ण ढगसे हल कर देनेके लिए ब्रिटिश सरकारको वधाई दी। उन्होंने कहा, यह पुराने अन्यायोको याद करने या कटु स्मृतियोको ताजा करनेका अवसर नही है। मुस्लिम लीग सरकारमे नही आई है। मुसलमान आज शोक-दिवस मना रहे है। इसलिए हिन्दुओ और दूसरे लोगोका काम है कि वे आज आनन्द न मनाये, भोजन-समारभ न करे, परन्तु उपवास और प्रार्थनाके द्वारा मुसलमानोके ज्यादासे ज्यादा नजदीक आनेका प्रयत्न करे। हिन्दू धर्म, इस्लाम और ईसाई धर्म सवके आदेशके अनुसार ऐसा पवित्र अवसर मनानेका सही ढग यह है कि इस समय आमोद-प्रमोदके वजाय उपवास किया जाय। उन्हे चाहिये कि इस अवसरका उपयोग वे आत्म-निरीक्षण करनेमे और यह पता लगानेमे करे कि सचमुच तो उन्होने अपने मुसलमान भाइयोके साथ कोई अन्याय नही किया है। इसी तरह मुसलमानोके लिए यह अनुचित होगा कि वे हिन्दुओको अपना शत्रु समझे और इस वातको भूल जाय कि वे सदियो तक अच्छे पडोसी वनकर साथ-साथ रहे है, इसी धरती पर पले-पुसे है और अन्तमे इसीमे समा जायगे· "जो लोग इस देशमे पैदा हुए है और इसे अपनी मातृभूमि समझनेका दावा करते है, वे सव भाई-भाई है। हमे जन्म देनेवाली मरणशील माता हमारी श्रद्धा और पूजाकी अधिकारिणी है। ऐसी पूजासे आत्मा पवित्र होती है। तव फिर हमारी विराट् अविनाशी माता, जिसके वक्षस्थल पर हमने जन्म लिया है और जिसके वक्षस्थल पर हम मरेगे, हम सवकी वफादारी और पूज्यभावकी कितनी अधिक अधिकारिणी है?"

अन्तरिम राष्ट्रीय सरकारके पदारूढ होनेके वाद गांधीजी जल्दीसे जल्दी अपने सेवाग्राम आश्रमको लौट जानेके लिए उत्सुक थे। परन्तु नई सरकारके सदस्योने उन्हे समझा-वुझा कर दिल्लीमें अधिक ठहरनेको राजी कर लिया,

जिससे उनके कार्यकालके आरंभमें गांधीजीके बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्श और मार्ग दर्शनका लाभ उन्हें मिल सके। इस प्रकार राजधानीकी झुलसानेवाली गरमी और दमघोटू धूलमें ही सितम्बरका गांधीजीका पूरा महीना बीता।

३

२ अक्तूबर १९४६ को गांधीजीका सतहत्तरवां जन्मदिन था। उस दिन दुनिया भरसे उन पर बधाइयोंकी वर्षा हुई। शायद सबसे मर्मस्पर्शी बधाई श्रीमती पेथिक-लॉरेंसकी थी।

उन्होंने लिखा था, "गांधीजी, अक्तूबर मास संघर्षसे पूर्ण — दैवी और आसुरी शक्तियोंके संघर्षसे पूर्ण — इस संसारमें आपका जन्मदिन लेकर आता है। भगवान करे आगामी वर्ष आपके आत्म-दर्शनकी सिद्धिको अधिक परिपूर्ण करनेवाला सिद्ध हो। हमारे रहस्यवादी कवि ब्लेकने लिखा है :

> दूं तुझे स्वर्णकी डोरका छोर ले
> गूंथ केवल इसे गोल कन्दुक बना
> जेरुसलेमके दीर्घ प्राचीर स्थित
> स्वर्गके द्वार यह ले तुझे जायगा।

'कवि ब्लेक श्रद्धापूर्वक मानते थे कि पृथ्वी पर अंतमें स्वर्गीय राज्यकी स्थापना होनेवाली है। वे जेरुसलेमका स्वर्गीय राज्यके प्रतीकके रूपमें उपयोग करते थे। क्षमाधर्मका पालन उनका स्वर्णतन्तु था।

और आपने भी यही स्वर्णतन्तु हमारे हाथमें दिया है। यह हमारा काम है कि हम अपने दैनिक व्यवहारमें स्वर्णतन्तु-रूपी क्षमाधर्मका पालन करें। वह हमें संसारकी भूल-भुलैयासे बाहर ले जाकर स्वर्गीय राज्यमें सुरक्षित पहुंचा देगा।

आपके जीवन और कार्यसे मानव जाति सम्पन्न हुई है और वे इस पृथ्वी पर चमकनेवाली स्थिर ज्योतिकी एक अंशकी तरह हमेशा कायम रहेंगे। आपके जन्मदिनके उत्सव पर ईश्वर आपको सम्पूर्ण श्रद्धा और आनन्द प्रदान करे।"

इसका उत्तर गांधीजीने इस प्रकार दिया : "क्या आपने कभी देखा है कि मेरा गोल कवि ब्लेकके सोनेके तारके बदले सूतके अनंत तारका बना हुआ है? ब्लेकने तो कवि-कल्पना की है। परन्तु इस पृथ्वी पर बसनेवाले करोड़ों लोग यदि इस नाजुक और अटूट तारको कातें तो उसका बना हुआ सुन्दर गोला मेरा मान और इसी समय स्वर्गका द्वार बन सकता है।"

लॉर्ड बर्ड्वुडकी बधाईके उत्तरमें गांधीजीने लिखा : "मेरा जन्मदिन मनाया जाना तब शुरू हुआ जब वह और आधुनिक रूपमें चरखेका पुनरुद्धार

एक ही चीज वन गये और उसने चरखेको रचनात्मक उपायो द्वारा सर्व-साधारणकी आजादीका प्रतीक वना दिया। क्या आप चरखेके पुनर्जन्मके साथ किसी तरह एकताका सम्वन्ध जोडना चाहेगे?"

गाधीजीके लिए तो चरखा करोड़ो मूक लोगोके साथ एकता स्थापित करनेका एक प्रतीक और साधन था। उन्हे सदा एकमात्र इन्हीकी चिन्ता रहती थी; इन्हीके कल्याणके लिए उनका जीवन समर्पित था। कारण, वे "करोड़ो मूक लोगोके हृदयमे निवास करनेवाले ईश्वरके सिवा"[१] और किसी ईश्वरको नही मानते थे। चरखेका महत्त्व तो उन्हे उसे देखनेसे पहले ही दक्षिण अफ्रीकामे अन्त प्रेरणाके किसी क्षणमे प्रतीत हो गया था। सच तो यह है कि उस समय उन्हे चरखे और हाथ-करघेका भेद भी मालूम नही था![२] जव वे भारत लौटे तव चरखा मृतप्राय हो चला था। उसे फिरसे जीवित करनेके लिए उन्होने २५ से भी अधिक वर्षो तक प्राणपणसे कोशिश की।

सर स्टैफर्ड क्रिप्सने इस अवसर पर उन्हे लिखा "आपने भारतकी स्वतत्रताका ध्येय सिद्ध करनेके कार्यमे अनेक वर्ष लगाये है। मै कामना करता हू कि आप दीर्घजीवी हो (कमसे कम १२५ वर्षकी आयु पाये)[३], जिससे आप अपने परिश्रमको भारतीय जनताके सुखके रूपमे परिणत हुआ देख सके। यह वडा कठिन काल है, फिर भी हम सही दिशामे प्रगति कर रहे है। . . . कुछ कदम हम और चल लें, तो यह महान कार्य पूर्ण हो जायगा। और फिर भारतीय स्वतत्रताकी सिद्धिका आनन्द हम सव मिलकर मना सकेगे।"

परन्तु मनुष्योकी प्रार्थनाओका उत्तर भगवान अपने ही ढगसे देते है। अन्तरिम सरकारमे आनेके मुस्लिम लीगके निश्चयकी घोषणा १५ अक्तूबरको हुई। गाधीजीको लगा कि अव वे सेवाग्राम लौटनेको स्वतत्र है। वहा कितने ही कार्य उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उनकी रवानगीके लिए २७ अक्तूबरकी तारीख तय हुई थी। परन्तु जिस दिन सरकारमे सम्मिलित होनेके लीगके निर्णयकी घोषणा हुई, उसी दिन मुसलमान जातिकी ओरसे पूर्वी वगालके मुस्लिम वहुमतवाले नोआखाली जिलेमे व्यापक साम्प्रदायिक दगे फूट पडनेके समाचार आये। वहा हिन्दुओके हजारो घर जलाकर राख कर दिये गये। वडे पैमाने पर लूटपाट मची। जवरदस्तीसे लोगोका धर्म वदला गया और मुसलमानोके साथ हिन्दू स्त्रियोका विवाह कर दिया गया। लोगोकी हत्याये की गई। स्त्रियोका अपहरण किया गया और उन पर वलात्कार किया गया। इन सव घटनाओसे गाधीजीकी आत्मामे अवर्णनीय अधकार छा गया और सेवाग्राम लौटनेके वजाय कवि ब्लेकके 'स्वर्णतन्तु'का सिरा हाथमे लेकर वे यह समस्या हल करनेके लिए नोआखालीकी दिशामे चल पड़े। उस

जिससे उनके कार्यकालके आरंभमें गांधीजीके बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्श और मार्गदर्शनका लाभ उन्हें मिल सके। इस प्रकार राजधानीकी झुलसानेवाली गरमी और दमघोंटू धूलमें ही सितम्बरका गांधीजीका पूरा महीना बीता।

३

२ अक्तूबर १९४६ को गांधीजीका सतहत्तरवां जन्मदिन था। उस दिन दुनिया भरमें उन पर बधाइयोंकी वर्षा हुई। शायद सबसे मर्मस्पर्शी बधाई श्रीमती पेथिक-लॉरेंसकी थी।

उन्होंने लिखा था, 'गांधीजी, अक्तूबर मास संघर्षसे पूर्ण — दैवी और आसुरी शक्तियोंके संघर्षसे पूर्ण — इस संसारमें आपका जन्मदिन लेकर आता है। भगवान करे आगामी वर्ष आपके आप दर्शनकी सिद्धिको अधिक परिपूर्ण करनेवाला सिद्ध हो। . . . हमारे रहस्यवादी कवि ब्लेकने लिखा है :

दूं तुझे स्वर्णकी डोरका छोर मैं
　गूंथ केवल इसे गोल कन्दुक बना
जेरुसलेमके दीर्घ प्राचीर स्थित
　स्वर्गके द्वार पर ले तुझे जायगा।

कवि ब्लेक श्रद्धापूर्वक मानते थे कि पृथ्वी पर अन्तमें स्वर्गीय राज्यकी स्थापना होनेवाली है। वे अहिंसाको स्वर्गीय राज्यके प्रतीकके रूपमें उपयोग करते थे। क्षमाधर्मका पालन उनका स्वर्णतन्तु था।

और आपने भी यही स्वर्णतन्तु हमारे हाथमें दिया है। यह हमारा काम है कि हम अपने दैनिक व्यवहारमें स्वर्णतन्तु रूपी क्षमाधर्मका पालन करें। वह हमें संसारकी भूल-भुलैयासे बाहर ले जाकर स्वर्गीय राज्यमें सुरक्षित पहुंचा देगा।

आपके जीवन और कार्यसे मानव जाति सम्पन्न हुई है और वे इस पृथ्वी पर चमकनेवाली स्निग्ध ज्योतिके एक अंगकी तरह हमेशा कायम रहेंगे। आपके जन्मदिनके उत्सव पर ईश्वर आपको सम्पूर्ण श्रद्धा और आनन्द प्रदान करे।'

इसका उत्तर गांधीजीने इस प्रकार दिया : 'क्या आपने कभी देखा है कि मेरा गेंद कवि ब्लेकके मानव तारके बदले सूतके अनंत तारका बना हुआ है? ब्लेकने तो कवि-कल्पना की है। परन्तु इस पृथ्वी पर बसनेवाले करोड़ों लोग यदि इस नाजुक और अटूट तारको कातें तो उसका बना हुआ सुन्दर गेंद आज और इसी समय स्वर्गका द्वार बन सकता है।'

लॉर्ड पेथिककी बधाईके उत्तरमें गांधीजीने लिखा : 'मेरा जन्मदिन मनानेका अर्थ तब शुरू हुआ जब घर और आधुनिक रूपमें चरखेका पुनरुद्धार

एक ही चीज बन गये और उसने चरखेको रचनात्मक उपायो द्वारा सर्व-साधारणकी आजादीका प्रतीक बना दिया। क्या आप चरखेके पुनर्जन्मके साथ किसी तरह एकताका सम्बन्ध जोडना चाहेगे?"

गाधीजीके लिए तो चरखा करोडो मूक लोगोके साथ एकता स्थापित करनेका एक प्रतीक और साधन था। उन्हे सदा एकमात्र इन्हीकी चिन्ता रहती थी; इन्हीके कल्याणके लिए उनका जीवन समर्पित था। कारण, वे "करोडो मूक लोगोके हृदयमे निवास करनेवाले ईश्वरके सिवा"[१] और किसी ईश्वरको नही मानते थे। चरखेका महत्त्व तो उन्हे उसे देखनेसे पहले ही दक्षिण अफ्रीकामे अन्त प्रेरणाके किसी क्षणमे प्रतीत हो गया था। सच तो यह है कि उस समय उन्हे चरखे और हाथ-करघेका भेद भी मालूम नही था![२] जब वे भारत लौटे तब चरखा मृतप्राय हो चला था। उसे फिरसे जीवित करनेके लिए उन्होने २५ से भी अधिक वर्षो तक प्राणपणसे कोशिश की।

सर स्टैफर्ड क्रिप्सने इस अवसर पर उन्हे लिखा "आपने भारतकी स्वतत्रताका ध्येय सिद्ध करनेके कार्यमे अनेक वर्ष लगाये है। मै कामना करता हू कि आप दीर्घजीवी हो (कमसे कम १२५ वर्षकी आयु पायें)[३], जिससे आप अपने परिश्रमको भारतीय जनताके सुखके रूपमे परिणत हुआ देख सके। यह बडा कठिन काल है, फिर भी हम सही दिशामे प्रगति कर रहे है।. . . कुछ कदम हम और चल ले, तो यह महान कार्य पूर्ण हो जायगा। और फिर भारतीय स्वतत्रताकी सिद्धिका आनन्द हम सब मिलकर मना सकेंगे।"

परन्तु मनुष्योकी प्रार्थनाओका उत्तर भगवान अपने ही ढगसे देते है। अन्तरिम सरकारमे आनेके मुस्लिम लीगके निश्चयकी घोषणा १५ अक्तूबरको हुई। गाधीजीको लगा कि अब वे सेवाग्राम लौटनेको स्वतत्र है। वहा कितने ही कार्य उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उनकी रवानगीके लिए २७ अक्तूबरकी तारीख तय हुई थी। परन्तु जिस दिन सरकारमे सम्मिलित होनेके लीगके निर्णयकी घोषणा हुई, उसी दिन मुसलमान जातिकी ओरसे पूर्वी बगालके मुस्लिम बहुमतवाले नोआखाली जिलेमे व्यापक साम्प्रदायिक दगे फूट पडनेके समाचार आये। वहा हिन्दुओके हजारो घर जलाकर राख कर दिये गये। बडे पैमाने पर लूटपाट मची। जबरदस्तीसे लोगोका धर्म बदला गया और मुसलमानोके साथ हिन्दू स्त्रियोका विवाह कर दिया गया। लोगोकी हत्याये की गई। स्त्रियोका अपहरण किया गया और उन पर बलात्कार किया गया। इन सब घटनाओसे गाधीजीकी आत्मामे अवर्णनीय अधकार छा गया और सेवाग्राम लौटनेके बजाय कवि ब्लेकके 'स्वर्णतन्तु'का सिरा हाथमें लेकर वे यह समस्या हल करनेके लिए नोआखालीकी दिशामें चल पडे। [illegible]

समय किसीको सपनेमें भी यह कल्पना नहीं थी कि वे 'करो या मरो' के उस मिशनके लिए प्रयाण कर रहे हैं जिसकी पूर्णाहुति पांच महीने बाद ३० जनवरी १९४८ के परम बलिदानमें होगी। उस अभागे शुक्रवारके दिन कलहग्रस्त मानव जातिका उद्धारक मौत बुलाकर व मर्त्य मानव मिटकर परम दिव्य ज्योतिमें मिलकर एकरूप हो गये। इस घटनासे साम्प्रदायिक दिनोंदिन बढ़नेवाला तूफान जिसके कारण सम्पूर्ण महाद्वीपका प्रलयकर दावानलमें होम देनेका संकट उपस्थित हो गया था एकाएक शांत पड़ गया पुराने बैरद्वेष और पुरानी शत्रुता एकबारगी भुला दी गई और परस्पर लड़नेवाली दो जातियां भाई भाईके हत्याकांडको छोड़कर सर्व-सामान्य मानव-जातिको हुई अपार क्षतिके शोकमें डूब गई।

लेकिन घटनाओंके मूल्यांकनके लिए हमें १९४२ के 'भारत छोड़ो' संग्रामकी ओर लौटना होगा और बादकी उन घटनाओंको देखना होगा, जिनके कारण सत्ताका हस्तान्तरण हुआ।

दूसरा अध्याय

गलतफहमीकी आंधी

रचता है मानव-मन मन्सूबे अपने-से,
प्रेरक पर गूढ एक महाशक्ति ऐसी है
जो उसके हाथोको सहज मोड देती है—
और जोड देती है महत्तर कार्योसे ।

१

जब ब्रिटिश सरकारने द्वितीय महायुद्धके दिनोमे भारतको उसकी सम्मतिके विना युद्धमे भाग लेनेवाला देश घोषित कर दिया, तो भारतके सामने उसने एक चुनौती उपस्थित कर दी। लेकिन राष्ट्रवादी भारतकी लोकतत्रकी रक्षामे हाथ बटानेकी इच्छा इतनी तीव्र थी कि ब्रिटिश युद्ध-प्रयत्नमे सहायता देनेके पक्षमे प्रवल समर्थन भारतमे वना ही रहा, यद्यपि ग्रेट ब्रिटेनकी ओरसे वार-वार उसकी यह माग ठुकराई गई और उसने भारतको सफलतापूर्वक या स्वाभिमानके साथ ऐसा करनेका अवसर देनेसे इनकार ही किया। प्रत्येक नागरिकके मुह पर निराशाकी छाया फैली हुई थी। ऐसे समय जब कि आक्रमणकारी भारतका द्वार खटखटा रहा था और ससारव्यापी युद्धमे मानव-मूल्योके सर्वनाशका सकट खडा हो गया था, तव भी भारतको गुलामीकी जजीरोमे जकडे रखनेके कारण राष्ट्रकी आत्मा विफल क्रोधसे छटपटा रही थी। जब भारतका अपना भाग्य और सपूर्ण मानव-जातिका भाग्य अधरमे लटक रहा था तब भारत निष्क्रिय दर्शक बन कर तो नही रह सकता था।

इस गहरे नैराश्यसे 'भारत छोडो'के नारेका जन्म हुआ।[1] कोई अहिंसक सग्राम छेडनेके लिए इससे अधिक प्रतिकूल परिस्थिति कभी भारतमे नही उत्पन्न हुई थी। वहुतोको तो यह निरा पागलपन ही मालूम हुआ। परन्तु गाधीजीने अपना निश्चय कर लिया। उन्होने कहा, "सारी दुनियाके राष्ट्र मेरा विरोध करे और सारा भारत मुझे समझाये कि मै गलती पर हू, तो भी मै भारतके खातिर ही नही परन्तु सारे ससारके खातिर भी इस दिशामे आगे बढूगा।"[2] ऐसे आन्तरिक विश्वास और सकल्पके साथ, जिसे देखकर सभी चकित हो गये, उन्होने सारे विरोधको जीत लिया और अपने पुराने साथियोको अपने साथ एक और लडाईके लिए एकत्र कर लिया—यह लड़ाई विदेशी प्रभुत्वके विरुद्ध अतिम लड़ाई थी, सबसे बडी थी और सर्वश्रेष्ठ थी।

ब्रिटिश सरकारको भारतके दुश्मनके हाथा पड जानेका इतना डर नहीं था जितना उसे स्वाधीन करनका था। गाधीजी नही चाहते थे कि लोग निरी कटुता और निराशाके मारे जापानी आक्रमणकारियाका स्वागत करके अपनका कलकित कर। उनके लिए यह एक नतिक प्रश्न था—श्रद्धाका काय था। कुछ भी हो जाय, परन्तु भारतको अपनी आत्मा नही खोनी चाहियें।

शकाशीलोसे गाधीजीने यह कहा 'म जानता हू कि देश आज विशुद्ध अहिंसक प्रकारका सविनय आज्ञाभग करनके लिए तयार नही है। किन्तु जो सेनापति आक्रमण करनसे इसलिए पीछ हटे कि उसके सिपाही तैयार नहा ह वह अपन हाथा धिक्कारका पात्र बनता है। भगवानने अहिंसाके अस्त्रके रूपमें मुय एक अमूल्य भट दी है। यदि वतमान सकटमें म उसका उपयोग करनमें हिचकिचाऊ तो इश्वर मुझे कभी क्षमा नही करगा।"

पडित नहरूके मनम एक घोर द्वद्व मचा हुआ था। एक तरफ लोकतात्रिक राज्या खास कर चीनके साथ उनकी गहरी हमदर्दी थी, दूसरी ओर सस्कारशून्य दूषित ब्रिटिश साम्राज्यवाद था जिसे वे दिलसे नापसद करते थे। जब वे गाधीजीके साथ भारतकी परिस्थिति पर चर्चा कर रहे थे तब उहाने गाधीजीकी आखाम आवेश दखा और उहाने समझ लिया कि 'समग्र दष्टिसे देखते हुए यह आवेश समस्त भारतका आवेश है।" इस प्रचण्ड उत्साहके सामन छोटे छोटे तक और विवाद तुच्छ और अथहीन बन जाते ह। और काग्रस मदानम कूद पडी।

८ अगस्त १९४२का भारत छोडो' प्रस्ताव भारतके स्वाधीनता-सग्रामके इतिहासमें एक सीमाचिह्न था। जसा गाधीजीने कहा, वह ब्रिटनसे सही काय करनेकी माग थी भले ही जिस पक्षके साथ अयाय किया गया था वह ब्रिटेनके सही कायके परिणाम भुगतनेका क्षमता रखता हो या न रखता हो। 'यह कोई नारा नही था बल्कि आत्म शासनके लिए छटपटाती हुई भारतीय आत्माकी प्रबल पुकार थी। एक ही झटकेमें उसने औपनिवेशिक स्वराज्य बनाम पूण स्वाधीनताके पुराने विवादके बचे-खुचे अशाका खातमा कर दिया। इसके बाद ब्रिटिश सत्ताके बिना किसी शतके भारतस हटनेकी बात ही भारतीय प्रश्नके निवटारेकी एकमात्र शत हा गई। अब तक साम्प्रदायिक समस्याको ब्रिटिश सत्ताने भारत छोडनेस इनकार करनका एक बहाना बना रखा था। अब वही भारत छोडो की मागका कारण और उचित समथन बन गया। अब भारतका सविधान इग्लण्ड बनानकी चीज नही रही भारत वासियान निश्चय कर लिया कि अब तो अपना सविधान व स्वय ही बनायेंगे। अब करो या मरो का युग आरभ हा गया।

*

जब काग्रेसकी कार्यसमिति शान्तिपूर्ण समझौतेके लिए बातचीत करनेकी कोशिश ही कर रही थी उस समय कार्यसमितिको एक ही धावेमे जेलमे डाल-कर तथा 'सिहकी हिंसा'का ताडव मचाकर सत्ताधारियोने 'भारत छोडो' आन्दोलनकी प्रचण्ड बाढ़को तत्काल तो दबा दिया। परन्तु उसने जनतामे जो उत्साह और जोश उत्पन्न किया वह बढता ही गया। तपस्वीके अन्तर्नादने एक बार फिर सिद्ध कर दिया कि राजनीतिक बुद्धिमत्ताके गणितसे अन्तर्नादकी भविष्यवाणी अधिक सच्ची होती है। पाचसे भी कम वर्षोमे अगस्त १९४२ का राजद्रोही नारा ब्रिटिश सरकारका सरकारी कार्यक्रम बन गया; और थोडे ही समयमे 'भारत छोडो'का नारा भी पुराना पड गया और उसका स्थान 'एशिया छोडो'के नारेने ले लिया।

सशस्त्र पहरे और आगाखा महलके नजरबन्दी कैम्पके काटेदार तारोके दोहरे घेरेमे बन्द रह कर भी गाधीजी भारतकी अजित और अजेय आत्माके प्रतीक और लोगोके लिए श्रद्धा और आशाके दीपस्तभ बन गये। जिस समय चर्चिल राष्ट्रपति रूजवेल्टको इस सभावनाके लिए तैयार कर रहे थे कि उनके अपने देश (ब्रिटेन) पर आक्रमण हो तो शायद अग्रेज उनके बाद आनेवाली सर-कार द्वारा नाजियोके सामने आत्म-समर्पण कर देगे, उस समय गाधीजी अपने निहत्थे देशवासियोको इस बातके लिए तैयार कर रहे थे कि यदि जापानी लोग भारतकी भूमि पर उतर आये तो उनके सामने झुकनेकी अपेक्षा आखिरी आदमीके जीवित रहने तक उनका बहादुरीसे सामना किया जाय।[४] परन्तु अब गाधीजीको अग्रेजोके युद्धकालीन प्रचार-तत्र द्वारा ससारके अखबारोमे जापा-नियोका हिमायती और पाचवी कतारका आदमी बताकर बदनाम किया जा रहा था और अपनी सफाई देनेके जिस प्रारभिक अधिकारका एक मामूली अपराधी भी दावा कर सकता है उससे भी उन्हे वचित कर दिया गया था। गांधीजीके भूतपूर्व विरोधी फील्ड मार्शल स्मट्सने, जिनसे वे दक्षिण अफ्रीकामे बीस वर्ष तक लड चुके थे, पुण्य-प्रकोप प्रकट करते हुए कहा

> गाधीको पाचवी कतारका आदमी बताना बिलकुल बेहूदी बात है। . वे ससारके महापुरुषोमे से एक है और उन्हे इस श्रेणीमे कभी रखा ही नही जा सकता। वे उच्च आध्यात्मिक आदर्शोसे प्रेरित व्यक्ति है। . . यह सन्देह किया जा सकता है कि वे आदर्श हमारे कठिनाइयोसे भरे जगतमे सदा आचरणमे उतारे जा सकते है या नही। परन्तु इसमे किसे शका हो सकती है कि गाधीजी एक महान देशभक्त, एक महापुरुष और एक महान आध्यात्मिक नेता है?

युद्धकालमे युद्ध लडनेवाले देशोके प्रचार-तत्रको खुल कर खेलनेकी पूरी छूट थी। परन्तु सत्यको दबाया नही जा सका। बगालके १९४३-४४ के

दुभिगन ससारके अन्त करणको हिला दिया। सरकारी सूचनाके अनुसार इस दुभिक्षके कारण १५ से २० लाख मनुष्य मृत्युके शिकार हुए। बगालकी राजधानी कलकत्ताकी सडकें और मुहल्ले मुर्दोंसे भर गये थे, क्योंकि उन निराधार मानवोंके शवोंकी चिता करनेवाला या उनकी अतिम व्यवस्था करनेवाला कोई था ही नहीं। कभी कभी तो भूखसे तडप कर धरती पर गिर पडनेवाले और जीवनका अतिम श्वास ले रह मानवोंके शरीरोंको गिद्ध नोच डालते थे। भारतमें आये हुए ब्रिटिश सेनाके सैनिकोंमें से बहुतोंने उस कठोर शासनमें देखा कि उसके पजेने देशमें स्वतत्रता-सग्रामको दबा रखा है, और जिस ध्येयके लिए व लोग लड रह ह उसका भारतमें नामनिशान भी नहीं है। उन्होंने इसके विरुद्ध अपनी अप्रसन्नता स्पष्ट शब्दोंमें प्रकट की। उनमें से एकने गाधीजीको लिखा

> हम भरती किये गये सिपाहियोंमें से अनेकने कहा ह कि (भारतीय समस्याका) एकमात्र हल यह है कि आपसे ऐसा अनुरोध किया जाय कि आप भारत छोडो' के अत्यन्त उचित प्रस्ताव पर अमल करनेके लिए प्रत्येक उपलब्ध साधन काममें लें। मने अपने यहाके एक पार्लियामेंटके सदस्यके सामने एक अन्य प्रश्न यह उठाया जिन लोगोंसे मुझे प्रेम है उनके खिलाफ हथियार उठानेको यदि मुझसे कहा जाय तो सम्राटकी सेनाके एक सिपाहीके नाते मुझे क्या करना चाहिये? मने सूचित कर दिया है कि म ऐसा करनेसे इनकार कर दूगा। हम इस सेनामें कोई साम्राज्यवादी युद्ध लडनेको नहीं आये है और मैं तो ऐसा युद्ध कभी नहीं लडूगा।[१]

झूठे प्रचारके विरोधके रूपमें और जनताको जो कष्ट हो रहे थे उनमें जेलमें रहते हुए भी हिस्सा लेनेके एकमात्र उपायके रूपमें गाधीजीने इक्कीस दिनका उपवास आरभ कर दिया। अधिकारियोंने तुरत उन पर आक्षेप लगाया कि यह तो "एक तरहकी राजनीतिक धमकी है" "जिम्मेदारीसे बच निकलनेका आसान माग है। उपवासके उत्तरमें उन्होंने गाधीजीके दाह-सस्कारके लिए काफी चदन-काष्ठ इकट्ठा कर लिया नजरबदी कम्पके चारों ओर पहरा दुगुना कर दिया और उनकी मृत्यु पर होनेवाले सार्वजनिक प्रदर्शनोंको दबा देनेके लिए भी पूरा प्रबध कर लिया।

बर्नार्ड शॉने कहा

> इस (गाधीजीको जेलमें डालनेकी करतूत) और उससे सम्बन्धित कोडे लगानेकी अक्षम्य करतूतने हिटलरके विरुद्ध हमारे नैतिक दावेको खतम कर दिया है। राजाको चाहिये कि वे शासन-नीतिके एक कदमके

रूपमे नही परन्तु शुद्ध सज्जनताके कार्यके रूपमे ही गाधीजीको तुरन्त छोड दे और अपने मन्त्रि-मण्डलकी निर्बुद्धिताके लिए उनसे क्षमा मागे।

परन्तु गाधीजीको जेलसे छोडा नही गया। उनकी मृत्यु भी नही हुई। उपवास आरभ होने पर जेलके द्वार खोल दिये गये थे; उपवास समाप्त होने पर वे फिर वन्द कर दिये गये। उनके दो निकटतम साथियोका दाह-सस्कार उन्हीकी आखोके सामने नजरबन्दी कैम्पमे हुआ। इनमे से एक थे पच्चीस वर्ष तक भक्तिपूर्वक गाधीजीकी सेवा करनेवाले उनके सचिव महादेव देसाई और दूसरी थी उनके जीवनके समस्त सग्रामोमे सदा साथ देनेवाली उनकी पत्नी कस्तूरवा गाधी। इस आघातसे किसीकी भी हिम्मत टूट जाती और श्रद्धा कमजोर हो जाती या मिट जाती। परन्तु गाधीजी चट्टानकी तरह अटल रहे। उनके मनमे लेशमात्र भी कटुता, शका या निराशा नही आई। वे अपने उठाये हुए कदमके न्यायसगत और निर्दोष होनेके साक्षी वने रहे और प्रभुको अपना आसरा वनाये रहे। उन्होने वाइसरॉय लॉर्ड वेवेलको जेलसे लिखा, "मै आपसे सहमत हू कि जव तक आपके वही विचार है जो आपके पत्रमे प्रगट किये गये है . . . तव तक मेरे जैसेके लिए उपयुक्त स्थान केवल जेल ही है। और जव तक आपका हृदय-परिवर्तन नही होता तव तक मुझे आपका कैदी रहनेमे पूरा सन्तोष है।"[६]

तदनुसार उन्होने अपने वचे हुए साथियोसे कह दिया कि वे भी महादेव और कस्तूरवाकी तरह अपने दिन कारागारमे ही पूरे करनेको तैयार रहे; और उनके तथा अपने लिए आत्म-सयम, अध्ययन और आध्यात्मिक साधनाका जेलके सीखचोके भीतर ही छह वर्षका कार्यक्रम तैयार कर दिया। उनकी कामना यही थी कि 'धर्मकी जय हो अथवा अधर्मका क्षय हो।' उनकी तपस्या दिनोदिन गहरी होती गयी और यह कहनेमे कोई अतिशयोक्ति नही कि उन दिनो जेलके भीतर या वाहर भारतीय स्वाधीनता-सग्राममे लगा हुआ एक भी व्यक्ति ऐसा नही था, जिसने गाधीजीकी इस तपस्यासे अपनेको वलशाली और उन्नत वना हुआ अनुभव न किया हो।

धमकियोसे, फुसलाहटसे और दमनसे गाधीजी या काग्रेस कार्यसमितिके सदस्यो द्वारा, जो अहमदनगरके किलेमे कैदी वना कर रखे गये थे, 'भारत छोडो' प्रस्तावका खडन नही कराया जा सका और न उसे वापस लिवाया जा सका। इससे लोगोकी आत्मा और भी फौलादी वन गई और नरम लोकमतकी सहानुभूति भी विदेशी सरकारके साथ न रही। मुस्लिम लीग और काग्रेसमे वुनियादी राजनीतिक प्रश्न पर तो अव भी मतभेद था, परन्तु ससदीय मोर्चे पर वे दोनो एक हो गईं और उन्होने भारत-सरकारके १९४४ के वजटको अस्वीकार कर दिया। मुस्लिम लीगके एक प्रमुख सदस्य सर

यामीन खान केन्द्रीय विधान-सभामें सहा सरकारके अत्यायाव लिए मैं उसका आभारी हू। मेरा खयाल है कि सरकारने दुष्प्रयास कांग्रेस और लीगमें मत करा दिया है और वे दोनों एक-दूसरेके इतना निकट आ गये हैं कि दुनियाको इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण मिल गया कि उनका सरकारके प्रति विश्वास नहीं है।

अन्तमें गांधीजी एसे बीमार पड़े कि लगभग मृत्युके द्वार पर पहुंच गये। एक समय तो ऐसा भी आया कि जिस आन्तरिक प्रकाशने जीवनभर उन्हें सहारा दिया वही प्रकाश बुझता हुआ दिखाई दिया। परंतु यह स्थिति क्षणिक ही थी। जब रात्रि अत्यन्त अंधकारपूर्ण दिखाई दे रही थी और सारी आशायें लुप्त हो चली थी ठीक उसी समय जेलके दरवाजे अचानक खुल गये और गांधीजीको बिना शर्तके रिहा कर दिया गया।

ब्रिटिश सत्ताधारी यह नहीं चाहते थे कि दो मृत्युओंके बाद नजरबन्द कैम्पमें उनके हाथों यह तीसरी मृत्यु हो। उन्हें लगा कि गांधीजी मर रहे हैं। ब्रिटिश विदेश मंत्रालयने तो ऐसा मानकर कि उनकी मृत्यु बिलकुल निकट है विदेश मंत्री एन्थनी ईडनके हस्ताक्षरसे एक आदेश भी जारी कर दिया था कि गांधीजीके निधनकी टिप्पणी किस प्रकार लिखी जाय। जिस दिन गांधीजी भारतमें रिहा किये गये उसी दिन उस सूचनाकी एक प्रति ब्रिटिश इन्फरमेशन आफिसोंको भेजी गई थी। एक प्रति चुंगकिंगकी आफिसको भी मिली थी। संयोगसे सुप्रसिद्ध भारतीय विद्वान और दार्शनिक डा० राधाकृष्णन उस समय वहीं थे। उस सूचनाका आशय यह था गांधीकी मृत्यु हो जाय तो उनकी नैतिक उच्चताको घटाया न जाय, अपार्थिव आदर्शोंके प्रति उनकी अटल निष्ठाको स्वीकार किया जाय और इस बात पर खेद प्रगट किया जाय कि अपने अद्वितीय प्रभावका लाभ मित्रराष्ट्रोंको विशेषत चीन और भारतको, उन्होंने नहीं दिया।

परन्तु स्पष्ट था कि ईश्वर गांधीजीसे कुछ काम और लेना चाहता था। लोगोंके भय और ब्रिटिश सरकारकी आशंकाओंके विपरीत महात्माजीका अवसान नहीं हुआ।

२

नजरबन्दी कैम्प छोड़नेसे पूर्व गांधीजी तथा उनकी मंडलीके सब लोगोंने कारावासमें दिवंगत बने हुए अपने दो साथियोंको अंतिम अंजलि अर्पण की। जहां दोनोंका अग्नि-संस्कार हुआ था वहां जाकर सबने फूल चढ़ाये तथा समाधि-स्थल पर बैठ कर प्रार्थना की। दोनोंके अवसानके बाद उनके साथी प्रतिदिन समाधि-स्थल पर जाकर इसी प्रकार उन्हें अंजलि दिया करते थे। सरकारके नाम एक पत्रमें गांधीजीने लिखा

मै यह वात लिखित रूपमे कहना चाहता हूं . . . कि श्री महादेव देसाई और वादमे मेरी पत्नीके दाह-सस्कारके कारण . . समाधिका यह स्थान पवित्र वन गया है। मेरा विश्वास है कि सरकार इस जगहको प्राप्त कर लेगी। . . मै इस पवित्र स्थानकी देखभालका और यहा दैनिक प्रार्थनाका प्रवन्ध करना चाहूगा।"

कैम्प-सुपरिन्टेन्डेन्ट खान वहादुर कटेली पिछली रातको आकर गाधीजीसे कहने लगे . "कल सुवह जव आप वाहर निकलेगे तव मै गणवेश पहन कर सम्राट्के कर्मचारीकी हैसियतसे ड्यूटी पर खडा हूगा। इसलिए मै इस समय आपके आशीर्वाद लेने आया हू।" प्रात काल प्रार्थनाके वाद उन्होने गाधीजीको उनके पचहत्तरवे जन्मदिनके उपलक्ष्यमे पचहत्तर रुपयेकी थैली भेट की और कहा . "महात्माजी, आपको वाहर वहुतसी थैलिया मिलेगी, परन्तु कटेलीकी थैलीको पहला स्थान लेने दीजिये।" जेल-अधिकारियो और गाधीजीका सम्वन्ध जेलर और कैदीका नही रह गया था। वे सव गाधीजीके विशाल परिवारके सदस्य हो गये थे।

जव महात्माजीकी मोटर काटेदार तारोके दरवाजेके पास पहुची, तो उसे रोक कर मेरी वहन डॉ० सुशीला नय्यर पर एक नोटिस तामील किया गया कि वे कारावासके समयकी नजरवन्दी कैम्पकी घटनाए वाहर किसीको न वताये। डॉ० सुशीलाको गाधीजीके डॉक्टरी सहायकके तौर पर नजरवन्द किया गया था।

महात्माजीने पूछा· "मेरे लिए कोई आज्ञा नही है?"

उनके लिए कोई आज्ञा नही थी। उनकी रिहाई विना किसी शर्तके हुई थी।

उन्होने सुशीलासे, जो परेशानीमे पड गई थी, कहा, "इस पर हस्ताक्षर कर दो।"

मडलीके वाकी लोगोने — डॉक्टर गिल्डरने, मीरावहन (कुमारी स्लेड) ने, उनकी पोती (मनु गाधी) ने और मैने भी वारी वारीसे नोटिस पर हस्ताक्षर कर दिये।

अधिकारियोको डर था, और वह ठीक ही था, कि अगर वे गाधीजी पर कोई प्रतिवन्ध लगानेकी कोशिश करेगे, तो महात्माजी शायद वाहर जानेसे इनकार कर देगे। स्पष्ट था कि वे जो कुछ चाहे सो कहने या करनेकी उन्हे छूट थी। इस तरह वाकी लोगो पर लागू किया गया आदेश निरर्थक था!

वादमे डॉ० गिल्डरने गाधीजीके दैनिक स्वास्थ्यका वुलेटिन लिखवाना शुरू किया "पिछले चौवीस घटोकी अपेक्षा महात्मा गाधीकी स्थिति . . ."

मडलीमे से किसीने कहा : "यह तो निषेध-आज्ञाका उल्लघन है!"

महात्माजी मुसकरा उठे। उनकी टिप्पणी यह थी "आदेश इतनी व्यापक भाषामें लिखा गया है कि इसके पालनकी आशा सरकार किसीसे भी नहीं रख सकती!"

रातको नींद न आनेसे उनका ब्लड प्रेशर बढ़ गया था और सुबह उत्तेजना भी काफी रही, फिर भी गांधीजीकी तबीयत रोजसे अच्छी रही। इसका कारण उन्होंने यह बताया कि वे रातभर रामनाम जपते रहे थे। "मैं सोना चाहता था परन्तु सो नहीं सका। इसलिए मैं अक्सर जो उपदेश दूसरोंको देता रहता हूं उसका मैंने स्वयं पालन किया 'रामनाम हजार बार जपो, लाख बार जपो, करोड़ बार जपो। अन्तमें तुम्हें शान्ति अवश्य मिल जायगी।' वैसे मुझे ताजगी मालूम हो रही है। लेकिन मैं स्वीकार करता हूं कि जितनी शून्यता मुझे आज मालूम हो रही है उतनी पहले कभी नहीं हुई। मैं नहीं जानता कि मैं क्या करूंगा या कहूंगा। परन्तु जिस ईश्वरने अब तक मेरा पथ-प्रदर्शन किया है वही मुझे रास्ता दिखायेगा। मुझे विश्वास है कि वह ठीक समय पर मुझे उचित वाणी देगा।"

सब तरफसे गांधीजीके स्वास्थ्यकी पूछताछ करनेवाले और रिहाई पर प्रसन्नता प्रकट करनेवाले तारोंकी वर्षा होने लगी। उनमें से एक था पूज्य पंडित मदनमोहन मालवीयका 'ईश्वरने करोड़ोंकी प्रार्थना सुन ली और आपको ताजी हवामें सांस लेनेको मुक्त कर दिया। मुझे पूरी आशा है कि वह आपको मातृभूमि और मानव-जातिकी सेवाके लिए सौ वर्ष जीवित रखेगा।"

गांधीजीने तारसे उत्तर दिया "आपने एक ही झटकेमें मेरी आयुके पच्चीस वर्ष घटा दिये! अब अपनी आयुमें वे २५ वर्ष बढ़ा लीजिये।' इसका सम्बन्ध गांधीजीके उस अन्तिम भाषणसे था जो उन्होंने अगस्त १९४२ में अपनी गिरफ्तारीसे पहले अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीमें दिया था। उसमें उन्होंने ऐसा कहा था कि मेरी इच्छा १२५ वर्ष तक जीने और देशकी सेवा करनेकी है।

ऐसा ही एक सन्देश राजाजीका था। उनकी अपनी तंदुरुस्ती कभी कभी अच्छी नहीं रहती। गांधीजीने उन्हें उत्तर दिया वैद्यजी, आप अपना ही इलाज कीजिये!

एक उच्च अधिकारीने जो गांधीजीके बारेमें सरकारको मिलनेवाली गुप्त डॉक्टरी रिपोर्ट पढ़ रहे थे कहलवाया उनसे कहिये कि धीमी गतिसे काम करें। वे नहीं जानते कि उनकी दशा कितनी गंभीर है।' लेकिन यह कहना जितना आसान था उतना करना आसान नहीं था। आरामकी ही स्वास्थ्यको सबसे ज्यादा जरूरत थी और आराम ही उनको मिल नहीं रहा था। मिलनेवालों सहानुभूति प्रकट करनेवालों और शुभचिन्तकोंकी भीड़

लगी रहती थी। उन्हे गाधीजीके सामने अपना दिल खोल कर रख देनेक अधिकार था और गाधीजी ऐसे आदमी नही थे जो अपनी जानको जोखिमर्म डाल कर भी उन्हें यह सात्वना देनेसे इनकार करते। नतीजा यह हुआ वि अपने पाच दिनके पूना-निवासके अतमे वे कैदखानेसे निकलते समय जितने कमजोर थे उससे भी ज्यादा कमजोरी अनुभव करने लगे। वे कह उठे "शान्तिके दिन वीत गये। जेलमे पूरी शान्ति थी।"

गाधीजीको जुहू ले जानेका निश्चय हुआ। जुहू वम्बईके पास समुद्र-तट पर एक शान्त स्थान है। जव १९२४ मे एपेंडिसाइटीजके ऑपरेशनके वाद उन्हें यरवडा सेन्ट्रल जेलसे छोडा गया था, तब भी वे आराम लेनेके लिए वही गये थे। सरकारने उनके और उनकी मडलीके लिए रेलमे एक दूसरे दर्जेके डिव्वेकी व्यवस्था कर दी थी। कैदीके रूपमे उन्होने पहले दर्जेमे सफर किया था परन्तु स्वतत्र मनुष्यके नाते वे देशके गरीवोमे से ही एक थे। उन्हे गरीवोकी तरह तीसरे दर्जेमे यात्रा किये विना शान्ति नही मिल सकती थी।

जेलोके इन्स्पेक्टर जनरलकी पत्नी विदाईके समय गाधीजीसे मिलने आईं। उनके पिता पजावके एक काग्रेसी महारथी थे, जिनके यहा गाधीजी १९२०–२२ के असहयोग-कालमे अकसर मेहमान हुआ करते थे। उन्होने विनती की: "महात्माजी, अगर आपका फिर कभी जेल जानेका विचार हो जाय, तो कृपा करके हमे पहलेसे वता दीजियेगा, ताकि मेरे पति छुट्टी लेकर चले जाय!"

गाधीग्राम — जुहूमे श्रीमती सरोजिनी नायडू गाधीजीको लोगोके झुडोके कुतूहलसे, आजिजी करनेवाले मुलाकातियोसे और किसी भी तरह भीतर घुस आनेवाले लोगोसे वचानेके लिए मकानके दरवाजे पर द्वारपाल और चौकीदार वन कर वैठ गईं। वे पूनाके नजरवन्दी कैम्पमे गाधीजीके साथ नजरवन्द रही थी और उन्हीकी तरह कुछ समय पहले स्वास्थ्यके कारण छोड दी गई थी। उनका यह काम वडा मुश्किल और नाजुक था। परन्तु जिस खूवीसे उन्होने यह काम किया उस तरह वे ही उसे कर सकती थी। उन्होने अपने कमजोर स्वास्थ्य और आरामकी जरूरतकी जरा भी परवाह न करके गाधीजी पर उसी तरह चौकी की, जैसे कोई सिंहनी अपने वच्चेकी करती है। इस तरह गाधीजीके दिये हुए स्नेहपूर्ण 'अम्माजान' नामको उन्होने सार्थक किया।

वहुत लोग वहा आये थे। वहुतोको लौटा दिया गया था। परन्तु इन आने वालोमे जिसने आते ही गाधीजीका हृदय जीत लिया, वह था एक दस-वारह सालका मैले कपड़ोवाला लडका। वह गाधीजीके दर्शनके लिए सुवहसे इतजार करता रहा था। उसने दो-तीन रुपयेके फल गाधीजीको भेट किये। गाधीजीकी मडलीमे से किसीने उसे भिखारी समझ कर ऐसा ही कुछ कह दिया। वच्चेके

स्वाभिमानको चोट लगी 'नहीं महात्माजी मैं भिखारी नहीं हूं। जबसे मैंने आपकी रिहाईका समाचार सुना तबसे मैं कुलीका काम करता रहा हूं और इतना रुपया कमा कर यह नम्र भेंट आपके लिए लाया हूं।' गांधीजी गद्गद हो गये। उन्होंने यह कह कर कि "अपने परिश्रमका फल तुम्हीं खा लो" उसके लाये हुए फल उसे देने चाहे। परन्तु लड़केने उन्हें छुआ तक नहीं। उसने उत्तर दिया, "महात्माजी आप खा लेंगे तो मेरा पेट भर जायगा।" यह कहते कहते उसका चेहरा चमक उठा और वह विजयके गर्वके साथ चला गया।

गांधीजीको स्वास्थ्यलाभ धीरे धीरे ही हो रहा था। इससे सरकारको तो शायद वांछित राहत मिली परन्तु देखभाल करनेवाले डाक्टरोंके लिए यह चीज सिर-दर्दका कारण बन गई। मंडलीके अन्य लोगोंकी तरह वे भी मलेरियाके अलावा नजरबंदी कैम्पसे पेचिशकी शिकायत लेकर निकले थे। इससे उन्हें तीव्र एनीमिया हो गया था। परन्तु महात्माजीने कोई भी दवा लेनेसे इनकार कर दिया। जब नजरबंदी कैम्पमें उन्होंने कुनैन ली थी तब उन्हें मन मारकर समझौता करना पड़ा था। इसे उन्होंने सदा अपनी नैतिक पराजय और ईश्वरमें अश्रद्धाका लक्षण समझा था। जब उनकी अनिच्छाको जीतनेके लिए डाक्टरोंने डाक्टरी दलीलोंका जोर लगाया तो गांधीजीने उनसे कह दिया कि यह मेरी श्रद्धाका अंग है और मेरी श्रद्धा अविभाज्य—अखंड है। अगर मैं अपने महत्त्वपूर्ण विश्वासकी एक बातमें झुकने लगूंगा तो उसका अंत कहां होगा? लोग इसे हठ कह सकते हैं, लेकिन क्या मेरा हठ ही मुझे भारतके स्वातंत्र्य संग्राममें अटल नहीं रख रहा है? उन्हें रात भर नींद नहीं आई और सुबह ही उन्होंने डॉक्टरोंसे पूर्ण स्वाधीन हो जानेकी घोषणा कर दी। यह परिवर्तन मुख्यतः मानसिक—आध्यात्मिक था। इसने उन्हें उत्पीड़नकी भावनासे मुक्त कर दिया और उनमें फिरसे आत्म विश्वास आ गया। दूसरे दिन जब एक मित्रने उनसे पूछा कि आपकी तबीयत कैसी है तो उन्होंने उत्तर दिया "यदि आप यह प्रश्न मुझसे कल करते, तो मुझे कोई उत्तर न सूझता। परन्तु आज मैं कह सकता हूं कि मैं बिल्कुल अच्छा हूं। क्योंकि रातको मुझे वह चीज फिर मिल गई जो मैं कुछ समयके लिए खो बैठा था। वह है ईश्वरमें सजीव श्रद्धा। ईश्वर ही परम वैद्य है—महान आरोग्य-दाता है।"

गांधीजीकी देखभाल करनेवाले चिकित्सक डॉ० विधानचन्द्र राय डा० गिल्डर डॉ० गज्जर और डा० जीवराज मेहता आदि अग्रगण्य डॉक्टर थे। वे आसानीसे हार माननेवाले नहीं थे। उन्होंने गांधीजीसे कहा कि हम आप पर कोई नियंत्रण नहीं रखेंगे इसके बजाय हम खुद आपके नियंत्रणमें रहेंगे।

वैज्ञानिक व्यक्ति होनेके नाते सलाह देना तो हमारा काम है। प्राकृतिक चिकित्सावादीके नाते यह आपकी इच्छा पर निर्भर है कि आप उस सलाहको माने या न माने। यह व्यवस्था काम कर गई। इससे गाधीजीको प्रयोग करने और अपनी श्रद्धाके अनुसार खतरे उठानेके लिए काफी गुजाइश मिल गई। परन्तु कभी कभी विपम स्थिति पैदा हो जाती थी। अपने एनीमियाके लिए उन्होने खमीरसे वनी एक पेटेण्ट दवा लेना मजूर किया था। परन्तु डॉक्टरोको वडी परेशानी हुई जव उन्हें पता लगा कि उसकी कीमत लडाईके दिनोमे वेहिसाव वढ गई है। एक शीशीका मूल्य ६५ रुपयेके करीव हो गया था। गरीवोके प्रतिनिधिके नाते महात्माजी अपने पर होनेवाले खर्चके मामलेमे सिद्धान्तके रूपमे इतनी कजूसी करते थे जितनी सिर्फ वे ही कर सकते थे। मित्रो और डॉक्टरोने 'युद्ध-परिपद्'की वैठक करके 'अत्यन्त गुप्त रूपमे' यह निश्चय किया कि जरूरत पडने पर गाधीजीसे यही कहा जायगा कि वह शीशी एक मित्रके यहा उनके 'युद्धसे पहलेके पुराने सग्रह' मे से मिल गई थी! सौभाग्यसे यह अटपटा प्रश्न पूछा ही नही गया और 'सत्यके प्रयोगो' के लेखकको सत्यके एक अतिशय सदिग्ध प्रयोगकी अग्नि-परीक्षामे से गुजरना नही पडा।

कुछ दिनके वाद एक होमियोपैथ गाधीजीको अपनी उपचार-पद्धति समझाने आये। गाधीजीका होमियोपैथीमे कोई विश्वास नही था। एलोपैथी पर भी उनकी श्रद्धा नही थी। उनका विश्वास एकमात्र प्राकृतिक चिकित्सा पर ही था। परन्तु उनके स्वर्गवासी साथी 'वगालके वेताजके वादशाह' देशवन्धु चित्तरजन दास और पडित मोतीलाल नेहरूकी हमेशा यह इच्छा रही थी कि गाधीजी होमियोपैथीको एक वार आजमा कर देखे। उनकी स्मृतिका सम्मान करनेके कारण और इसलिए भी कि "उन्हे ईश्वर पर और पचतत्त्वोकी क्षमता पर दृढ विश्वास नही था," उन्होने होमियोपैथसे मिलनेकी वात स्वीकार कर ली थी।

चिकित्सक महाशयने गाधीजीसे उनके पारिवारिक इतिहासके वारेमे पूछताछ शुरू की "आपके पिताजीका स्वर्गवास कव और किस कारणसे हुआ था?"

"वे गिर पड़े थे। उससे उन्हे भगदर हो गया और पैसठ वर्पकी उमरमे वे चल वसे।"

इससे काम नही चला। चिकित्सक आगे वढे "आपकी माताजीकी मृत्यु किससे हुई?"

"वे विधवा हो गईं और वियोग-दुःखसे उनकी मृत्यु हो गई।"

चिकित्सक महोदय कुछ अधीर हो रहे थे। उन्होने पूछा, "आपकी स्मरण-शक्ति कैसी है?"

"आप कल्पना कर सकें उतनी खराब है। ब्यौरेकी बातें मुझे याद ही नहीं रहती। अगर आप मुझे स्मरण शक्ति फिरसे प्रदान कर दें, तो मैं बिना कुछ लिये आपके गुण गाता फिरूंगा" गांधीजीने आंख चमका कर उत्तर दिया।

डाक्टर बोले "महात्माजी, यह वरदान तो ईश्वर ही दे सकता है। मैं आपके प्रस्तावको कितना ही पसंद करूं तो भी मैं वैसा नहीं कर सकता।"

तो फिर बिना किसी प्रस्तावके ही वह शक्ति दे दीजिये!"

डाक्टरने विषय बदल दिया। "आपको याद है कि बरसों पहले जब आप हरद्वारका मिशन अस्पताल देखने गये थे तब मैंने आपको घुमा कर सारा अस्पताल दिखाया था?" डाक्टरने वाक्यके अंतिम अंश पर जोर दिया।

गांधीजीने उत्तर दिया हां मुझे याद है कि हरद्वारके अस्पतालमें मैं गया था।

डॉक्टर प्रसन्न दिखाई दिये। वे तुरंत बोले तब तो आपकी स्मृति बहुत अच्छी है।

गांधीजी बोले "नहीं आपकी मुझे बिलकुल याद नहीं!"

डाक्टर झेंप गये। वे अपने मंतव्य नोट कर रहे थे। अब उन्होंने वह कागज जांचके लिए गांधीजीके हाथमें दे दिया। उसमें लिखा था प्रकृति —बड़ी चतुर दार्शनिक और धार्मिक स्वाध्यायके प्रेमी ।'

प्रकृति-सम्बन्धी टिप्पणीके आगे गांधीजीने बड़ा प्रश्नचिह्न लगा दिया।

अदम्य डा० विधानचन्द्र राय पास ही बैठे थे। बोल उठे "एक बात और जोड़ दीजिये—सद्गुणोंके आरोप पर शंका करनेकी आदत!

हामिमापथ मुसकराये। बोले इसे कहते हैं नम्रता।

गांधीजी बीचमें ही बोल उठे नम्रताकी कमजोरी मुझमें कभी नहीं रही।' इस पर जोरकी हंसी हुई।

जब हंसी शान्त हुई तो गांधीजीने कहा 'मैं अपना ब्लड प्रेशर इसी तरह कम किया करता हूं।

३

गांधीजीकी रिहाई पर जिस भारतने उनका स्वागत किया वह भारत अपमानित और तिरस्कृत था परन्तु पराजित भारत नहीं था। वह अडिग और अजेय था। श्री विलियम फिलिप्स भारतमें राष्ट्रपति रूजवेल्टके विशेष दूत बन कर आये थे। लेकिन उन्हें गांधीजीसे जेलमें मिलनेकी इजाजन नहीं दी गई और ब्रिटिश सरकारने उनके राजदूतके पदकी अवज्ञा की। भारत छोड़ो आन्दोलन ज्यादातर ऐसे कार्यकर्ता चला रहे थे जो भूगर्भमें चले

गये थे। युद्धकालमे भारतीय सेनाके जिन सैनिकोने जापानके आगे हथियार डाल दिये थे, उन्हीने भारतीय राष्ट्रीय सेना — आजाद हिन्द फौज — बनाई थी और वह नेताजी सुभाष बोसके नेतृत्वमे वर्मी मोर्चे पर भारतकी आजादीके लिए अंग्रेजोसे लड रही थी। उसे विवश होकर भारतकी भूमिसे पीछे हटना पडा था। जापानी आक्रमणका तात्कालिक भय मिट गया था, परन्तु बगालके अकालके भूतके बावजूद युद्धकालीन प्रतिवन्ध ज्योके त्यो बने हुए थे। अब अकालकी छाया देशके दूसरे हिस्सो पर भी पडने लगी थी। आर्डिनेन्स राज्यमे दमन पूरे जोरो पर था. अखबारोके मुह बन्द कर दिये गये थे, हजारो लोग जेलमे ठूस दिये गये थे, कांग्रेस कैदमे थी तथा नये नये आर्डिनेन्सो द्वारा न्यायालयोके निर्णय बेकार कर दिये गये थे। किसीकी स्वतत्रता सुरक्षित नही थी। उदार दलकी और दूसरे राष्ट्रीय नेताओकी कांग्रेस तथा ब्रिटिश सरकारके बीचकी गुत्थी सुलझानेकी सब कोशिशे व्यर्थ हो चुकी थी। उदार दलके नेता सर तेजबहादुर सप्रूने कहा, "देशमे चारो तरफ गहरा रोष और तीव्र निराशाकी भावना फैली हुई है। भारत और इंग्लैडके व्यापक और स्थायी हितमे वर्तमान स्थितिको बनाये रखना बुद्धिमानीकी बात नही है।"[८]

जब इस तरह सारा देश ब्रिटिश सैनिक शक्तिके पैरो तले कराह रहा था, तब अचानक गाधीजी आगाखा महलसे रिहा करके भारतरूपी विशाल नजरबन्दी कैम्पमे भेज दिये गये। परन्तु इससे स्थितिमे बहुत फर्क पड गया। भारतने आरामकी सास ली। लोगोको लगा कि कप्तानने आकर फिरसे जहाजकी पतवार सभाल ली है, अब वह जहाजको तूफानी समुद्रसे सुरक्षित पार ले जाकर स्वाधीनताके चिरवाछित लक्ष्य तक पहुचा देगा।

इसके बाद कुछ काल अनिश्चितताका रहा। लोग सोचते थे : गाधीजीकी इस रिहाईका अर्थ क्या है? क्या इससे भारतीय प्रश्न-सम्बन्धी ब्रिटिश सरकारकी नीतिमे कोई परिवर्तन सूचित होता है? या, ज्यो ही गाधीजी अपने स्वास्थ्यका सकट पार कर लेगे त्यो ही उन्हे फिर जेलमे पहुचा दिया जायगा? उनके छुटकारेकी घोषणा करनेवाली सरकारी विज्ञप्तिमे ऐसी ही ध्वनि थी। श्री एमेरीने कहा था कि गाधीजी 'सिर्फ स्वास्थ्यके कारण' छोड़े गये है। श्री शिनवेलने ब्रिटिश लोकसभामे गाधीजीकी रिहाईको 'अस्थायी' बताया था।

उदार दलके डॉ० जयकरको गाधीजीने लिखा "देश मुझसे बहुत बहुत आशाये रखता है। मै बिलकुल सुखी नही हू। मुझे तो शर्म भी आती है। मुझे बीमार नही पडना चाहिये था। मैने कोशिश भी की कि बीमार न पड़ू, परन्तु आखिरमे असफल हुआ। मुझे लगता है कि ज्यो ही मै आजकी

सारा भारत और वाहरके भी वहुत लोग मुझसे आशा रखते है कि मै सवके कल्याणमे कोई निर्णायक योगदान करूगा।" उन्होने यह भी लिखा, लेकिन मै कुछ भी नही कर सकता अथवा वहुत कम कर सकता हू, जव तक कि मुझे काग्रेसकी कार्यसमितिके विचार मालूम न हो। इसलिए मुझे उससे मिलने दिया जाय। "मैने यह इजाजत कैदीकी हैसियतसे भी मागी थी और अव आजाद व्यक्तिके नाते भी माग रहा हू।" उन्होने यह भी लिखा कि कोई निर्णय करनेसे पहले यदि वाइसरॉय उनसे मिलना चाहे, तो वे मिलनेके लिए तैयार है।[११]

वाइसरॉयने उत्तरमे लिखा कि आपने हालमे ही 'भारत छोडो' प्रस्ताव पर डटे रहनेका इरादा वताया है (आशय डॉ० जयकरके नाम लिखे गाधीजीके पत्रके दैनिकोमे हुए प्रकाशनसे था), और "उसको मै तात्कालिक भविष्यके लिए उचित या व्यावहारिक नीति नही समझता", इसलिए मै इस वातसे सहमत् नही हो सकता कि आप कार्यसमितिके सदस्योसे मिले। मै भी आपसे मिलना नही चाहूगा; क्योकि "हमारे दृष्टिकोणोमे जो वुनियादी भेद है उसे देखते हुए" हम दोनोके मिलनेका "कोई अर्थ नही होगा और उससे केवल ऐसी आशाए ही पैदा होगी जो पूरी नही होगी।"[१२]

इसमे आश्चर्यकी कोई वात नही थी। गाधीजीकी रिहाईके दो दिन पहले ही एमेरी साहवने — वे जव कभी भारतके वारेमे अपना मुह खोलते थे तव लोगोका जी दुखाये विना रह ही नही सकते थे — कहा था कि वे जेलसे वाहरके और भीतरके काग्रेसियोको आपसमे मिलने-जुलने नही देगे। गाधीजीके छुटकारेने भारतमे ही नही, भारतके वाहर भी ऐसी व्यापक आशाए उत्पन्न कर दी थी कि इसके वाद दूसरे काग्रेसी नेताओकी रिहाई भी होगी और भारतीय राजनीतिक गुत्थी भी सुलझेगी। कही ऐसी अवा-छनीय भावना अधिक व्यापक न हो जाय, इस खयालसे श्री एमेरीने सावधानी रख कर उसे तुरन्त दवा देना ठीक समझा और स्पष्ट शब्दोमे कह दिया कि गाधीजीकी रिहाई "दूसरे काग्रेसी नेताओको रिहा करनेके इरादेसे नही की गई है।" जिस दिन गाधीजीने लॉर्ड वेवेलको पत्र लिखा उसके पहले दिन व्रिटिश लोकसभामे एक प्रश्न पूछा गया था कि गाधीजीको जो स्वतत्रता मिली है उसे देखते हुए क्या भारत-मंत्री सारे प्रश्न पर फिरसे विचार नही करेगे। उत्तरमे जवरदस्त भारत-मत्रीने कहा "अभी नही।" इस प्रकार गाधीजीके खटखटानेसे पहले ही द्वार वन्द कर दिया गया और उसे मजवूत ताला लगा दिया गया।

इससे उस समय अग्रेजोकी ओरसे निवटारेकी कोई आशा नही रही। व्रिटिश सरकार 'विद्रोही' काग्रेसके विना शर्त हार स्वीकार किये विना या

'भारत छोडो' की अपनी मांग वापस लिये बिना उनसे बातचीत करनेको तैयार नहीं था। और यह मांग जैसा गांधीजी कह चुके थे, उनके लिए प्राणके समान थी। गांधीजी चाहते तो भी यह कदम वे कार्यसमितिसे सलाह लिये बिना नहीं उठा सकते थे। परन्तु वह द्वार मजबूतीसे बन्द रखा गया।

४

लार्ड वेवेल्स जब गांधीजी नजरबन्दीमें थे उस समय गांधीजीके साथ अपने पत्र-व्यवहारमें और सार्वजनिक भाषणोंमें भी यह वृत्ति अपनायी थी कि 'किसी भी नजरबन्दके लिए यह निश्चय करनेमें कि वह 'भारत छोडो' प्रस्ताव वापस ले या नहीं अपनी अन्तरात्माके सिवा और किसीसे सलाह लेनेकी जरूरत नहीं।' " किन्तु गांधीजीने पूछा कि जो प्रस्ताव लम्बी चर्चा और विचार विमर्शके बाद सैकड़ों स्त्री-पुरुषोंने साथ मिल कर पास किया हो, वह किसी व्यक्तिके अन्तःकरणका प्रश्न कैसे हो सकता है? उन्होंने वाइसरायको पुनः लिखा : जो प्रस्ताव साथ मिल कर पास किया गया हो, वह प्रतिष्ठाके साथ प्रामाणिक रूपमें और उचित ढंगसे तो सम्मिलित चर्चा और विचारके बाद ही वापस लिया जा सकता है। व्यक्तिकी अन्तरात्माका प्रश्न इस जरूरी कदमके बाद आ सकता है पहले नहीं। क्या कैदीको अपनी अन्तरात्माके अनुसार चलनेकी स्वतंत्रता होती है? "

सैनिक वाइसराय गांधीजीको अन्तरात्माके नीतिशास्त्रका उपदेश किसी मर्यादा-पुरुषोत्तमकी तरह दे रहे थे। बादमें उन्होंने अत्यन्त महत्वपूर्ण वैधानिक प्रश्नको भी यह कहकर कि वे तो सिपाही हैं कानूनको नहीं समझते, बड़ी सफाईसे टाल दिया था।" अच्छा होता यदि वे नीतिशास्त्रको भी न छूते।

ब्रिटिश सरकार कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्योंको जेलमुक्त करना नहीं चाहती थी और वाइसराय उन लोगोंसे किसीको जेलखानेमें मिलने नहीं देते थे इसलिए गांधीजीसे पूछा गया कि क्या 'भारत छोडो' प्रस्तावके अधीन उस आन्दोलनको चलानेके लिए उन्हें जो सर्वाधिकार दिया गया था उसके अनुसार आन्दोलनके नेताकी हैसियतसे वे 'अहमदनगर किलेकी कुंजी खोजनेके लिए उस आन्दोलनको सदाके लिए स्थगित होनेकी घोषणा नहीं कर सकते? १९२२ में वाइसरायको लिखे गये चुनौती-पत्रकी स्याही सूखनेसे पहले ही और जब जीत बहुतोंको हाथमें आई दिखाई दे रही थी गांधीजीने सविनय कानून भंग वापस ले लिया था क्योंकि उनकी 'अन्तरात्माके नाद' का यही तकाजा था। किन्तु गांधीजी 'भारत छोडो' की मांगको रत्ती भर भी कम करने और उन लाखों लोगोंकी श्रद्धाके विरुद्ध जानेको तैयार नहीं थे जिन्होंने उनकी प्रेरणासे उनके नेतृत्वमें 'करो या मरो' की प्रतिज्ञा ली थी। केवल कठिनाइयां भीषण होनेसे ही तो ऐसा नहीं किया जा सकता था। श्री श्रीनिवास शास्त्री जैसे नरम नेताने

भी 'भारत छोडो' प्रस्ताव वापस लेनेकी माग नही की और न प्रख्यात धारा-शास्त्री सर तेजबहादुर सप्रूने ऐसी माग की। एक और प्रतिभाशाली धारा-शास्त्री डॉ० जयकरने तो यहा तक कहा था कि राष्ट्रीय स्वाभिमानकी दृष्टिसे यह प्रस्ताव वापस नही लिया जाना चाहिये। बेशक, प्रस्तावके पीछे रहे अधिकार (सेक्शन) पर उनका मतभेद था। परन्तु इसके सिवा एक वैधानिक कठिनाई भी थी। पहलेके अवसरो पर सविनय कानून-भगके जो आन्दोलन हुए थे, उनके नेताके रूपमे गाधीजीको अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करनेका अधिकार दिया गया था। 'भारत छोडो' प्रस्तावमे इसकी खास तौर पर गुजाइश नही रखी गई थी। नेताओकी गिरफ्तारीके बाद प्रत्येक पुरुष या स्त्रीको अपना नेता बनकर अपनी समझके अनुसार 'करो या मरो' की प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिए स्वतत्र छोड दिया गया था। सत्य और अहिसाकी कठोर मर्यादाए तो थी ही। इसलिए प्रश्न यह था कि शुद्ध कानूनी दृष्टिसे अगस्त-प्रस्तावके अनुसार गाधीजीको आन्दोलनका जो नेतृत्व दिया गया था, वह उनके कैद हो जानेसे खतम तो नही हो गया था। धाराशास्त्री श्री भूलाभाई देसाईका मत आरभसे इसके विरुद्ध था, परन्तु गाधीजीके साथ चर्चा करनेके बाद और रात भर सोचने पर उन्होने अपना यह मत बदल दिया और वे निश्चित रूपमे गाधीजीके मतके हो गये थे। दूसरे उतने ही प्रमुख धाराशास्त्रियोने इस अर्थका समर्थन किया।

एक तीसरा विकल्प यह था कि मुस्लिम लीगसे समझौता करके ब्रिटिश सरकारके सामने एक सयुक्त राष्ट्रीय माग पेश की जाय। गाधीजीने कारागारसे भी मुस्लिम लीग और काग्रेसके बीच समझौतेकी मत्रणाके लिए जिन्नाको निमत्रण दिया था। वे फिर कोशिश करनेको तैयार थे। परन्तु यह उनका दृढ मत था कि पहलेसे ही किसी अनिश्चित स्वरूपके पाकिस्तानको स्वीकार नही किया जायगा और न पाकिस्तानकी किसी ऐसी व्याख्याको माना जायगा, जिससे भारतकी एकता और सुरक्षितताके लिए निश्चित खतरा पैदा हो। इस शर्तके साथ उन्होने साम्प्रदायिक प्रश्नके निबटारेमे विभिन्न जातियोकी धार्मिक, सास्कृतिक या आर्थिक एकताकी रक्षाके लिए सब तरहके उचित प्रस्तावोकी गुजाइश रखी थी। परन्तु सवाल यह था कि क्या जिन्ना इस आधार पर चर्चा करनेको तैयार होगे? इसकी आशा नही थी।

जे० आर० डी० टाटा, पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास और घनश्यामदास बिडला जैसे प्रमुख भारतीय उद्योगपतियोकी एक मडलीको गाधीजीने बताया . "वे (सरकार) हमे नीचा दिखाना चाहते है।" उनके एक साथी उद्योगपति सर आरदेशिर दलालको वाइसरॉयकी कार्यकारिणी परिषद्मे शरीक होनेका निमंत्रण मिला था। वे इस सम्बन्धमे गाधीजीकी प्रतिक्रिया जानना चाहते थे।

गांधीजीने उत्तर दिया: 'अगर मुझसे पूछा गया तो मैं कहूंगा 'नहीं'। छोटी-मोटी लड़ाई वे जरूर कर सकेंगे पर यह भलाई बड़ी भलाईकी हानि करके ही होगी।'

उद्योगपतिने तर्क किया: 'यदि वे नहीं जायंगे तो यह खतरा है कि आखिर कामकाजमें सरकार बिलकुल मनमानी करके भारतके हितोंको नुकसान पहुंचायेगी।'

"प्रत्येक भला आदमी, जो सरकारके साथ सहयोग करता है, उसकी प्रतिष्ठाको बढ़ाता है और इस तरह हमारे दुःखोंकी अवधिको लम्बी करता है," गांधीजीने दृढ़तासे कहा। "लॉर्ड वेवेल अच्छे आदमी होंगे — शायद हैं भी — परन्तु जिस प्रणालीके वे प्रतिनिधि हैं वह बुरी है।

गांधीजीकी बात स्पष्ट थी। सरकारके साथ उसकी शर्तों पर किसी बातमें अन्य प्रश्नमें भी कोई सहयोग नहीं हो सकता था। वह सहयोग हमारी शर्तों पर ही होगा। इसका मतलब यह है कि सत्ता जनताके चुने हुए प्रतिनिधियोंको सचमुच हस्तांतरित की जाय। नहीं तो यह कहा जायगा कि तुच्छ वस्तुके लिए हमने अपनेको बेच दिया। इसलिए यदि मैं अकेला रह जाऊं तो भी कहूंगा 'नहीं'।

उन्होंने उद्योगपति मित्रोंसे कहा: आपको सम्प्रति आसार अच्छे नहीं दिखाई देते इसलिए निराश नहीं होना चाहिये। परन्तु मेरी इस श्रद्धामें शरीक होना चाहिये कि भारतका कल्याण ही होगा क्योंकि न्याय और सत्य भारतके पक्षमें हैं और उसके साधन शुद्ध हैं। 'मैं आपसे आशा रखता हूं कि आप मेरा उत्साह और साहस बढ़ायेंगे — पीछे हटनेकी सलाह देकर स्थितिको सुधारनेकी उम्मीद तो आपको मुझसे नहीं रखनी चाहिये।'

५

अवरोध सम्पूर्ण था। चारों ओर मजबूत पत्थरकी दीवार खड़ी थी जिसमें से निकलनेका कोई रास्ता नहीं था। सेनापति था परन्तु उसकी सेना नहीं थी: उसके साथी जो उसके हाथ-पैर थे जेलमें थे; उसका अपना स्वास्थ्य बहुत खराब था और विरोधी सदाकी भांति उसके प्रति किसी भी तरहकी नरमी न दिखानेके लिए कृत-संकल्प थे। गांधीजीने अनेक बार कहा था कि सत्याग्रहमें असफलता कभी नहीं होती।

उन्होंने यह स्पष्ट करनेमें देर नहीं लगाई कि 'भारत छोड़ो' प्रस्तावके अनुसार मुझे जो अधिकार दिया गया था वह खतम हो गया है परन्तु इस बातका कांग्रेसकी सामान्य प्रवृत्तियोंसे कोई वास्ता नहीं। जो चीज कांग्रेसके नामसे कोई नहीं कर सकता वह है सामूहिक सविनय आज्ञाभंग। वह कभी आरंभ ही नहीं किया गया और जैसा मैं कह चुका हूं मैं अपनी निजी हैसियतमें

भी आज उसे आरभ नही कर सकता। परन्तु अगर सरकार काग्रेसकी साधारण प्रवृत्तियोमे भी दखल देती है, तो बुराईका विरोध करनेका व्यक्तिका जन्मसिद्ध अधिकार कभी भी स्थगित नही होता।"[१६]

जो लोग जेलसे छोडे जा रहे थे, उनमे से बहुतो पर प्रतिबन्ध-मूलक आज्ञाए जारी की जा रही थी, जैसे, उन्हे आज्ञा दी गई थी कि वे अमुक प्रदेशके बाहर न जाय या अमुक समयके बाद पुलिस थानो पर हाजिरी दे। वे लोग क्या करे? गाधीजीने उनसे कहा, मै इन सब प्रतिबन्धोको अपमानजनक मानता हू और मै स्वय उनके सामने नही झुकूगा। परन्तु मै जानता हू कि कुछ लोगोने जेलके कष्ट अधिक समय तक न सह सकनेके कारण इस सीमित स्वतन्त्रताको पसन्द कर लिया है। "मै उनके आचरण पर कोई निर्णय नही दूगा। प्रत्येक मनुष्य अपनी अपनी शक्तिके अनुसार कष्ट सहन करता है। परन्तु सरकारके लिए अवश्य यह एक गभीर और विचारणीय प्रश्न है कि क्या ऐसे युवा पुरुषो और स्त्रियोकी आत्माको चोट पहुचाना भी युद्ध-प्रयत्नका जरूरी अग है, जिनका एकमात्र अपराध यह है कि वे अन्य किसी चीजसे अधिक अपने देशकी स्वाधीनतासे प्रेम करते है।"

और फिर अपने प्रभावशाली उद्गारो द्वारा उन्होने शका, निराशा या उदासीके वे सब जाले नष्ट कर दिये, जो कार्यकर्ताओके मनमे जमा हो गये थे। ऐसे ही उद्गारोसे उन्होने भूतकालमे अनेक बार 'हार' और 'विपत्ति' जैसे शब्दोको निरर्थक कर दिया था और घटनाओकी धारा ही बदल दी थी। महाराष्ट्रके कार्यकर्ताओकी एक सभामे भाषण देते हुए — रिहाईके बाद यह उनका पहला सार्वजनिक भाषण था — उन्होने अपनी श्रद्धाकी घोषणा इस प्रकार की :

> मै किसी असत्यपूर्ण या हिंसात्मक वस्तुका समर्थन नही कर सकता। लेकिन मै दूसरोके कार्योका काजी नही बनना चाहता। इस समय काग्रेसियो और दूसरे लोगोके व्यक्तिगत या सामूहिक कार्योको अहिंसा और सत्यकी तराजूमे तौलनेसे भी कोई लाभ नही होगा। इतना कहना काफी है कि अनुभवने मेरे इस विश्वासको अटल बना दिया है कि हम सत्य और अहिंसा पर जितने दृढ रहे है उतनी ही हमे सफलता मिली है। . पिछले पच्चीस वर्षोमे जनसाधारणकी असामान्य जाग्रतिका एकमात्र कारण हमारे साधनोकी शुद्धता रही है। और जिस हद तक उसमे झूठ और हिंसा घुसी है, उसी हद तक उन्होने हमारी प्रगतिको रोका है।[१७]

भूतकालमे गाधीजीने ऐसी चीजोकी निन्दा इतनी तीव्रताके साथ की थी कि कभी कभी लोगोको आश्चर्य होता था। परन्तु उन्होने बादमे सम-

पाया कि नजरबंदीके दो वर्षोंमें वे अधिक समझदार हो गये हैं। सरकारकी तरफसे लोगोंकी हिंसाको तिलका ताड़ बनाकर दिखाया जाता था और अधिकारियोंकी भीषण हिंसाकी सामान्यतः यह कह कर रक्षा की जाती थी कि वह अवसरके लिए जितनी जरूरी थी उससे अधिक नहीं थी। लोगोंने जो कुछ किया उसके लिए कमसे कम कोई कारण तो था किन्तु सरकारके पास ऐसा कोई कारण ही नहीं था। इसलिए उन्होंने कहा कि मैं जनताके कार्योंको सत्य और अहिंसाके मापदंडसे नहीं नाप सकता यदि वही मापदंड सरकारी कार्योंमें मैं लागू न कर सकूं।[16]

> मेरे प्रति आपकी श्रद्धासे मैं गदगद हो गया हूं। मुझे शंका है कि मैं इस सारे विश्वासका पात्र हूं या नहीं। परन्तु मैं इतना जानता हूं कि मुझमें जो भी शक्ति है वह सिर्फ इस कारणसे है कि मैं सत्य और अहिंसाका पुजारी हूं। कुछ मित्रोंने मुझे कहा है कि राजनीति और सांसारिक मामलोंमें सत्य और अहिंसाका कोई स्थान नहीं है। मैं उनसे सहमत नहीं हूं। व्यक्तिके मोक्षके साधनोंके रूपमें मेरे लिए उनका कोई उपयोग नहीं है। मेरा प्रयोग तो हमेशासे उन्हें मनुष्यके दैनिक जीवनके व्यवहारोंमें स्थान देने और उन पर अमल करानेका रहा है।"

उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि मेरे अकस्मात जेलसे छूट जानेसे मुझे वह अधिकार फिरसे नहीं मिल जाता जो अगस्त १९४२ के प्रस्ताव द्वारा मुझे दिया गया था और जो मेरे अर्थके अनुसार मेरे जेल जानेके साथ ही खतम हो गया था। इसलिए मैं आप लोगोंसे जो कुछ कहूं उसे आप एक व्यक्तिकी राय समझ कर चाहें तो स्वीकार करें वरना अस्वीकार कर दें। "यदि मैं प्रतिनिधिकी हैसियतसे बोलता तो बात दूसरी होती। तब मैं यह आशा रखता कि अनुशासनबद्ध सिपाहियोंकी तरह आप मेरे आदेशोंका पालन करें।"

गांधीजीने आगे कहा मैं तो कांग्रेसका चवन्नी देनेवाला सदस्य भी नहीं हूं। परन्तु जैसा मैंने पहले बहुत बार कहा है जो कोई कांग्रेसकी नीतिका अनुसरण करता है वह कांग्रेसी है भले ही उसका नाम कांग्रेसके रजिस्टरमें दर्ज हो या न हो। कांग्रेस कमजोर संस्था होती यदि उसकी शक्तिका आधार ऐसे कुछ लाख सदस्यों पर ही होता जिनके नाम कांग्रेसकी सदस्य-सूचीमें दिखाई देते। कांग्रेसकी महान शक्ति तो इस बात पर आधार रखती है कि उसे नाजुक मौकों पर करोड़ों मूक लोगोंका सद्भाव और सहयोग प्राप्त होता है।'

ऐसी स्थितिमें मेरा और आपका क्या कर्तव्य है?

> हममें से हरएकको इस समय क्या करना चाहिये यह अत्यन्त महत्त्वकी बात है। मेरा यह सुझाव होगा कि अभी सविनय प्रतिरोध

करनेके लिए उपयुक्त मौका है, तो भी मै काग्रेसके नाम पर ऐसा नही कर सकता था। किन्तु अगस्त-प्रस्तावकी अतिम सुनहरी पक्तिया याद रखिये। ९ अगस्त, १९४२ को मुख्य काग्रेसियोके गिरफ्तार होने पर प्रत्येक काग्रेसी अपना नेता आप हो गया; उसे जैसा वह चाहे वैसा करनेका अधिकार मिल गया। शर्त एक ही थी कि उसका कार्य सत्य और अहिंसाकी मर्यादाओके भीतर हो। . . इसलिए मेरी समझमे नही आता कि निराशाके लिए क्या कारण हो सकता है। क्या इसीलिए कि हमने जितने समयमे अपना ध्येय सिद्ध करनेकी आशा रखी थी उसके भीतर हम अपने ध्येय तक नही पहुच सके? . . . भारीसे भारी कठिनाइयोका सामना करते हुए भी प्रयत्न करना मानवका काम है। सफलता ईश्वरके हाथकी वात है या यो कह लीजिये कि हमारे अधिकारसे वाहरकी अनेक परिस्थितियो पर निर्भर है। निराशाका कारण तो तव पैदा होगा जव हम अपनेमे, अपने सावनोमे या अपने ध्ययमे श्रद्धा खो वैठे। सत्याग्रहके गव्दकोशमे निराशा जैसा शव्द ही नही है। मेरे पास उन लोगोके लिए कोई उत्तर नही, जिनमे कभी अपने शस्त्रके वारेमे श्रद्धा थी ही नही या जो अपने गस्त्रकी क्षमतामे विश्वास खो चुके है।

हमे स्वीकार करना होगा कि वुराईकी ताकते हमे चारो ओरसे घेरे हुए है। वे जितनी मजवूत आज दिखाई देती है उतनी पहले कभी नही थी। परन्तु हताशा या निराशाके लिए यह कोई कारण नही। हमारे पास वुराईके साथ अहिंसक असहयोग करनेकी सुनहरी कार्य-पद्धति मौजूद है। यदि हमे सफलता मिली दिखाई नही देती, तो इसका कारण हमारे ही भीतर है। **यदि राष्ट्रके कुछ अंग असहयोगकी गुणवत्तामें विश्वास नहीं रखते, तो जो उसमें विश्वास रखते है उनकी जिम्मेदारी और भी ज्यादा वढ़ जाती है।** हमे दीर्घ प्रयत्न करना पड सकता है, हमे भारी भार उठाना पड सकता है। परन्तु मैं अनुभवसे यह कह सकता हू कि वह हमारी शक्तिसे वाहर कभी नही होता। जिस पुरुष या स्त्रीने ध्येयके लिए सव-कुछ दांव पर लगा दिया हो, उसके लिए कौनसा वोझ अत्यन्त भारी हो सकता है? . . . मुझे किसी भी समय निराशाकी भावनाने नही सताया है। **निराशाका मूल हमारी अपनी ही कमजोरियों और अश्रद्धामें होता है। जव तक हम अपनेमें श्रद्धा नहीं खो देते, तव तक हिन्दुस्तानका कल्याण ही होगा।**

फिर देशमे फैली हुई भुखमरी और मुसीवतोका वर्णन करते हुए उन्होने कहा . इस भारतव्यापी भुखमरीका मूल कारण क्या है? "युद्धकी परि-

स्थितिका बहाना बनाकर भूखों मरते करोड़ों लोगोंको और भूखा मारा जा रहा है। बंगाल, कर्नाटक और दूसरे हिस्सोंमें से जो आंकड़े आ रहे हैं, वे तो चौंका देनेवाले हैं ही, परन्तु संकट इससे कहीं अधिक गहरा है। उसका निवारण जनताकी प्रतिनिधि राष्ट्रीय सरकारके सिवा दूसरा कोई नहीं कर सकता। मेरी राय है कि यदि युद्ध होता तो हम उसका आजसे भी अधिक सफलतासे सामना कर सके होते। ... भारतमें ७ लाख गांव बताये जाते हैं। उनमें से कुछका तो सफाया हो चुका है। उनका किसीके पास कोई लेखा नहीं है। बंगाल, कर्नाटक और दूसरी जगहोंमें भूख और रोगसे हजारों लोग मर गये हैं। ... मैं गांवोंका अर्थशास्त्र जानता हूं। मैं आपको बताता हूं कि ऊपरका दबाव नीचेवालोंको कुचल देता है। जरूरत इतनी ही है कि हम उनकी गर्दन परसे उतर जायं।'

यह कैसे किया जाय? उत्तर फिर वही था 'असहयोग'। अन्तमें उन्होंने कहा : अहिंसा एक शक्तिशाली शस्त्र है। अमलमें वह सविनय आज्ञाभंग और असहयोगका रूप ग्रहण करता है। सविनय आज्ञाभंग बहुत ही सबल शस्त्र है, परन्तु उसे हर कोई नहीं चला सकता। इसके लिए तालीम और आन्तरिक बल चाहिये। उसका उपयोग करनेके लिए अवसर भी चाहिये। लेकिन आन्तरिक असहयोग तो प्रत्येक मानव कर सकता है। ... जो असहयोगका रहस्य समझते हैं उन्हें अपनी सारी कठिनाइयोंके लिए तुरन्त जवाब मिल जाता है। जब 'नहीं' कहना धर्म हो जाय तो हमें दृढ़तासे 'नहीं' कहना आना चाहिये। असहयोगीका काम धन या नामके पीछे पड़ना नहीं है।

६

लॉर्ड वेवेलने गांधीजीको पत्रमें कार्यसमितिके सदस्योंसे मिलनेकी अनुमति देनेसे इनकार करते हुए जो पत्र लिखा था उसका अन्तिम भाग यह था : आपका स्वास्थ्य सुधर जानेके बाद और अधिक विचार करनेके पर आप भारतके कल्याणके लिए कोई निश्चित और रचनात्मक नीति प्रस्तुत करें तो मैं उस पर सहर्ष विचार करूंगा।

परन्तु गांधीजीके स्वास्थ्य-सुधारमें एक विघ्न बाधक आया। डॉक्टरोंको भरोसा नहीं था कि उन्हें सम्पूर्ण आराम मिले बगैर वे इतने समय तक आराम कर

तैनात थे, गाधीजीसे मुलाकात मागी। गाधीजीने इस शर्त पर उनसे मिलना स्वीकार किया कि वे जो कुछ उनसे कहेगे वह मुख्यतः वाइसरॉयके ध्यानमे लानेके लिए होगा, न कि तुरन्त पत्रमे प्रकाशित करनेके लिए।

मुलाकात शुरू करते हुए श्री गेल्डरने पूछा, "लॉर्ड वेवेलसे आप मिले तो अपनी वातचीत कैसे आरभ करेगे?"

गाधीजीने उत्तर दिया, "मै वाइसरॉयसे कहूगा कि मैने मित्रराष्ट्रोके काममे सहायता देनेके लिए कार्यसमितिसे मिलना चाहा था, न कि उसमे वाधा पहुचानेके लिए। मुझे लगता है कि काग्रेसके नामसे काम करनेका मुझे कोई अधिकार नही है। सत्याग्रहके नियमोके अनुसार जव सविनय आज्ञाभग करनेवाला व्यक्ति जेलमे चला जाता है, तो उसे दिया हुआ अधिकार अपने-आप समाप्त हो जाता है। उसके जेलमुक्त हो जानेसे वह अधिकार उसे फिरसे नही मिल जाता। इसीलिए मेरा कार्यसमितिके सदस्योसे मिलना जरूरी है।"

श्री गेल्डर· "भारतकी जनता पर आपका जो प्रभाव है उसके कारण वाइसरॉय और दूसरे सभी लोग आपके विचार जाननेको उत्सुक है।"

गाधीजी "मै लोकतत्रवादी हू। जनता पर मेरा जो प्रभाव है उसका मै दुरुपयोग नही कर सकता। जिस सगठनको बनानेमे मेरा हाथ रहा है, उसके द्वारा ही उस प्रभावका उपयोग मै कर सकता हू।"

परन्तु श्री गेल्डरको अन्देशा था कि कही वाइसरॉय यह न समझे कि गाधीजी अव भी 'भारत छोडो' प्रस्ताव और सविनय आज्ञाभग पर अटल है, इसलिए कार्यसमितिके सदस्योसे उनके मिलनेका यही परिणाम हो सकता है कि वे गाधीजीको काग्रेसके नामसे सविनय आज्ञाभग आन्दोलन चलानेका फिरसे अधिकार दे दे। "परिणाम यह होगा कि जव आप कार्यसमितिसे मुलाकात करके निकलेगे, तो आप वाइसरॉयके सिर पर पिस्तोल तान कर कहेगे, 'ऐसा करो, नही तो मै सविनय आज्ञाभग आरभ करता हू।' इससे तो स्थिति पहलेसे भी वुरी हो जायगी।"

गाधीजीने उत्तर दिया, "इस ढगसे विचार करनेकी तहमे मेरे इस दावेके विषयमे पूरा अविश्वास मालूम होता है कि मै सदा अग्रेजोका मित्र रहा हू और आज भी हू। इसलिए जव तक कोई वहुत गम्भीर कारण न हो, जैसे भारतके स्वतत्रताके स्वाभाविक अधिकारके रास्तेमे रुकावट डालना, तव तक मै युद्धकालमे सविनय आज्ञाभगके शस्त्रका कभी भी उपयोग नही कर सकता।"

"मान लीजिये कि कल कार्यसमितिको जेलसे रिहा कर दिया जाय और भारतकी माग पूरी करनेसे सरकार इनकार कर दे, तो क्या आप सविनय आज्ञाभगकी लडाई छेड देगे?"

"आज तो सविनय आनाभग करनेका मेरा कोई इरादा नही है। म देशको पीछे १९४२ के जमानेमें नही ले जा सक्ता। इतिहासका पुनरावतन नही हो सक्ता। पिछले दो वर्षोमें दुनिया आगे बढी है। सारी परिस्थिति पर नये सिरेसे विचार करना होगा। इसलिए कायसमितिसे मुझे जो चर्चा करनी ह उसमें मेरा आशय उससे यह जानना है कि अपनी रिहाईके बाद मुझे देशकी स्थितिका जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उस पर उसकी क्या प्रतिक्रिया है।"

गाधीजीने अपना कथन जारी रखते हुए कहा, काग्रेसके दिये हुए अधिकारके बिना भी मैं चाहू तो आम लोगो पर मेरा जो प्रभाव माना जाता है उसके बल पर म किसी भी दिन सविनय आनाभग आरभ कर सक्ता हू। परन्तु यदि म एसा करू ता उसका नतीजा ब्रिटिश सरकारको परेशान करना ही होगा। यह कभी मेरा ध्येय नही हो सक्ता। "परन्तु लोग कष्ट भाग रहे हा तब कायसमिति हाथ पर हाथ धर कर बठी नही रह सक्ती। मेरा दृढ विश्वास है कि जब तक सत्ता और जिम्मेदारी अग्रेजोके हाथसे निकल कर भारतीयोके हाथमें नही आ जाती, तब तक अनकी स्थिति नहा सुधर सक्ती और लोगोका कष्ट कम नही हो सकता। सत्ता और जिम्मेदारीके इस परिवतनके बिना काग्रसी और दूसरे लोग जनताके कष्ट निवारणकी कोशिश करग तो सरकारके साथ उनका सघप होनकी बहुत सभावना है।'

श्री गेल्डर बोले आजकी परिस्थितियामें म नही मान सक्ता कि ब्रिटिश सरकार इस समय सत्ता छोडगी। जब तक युद्ध जारी है सरकार स्वाधीनताकी मागको कभी नही मानगी।

गाधीजीने समझाया कि युद्धकालमें असनिक (मुल्की) शासन पर पूरा नियत्रण रखनेवाली राष्ट्रीय सरकारसे मुझे सतोष हो जायगा। १९४२ में यह बात नहीं थी क्योकि उस समय सर्वोपरि विचार यह था कि जापानी आक्रमण होने ही वाला है और उसके सामने अग्रेज पीछे हट जानका इरादा रखत ह। ऐसा सरकार केन्द्रीय विधानसभाके चुने हुए सदस्यों द्वारा पसद किये हुए सदस्योंसे बनेगी। इसका अर्थ होगा उपरोक्त शर्तके साथ युद्धकालमें भारतकी स्वाधीनताकी घोषणा।

श्री गेल्डरको लगा कि यह माग सन् १९४२की मागसे भिन्न है और बताता है कि गाधीजी अपनी इस स्थितिमें (समझौतेकी दिशामें) काफी आगे बढ ह। उन्होंने पूछा क्या रेलमार्गों और बन्दरगाहो आदिका नियत्रण सेनाके हाथमें रहेगा? गाधीजीने उत्तर दिया कि राष्ट्रीय सरकार सेनाको उसकी सारी आवश्यक सुविधाए देगी। लेकिन नियत्रण राष्ट्रीय सरकारके ही हाथमें रहेगा। अभी जो आर्डिनेन्सका शासन चल रहा है उसकी जगह राष्ट्रीय सरकारका सामान्य शासन ले लेगा।

"क्या उसमे वाइसरॉयका स्थान होगा?"

"हा, परन्तु वे इग्लैंडके राजाकी तरह जिम्मेदार मत्रियोकी सलाहके अनुसार चलेगे। प्रान्तोमे लोकप्रिय सरकारे अपने आप फिरसे स्थापित हो जायगी और इस प्रकार प्रान्तीय सरकारे और केन्द्रीय सरकार दोनो भारतकी जनताके प्रति जिम्मेदार हो जायगी।" जहा तक सैनिक कार्रवाइयोका सम्वन्ध है, वाइसरॉय और प्रधान सेनापतिका उन पर पूरा नियत्रण रहेगा। परन्तु सैनिक मामलोमे भी राष्ट्रीय सरकारको सलाह देने और आलोचना करनेका अधिकार होना चाहिये। "इस प्रकार प्रतिरक्षा-विभाग राष्ट्रीय सरकारके हाथोमे रहेगा, क्योकि देशकी रक्षामे उसकी हार्दिक दिलचस्पी होगी और वह नीति-निर्माणके कार्यमे वडी सहायता दे सकेगी।" मित्रराष्ट्रोकी सेनाओको भारतकी भूमि पर अपनी कार्रवाइया जारी रखनेकी इजाजत होगी। "मै अनुभव करता हू कि इसके विना वे जापानको नही हरा सकती। परन्तु इन सेनाओकी भारत-भूमि पर होनेवाली कार्रवाइयोका खर्च भारत पर नही रखा जाना चाहिये।"

"यदि राष्ट्रीय सरकार वने तो आप काग्रेसको उसमे शामिल होनेकी सलाह देगे?"

"हा।"

"मतलव यह हुआ कि राष्ट्रीय सरकार वनी, तो काग्रेस उसमे शरीक होगी और युद्ध-प्रयत्नोमे मदद देगी। तव आपकी स्थिति क्या होगी?"

"मै तो पूरा शान्तिप्रेमी हू," गाधीजीने उत्तर दिया। "स्वाधीनताका आश्वासन मिल जानेके वाद सभवत मै काग्रेसके सलाहकारका काम वन्द कर दूगा। पूर्णतया युद्ध-विरोधी होनेके नाते मुझे काग्रेससे अलग रहना पडेगा, परन्तु मै राष्ट्रीय सरकार या काग्रेसका विरोध नही करूगा। मेरा सहयोग यही होगा कि भारतकी शान्त स्थिर जीवन-धारामे किसी तरहका हस्तक्षेप न करू। भारतको शान्तिप्रिय वनाये रखनेमे और ऐसा करके जाति या वर्णके किसी भेदके विना सारी मानव-जातिमे भ्रातृभाव और सच्ची शान्तिकी स्थापनाकी दृष्टिसे ससारकी राजनीति पर असर डालनेकी दिशामे मै अपने प्रभावका उपयोग करनेका प्रयत्न सदा चालू रखूगा।"

फिर श्री गेल्डरने पूछा, "मान लीजिये कि सैनिक और असैनिक अधिकारियोमे सघर्ष हुआ, तो झगडा कैसे निवटाया जायगा?" उदाहरणार्थ, यदि असैनिक अधिकारियोने दो हजार टन अन्न ले जानेके लिए किसी रेलवेका उपयोग करना चाहा और सैनिक अधिकारियोने शस्त्रास्त्र ले जानेके लिए उसका उपयोग करना चाहा, तो आपकी सलाह क्या होगी?

गांधीजीकी घोषणाकी टीका यह कह कर की कि यह 'गांधी हुकूमत नहीं की गई है' क्योंकि गांधीजी पक्के युद्धविरोधी हैं।' उनकी दलील यह थी कि मित्रराष्ट्रोंके युद्धप्रयत्नके साथ उनकी हमदर्दी ज्यादा गहरे हृदयकी नहीं हो सकती क्योंकि युद्धप्रयत्नमें सहायक होना अहिंसाकी उनकी बुनियादी धर्मनीतिके साथ असंगत है।

यह तो ईसपकी कथाओंमें आई उस गधेकी कहानी जैसी बात हुई जिसमें बताया गया है कि आप कुछ भी कीजिये कोई न कोई तो नाराज होगा ही। गांधीजीने सिद्ध कर दिया कि उनके प्रस्तावके अनुसार युद्धप्रयत्नको आगे बढ़ाना अहिंसाकी उनकी बुनियादी धर्म-नीतिके साथ असंगत नहीं था बल्कि युद्धको सर्वथा बन्द करानेकी दृष्टिसे उसका एक स्वाभाविक परिणाम था। 'यदि मैं अगस्तके प्रस्तावमें सम्मिलित हुआ और अब मैंने यह बात सुझाई है जिसे मैं पूरी तरह सम्मानपूर्ण हल समझता हूं तो इसका कारण यह है कि उसके द्वारा मैं युद्धके प्रतीकारके प्रयत्नको पावन देनेकी आशा रखता हूं। मैं ऐसी दुनियाका सपना देखता हूं जिसमें राष्ट्र राष्ट्रके बीच कोई झगड़ा नहीं होगा। यह तभी संभव होगा जब ग्रेट ब्रिटेन अमरीका और रूस ऐसी विश्वशान्तिका विचार रखते हों। मुझे दुःखसे कराहती हुई दुनियाके उद्धारकी तब तक कोई आशा दिखाई नहीं देती जब तक ये तीन राज्य संसारको इसका प्रत्यक्ष प्रमाण न दे दें कि वे जो प्रयत्न आज कर रहे हैं वह किसी स्वार्थपूर्ण हेतुसे नहीं कर रहे हैं परन्तु सचमुच पृथ्वीके तमाम लोकसमूहोंकी खातिर वे लड़ रहे हैं। इसलिए मेरा प्रस्ताव बहुत बड़ी कसौटी है।"

ब्रिटिश समाचार-पत्रिका ववल्कड के एक प्रश्नके उत्तरमें गांधीजीने समुद्री तार द्वारा कहा 'यदि मेरी चली तो स्वतंत्र भारतकी राष्ट्रीय सरकारकी युद्धोत्तर नीति संसारके सब राज्योंका एक राष्ट्र मंडल निर्माण करनेकी होगी। संभव हुआ तो उसमें युद्धमें सम्मिलित हुए राज्य भी शामिल होंगे ताकि विभिन्न राज्योंमें सशस्त्र संघर्षकी संभावना कमसे कम रहे।" गांधीजीका प्रस्ताव केवल भारतकी जनताके दुःखोंकी चिन्तासे प्रेरित होकर नहीं रखा गया था, बल्कि युद्धमें सम्मिलित या असम्मिलित सभी प्रजाओंके कष्टोंकी चिन्तासे प्रेरित होकर रखा गया था। 'संसारमें जो हत्याकांड और संहार आज चल रहा है उसे मैं उदासीन बन कर नहीं देख सकता। मेरा अटल विश्वास है कि परस्पर हत्याकांडका आश्रय लेना मनुष्यकी प्रतिष्ठाके खिलाफ है। यदि अधीर कांग्रेसियोंकी विरोधी आलोचना या रोषके भयसे या कार्यसमितिके सदस्योंके अप्रसन्न होनेके भयसे भी मैं अपना मत प्रकट न करूं तो मेरे मनको कभी संतोष नहीं होगा। क्योंकि मैं मानता

हू कि मेरे मतको स्वीकार कर लेनेसे वर्तमान उपद्रवोमे से भी ससारमे शान्तिका उदय अवश्य होगा।"[२६]

अन्तमे गाधीजीसे कहा गया कि आपका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाय, तो जिन्ना इस विना पर आपत्ति उठा सकते है कि राष्ट्रीय सरकारसे 'हिन्दुओ और काग्रेस' की स्थिति मजबूत होनेमे मदद मिलेगी। गाधीजीने उत्तर दिया, यदि जिन्ना यह रवैया अपनाये अथवा सरकार मेरी मागको ठुकरा दे, तो इससे यह सिद्ध होगा कि वे दोनो यह नही चाहते कि इस नाजुक मौके पर भारत सचमुच स्वतत्र हो या स्वतत्रता और लोक-तत्रकी लडाईको जीतनेमे भारत पूरा हिस्सा ले। "मै खुद तो दृढतापूर्वक अनुभव करता हू कि श्री जिन्ना रास्ता रोक रहे है ऐसी वात नही है, वल्कि ब्रिटिश सरकार ही स्वाधीनताके भारतीय दावोका न्यायपूर्ण निवटारा नही चाहती, यद्यपि यह वात वहुत पहले हो जानी चाहिये थी। ब्रिटिश सरकार भारतको स्वतत्रतासे वचित रखनेके लिए श्री जिन्नाकी आड ले रही है। . . भारतकी आकाक्षाओका गला घोटनेके इस राक्षसी षड्यत्रको तोडना सभी न्यायपरायण लोगोका धर्म है।"[२७]

गाधीजीने क्रिप्सका १९४२ का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था और 'भारत छोडो' प्रस्तावको जन्म दिया था। इसमे कुछ लोगोको मित्रराष्ट्रोकी हारसे लाभ उठानेकी गाधीजीकी इच्छा दिखाई दी थी। अव गेल्डरको दी गयी मुलाकातके द्वारा लॉर्ड वेवेलको भजे गये गाधीजीके प्रस्तावका कारण वे लोग 'काग्रेसकी भारी हार' को वताते थे। कुछ लोगोने इसकी आलोचना इस आधार पर की थी कि गाधीजीकी शर्ते 'वहुत भारी' है, यद्यपि सभी सामान्य युद्ध-नियमोके अनुसार पराजित पक्षको विजेता पक्ष द्वारा रखी हुई सधिकी शर्ते ही स्वीकारनी होती है। ये दोनो ही निष्कर्ष अनुचित थे और इनसे सत्याग्रहकी रणनीति और युद्धविद्याका अज्ञान प्रगट होता था। सत्याग्रही विपक्षीकी दुर्वलतासे कभी लाभ उठाना नही चाहता और न वाजी विगडते देखकर कभी शत्रुकी शरणमे जाता है। वह ऐसी कमसे कम मागको अपनी लडाईका आधार वनाकर लडता है, जो और कम की ही नही जा सकती, और उसकी यह कमसे कम माग ही उसकी वडीसे वडी माग भी होती है। वडीसे वडी शानदार जीतके वाद भी वह उसे वढाता नही हे। गाधीजीने १९४२ में क्रिप्सका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था, क्योकि प्रथम तो वह युद्धके वादकी योजना थी, जिसका सम्वन्ध वर्तमानकी अपेक्षा भारतकी भावी व्यवस्थासे अधिक था। दूसरे, उसमे "भारतके लगभग शाश्वत-विभाजन होने" की कल्पना थी, जिससे "भारतीय स्वाधीनताके मार्गमे दूर न की जा सकनेवाली रुकावटें"[२८] खडी हो जाती। तीसरे, उस

और एशियामें युद्धका जल्दी अंत करनेकी दिशामें सचमुच कोई रचनात्मक कदम उठाये।" ¹⁸

७

गेल्डरके साथ अपनी भेंटकी ओर लॉर्ड वेवेलका ध्यान दिलाते हुए — इस भेंटके विवरणका प्रकाशन गेल्डरने सबसे पहले कर दिया था — गांधीजीने वाइसरायको लिखा : 'फिर भी यह प्रकाशन प्रच्छन्न वरदानका रूप ले लेगा, यदि इस भेंटके कारण आप मेरी शुरूकी मांगोंमें से कमसे कम एक मांगको मान लें '' — अर्थात् कार्यसमितिके सदस्योंसे गांधीजीको मिल लेने दें। लेकिन गांधीजी जानते थे कि इस सम्बन्धमें निर्णय करनेवाले लॉर्ड वेवेल नहीं परन्तु श्री चर्चिल हैं। इसलिए उन्होंने उसी समय ब्रिटिश प्रधानमंत्रीको भी पत्र लिखा :

'दिलखुश', पंचगनी
१७ जुलाई, १९४४

प्रिय प्रधानमंत्री,

सुना है कि आप इस 'नंगे फकीर' को — कहते हैं आपने मुझे यही नाम दिया है — कुचल देनेकी इच्छा रखते हैं। मैं लम्बे अर्सेसे फकीर और वह भी नंगा फकीर — जो और भी मुश्किल काम है — बनना चाहता हूं। इसलिए आपकी इस उक्तिको मैं अपनी प्रशंसा मानता हूं, यद्यपि आपका आशय ऐसा नहीं है। अतः मैं नंगे फकीरके नाते ही आपको लिख रहा हूं और आपसे अनुरोध करता हूं कि आप अपनी प्रजा और मेरी जनताके खातिर और उनके द्वारा संसारके लोगोंके खातिर मेरा भरोसा कीजिये और मेरा उपयोग कीजिये।

आपका सच्चा मित्र
मो० क० गांधी

राजाजी चर्चिलको यह पत्र भेजनेके खिलाफ थे। उनकी दलील यह थी : 'मुझे डर है कि आपके इस पत्रका गलत अर्थ समझा जायगा। यह उतावली पत्र है।'

गांधीजी : 'मुझे तो ऐसा नहीं लगता। मैंने इसे गम्भीरतासे लिखा है।'

राजाजी : 'मुलाकातमें कहे हुए चर्चिलके शब्दोंका उल्लेख करके आपने उनके ममस्थान पर आघात किया है। अपने उन शब्दों पर संभवतः उन्हें बहुत गर्व नहीं है।

गाधीजी· "मैने उनके उद्गारको अपनी प्रशसा वताकर उसका डक निकाल दिया है।"

राजाजी: "आशा है, आपका कहना ठीक होगा।"

गाधीजी. "मुझ अफसोस है, परन्तु मुझे लगता हे कि आप भूल कर रहे है!"

ब्रिटिश प्रवानमत्रीके नामका यह पत्र गुम हो गया। गाधीजीके अनुभवमे यह पहला उदाहरण था जव उनका कोई महत्त्वपूर्ण पत्र ठीक स्थान पर नही पहुचा था। इसलिए दो महीने वाद उसकी एक प्रति श्री चर्चिलके पास भेजी गई। उसके जवावमे केवल वाइसरॉयके जरिये धन्यवाद सहित उसकी पहुंच स्वीकार की गई! जैसा गाधीजीने श्री गेल्डरसे कहा था, यह विलकुल स्पष्ट था कि श्री चर्चिल कोई समझौता नही चाहते थे और इसलिए वे भारतके लोगोकी या अपने ही लोगोकी भलाईके लिए भी महात्माजीका उपयोग करनेको तैयार नही थे।

लॉर्ड वेवेलने गाधीजीको उत्तर दिया कि मेरे उद्देश्यके लिए गेल्डरसे आपकी भेट काफी नही है। उस पर मेरी टीकासे कोई लाभ नही हो सकेगा। लेकिन मैंने आपको जो कुछ पहले लिखा था उसीको यहा दोहराता हू कि यदि आप मेरे सामने कोई निश्चित और रचनात्मक नीति प्रस्तुत करेगे, तो मै उस पर सहर्ष विचार करूगा। स्पष्ट है कि वाइसरॉयके मतसे समझौतेका रास्ता खोजनेके लिए काग्रेस कार्यसमितिके सदस्योसे मिलनेकी गाधीजी द्वारा मागी गई इजाजतमे अथवा श्री गेल्डर द्वारा प्रस्तुत किये गये समझौतेके आधारमे कोई रचनात्मक तत्त्व नही था।

श्री ब्रेल्सफोर्डने कहा, "मेरे खयालसे इस वातकी कोई सभावना नही है कि युद्ध समाप्त होने तक समझौता करनेकी कोई नई कोशिश ब्रिटिश सरकारकी ओरसे की जायगी। यह वात मै और भी अधिक विश्वासके साथ मानता हू कि जव तक भारतीयोके विश्वासपात्र नेता जेलमे है और काग्रेस विद्रोहकी स्थितिमे है, तव तक न तो भारतवासियोका कोई प्रयत्न सफल होगा और न उसे प्रोत्साहन दिया जायगा। व्हाइट हॉल और नई दिल्लीके यथार्थवादी यह मानते होगे कि जव युद्ध जीत लिया जायगा तव हमारी प्रतिष्ठा और हमारी सत्ता फिरसे स्थापित हो जायगी। उस समय हमारे उपलब्ध सैनिक साधन असीम होगे और अमरीकी सद्भावके लिए हमारा परावलम्वन हमारे लिए वावक सिद्ध नही होगा। सार यह कि उस समय हम भारतवासियोके साथ उसी तरह पेश आ सकते है जैसे साम्राज्य अपनी अधीन प्रजाओके साथ पेश आते है।"[३६]

तीसरा अध्याय

राष्ट्रकी आवाज

इसलिए उनमे से कुछ आये और पहले जुहूमे और बादमे पचगनीमे गाधीजीसे मिले। इनमे श्री रगनाथ दिवाकर—जो बादमे भारतके केन्द्रीय मत्री हुए और फिर बिहारके राज्यपाल बने, बगालके बहुत बडे रचनात्मक कार्यकर्ता अन्नदा चौधरी, समाजवादी नेता अच्युत पटवर्धन और काग्रेस कार्यसमितिके सदस्य तथा बादमे अन्तरिम राष्ट्रीय सरकारकी ओरसे अमरीकामे नियुक्त भारतीय राजदूत श्री आसफअलीकी पत्नी अरुणा आसफअली आदि कई लोग थे। इस निर्भीक महिला अरुणाने अपनी हिम्मत और सूझबूझसे अनेक सरकारी कर्मचारियोसे प्रशसा और कुछ पुलिस अफसरो तकसे गुप्त समर्थन प्राप्त कर लिया था। एक अग्रेज, जो सरकारी अधिकारी भी थे, सयोगसे एक मित्रके घर अरुणासे मिले। अरुणाके साहसी कार्योकी कहानी सुनकर उन्होने पुलिसको सूचना देनेके बजाय उनके साहसकी प्रशसा की और कहा कि ऐसी परिस्थितियोमे मै भी यही करता। अरुणा आसफअलीकी गिरफ्तारीके लिए सरकारने एक बडे इनामकी घोषणा की थी।

गाधीजीने उन्हे बहुत साफ सलाह दी। उनका यह दृढ मत था कि सब तरहकी गुप्तता पाप है। "जिस हद तक हमारे ध्येयमे गुप्तता आ गई है उस हद तक उसे हानि ही पहुची है। हमे एक दो आदमियोकी दृष्टिसे नही सोचना है, हमे करोडो लोगोकी दृष्टिसे विचार करना है। आज वे निर्जीव जैसे हो गये है। गुप्त उपायोका आश्रय लेकर हम उनमे फिरसे प्राण नही पूर सकते। सत्य और अहिंसा पर डटे रहकर ही हम उनकी तेजहीन आखोमे फिरसे तेज उत्पन्न कर सकते है।"

गांधीजीने उनसे कहा कि अपने समीपकी परिस्थितियोको देखते हुए आपको ऐसा लगा होगा कि आप लोगोमे से कुछ भूगर्भमें न चले जाते तो आन्दोलनको हानि पहुचती। परन्तु यह निरा भ्रम है। "जब आप बडे प्रश्नो पर विचार करेगे तो आपको पता लगेगा कि सब तरहकी गुप्तता छोडकर खुले रूपमे काम करनेसे ही आप आगे बढ सकते है।"

इसलिए जो लोग भूगर्भमे चले गये थे उन सबको गाधीजीने यह सलाह दी कि वे बाहर आ जाये: "यदि आपका भी मेरी तरह दृढ विश्वास हो कि छिप कर काम करनेसे अहिंसाकी सक्रिय भावनाके विकासमे मदद नही मिलती, तो आप बाहर आकर जेल जानेका खतरा उठा लेगे और यह विश्वास रखेगे कि इस तरह भोगी हुई जेल स्वय ही स्वतत्रताके आदोलनमे सहायक होती है।"[२] इसी तरह आप अजेय शक्तिका निर्माण कर सकेगे। "आज अगर आप केवल दो होगे तो भूगर्भसे बाहर आने पर कल २० हो जायेगे और इस तरह आपका स्वतत्रता-सग्राम दिन-प्रतिदिन अधिक गति पकडता जायगा।"

उनमें से एकके नाम लिखे पत्रमें गांधीजीने लिखा "मेरी रायमें गुप्तता पाप है और हिंसाकी निशानी है। इसलिए यदि हमारा हृदय कराड़ों मूक मानवोंकी स्वतंत्रता हो तो हमें निश्चित रूपमें उससे सदैव बचना चाहिये। इसलिए मेरे मतानुसार सब तरहकी गुप्त प्रवृत्ति निषिद्ध है।'।

उनमें से भी कुछ लोगोंको अपने गुप्त कार्योंके अनुभवोंके फलस्वरूप इसी नतीजे पर पहुंचना पड़ा था। श्री दिवाकरने गांधीजीको बताया 'शायद बाहर रहनेके मेरे प्रयत्नका मुझ पर एक असर यह हुआ कि मैंने कार्यकर्ताओंको कुछ गुप्त काम करनेके पश्चात गिरफ्तार होनेकी बात समझानेका प्रयत्न नहीं किया। तोड़फोड़ का कार्य-पद्धतिका यह एक अंग हो गया था कि काम करते जाय और गिरफ्तार न हों। सरकार जिन्हें पकड़ना चाहती थी ऐसे कुछ व्यक्ति तो आजादीसे इधर उधर फिरते रहते थे, दूसरे कुछ भागकर भूगर्भमें चले गये थे। कुछने अपने बनावटी नाम रख लिये थे। और कुछ लोगोंने अपनी सदाकी पोशाक छोड़ दी थी और भेष बदलकर घूमते थे। सभी गुप्त संगठनोंमें जमा हुआ करता है वे छोटे छोटे लड़ाई-झगड़े स्पर्धाएं, गुटबन्दियां और भद्दे षडयंत्रोंसे भी सर्वथा दूर नहीं रह सके थे। एक और गुप्त कार्यकर्ताने बताया हमारी संख्या स्वभावतः कम होती गई। हमारे काम करते रहनेकी एक सीमा थी और वह सीमा एक तरहसे आ गई थी। जब मुल्की अधिकारियोंने सैनिक सहायता मांगी और वह सहायता भेज दी गई, तो हमें पता चला कि हमारा प्रतिरोध यहां तक जा सकता है। इससे आगे वह नहीं जा सकता।"

गांधीजी कोई आदेश निकालना नहीं चाहते थे। जिन्होंने 'आना' मांगा उनमें उन्होंने कहा "मुझे अभी कदी ही मानना चाहिये जिसे राय देनेकी स्वतंत्रता है पर आदेश जारी करनेकी नहीं। परन्तु मैं इतना कह सकता हूं कि यदि आप एक ओर सत्यको और दूसरी ओर अहिंसाको रखकर चलें तो आप रास्तेसे भटक नहीं सकते। यह सुनहला रास्ता है। इस पर आप चलेंगे तो ईश्वर आपको सहारा देगा। आपको कोई ऐसी बात नहीं करनी चाहिये, जो आपके हृदयको न जचे। यदि मेरी सलाह आपके हृदयको न जचे तो जो आपकी अंतरात्मा कहे वही आपको करना चाहिये। जब हृदय और बुद्धिमें संघर्ष होना है तो हृदयकी जीत होती है।'

श्रीमती अरुणा आसफअलीको सख्त बेचैन हो गई थी। गुप्त जीवनकी कठिनाइयोंसे वह अधिक तीव्र हो गई थी। गांधीजीने उन्हें लिखा तुम्हारे साहस और शौर्यकी मैं भूरि भूरि प्रशंसा करता हूं। मैंने तुम्हें संदेश भेजे हैं कि तुम्हें गुप्त काममें रहकर नहीं मरना चाहिये। तुम सूखकर कांटा हो गई हो। बाहर निकल आओ आत्म-समर्पण कर दो और तुम्हारी गिर

फ्तारीका पुरस्कार खुद ही ले लो। उस पुरस्कारका रुपया हरिजन-कार्यके लिए सुरक्षित रख दो।"[४]

तो क्या तोड-फोडकी प्रवृत्तिने स्वाधीनता-सग्रामको हानि पहुंचाई थी? क्या उस लडाईके दौरान लोगोने जो हिम्मत और वहादुरी दिखाई थी, वह सब वेकार गई? गाधीजीका निर्णय यह था कि इतिहासकी दृष्टिसे देश हर प्रकारके सग्राम द्वारा आजादीकी दिशामे आगे बढा हुआ मालूम होगा और यह वात उनके सग्राम पर भी लागू होती है। परन्तु सभी लोग अहिंसक रहते, तो यह प्रगति कही अधिक होती। उन्होने एक निश्चित उदाहरण देकर अपना अर्थ स्पष्ट किया। वे समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायणके साहस, देशप्रेम और त्याग-भावनाके वडे प्रशसक थे। जयप्रकाशवावू गुप्त आन्दोलनका नेतृत्व करनेके लिए जेलसे भाग गये थे और उनकी गिरफ्तारीके लिए अधिकारियोने १० हजार रुपयेका इनाम घोषित किया था। गाधीजीने कहा कि यदि मुझे सच्ची वीरताके लिए पदक देना पडे, तो वह जयप्रकाशको न देकर मैं उनकी वहादुर सत्याग्रही पत्नी प्रभावतीको दूगा, जिसने अपने पतिके जीवनमे वही भाग अदा किया था जो कस्तूरवाने मेरे जीवनमे किया था। कस्तूरवाके लिए उनकी मृत्युके वाद गाधीजीने लॉर्ड वेवेलको एक पत्रमें लिखा था, "अहिंसात्मक असहयोगकी कलामे और उसके पालनमे वह मेरी गुरु वन गई थी।"[५]

एक सार्वजनिक वक्तव्यमे गाधीजीने कहा :

> मुझसे कहा गया है कि कुछ कार्यकर्ता यदि भूगर्भमे न चले जाते, तो हम कुछ न कर पाते।... दूसरे राष्ट्रोके उदाहरण देकर वताया गया कि उन राष्ट्रोने ये सारी वाते की है और इनसे भी वुरी वाते करनेमे संकोच नही किया है। मेरा उत्तर यह है कि जहा तक मैं जानता हू, किसी राष्ट्रने समझ-वूझकर सत्य और अहिंसाका आजादी प्राप्त करनेके एकमात्र उपायकी तरह उपयोग नहीं किया है। इस दृष्टिसे सोचे तो गुप्त प्रवृत्तियोको, वे विलकुल निर्दोष हो तो भी, अहिंसाकी कार्य-प्रणालीमे कोई स्थान नही मिलना चाहिये। . . यद्यपि यह सिद्ध किया जा सकता है कि इन प्रवृत्तियोने कुछ लोगोकी कल्पना-शक्तिको उत्तेजित करके उनमे उत्साह जाग्रत किया, . . . फिर भी कुल मिलाकर उनसे हमारे आदोलनको हानि ही पहुंची है।[६]

गुप्त कार्यकर्ताओने यह दलील दी कि "कोई आदमी अपने कर्मका फल भुगतनेको साहसके साथ तैयार हो, तो उसे गुप्तताका दोषी नही कहा जा सकता।" परन्तु गुप्तताके खिलाफ गाधीजीकी आपत्ति वुनियादी थी। गुप्तताका सारा मनोविज्ञान और उसकी कार्य-प्रणाली सर्वथा भिन्न है। जो

-प्रविन गुप्त आचरण करता है, उसके चारो ओर 'रक्षाकी दीवार' खडी करना गुप्तताका लक्ष्य होता है। अहिंसा ऐसी रक्षाका तिरस्कार करती है। वह भारीसे भारी कठिनाइयोंके सामने भी खुले रूपमें काम करती है। ४० करोड लोगोंको खुले और सत्यनापूर्ण साधनाके सिवा अन्य किसी तरह काय करनेके लिए सगठित नही किया जा सकता। किसी भी गुप्त सगठनके द्वारा, चाहे वह कितना ही बडा होता, वह चमत्कारपूर्ण जागति पैदा नहीं की जा सकती थी जो अहिंसात्मक असहयोग आदोलनके छिडनेके बाद भारतके करोडो निरक्षर और दरिद्रता-पीडित लोगोंमें पैदा हुई है। गाधीजी गुप्तताके सबधमें लोगोंकी कमजोरीके लिए छूटछाट रखनेकी बात तो समझ सकते थे, लेकिन आदर्शको हलका बनानेकी बात वे कभी स्वीकार कर ही नही सकते थे।

*

'भारत छोडो' सग्रामके दिनामें दो नई विचारधाराएं उत्पन्न हुई थी। उनमें से एकके प्रतिनिधि बडी सख्यामें समाजवादी थे, जो खुले तौर पर कहते थे कि कार्यक्रमके रूपमें अहिंसाका काय अब पूरा हो गया है। उसका काम 'सब साधारणको जगाना' था वह उसने कर दिया। आजादीकी 'अतिम लडाई' में, जिसका आरभिक दौर अहिंसाका या शस्त्रोके उपयोगके सपूर्ण निषेधका आग्रह नहीं रखा जा सकता। दूसरी विचारधारावाले अहिंसाके सिद्धान्तमें तो विश्वास रखनेका दावा करते थे परन्तु उनका कहना था कि उसकी काय प्रणालीमें 'सशोधन' और 'विकास' की गुजाइश है। वे इसे 'नव-सत्याग्रह' या 'नव-गाधीवाद' कहते थे। इस सशोधित काय प्रणालीमें व्यापक रूपमें तोड फोड गुप्त प्रवृत्ति और समानान्तर सरकार' का सगठन करनेका समावेश होता था।

भारत छोडो सग्रामके दिनोंमें देशके कई भागोंमें — उत्तर प्रदेशके बलिया जिलेमें बगालके मिदनापुर जिलेमें, बम्बईके सतारा जिलेमें और बिहारके बडे भूभागोंमें — ब्रिटिश शासनका अत कर दिया गया था, और उसके स्थान पर समानान्तर प्रशासन स्थापित कर दिया गया था जिसे मिदनापुरमें जातीय सरकार और सतारामें 'पत्री सरकार' कहा जाता था। उसने निशाना और जन-कल्याणका काय सगठित किया पचायतें कायम की अगडे निबटाये अपराधियो और 'गद्दारो' को सजाए दी — कभी कभी कठोर और तात्कालिक न्याय द्वारा जुर्माने वसूल किये, कर लगाये — यह काम सदा समझा-बुझाकर नहा किया गया ब्रिटिश पुलिसके हथियार छीन लिये स्थानीय अफसरो और सरकारी नौकरोंकी 'गिरफ्तारी' के हुक्म लिये और कुछ निश्चित और अनिश्चित काम पूरे करनेके लिए 'अहिंसक दल सगठित किये।

इन कार्योमे लगे हुए लोग पूछते थ कि क्या सरकारी सम्पत्ति अर्थात् रेलो, इमारतो, पुलो, तारो वगैराको नष्ट करना हिंसा है। "यह तो राष्ट्रकी सम्पत्ति है, अपनी सम्पत्तिका हम जो चाहें सो कर सकते है। कभी सरकारी हिंसाको रोकनेके लिए इस सम्पत्तिका नाश जरूरी हो भी सकता है।"

किन्तु गाधीजीको यह दलील स्वीकार नही थी। "राष्ट्रीय सरकार होने पर भी किसी व्यक्तिको राष्ट्रकी सम्पत्ति नष्ट करनेका इसीलिए अधिकार नही मिल जाता कि वह सरकारके आचरणसे असन्तुष्ट है। साथ ही, वुराई मकानोमे, तार-टेलीफोनमे या सडकोमे नही रहती, परन्तु उन व्यक्तियोमे रहती है जो उनका दुरुपयोग करते है। इन सव चीजोको नष्ट करके आप वुराईको तो अछूता ही छोड देते है। वुराईको वेकार वनानेके लिए विनाशकी नही, परन्तु विशुद्धसे विशुद्ध आत्मोत्सर्गकी जरूरत होती है, जो यह सिद्ध करके दिखा दे कि जिस संकल्पने सव-कुछ सत्यरूपी ईश्वरको अर्पण कर दिया है उसे अधिकारी झुका शायद सके, परन्तु तोड़ नही सकेंगे।"

उन्होने प्रत्युत्तर दिया: "हम इस वातसे सहमत है कि पुलो वगैराको नष्ट करनेसे वुराईका वाल भी वाका नही होता, वल्कि वदलेके रूपमे उससे भी वडी वुराईको उत्तेजना मिलती है। हम यह भी मानते है कि वुराई हमारे ही भीतर है; उसके विना वाहरकी वुराई आगे वढ नही सकती। परन्तु रणनीतिकी दृष्टिसे आन्दोलनकी सफलताके लिए और पराजयकी भावनाको रोकनेके लिए गुप्तताका आश्रय लेना जरूरी हो सकता है।"

गाधीजीके लिए ये सव वाते जानी-वूझी थी। उन्होने इससे पहले भी आतकवादके वचावके रूपमे यह दलील अकसर सुनी थी। गाधीजीने उन्हें समझाया कि आपका यह नया कार्यक्रम उस पुरानेसे किसी भी तरह भिन्न नही है। लोगोने तो शारीरिक हिंसाकी व्यर्थताको अनुभव कर लिया है, परन्तु कुछ लोग समझते है कि तोड-फोडके सशोधित रूपमे वे उसका प्रयोग कर सकते है। उसमे न तो अहिंसाका गुण है और न वह पूरे सशस्त्र सघर्पकी ही जगह ले सकती है। आप सत्ताके इन प्रतीकोसे थोडी देर तक चिपटे रह सकते है; इससे आपकी कल्पना-शक्तिको सतोप हो सकता है। परन्तु ये वच्चोके खिलौनोसे अधिक कुछ नही है। "हमे ऐसी सत्ताका सामना करना है, जिसे हार न स्वीकार करनेका गर्व है। अग्रेजी राज्यके आरभमे प्रचण्ड विद्रोह हुए थे। कई स्थानो पर अग्रेज सचमुच हारे भी थे। परन्तु अन्तमे उनकी जीत हुई।" एक अग्रेज राजनीतिज्ञ कहा करते थे· "काठकी वन्दूकमे मेरा विश्वास नही।" गाधीजी इस वातमे उनसे सहमत थे। राष्ट्रीय सग्राम 'काठकी वन्दूको'से नही जीते जा सकते।

इसके विपरीत, गाधीजीने उनसे कहा, खयाल कीजिये कि हर प्रकारकी गुप्तताका निषेध करनेवाली सत्य और अहिंसाकी कार्य प्रणाली पर चलकर जनताका सारा समूह साहस और निर्भीकताकी किस ऊचाई तक पहुच गया है। हम नही जानते कि अहिंसा कसे काम करती है। परन्तु यह सही है कि अहिंसाका पालन करके हम अपनी प्रकट असफलताओ और पराजयोके बावजूद अधिकाधिक शक्ति प्राप्त करते हुए आगे बढ रहे है जब कि आतक वादके परिणाम-स्वरूप हम सदा ही पस्तहिम्मत और कमजोर बने है।

उन्होने गाधीजीसे पूछा आपने भारत छोडो' आन्दोलनको अहिंसक विद्रोह बताया था। क्या अहिंसक विद्रोह सत्ता छीननेका कार्यक्रम नही है?

गाधीजीने उत्तर दिया नही अहिंसक विद्रोह सत्ता छीननेका कार्यक्रम नही है। वह तो सम्बन्धोमें कायापलट करनेवाला कार्यक्रम है जिसका परिणाम सत्ताका शान्तिपूर्ण हस्तान्तरण होता है।

उन्होने समझाया यदि जनताका अहिंसात्मक असहयोग इतना पूर्ण हो कि सरकारी तत्र ठप हो जाय या मान लीजिये कि विदेशी आक्रमणकी टक्करसे सगठित सरकारके टूट जाने पर सत्ताकी शून्यता उत्पन्न हो जाय, ` स्वाभाविक रूपमें जनताका सगठन बीचमें आकर सत्ता अपने हाथमें ; लेगा। परन्तु इससे पहले जनताके सब वर्गोमें इतना मेल उद्देश्यकी (कता और एकरसता हो जानी चाहिये और समाज विरोधी तत्वो पर इतना नियत्रण स्थापित हो जाना चाहिये कि जनताकी सरकार अहिंसाके सिवा और किसी बलका सहारा लिये बिना अपनी आज्ञाओका पालन करा सके। वह सरकार कभी दमनका प्रयोग नही करेगी। उसके राज्यमें विरोधी विचार रखनेवालोकी भी पूरी रक्षा की जायगी।'

परन्तु जिन्होने गुप्त प्रवृत्तिका रोमाच अनुभव कर लिया था व अपने विचार इतनी आसानीसे छोडनेवाले नही थे। उन्होने दलील की हम स्वीकार करते है कि ताड फोड और गुप्तता हिसा है। परन्तु हमने देखा है कि जिसने हमारी गुप्त प्रवृत्तिकी शिक्षा पाई है वह उस आदमीकी अपेक्षा सच्ची अहिंसाके अधिक नजदीक आ जाता है जिसे एसा कोई अनुभव नही हुआ हो।

इसके लिए गाधीजीके पास उत्तर तयार हो था। उन्होने कहा, आपने जो बात कही वह इसी अर्थमें सही है कि हिंसाका बार बार उपयोग करके ऐसा आदमी शायद उसकी व्यर्थताको अनुभव कर लेता है। म आपसे एक प्रतिप्रश्न पूछता हू क्या आप यह भी कहेगे कि जिसने पापका स्वाद चख लिया है वह उस व्यक्तिकी अपेक्षा जिसने यह स्वाद नही चखा है सदा चारके अधिक निकट है?

तोड-फोड और गुप्तता आदिके कार्यक्रमके वारेमे गाधीजीके विचार प्रकाशित होने पर काग्रेसियोके एक वर्गने अप्रसन्नता प्रकट की। एक कार्यकर्त्री वहनने गाधीजीसे कहा. "आपने कही ऐसा कहा था कि आपकी गिरफ्तारीके वाद हमे स्वय अपने नेता वनना होगा। कार्यसमितिकी अनुपस्थितिमे प्रत्येक पुरुष या स्त्रीको अपने लिए स्वतत्र रूपसे सोचना था। हमने अपनी वुद्धिके अनुसार काम किया था। आपके हालके उद्‌गारोसे हमको लगता है कि हमारे साथ न्याय नही किया जा रहा है।"

गाधीजीने उत्तर दिया "मैने किसीको दोप नही दिया। लेकिन जव कोई वात गलत हो तो मुझे कहना ही चाहिये।"

"क्या इससे हमारे कामको हानि नही पहुचेगी?"

"नही, अपनी भूलोसे हम सीखते है। उन्हे सुधार कर हम आगे वढते है।"

"कुछ लोग कहते है कि 'यदि अहिंसाका आप ऐसा सकीर्ण अर्थ करते है, तो हमे ऐसी अहिसा नही चाहिये। आप इसे हिंसा कहिये या और कुछ नाम दीजिये, तोड-फोड और दूसरी विध्वसक प्रवृत्तियोके बिना हम सरकारको उखाड़ नही सकते।'"

"ऐसा प्रयत्न सफल नही हो सकता, चाहे कुछ समयके लिए वह सफल होता दिखाई दे या सचमुच सफल भी हो जाय। परन्तु मैने कहा है कि जो लोग मेरी कार्य-पद्धतिमे विश्वास नही रखते, वे खुले तौर पर ऐसा कह सकते है और हिम्मतके साथ अपने ही उपायोको आजमा कर देख सकते है कि उनके द्वारा क्या वे अविक सफल हो सकते है।"

"हम स्वीकार करते है कि लोकमत आपके विचारका वन गया है। ज्ञानपूर्वक या भयके कारण जनता यह अनुभव करने लगी है कि तोड-फोडसे काम नही वनेगा। लेकिन आप प्रत्येक मनुष्यसे पूर्ण होनेकी आशा नही रख सकते, जव कि आपकी कार्य-पद्धतिका गूढार्थ यही है।"

"मै आपके मतसे सहमत हू। इसीलिए तो मैने अपूर्ण मनुष्योके साथ स्वातत्र्य-सग्राम आरभ किया। लेकिन लोगोमे आवश्यक अहिंसाका विकास हो या न हो, मै अपने सिद्धान्तोके साथ समझौता नही कर सकता।"

"हमारे लक्ष्य तक शीघ्रातिशीघ्र पहुचनेका मार्ग कौनसा है?"

"जो सवसे सीधा मार्ग है, भले ही वह लवा दिखाई दे।"

"तव आप निकट भविष्यमे स्वाधीनता मिलनेकी आशा नही करते?"

"मै तो उसके निकटतम भविष्यमे मिलनेकी आशा करता हू, यदि मेरा मार्ग अपनाया जाय।"

कार्यकर्त्री बहन अपनी बात पर डटी रही "तो आप यह चाहते हैं कि हम क्रुद्ध भी हों और चुप भी बैठे रहें ? '

"नहीं, मैं तो चाहता हूं कि आप अपने आप पर अत्यन्त क्रुद्ध हों। साप पर क्रोध करनेसे कोई लाभ नहीं होता। साप तो काटेगा ही। मेरी पद्धति आपको पसन्द न आती हो तो जो पद्धति पसन्द आये उस पर चलिये। लेकिन चुपचाप मत बैठिये।"

हममें इतना साहस नहीं है। आपका विरोध करके हम आगे नहीं बढ़ सकते।'

आपको यह साहस अपनेमें पैदा करना चाहिये।   अकेले खड़े होनेके इस साहसके कारण ही मेरे लिए यह माना जाता है कि मैं भारतकी स्वातंत्र्य भावनाका प्रतिनिधि हूं। स्वराज्य कमजोरोंके लिए नहीं होता। यदि आप कहें कि आप मेरी अनुयायिनी हैं जब कि वास्तवमें आप नहीं हैं तो कहा जायगा कि आप दुर्बल हैं।'

कार्यकर्त्री निरुत्तर हो गई। गांधीजीने उनका असमंजस ताड़ लिया। वे उन्हें आश्वस्त करते हुए बोले   फिर भी आप कह सकती हैं हम आपका तर्क तो नहीं समझते लेकिन आपके अनुभवके सामने झुकते हैं। आप अपने साथी कार्यकर्ताओंसे कह सकती हैं हम वहां गये थे। उनकी बात हमारे गले नहीं उतरी लेकिन हम गांधीजीको भी अपनी बात समझा नहीं सके। इसलिए हम अनुशासनबद्ध सैनिकोंकी तरह उनका अनुसरण करेंगे।' लेकिन यह रास्ता अगर उन्हें न जंचे, तो उन्हें भी उतने ही खुले तौर पर यह कहनेका अधिकार है महात्माजीने हमसे कह दिया है कि मेरी पद्धति न जंचे तो हम अपनी ही बुद्धिके अनुसार काम कर सकते हैं। यह भी उतना ही सम्मानपूर्ण मार्ग है — शायद अधिक सम्मानपूर्ण हो। तब मैं उनकी रक्षा करूंगा।

औंधके राजकुमार अप्पासाहब पन्त गुप्त कार्यकर्ताओंको सलाह और मार्गदर्शन दे रहे थे। उन्होंने अपनी दुविधा गांधीजीके सामने रखी ' मेरे लिए सत्य और अहिंसा नीति नहीं परन्तु धर्म है। मैं ऐसे गुप्त कार्यकर्ताओंको जानता हूं, जो मक्खीको भी जान-बूझकर चोट पहुंचाना नहीं चाहते। उनके रोम रोममें देशप्रेम समाया हुआ है। जब वे मेरे पास आते हैं और मेरी सलाह मांगते हैं तो मुझे उन्हें आश्रय देना ही पड़ता है। मैं उन्हें गुप्त उपायोंसे विमुख करना चाहता हूं। लेकिन ऐसा करते हुए खुद मुझे ही गुप्तताका आश्रय लेना पड़ता है। इसलिए मैं चक्करमें पड़ा हुआ हूं और बड़ा परेशान हूं।

उसकी फुफकारसे वहुत लोग डर जाते है। इसी तरह सरकारने कुचला तो कुछ लोगोको ही है, परन्तु अपना असीम पशुवल दिखाकर उसने वाकी लोगोको भयभीत कर दिया है।"

उनसे पूछा गया, तो क्या इसका यह अर्थ हुआ कि कोई नया सग्राम छेडनेके अवसरके लिए हमे युद्धके वाद तक प्रतीक्षा करनी पडेगी? या हमे अपना प्रतिरोध जारी रखना चाहिये?

गाधीजीने उत्तर दिया, "विदेशी सत्ताका प्रतिरोध तो एक क्षणके लिए भी शिथिल नही किया जा सकता। उसका उपाय यह है कि हम रचनात्मक कार्य करते रहे और जव कभी गुजाइश हो व्यक्तिगत सविनय आज्ञाभग करके उसे सहायता पहुचाये। सविनय आज्ञाभग वडा जवरदस्त हथियार है। परन्तु हरएक मनुष्य उसको नही चला सकता। उसके लिए तालीम और आन्तरिक वल चाहिये। उसके प्रयोगके लिए अवसर चाहिये। परन्तु रचनात्मक कार्य तो जो भी करना चाहे उसके लिए हमेशा तैयार है ही। **यह तो अहिंसक सैनिककी कवायद है।** इसके द्वारा आप ग्रामजनोको आत्म-निर्भरता, स्वावलम्वन और स्वतत्रताका अनुभव करा सकते है, ताकि वे अपने अधिकारोके लिए खडे हो सके। यदि आप रचनात्मक कार्यक्रमको सचमुच सफल वना दे, तो आप सविनय आज्ञाभगके विना ही भारतके लिए स्वराज्य प्राप्त कर लेगे।"

काग्रेस पर पावन्दी लगी हुई थी। देशके कुछ भागोमे पाचसे अधिक आदमियोके अनौपचारिक रूपमे इकट्ठे होने पर निषेधाज्ञा लगी हुई थी, कुछ स्थानोमे खादीकी भी मनाही थी। कार्यकर्ताओने पूछा· ऐसी स्थितिमे कैसे काम किया जाय?

गाधीजीने उन्हे समझाया कि यद्यपि मैने सामूहिक सविनय आज्ञाभगका निषेध किया है, फिर भी काग्रेसकी साधारण प्रवृत्तियोके वारेमे मनाहीकी आज्ञाए हो तो उनको भग करना चाहिये। "हमे ऐसी आज्ञाओकी परवाह न करके इसी तरह काम करते रहना चाहिये, मानो वे है ही नही।" उदाहरणके लिए, मान लीजिये कि आपने सेवाग्राम गावकी सफाईका काम हाथमे लिया और सरकारने उसकी मनाही कर दी, तो आप वह काम न छोडे। "ऐसा होना चाहिये कि आपके हाथसे झाडू छीन लेनेसे पहले उसे आपके हाथ तोडने पडे।" या दूसरा उदाहरण लीजिये। आपको अपने घरो पर राष्ट्रीय झडा फहरानेसे कौन रोक सकता है? आपने नही फहराया तो इसका कारण इतना ही था कि अपने स्वाभिमानकी रक्षा करनेकी आपमे शक्ति नही रही। "मै प्रत्येक व्यक्तिका यह धर्म समझता हू कि वह अपने स्वाभाविक अधिकारोके लिए लडे। यह ऐसा धर्म है, जिसे टाला नही जा सकता।"

'जिनमें प्रतिरोध करनेकी इच्छा तो है, परन्तु ऐसा करनकी शक्ति नहा है एसे लागाके लिए आप क्या कहते ह ?"

एसाको मेरी सलाह है कि वे शक्ति पदा करनेके साधनके रूपमें रचनात्मक कायको अपना ल और वलप्राप्तिक लिए ईश्वरसे प्राथना कर।'

"मान लीजिये कि सरकार आपको गिरफ्तार कर ले, तो उस हालतमें सफल होन तक स्वातत्र्य-सग्रामको जारी रखनके लिए आप क्या काय-योजना सुायगे ?"

अपनी जडताको छाड कर जिस कामकी मनें रूपरखा वनाइ ह उस लगनके साथ करते रहिये।

एक कायकर्तानें पूछा हमारे पिछले सग्रामामें यह पाया गया कि सरकारकी पाशविक हिसान लोगाको वदलेमें हिंसा करनके लिए प्ररित किया था। इस समस्याका कम हल किया जाय ?

गाधीजीने उत्तर दिया यह स्त्रियाका क्षत्र है। म असख्य वार कह चुका हू कि अहिंसा स्त्रियाका जन्मजात गुण है। युग युगसे पुरुषाको हिंसाकी तालीम मिली है। अहिंसक वननके लिए उन्हें अपनेमें स्त्रियाके गुण पदा करन हागे। जवसे मन अहिंसाको अपनाया है तबसे मं स्वय दिनादिन स्त्री वनता जा रहा हू। स्त्रिया परिवारक लिए त्याग करनकी आदी तो ह। अब उन्हें देशके लिए वलिदान करना सीखना है। म सब स्त्रियाको जिनमें कराडपतियाकी पत्निया भी शामिल ह अपनी अहिंसक सनामें भरती होनका निमत्रण दता हू। करोडपति पति अपन रुपयाका घमड कर सकते ह, उनमें व अपनी पत्नियाका सवाआका यश और जोड दें।

*

अकाल आधी-तूफान और सरकारी दमन इन तीनाने मिल कर वगालक लागाका आत्माका कुचल दिया था। आम लागाको लगता था कि उनका काइ रखवाला नही रहा। मिदनापुरमें भी जहा लागान आश्चयजनक शौय दिखाया था व निराशा अनुभव कर रह थ। एसा क्या हुआ था ? इस मसलका गाधीजाका विश्लेषण इस प्रकार था उन्हान ऊच दर्जेका त्याग वृत्ति प्रगट की है परन्तु अपनमें वह अहिंसा पदा नहा की जा निराश हाना जानती ही नहा। म अपना व्याख्यावाली अहिंसाकी बात नहा कर रहा ह परन्तु उस व्यावहारिक अहिंसाकी बात कर रहा हू जिस काग्रसन नीतिक रूपमें स्वीकार किया है। नीतिको जव तक हम नीतिक रूपमें मानत ह तब तक उसक प्रति हमारा अनन्य निष्ठा हाना चाहिय। यहा उनक आचरणमें कमी रह गइ। काइ सिपाही जिसन हिंसाका प्रण लिया है और अधिकस अधिक शत्रुआको मार डालनका कसम खाइ है सनापतिका

आज्ञा पाकर अपनी हवालातमे रखे हुए युद्धबन्दियोकी प्राण देकर भी रक्षा करेगा। वह उस आज्ञाका पालन अक्षरश करेगा और भावनामे भी करेगा। यही काग्रेसियोने नही किया और इसीलिए उन्हे निराश और पथभ्रष्ट होना पडा। उन्होने आज्ञा-पालन तो किया, परन्तु मनमे चोरी रखकर किया।"

एक कार्यकर्ता बोले, "आपने हमे वताया है कि अहिसा अत्यन्त ऊची कोटिका गुण है, इसलिए अत्यन्त ऊचे लोग ही उसका आचरण कर सकते है। तो क्या इसका उपदेश उन्हे दिया जा सकता है, जिन्होने नैतिक साहस और प्रेमकी भावनाका विकास नही किया है?"

"धर्मके रूपमे अहिसाका पालन कोई भी ऐसा मनुष्य कर सकता है, जो श्रद्धापूर्वक परमेश्वरका अनुसरण करता है। सभीको ईश्वरके प्रत्यक्ष दर्शन नही होते, परन्तु अनेकोको श्रद्धापूर्वक ईश्वर पर विश्वास होता है।"

गाधीजीसे फिर पूछा गया, "श्रद्धा न हो तो उसे कैसे प्राप्त किया जाय?"

"उसके लिए तपस्या करके। श्रद्धा तपस्याका फल है, अर्थात् सच्ची इच्छाका और उस इच्छाकी पूर्तिके लिए किये जानेवाले सतत प्रयत्नका फल है।"

दूसरे एक कार्यकर्ताने पूछा, "हमारे सग्रामके परिणामस्वरूप आप ब्रिटिश शासकोके हृदयोमे कोई उल्लेखनीय परिवर्तन देखते है?"

गाधीजीने उत्तर दिया "हमारे यहाके स्थानीय शासकोमे जो परिवर्तन मुझे दिखाई देता है, वह तो वुरा परिवर्तन है। परन्तु ब्रिटिश जनतामे और सारी दुनियाके लोगोमे सच्ची दिशामे परिवर्तन हुआ है; और यह मेरे विचारसे मुख्यत सत्याग्रहके कारण हुआ है।"

इस कथनके दूसरे भागके वारेमे कार्यकर्ताके मनमे शका थी। अत गाधीजीने आगे कहा. "आपको यह नही मान लेना चाहिये कि सत्याग्रहकी कला असफल सिद्ध हुई है। दक्षिण अफ्रीकामे समझौतेसे ठीक पहलेकी जनरल स्मट्सकी भापामे और लिनलिथगो या एमेरीकी हालकी भापामे कोई अन्तर नही था। वहा इस वारेमे गरम अफवाहे फैली हुई थी कि दक्षिण अफ्रीकाकी सरकार सत्याग्रह आदोलनको कुचल देनेके लिए सख्त कदम उठानेकी वात सोच रही है और फिर अचानक सम्मानपूर्ण समझौता हो गया। इसी तरह यहा भारतमे भी समझौता होकर रहेगा। हा, लोग नितान्त पागल हो जाय तो दूसरी वात है।"

कुछ ठहर कर गाधीजी वोले "अलवत्ता, समझौता और निवटारा तो वोअर-युद्धके अन्तमे भी हुआ था, यद्यपि वोअर लोग पूरी तरह हिंसक थे। परन्तु सोचिये तो, वोअरोको उसकी क्या कीमत चुकानी पडी? उन्होने

जो बलिदान दिया उसके एक अंशका बलिदान भी हम विशुद्ध अहिंसक ढंगसे देते तो हमारा संग्राम बहुत पहले ही सफलतापूर्वक समाप्त हो जाता। मुझे स्वतंत्रता आती दिखाई दे रही है और वह भी सुदूर भविष्यमें नहीं परन्तु हमारी आंखोंके सामने ही। आज हम जो अंधकार दिखाई दे रहा है, वह तो उषाकालसे पहलेका आवश्यक अंधकार है।"

वे भाई इस बातसे सहमत थे कि सत्याग्रहकी कलाम बहुत बड़ी शक्ति छिपी हुई है परन्तु उनका विश्वास सत्याग्रहके बहिष्कारवाले अंग पर ही था। उपवास प्रार्थना आदि उसके आध्यात्मिक भागका साम्राज्यवादियोंके हृदय और मन पर कोई असर होता है इसमें उन्हें शंका थी।

गांधीजीने उनसे प्रश्न किया कितने लोगोंने विरोधीका हृदय-परिवर्तन करनेके लिए उसका पालन किया है? शायद मैं अकेला ही उसका पालन करनेवाला होऊंगा। मैं प्रमाण तो नहीं दे सकता लेकिन प्रार्थनाकी क्षमतामें मेरी अटल श्रद्धा है।

*

दो राष्ट्रीय शालाओंके कुछ शिक्षक सलाह मशविरेके लिए गांधीजीके पास आये। उनकी शालाओंकी सम्पत्ति सरकारने जब्त कर ली थी और वे खुद भी जेलमें हालमें ही छूटे थे। गांधीजीने उनसे कहा बहुत बार हमारी निष्क्रियताकी तहमें एक गुप्त अनिर्वचनीय भय होता है। सत्याग्रहियोंको अपने निर्भय आचरणसे अपने पड़ोसियोंको निर्भयताकी छूत लगा देनी चाहिये।

शिक्षकोंने पूछा सरकार शालाकी सम्पत्ति लौटानेकी शर्तके तौर पर हम पर प्रतिबन्ध लगाये या माफी मांगनेको कहे तो हमें क्या करना चाहिये? गांधीजीने उत्तर दिया अवश्य ही आपको ऐसी शर्त स्वीकार नहीं करना चाहिये। परन्तु आपको अपनी बुद्धिके अनुसार कार्य करनेसे क्या डरना चाहिये? इस मामलेमें मुझसे परामर्श करनेकी जरूरत क्या होनी चाहिये? मनुष्यको जो सत्य प्रतीत हो उसके अनुसार उसे चलना चाहिये और विश्वास रखना चाहिये कि परम सत्यकी साधनाका यही एक मार्ग है। अनिश्चय और अनिर्णय बहुधा मानसिक आलस्यके चिह्न होते हैं। भूल सब करते हैं परन्तु भूल करनेके डरसे निष्क्रिय तो नहीं बैठना चाहिये। जैसा गीतामें कहा है 'संशयात्मा विनश्यति'।

गांधीजी आगे बोले मैंने आशा रखी थी कि 'भारत छोड़ो' संग्राम आजादीका लड़ाईका आखिरी मंजिल होगा। परन्तु ऐसा नहीं लगता। लोग अहिंसाके सन्देशको हजम नहीं कर पाये। जब मैं जानता था कि लोगोंने अहिंसाके सन्देशको पूरी तरह पचाया नहीं है, तो फिर मैंने आन्दोलन शुरू ही

क्यो किया? "मेरा उत्तर यह है कि अहिंसामे और ईश्वरमे रही मेरी श्रद्धाने ही मुझे यह आदोलन आरभ करनेकी प्रेरणा दी। कर्म मेरा ध्यानमत्र है। फलकी मुझे चिन्ता नही होती। भगवानने जो साधन मुझे सौपे है, उन्हीको लेकर मुझे काम करना पडता है। मै अपने लिए कोई नई सृष्टि नही रच सकता। मै करोडो मूक लोगोके लिए जी रहा हू। मुझे विश्वास है कि वे मेरा साथ नही छोडेगे। इसलिए मै आशाका त्याग किये विना कार्य कर सकता हू। मै जानता हू कि अन्तमे सब ठीक हो जायगा; परन्तु हमे अग्नि-परीक्षामे से तो गुजरना ही होगा।"

*

कार्यकर्ताओकी एक और मडलीसे गाधीजीने कहा: "जो लोग सोचते है कि करनेके लिए कुछ नही है, वे मुझे नही जानते। जो लोग यह खयाल करते है कि चरखा चलानेके सिवा और कुछ करनेको नही है, वे भी मुझे नही पहचानते। चरखा तो है ही। परन्तु उसके अलावा मैने देशके सामने एक निश्चित कार्यक्रम रखा है। आपको काग्रेस महासमितिके समक्ष दिया हुआ मेरा ८ अगस्तवाला भाषण दुबारा पढ कर अपनी स्मृति ताजी कर लेनी चाहिये।"[१]

९ अगस्त — 'भारत छोडो' दिवसकी वर्षगाठ नजदीक आ रही थी। उसे कैसे मनाये? अधिकारी उसके मनानेमे बाधा डाले तो क्या किया जाय? गाधीजीकी सलाह स्पष्ट थी: कोई उग्र कार्यक्रम उस दिन नही होना चाहिये। चुने हुए लोग ही उसमें भाग ले। अधिकारियोके सारे उचित भय दूर करनेकी पूरी सावधानी रखी जाय और उत्तेजनाके लिए उन्हे कोई कारण न दिया जाय। परन्तु किसी भी कारणसे ९ अगस्तका दिन मनाना छोडा न जाय। अगर व्यक्तिकी हैसियतसे भी हम शासनकी अन्यायपूर्ण आज्ञाओका नम्रतापूर्वक प्रतिरोध करनेका अपना अधिकार छोड दे, तो सत्याग्रहकी दीक्षा लेकर देशने पिछले २५ वर्षोमे जो सबक सीखा है वह सब व्यर्थ हो जायगा। इसलिए मै सब खतरे मोल ले लूगा, परन्तु आगामी ९ अगस्तका दिन प्रतीक रूपमे मनानेका विचार त्यागनेकी सलाह नही दूगा।

गाधीजीकी सलाहके अनुसार बम्बईके २५ नागरिकोने बम्बईके पुलिस कमिश्नरको ९ अगस्तसे एक सप्ताह पहले यह सूचना भेजी कि चौपाटीके मैदानमे महान देशभक्त स्व० लोकमान्य तिलककी मूर्तिके सामने वे पाच मिनट तक मौन प्रार्थना करेगे और झडाभिवादनका गीत गाकर बिखर जायगे। उन्होने यह विधि पूरी करनेकी अनुमति मागी। इस विचारसे कि भीड इकट्ठी न हो, आम जनताके लिए समय और स्थानकी घोषणा नही की गई। हा, पुलिस अधिकारियोको बाकायदा सूचना दे दी गई, ताकि वे

अपनी जरूरी तयारियां कर सकें। समारोहके एक दिन पहले गांधीजीने एक वक्तव्य निकाला, जिसमें कहा गया था कि 'यदि इस असाधारण धीरज और सावधानीकी भी कद्र न की गई और अधिकारियोंने नागरिक अधिकारके सीधे-सादे सांकेतिक प्रयोगमें भी हस्तक्षेप किया, तो सारा दोष अधिकारियोंका होगा।''

गांधीजी तो महिला सत्याग्रहियोंको ही भेजना पसन्द करते क्योंकि स्त्रियां अहिंसाकी प्रतीक हैं। परन्तु व्यवस्था बदलनेके लिए समय नहीं रह गया था। पुलिस अधिकारियोंने इजाजत नहीं दी। ९ अगस्तके प्रातःकालकी शान्तिमें साढ़े पांच बजे २५ सत्याग्रही लोकमान्य तिलककी मूर्तिके सामने प्रार्थना करने और झंडाभिवादनका गान करनेके लिए पांच पांचकी टोलियोंमें जा रहे थे उस समय वे गिरफ्तार कर लिये गये।

सांकेतिक सत्याग्रह एक स्थान तक ही सीमित रहा और सारा देश उसे देखता रहा। इससे सत्याग्रहकी काम पद्धतिका ऐसा प्रदर्शन हुआ, जो हिंसाकी शक्तियोंका बोलबाला होने पर अत्यन्त असरकारी सिद्ध होता है।

जब बम्बईने यह प्रतीकात्मक काम किया, तब सारे देशका ध्यान और सहानुभूति उसी पर केन्द्रित रही। अनुशासनबद्ध संयमने दमनकी धारको कुंठित कर दिया और उस प्रतीकात्मक कार्यमें लाखों आदमियोंके मानसिक रूपमें सम्मिलित होनेसे ऐसा नैतिक बल उत्पन्न हुआ, जो यदि जनताकी सहानुभूति और उसका ध्यान सारे देशमें छुटपुट प्रदर्शन करनेमें नष्ट कर दिया जाता तो उत्पन्न नहीं हो पाता।

इसके बाद आनेवाले स्वाधीनता दिवस पर" (२६ जनवरी १९४५ को) लगभग २५० शिक्षार्थियोंने, जो कि गांधीजीके श्रम शिविरमें सेवाग्राममें तालीम पा रहे थे और सेवाग्रामकी विविध रचनात्मक संस्थाओंके सदस्योंने सेवाग्राम गांवकी सफाईका कार्यक्रम हाथमें लिया। वे दो दोकी कतारमें टोकरी बाल्टी और झाड़ू लेकर अपने काम पर जा रहे थे कि पुलिसने उन्हें रोक दिया। उनसे कहा गया कि वे कतार तोड़ दें तो ही आगे बढ़ सकते हैं। इस परिस्थितिमें यदि वे झुक जाते तो उनकी अहिंसा निरी कायरता सिद्ध होती। पर उन्होंने कतार तोड़नेसे इनकार कर दिया और पुलिसका घेरा तोड़नेकी कोशिश भी नहीं की। वे सब जमीन पर बैठ गये। अंतमें पुलिसको झुकना पड़ा और निश्चित कार्यक्रम पूरा किया गया। शामकी प्रार्थना-सभामें गांधीजीने इस घटना पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा: यदि वे लोग क्रोधमें आ जाते और पुलिसके घेरेको तोड़नेका प्रयत्न करते तो पुलिसको शायद गोली चलानी पड़ती। किन्तु स्वयं सेवकोंके गौरवपूर्ण और मजबूत रवैयेके सामने पुलिसके हथियार बेकार हो

गये। स्वयंसेवकोंने न तो गोली चलानेके लिए पुलिसको उत्तेजित किया और न वे विचलित हुए। उनके लिए सच्ची सत्ता उनकी अन्तरात्माका आदेश था। मैं इसीको ईश्वर या सत्य कहूंगा। इस छोटीसी घटनामें हमारे सारे स्वातंत्र्य-संग्रामका सार आ जाता है। तिलक महाराजने हमें यह मंत्र दिया कि "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।" मैंने उसमें उसका उत्तरार्द्ध जोडकर उसे पूरा कर दिया है। वह उत्तरार्द्ध यह है "उसका उपाय सत्य और अहिंसा है।" यह उपाय करोडों आदमियोंके लिए तभी संभव है, जब वे रचनात्मक कार्य करें। रचनात्मक कार्य और सविनय आज्ञा-भंगके मेलसे हम विजय पर विजय प्राप्त करते आ रहे हैं। यदि आप अपनी सफलता पर गर्व करेंगे, तो आपका गर्व ही आपका विनाश सिद्ध होगा। नम्रता सत्याग्रहीका विशिष्ट लक्षण है।

३

भारतीय साम्यवादी गांधीजीके रिहा होने पर उनका स्वागत करनेमें किसीसे पीछे नहीं रहे। वैसे, गांधीजी जिस 'भारत छोडो' प्रस्ताव पर अब भी अटल थे, उसके प्रति साम्यवादियोंका रवैया खुले विरोधका था। उनके दल पर उस समय तक प्रतिबन्ध लगा हुआ था जब तक रूस अपना पक्ष बदल कर मित्रराष्ट्रोंके साथ नहीं जुड गया। १९४१ में रूस पर नाजी आक्रमण होनेके बाद साम्यवादियोंने यह घोषणा की कि जिस युद्धकी अब तक वे 'साम्राज्यवादी युद्ध' कह कर निन्दा करते थे वह अब 'जनताका युद्ध' हो गया है। उन परसे प्रतिबन्ध हटा लिया गया और उनके तथा ब्रिटिश अधिकारियोंके बीच अस्थायी संधि हो गई। उसके बाद उन्होंने 'भारत छोडो' आन्दोलनको विफल करनेके लिए अपनी सारी शक्तिका उपयोग किया। परिणामस्वरूप सामान्यतः जनतामें और विशेषतः कांग्रेसियोंमें वे बदनाम हो गये थे।

गांधीजीकी रिहाईके बाद साम्यवादी दलके महामंत्री पी० सी० जोशीने उन्हें लिखा कि अपने दलकी 'नीति' का आपके सामने 'स्पष्टीकरण' करके मुझे बडी खुशी होगी। वे गांधीजीसे मिले। उसके बाद दोनोंके बीच लम्बा पत्र-व्यवहार हुआ। गांधीजीने उनके दलके विरुद्ध जो भी शिकायतें आई थी वे सब उन्हें बताईं और कुछ प्रश्न अपनी ओरसे भी किये। [१] उत्तरमें जोशीने लम्बी सफाई भेजी। गांधीजीने कुछ मुद्दों पर उस स्पष्टीकरणको स्वीकार कर लिया, लेकिन 'जनताका युद्ध' वाली बात उनके गले नहीं उतरी

मेरा यह कहना है कि 'जनताका युद्ध' शीर्षक भारी गलतफहमी पैदा करनेवाला है। मित्रराष्ट्रोंके साथ रूसके सीमित गठ-बन्धनसे

पहले नाजी गुटके विरुद्ध जो एक साम्राज्यवादी युद्ध था वह कल्पनाकी कितनी ही खींचतान कर ली जाये तो भी जनताके युद्धमें नहीं बदल सकता।

मेरे लिए आपके इस तर्कका उत्तर देना निरर्थक है कि 'इस युद्धने दुनियाको दो छावनियोंमें बांट दिया है।" दोनोंमें से किसीकी भी दिशामें मैं नावको क्यों न ले जाऊं मेरी नाव तो डूबने ही वाली है। इसलिए मुझे तो मझधारमें ही रहना है। आपके नाम यह पत्र तैयार करते समय मैंने आपके तर्कको बार बार पढ़ा है। उसका प्रत्येक परा मुझे खटकता है क्योंकि मुझे उसमें सत्यका अभाव दीखता है।"

अपने बाकीके प्रश्नोंके उत्तरोंसे भी गांधीजीको सन्तोष नहीं हुआ था 'अन्य प्रश्नोंके आपके उत्तरोंके विषयमें मैं कोई निश्चित उत्तर नहीं दे सकता। यदि मैं पूर्वाग्रहोंसे मुक्त होता तो मुझे आपके उत्तर स्वीकार करनेमें संकोच न होता। परन्तु मेरी कठिनाई वास्तविक है। जब मैं स्वीकार करता हूं कि मुझमें पूर्वाग्रह है तो मेरा आपसे यह अनुरोध है कि आप मेरे प्रति धीरज रखें और अधिकसे अधिक अच्छे ढंगसे मेरे पूर्वाग्रह दूर कर दें। मैं आपको आश्वासन देता हूं कि मैंने अपने पूर्वाग्रहोंके आधार पर कोई काम नहीं किया है और न आगे करूंगा जब तक कि मेरे पूर्वाग्रह पक्के होकर दृढ़ विश्वासका रूप न ले लें।"

साम्यवादियोंने इस विधान पर भी रोष प्रगट किया कि वे कांग्रेसमें भीतरसे तोड़-फोड़ करनेकी कोशिश कर रहे थे। "हमारे लिए कांग्रेस संगठनमें अपने पांव फैलानेकी नीति अपनानेका कोई प्रश्न ही नहीं है। जबसे दलके रूपमें हमारा जन्म हुआ तभीसे हम कांग्रेसमें रहे हैं।"" बेशक साम्यवादी कांग्रेसमें थे फिर भी भीतरसे कांग्रेसमें तोड़-फोड़ करना — जैसा कि अपने विविध निबंधों में उन्होंने प्रतिपादन किया था — उनकी नीतिका ध्रुवपद रहा था। ये निबंध उनके दलके सदस्योंमें समय समय पर गुप्त रूपमें बांटे गये थे और उन्हें ऐसी सलाह दी गई थी कि वे कांग्रेसके भीतर एक गुट बनाकर काम करें और हर संभव उपायसे कांग्रेसकी नीतियोंको निष्फल बनायें।

साम्यवादी दलके महामंत्रीने गांधीजीको दोनों पक्षोंके एम हिनियोंसे साम्यवादियोंके बारेमें उनका मत पूछ लेनेको कहा जिनके लिए गांधीजीको आदर था और जो अवश्य ही साम्यवादी दलको इन सब आरोपोंसे मुक्तिका प्रमाणपत्र दे देते। गांधीजीने उत्तर दिया "उनका आरंभ किसी भी प्रकारका सामान्य आश्वासन मित्रोंसे मेरे पास जो प्रबल प्रमाण आये हैं वे मिट नहीं सकते। मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि इन सारे प्रमाणोंको केवल पूर्वाग्रह कह कर आप टाल न दीजिये।" गांधीजीने अपने पत्रके अन्तमें यह प्रार्थना की

> मेरा अनुरोध है कि आप अपने आलोचको पर रोप न करे। . . यदि उनकी आलोचनाका हेतु वुरा हो, तो आपके रोपके लिए उचित कारण होगा। . अन्तमे विश्वास रखिये . . कि मैने अपने लिए और सारे देशके लिए जो मार्ग निर्धारित कर लिया है, उसके अनुसार स्वाधीनताकी लडाई लडनेमे मै आप सवकी सेवाओका उपयोग करना चाहता हू। और यदि मुझे विश्वास हो जायगा कि . . आपकी पद्धति सही है, तो मुझे आपके पक्षमे आ जाना अच्छा लगेगा। और फिर मै आपकी सेनामे एक सिपाहीकी तरह भरती होकर सच्चे हृदय और प्रसन्नताके साथ एक उम्मीदवारकी तरह सेवा करूगा।

इसके उत्तरमे गाधीजीको यह नमूनेका पत्र मिला "यदि मेरे अपने पिताने वही लिखा होता जो आपने मुझे लिखा है, तो मै उनके पत्रका उत्तर **कभी न देता** और मै उनसे फिर कभी मिलने न जाता। लेकिन मै आपको लिख रहा हू, क्योकि आप राष्ट्रके पिता है। . . मै जानता हू कि आपका आशय ऐसा नही है। परन्तु हमारे विचारोके वारेमे आपका अज्ञान और हमारे दलके वारेमे आपके पूर्वाग्रह इतने वडे है कि आप क्या लिखते है इसका भी आपको भान नही है। . . मै आपके साथ राजनीतिक प्रश्नोकी चर्चा तभी करूगा जव आप यह महसूस कर लेगे कि अव आपके पूर्वाग्रह वाकी नही रहे। "[१७]

परन्तु गाधीजीके लिखनेका कोई कारण था तो सिर्फ यही कि उनके मनमे पूर्वाग्रह थे और उन्हे वे दूर कराना चाहते थे। साम्यवादी दलके महा-मत्रीके पत्रमे आगे कहा गया था "हम बहुत सोचते रहे है कि आप हमारे इतने खिलाफ क्यो है। उसकी जड यह है कि आपने साम्यवादको गलत समझ रखा है। आप बुनियादी तौर पर एक धार्मिक पुरुप है और आपकी एक नैतिक आचार-सहिता है। आपने अपने राजनीतिक कार्यके साथ अपनी वुनि-यादी धार्मिक मान्यताको सम्वद्ध कर दिया है। आपकी मान्यता यह मालूम होती है कि साम्यवादका अर्थ है. 'उद्देश्य अच्छा होना चाहिये, साधन कैसे भी हो।' हमारे विरुद्ध यह नारा अव वहुत पुराना पड गया है। . हम साम्यवादी अत्यन्त 'धार्मिक' है, यद्यपि हम किसी धर्मके अनुयायी होनेका दावा नही करते।"

साम्यवादी दलके महामत्री इसके वाद रोपमे आकर लिखते है. "क्या आपने कभी काग्रेस महासमितिके ऐतिहासिक अगस्त अधिवेशनमे साम्यवादी प्रतिनिधियो द्वारा कहे गये शब्दोको याद रखनेकी परवाह की है? उन्होने आपसे क्या करनेकी याचना की थी? यही न कि प्रस्तावका क्रियात्मक भाग निकाल कर उसके स्थानमे आत्म-निर्णयके सिद्धान्तको स्वीकार करनेकी और

लीगके साथ तुरन्त संधिवार्ता करनेकी बात रखी जाय? वस्तुतः अब आपने वही बात की है।" (सितम्बर १९४४ में गांधीजी जिन्नासे मिले थे उसीका उल्लेख यहां है।)

ये दोनों बातें एक-दूसरेसे उतनी ही भिन्न थीं जितना गधेसे घोड़ा भिन्न होता है। साम्यवादियोंके लिए राष्ट्रीय स्वाधीनता विश्व पर साम्यवादकी सर्वोपरि सत्ता स्थापित करनेके संग्राममें एक मंजिल मात्र थी। उनकी एकमात्र चिंता यह थी कि रूसके शत्रुओंकी हारके लिए भारतके सब साधन तुरन्त उपयोगमें लाये जायं। इसलिए वे यह देखनेको बहुत उत्सुक थे कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग किसी भी कीमत पर मिल कर अपने आपको स्वेच्छासे बलिदान करनेको तैयार हो जायें और जरूरत हो तो भारतका भी बलिदान कर दें। और ऐसा वे इसलिए करें कि रूस जीवित रहे क्योंकि वही उनकी सच्ची मातृभूमि था। उनका नारा यह था कि मित्रराष्ट्रोंके युद्ध प्रयत्नमें बिना किसी शर्तके हर प्रकारसे सहायता दी जाय — न कि सिर्फ उसका नैतिक समर्थन किया जाय। गांधीजी मित्रराष्ट्रोंका नैतिक समर्थन करनेकी बात कहते थे। मित्रराष्ट्रोंके युद्धप्रयत्नोंका नैतिक समर्थन करनेके गांधीजीके प्रस्तावके पीछे यह मान्यता थी कि मित्रराष्ट्रोंके ध्येयके मूलमें नैतिक सिद्धांत है और वह भारत तथा विश्वकी अन्य पराधीन प्रजाओंके लिए लागू किया जायगा। परन्तु रूसकी विजयका सर्वोपरि ध्येय सिद्ध हो तब तक साम्यवादियोंके लिए नैतिक सिद्धान्तका अभाव किसी भी तरह बाधक नहीं होता था। बेशक, ब्रिटिश साम्राज्यवादको वे भी कमजोर करना चाहते थे और इसलिए भारतको ब्रिटिश नियंत्रणसे मुक्त करनेके इच्छुक थे। लेकिन जहां गांधीजी किसी ऐसी व्यवस्थामें सहमत नहीं हो सकते थे जिससे भारतकी एकताको खतरा हो, वहां साम्यवादियोंको उसके टूटनेका कोई डर नहीं था। इसके विपरीत, यदि एकताके खंडन और अराजकतासे भारतमें या संसारमें साम्यवादको फैलानेके लिए परिस्थितियां अधिक अनुकूल होती हों तो इन स्थितियोंको वे हृदयसे चाहते थे।

जोशीके पत्रका आखिरी अंश यह था: "आपको उन प्रश्नोंके सम्बन्धमें [illegible] मेरा मानना [illegible] नहीं होता जो किसी भी सभ्य समाजमें स्वीकार कर लिये जाते हैं। [illegible] आप मेरे और हमारे [illegible] साथ वही व्यवहार करते हैं जो पहले आपने और कांग्रेसके साथ करते हैं।"

गांधीजी साम्यवादियोंके दांव-पेचोंको [illegible] नहीं सह सकते थे। उन्होंने उत्तर दिया: "मेरा आरोप आपको बुरा [illegible] इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूं। [illegible] मैंने सब कुछ हृदयकी सच्ची भावनासे लिखा था। मैं अपने पूर्वाग्रहको [illegible] आपके [illegible] नहीं ला सकता। मन तो

यह आशा रखी थी कि मेरे मित्रतापूर्ण रुख और स्पष्टवादिताका आदर किया जायगा।"[१९]

साम्यवादियोने सुझाया कि उनके विरुद्ध जो भी आरोप है, उनकी जाच एक पच द्वारा करा ली जाय। इसके लिए उन्होने नाम भी दिये। गाधीजीने उनमे से एक श्री भूलाभाई देसाईके पास वे सव प्रमाण भेज दिये, जो उनके पास आये थे। भूलाभाई उस समय वहुत कार्यव्यस्त थे। उनका स्वास्थ्य भी वहुत अच्छा नही रहता था। इससे साम्यवादी अधीर हो गये और विलम्वकी शिकायत करने लगे। अन्तमे गाधीजीने उन्हे सन्देश भेजा

> मै भूलाभाईसे जल्दी नही करा सकता। वे जिस दिन चाहे उस दिन अपनी राय दे सकते है। मुझे अदेशा यही है कि वह कोई पच-फैसला नही होगा। वह मेरे पासके कागजात पर एक प्रसिद्ध धाराशास्त्रीका मत होगा। मै जल्दीमे कोई निर्णय नही वनाना चाहता। अनेक ईमानदार काग्रेसी मेरे पास आये या उन्होने मुझे लिखा कि साम्यवादियोका इसके सिवा कोई सिद्धान्त नही कि उनका दल जीवित रहे और किसी भी रीतिसे वे अपने विरोधियोको खतम करे। मै तो इस प्रमाणके आधार पर भी कोई मत नही वनानेवाला हू। मै किसी राजनीतिक दलके खिलाफ निर्णय नही देना चाहता।[२०]

दक्षिण भारतके एक काग्रेसीके प्रश्नके उत्तरमे गाधीजीने लिखा "साम्यवादियोको काग्रेसकी सदस्यतासे वहिष्कृत नही किया जा सकता। जो काग्रेसके लक्ष्यको स्वीकार करे और सदस्यताकी फीस दे, वे काग्रेसके सदस्य हो सकते है। सविधान ऐसा कहता है। . चुनाव द्वारा रची जानेवाली समितियोके वारेमे मै यही कह सकता हू कि लोग चाहेगे तो उन्हे चुनेगे। साम्यवादी होनेके नाते उनके साथ न तो कोई विशेप व्यवहार किया जा सकता है और न उनके खिलाफ कार्रवाई ही की जा सकती है। जिन व्यक्तियोने कागेसके अनुशासनके विरुद्ध काम किया है, उनके विरुद्ध कार्रवाई की जा सकेगी।"

जून १९४५ मे काग्रेस कार्यसमिति जेल्से मुक्त हुई उसके वाद उसने एक उपसमिति नियुक्त की, जिसमे पडित नेहरू, सरदार पटेल और पडित गोविन्दवल्लभ पत थे। इसका काम साम्यवादी दलके काग्रेसी सदस्योके विरुद्ध लगाये गये अनुशासनहीनताके अभियोगकी जाच करना था। इस समितिने भूलाभाईके इस निर्णय पर ध्यान दिया था कि "यह निश्चित रूपसे मालूम होता है कि ९ अगस्त (१९४२) के वाद साम्यवादी दलके विचार और उसका रवैया काग्रेसके विचारो और उसकी नीतिके विरुद्ध प्रचार करनेका रहा है।" सारे प्रमाणोको देख लेनेके वाद समितिने अपना यह निर्णय दिया कि

कांग्रेसमें साम्यवादी दलके सदस्योंके विरुद्ध प्रबल प्राथमिक अभियोग सिद्ध करनेके लिए पर्याप्त प्रमाण हैं। ऐसे समय जब कि देश आतंक राज्यकी अग्नि-परीक्षामें से गुजर रहा था और कांग्रेस जीवन-मरणके संग्राममें लगी हुई थी कोई भी संगठन — जिसका कांग्रेसके साथ सम्बन्ध हो — अनुशासनके साधारण नियमोंका हनन किये बिना ऐसी विरोधी प्रवृत्तियोंमें भाग नहीं ले सकता था। समितिने साम्यवादियोंको अपनी स्थितिका औचित्य सिद्ध करनेका आदेश दिया और उनसे उत्तर मांगा कि उनके विरुद्ध अनुशासनकी कारवाई क्यों न की जाय। अपने स्वभावके अनुसार साम्यवादियोंने अपने विरुद्ध लगाये गये अभियोगोंका उत्तर देने और अपनी निर्दोषता सिद्ध करनेकी अपेक्षा कांग्रेस पर अभियोग लगाये। परिणाम यह हुआ कि कांग्रेसको मजबूर होकर उनके विरुद्ध अनुशासनकी कारवाई करनी पड़ी।

गांधीजी एक ओर तो साम्यवादियोंको उनके गलत सिद्धान्तोंसे विमुख करनेकी कोशिश करते रहे और दूसरी ओर उनके साथ व्यक्तिगत स्नेह-सम्बन्ध बनाये रखनेका प्रयत्न भी करते रहे। उन्होंने उड़ीसाके एक कांग्रेसी नेतासे कहा 'यदि मुझे कोई प्रामाणिक साम्यवादी मिल जाय और वह मेरे साथ सहयोग करे तो उसे मैं स्वीकार कर लूंगा।' गांधीजीकी यह खोज सफल नहीं हुई परन्तु उन्होंने अपना प्रयत्न छोड़ा नहीं। साम्यवादी भी उनसे दूर नहीं भाग सके।

४

कारावासके दिनोंमें गांधीजीके मनमें आघात पहुंचानेवाली यह भावना पैदा होने लगी थी कि हिंसामें विश्वास करनेवालोंने तो अपने ढंगसे संग्रामके दिनोंमें अच्छा काम करके दिखाया था परन्तु जो लोग अहिंसाको धर्म माननेका दावा करते थे उनके लिए शायद यही बात नहीं कही जा सकती।

बरसों पहले देशकी सामान्य जनतामें अहिंसक शक्ति पैदा करनेके लिए गांधीजीने कई रचनात्मक प्रवृत्तियां आरंभ की थीं। इनमें मुख्य ये थीं — खादी, कताई और हाथ-बुनाई, कानून और व्यवहारमें अस्पृश्यता निवारण, मद्यनिषेध तथा [illegible] ग्रामोद्योगोंके पुनरुत्थान द्वारा गांवोंमें नव-जीवनका संचार और बुनियादी शिक्षा। इन प्रवृत्तियोंको कार्यान्वित करनेके लिए उन्होंने अखिल भारत चरखा-संघ, हरिजन-सेवक-संघ, अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघ और हिन्दुस्तानी तालीमी संघका निर्माण किया था।

अखिल भारत चरखा-संघका ध्येय भारतके बुनियादी उद्योग — सूत कताई और हाथ-बुनाईका पुनर्जीवन संगठन करके उसका विकास करना था। ये उद्योग दरिद्रताके आर्थिक कारण परन्तु सबसे ज्यादा [illegible]

आरभ-कालमे ‘राजनीतिक अन्याय’ के कारण नष्ट हो गये थे। इनके ह्रास और पतनकी कहानी भारतमें ब्रिटिश सत्ताके आगमनके इतिहासके साथ इतनी गहरी गुथी हुई है कि एकके वर्णनमे दूसरेका वर्णन अपने आप आ जाता है। इसी कारण इनका पुनरुत्थान भारतके स्वातत्र्य-सग्रामका साधन और प्रतीक वन गया।

सगठनकी दृष्टिसे, अखिल भारत चरखा-सघ “ससारकी सबसे वडी स्वेच्छामूलक सहकारी समिति” थी, जिसकी पूजी लगभग दस लाख रुपयेकी और खादीका उत्पादन १२,००२,४३० रुपयेका था।[२१] इसमे एक समान उद्देश्यमे रत ३,०२४,३९१ कातनेवाले और ३५४,२५७ अन्य कारीगर काम करते थे। वे १५,०१० भारतीय ग्रामोमे फैले हुए थे। इस सस्थाके जीवनके पहले १८ वर्षोमे इसके द्वारा मजदूरीके रूपमे ४६,०३०,०८१ रुपये वाटे गये थे।

चरखा-सघ कई मजिलोमे से गुजर चुका था। पहली मजिलमे आम जनतामे जागृति और विदेशी कपडेके वहिष्कार पर जोर था। दूसरीमे समुचित अल्पतम निर्वाह-वेतनका सिद्धान्त आरभ करके सामाजिक न्यायके आदर्शकी पूर्ति पर भार दिया गया था। पहली मजिलमे इस प्रयोगको असाधारण सफलता मिली और आखिरी मजिलमे सीमित सफलता मिली।

‘भारत छोडो’ सग्रामके दिनोमे दमनका मुख्य प्रहार समस्त रचनात्मक सस्थाओ पर हुआ था। जव गाधीजी जेलसे निकले तव भी इन सस्थाओके घाव भरे नही थे।

गाधीजीको यह आशा थी कि उनके द्वारा रची हुई ये सस्थाए वीरोकी अहिंसाका उदाहरण प्रस्तुत करके लोगोके उत्साहको सही दिशामे मोडेगी और सरकारी दमनका विष उतार सकेगी। वे ऐसा करनेमे सफल होती तो निराशा और पराजयकी भावनाके स्थान पर प्रत्येक भारतीयके हृदयमे नवीन श्रद्धा और नवीन आशाका सचार होता। लेकिन हुआ यह कि वे स्वय सरकारी दमनकी शिकार हो गईं। गाधीजीको जव यह पता लगा तो वे वहुत अशान्त हो गये

> मेरी नजरवन्दीके दिनोमे मैने चरखे पर और चरखा-सघ पर गहरा विचार किया है। मेरी समझमे यह आया है कि सरकार चाहे तो चरखा-सघको तोड सकती है। मै सरकारकी दया पर जीना नही चाहता। मुझे ईश्वरके सिवा अन्य किसीकी दयाकी जरूरत नही है। इसलिए मैने अपने आपसे पूछा कि ऐसी हालतमे क्या यह उत्तम न होगा कि चरखा-सघको वन्द करके उसकी पूजीको ग्रामीणोमे वाट दिया जाय? [२२]

इसमें दोष न तो आदर्शोंका था, न आम लोगोंका था। चरखा-संघ अपने उद्देश्यमें असफल रहा इसका कारण यह था कि उसने एक अनिगमित केन्द्रित संस्थाके रूपमें काम किया था।

> मैने आशा रखी थी कि संघके द्वारा हमारा संदेश देशके प्रत्येक गांवमें और प्रत्येक घरमें पहुंच सकेगा और उसके जरिये हम दुनियाको यह दिखा सकेंगे कि चरखेके आधार पर अहिंसक समाज कैसे रचा जा सकता है। परन्तु प्रत्येक घरको तो छोड़ दीजिये, चरखा प्रत्येक गांवमें भी अभी तक नहीं पहुंच पाया है। यदि चरखा सात लाख गांवोंमें प्रवेश कर जाता तो दुनियाकी कोई शक्ति उसे कुचल नहीं सकती थी। सरकार करोड़ों स्त्री-पुरुषोंको जेलमें नहीं भेज सकती और न वह उन्हें मशीनगनोंसे भून सकती है। अगर सरकार ४० करोड़में से १ करोड़ लोगोंको भी मार डालती, तो भी हमें अपने लक्ष्यकी तरफ बढ़नेसे वह रोक नहीं पाती। बल्कि उससे हमारी आगे बढ़नेकी गति अधिक तेज हुई होती।"

और फिर चरखा-संघने खादीको ज्यादातर आर्थिक प्रवृत्ति ही समझा था परन्तु गांधीजीने उसकी कल्पना अहिंसाके प्रतीकके रूपमें की थी। संघके कार्यकर्ताओंने खादी-कार्यके सम्बन्धमें उत्पादनकी मात्राका या यों कहिये कि व्यापारका विचार बहुत ज्यादा रखा था। परिणाम यह हुआ कि खादीने आर्थिक कष्ट निवारणके कामचलाऊ तौर पर तो सब आशाएं पूरी कर दीं परन्तु अहिंसाके प्रतीकके रूपमें उसका महत्त्व कुछ पीछे पड़ गया।

इसमें दोष खादीका नहीं परन्तु उन लोगोंका था, जो उसका कार्य कर रहे थे। उन्होंने खादीके उच्चतर मिशनकी भावना अपनेमें पैदा नहीं की और अहिंसाके केन्द्रीय सत्यका अपने जीवनमें उन्होंने अपूर्ण रूपमें ही साक्षात्कार किया। इसलिए वे जनतामें वीरोंकी अहिंसाका संचार नहीं कर सके। अब उन्हें अपने कदम वापस लौटाने थे। भविष्यमें उन्हें खादीकी सफलता उसकी उत्पत्ति और बिक्रीके आंकड़ोंके आधार पर अथवा खादी पहननेवाले लोगोंकी संख्याके आधार पर नहीं परन्तु उन स्त्री-पुरुषोंकी संख्यासे आंकनी चाहिये, जिन्हें अपने ही प्रयत्नसे और अहिंसा स्वावलम्बन तथा आत्मनिर्भरताके स्पष्ट भानके साथ अपना कपड़ा स्वयं तैयार करना सिखाया जा सके। साथ ही खादी-कार्यको एक अलग आर्थिक प्रवृत्तिके रूपमें न चला कर ग्रामीण जीवनकी समग्र जर्जरित अर्थ-व्यवस्थाको पुनर्जीवित करनेके एक साधनके रूपमें चलाना चाहिये। इसके लिए एक विशेष प्रकारकी उच्च शक्ति रखनेवाले नये कार्यकर्ताओंकी आवश्यकता होगी। उन्हें हर प्रकारकी कुशलता सिद्ध करनी होगी और गीताके स्थितप्रज्ञका आदर्श अपने जीवनमें उतारना होगा।

वहुतोने चरखेको सिर्फ इसलिए अपनाया था कि गाधीजीमे उनकी श्रद्धा थी। गाधीजी चाहते थे कि इस श्रद्धाके साथ ज्ञानका सम्बन्ध हो, जिससे, वह किसी भी प्रकारके आक्रमणका सामना कर सके।

> ज्ञान पर आधारित श्रद्धासे बुद्धि तीक्ष्ण होती है। यदि हम अहिसाकी शक्ति और क्षमताको समझ सके और उसमे गहरी और स्थायी श्रद्धा पैदा कर ले, तो हम सारे ससारके समक्ष प्रमाणित कर देगे कि अहिसा सवसे वडी सजीव शक्ति है। अहिसाके प्रभावमे आनेवाले किसी भी व्यक्तिके लिए निष्क्रिय अथवा जड रहना उतना ही असभव है, जितना कि प्रकाशकी उपस्थितिमे अधेरेका टिकना। इसलिए यदि चरखा-सघको उससे रखी जानेवाली आशा पूरी करनी हो, तो उसके हरएक कार्यकर्ताको अहिसाका जीता-जागता प्रतिनिधि वनना चाहिये। उसके प्रत्येक कार्यमे अहिसाका दर्शन होना चाहिये। उसका शरीर स्वस्थ और मन स्वच्छ होना चाहिये। और यदि वह अपने जीवनको ऐसा व्यवस्थित रूप दे सके, तो ग्रामवासी विना किसी कठिनाईके चरखेको अपना लेगे।[२४]

चरखा अहिसाकी तरह हिंसाका भी प्रतीक हो सकता है। ईस्ट इडिया कम्पनीके राज्यमे चरखा कारीगरोके शोपण और दासत्वका तथा शासकोके अहकारका प्रतीक वन गया था। इसके विपरीत, मैने चरखेको अहिसाका और उसके द्वारा आम जनताकी मुक्तिका प्रतीक समझकर अपनाया है। जो छुरी कसाईके हाथोमे प्राण हरण करनेवाली होती है, वही डॉक्टरके हाथोमे प्राण बचानेका साधन वन सकती है।

गाधीजीने यह स्वीकार किया कि भूतकालमे मैने चरखे पर अहिसाके प्रतीकके रूपमे जितना जोर देना चाहिये था उतना जोर नही दिया। परन्तु सुधार करनेमे अधिक देर कभी नही होती। खादीके सम्वन्धमे ढुलमुल नीति अपनानेके लिए काग्रेसको दोप देना चरखा-सघका काम नही है। अव दोपकी जिम्मेदारी उसे अपने ही सिर लेनी चाहिये। यदि वह ससारको इस वातका प्रत्यक्ष प्रमाण देनेमे सफल होता कि चरखेमे कितनी शक्ति है और अहिसामे वह अपनी सजीव श्रद्धा होनेका प्रमाण देता, तो वजाय इसके कि चरखा-सघ काग्रेससे मददकी आशा रखता, अपना सदेश गावो तक पहुचानेके लिए काग्रेस ही चरखा-सघकी सहायता और मार्गदर्शन चाहती।

अन्तमे गाधीजीने चरखा-सघके कार्यकर्ताओसे कहा, आप राजनीतिको भूल जाये और अपना सारा ध्यान केवल चरखे पर ही लगाये। **तव आपको असाधारण राजनीतिक परिणाम प्राप्त होगे।** प्रत्येक गाव, जो चरखेके सदेशको पचा लेगा, स्वाधीनताका प्रकाश अनुभव करने लगेगा। यदि भारतके ७ लाख

गावाम सच्ची जाग्रति पदा कर दी जाय तो सारा भारत स्वाधीन हो जाय। इसके लिए आपको नान परिश्रम और गभीर अध्ययनकी जरूरत है।

जो बात चरखा सघके लिए सही है वह आवश्यक परिवतनोके साथ दूसरे सघो पर भी लागू होती है।

गांधीजीने सलाह दी खादीके उत्पादन और वितरणकी केन्द्रित सस्थाके रूपमे अखिल भारत चरखा-सघको बन्द कर दीजिये। वह केवल उन मूल्योके रक्षकके रूपमे काम करे जिनका खादी प्रतिनिधित्व करती है। साथ ही वह स्थानीय सस्थाओको तकनीकी सहायता और नतिक पथप्रदशन देनेवाला केन्द्रीय अनुसधान-सस्थाका काम करे।

खादीकी प्रवृत्तिके लिए गावको एक घटक बनना चाहिये और स्वाव लम्बनके आधार पर प्रत्येक व्यक्तिको आत्म निभरताके लिए कातना चाहिये।

इसके उप सिद्धान्तके रूपमें गांधीजीने सुझाया कि आगेसे खादी अपने हाथसे काते हुए सूतका कुछ हिस्सा कीमतके रूपमे देनके बदलमे ही बची जाय जो लोग खादी पहनना चाहेंगे उन्हे या तो अपने लिए कातना पडेगा या खादी पहनना बिल्कुल छोड देना पडेगा।

अनेक पुराने कायकर्ता इस साहसपूर्ण परिवतनकी बातसे चकित रह गये। परन्तु गाधीजी अटल रहे कुछ लोग कहते है कि नया नियम सचमुच उस खादीको मार देगा जिसे गरीब लोग इस समय उत्पन्न कर रहे है और थोडसे शौकीन शहरी लोग ही अपने लिए कातेगे और कपडा बुनवा लेगे।

सामान्य लोग दिखानेके लिए नही खाते, बल्कि इसलिए खाते है कि वे जिन्दा रह सके। वे अपना नगापन ढकनेके लिए कपडे पहनते है न कि फशनके लिए। इसलिए चूल्हेकी तरह चरखेको भी गावके हर घरमे स्थान मिलना चाहिये और प्रत्येक सशक्त व्यक्तिको कातना चाहिये। इसी तरह सब लोग खादी पहन सकते है और भारतमें स्वराज्य ला सकते है। "

अकाट्य तर्कके साथ गांधीजीने आगे कहा दलीलके खातिर मान लीजिये कि शहरी लोग शुद्ध हारकर या आलस्यके मारे खादी पहनना छोड दें और मजदूरी न मिलनेके कारण ग्रामवासी कातना और बुनना बद कर दें और इसके कारण वतमान खादी भडारोको बन्द कर देना पडे तथा खादी पहननेवालोको खादी छोड देनी पडे तो भी यह सत्यकी विजय होगी। क्योंकि उससे यह स्पष्ट हो जायगा कि देशके लोगोको अहिंसामे सच्ची श्रद्धा नही थी व खादी अनमनेपनसे पहनते थे और यह सोचकर अपने आपको धोखा देते थे कि इससे उन्हें स्वराज्य मिल जायगा। खादीके लिए मेरा दावा यह है कि जिस आलस्य और जडतामें सामान्य लोग इस समय

फसे हुए है, उससे उन्हे बचानेका और **अन्तिम विजय (स्वराज्य) प्राप्त करनेके लिए उनमें आवश्यक बल पैदा करनेका वह एक अद्वितीय साधन है।**"[२६]

गाधीजीने कार्यकर्ताओसे डर निकाल देनेको कहा

क्या सूत लेकर खादी बेचनेका नियम अपनानेमे आपको यह डर लगता है कि कही शहरोमे खादीकी ग्राहकी बन्द न हो जाय? अगर आप अपने दिलोसे यह डर नही निकाल देते, तो **वह खादी, जिसे हमने स्वराज्यका साधन माना है, मर जायगी।** खादीने अपने लिए समाजमे प्रतिष्ठा जमा ली है। गरीबोकी बनाई हुई खादी खरीदनेमे अमीरोको गर्व होता है। लेकिन यह बहुत छोटी बात है। यदि आप खादीका क्षेत्र गरीबोके कष्ट-निवारण तक सीमित रखेगे, तो वह आपको अहिंसाके द्वारा स्वराज्य लेनेमे सहायता नही देगी। मै नही चाहता कि ऐसी बात हो। परन्तु हाथसूत लेकर खादी बेचनेका नियम लागू करनेके परिणामस्वरूप यदि मै अकेला ही खादी धारण करनेवाला रह जाऊ, तो मुझे इस बातकी परवाह नही होगी। ईश्वरकी यही मरजी हो तो हमारी कायरता तथा श्रद्धाहीनताके फलस्वरूप खादीकी मृत्यु होनेकी अपेक्षा स्वाभाविक रूपमे उसकी मृत्यु हो जाना अधिक अच्छा होगा।[२७]

गाधीजीने अपनी अदम्य सत्यनिष्ठासे अतमे कहा

अगर हम असफल हुए है, तो हमे अपनी असफलताको स्वीकार करके उसे आगेके प्रयत्नकी सीढी बना लेना चाहिये। . . दूसरे शब्दोमे, हमे कठोर बन कर इस बातका ठीक पता लगाना होगा कि खादीकी क्या क्या सभावनाए और मर्यादाए है। यदि हमे अपनी खोजके फलस्वरूप यह मालूम हो कि खादी हमको उतनी दूर नही ले जा सकती जितनी दूर ले जानेका हमने दुनियाके सामने दावा किया है, तो हमे या तो अपना दावा छोड देना चाहिये या उसे कम कर देना चाहिये और अपने लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए कोई दूसरा आधार अपनाना चाहिये।

मै तो यहा तक कहता हू कि यदि स्वराज्य लानेवाली खादीके सामने गरीबोका कष्ट-निवारण करनेवाली खादी मिट जाती है, तो इससे गरीब घाटेमे नही रहेगे। क्योकि किसी और धधेसे गरीबोकी रोटीका प्रबन्ध किया जा सकेगा। खादीका गौरव इसीमे है कि वह स्वराज्यके आदर्शमे भी सहायक हो और गरीबोको मदद भी पहुचाये। कारण, ऐसे स्वराज्यमे ही गरीबोको वास्तवमे उनका उचित स्थान प्राप्त हो सकता है।

कार्यक्षेत्रमें प्रत्येक व्यक्तिके जीवनकी हर अवस्थाके लिए आवश्यक शिक्षाका समावेश होना चाहिये।

बुनियादी शालाके शिक्षकको तो यह मानकर चलना चाहिये कि वह सबका शिक्षक है। किसी भी स्त्री या पुरुषके सम्पर्कमें आते ही — फिर वह तरुण हो या वृद्ध — उसे अपने आपसे पूछना चाहिये "मैं इसे क्या दे सकता हूं?"

क्या यह उसके लिए घमण्डकी बात नहीं होगी? नहीं। मान लीजिये कि मुझे कोई बूढ़ा आदमी मिलता है जो गंदा और अज्ञान है। मेरा काम होगा कि मैं उसे सफाई सिखाऊं, उसका अज्ञान दूर करूं और उसके मानसिक क्षितिजको व्यापक बनाऊं। मुझे उससे यह कहनेकी जरूरत नहीं कि मैं उसका शिक्षक बनूंगा। मैं तो उसके साथ सजीव सम्पर्क स्थापित करनेकी कोशिश करूंगा और उसका विश्वास सम्पादन करूंगा। संभव है वह मेरे प्रयत्नका आदर न करे। परन्तु मैं हार नहीं मानूंगा। मैं तब तक अपनी कोशिश जारी रखूंगा जब तक मुझे उससे मित्रता करनेमें सफलता न मिलेगी। एक बार उससे मेरी मित्रता हो गई फिर तो बाकी सब बातें अपने आप हो जायंगी।

और मुझे बच्चों पर उनके जन्मसे ही अपनी नजर रखनी चाहिये। मैं तो एक कदम आगे जाकर कहूंगा कि शिक्षाशास्त्रीका काम बच्चेके जन्मसे भी पहले शुरू होता है। बुनियादी शिक्षिका गर्भवती माताके पास जाकर कहेगी, "तुम माता बनोगी, वैसे ही मैं भी माता हूं। मैं तुम्हें अपने अनुभवसे कह सकती हूं कि तुम्हें आनेवाले शिशु और अपने स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए क्या करना चाहिये।" गर्भस्थ्यके पतिको वह यह बतायगी कि पत्नीके प्रति उसका क्या कर्तव्य है और उसके आने वाले बच्चेके लालनपालनमें उसका क्या हिस्सा होना चाहिये। इस प्रकार बुनियादी शालाका शिक्षक मानवके समग्र जीवनके साथ सम्बन्ध रखेगा। स्वभावतः उसकी प्रवृत्तिमें प्रौढ़शिक्षा तो आ ही जायगी।

मेरी कल्पनाकी प्रौढ़शिक्षा पुरुषों और स्त्रियोंको सच्चे दृष्टियोंसे अधिक योग्य नागरिक बनाना चाहिये। ... बुनियादी योजनाके अनुसार प्रौढ़शिक्षामें दस्तकारी महत्त्वपूर्ण भाग लेगी। पुस्तकीय शिक्षा तो होगी ही। वस्तुकी जानकारी मौखिक रूपमें दी जायगी। पुस्तकें होंगी — परन्तु विद्यार्थियोंकी अपेक्षा वे विशेष रूपसे शिक्षकोंके लिए होंगी। हमें बहुतोंकी अज्ञानके साथ और अल्पमतकी बहुमतके साथ उचित व्यवहार करना सिखाना चाहिये। सच्ची प्रौढ़शिक्षाके अन्तर्गत और साम्प्रदायिकताको जड़से दूर कर जाना चाहिये।

तदनुसार हिन्दुस्तानी तालीमी सघका सविधान इस तरह वदल दिया गया कि उसके क्षेत्रमे पूर्व-वुनियादी, उत्तर-वुनियादी या विश्वविद्यालयकी शिक्षा और प्रौढशिक्षाका समावेश हो जाय।

*

चरखा-सघकी नीतिकी पुनर्रचनाका परिणाम खादीके सगठनको पीछेकी ओर ले जानेके रूपमे आया। अभी तक जो काम हुआ था वह मानो मचान खडा करनेका था। अव नीवके ऊपर ठोस इमारत उठायी जानेवाली थी और ज्यो ही वह ऊपरकी ओर उठने लगे त्यो ही इस मचानको हटा देना था। दूसरा कदम खादीकार्यका ग्रामोत्थानके समग्र कार्यके साथ एकीकरण साधनेका था। इसके लिए उसे एक ओर ग्रामोद्योगोके साथ और दूसरी ओर वुनियादी शिक्षाके साथ जोडना था। इस हेतुसे यह निश्चय किया गया कि तीनो सस्थाओ अर्थात् चरखा-सघ, ग्रामोद्योग-सघ और हिन्दुस्तानी तालीमी सघकी प्रवृत्तियोके समन्वयके लिए एक सम्मिलित मंडल हो और खेतीको आधार वनाकर उसके साथ इन तीनोको जोड दिया जाय।

यह भी निर्णय किया गया कि गावोको स्वावलम्वन और आत्म-निर्भरताके आधार पर सगठित करनेकी दृष्टिसे विविध सघोकी समन्वित प्रवृत्तिया चलानेके लिए आवश्यक नये और हर प्रकारकी कुशलता रखनेवाले कार्यकर्ताओको तालीम देनेकी जरूरी व्यवस्था की जाय। गाधीजीने नियम वना दिया कि प्रत्येक केन्द्रमे एकसे अधिक कार्यकर्ता नही होना चाहिये। इस कार्यकर्ताको अपना काम आरभ करनेके लिए आवश्यक साधनो और निर्वाहका खर्च दिया जायगा। लेकिन उससे आशा यह रखी जायगी कि एक निश्चित अवधिकी समाप्ति पर — मान लीजिये कि ३ वर्षमे — वह पूरी तरह आत्म-निर्भर हो जायगा और उसके वाद किसी भी वाहरी मददके विना अपना काम चला लेगा। यदि ३ वर्षके वाद भी वह अपने आसपासके वातावरणमे सर्वांगीण आर्थिक, सामाजिक और नैतिक सुधार करके — जिससे ग्रामवासी उसकी योग्यताको पहचाने और यह सोच कर उसका तथा उसके कार्योका खर्च उठानेको तैयार हो जाय कि इस सेवकका निर्वाह हमे करना चाहिये — सम्वन्धित ग्रामवासियोके समक्ष अपनी योग्यता सिद्ध करनेमे असफल रहे, तो उसे असफल समझना चाहिये।

गाधीजी "एक केन्द्रमे एक कार्यकर्ता" के सिद्धान्त पर अधिकसे अधिक जोर देते थे, क्योकि उससे सवधित कार्यकर्ताकी आरम्भ-शक्तिको, सूझ-वूझको, मौलिकताको और उत्तरदायित्वकी भावनाको पूरा अवसर मिलता था। अगर लोगोका अहिंसक सगठन खडा करना हो तो यह अत्यन्त आवश्यक था, क्योकि इस प्रकारका सगठन किसीके केन्द्रित संचालन अथवा नियत्रणके विना काम कर सकता था, और इसलिए वुरेसे वुरे दमनमें भी छिन्नभिन्न नही हो सकता

था और किसी रुकावट या मर्यादाके बिना उसका अनन्त गुना विस्तार किया जा सकता था। गाधीजीकी अहिंसात्मक सगठन और नियोजनकी कल्पनाके विकासमें यह एक महत्त्वपूर्ण सीमास्तभ था।

गाधीजीकी दलील यह था कि साम्प्रदायिक फूट और अस्पृश्यताके कलकसे मुक्त होने पर भारतके ७ लाख स्वस्थ आत्म निर्भर साक्षर और अहिंसक उद्योगोके आधार पर सहकारी ढगसे सगठित हुए गावोको कोई गुलामीमे नही रख सकता। गावोको इस प्रकार सगठित करनेका काम एक भगीरथ कार्य था। अधिकाश लोग राजनीतिक कार्यसे मिलनेवाली स्फूर्ति और उत्तेजनाके कारण उसके प्रति आकर्षित होते थे। शान्त, प्रदर्शन रहित ग्रामकार्य उन्हे नीरस मालूम होता था। वे इससे ऊब जाते थे। ईश्वरमे सजीव श्रद्धा ही उन्हें वह स्थिरता लगन और अटल सकल्प-बल दे सकती थी, जो सामान्य लोगोकी जडता पर विजय प्राप्त करने और स्थायी अहिंसक सामुदायिक प्रयत्नके लिए आवश्यक आन्तरिक शक्तिको क्रियाशील बनानेके लिए जरूरी होते है।

*

एक नौजवान हरिजन स्नातक गाधीजीके पास उनके सेवाग्राम आश्रममे आये। वे अपने ग्रामकार्यके सम्बन्धमे गाधीजीकी सहायता और पथ प्रदर्शन चाहते थे। उन्होने गाधीजीसे कहा कि मुख्य मानव प्रेम तो है लेकिन ईश्वरमे मेरा विश्वास नही है।

गाधीजीने उनसे कहा मानव प्रेम आवश्यक तो है परन्तु वह ईश्वरका स्थान कभी नही ले सकता। ईश्वर तो है ही परन्तु हमारी ईश्वर सम्बन्धी कल्पना हमारे मानसिक दृष्टिकोण और भौतिक वातावरणसे सीमित बन जाती है। आप ईश्वर सम्बन्धी प्रचलित विचारोसे असतुष्ट है इसका सीधा-सा कारण यही है कि जो लोग ईश्वरमे विश्वास करनेका दावा करते है वे अपने दैनिक जीवनमे सजीव ईश्वरको प्रस्तुत नही करते।

गाधीजीने आगे कहा रही बात आपकी तो आपकी महत्त्वाकाक्षा पूरी हो जायगी यदि अपनी योग्यता और उत्साहके अलावा आप अपने जीवनमें एक और चीजका समावेश कर — अर्थात ईश्वरमे सजीव श्रद्धा रखने लगें। तब आपकी सारी नीरसता मिट जायगी। यदि आपका सहारा देनेके लिए आपके पास ईश्वरके प्रति सजीव श्रद्धा नही है तो असफलता मिलने पर आप निराश हो जायगे। मेरा तो आपको यह सलाह है कि जब तक आपको ईश्वरकी प्रतीति न हो जाय तब तक आप आश्रम न छोडें। आश्रम वासियोसे भिन्न यह आश्रम — इसकी समग्र शक्ति जिन सिद्धान्तोका यह प्रतीक है वे सिद्धान्त — इतना मानीमे आपको ईश्वरकी प्रतीति करा सकेंगे

कि जिस प्रकार आप यह कह सकते हैं कि 'सत्य है' उसी प्रकार आप यह कह सके कि 'ईश्वर है'।"

नौजवान मित्रने उत्तर दिया, "मै इस अर्थमे यह वात कह सकता हू कि सत्य असत्यका उलटा है।"

गाधीजी वोले, "इतना काफी है। हमारे ऋषियोने 'नेति नेति' कह कर ईश्वरका वर्णन किया है। सत्य हमारी पकडमे नही आ सकता। जो कुछ सच है, यथार्थ है, उसीका पूरा योग सत्य है। परन्तु जो कुछ सच है, यथार्थ है, उस सारेका हम जोड नही लगा सकते। आपकी वुद्धि विश्लेपक है। परन्तु कुछ वाते ऐसी होती हैं, जिनका विश्लेपण नही किया जा सकता। जिस ईश्वरका विश्लेपण मेरी तुच्छ वुद्धि कर सकती है, उससे मुझे सतोप नही होगा। इसलिए मै ईश्वरका विश्लेपण करनेका प्रयत्न ही नही करता। मै सापेक्षसे निरपेक्षकी ओर जाता हू और मानसिक शान्ति प्राप्त करता हू।"

वे मित्र फिर कहने लगे, "आपकी जीवन-प्रणाली मुझे वहुत अच्छी लगती है। उसमे व्यक्तिको अपनी इच्छाके अनुसार चलनेका अवकाश रहता है। ईश्वरकी कल्पनामे एक प्रकारका नियतिवाद आ जाता है और वह मनुष्यको मर्यादित कर देता है। उससे मनुष्यकी स्वतत्र इच्छाशक्तिमे हस्तक्षेप होता है।"

गाधीजी "क्या स्वतत्र इच्छाशक्ति जैसी कोई चीज दुनियामे है? वह क्या है? हम सव ईश्वरके हाथोमे खिलौने मात्र हैं।"

उन मित्रने पूछा, "ईश्वर और मनुष्यमे, सत्य और ईश्वरमे, क्या सम्वन्ध है?"

गाधीजी . "मै कह चुका हू कि ईश्वर सत्य है। ईश्वर और उसके नियम अलग अलग नही है। ईश्वरका नियम स्वय ईश्वर ही है। उसे समझनेके लिए मनुष्यको एकाग्र मनसे प्रार्थना करनी चाहिये और अपने आपको ईश्वरमे लीन कर देना चाहिये। प्रत्येक स्त्री या पुरुप ईश्वरको अपनी ही रीतिसे समझेगा। रही वात मनुष्य और ईश्वरके वीचके सम्वन्धकी, तो दो पैर और दो हाथ होनेसे ही मनुष्य मनुष्य नही वन जाता। वह प्रभुका मदिर वन कर ही मनुष्य वनता है।"

"जव मेरी ईश्वर-विपयक कल्पना ही स्पष्ट नही है, तव मनुष्यके प्रभुका मन्दिर वन जानेकी आपकी वातसे और भी गडवड पैदा होती है।"

"फिर भी वह सच्ची कल्पना है। जव तक हम यह अनुभव न कर ले कि शरीर ईश्वरका धाम है तव तक हम मनुष्यसे नीची कक्षाके प्राणी है। और सत्यको ईश्वर माननेमे कठिनाई या गड़वड कहा है? आप यह तो मानेगे ही कि हम असत्यके मदिर नही, परन्तु सत्यके है।"

क्षण भर चुप रह कर गांधीजीने आगे कहा : जिस किसीको सच्चा जीवन व्यतीत करनेकी इच्छा हो उसे जीवनमें कठिनाइयोंका सामना तो करना ही पड़ता है। उनमें से कुछ कठिनाइयां अजेय मालूम होती हैं। उस समय प्रार्थना और ईश्वरमें श्रद्धा अर्थात सत्य ही मनुष्यको सहारा देता है।

नौजवान मित्र गहरे विचारमें डूब गये।

गांधीजीने आगे कहा : "जो सहानुभूति आपको अपने भाईके दुःखसे दुःखित करती है वह ईश्वर भाव है। आप अपनेको नास्तिक कह सकते हैं, लेकिन जब तक आप मनुष्यमात्रके साथ एकताका अनुभव करते हैं तब तक आप व्यवहारमें ईश्वरको स्वीकार करते हैं। मुझे याद है कि पादरी लोग महान नास्तिक ब्रैडलॉके अंतिम क्रियाके समय आये थे। उन्होंने कहा था कि वे अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करने आये हैं, क्योंकि ब्रैडला ईश्वर-परायण पुरुष था।'

अन्तमें गांधीजीने कहा : आप ईश्वरमें सत्यमें सजीव श्रद्धा लेकर वापस जायेंगे तो मुझे कोई शंका नहीं कि आपका काम फूले-फलेगा। जब तक आप ईश्वरको पा न लें तब तक आपको हर चीजसे असंतुष्ट रहना चाहिये। और आप उसे जरूर पा लेंगे।

युवक मित्र आश्रममें रहे और उसके बाद उनके गुरु भी आये जो प्राध्यापक और असाधारण योग्यतावाले समाजसेवक थे और अपने अनीश्वर-वादी विचारोंके कारण कष्ट उठा चुके थे। दोनों अनीश्वरवादी ही रहे। परन्तु गुरुने बादमें यह प्रमाणपत्र दिया : गांधीजीको मेरे नास्तिकवादसे घृणा नहीं थी, न उनका ईश्वर ही मुझे डराता था। २६ जनवरी १९४५ को उन्होंने स्वाधीनता दिवसकी यह प्रतिज्ञा ली, जिसे गांधीजीने खास तौर पर उनके लिए संशोधित कर दिया था : मैं अपनी प्रतिज्ञाकी पूर्तिके लिए उसकी सहायता मांगता हूं जिसे मैं ईश्वर कहूं या न कहूं परन्तु जिसे हम सब अपने भीतर अनुभव करते हैं।

एक अन्य मित्रने जो गणित-शास्त्री एवं अनुभवी राष्ट्रवादी नेता थे और जो इसी अरसेमें गांधीजीसे मिलने आये थे, गांधीजीके साथ हुई ईश्वर तथा प्रार्थनाकी सामर्थ्य सम्बन्धी अपनी चर्चामें पूछा : अगर आप ईश्वरसे प्रार्थना करें, तो क्या वह हस्तक्षेप करके आपके लिए अपने नियमको बदल सकता है?

गांधीजीने उत्तर दिया : ईश्वरका नियम अपरिवर्तनीय रहता है। परन्तु चूंकि वह नियम कहता है कि प्रत्येक कर्मका फल होता है, इसलिए यदि कोई सच्चे दिलसे प्रार्थना करता है तो ऐसी प्रार्थना ईश्वरके नियमानुसार कभी व्यर्थ न जाकर अवश्य परिणाम लाती ही है।

"लेकिन आप जिस ईश्वरकी प्रार्थना करते है, उसे आप जानते है?"

"नही, मै नही जानता।"

"तव हम किसकी प्रार्थना करे?"

"उस ईश्वरकी जिसे हम नही जानते — जिस व्यक्तिकी हम प्रार्थना करते है, उसे भी हम हमेशा नही जानते।"

"हो सकता है, परन्तु जिस व्यक्तिकी हम प्रार्थना करते है वह जाना तो जा सकता है।"

"जाना तो ईश्वर भी जा सकता है; और वह जाना जा सकता है, इसीलिए हम उसकी खोज करते है। सभव है हमे उसे ढूढनेमे अरवो वर्प लग जाय। लेकिन उसकी क्या चिन्ता? इसलिए मै कहता हू कि आपका विश्वास न हो तो भी आप प्रार्थना जरूर करते रहे — अर्थात् आप अपनी खोज जारी रखे। वाइवलका यह वचन याद रखना चाहिये 'हे ईश्वर, तू मेरी अश्रद्धा दूर कर।' परन्तु ऐसे प्रश्न पूछना ठीक नही है। आपको अनन्त धैर्य और आतरिक आकाक्षा रखनी चाहिये। आतरिक आकाक्षा ऐसे सव प्रश्नोको मिटा देती है। वाइवलका एक और सुभापित यह है 'श्रद्धा रखो तो तुम पूर्ण वन जाओगे'।"

सम्मान्य मित्रने अतमे कहा, "जव मै अपने चारो ओर कुदरतको देखता हू तो अपने मनमे कहता हू अवश्य ही इसका एक स्रष्टा, एक ईश्वर होना चाहिये और उसकी मुझे प्रार्थना करनी चाहिये।"

गाधीजीने उत्तर दिया, "यह भी वुद्धिका विलास ही हुआ। ईश्वर वुद्धिसे परे है। लेकिन आपकी वुद्धि आपको सहारा देनेके लिए काफी हो, तो मुझे कुछ नही कहना है।"

*

हरिजन-सेवक-सघ वह सस्था है, जिसे गाधीजीने अपने यरवडा-समझौतेसे सम्वन्धित उपवासके वाद १९३२ में स्थापित किया था। उस उपवासके कारण १९३५ के भारतीय शासन विधानके अधीन हरिजनोके प्रतिनिधित्वके लिए चुनाव-सम्वन्धी जो व्यवस्था थी, उसके वारेमे ब्रिटिश मत्रि-मडलको अपना निश्चय वदलना पडा था। सघका उद्देश्य कानून और व्यवहार दोनोमे हिन्दू समाजमे अस्पृश्यताका कलक पूरी तरह मिटा देना था। उसके विकासमे भी एक नई स्थिति आ पहुची थी।

गाधीजीने अपनी जेलमुक्तिके वाद हरिजन-सेवक-सघकी एक बैठकमे पूछा, "क्या हरिजन-सेवक-सघके सदस्य सचाईके साथ यह दावा कर सकते है कि उन्होने स्वय अपने हृदयसे अस्पृश्यताको सपूर्णत मिटा दिया है? क्या उनका व्यवहार वैसा ही है जैसा उनका दावा है?"

एक सदस्यने प्रश्न किया 'इस सम्बन्धमें आपकी कसौटी क्या है? गाधीजी आप विवाहित है?'

जी हा।

'तो क्या आपके कोई अविवाहित लडका या लडकी है? यदि हा तो उसका धार्मिक भावनासे किसी हरिजनके साथ विवाह कर दीजिये। तब मैं आपको मेरे खर्चसे बधाईका तार भेजूगा।'

इसके थोडे ही समय बाद उन्होने आश्रममें निरीश्वरवादी ब्राह्मण अध्यापककी पुत्रीका विवाह अध्यापकके नास्तिक हरिजन नवयुवक शिष्यके साथ करनेका निश्चय किया और यह भी घोषणा कर दी कि भविष्यमें मेरे आशीर्वाद उन्ही नवदपतीको मिलेगे जिनमें से एक हरिजन होगा।

५

फरवरी १९४४में नजरबन्दी कैम्पमें कस्तूरबाकी मृत्युके बाद जब इस बारेमें शका ही थी कि गाधीजीको जेलसे बाहर जीवित निकलने भी दिया जायगा या नही, लोगोके मनमें यह विचार बैठ गया कि कस्तूरबाके नाम पर एक राष्ट्रीय स्मारक खडा किया जाय और उनकी स्मृतिको चिरस्थायी बनानेके हेतुसे एक कोष स्थापित करनेके लिए पैसा भी एकत्र किया जाने लगा था। २ अक्तूबर १९४४को गाधीजीकी ७५वी वर्षगाठ थी। अत उसके अनुरूप ७५ लाख रुपया एकत्र करनेका लक्ष्य निश्चित किया गया था और उस दिन गाधीजी जेलमें ही रहे तो उनकी अनुपस्थितिमें उन्हें यह थैली भेंट करनेका निर्णय किया गया था। जनताकी दबी हुई भावनाको प्रगट करनेका एकमात्र यही मार्ग था क्योंकि व्यापक सरकारी दमनके होते हुए वह भावना और किसी तरह प्रगट नहीं की जा सकती थी। निश्चित दिन तक कोषमें निर्धारित रकमसे पाच लाख रुपये अधिक इकट्ठे हो गये।

इस बीच गाधीजी छोड दिये गये और २ अक्तूबर १९४४का सेवाग्राम आश्रममें एक छोटेसे समारोहमें ८० लाख रुपयेकी एक थैली उन्हें भेंट की गई। इस अवसर पर गाधीजीने कस्तूरबाकी सूनी थापडीके सामने उसी पवित्र तुलसीके पौधेकी एक डाली लगाई जिसके सामने वे प्राचीन हिन्दू प्रणालीके अनुसार नजरबंदी शिविरमें प्रार्थना किया करती थी और जिसे हम अपनी मुक्तिके समय एक बहुमूल्य स्मृतिचिह्नके रूपमें अपने साथ ले आये थे।

कस्तूरबाके इस स्मारकका रूप क्या हो? तरह तरहकी योजनाएं प्रस्तुत की गई और पूरे विचारके बाद सब अस्वीकार कर दी गई। कस्तूरबा गाधी ऐसी स्त्री था जिन्हें आज तो अशिक्षित और भोलीभाली ही समझा जायगा। फिर भी अहिंसाकी अच्छी सिद्ध करनेके गाधीजीके प्रयत्नमें उन्होंने शक्तिस्वरूपा काम किया था और दक्षिण अफ्रीका तथा भारतमें गाधीजीके साथ

अहिंसक सग्रामोमे वे आगे रही थी। यह उचित ही था कि स्मारक उनके व्यक्तित्वके इन पहलुओको व्यक्त करनेवाला हो। इसलिए गाधीजीने सुझाया कि स्मारक गावकी स्त्रियो और बच्चोकी शिक्षा, उनकी आर्थिक उन्नति और सेवा तथा महिला कार्यकर्ताओके प्रशिक्षणके आन्दोलनका स्वरूप ग्रहण करे और इसमे धर्म, जाति या वर्णका कोई भेद न रहे।

गाधीजी स्त्रियोके मताधिकारके कट्टर पक्षपाती थे, इसलिए उन्होने यह आग्रह किया कि सगठनकी कार्यकारिणीमे केवल स्त्रिया ही रहे। उन्होने समझाया कि जो सगठन स्त्रियोंका अपना होगा, उसमे उन्हे अव्यवस्थित या कुव्यवस्थित रूपमे कामकाज चलानेका अधिकार होना चाहिये। जब तक स्त्रिया स्वय अपना शासन करती है तब तक यदि वे कुशासन करे, तो भी चिन्ताकी कोई बात नही है। उन्हे पुरुषोके मार्गदर्शनसे मुक्त कर देना चाहिये। गाधीजीने यह भी आग्रह किया कि कस्तूरबा स्मारक ट्रस्टकी तालीम पाई हुई कार्यकर्त्रियोमे अहिंसाकी भावना ओतप्रोत होनी चाहिये, क्योकि कस्तूरबाका जीवन उसी भावनासे ओतप्रोत था, और दूसरी बातोमे भी वे कस्तूरबाकी जीवन-दृष्टि रखनेवाली होनी चाहिये।

'कस्तूरबाकी जीवन-दृष्टि' की व्याख्या क्या हो सकती है? ट्रस्टकी एक सभामे इस पर लम्बी चर्चा हुई।

गाधीजी : "कस्तूरबाकी जीवन-दृष्टिका अर्थ है कस्तूरबा गाधी द्वारा व्यक्त की गई जीवन-दृष्टि, न कि मोहनदास करमचद गाधीकी जीवन-दृष्टि!"

इस उद्गारमे गहरी हमदर्दी भरी हुई थी। सभी जानते है कि कस्तूरबाका भी महात्माजीकी तरह एक शक्तिशाली व्यक्तित्व और सकल्प-बल था। और कस्तूरबाके क्षेत्रमे महात्माजीको स्वय भी उनका मार्गदर्शन स्वीकार करना पडता था!

इस प्रकार अहिंसाके शस्त्रागारमें कस्तूरबा राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्टके रूपमे एक और शस्त्र जुड गया, क्योकि उसका काम भारतीय नारीजातिमे सोये हुए अहिंसा-बलको क्रियाशील बनाना था।

कस्तूरबा राष्ट्रीय स्मारक कोषका अधिकाश रुपया तथाकथित पूजीपतियोने इकट्ठा किया था और बहुत कुछ उन्होने ही दिया था। उनमें से कुछ लोग मूल ट्रस्टी-मण्डलमे थे। गाधीजीने इसे एक शुभ लक्षण समझा कि इतने अधिक करोडपति सत्ताधारियोके कोपभाजन बने हुए एक नजरबन्द व्यक्तिकी परलोकवासी पत्नीके स्मारकके साथ एकरूप होनेमे सरकारकी अप्रसन्नतासे भयभीत नही हुए। उन्होने कहा मै जानता हू कि उनमें से कुछ लोग अत्यन्त मानवतावादी है। उन्होने मुझे अपनी जेबोमे हाथ डालने दिया। मेरे साथ सम्बन्ध रखनेसे स्वय उन्हे कोई लाभ नही है। मेरे साथ उनका सम्पर्क

व्यावसायिक जगतमें उनने चमकनक बाद हुआ। मेरी लालसा पूजापतियाक विचार इस प्रकार बदल देनकी है कि व न सिर्फ गरीबोंके लिपा और सरक्षक बन जाय बल्कि स्वेच्छासे उन्हें अपनी सम्पत्तिके साझेदार बना लें।

कुछ रचनात्मक कार्यकर्ताओंने इसका अनुचित भय करके एक सुझाव रखा कि ज्यों ही कोष एकत्र करनेका काम पूरा हो जाय त्यों ही पूजापतियोंको ट्रस्टी मंडलसे त्यागपत्र दे देना चाहिये। यह भय प्रगट किया गया कि पूजीपति बहुसंख्या ट्रस्टी मंडलमें है इसलिए उसके सगठन पर दावा करके वे जानमें या अनजानमें अपने पूजीवादी और शहरी माननेके कारण ट्रस्टके उद्देश्यको विफल कर सकते हैं। इस कुछ ट्रस्टी अकारण किया गया अपमान समझ कर नाराज हो गये और उनमें से एकने तो इस बारेमें गांधीजीको रोषपूर्ण पत्र भी लिखा।

गांधीजीने कार्यकर्ताओंके इस भयको अनुचित बताया। मूल ट्रस्टियोंने न तो यह मांग की और न यह इच्छा बताई कि संगठन पर उनका प्रभुत्व रहे। ट्रस्टी मण्डल और छोटीसी कार्यकारिणीके लिए गांधीजीने जो अन्य नाम प्रस्तावित किये वे उन्होंने तुरन्त स्वीकार कर लिये। गांधीजी चाहते तो वे स्वेच्छापूर्वक ट्रस्टी मंडलसे त्यागपत्र दे देते। लेकिन गांधीजीने कहा मैं नहीं चाहता कि पूजीपतियोंको ऐसा लगे कि उन्हें ट्रस्टी मंडलसे अलग कर दिया गया है और न मैं यह चाहता कि वे ट्रस्टके काममें रस लेना बन्द कर दें। ट्रस्टके एक मूल ट्रस्टी और टाटा परिवारके श्री जे० आर० डी० टाटाके एक पत्रके उत्तरमें गांधीजीने लिखा 'मैं जानता हूं कि मैं इस विचारका प्रचार करनेका दोषी रहा हूं कि ट्रस्टके धनकी व्यवस्था व्यवहारमें मेरी पसंदके ट्रस्टियों पर छोड़ दी जानी चाहिये। पर कोई हानि होनेसे पहले ही मुझे अपनी भूलका पता लग गया। मैं जितना ही उसका विचार करता हूं उतनी ही मुझे उसी कल्पनाके पीछे रहा सकारणता अनुभव होती है। सारा ट्रस्टी मंडल एक सुन्दर समन्वय है और यदि अधिकांश ट्रस्टी कोषकी व्यवस्थामें सक्रिय भाग लें तो हम अकल्पित लाभदायक परिणामोंकी आशा रख सकते हैं। अग्रगण्य नगरवासियों और सीधे-सादे स्त्री-पुरुषोंका सक्रिय समन्वय और सहयोग एक विरल अनुभव है।"[1] (मोटे टाइप मेरे किये हैं)

अपनी विविध प्रकारकी राजनीतिक और अराजनीतिक (रचनात्मक) प्रवृत्तियोंके लिए बड़े बड़े फंड एकत्र करनेके कारण गांधीजीका धनी और पूजीपति-वर्गके साथ घनिष्ठ सम्पर्क हो गया था। वे उनके उदारतासे दिये हुए दान निःसंकोच स्वीकार करते थे यद्यपि उन्हें धनिकोंके दावा रुपयोंसे गरीबोंके पाद-पसे ज्यादा कामना मालूम होती थे। इसलिए कई बार उनके सम्बन्धको कुछ लोग कमजोरीका निशाना और सत्य तथा अहिंसाके

लिए अशोभनीय" बताते थे। इसके विपरीत, गांधीजी स्वयं इस सम्बन्धको वास्तवमें अपनी अहिंसाका लक्षण समझते थे। रोमां रोलां जैसे महापंडित और दार्शनिकको भी एक बार गहरा आघात लगा था, जब गांधीजीने उत्साह-पूर्वक शस्त्रास्त्र-उद्योगसे सम्बन्धित एक प्रमुख व्यक्तिके परिवारके किसी सदस्यको अपने हस्ताक्षर दिये थे। गांधीजीका तत्त्वज्ञान कोई दूसरे ही प्रकारका था। वे हमेशा मनुष्य और प्रणालीके बीच स्पष्ट भेद करते थे, यह उनके अहिंसक दृष्टिकोणका अत्यावश्यक अंग था। पूंजीवादसे उनका कोई सरोकार नहीं था, परन्तु पूंजीपतियोंको वे कभी न सुधर सकनेवाले या दूसरे किसी भी वर्गके लोगोंसे अधिक बुरे कभी नहीं मानते थे। वे कहा करते थे, वास्तवमें मैंने बहुत बार यह देखा है कि जो लोग पूंजीपतियोंकी घोर निन्दा करते हैं, उन्हें खुद अगर मौका मिल जाय तो पूंजीपति बननेसे अरुचि नहीं होती और उनके दैनिक जीवनके छोटे-बड़े कामोंमें, कम या अधिक मात्रामें, पूंजीपतियोंकी अधिकतर कमजोरियां पाई जाती हैं जिनकी वे निन्दा करते हैं। एक दिन जब एक विदुषी करोड़पतियोंकी निन्दा कर रही थी तब गांधीजीने उन्हें यह कह कर चुप कर दिया, "तुम स्वयं करोड़पति बन जाओ तब तक ठहरो!"

उनकी अहिंसाका यह तकाजा था कि वे अपनी त्रुटियोंके प्रति कठोर बने और दूसरोंके विषयमें कोई राय बनानेमें उदार रहें। वे (गांधीजी) अपनी ही त्रुटियां दूर कर लें इतना उनके लिए काफी था। उन्होंने पूंजी-पतियोंके घोर विरोधियोंसे कहा, मैं अपने धर्मसे विमुख हो जाता, यदि मैं पूंजीपतियोंके प्रति यह रवैया अपनाता कि 'मैं तुमसे अधिक पवित्र हूं' और आपकी सलाह पर चल कर अपने धनी मित्रोंके साथ सम्बन्ध रखनेसे इन-कार कर देता। उन्हें मेरा अनुचित लाभ उठाने देना तो दूर रहा, उलटे मैं ही गरीबोंके कामके लिए खुले तौर पर और बेहयाईके साथ उनका उपयोग कर रहा हूं। इस टीकाके उत्तरमें कि गांधीजीके मनमें पूंजीपति शोषकोंके प्रति उनके शिकारोंकी अपेक्षा अधिक कोमल भावना है, उन्होंने एक बार नॉर्मन क्लिफसे कहा था, यदि मेरी अहिंसा ऐसी ही है तो उसे दबा देना चाहिये। "अवश्य ही मेरे मित्रोंमें पूंजीपति भी हैं और मुझे इस बातका गर्व है कि वे मुझे अपना मित्र मानते हैं। परन्तु जब जरूरत होती है तब मैं उनसे लड़ता भी हूं और मुझसे ज्यादा सख्त लड़ाई उनसे दूसरा कोई नहीं लड़ता। मैंने जिस ढंगसे मिल-मालिकोंके साथ लड़ाई लड़ी है वैसी और उतनी सफलतासे अन्य किसीने नहीं लड़ी होगी।"[३१] उन्होंने कहा, ऐसी स्थितिमें भी पूंजीपतियों और मिल-मालिकोंसे मेरी मित्रता बनी रही, यह मेरी अहिंसाका ही प्रताप है। मैं धनवालोंसे यह नहीं कह सकता

कि जव तक वे अपनी सारी मम्पत्तिका त्याग न कर दें तव तक म उनस काइ मम्वध नही रखूगा। अपनी सम्पत्तिका सम्पूण परित्याग एसी वस्तु ह, जो साधारण ञागामे भी विरले ही आदमी कर सक्त ह। धनिक वगस उचित रूपमे इतनी ही आशा रखा जा सकती है कि व अपनी सम्पत्ति और बुद्धिके सरक्षक वने रहे और दोनोका उपयोग समाजकी मेवामें कर। इससे अधिकका आग्रह उनस रखना सानके अडे देनेवाली मुर्गीका मार डालना होगा।"

चौथा अध्याय

साम्प्रदायिक त्रिकोण

१

सोमवार गांधीजीके साप्ताहिक मौनका दिन था। इसलिए वे पर्चियों पर लिखकर बातचीत कर रहे थे। वे राजाजीको कुछ समयके लिए सेवाग्राम आकर रहनेकी बात समझा रहे थे। कांग्रेसके महारथी नेता चक्रवर्ती राजगोपालाचार्यको उनके मित्र स्नेहवश राजाजी ही कहते थे।

राजाजी "मैं ३० तारीख तक सेवाग्राम आ सकता हूं।"

गांधीजी "तो उस समय तक मैं आपकी प्रतीक्षा करूंगा।"

राजाजी "जैसी आपकी इच्छा।"

गांधीजी "'आपकी प्रतीक्षा करता रहूंगा' का क्या अर्थ?"

राजाजी "कभी कभी खतरोंकी भी प्रतीक्षा की जाती है!"

गांधीजी "आप ऐसा कह सकते हैं। मैं वह खतरा भी चाहता हूं। मुझे कई बातोंमें आपसे विचार-विनिमय करना है।"

राजाजी "आशा है उस समय तक हम दोनों अपनी कुछ बातें भूल जायंगे। फिर किसी प्रकारका विचार-विनिमय करनेकी बात ही नहीं रह जायगी!"

गांधीजी "तब हम साथ साथ हंसेंगे और मोटे हो जायंगे!"

फिर बात बिना नमकके आहार पर चली।

गांधीजी "मैं दक्षिण अफ्रीकामें बरसों तक नमकके बिना रहा हूं। यहां मैंने वह नियम तोड़ दिया, परन्तु अधिक विचारके बाद फिर बिना नमकके भोजन पर आ गया।"

राजाजी "जब लोगोंको बिना नमकका भोजन खिलाया जाता है तब नमककी स्वाभाविक भूख मिटानेके लिए बच्चोंकी तरह उनके दीवारोंको चाटने और मिट्टी खानेकी संभावना रहती है!"

गांधीजी "इससे उन्हें लाभ ही होगा। दीवारें साफ हो जायंगी! यह तो उस हंसीका आरंभ ही है, जिसका पूरा आनन्द हम लोग सेवाग्राममें लेनेवाले हैं।"

रातके पौने दस बज रहे थे और गांधीजीको सोनेमें देर हो रही थी।

गांधीजी "अब मुझे आपसे प्रेम भी करना हो, तो आपको छोड़ देना चाहिये!"

गांधीजी और राजाजीका मिलन एक ऐसी घटना होती थी जिसकी हमेशा प्रतीक्षा की जाती थी और उसके लिए सबसे अधिक उत्सुक स्वयं गांधीजी रहते थे। जब कभी दोनों मिलते थे तब विनोद चातुर्य और ज्ञानकी आनन्दप्रद गोष्ठी होती थी। परन्तु १९४२ में राजाजीका अपने कांग्रेसी साथियों और गांधीजीसे 'भारत छोड़ो' की मांग पर मतभेद हो गया था और उसके फलस्वरूप राजाजीने कांग्रेस कार्यसमितिसे त्यागपत्र दे दिया था। यह जान कर कि उनके राजनीतिक विचार कांग्रेसके नेताओं सहित बहुतसे कांग्रेसियोंमें अतिशय अप्रिय हो गये थे राजाजी गांधीजीके छूटनेके बाद उनसे जान-बूझ कर कमसे कम उस समय तक दूर रहे थे जब तक गांधीजी तत्कालीन प्रश्नों पर अपना पहला वक्तव्य न दे चुके। इसका कारण यह था कि राजाजी किसीको भी यह संदेह करनेका अवसर नहीं देना चाहते थे कि उन्होंने गांधीजीके निर्णयोंको प्रभावित किया है। इस कारण तो गांधीजी उनसे मिलनेके लिए और भी उत्सुक हो गये थे। कुछ तत्कालीन राजनीतिक समस्याओंके बारेमें दोनोंके बीच दृष्टिभेद अवश्य हो गया था परन्तु मानवताकी भूमिका पर दोनोंमें बहुत अधिक समानता थी। राजाजी महात्मा गांधीके दक्षिण अफ्रीकाके कार्योंकी ख्याति भारतमें पहुंची उस समयसे ही — अर्थात उनसे मिलनेके भी पहले — अपना हृदय गांधीजीको अर्पण कर चुके थे। और राजाजी भी मनुष्योंके गिकार करनेमें प्रवीण थे। वे हमेशा कहा करते थे कि राजाजीसे ज्यादा अच्छी कोई मछली उनके जालमें नहीं फंसी।

अगस्त १९४२ में कांग्रेसी नेताओंकी गिरफ्तारीके समयसे ही (राजाजी भारत छोड़ो के अपने प्रसिद्ध विरोधके कारण गिरफ्तार नहीं किये गये थे) राजाजी राजनीतिक गतिरोधको सुलझानेके लिए कांग्रेस और मुस्लिम लीगमें मेल करानेकी कोशिश कर रहे थे। राजाजी 'बुद्धियुग'का अनुपम बुद्धिशाली सन्तान थे। उन्हें अपने समझाने-बुझानेकी शक्तिमें अपार विश्वास था। उन्हें लगता था कि अगर कांग्रेस और मुस्लिम लीगमें मेल हो जाय और दोनों एक ही मंच पर आ जायं तो स्वाधीनताकी लड़ाई बातकी बातमें जीत ली जाय। उनकी यह भी मान्यता हो गयी थी कि यदि मुस्लिम बहुमत वाले प्रान्तोंके लिए मुस्लिम लीगकी मांग हुए आत्म निर्णयके अधिकारको कांग्रेस स्वीकार कर ले तो लीग भारतीय स्वाधीनताकी मांगमें कांग्रेसके साथ हो जायगी और फिर ब्रिटिश सत्ताके लिए दोनोंकी सम्मिलित मांगका अस्वीकार करना सम्भव नहीं होगा।

राजाजीकी ये दोनों धारणाएं गलत थीं। जिन्ना उस समय तक कांग्रेसके साथ कोई समझौता करनेको तैयार नहीं थे जब तक उन्हें ब्रिटिश सत्तासे अधिक अच्छी शर्तें मनवानेकी आशा थी और ब्रिटिश सत्ता तो हिन्दुस्तानकी शांति

पहुचा कर उन्हे प्रसन्न करनेको हमेशा ही तैयार रहती थी। और कमसे कम युद्धकालमे तो, कुछ भी क्यो न हो जाय, ब्रिटिश सरकार सत्ता हस्तातरित करनेको तैयार नही थी। यदि राजाजीकी आशाए पूरी हो जाती, तो वेशक मुस्लिम लीगकी साम्प्रदायिक नीति और अग्रजोकी "फूट फैला कर राज्य करने" की नीतिका सारा इतिहास झूठा हो जाता। परन्तु व्यक्तिगत अनुभवसे इसका विश्वास करनेके लिए स्वय प्रयत्न करना राजाजीके लिए आवश्यक था।

इसलिए नजरबन्दी कैम्पमे गाधीजीके उपवासके दिनोमे जब थोडे समयके लिए मजबूरीसे जेलके फाटक खोल दिये गये, तो अवसर पाकर राजाजीने काग्रेस और मुस्लिम लीगमे समझौता करानेके लिए गाधीजीके सामने एक योजना रखी। उनकी योजनाकी, जो आगे चल कर राजाजी-योजना कहलायी, मुख्य बाते ये थी (१) मुस्लिम लीगको स्वाधीनताकी भारतीय मागका समर्थन करना चाहिये और सक्राति-कालके लिए एक अस्थायी अन्तरिम सरकार बनानेमे काग्रेसके साथ सहयोग करना चाहिये, (२) युद्ध समाप्त होनके बाद काग्रेस उत्तर-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी भारतके एक-दूसरेसे लगे हुए उन जिलोकी सीमा बाधनेके लिए कमीशनकी नियुक्तिको स्वीकार करेगी, जिनमे मुसलमानोका स्पष्ट बहुमत हो, (३) इन निर्धारित सीमावाले प्रदेशोमे वयस्क मताधिकार या इसी तरहकी किसी और व्यवस्थाके आधार पर सारे निवासियोका जनमत भारतसे अलग होनेके प्रश्नका निर्णय करेगा। यदि बहुमत भारतसे अलग कोई सार्वभोम राज्य स्थापित करनेके पक्षमे निर्णय दे, तो उस निर्णय पर अमल किया जाय, (४) इस प्रकार उन प्रदेशोका अलग राज्य रचा जाय तो प्रतिरक्षा, व्यापार-उद्योग, डाक-तार तथा अन्य आवश्यक विषयोमे परस्पर समझौता किया जाय, और (५) ये शर्ते उसी स्थितिमे बधनकारक होगी जब ब्रिटेन भारतके शासनके लिए पूरी सत्ता और जिम्मेदारी हस्तातरित कर देगा।

गाधीजीको इस योजनाके लिए अपनी स्वीकृति देनेमे एक क्षणका भी विचार करनेकी जरूरत नही हुई। इस स्वीकृतिको लेकर राजाजी मुस्लिम लीगके अध्यक्ष जिन्नाके पास पहुचे। परन्तु जिन्नाने इस योजनाको माननेमे असमर्थता प्रगट की, क्योकि उससे लीगकी पाकिस्तानकी मांग सपूर्ण रूपमे पूरी नही होती थी। बादमे मुस्लिम लीग कौसिलके सामने भाषण देते हुए जिन्नाने इसे "परछाई और भूसेके समान तथा घायल, अगभग किया हुआ और कीडो द्वारा खाया हुआ पाकिस्तान"[1] कहा। लेकिन राजाजी चाहे तो जिन्नाने इस योजनाको मुस्लिम लीग कौसिलके सामने विचारके लिए रख देनेकी तैयारी बताई। राजाजी पूरी तरह जानते थे कि पहले जिन्नाकी

स्वीहृति न मिले तो याजनाको कामिल्व शासन रखनेके बाद लाभ नहीं
होगा। ऽहं यह मा ऱ्या वि इस योजनाका या ही चुपचाप तावमें रख
देना जनताके प्रति अन्याय होगा और याजनाके साथ भी न्याय नहीं होगा।
इसलिए गाधीजीने अपनी याजना और साथ ही जिन्नाके साथ हुआ पत्र-व्यव
हार अखबारोंमें प्रगट कर दिया। जिन्नाका उन्होंने अन्तिम रूपसे लिख दिया
निजी मविदाका समाप्त हुई। अब इस बारेमें जनताको विश्वासमें लेना
आवश्यक है।

अब गाधीजी इस चित्रमें प्रवेश करते हैं।

८ अगस्त १९४२ का — काग्रेस महासमितिके 'भारत छाडो' प्रस्ताव
पास करनेसे ८ दिन पहले — गाधीजीने दोनों पक्षोंके एक मुस्लिम मित्र
मरूगाडक द्वारा काग्रेस-लीग समझौतेके लिए जिन्नाके पास एक महत्वपूर्ण
प्रस्ताव भेजा था। गाधीजीके प्रस्तावकी शर्तें ये थी

किसी भी प्रकारकी सत्ता अपने हाथमें सुरक्षित रखे बिना
भारतको तत्काल स्वतंत्रता देनेकी काग्रेसकी मागके साथ — बेशक यह
व्यवस्था तो इसमें रहेगी ही कि धुरी राष्ट्रोंके आक्रमणको रोकनेके लिए
और इस प्रकार चीन और रूसकी सहायता करनेके लिए मित्रराष्ट्रोंका
स्वतंत्र भारत देगा —
मनाये अपनी कारवाइया कर सकें ऐसी छूट
मुस्लिम लीग पूरी तरह सहयोग करे और ब्रिटिश सरकार आज जो
सत्ता अपने हाथमें रखती है वह सब — देशी राज्यो सहित समग्र
भारतकी ओरसे — मुस्लिम लीगको साँप दें तो काग्रेसको कोई आपत्ति
नहीं होगी। और भारतकी प्रजाकी ओरसे मुस्लिम लीग जो भी सरकार
बनायेगी उसमें काग्रेस किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं करेगी। इतना ही
नहीं स्वतंत्र राज्यका शासन-तत्र चलानेके लिए काग्रेस सरकारमें भी
सम्मिलित होगी।

यह प्रस्ताव इसी प्रकारकी एक सार्वजनिक घोषणाका स्पष्टीकरण
था जो कुछ समय पहले काग्रेसके अध्यक्ष मौलाना आजादने की थी। परन्तु
जिन्नाने उत्तर दिया था कि किसी ऐसे प्रस्ताव पर वे ध्यान नहीं दे सकते
जो सीधा उनके सामने न रखा गया हो। गाधीजी किसी औपचारिक वस्तुको
माननेवाले आदमी नहीं थे। यदि कुछ ही दिन बाद वे अचानक नजरबंद
न कर लिये जाते तो वे जिन्नासे मिल होते।

जब गाधीजी नजरबंद थे उन दिनों १९४३ के अप्रैलमें दिल्लीमें हुए
मुस्लिम लीगके खुले अधिवेशनमें बोलते हुए जिन्नाने यह घोषणा की थी कि
यदि गाधीजी सचमुच मुस्लिम लीगके साथ समझौता करनेको तैयार हों

तो मुझे इस बातसे सबसे अधिक प्रसन्नता होगी. "यदि मि० गांधीकी यही इच्छा है, तो उन्हे सीधा मुझे लिखनेसे कौनसी चीज रोक सकती है? . . यह सरकार इस देशमे मजबूत तो हैं। लेकिन मै नही मान सकता कि ऐसा पत्र मुझे भेजा जाय, तो वह उसे रोक देनेकी हिम्मत करेगी। ऐसा कोई पत्र रोक लिया जाय, तो वह सचमुच बडी गम्भीर बात होगी। यदि उनका थोडा भी हृदय-परिवर्तन हुआ है . . . तो वे मुझे केवल कुछ पक्तिया लिख कर भेज दे। फिर मुस्लिम लीग पीछे नही रहेगी।"

उत्तरमे गाधीजीने जिन्नाको पत्र लिखा, जिसमे उनसे मिलनेकी तैयारी बताई "आपके निमत्रणमे एक 'यदि' मालूम होता है। क्या आपका यह कहना है कि यदि मेरा हृदय-परिवर्तन हुआ हो, तो ही मुझे आपको लिखना चाहिये? मनुष्योके हृदयकी बात तो केवल ईश्वर ही जानता है। मै तो चाहता हू कि मै जैसा हू वैसा ही आप मुझे स्वीकार करे। आप और मै दोनो एक समान हल ढूढनेके लिए दृढ सकल्प करके साम्प्रदायिक एकताके महान प्रश्नको हाथमे क्यो न ले? और जिन लोगोका भी इसके साथ सम्बन्ध है या जिनकी इसमे दिलचस्पी है, उन सबसे अपना वह हल स्वीकार करानेके लिए हम दोनो मिल कर काम क्यो न करे?"[२]

सरकारने इस पत्रको जिन्नाके पास पहुचनेसे रोक दिया। परन्तु इसका 'सार' उनके पास भेज दिया। इस पर जिन्नाने यह घोषणा की कि वे इस प्रकारका पत्र गाधीजीकी ओरसे नही चाहते थे। वे चाहते थे कि गाधीजी पहले मुस्लिम लीगकी पाकिस्तानकी माग स्वीकार करे और फिर उन्हे लिखे! "मि० गाधीके इस पत्रका अर्थ तो यही समझा जा सकता है कि यह उनकी अपनी मुक्तिके एकमात्र उद्देश्यसे मुस्लिम लीगकी ब्रिटिश सरकारके साथ टक्कर करा देनेकी चाल है।"[३]

पत्रको रोक लेना और उसका सार बतलाना — यह बात इस बारके गुप्त षड्यंत्रमे शरीक दोनो पक्षो अर्थात् जिन्ना और ब्रिटिश सत्ताके लिए बहुत लाभप्रद रही। लेकिन दूसरी बार ब्रिटिश कैबिनेट-मिशनकी सधि-वार्ताओके दिनोमे जब जिन्नाने काग्रेसके एक पत्रका 'सार' लार्ड वेवेलसे जानकर काम चला लिया और सारे पत्रके पाठके लिए प्रतीक्षा नही की, तब यह सौदा उन्हे बहुत महगा पडा। (देखिये अध्याय ९, विभाग २)

जो काम गाधीजी जेलमे रह कर नही कर सके, वह उन्होने अपनी मुक्तिके बाद स्वतत्र होकर आरभ कर दिया। उन्होने १७ जुलाई, १९४४ को पिछली रातमे चर्चिलको पत्र लिखा था ("मुझ पर विश्वास कीजिये और अपने और मेरे लोगोके खातिर मेरा उपयोग कीजिये।"); उसी समय उन्होने जिन्नाको भी पत्र लिखा था, जिसमे गाधीजीने उन्हे 'भाई जिन्ना' कह कर

संबोधित किया था और उस पर अंतमें 'आपका भाई, गांधी' लिख कर हस्ताक्षर किये थे।

अपने उस पत्रमें गांधीजीने लिखा था

एक समय था जब मैं आपको मातृभाषामें बोलनेके लिए राजी कर सका था। आज मैं आपको मातृभाषामें लिखनेका साहस कर रहा हूं। जेलसे भेजे हुए अपने निमंत्रणमें मैं आपकी और मेरी मुलाकातके बारेमें लिख चुका हूं। जेलसे छूटनेके बाद मैं आपको अभी तक लिख नहीं पाया। आज मुझे लिखनेकी प्रेरणा हुई है। जब आप मिलना चाहें तब हम मिलें। मुझे इस्लामका या भारतीय मुसलमानोंका शत्रु न समझिये। मैं हमेशा आपका और मानव जातिका सेवक और हितैषी रहा हूं। मुझे निराश न कीजिये।

यह पत्र जान-बूझकर गुजरातीमें लिखा गया था जो काठियावाड और गुजरातके हिंदुओं पारसियों और जिन्नाकी मुस्लिम जातिकी सामान्य मातृभाषा था (और जिसका अस्तित्व तक पाकिस्तानके दर्शनशास्त्रमें अस्वीकार कर दिया गया था)। तुरन्त 'भाई जिन्ना' का अंग्रेजीमें श्रीनगरसे 'क्वीन एलिजाबेथ' नामक नौकागृहसे 'प्रिय मि० गांधी' के नाम उत्तर आ गया। उसमें सूचना दी गई कि अगस्त १९४४ के मध्यमें किसी समय काश्मीरसे लौटने पर वे गांधीजीका अपने बम्बईके मकान पर "हर्षसे स्वागत करेंगे।" इस पर उदारदलीय नेता सर तेजबहादुर सप्रूने गांधीजीको लिखा 'इस बारेमें मुझे शंका नहीं कि आपके जैसे महापुरुषको ही ऐसा स्वागत पाना पुसा सकता है।'

२

जिन्ना और मुस्लिम लीगको किस चीजने इतना अड़ियल बना दिया था और वह साम्प्रदायिक त्रिकोण क्या था, जिसने केवल सारे राष्ट्रवादी भारतके ही सारे प्रयत्नोंको नहीं परन्तु आगे चलकर ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंके भी सारे प्रयत्नोंको विफल कर दिया था?

इस साम्प्रदायिक त्रिकोणकी तीन भुजायें थीं — कांग्रेस मुस्लिम लीग और ब्रिटिश सत्ता। ये तीनों क्रमशः राष्ट्रवाद सम्प्रदायवाद और साम्राज्यवादकी शक्तियोंका प्रतिनिधित्व करती थीं और टिके रहनेके लिए अंतिम संग्राममें लगी हुई थीं।

इस त्रिकोणके भीतर और उसकी भुजाओंको काट कर बाहर निकलनेवाला एक और त्रिकोण था। यह उसमें उसी समय चल रहे आर्थिक संग्रामको बताता था। इसमें भी तीन पक्ष थे। पहला ब्रिटिश सत्ताके

और भारतके जमीदारो तथा दूसरे स्थापित स्वार्थोंका था। दूसरा पक्ष मध्यम वर्गका था, जो ऊपरवालोके प्रभुत्वसे मुक्त होनेके लिए सघर्प कर रहा था, परन्तु नीचेवालोके सम्वन्धमे परोपजीवी था या उनके शोपण पर टिका हुआ था। तीसरा पक्ष आम लोगोका था, जो विदेशी राज्यमे दो सौ वर्पके शोपणसे पिसते पिसते तबाह हो गये थे। उन्हे अपने दु खो और यातनाओका ही भान था और उनके मनमे यह उत्कट अभिलापा थी कि स्वतत्रताके आनेसे उनकी दशा सुधरेगी।

असतुष्ट मुस्लिम जनता पर उनकी साम्प्रदायिक भावनाको लक्ष्यमे रखकर की जानेवाली अपीलका असर हो सकता था। ऐतिहासिक भूत-कालमे कभी उनकी इस भावनाका कोई वास्तविक आधार रहा होगा। परन्तु जैसा वगालके एक समयके गवर्नर मि० केसीने कहा था, यह शिकायत वहुत पहले ही निष्क्रिय हो गई थी और अव तो उसकी केवल स्मृति ही वाकी रह गई थी। मुस्लिम लीगने प्रयत्नपूर्वक उसे फिरसे जगाकर ऐसी मन स्थिति पैदा कर दी थी, जिसे मिस्टर केसीके शब्दोमे 'हिन्दुओका हौवा' ही कहा जा सकता है। मि० केसी कहते है "हिन्दू चाहे तो भी अव मुसलमानो पर सामाजिक अपमान और तिरस्कार थोपनेकी स्थितिमे वे नही रहे है।"[५]

साम्प्रदायिक समस्या भारतके कट्टरपथियो और मध्यमवर्गीय लोगोके साथ मिलकर ब्रिटिश साम्राज्यवाद जिन प्रतिक्रियावादी शक्तियोका प्रति-निधित्व करता था उनकी उत्पन्न की हुई चीज थी। राष्ट्रीय आन्दोलनसे उनकी सुरक्षाको खतरा था, अत. उसे छिन्नभिन्न करनेके लिए उन्होने राजनीतिक सत्ताकी अपनी कशमकशमे सम्प्रदायवादको पकड लिया। उदाहरणके लिए, इससे आसान और क्या हो सकता था कि असन्तुप्ट मुस्लिम जनतासे यह कहा जाय कि तुम लोगोकी मुसीवतो और तकलीफोका कारण हिन्दू साहूकार और हिन्दू जमींदार है—यह उनके जीवनका एक कठोर सत्य था—और ऐसा कहकर प्रकाशकी तरह स्पप्ट इस सत्य पर आवरण डाल दिया जाय कि मुस्लिम लीगके वडी सख्याके प्रमुख नेता स्वय सरकारी खितावोवाले जमीदार थे—पुरानी सामतशाही व्यवस्थाके अवशेप थे?

तो जिन्ना साहवने, जो किसी समय उत्साही होमरूलवादी थे, सम्प्रदाय-वादके प्रणेता वनकर ब्रिटिश अनुदार दलके कट्टरपथियो और ब्रिटिश भारतीय नौकरशाही, कट्टरपथी जमीदारो और पुरानी सामन्तशाहीका प्रतिनिधित्व करनेवाले स्थापित स्वार्थोको अपना उत्तम मित्र वनाया और अपने उदारवादके वावजूद इस्लामी राज्यका नारा वुलन्द किया। वे अद्यतन फैशनके इंग्लिश कोट-पतलूनके वजाय शेरवानी पहन कर शुक्रवारकी नमाजमे भी शरीक होने लगे।

सम्प्रदायवाद किसी राजनीतिक नामसे चलाया जानेवाला धार्मिक सघप
या घमकी आडमें चलाया जानेवाला काइ आर्थिक सघप नही था। वह ता
केवल विचाराकी गडबडका ही परिणाम था, जो ऐसे वर्गोंमें हुआ ही करती
है — जा राजनीतिक सत्ताके लिए खेल खेलते ह और इन विचारोको तोड
मरोडकर अपने स्वाथके लिए उनका दुरुपयोग करते ह। इसका एक उल्लेख
नीय उदाहरण लिपिका प्रश्न था — अर्थात देशकी राष्ट्रभापाके लिए देवनागरी
लिपि हो या फारसी लिपि हा? देशके विभाजनके विवादमें यह प्रश्न बडा
प्रमुख बन गया था यद्यपि दस प्रतिशतसे भी कम भारतीय लिखना-पढना
जानते थे।

अग्रेजाके आनेसे पहले भी भारतमें धार्मिक मतभेद थे। अग्रेजाके आनेसे
पहले भारतमें कट्टरपथी धार्मिक लोगाका, धर्मान्धोंका और विभिन्न विरोधी
सम्प्रदायामें आपसी झगडाका अस्तित्व था। परन्तु समूचा चित्र जो नजरके
सामने आता था वह तो जातियो धर्मों भापाओ सस्कृतियो तथा विचार
धाराओके सगम और समन्वयका था। मुस्लिम शासकोंके अमुस्लिम सेनापति
और सलाहकार होते थे जिन पर उन्हे विश्वास और गर्व होता था। उसी
तरह हिन्दू तथा सिक्ख राजाओके मुसलमान मत्री सेनापति और सलाह
कार होते थे। मुसलमानो और अमुसलमानोके राज्योके राज्यसघ थे।
सूफीवादके कई सम्प्रदायोके बडे बडे उदार धार्मिक आन्दोलन चलते थे और
उनमें हिन्दुओ और मुसलमानोके श्रद्धाभाजन साधु-सत सम्मिलित होते थे।
खुद उर्दू भापा जो कि उत्तर भारतके अधिकाश मुसलमानोकी भापा था,
फारसी और मुसलमानोके आनेके समय भारतमें प्रचलित सस्कृतसे निकली
हुई बोलियोके मिश्रणसे बना थी। सत्ताकी लडाइने अलगावका रूप कभी
ग्रहण नहा किया था और आम जनता लगभग उससे अछूती रहता था।
हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच साम्प्रदायिक विरोधका घटना और अन्त
होनेका आन्दोलन — जिसके हिन्दु और मुस्लिम लीग प्रणेता बने — ब्रिटिश
राज्यमें अस्तित्वमें आया (जैसा पजाबके एक भूतपूर्व गवनर सर जान
मैनाडने अपने फारेन अफेयसमें लिखते हुए प्रमाणित किया था)। सर
जानने लिखा था यानी यह सच है कि यह फूट और विपन्नता वृत्ति
न होती तो ब्रिटिश सत्ता भारतमें जम नहा सकती था और न इस समय
टिक सकता था। हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य उसी विपन्न वृत्तिका एक ... रूप
... यह भी सच है कि दोनो जातियोंके बीच साम्प्रदायिक विरोध ब्रिटिश
राज्यमें शुरू हुआ। अग्रेजोंके पहले युगमें भी समय समय पर अत्याचारी
मुस्लिम शासक हुए थे। परन्तु हिन्दू और मुस्लिम जनता शान्ति साथ
... स्थानोंमें साथ साथ शान्तिपूर्वक पूजा करती रहा।

यह कोई अचानक घटी या अपने आप उत्पन्न हुई घटना भी नही थी। सके पीछे अग्रेजोकी साम्राज्यवादी कूटनीतिका एक पूरा अध्याय छिपा हुआ ा। इस दु खद अध्यायका वर्णन करना यहा आवश्यक हो गया है, क्योकि ादमे जो कुछ हुआ उसको समझनेके लिए वह कुजीका काम करता है। जैसा के कोई भी प्राणिशास्त्री वता देगा, शरीर-रचना सवधी अनेक पहेलियोका हस्य गर्भरचना-शास्त्र (एम्ब्रिओलॉजी) मे मिलता है।

ववईके गवर्नर लॉर्ड एल्फिन्स्टनने अपनी १४ मई, १८५९ की डायरीमे लिखा था कि "प्राचीन रोमकी नीतिका सूत्र यह था कि 'फूट फैला कर राज्य करो' और यही हमारा भी सूत्र होना चाहिये।"[६]

इसी तरह एक ब्रिटिश सेनाधिकारी कर्नल जॉन कोकने १८५७ के भारतीय विद्रोहके समय लिखा था· "(हमारे सौभाग्यसे) विभिन्न धर्मो और जातियोके वीच जो अलगाव मौजूद है उसे मिटाकर हमे इन्हें मिलानेका प्रयत्न नही करना चाहिये, वल्कि उसे पूरी तरह प्रोत्साहन देनेका प्रयत्न हमे करना चाहिये।"

१८५७ के विद्रोहके दिनोमे, जिसने भारतसे मुगल राज्यके अतिम अवशेपोका अत कर दिया था, और उसके वाद मुसलमान ब्रिटिश सत्ताकी नाराजीके शिकार हो गये थे। "उस भयकर कालकी तमाम भयकर वातो और मुसीवतोकी जिम्मेदारी उनके सिर थोपी गई थी।"[७] उनके प्रति भेदभावका व्यवहार किया जाता था और उन्हे "सरकारी नौकरियो और नरकार द्वारा मान्य किये हुए धधोसे वचित रखा जाता था।"[८] जिन लोगोने विद्रोहमे भाग लिया था—मुस्लिम शासक वर्ग, उनके आश्रित और उनसे लाभ उठानेवाले सगे-सम्वन्धी, विशेपत मुस्लिम भद्र लोग—उन्हे नई व्यवस्था स्वीकार करनेमे वडी देर लगी। अशत. अग्रेजोके हाथो उन्हे जो कष्ट हुए थे (और उसमें लूटपाट तथा पुरानी मुस्लिम शिक्षा-प्रणालीका नाश भी सम्मिलित था[९]), उनके फलस्वरूप अंग्रेजों पर चडे हुए रोपके कारण उन्होने अंग्रेजी शिक्षाका स्वागत नही किया और इस कारणसे मध्यमवर्गके विकासमें उनका वहुत थोडा भाग रहा। हा, अग्रेजी शिक्षा प्राप्त किये हिन्दू सरकारी नौकरियोमे, उद्योगोमे और व्यापार-व्यवसायमें मुसलमानोसे आगे वढ गये।

१८७१ के आसपास, १८५७ के विद्रोहके १५ वर्प वाद, जव मुसलमानोके सभी वर्गोंमे अग्रेज-विरोधी भावनाने भयंकर रूप धारण कर लिया, तव अग्रेजोको महसूस होने लगा कि मुसलमानो सवधी ब्रिटिश सरकारकी भूतकालीन नीति उचित नही थी। यह नई भावना मुसलमानोकी हिमायतके रूपमें भारत सरकारके एक अग्रेज अधिकारी डब्ल्यू० डब्ल्यू० हन्टरके

मुसलमानोंकी एक "ऐसी कौम है, जो ब्रिटिश
द्वारा इन शब्दोंमें प्रगट हुई
राज्यमें बरबाद हो गई।"¹

यह भावना १८८५ के आसपास राष्ट्रवादी आन्दोलनका उदय होनेके बाद अधिक तीव्र हो गई। इस आन्दोलनमें हिन्दुओंका बुद्धिशाली वर्ग, जो अधिक आगे बढ़ा हुआ था, स्वभावतः अधिक प्रमुख रहा। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका प्रथम अधिवेशन १८८५ में बम्बईमें हुआ। उसमें केवल दो मुसलमान उपस्थित थे। दूसरा अधिवेशन अगले वर्ष कलकत्तामें हुआ। उसमें ३३ मुसलमान शामिल हुए। और छठा अधिवेशन १८९० में हुआ, जिसमें कुल ७०२ प्रतिनिधियोंमें से १५६ यानी २२ प्रतिशत प्रतिनिधि मुसलमान थे। अधिकाधिक मुसलमान इस राष्ट्रीय आन्दोलनकी ओर आकर्षित होने लगे, इसलिए ब्रिटिश सरकार चिन्तित हो गई। उसके बाद मुसलमानोंको ब्रिटिश लोगोंके प्रति वफादार बनानेका नीति भारत सरकारकी स्वीकृत नीति हो गई।

११ मई १९०६ को तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड मिंटोके नाम लिखे एक पत्रमें भारत मंत्री लॉर्ड मार्लेने ब्रिटिश युवराजके साथ, जो भारतमें आये थे, हुई अपनी बातचीतका उल्लेख करते हुए यह लिखा: 'उन्होंने (युवराजने) राष्ट्रीय कांग्रेसके तेज गतिसे शक्तिशाली बननेकी बात कही। ... हम इसे पसन्द करें या न करें, वस्तुस्थिति तो यही है।'"¹¹

लॉर्ड मिंटोने यह उत्तर दिया: "मैं इन दिनों इस सम्बन्धमें काफी सोचता रहा हूं कि कांग्रेसके ध्येयके सामने कौनसा सन्तुलन शक्ति खड़ा कर सकती हूं। मेरे खयालसे तो देशी राजाओंकी परिषद (कौंसिल आफ प्रिन्सेज) स्थापित करनेसे इसका हल निकल आयेगा अथवा उसी विचारका विस्तार करके न सिर्फ देशी राजाओंकी बल्कि कुछ और भी बड़े लोगोंकी प्रीवी कौंसिल बना दी जाय। ..."¹²

पांच सप्ताहके बाद १९ जून १९०६ को भारत मंत्रीने वाइसरायको फिर लिखा: "हरएक आदमी हमें चेतावनी दे रहा है कि भारतमें एक नया उत्साह बढ़ रहा है और भारत भरमें फैल रहा है। लॉरेंस, चिरोल, सिडनी लो सब यही राग अलाप रहे हैं ... आप इस भावनासे भारतके राज्य नहीं चला सकते ... आपको कांग्रेस दलके और कांग्रेसके सिद्धान्तोंके साथ निपटना ही पड़ेगा ... उनके बारेमें आप कुछ भी विचार रखें। विश्वास रखिये कि थोड़े ही समयमें मुसलमान आपके खिलाफ कांग्रेसियोंके साथ हो जायंगे — इत्यादि इत्यादि। मैं नहीं जानता यह कहां तक सच है।"

लॉर्ड मिंटोके २७ जून, १९०६ के उत्तरसे मालूम होता है कि वे इस सतर्क प्रति पूरी तरह सजग थे।

वादमे जो कुछ हुआ वह इतिहासकी घटना है। १ अक्तूबर, १९०६ को हिज़ हाइनेस आगाखा मुसलमानोका एक शिष्ट-मंडल लेकर लॉर्ड मिन्टोके पास शिमला पहुचे ("आज्ञानुसार उठाया हुआ कदम")। उन्होने कहा, "मुसलमान कौमको एक कौमकी हेसियतसे प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये" और मुसलमानोकी स्थितिका अनुमान "सिर्फ उनके सख्यावल परसे ही न लगाया जाय, वल्कि इस कौमके राजनीतिक महत्त्व (अदम्य राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता स्व० मौलाना मुहम्मदअली इसका अर्थ 'राजनीतिक नपुसकता' किया करते थे!) और उसके द्वारा की हुई साम्राज्यकी सेवाका ध्यान रखकर लगाया जाय।"

लॉर्ड मिन्टोने जिन शव्दोमे इसका उत्तर दिया वे शव्द भविष्यके लिए सम्प्रदायवादी दावोके सवधमे समस्त सरकारी घोषणाओके लिए उदाहरण-स्वरूप वन गये: "मै आपके साथ पूर्णतया सहमत हू।...मै इतना ही कह सकता हू कि मुसलमान कौम इस वातका पूरा विश्वास रखे कि कौमके रूपमे उसके राजनीतिक अधिकारो और उसके हितोकी रक्षा ऐसे किसी भी प्रशासनिक पुनर्गठनमें की जायगी, जिससे मेरा सवध होगा।"

वाइसरॉयके पास मुसलमानोका शिष्ट-मडल हो आया, उसके वाद उसी वर्ष मुस्लिम लीगकी स्थापना की गई।

हिज हाइनेस आगाखाके कार्यके मूल और स्वरूपके विषयमें 'लेडी मिन्टोकी डायरी' से (३ अक्तूबर, १९०६ की) अच्छा प्रकाश पड़ता है। 'महान मुस्लिम नेता' नवाव मोहसिन-उल-मुल्ककी मृत्युका उल्लेख करते हुए उनका एक गुण यह वताया गया है· "हालके मुस्लिम शिष्ट-मण्डलकी वाजी जमानेवाले वे ही थे।" उसी डायरीमें १ अक्तूबर, १९०६ के दिनको "एक अत्यन्त घटनापूर्ण दिवस तथा भारतीय इतिहासमें एक युगके समान" वताते हुए दूसरी एक इतनी ही रहस्यका उद्‌घाटन करनेवाली वात लिखी गई है। उस दिन लेडी मिन्टोको एक सरकारी कर्मचारीका (उसका नाम नही खोला गया है) एक पत्र मिला, जिसमें यह लिखा था: "मुझे आपको यह वताना चाहिये कि आज एक वहुत वडे महत्त्वकी घटना हुई है, राजनीतिक कुशलताका एक ऐसा कार्य हुआ है, जिसका भारत और भारतके इतिहास पर आगामी अनेक वर्षो तक प्रभाव पडेगा। उसने ६ करोड २० लाख मनुष्योको राजद्रोही विरोध-पक्षमे सम्मिलित होनेसे वचा लिया है।"

दार्शनिक राजनीतिज्ञ भारत-मंत्रीने २८ जनवरी, १९०९ के अपने पत्रमें वाइसरॉयको चेतावनी दी. "हमे यह सावधानी रखनी होगी कि मुसलमानोको अपनानेमे हम अपने हिन्दू साथियोको न छोड दे; और इसलिए मुसलमानोकी दिशामे जिस हद तक हम जानेको तैयार है या जा सकते हैं, उसे वोलकर वताना असभव हो जाता है।"

मुसल्मानाकी एक ' ऐसी कौम है जो ब्रिटिश
द्वारा इन शब्दामें प्राट हुइ , उदय हानेके
राज्यमें बरबाद हो गई। '

यह भावना १८८२ के आसपास राष्ट्रवादी आन्दोलनका उदय हानेके बाद अधिक तीव्र हो गई। इस आन्दोलनमें हिन्दुआका बुद्धिशाला वग जो अधिक आगे बढा हुआ था स्वभावत अधिक प्रमुख रहा। भारताय राष्ट्राय काग्रेसका प्रथम अधिवेशन १८८५ में बबईमें हुआ। उसमें केवल दा मुसल्मान उपस्थित थे। दूसरा अधिवेशन अगले वष कलकत्तामे हुआ। उसमें ३३ मुसलमान शामिल हुए। और छठा अधिवेशन १८९० मे हुआ जिसमें कुल ७०२ प्रतिनिधियामें से १५६ याना २२ प्रतिशत प्रतिनिधि मुसल्मान थे। अधिकाधिक मुसलमान इस राष्ट्रीय आन्दोलनका आर आकर्षित हाने लगे इसलिए ब्रिटिश सरकार बेचन हा गई। उसके बाद मुसलमानाका ब्रिटिश लाग्य प्रति वफादार बनानेकी नाति भारत सरकारका स्वाकृत नीति हा गइ।

११ मइ १९०६ को तत्कालान वाइसरॉय लाड मिन्टोके नाम लिखे एक पत्रम भारत-मत्री लाड मोर्लेन ब्रिटिश युवराजक साथ जो भारतमें आये थे हुई अपनी वातचीतका उल्लेख करते हुए यह लिखा उन्हाने (युवराजने) राष्ट्रीय काग्रसके तेज गतिसे शक्तिशाली बननेकी बात कही। हम इसे पसन्द करे या न करे वस्तुस्थिति तो यही है। "

लॉड मिन्टोने यह उत्तर दिया म इन दिनो इस सम्बन्धमें काफी सोचता रहा हू कि काग्रेसके ध्ययाके सामने कौनसी सन्तुलन-शक्ति खडी की जा सकती है। मेरे खयालसे ता देशी राजाआकी परिषद् (कौसिल आफ प्रिन्सेज) स्थापित करनेसे इनका हल निकल आयेगा अथवा उसी विचारका विस्तार करके न सिर्फ देशी राजाआको बल्कि कुछ और भी बडे लोगाकी प्रीवी कौंसिल बना दी जाय। "

पाच सप्ताहके बाद १९ जून १९०, को भारत-मत्रीने वाइसरायका फिर लिखा हरएक आदमी हमें चेतावनी दे रहा है कि भारतमें एक नया उत्साह बढ रहा है और भारत भरमे फैल रहा है। लॉरेन्स गिरोल सिडना लो सब यही राग अलाप रहे ह आप इसी भावनासे भारतका राज्य नहा चला सकते आपको काग्रस दल और काग्रेसके सिद्धान्तोके साथ निबटना ही पडेगा भले उनके बारेमें आप कुछ भी विचार रखें। विश्वास रखिये कि थोडे ही समयमें मुसल्मान आपके खिलाफ काग्रेसियाक साथ हो जायगे — इत्यादि इत्यादि। मैं नहा जानता यह कहा तक सच है।

लाड मिन्टोके २७ जून १९०६ क उत्तरसे मालूम होता है कि व इस खतरेके प्रति पूरी तरह सजग थे।

वादमे जो कुछ हुआ वह इतिहासकी घटना है। १ अक्तूबर, १९०६ को हिज़ हाइनेस आगाखा मुसलमानोका एक शिष्ट-मडल लेकर लॉर्ड मिन्टोके पास शिमला पहुचे ("आज्ञानुसार उठाया हुआ कदम")। उन्होने कहा, "मुसलमान कौमको एक कौमकी हैसियतसे प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये" और मुसलमानोकी स्थितिका अनुमान "सिर्फ उनके सख्यावल परसे ही न लगाया जाय, वल्कि इस कौमके राजनीतिक महत्त्व (अदम्य राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता स्व० मौलाना मुहम्मदअली इसका अर्थ 'राजनीतिक नपुसकता' किया करते थे!) और उसके द्वारा की हुई साम्राज्यकी सेवाका ध्यान रखकर लगाया जाय।"

लॉर्ड मिन्टोने जिन शब्दोमे इसका उत्तर दिया वे शब्द भविष्यके लिए सम्प्रदायवादी दावोके सवघमे समस्त सरकारी घोपणाओके लिए उदाहरण-स्वरूप वन गये : "मै आपके साथ पूर्णतया सहमत हू।... मै इतना ही कह सकता हू कि मुसलमान कौम इस वातका पूरा विश्वास रखे कि कौमके रूपमे उसके राजनीतिक अधिकारो और उसके हितोकी रक्षा ऐसे किसी भी प्रशासनिक पुनर्गठनमें की जायगी, जिससे मेरा सवध होगा।"

वाइसरॉयके पास मुसलमानोका शिष्ट-मडल हो आया, उसके वाद उसी वर्प मुस्लिम लीगकी स्थापना की गई।

हिज़ हाइनेस आगाखाके कार्यके मूल और स्वरूपके विपयमे 'लेडी मिन्टोकी डायरी' से (३ अक्तूवर, १९०६ की) अच्छा प्रकाश पडता है। 'महान मुस्लिम नेता' नवाव मोहसिन-उल-मुल्ककी मृत्युका उल्लेख करते हुए उनका एक गुण यह वताया गया है "हालके मुस्लिम शिष्ट-मण्डलकी वाजी जमानेवाले वे ही थे।" उसी डायरीमें १ अक्तूवर, १९०६ के दिनको "एक अत्यन्त घटनापूर्ण दिवस तथा भारतीय इतिहासमे एक युगके समान" वताते हुए दूसरी एक इतनी ही रहस्यका उद्घाटन करनेवाली वात लिखी गई है। उस दिन लेडी मिन्टोको एक सरकारी कर्मचारीका (उसका नाम नही खोला गया है) एक पत्र मिला, जिसमें यह लिखा था. "मुझे आपको यह वताना चाहिये कि आज एक वहुत वडे महत्त्वकी घटना हुई है, राजनीतिक कुशलताका एक ऐसा कार्य हुआ है, जिसका भारत और भारतके इतिहास पर आगामी अनेक वर्षो तक प्रभाव पडेगा। उसने ६ करोड २० लाख मनुष्योको राजद्रोही विरोध-पक्षमे सम्मिलित होनेसे वचा लिया है।"

दार्शनिक राजनीतिज्ञ भारत-मन्त्रीने २८ जनवरी, १९०९ के अपने पत्रमें वाइसरॉयको चेतावनी दी· "हमे यह सावधानी रखनी होगी कि मुसलमानोको अपनानेमे हम अपने हिन्दू साथियोको न छोड दे, और इसलिए मुसलमानोकी दिशामे जिस हद तक हम जानेको तैयार है या जा सकते है, उसे वोलकर वताना असभव हो जाता है।"

किन बादमें जब इस नीतिके परिणाम भविष्यकी सभावनाओंकी
ग़की कराने लगे, तो लाड मोर्लेके भीतर वठा हुआ उदार मतवादी
तिन वेचनी महसूस करने लगा। ६ अगस्त १९०९ का उन्होंने सर
डोर मारिसनके सबधमें, जो इण्डिया कौसिलमें अपने मुस्लिम मुव
ओका दावा जरूरतसे ज्यादा जोशके साथ पश कर रहे थे, लिखा
ारिसन अपने मुसलमान मित्रोके बारेमें अतिम समय तक अपनी बातको
ड़े रखता है, हमारे वचनोके पालनका आग्रह करता है और भविष्य
ाणी करता है कि मुसलमानोकी फटकार और असतोषका तूफान खडा
हो जायगा। ऐसा हो भी सकता है। दूसरी ओर जी० की आगाही यह है कि
हमने अपने खरीतेमें जो माग स्वीकार किया है, उससे हटने पर कमसे कम
उतनी ही फटकार और असतोषका सामना हिंदुओंकी ओरसे भी हमें करना
पडेगा।'

२६ अगस्तको उन्होंने लाड मिन्टोको फिर लिखा "मारिसन मुझसे कहते
है कि एक मुसलमान मुझसे मिलने यहा आ रहा है। कुछ भी हो, मुझे
पूरा विश्वास है कि अब समय आ गया है जब हमें दृढ़तासे उन्हें बता देना
चाहिये कि यह सौदेबाजी बहुत दिन चल चुकी है अब और नहीं चलेगी। मुझे
इतना ही दुख है कि हम इससे पहले ऐसा नही कर सके।"

इस दुखद घटनाके बारेमें ६ दिसम्बर, १९०९ की डायरीमें आखिरी
बात जो लिखी गई उससे मालूम होता है कि भारत मत्री वाइसरॉयको लिखे
हुए अपनी चिढ़को छिपा न सके 'हमारे मुसलमानोसे सम्बन्धित झगडेमें मैं
अब फिर आपका अनुसरण नहीं करूगा। मै आपको आदरपूर्वक एक बार
फिर इतनी याद दिला देना हू कि उनकी अतिरिक्त मागोंके बारेमें आपके
प्रारभिक भाषणने ही मुसलमानोको सर्वप्रथम वे दावे करनेकी प्रेरणा दी।
मेरा विश्वास है कि मेरा निर्णय उत्तम था।'

परन्तु अब देर बहुत हो चुकी थी। 'काग्रेसके ध्येयोके विरुद्ध सतुलन" के
रूपमें मिन्टो मोर्ले सुधारोंमें साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी बात पैदा कर दी गई।
६ करोड २० लाख मुसलमानोको राजद्रोहियोकी पक्तिमें सम्मिलित होनेसे 'रोक
दिया गया'। (लॉर्ड कर्जनकी सृष्टि) पूर्वी बगालके एक गवर्नर सर बैम्पफिल्ड
फुलरने इस नई नीतिका सार एक शब्द प्रयोग — 'प्रिय पत्नी' की नीति —
में प्रगट किया था। गांधीजीने इसे 'वानर-न्याय' या अधिक लाक्षणिक नाम
दिया। यह किस्सा इस प्रकार है कि दो बिल्लियोमें एक रोटीके लिए झगडा
हुआ। वे अपना झगडा तय करानेके लिए 'न्यायमूर्ति बन्दर' के पास गईं।
उस चालाक 'न्यायाधीश' ने न्याय करनेकी अपनी फीसके रूपमें पूरी रोटी
हड़प ली और बेचारी बिल्लियोके हिस्सेमें उसका एक टुकडा भी नहीं आया।

सबसे बड़े आश्चर्यकी बात तो यह थी कि जिस सत्ताने जान-बूझकर संप्रदायवादकी 'प्रेरणा दी', उसीने राष्ट्रवादी भारतको इस संप्रदायवादको धराशायी करने या स्वराज्यसे वंचित रहनेकी बात कही। सांप्रदायिक निर्वाचन-मंडलोंकी तरकीबने अपना सोचा हुआ हेतु इतनी अच्छी तरह पूरा किया कि १० वर्षके बाद हम देखते हैं कि तत्कालीन भारत-मंत्री मॉन्टेग्यू और वाइसरॉय लॉर्ड चेम्सफोर्डने अपने निवेदनमें यह लिखा. "धर्मों और वर्गोंके आधार पर विभाग करनेका अर्थ यह होता है कि एक-दूसरेके विरुद्ध संगठित हुईं तथा मनुष्योंको देशके नागरिकोंके रूपमें नहीं परन्तु पक्षकारोंके रूपमें सोचना सिखायें ऐसी राजनीतिक दलबन्दियां खड़ी करना। इसलिए हम किसी भी साम्प्रदायिक निर्वाचन-प्रणालीको स्वशासनके सिद्धान्तके विकासके लिए बहुत गम्भीर रुकावट मानते हैं।"[१३] मॉन्टफोर्ड सुधार योजनाके निर्माताओंने आगे चलकर यह भी कहा कि यह सिद्धान्त एक बार पूरी तरह स्थापित हो जानेके बाद इतनी अच्छी तरह काम करता है, साम्प्रदायिकताको इतना सुदृढ बना देता है, कि हम चाहें तो भी फिर उसे छोड़ नहीं सकते।

इसलिए सांप्रदायिक मताधिकारकी प्रणाली मॉन्टफोर्ड सुधारोंमें भी कायम रखी गई।

खिलाफतके महत्त्वपूर्ण जमानेमें (१९२०–२४) थोड़े समयके लिए देशमें राष्ट्रवादका बोलबाला रहा और सांप्रदायिक शत्रुता बिलकुल भुला दी गई।[१४] हिन्दू-मुस्लिम-एकताके इस सुनहरे कालको वापस लानेके लिए गांधीजी जीवनके अन्त तक आकाश-पाताल एक करते रहे। खिलाफत-आन्दोलनके ठप हो जानेके बाद — यानी मुस्तफा कमाल पाशाके खिलाफतकी संस्थाको उठा देनेके पश्चात् — सम्प्रदायवादको फिर गति दी गई और लगभग आखिर तक ब्रिटिश सत्ता स्वाधीनता-संग्राममें राष्ट्रवादी शक्तियोंको विफल करनेके लिए जान-बूझकर "फूट फैलाकर राज्य करने" की कलाका प्रयोग करती रही। श्री राम्से मैकडोनल्डके नेतृत्वमें शासन करनेवाली मजदूर-सरकारके भारत-मंत्री लॉर्ड ओलिवियरने स्पष्ट शब्दोंमें यह बात स्वीकार की है "भारतीय परिस्थितिका घनिष्ठ परिचय रखनेवाला कोई भी व्यक्ति इससे इनकार करनेको तैयार नहीं होगा कि भारतके ब्रिटिश सत्ताधारियोंका मानस अंशत. गहरी सहानुभूतिके कारण, परन्तु **अधिकतर हिन्दुओंकी राष्ट्रीय भावनाके विरुद्ध एक सन्तुलनके रूपमें** मुख्यत. मुस्लिम कौमके प्रति पक्षपाती है।"[१५] (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

सम्प्रदायवादका राक्षस अब अपनी अकल्पित लीलाओंके द्वारा अपने स्रष्टाके लिए समय समय पर सिरदर्द पैदा करने लगा था। इस कारण उससे निबटनेकी पद्धतिमें कभी कभी व्यूहात्मक दृष्टिसे परिवर्तन करना आवश्यक हो जाता था। इस नई पद्धतिका अमल अगले अवसर पर किया गया था।

लेकिन बादमें जब इस नीतिके परिणाम भविष्यकी सम्भावनाओंका
घोड़ा झांकी कराने लगे, तो लार्ड मॉर्लेके भीतर बैठा हुआ उदार मतवादी
राजनीतिज्ञ बेचैनी महसूस करने लगा। ६ अगस्त १९०९ को उन्होंने सर
थियोडोर मॉरिसनके सम्बन्धमें जो इण्डिया कौंसिलमें अपने मुस्लिम मुव-
क्किलोंका दावा जरूरतसे ज्यादा जोरके साथ पेश कर रहे थे लिखा :
'मॉरिसन अपने मुसलमान मित्रोंके बारेमें अन्तिम समय तक अपनी बातको
पकड़े रखता है, हमारे वचनोंके पालनका आग्रह करता है और भविष्य-
वाणी करता है कि मुसलमानोंका फटकार और असन्तोषका तूफान खड़ा
हो जायगा। ऐसा हो भी सकता है। दूसरी ओर आ० को आगाही देते हैं कि
हमने अपने सुधारोंमें जो मांग स्वीकार की है, उससे हटने पर कमसे कम
उतना ही फटकार और असन्तोषका सामना हिन्दुओंकी ओरसे भी हमें करना
पड़ेगा।'

२६ अगस्तको उन्होंने लार्ड मिन्टोको फिर लिखा : 'मॉरिसन मुझसे कहते
हैं कि एक मुसलमान मुझसे मिलने यहां आ रहा है। ... कुछ भी हो मुझे
पूरा विश्वास है कि अब समय आ गया है जब हमें दृढ़तासे उन्हें बता देना
चाहिये कि यह मोर्चेबाजी बहुत दिन चल चुकी है अब और नहीं चलेगी। मुझे
इतना ही दुःख है कि हम इससे पहले ऐसा नहीं कर सके।'

इस दुःखद घटनाके बारेमें ६ दिसम्बर, १९०९ की डायरीमें आखिरी
बात जो लिखी गई उससे मालूम होता है कि भारत-मंत्री वाइसरायको लिखते
हुए अपनी चिढ़को छिपा न सके : 'हमारे मुसलमानोंसे सम्बन्धित मामलेमें मैं
अब फिर आपका अनुसरण नहीं करूंगा। मैं आपको आदरपूर्वक एक बार
फिर इतनी याद दिला देता हूं कि उनकी अतिरिक्त मांगोंके बारेमें आपके
प्रारम्भिक भाषणने ही मुसलमानोंको [illegible] व दावे करनेकी प्रेरणा दी।
मेरा विश्वास है कि मेरा निर्णय उचित था।'

परन्तु अब देर बहुत हो चुकी थी। बहुसंख्यक सम्प्रदायके विरुद्ध सन्तुलन 'के
रूपमें मिन्टो-मार्ले सुधारोंमें साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी बात पैदा कर दी गई।
६ करोड़ २० लाख मुसलमानोंको राजद्रोहियोंकी पंक्तिमें सम्मिलित होनेसे रोक
दिया गया। (लॉर्ड कर्जनकी नीति) पूर्वी बंगालके एक गवर्नर सर बैम्फिल्ड
फुलरने इस नई नीतिका सार एक दम स्पष्ट — 'प्रिय पत्नी' की नीति —
में प्रगट किया था। लोगोंने इस 'बानर-न्याय' का अधिक लोकप्रिय नाम
दिया। यह किस्सा इस प्रकार है कि दो बिल्लियोंमें एक रोटीके लिए झगड़ा
हुआ। वे अपना झगड़ा तय करानेके लिए न्यायमूर्ति बन्दरके पास गईं।
उस चालाक न्यायाधीशने न्याय करनेका अपना ढंग [illegible] पूरी रोटी
हड़प ली और बेचारी बिल्लियोंके हिस्सेमें उसका एक टुकड़ा भी नहीं बचा।

सवसे वडे आश्चर्यकी वात तो यह थी कि जिस सत्ताने जान-बूझकर संप्रदायवादकी 'प्रेरणा दी', उसीने राष्ट्रवादी भारतको इस संप्रदायवादको धराशायी करने या स्वराज्यसे वचित रहनेकी वात कही। साप्रदायिक निर्वाचन-मडलोकी तरकीवने अपना सोचा हुआ हेतु इतनी अच्छी तरह पूरा किया कि १० वर्षके वाद हम देखते है कि तत्कालीन भारत-मत्री मॉन्टेग्यू और वाइसरॉय लॉर्ड चेम्सफोर्डने अपने निवेदनमे यह लिखा . "धर्मो और वर्गोके आधार पर विभाग करनेका अर्थ यह होता है कि एक-दूसरेके विरुद्ध सगठित हुई तथा मनुष्योको देशके नागरिकोके रूपमे नही परन्तु पक्षकारोके रूपमे सोचना सिखाये ऐसी राजनीतिक दलवन्दिया खडी करना। इसलिए हम किसी भी साम्प्रदायिक निर्वाचन-प्रणालीको स्वशासनके सिद्धान्तके विकासके लिए वहुत गम्भीर रुकावट मानते है।"[१३] मॉन्टफोर्ड सुधार योजनाके निर्माताओने आगे चलकर यह भी कहा कि यह सिद्धान्त एक वार पूरी तरह स्थापित हो जानेके वाद इतनी अच्छी तरह काम करता है, साम्प्रदायिकताको इतना सुदृढ वना देता है, कि हम चाहे तो भी फिर उसे छोड नही सकते।

इसलिए साप्रदायिक मताधिकारकी प्रणाली मॉन्टफोर्ड सुधारोमे भी कायम रखी गई।

खिलाफतके महत्त्वपूर्ण जमानेमे (१९२०–२४) थोडे समयके लिए देशमे राष्ट्रवादका वोलवाला रहा और साप्रदायिक शत्रुता विलकुल भुला दी गई।[१४] हिन्दू-मुस्लिम-एकताके इस सुनहरे कालको वापस लानेके लिए गाधीजी जीवनके अन्त तक आकाश-पाताल एक करते रहे। खिलाफत-आन्दोलनके ठप हो जानेके वाद —यानी मुस्तफा कमाल पाशाके खिलाफतकी सस्थाको उठा देनेके पश्चात् —सम्प्रदायवादको फिर गति दी गई और लगभग आखिर तक ब्रिटिश सत्ता स्वाधीनता-सग्राममे राष्ट्रवादी शक्तियोको विफल करनेके लिए जान-बूझकर "फूट फैलाकर राज्य करने" की कलाका प्रयोग करती रही। श्री राम्से मैकडो-नल्डके नेतृत्वमे शासन करनेवाली मजदूर-सरकारके भारत-मत्री लॉर्ड ओलि-वियरने स्पष्ट शब्दोमे यह वात स्वीकार की है "भारतीय परिस्थितिका घनिष्ठ परिचय रखनेवाला कोई भी व्यक्ति इससे इनकार करनेको तैयार नही होगा कि भारतके ब्रिटिश सत्ताधारियोका मानस अशत गहरी सहानुभूतिके कारण, परन्तु **अधिकतर हिन्दुओंकी राष्ट्रीय भावनाके विरुद्ध एक सन्तुलनके रूपमें** मुख्यत मुस्लिम कौमके प्रति पक्षपाती है।"[१५] (मोटे टाइप मैने किये है।)

सम्प्रदायवादका राक्षस अव अपनी अकल्पित लीलाओके द्वारा अपने स्रष्टाके लिए समय समय पर सिरदर्द पैदा करने लगा था। इस कारण उससे निवटनेकी पद्धतिमे कभी कभी व्यूहात्मक दृष्टिसे परिवर्तन करना आवश्यक हो जाता था। इस नई पद्धतिका अमल अगले अवसर पर किया गया था।

जनवरी १९२५ में तत्कालीन भारत मन्त्री लॉर्ड बर्कनहेडने वाइसराय लार्ड रीडिंगको लिखा "जितना ही यह स्पष्ट किया जाता है कि ये आपसके वैर-द्वेष (जिन्हें राष्ट्रवाद सम्प्रदाय और धर्मके अनन्त भेदोंका समर्थन प्राप्त है) गंभीर हैं और भारतकी आबादीके विशाल और बेमेल वर्गों पर प्रभाव डालते हैं उतना ही यह वस्तु अधिक स्पष्ट होती जाती है कि उनके बीच मेल करानेवाले मध्यस्थका भाग हम और सिर्फ हम ही अदा कर सकते हैं। "

तीन वर्ष बाद, राजनीतिक सुधारोंकी अगली किस्तका निर्णय करनेके लिए मॉन्टफोर्ड योजनाके निर्माताओंने जो १० वर्षकी अवधि निश्चित की थी, वह पूरी होनेवाली थी और आगामी चुनावोंमें मजदूर-दलके सत्तारूढ़ होनेके आसार दिखाई दे रहे थे। नवम्बर १९२७ में 'केवल गोरोंके बने हुए" साइमन कमीशनकी नियुक्तिके बारेमें घोषणा की गई। यह कमीशन १९२१ में आरंभ किये गये वैधानिक सुधारों (मॉन्टफोर्ड सुधारों) की प्रगति पर अपनी रिपोर्ट देनेवाला था और नये सुधारोंके बारेमें अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करनेवाला था। बताया तो यह गया था कि 'भारतीय राजनीतिक दबाव" के कारण ऐसा किया गया है। परन्तु वास्तवमें कारण यह था कि '१९२८ में नियुक्त किये जानेवाले कमीशनकी नियुक्तिका काम हमारे उत्तराधिकारियोंके हाथमें जाय ऐसा रत्तीमात्र भी खतरा उठाना हमें पुसा नहीं सकता था।'[१३]

सरकारके इस कदमके खिलाफ भारतमें इतना उग्र विरोध खड़ा हुआ कि न केवल कांग्रेसने बल्कि कई और राजनीतिक दलोंने भी — जिनमें जिन्नाके नेतृत्वमें मुस्लिम लीगका एक वर्ग भी था — उस कमीशनका बहिष्कार किया। इस पर लार्ड बर्कनहेड महोदयने वाइसराय लार्ड इर्विनको १० जनवरी, १९२८ का यह आदेश भेजा "हमने बहिष्कारके रवैयेको तोड़ देनेके लिए हमेशा बहिष्कार न करनेवाले मुसलमानों पर, दलित जातियों पर व्यापारियों और उद्योगपतियों पर तथा अनेक दूसरे हितों पर आधार रखा है।'[१४] इसके सिवा 'साइमनको मेरी यह सलाह है कि वे हर कदम पर कमीशनका बहिष्कार न करनेवाले महत्त्वपूर्ण लोगोंसे विशेषतः मुसलमानोंसे और दलित वर्गवालोंसे मिलते रहें। मुझे मुसलमान प्रतिनिधियोंके साथ उनकी मुलाकातोंका व्यापक विज्ञापन करना होगा। इस समय हमारी संपूर्ण नीति यह है कि **विशाल हिन्दू समाजको इस भयसे आतंकित कर दिया जाय कि कमीशन मुसलमानोंके हाथमें आ गया है, इसलिए वह हिन्दुओंकी स्थितिके लिए सर्वथा विनाशकारी सिद्ध हो ऐसी रिपोर्ट पेश कर सकता है। इससे हमें मुसलमानोंका ठोस समर्थन प्राप्त हो जायगा, और जिन्ना साहब अलग पड़ जायंगे।**"[१५] (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

फूट फैलानेके अन्य कई उपाय लॉर्ड महोदयके उसी पत्रमे इन शब्दोमे सुझाये गये थे : "औपनिवेशिक दरजे (डोमिनियन स्टेटस)का अर्थ है 'अपने भाग्यका स्वय निर्णय करनेका अधिकार' और यह अधिकार हम भारतको देनेके लिए तैयार नही है। . . इससे यह नतीजा निकालना उचित होगा कि सम्बन्ध-विच्छेदके आन्दोलनको (ब्रिटेनके साथ सम्बन्ध तोड देनेका आन्दोलन) शत्रुतापूर्ण आन्दोलन माना जाय और ऐसा हो तो उसके प्रतिनिधियोके साथ वैसा ही व्यवहार नही होना चाहिये जैसा दूसरे राजनीतिक आन्दोलनोके प्रतिनिधियोके साथ किया जाता है। क्योकि दूसरे आन्दोलन अनुचित या असामयिक भले ही हो, परन्तु वे गैर-कानूनी नही है।"

इतिहास तो अपनेको नही दोहराता, परन्तु घटनाओके मूलभूत स्वरूप अकसर अपनेको दोहराते है। मिण्टोने जो बोया उसे मोर्लेको काटना पड़ा; लॉर्ड लिनलिथगोने जो कुछ किया उसका मूल्य लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स और सर स्टैफर्ड क्रिप्सको चुकाना पडा। इसके सिवा, ब्रिटिश कूटनीतिकी बदलनेवाली महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओके अनुकूल बननेसे जिन्नाने जब इनकार किया तब, भारतके विभाजनके समय जैसा हुआ उसी तरह, 'जिन्नाको अलग रखनेवाले' ब्रिटिश उच्च अधिकारियोमें लॉर्ड बर्कनहेड अकेले नही थे।

ब्रिटिश सत्ता भारतमे फूट फैलानेवाले प्रवाहको प्रोत्साहन देने और उसे निहित स्वार्थका रूप देनेका कोई भी मौका चूकती नही थी। वह पदविया, ऊचे पद, बडी तनखाहोवाली नौकरिया और दूसरी रियायते तथा ऊपरी आयके साधन — जिनका देना उसके हाथमे था — उन लोगोको देती थी, जो फूटकी हिमायत करते और उसे प्रोत्साहन देते थे। उधर जो लोग विभिन्न धार्मिक समुदायोमें एकता स्थापित करनेका कार्य करते थे, उनकी न केवल उपेक्षा की जाती थी बल्कि वे सरकारके विशेष कोपके भाजन बनते थे। राजनीतिक चर्चाओमे तथा विचार-विमर्शमें प्रतिनिधित्व देनेके बारेमे केवल सम्प्रदायवादी मुस्लिम वर्गको ही सरकारी मान्यता दी जाती थी, परन्तु दूसरे अनेक प्रभावशाली मुस्लिम सगठनोको — जिनमें राष्ट्रवादी मुसलमान भी शामिल थे — मान्यता नही दी जाती थी।

इस नीतिके अनुसार, १९३१ मे लदनमें हुई दूसरी गोलमेज परिषद्में किसी भी राष्ट्रवादी मुसलमानको आमन्त्रित नही किया गया, जब कि ब्रिटिश सत्ताके 'पुराने समर्थक' हिज़ हाइनेस आगाखाको उनकी मुसलमान टोलीका नेता बनाकर निमन्त्रित किया गया, ताकि वे 'दलित वर्गोकी' सहायतासे राजनीतिक सत्ता हस्तातरित करनेकी भारतीय मागका विरोध करे और उसे एक ओर हटवा दें।

जनवरी १९२५ में तत्कालीन भारत-मन्री लार्ड बर्कनहेडने वाइसराय लार्ड रीडिंगको लिखा 'जितना ही यह स्पष्ट किया जाता है कि ये आपसके वर-द्वेष (जिन्हें राष्ट्रवाद सम्प्रदाय और धर्मके अनन्त भेदोंका समर्थन प्राप्त है) गंभीर हैं और भारतकी आबादीके विशाल और बेमेल वर्गों पर प्रभाव डालते हैं उतनी ही यह वस्तु अधिक स्पष्ट होती जाती है कि उनके बीच मेल करानेवाले मध्यस्थका भाग हम और सिर्फ हम ही अदा कर सकते हैं।"[11]

तीन वर्ष बाद, राजनीतिक सुधारोंकी अगली किस्तका निर्णय करनेके लिए मान्टफोर्ड योजनाके निर्माताओंने जो १० वर्षकी अवधि निश्चित की थी, वह पूरी होनेवाली थी और आगामी चुनावोंमें मजदूर-दलके सत्तारूढ होनेके आसार दिखाई दे रहे थे। नवम्बर १९२७ में 'केवल गोरोंके बने हुए' साइमन कमीशनकी नियुक्तिके बारेमें घोषणा की गई। यह कमीशन १९२१ में आरंभ किये गये वैधानिक सुधारों (मांटफोर्ड सुधारों) की प्रगति पर अपनी रिपोर्ट देनेवाला था और नये सुधारोंके बारेमें अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करनेवाला था। बताया तो यह गया था कि भारतीय राजनीतिक दबावके कारण ऐसा किया गया है। परन्तु वास्तवमें कारण यह था कि १९२८ में नियुक्त किये जानेवाले कमीशनकी नियुक्तिका काम हमारे उत्तराधिकारियोंके हाथमें जाय ऐसा रत्तीमात्र भी खतरा उठाना हमें पुसा नहीं सकता था।'

सरकारके इस कदमके खिलाफ भारतमें इतना उग्र विरोध खड़ा हुआ कि न केवल कांग्रेसने बल्कि कई और राजनीतिक दलोंने भी — जिनमें जिन्नाके नेतृत्वमें मुस्लिम लीगका एक वर्ग भी था — उस कमीशनका बहिष्कार किया। इस पर लार्ड बर्कनहेड महोदयने वाइसराय लार्ड इर्विनको १० जनवरी, १९२८ का यह आदेश भेजा हमने बहिष्कारके रवैयेको तोड़ देनेके लिए हमेशा बहिष्कार न करनेवाले मुसलमानों पर दलित जातियों पर व्यापारियों और उद्योगपतियों पर तथा अनेक दूसरे हितों पर आधार रखा है। " इसके सिवा 'साइमनको मेरी यह सलाह है कि वे हर कदम पर कमीशनका बहिष्कार न करनेवाले महत्त्वपूर्ण लोगोंसे विशेषत मुसलमानों और दलित वर्गोंसे मिलते रहें। मुझे मुसलमान प्रतिनिधियोंके साथ उनकी मुलाकातोंका व्यापक विज्ञापन करना होगा। इस समय हमारी संपूर्ण नीति यह है कि विशालों हिन्दू समाजको इस भयसे आतंकित कर दिया जाय कि कमीशन मुसलमानोंके हाथमें आ गया है, इसलिए वह हिन्दुओंकी स्थितिके लिए सर्वथा विनाशकारी सिद्ध हो ऐसी रिपोर्ट पेश कर सकता है। इससे हमें मुसलमानोंका ठोस समर्थन प्राप्त हो जायगा और जिन्ना साहब अलग पड़ जायंगे। " (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

सकेग कि वे सवके सव सरक्षण और समर्थनके लिए अग्रेजोका मुह ताकते रहे। इससे काग्रेसी मत्रि-मडल प्रान्तीय स्वराज्यका पूर्णतया प्रयोग नही कर सकेगे। उनकी इस आशाको गाधीजीकी सयानी, दूरदर्शितापूर्ण और निश्चयपूर्ण दृढताने तथा काग्रेसके वरिष्ठ नेताओकी राजनीतिक प्रतिभाने विफल कर दिया। जव तक इसका विश्वास न दिलाया जाय कि गवर्नर अपनी वीटोकी सत्ता अर्थात् विवान-सभाके कानूनको अथवा मत्रि-मडलके किसी व्यवस्था-सम्वन्धी कदमको रद्द करनेकी सत्ताका तथा सकटका सामना करनेवाली अपनी विशेप सत्ताका उपयोग नही करेगे तथा "मत्रियोके वैवानिक कार्योके सम्वन्धमे उनकी सलाहकी उपेक्षा" नही करेगे, तव तक काग्रेसने पद ग्रहण करनेसे इनकार कर दिया। गवर्नरोने ऐसी 'कुछ जिम्मेदारिया' छोडनेसे इनकार कर दिया, जो पार्लियामेन्टने उन पर रख दी थीं। इसलिए वैधानिक गतिरोध पैदा हो गया। सात प्रान्तोमे विवान-सभाए नही वुलाई गईं और, जैसा प्रोफेसर वेरीडेल कीथने कहा, इस 'गतिरोध' को 'छिपानेके लिए' अन्तरिम मत्रि-मडल नियुक्त कर दिये गये। चार महीने तक काग्रेस अपनी वात पर डटी रही। जव विवान-सभाओको वुलानेकी वैवानिक अवधि समीप आई, तो सरकार—जो "प्रतिप्ठाके मामलोमे हमेशा अतिशय भावुक रहती थी"—झुक गई और सात प्रान्तोमे काग्रेसी मत्रि-मडलोने सत्ता सभाल ली, वाकीके चार प्रान्तोमे स्वतत्र सयुक्त मत्रि-मडल काम करने लगे।

दूसरे नवरके नेताओको विवान-सभाओ और प्रान्तीय मत्रि-मडलोमे भेजकर काग्रेसमे फूट पडनेकी प्रक्रियाको रोक दिया गया। अधिकाश प्रथम श्रेणीके काग्रेसी नेता सरकारसे वाहर रहे। उन्होने काग्रेसी मत्रि-मडलोका मार्गदर्शन करने, उन्हे सुव्यवस्थित वनाने और कठोर अनुशासनमें रखनेके लिए एक पार्लमेन्टरी वोर्डकी स्थापना की। साथ ही गवर्नरोको जिन मत्रि-मडलोकी अध्यक्षता करनेका वैवानिक अधिकार था उनके भीतर वे कोई पड्यत्र न रच सके, इसके लिए काग्रेसी मत्रियोने एक नई कार्य-पद्धति अपना ली। इसके अनुसार काग्रेसी मत्री पहले अपने तमाम महत्त्वपूर्ण प्रश्न आपसमे अनोपचारिक रूपमे विचार-विमर्श करके निवटा लेते थे और मत्रि-मडलकी नियमित वैठकोमें गवर्नरके सामने अपने सर्वसम्मत निर्णय ही रखते थे।

परन्तु व्रिटिश सत्ताने जो कुछ सामनेसे गवाया था, उसका कुछ भाग पिछले दरवाजेसे प्राप्त भी कर लिया। काग्रेसके वहुमतवाले प्रान्तोमें मत्रि-मडल वनाते समय मुस्लिम लीगके सदस्योमे फूट पडी और काग्रेसके साथ सहयोग करनेका रवैया पैदा हुआ। वे लोग सयुक्त सरकारके सदस्य वनकर काग्रेसकी नीति पर अमल करनेमें काग्रेसके साथ सहयोग करनेको उस समय तक तैयार थे जव तक कि उनसे काग्रेसकी प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करनेको न कहा जाय। अपने

देनेके पक्षोंमें परस्पर कोई सफल समझौता न होने देनेकी पूरी सावधानी रखी गई। उनमें इस आशाको प्रोत्साहन दिया गया कि अडियल दलको दूसरी पार्टियां उचित रूपमें जो कुछ दे सकती हैं उसकी अपेक्षा शासक सत्ता हमेशा ही अधिक दे सकेगी। इसका ज्वलन्त उदाहरण १९३२ में सामने आया। उस समय हिंदुओं और मुसलमानोंने अलाहाबादके एकता-सम्मेलनमें परस्पर लगभग पूरा समझौता कर लिया था। एकमात्र महत्त्वपूर्ण प्रश्न जो निबटाना रह गया था वह यह था कि सिंधको जो उस समय बम्बई प्रान्तका एक हिस्सा था मुस्लिम बहुमतवाला अलग प्रान्त बना दिया जाय और पृथक निर्वाचन मंडलके स्थान पर सम्मिलित निर्वाचन प्रणाली अपना ली जाय। परन्तु जिस समय इस सम्मेलनके मुस्लिम प्रतिनिधियोंने इस बात पर कि सिंधको अलग प्रान्त बना दिया जायगा सम्मिलित निर्वाचन-पद्धति स्वीकार की ठीक उसी समय भारत मंत्री सर सेम्युअल होरने रास्ता काट कर वही मांग सम्मिलित मताधिकारके बिना स्वीकार कर ली। नतीजा यह हुआ कि एकता-सम्मेलन असफल रहा।

पृथक निर्वाचन प्रणाली आरंभ की गई उसके बादके २५ वर्षोंमें मुसलमानोंमें काफी बड़ा सम्पन्न मध्यम वर्ग पैदा हो गया। लोकतांत्रिक राजनीतिक सुधारोंकी — जो आगे चलकर १९३५ के भारतीय शासन विधानमें सम्मिलित कर लिये गये — संभावना उत्पन्न होते ही यह सम्पन्न पुराणपंथी मुस्लिम वर्ग अपने भविष्यके विषयमें अनिश्चितता अनुभव करने लगा। इस वर्गकी आर्थिक सहायता और संरक्षणसे मुस्लिम लीगको फिर नया जीवन प्रदान किया गया। जिन्नाको जो दूसरी गोलमेज परिषदके बाद राजनीतिसे निवृत्त होकर इंग्लैण्डकी प्रिवी कौंसिलमें वकालत करने लग गये थे मुसलमानोंका नेतृत्व करनेके लिए वापस बुला लिया गया। उन्होंने मुस्लिम लीगको फिरसे संगठित किया और मुस्लिम सम्प्रदायवादके अपने जीवनकी एक नयी मंजिल आरंभ की। लीग अभी काफी संगठित नहीं हो पाई थी कि इतनेमें १९३७ के चुनाव आ गये। इसका परिणाम यह निकला कि लीगको मुसलमानोंके पांच प्रतिशतसे कम मत मिले और कांग्रेस बहुत बड़े बहुमतसे जीत गई और ११ प्रान्तोंमें से ७ प्रान्तोंमें शासन करनेका उसे निमंत्रण मिला।

१९३५ के भारतीय शासन विधानके निर्माताओंने यह आशा रखी थी कि इससे उनकी सत्ता ज्यादा दृढ़ होगी, क्योंकि प्रान्तीय स्वराज्य देनेके बाद भी विशाल सुरक्षित अधिकारोंके बल पर वे विधान-सभाओंके अन्दर और बाहरके कार्यक्षेत्रोंके बीच फूट पैदा कर सकेंगे और विभिन्न वर्गों और स्थापित स्वार्थोंको एक-दूसरेके विरुद्ध इस तरह रखा

सकेग कि वे सवके सव सरक्षण और समर्थनके लिए अग्रेजोका मुह ताकते रहे। इससे काग्रेसी मत्रि-मडल प्रान्तीय स्वराज्यका पूर्णतया प्रयोग नही कर सकेगे। उनकी इस आशाको गाधीजीकी सयानी, दूरदर्शितापूर्ण और निश्चयपूर्ण दृढताने तथा काग्रेसके वरिष्ठ नेताओंकी राजनीतिक प्रतिभाने विफल कर दिया। जव तक इसका विश्वास न दिलाया जाय कि गवर्नर अपनी वीटोकी सत्ता अर्थात् विधान-सभाके कानूनको अथवा मत्रि-मडलके किसी व्यवस्था-सम्वन्धी कदमको रद्द करनेकी सत्ताका तथा सकटका सामना करनेवाली अपनी विशेष सत्ताका उपयोग नही करेगे तथा "मत्रियोके वैधानिक कार्योके सम्वन्धमे उनकी सलाहकी उपेक्षा" नही करेगे, तव तक काग्रेसने पद ग्रहण करनेसे इनकार कर दिया। गवर्नरोने ऐसी 'कुछ जिम्मेदारिया' छोडनेसे इनकार कर दिया, जो पार्लियामेन्टने उन पर रख दी थी। इसलिए वैधानिक गतिरोध पैदा हो गया। सात प्रान्तोमे विधान-सभाए नही वुलाई गईं और, जैसा प्रोफेसर वेरीडेल कीथने कहा, इस 'गतिरोध' को 'छिपानेके लिए' अन्तरिम मत्रि-मडल नियुक्त कर दिये गये। चार महीने तक काग्रेस अपनी वात पर डटी रही। जव विधान-सभाओको वुलानेकी वैधानिक अवधि समीप आई, तो सरकार—जो "प्रतिष्ठाके मामलोमे हमेशा अतिशय भावुक रहती थी"—झुक गई और सात प्रान्तोमे काग्रेसी मत्रि-मडलोने सत्ता सभाल ली, वाकीके चार प्रान्तोमे स्वतत्र सयुक्त मत्रि-मडल काम करने लगे।

दूसरे नवरके नेताओको विधान-सभाओ और प्रान्तीय मत्रि-मडलोमे भेजकर काग्रेसमे फूट पडनेकी प्रक्रियाको रोक दिया गया। अधिकाश प्रथम श्रेणीके काग्रेसी नेता सरकारसे वाहर रहे। उन्होने काग्रेसी मत्रि-मडलोका मार्गदर्शन करने, उन्हे सुव्यवस्थित वनाने और कठोर अनुशासनमे रखनेके लिए एक पार्लमेन्टरी वोर्डकी स्थापना की। साथ ही गवर्नरोको जिन मत्रि-मडलोकी अध्यक्षता करनेका वैधानिक अधिकार था उनके भीतर वे कोई षड्यत्र न रच सके, इसके लिए काग्रेसी मत्रियोने एक नई कार्य-पद्धति अपना ली। इसके अनुसार काग्रेसी मत्री पहले अपने तमाम महत्त्वपूर्ण प्रश्न आपसमे अनौपचारिक रूपमे विचार-विमर्श करके निवटा लेते थे और मत्रि-मडलकी नियमित वैठकोमे गवर्नरके सामने अपने सर्वसम्मत निर्णय ही रखते थे।

परन्तु व्रिटिश सत्ताने जो कुछ सामनेसे गवाया था, उसका कुछ भाग पिछले दरवाजेसे प्राप्त भी कर लिया। काग्रेसके वहुमतवाले प्रान्तोमे मत्रि-मडल वनाते समय मुस्लिम लीगके सदस्योमे फूट पडी और काग्रेसके साथ सहयोग करनेका रवैया पैदा हुआ। वे लोग सयुक्त सरकारके सदस्य वनकर काग्रेसकी नीति पर अमल करनेमे काग्रेसके साथ सहयोग करनेको उस समय तक तैयार थे जव तक कि उनसे काग्रेसकी प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करनेको न कहा जाय। अपने

मत्रि मडलामें लीगियाको स्थान देना काग्रेस पसन्द करती, परन्तु अग्रजाका पक्षपात करनेवाले लोगोका अपने किलेमें पठने देनेमे उसे भय लगा। इसलिए मुस्लिम लीगको अलग रखकर हा काग्रसी मत्रि मडल बनाये गये। काग्रसके वरिष्ठ नताओका यह निणय गाधीजीके दूरदर्शितापूण उत्तम निणयके खिलाफ था और वह व्यूहात्मक दष्टिस प्रथम श्रेणाकी भूल सिद्ध हुआ। सहयागके लिए जो हाथ बढाया गया था उसे काग्रेसने तो मजबूरीसे अस्वीकार कर दिया लेकिन ब्रिटिश सत्ताने उसे अत्यन्त हपके साथ मजबूतीसे पकड लिया। ज्यो ही अक्तूबर १९३९ में भारतको उसकी इच्छाक विरुद्ध युद्धमें सम्मि लित हुआ घोषित किया गया और इसके विरोधमें प्रान्तोके काग्रसी मत्रि मडलोने त्यागपत्र दे दिये, त्यो ही वाइसराय लाड लिनलियगाने उसस लाभ उठाकर यह घोषणा कर दी कि काग्रेस फिरसे इसी शत पर पदासीन हो सकगा कि जिन प्रान्तोमे काग्रेसका विधान-सभाओमें शुद्ध बहुमत होगा वहा भी वह लीगके साथ मिश्र सरकार बनाय। साथ ही यह घोषणा करके कि मुस्लिम लीग और दूसरे अल्पसख्यकोका समति और स्वीकृतिके बिना कोइ राजनीतिक परिवतन नही किया जायगा उन्होने सपूण राजनीतिक प्रगतिको रोक देनेकी (वाटा) सत्ता रखनेवाले काग्रेस विरोधी पक्षोके सयोगका सर कारी स्वीकृतिकी मुहर-सी लगा दी। ८ अगस्त १९४० को लॉड लिन लियगाने यह घोपणा की 'यह कहनेकी जरूरत नहा कि सम्राटकी सरकार भारतकी शाति और कल्याणकी अपनी वतमान जिम्मेदारियाको किसी एसी सरकारके हाथोमें सौपनका विचार नही कर सकती जिसकी सत्ताको भारतके राष्ट्रीय जीवनके विशाल और बलवान तत्त्व प्रत्यक्ष रूपमें माननस इनकार करत ह। वह इन तत्त्वाको ऐसी किसी सरकारके अधीन रहनक लिए दबानेमें भी शरीक नही हो सकती।

इस प्रकार लाड लिनलियगाने अपने कायकालमे उन तीन बुराइयाका जन्म दिया जिनके खिलाफ बादमें आनवाली मजदूर-सरकारको और लाड लिनलियगोके उत्तराधिकारीको जूझना पडा और उसम उन्हे कोई सफलता नही मिली। य तीन बुराइया थी (१) अल्पमत और बहुमतके बीच समानता (परिटी) की स्थापना करना (२) भारतकी राजनीतिक एकताको छिन्न भिन्न करनकी क्रिया पर ब्रिटिश सरकारकी स्वीकृतिकी मुहर लगाना (३) अल्पमतको शर्तें यदि स्वाकार न की जाय ता उस दलको राजनातिक प्रगतिको रोक दनका अधिकार (वाटा) दना। राष्ट्रवाद और लाकतत्रके नाशका इतना बडा उदाहरण लाड लिनलियगाके पहलेके या बादके किसी वाइसरायके शासन-कालमें नहा मिलता।

१९३५ के भारतीय शासन-विधानका सघ-सम्बन्धी भाग जिन्ना साहबको हमेशा खटकता रहता था, क्योकि उसके द्वारा प्रान्तोकी तरह केन्द्रमे भी जिम्मेदारीका सिद्धान्त आरभ हो जाता। लॉर्ड लिनलिथगोने उसे रद्द कर देनेकी मुस्लिम लीगकी माग स्वीकार कर ली, जब ११ सितम्बर, १९३९ को उन्होने यह घोषणा की कि भारतमे सघीय शासन-तत्र आरभ करनेकी तैयारिया युद्धकालमे स्थगित रहेगी। जिन्नाने राहतकी सास लेकर इस घोषणाका स्वागत किया और मुस्लिम लीगकी कार्यसमितिने १८ सितम्बरको एक प्रस्ताव पास किया, जिसमे सघीय तत्रको स्थगित करनेकी इस कार्र-वाईकी कदर की गई और यह आशा प्रगट की गई कि सघीय तत्रकी योजनाका पूरी तरह त्याग कर दिया जायगा।

भारतको युद्धमें जबरन् सम्मिलित करनेके बारेमे भारतीय राष्ट्रवादियोने जो मजबूत रवैया अपनाया था, उससे चर्चिलके नेतृत्वमे ग्रेट ब्रिटेनकी कट्टरपथी मिश्र सरकार और भारतमे वाइसरॉय लॉर्ड लिनलिथगोकी अधीनतामे काम करनेवाली भारतकी जड़ नौकरशाही बहुत नाराज हुई और उन्होने काग्रेसके खिलाफ मुस्लिम लीगकी सहायता करने और उसे बलवान बनानेमे कोई बात उठा नही रखी।

बंगालमे फजलुल हक एक मिश्र मन्त्रि-मडलके नेता थे और उन्हें विधान-सभाका विश्वास प्राप्त था। परन्तु पदच्युत करनेकी धमकी देकर उन्हे मार्च १९४३ मे त्यागपत्र देनेको विवश किया गया और उसके स्थान पर नाजिमुद्दीनके नेतृत्वमे लीगी मन्त्रि-मडल प्रस्थापित कर दिया गया। गवर्नरने नाजिमुद्दीनको अपनी स्थिति सुदृढ बनानेके लिए मन्त्रियोकी सख्या बढाकर १३ करने दी और उतने ही ससदीय सचिव भी रखने दिये, जब कि फजलुल हकको उन्होने अपने आठ मन्त्रियोके मन्त्रि-मडलको बढ़ाने और उसमे अनुसूचित जातियोके दो मत्री लेनकी इजाजत नही दी थी।

सिन्धमे राष्ट्रवादी मुसलमान अलाहबख्शको, जो प्रान्तीय मन्त्रि-मडलके नेता थे, वहाके गवर्नरने अक्तूबर १९४२ मे पदच्युत कर दिया, क्योकि उन्होने आजादीकी भारतीय राष्ट्रवादी मागको अस्वीकार कर देनेकी ब्रिटिश कार्रवाईके विरोधमे अपनी 'खान बहादुर' और 'ओ. बी. ई 'की पदवी छोड दी थी। उनके स्थान पर गवर्नरने विधान-सभाके लीगी नेताको निमन्त्रित किया और मन्त्रि-मडल बनानेमे उसे सहायता दी।

आसाममें विधान-सभाके स्वतत्र सदस्य रोहिणीकुमार चौधरीका दावा था कि वे मन्त्रि-मडल बनानेकी स्थितिमे है, परन्तु उन्हे निमत्रण न देकर गवर्नरने लीगके नेताको अगस्त १९४२ मे मन्त्रि-मडल बनानेकी सूचना की।

वाइसरॉयकी कार्यकारिणीसे मुस्लिम लीग भी बाहर रही थी।[१] लेकिन कांग्रेसकी तरह उसके बाहर रहनेका कारण यह नहीं था कि ब्रिटनने भारतकी स्वाधीनता नहीं दी, परन्तु यह था कि ब्रिटनने लीगकी सम्प्रदायवादी मांग तुरन्त स्वीकार नहीं की। किन्तु लीगने नकारात्मक रूपमें युद्ध प्रयत्नमें सहयोग दिया — कांग्रेसकी 'भारत छोड़ो' मांगका विरोध करके। इस मांगकी लीगने यह कहकर निन्दा की कि वह ब्रिटिश सरकार पर धौंस जमाने और लीगकी उपेक्षा करनेका प्रयत्न है। इस तरह ब्रिटिश सत्ता और लीगके बीच गहरा गुप्त मेल बना रहा।

व्यक्तिगत रूपमें लीगवादी मुसलमान युद्ध प्रयत्नका प्रबल समर्थन करते रहे। लीगके कुछ सदस्योंने ब्रिटिश युद्धकोषमें सबसे ज्यादा धन दिया और एक वर्गके रूपमें मुसलमानोंको उसका अच्छा पुरस्कार भी मिला। विशेष रूपसे उन प्रान्तोंमें जहां मुस्लिम लीगके मंत्रि-मंडल सत्तारूढ थे, मुसलमानोंको युद्धके ठेकोंके रूपमें तथा वितरण-व्यापारमें युद्धकालीन भावके रूपमें खूब लाभ मिला। इस नये सम्पन्न वर्गने लीगकी पाकिस्तानकी मांगको और ज्यादा प्रोत्साहन और समर्थन दिया।

ब्रिटेनके कट्टरपंथी वैधानिक पंडित एक ऐसे सिद्धान्तका प्रतिपादन करने लगे कि बहुमत द्वारा निर्णय करनेका लोकतांत्रिक सिद्धान्त भारत पर लागू नहीं होता क्योंकि हिन्दू और मुसलमान 'असमान तत्त्व' हैं और इनके मूलभूत नियमोंके बारेमें सहमत नहीं हैं। इसलिए जातिके रूपमें मुसलमानोंका आत्म निर्णयका अधिकार स्वीकार किया जाना चाहिये। इस लोकतंत्र विरोधी और प्रतिगामी चालको मुस्लिम लीगके 'दो राष्ट्र' वाले सिद्धान्तने वैधानिक जामा पहना दिया। इस सिद्धान्त पर चोटीके अनुदार नेताओंने — जिनमें विंटरटन एमेरी ज़टलैण्ड और चर्चिल भी थे — पार्लमेण्टके भीतर और बाहर भाषणों द्वारा अपनी मुहर लगाने और उसका प्रचार करनेकी भरसक कोशिश की। १८ नवम्बर, १९४१ को अपने भाषणमें श्री एमेरीने कहा "गलत हो या सही ब्रिटिश पार्लमेण्टरी ढंगके प्रान्तीय स्वराज्यके अनुभवने मुसलमानोंको इसकी प्रतीति करा दी है कि वे भारतकी ऐसी किसी भी केन्द्रीय सरकारकी अधीनता स्वीकार नहीं कर सकते जिसमें कार्यकारिणी प्रत्यक्ष रूपमें पार्लमेण्टरी बहुमत पर निर्भर हो — **क्योंकि अगर प्रान्तीय अनुभव कुछ बताता है तो यही कि वह बहुमत कांग्रेसके वरिष्ठ नेताओंका आज्ञा-पालन करेगा।**" (मोटे टाइप मेरे किये हैं।) ब्रिटिश सरकारने कांग्रेसको 'हिन्दू' कहकर बदनाम करनेका फैशन भी चला दिया था — यद्यपि उसका द्वार सबके लिए खुला था, मुसलमान बड़ी संख्यामें उसके सदस्य थे, कई बार मुसलमान उसके अध्यक्ष रह चुके थे और उसकी कार्यकारिणीमें भी मुसलमान सदस्य थे। फिर

काग्रेसने विधान-सभाओमे अपने प्रतिनिधियो पर पक्षका अनुशासन पालनेका नियम लगा रखा था, इसके लिए उसे 'सर्वसत्तावादी' कहकर वदनाम किया जाता था, यद्यपि व्रिटिश पक्ष-पद्धतिका सारा आधार ही ऐसे अनुशासन पर है।

यह एक अनोखा सयोग ही रहा होगा — परन्तु है वड़ी महत्त्वपूर्ण वात — कि १९४० के शुरूमे लॉर्ड लिनलिथगोके साथ जिन्ना साहवकी मुलाकात हुई, उसके थोडे समय वाद ही मुस्लिम लीगने अपने दो राष्ट्रोके सिद्धान्तके आधार पर मार्च १९४० के अपने लाहौर-प्रस्तावमे अविकृत रूपसे पाकिस्तानकी माग प्रस्तुत की। उसी मुलाकातमे वाइसरॉयने जिन्नासे यह अनुरोध किया था कि मुस्लिम लीगको अपना 'नकारात्मक रवैया' छोड देना चाहिये और 'ठोस प्रस्ताव' सामने रखने चाहिये। मुस्लिम लीगके लाहौर-प्रस्तावका क्रियात्मक भाग यह था .

> ऐसी कोई वैधानिक योजना मुसलमानोको स्वीकार नही होगी, जिसकी रचना नीचेके वुनियादी सिद्धान्तो पर नही की जायगी। वे सिद्धान्त इस प्रकार है भौगोलिक दृष्टिसे एक-दूसरेके साथ जुडे हुए घटकोको अलग कर दिया जाय और उनमे आवश्यक प्रादेशिक परिवर्तन करके उनके विभाग रचे जाय; और जिन क्षेत्रोमें सख्याकी दृष्टिसे मुसलमानोका वहुमत है — जैसे भारतके उत्तर-पश्चिमी और पूर्वी क्षेत्रोमे — उन्हे मिलाकर ऐसे स्वाधीन राज्य वना दिये जाय, जिनके अगभूत घटक स्वायत्त और सार्वभौम हो।

लॉर्ड लिनलिथगोने मुस्लिम लीगको अपनी शक्ति सुदृढ करनेमे और जिन प्रान्तोमे कांग्रेसने अपने पदोसे त्यागपत्र दे दिया था उनमे मुस्लिम लीगके मत्रि-मडल वनानेमे सहायता देनेकी स्थिर नीति भी अपनाई। जहा युद्धके प्रारम्भमे किसी प्रान्तमे एक भी मुस्लिम लीगी मत्रि-मडल नही था वहा नवम्वर १९४३ मे लॉर्ड लिनलिथगोके अपनी गद्दी छोडनेके समय तक वगाल, आसाम, उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त और सिन्ध चारो प्रान्तोमे — जिन पर लीगने पाकिस्तानकी रचनाके लिए दावा किया था — मुस्लिम लीगके मत्रि-मडल वाइसरॉयके सक्रिय समर्थनसे स्थापित हो चुके थे।

इस दिशामे एक कदम और आगे वढाया गया, जब आगाखा महलके नजरवन्दी कैम्पमे फरवरी १९४३ मे गाधीजीका उपवास आरभ होनेके वाद वाइसरॉयकी कार्यकारिणीके तीन सदस्योने सरकारकी नीतिके विरोधमे अपने त्यागपत्र दे दिये और रिक्त स्थानोकी पूर्तिके लिए लॉर्ड लिनलिथगोने नई नियुक्तिया की। ८ मई, १९४३ को 'दि न्यू स्टेट्समैन एड नेशन' ने टीका की: "नवागन्तुकोकी मडली प्रभावशाली नही मालूम होती, परन्तु उनके वारेमे सवसे महत्त्वपूर्ण वात यह है कि वाइसरॉयकी कौंसिलकी रचनामें मुसलमानो

और हिन्दुओंकी सख्याकी समानताका जिन्ना साहबका आदर्श अब सिद्ध हो गया है। जब एक बार यह प्रथा पड गई तो बादमें अल्पसख्यक जाति अपने स्थापित हितके रूपमें उसके लिए दावा करेगी। यह एक अत्यन्त विचारहीन परिवर्तन मालूम होता है।'

मुस्लिम लीगने ब्रिटिश विरोधी नारे तो फिर भी चालू ही रखे। अन्यथा मुस्लिम आम जनता पर उसका कोई प्रभाव न रहता। लेकिन ब्रिटिश सत्ताके साथ सघर्षमें न आने की सावधानी उसने रखी। इतनी कीमत ब्रिटिश सत्ता अच्छी तरह चुका सकती थी। मुस्लिम लीग जितनी अधिक शक्ति एकत्र कर सकती थी उतनी ही कार्यक्षमताके साथ काग्रेसकी स्वाधीनताकी मागके खिलाफ उसका उपयोग किया जा सकता था।

यह सब होते हुए भी अग्रेजो और लीगके बीच न तो कोई प्रेम था और न एकका दूसरे पर पूरा विश्वास था। दोनो उसे 'सुभीतेका सौदा' समझते थे। लेकिन तत्काल तो दोनो एक-दूसरेके लिए अनिवार्य थे यद्यपि कारण दोनोके अलग अलग थे और ध्येय भी दोनोके बिलकुल समान नही थे। मुस्लिम लीग भारतमें ब्रिटिश सत्ताका समर्थन करती थी। बदलेमें जहा अग्रेजोको काग्रेसके खिलाफ लीगके सहयोगकी आवश्यकता थी वहा "दिखावेमें नही तो व्यवहारमें" तो उसे ब्रिटिश सत्ताका समर्थन प्राप्त ही था। लेकिन जहा लीगके बिना अग्रेज अपना काम चला सकते थे — जैसा कि पजाबमें हुआ — वहा वे दृढतासे लीगको दूर ही रखते थे।

ज्यो ज्यो लीगका यह भान बढ़ता गया कि ब्रिटिश सत्ताके लिए उसका मूल्य और महत्त्व है त्यो त्यो उसका अडियलपन अधिक बढता गया। उसने यह जिद पकड ली कि काग्रेसके साथ समझौतेकी कोई बातचीत तभी हो सकती है जब काग्रेस अपने लिए यह मान ले कि वह एक हिन्दू सम्प्रदायवादी सस्था है और यह भी स्वीकार कर ले कि भारतीय मुसल्मानोकी एकमात्र प्रतिनिधि सस्था मुस्लिम लीग है, साथ ही काग्रेसको यह वचन भी देना चाहिये कि जो मुसलमान मुस्लिम लीगका सदस्य नही होगा उसे वह मान्यता नही देगी। जब यह सर्वथा असभव शर्त मानी नही गई तो उसने यह भी दिखानेका आडबर रचा कि उसकी उदारताकी वृत्तिके साथ धोखा किया गया है।

इस दुराग्रहके रखने कठोर और अपरिवर्तनीय शर्तका स्वरूप ग्रहण किया उससे पूर्व १९३५ में जिन्ना और तत्कालीन काग्रेस अध्यक्ष डा० राजेन्द्रप्रसादके बीच सचमुच एक साम्प्रदायिक समझौता हो गया था। काग्रेसने उस समझौतेको स्वीकार कर लिया था परन्तु बादमें लीगने ऐसी माग की कि मुस्लिम लीगके जैसी ही हिन्दू सम्प्रदायवादी सस्था — हिन्दू महासभा भी उस समझौतेको

माने; और महासभाने जब यह समझौता स्वीकार न किया, तो इसे निमित्त बना कर मुस्लिम लीगने सारा समझौता ही उडा दिया।

मुस्लिम लीगके इस दावेका कि वह भारतके तमाम मुसलमानोका प्रतिनिधित्व करती है, कोई विरोध नही किया जा सकता था, क्योकि लीगने अपनी सदस्यताके आकडे प्रकाशित करनेसे इनकार कर दिया। विरोधी प्रमाणके अभावमे ब्रिटिश सरकारने व्यवहारमे लीगके इस दावेको स्वीकार कर लिया।

लीगका अधिकाश प्रचार नकारात्मक था। उसने पाकिस्तानका रूप कैसा होगा, इसकी व्याख्या करनेसे इनकार कर दिया, और न तो मुसलमानोके सामने और न जिनसे पाकिस्तान मिलनेवाला था उनके सामने कभी पाकिस्तानका पूरा चित्र रखनेकी कोशिश की। उसने तो यह व्याख्या करनेसे भी इनकार कर दिया कि भौगोलिक दृष्टिसे पाकिस्तान कैसा होगा। इसका कारण स्पष्ट था। पाकिस्तानकी सीमारेखाए किसी भी तरह क्यो न खीची जाती, तो भी मुसलमान सारे भारतमे इस तरह बटे हुए थे कि उनका काफी बडा हिस्सा पाकिस्तानके बाहर ही रह जाता। लीग अच्छी तरह जानती थी कि यदि पाकिस्तानकी व्याख्या कर दी गई, "तो करोडो मुसलमानोके लिए —जो पाकिस्तान बननेकी स्थितिमे पाकिस्तानके लाभोसे वचित रह जायगे —लीगका कोई आकर्षण नही रहेगा।"[२२] अन्तमे पाकिस्तानकी व्याख्या भारतके विभाजनके द्वारा ही निश्चित की गई।

बात यह थी कि पाकिस्तानकी कल्पनाका विश्लेषण करने पर वह टिक ही नही सकती थी, परन्तु उससे एक सुन्दर रणनाद अवश्य मिल गया था। उसे एक उज्ज्वल और अनिश्चित आदर्शके रूपमे ही बनाये रखना था। इसलिए जब डॉ० राजेन्द्रप्रसादने १६ अप्रैल, १९४१ को एक वक्तव्यमे लीगके अध्यक्षसे अनुरोध किया कि वे निश्चित भाषामे पाकिस्तानकी व्याख्या प्रस्तुत करे, ताकि काग्रेस उसकी चर्चा कर सके, तो जिन्नाने तिरस्कारपूर्वक इस प्रस्तावको अस्वीकार कर दिया और कहा कि पहले काग्रेसको भारतके विभाजनका 'सिद्धान्त' स्वीकार करना चाहिये।

पहले अग्रेजोका यह दावा रहता था कि भारतका शासन-विधान रचना ब्रिटेनकी विशेष जिम्मेदारी है और वे भारतीयोके हाथमें यह जिम्मेदारी नही सौप सकते। परन्तु ज्यो ही उन्हे पता लग गया कि लीग पर ऐसी शर्तोके लिए आग्रह करनेका आधार रखा जा सकता है—जिन्हे काग्रेस राजनीतिक आत्महत्या किये बिना स्वीकार नही कर सकती—त्यो ही उन्होने स्वाधीनताकी चर्चा करनेके लिए यह शर्त रख दी कि लीग और काग्रेसके बीच पहले समझौता होना चाहिये। और जब काग्रेसने यह शर्त स्वीकार नही की, तो

उन्होंने उस पर अपने ही लिए सत्ता चाहनेका आरोप लगा दिया। इस प्रकार लीगकी हठधर्मी ब्रिटिश सत्ताके लिए तुरुपका पत्ता बन गई।

जब तक भारतमें अंग्रेजोंको अपनी सत्ता बनाये रखनेकी संभावना दिखाई दी तब तक उन्होंने लीगको पाकिस्तानकी मांगको प्रोत्साहन तो दिया, लेकिन उसके साथ वे एकरूप नहीं बने। उन्हें उसका उपयोग मुख्यतः कांग्रेसके राष्ट्रवादके विरुद्ध धमकीके रूपमें *करना था। परन्तु जैसे जैसे लीगको ब्रिटिश* सत्ताके लिए अपने महत्त्वका अधिकाधिक भान होता गया वैसे वैसे वह असंभव शर्तें मनवानेका आग्रह करती गई। परन्तु अंग्रेज उस समय लीगकी मांग स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं थे, यद्यपि उस समय एकको दूसरेकी जरूरत तो थी ही। लीग जिन वर्गोंका प्रतिनिधित्व करती थी उन्हें अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिए अंग्रेजोंके समर्थनकी आवश्यकता थी। और भारतमें ब्रिटिश साम्राज्यवादको उन वर्गोंके समर्थनकी आवश्यकता थी। [११]
इसलिए दोनोंके बीच यह गुप्त मैत्री जारी रही, भले ही दोनोंके लक्ष्य भिन्न थे और इसलिए कभी कभी दोनोंके बीच नोक-झोंक भी हो जाती थी।

कलकत्तेके यूरोपियन स्वामित्ववाले दैनिक पत्र 'दि स्टेट्समैन' के सम्पादक श्री आर्थर मूरने लिखा: "स्वयं भारतीयों द्वारा भारतका शासन विधान रचा जाना चाहिये ऐसे सैद्धान्तिक मांगका आग्रह रख कर — और वह भी युद्धके ही जमानेमें — सम्राटकी सरकारने अपनी अंतिम प्रामाणिकताके प्रति भारतका सन्देह अनिवार्य रूपमें बढ़ा दिया है।" [१]

इस कड़वी वास्तविकताके बढ़ते हुए प्रमाणोंने ही कांग्रेसकी 'भारत छोड़ो' की मांगको जन्म दिया था। यदि जिन्नाने इस मांगको लीगके और अपने विरुद्ध की गई चाल समझा, तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं। क्योंकि यदि वह सफल हो जाती तो कांग्रेसके साथ सौदा करनेकी उनकी शक्ति छिन जाती — अर्थात् स्वाधीनताको रोकनेकी विशेष सत्ता (वीटो) उनके हाथमें न रहती, जो ब्रिटिश सत्ताके भारतमें उपस्थित रहते उन्हें मिली हुई थी।

सम्प्रदायवाद एक कुचक्र है। एक बार उसे चला दिया जाय तो वह अपने आप घूमता रहता है और आगे बढ़ता रहता है। वह विरोधी सम्प्रदायवादको जन्म देता है और फिर दोनों अधिकाधिक जोरके साथ एक-दूसरे पर क्रिया-प्रतिक्रिया करते रहते हैं। अभी तक परिस्थिति इस सीमा तक नहीं पहुंची थी। जिस तीसरे पक्षने इस कुचक्रको चालू किया था वह यदि स्वतंत्रता और बुद्धिमानीसे काम लेता अथवा विकल्पके रूपमें — यदि वह ऐसा करनेमें नैतिक दृष्टिसे असमर्थ हो गया था और गांधीजीके निदानके अनुसार वह ऐसा हो ही गया था — 'भारत छोड़ो' की मांगकी भावनासे प्रेरित होकर भारतसे बिना किसी शर्तके चला गया होता तो उस समय भी सम्प्रदायवादको

अतिम सर्वनाशकी दिशामे आगे बढ़नेसे रोकना असभव नही था। परन्तु १९४४ की स्थितिमे ब्रिटिश तत्रके भीतर तो साम्प्रदायिक त्रिकोणकी समस्याका कोई हल सभव ही नही था। और, उसके वाहर उसका कोई अस्तित्व ही न रहा होता।

३

इसी राजनीतिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमिमे १९४४ की गाधी-जिन्ना वार्ताए हुईं। ब्रिटिश सत्ताके सिवा सभी लोग राजनीतिक गतिरोधसे ऊब गये थे। जिन्ना पर लीगके भीतर और वाहरसे यह दवाव बढ रहा था कि स्वाधीनताका मार्ग साफ करनेके लिए काग्रेसके साथ समझौता कर लिया जाय।

देशमे ऐसी व्यापक आशाए और अपेक्षाए उत्पन्न हो गई थी कि इन वार्ताओका कुछ न कुछ ठोस परिणाम जरूर निकलेगा। एक असाधारण वक्तव्यमे जिन्नाने गाधीजीको 'महात्मा' कहा और कुछ समय तक राजनीतिक सधिकी स्थिति वनाये रखनेकी उनसे अपील की। "यह सभीकी इच्छा रही है कि हम दोनो मिले। अव हम मिल रहे है, तो आप हमारी मदद कीजिये। परिस्थिति पर हमारा कावू हो रहा है। पिछली वातोको भूल जाइये।"[२५]

ब्रिटिश सरकार समझौतेकी सभावनाको देखकर सचमुच परेशान हो उठी। वाइसरॉयने दोनोके मिलनेसे पहले ही जाहिर कर दिया कि, "हिन्दुओ, मुसलमानो और अन्य सभी महत्त्वपूर्ण तत्त्वोके बीच सिद्धान्त रूपमें समझौता होना ही चाहिये;"[२६] उसके वाद ही ब्रिटिश सरकार किसी सीमित अधिकारोवाली अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार वनानेका भी विचार कर सकती है। उसके वाद लन्दनके 'टाइम्स' पत्रमे एक सम्पादकीय लेख निकला "गाधीजी और जिन्ना साहवके वीच हुआ कोई समझौता उनके अनुयायियोके लिए कितना ही सन्तोषजनक क्यो न हो, किन्तु उससे भारतमे राजनीतिक प्रगति होनेमे तव तक कोई ठोस सहायता नही मिलेगी जव तक कि उस समझौतेमे अधिक व्यापक हितोका, . दलित जातियोकी चिन्ताका . . . और राजाओके दावोका विचार न किया जाय।"[२७]

आगामी गाधी-जिन्ना मिलनकी घोषणासे हिन्दुओका एक वर्ग, विशेषत हिन्दू महासभाके सदस्य, क्रोधसे भर गये। धर्मांध नौजवानोकी एक टोलीने दोनोकी यह मुलाकात न होने देनेका निश्चय कर लिया। इस वारेमे सर तेजवहादुर सप्रूको एक पत्रमे मैंने लिखा

> आपने अखवारोमे (हिन्दू महासभाके) घरना देनेवाले स्वयसेवकोकी सेवाग्रामकी करतूतोके वारेमे पढा होगा। . . . पहले दिन टोलीके नायकके मुहसे निकल गया कि यह तो पहला ही कदम है।

जरूरत हुई तो बापूको जिन्नाके पास जानेसे रोकनेके लिए बल प्रयोग किया जायगा। कल उन्होंने सूचना दी कि वे बापूको झोंपडीसे बाहर न निकलने देनेमें शारीरिक बलका उपयोग करेंगे और उन्होंने झोंपडीसे बाहर निकलनेके तीनों रास्तों पर स्वयंसेवक बैठा दिये हैं।

आज सुबह मुझे टेलिफोन पर जिला पुलिस सुपरिटेंडेंटसे सूचना मिली कि स्वयंसेवक गम्भीर शरारत करना चाहते हैं इसलिए पुलिसको मजबूर होकर आवश्यक कारवाई करनी पडेगी। बापूने कहा कि मैं उनके बीच अकेला जाऊंगा और वर्धा (रेल्वे स्टेशन) तक पैदल चलूंगा, स्वयंसेवक स्वयं अपना विचार बदल लें और मुझे मोटरमें जानेको कहें तो दूसरी बात है। बापूके रवाना होनेसे ठीक पहले जिला पुलिस सुपरिटेंडेंट आये और बोले कि धरना देनेवालोंको हर तरहसे समझाने बुझानेका जब कोई फल न निकला तो पूरी चेतावनी देनेके बाद मैंने उन्हें गिरफ्तार कर लिया है।

धरना देनेवालोंका नेता बहुत ही उत्तेजित स्वभाववाला, अविवेकी और अस्थिर मनका आदमी मालूम होता था। इससे कुछ चिन्ता होती थी। गिरफ्तारीके बाद तलाशीमें उसके पास एक बडा छुरा निकला।[१६] जब उसे गिरफ्तार करनेवाले पुलिस अफसरने मजाकमें उससे यह कहा, "कमसे कम तुम्हें शहीद बननेका संतोष तो मिल ही गया," तो तुरन्त उत्तर मिला, "नहीं, वह तो तभी मिलेगा जब कोई गांधीजीकी हत्या करेगा।" पुलिस अफसरने फिर मजाकमें कहा, "नेताओंको क्यों नहीं आपसमें निबट लेने देते? उदाहरणके लिए, सावरकर (हिन्दू महासभाके नेता) आकर यह काम कर लें।" इसका जवाब यह था, "गांधीजीके लिए यह आवश्यकतासे अधिक सम्मानकी बात होगी। इस कामके लिए तो जमादार ही काफी है।"

जिस व्यक्तिका जमादारके रूपमें उल्लेख किया गया था वह उसका साथी मिस्टर नाथूराम विनायक गोडसे था। साढ़े तीन वर्ष बाद यह करुण भविष्य-वाणी चरितार्थ हुई।

कुछ खाकसार उस समय बम्बईमें जमा हो गये थे। यह हिटलरके एस० एस० संगठन जैसा एक अर्ध-सैनिक मुस्लिम संगठन था। इसका आधार सर्वसत्ताधारी नेता (फ्यूहरर) के सिद्धान्त पर था। ये लोग बम्बईमें कायम लीगी सनातनियोंको प्रोत्साहन देनेके लिए उपयुक्त वातावरण उत्पन्न करनेकी दृष्टिसे कुछ दिनोंसे रह थे। साम्यवादी लोग विशाल सभाएं कर रहे थे ताकि दोनों बडे संगठनोंको समझौतेके लिए एकत्र होनेको विवश हो जायें। नाना आक्रमणके विरुद्ध एकके प्रतिरोधको व संगठनको रक्षाको मानते

थे। इस भयसे कि गाधीजी लीगकी पाकिस्तानवाली माग स्वीकार कर लेगे, सिक्ख अपनी 'मिल्कियतके आधार पर' रचे जानेवाले अलग 'सिखिस्तान' की माग लेकर सामने आये! उसका स्पष्ट अर्थ यह था कि सिक्खोने परिश्रम करके जिस प्रदेशकी जमीनको खेतीकी उपजाऊ भूमिमे बदल दिया है तथा जहा उनकी मालिकीकी अधिकतर जमीन है, उस प्रदेशका एक स्वतत्र सार्वभौम सिक्ख राज्य बना दिया जाय। बम्बईके पुलिस अधिकारियोने सावधानीके तौर पर एक आज्ञा निकाल कर, कुछ सडको और सार्वजनिक स्थानो पर आने-जानेकी मनाही कर दी थी। सिर्फ उन्ही लोगोको आने-जानेकी इजाजत थी, जो उन सडकोके आसपासके मुहल्लोमे रहते थे या जिन्हे सचमुच वहाके लोगोसे मिलने जानेकी जरूरत थी। इसमे कायदे आज़म जिन्नाने अपनी ओरसे एक लाक्षणिक घोषणा और जोड दी: "आशा है कि पत्र-प्रतिनिधि यह समझ लेगे कि यह मुलाकात समाचारपत्रोके लिए खुली नही है और इसलिए मै उनसे यह प्रार्थना करूगा कि वे मेरे मकान पर आनेका कष्ट न करे। . फोटोग्राफरो और फिल्म-कम्पनियोको मि० गाधीके पहुचने पर फोटो और फिल्म लेनेकी छूट रहेगी।"

दोनो नेताओकी बातचीत आगे बढ रही थी उस बीच छोटीसी एक नाटकीय घटना भी हो गई। एक दिन खुफिया पुलिसका एक अधिकारी बिडला-भवनमे आया और बोला कि पुलिस कमिश्नरने उसे अरुणा आसफअलीकी तलाशमे भेजा है, जो रातको गाधीजीसे मिलने आयेगी।

गाधीजीने कागजके एक पर्चे पर लिखा, "वे आई तो आप मुझसे क्या कराना चाहेगे?"

"हमारी ऐसी समझ है कि वे अपने-आपको पुलिसके हवाले करने आ रही है।"

"परन्तु मान लीजिये कि वे इस इरादेसे नही आ रही हो तो?"

"तो हम सख्त चौकी रखेगे और अपना काम करेगे। वैसे भी हम जागरूक तो है ही। हमे मालूम हुआ है कि वे सचमुच इस मकानमे ही है।"

गाधीजी हसे. "मुझे तो यह भी मालूम नही कि वे बम्बईमे भी हैं या नही।"

पुलिस अफसरने उन्हे धन्यवाद दिया: "महात्माजी, मुझे विश्वास है कि आप हमे धोखा नही देगे!"

*

जिन्नाके साथ गाधीजीकी बातचीत ९ सितम्बर, १९४४ को आरम्भ हुई और वह बम्बईकी १०, माउन्ट प्लेजेन्ट रोड पर स्थित जिन्नाके मकानमे १८ दिन तक होती रही। बातचीतके दिनोमे ईदका त्योहार आया। उस

दिन गांधीजीने जिन्नाके लिए शहद, गाजर भेजे, जो उनके भोजनके लिए विशेष रूपसे बनाये गये थे। उन्होंने जिन्नाके पास अपना प्राकृतिक चिकित्सक भी बातचीतके दिनोंमें उन्हें मालिश करनेके लिए भेजा था।

दोनों मित्र दोनोंने आपसमें हाथ मिलाये और एक-दूसरेको गले लगाया। उनकी पहली मुलाकातमें सच्ची भावनाओंकी भावनाके दर्शन हुए। महात्माजीका स्वागत करनेके लिए जिन्ना दरवाजेसे बाहर आये और लौटते समय उन्हें विदा करने भी आये। गांधीजीके साथ खड़े रहकर उन्होंने फोटो भी खिंचवाया। विदा होते समय जिन्नाने गांधीजीके साथ उत्साहसे जो हस्तधुनन किया उसमें निराशाके बजाय शिष्टताकी अधिक गहरी भावनाकी झलक थी। परन्तु उसमें इससे अधिक कुछ नहीं था। शुरूमें ही जिन्नाने महात्माजीके प्रतिनिधित्व पर जोर दिया था। परन्तु आखिर वे नरम पड़ गये और वार्ता जारी रखना उन्होंने स्वीकार किया। जब जब वार्ता आगे बढ़ती गई यह सचाई छन छन कर बाहर आने लगी कि चर्चामें दलकी कोई बात नहीं है, केवल रस्मकी ही बात है। कायदे आज़म वस्तुस्थितिको समझने या उस पर चर्चा करनेको भी तैयार नहीं थे। उन्होंने अपनी उपर्युक्त प्रतिनिधित्व सम्बन्धी आपत्ति इसलिए छोड़ दी थी कि 'सत्यशोधक' को सत्यका प्रकाश प्राप्त करनेका अवसर मिले और वह श्रद्धानुसार संघमें सम्मिलित हो जाय!

लौटने पर गांधीजीसे पूछा गया: "क्या जिन्नासे आप कुछ लाये हैं?" महात्माजीका संक्षिप्त उत्तर था: 'मैं केवल फूल लाया हूं।' बादमें उन्होंने राजाजीको अपनी सवा तीन घंटेकी बातचीतका पूरा किस्सा सुनाया। यह अत्यन्त निराशाजनक था:

'यह मेरे धैर्यकी परीक्षा थी। ... मुझे अपने ही धैर्य पर आश्चर्य होता है। लेकिन हमारी बातचीत मित्रतापूर्ण थी।

'आपकी (राजाजीकी) योजनाके लिए और स्वयं आपके लिए उनका (जिन्नाका) तिरस्कार चकित कर देनेवाला है। इससे आपके बारेमें मेरा आदर बढ़ गया कि आप इतने घंटे तक जिन्नासे बातचीत कर सके और आपने उस योजनाको तैयार करनेका कष्ट उठाया।

'वे कहते हैं कि आपने उनकी मांग स्वीकार कर ली है इसलिए मुझे भी स्वीकार कर लेनी चाहिये। मैंने कहा: मैं राजाजीकी योजनाको स्वीकार करता हूं और आप यदि चाहें तो उसे पाकिस्तान कह सकते हैं।' उन्होंने लाहौरके प्रस्तावकी बात की। मैंने कहा: 'मैंने उसका अध्ययन नहीं किया है और उसके बारेमें मैं बात करना नहीं चाहता। हम राजाजीकी योजनाके बारेमें बात करें और आपको उसमें कुछ दोष नजर आते हों तो आप बता सकते हैं।'

"वातचीतके वीचमे उन्होने फिर वही पुराना भूत लाकर खडा कर दिया 'मेरा तो यह खयाल था कि आप एक हिन्दूके रूपमें, हिन्दू काग्रेसके एक प्रतिनिधिके रूपमे यहा आये है।' मैने कहा, 'नही, न तो मै हिन्दूके नाते यहा आया हू और न काग्रेसके प्रतिनिधिके रूपमे। मै यहा एक व्यक्तिके रूपमे आया हू। आप व्यक्तिके रूपमे या लीगके अध्यक्षके रूपमे, जो भी आपको पसन्द हो, मुझसे वात कर सकते है। यदि आप राजाजीसे सहमत हो जाते और उनकी योजना मान लेते, तो आप और वे अपनी अपनी सस्थाओके सामने जाकर उनसे योजनाको स्वीकार करनेकी हिमायत करते। इसीलिए राजाजी आपके पास आये थे। फिर इसी तरह आप उसे दूसरे दलोके सामने रखते। अव यह काम आपको और मुझको करना है।' उन्होने कहा कि वे लीगके अध्यक्ष है। यदि मै अपने सिवा और किसीका प्रतिनिधि नही हू, तो वातचीतका आधार ही कहा रह जाता है? सौदा तय कौन करेगा? मै तो वही आदमी था, जैसा १९३९ मे उन्होने मुझे पाया था। मुझमे कोई परिवर्तन नही हुआ था। मेरे मनमे यह कहनेकी आई, 'हा, मै तो वही आदमी हू और चूकि आप यह मानते है कि मेरे साथ वात करनेसे कोई लाभ नही, इसलिए मै चला जाऊगा।' लेकिन मैने इस लोभका सवरण कर लिया। मैने उनसे कहा, 'क्या एक व्यक्तिको अपनी वात समझा कर आपको उसे नही वदलना चाहिये? मै वेशक वही आदमी हू। यदि आप वदल सके तो मेरे विचार वदल दीजिये। फिर मै पूरे दिलसे आपका समर्थन करूगा।' उन्होने कहा, 'हा, मै जानता हू कि यदि मै आपके विचार वदल सकू, तो आप मेरे अली वन जायगे।'"

वादमे गाधीजीने कहा था, "यह वडा सूचक उद्गार था। मै पाकिस्तानके पैगम्बरसे मिल रहा था और वे अपने अलीको ढूढ रहे थे।"

परन्तु गाधीजीका वर्णन ही आगे वढाया जाय

"उन्होने कहा कि आप पाकिस्तान स्वीकार कर ले, फिर तो मै अन्त तक आपका साथ दूगा। मै जेल जाऊगा। गोलियो तकका सामना करूंगा। मैने कहा, 'उनका सामना करनेके लिए मै आपके साथ खडा रहूगा।' वे वोले, 'शायद आप खडे नही रह सकेगे।' मैने उत्तर दिया, 'मेरी परीक्षा कर लीजिये।'

"हम फिर आपकी (राजाजीकी) योजना पर वापस आ गये। जिन्ना स्वाधीनताके वाद नही, लेकिन इसी समय पाकिस्तान चाहते है। उन्होने कहा, 'हम पाकिस्तान और हिन्दुस्तानके लिए स्वाधीनता लेगे। हम आपसमें समझौता कर ले। फिर हम सरकारके पास जाकर उससे हमारा समझौता स्वीकार करनेके लिए कहे; हमारा हल स्वीकार करनेके लिए उसे विवश कर दें।'

मने कहा म कभी इसके लिए आग्रह नहीं करुंगा। म यह मान सकता हूं कि आप भारत पर विभाजन चाहते है। अगर आप सब लोग अलग होना चाहते है तो म आपको रोक नहीं सकता। मेरे पास आपको जबरन् रोकनेकी शक्ति नहीं है। और हो भी तो म उसका उपयोग नहीं करूगा। उन्होंने कहा मुसलमान पाकिस्तान चाहते है। लीग मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करती है और वह हिन्दुस्तानका विभाजन चाहती है।' मने कहा, म यह मानता हूं कि लीग सबसे प्रबल मुस्लिम सगठन है। म यह भी मान सकता हूं कि उसके अध्यक्षके रूपमें आप भारतके मुसलमानोंके प्रतिनिधि है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि इनके सब मुसलमान पाकिस्तान चाहते है। उस प्रदेशके सब निवासियोंका मत लेकर देख लीजिये।' उन्होंने कहा गैर मुसलमानोंसे इस बारेमें क्या पूछा जाय? मने कहा आप आबादीके एक हिस्सेको लोगोंको मताधिकारसे वंचित नहीं कर सकते। आपको उन्हें अपने साथ रखना होगा और यदि आपका बहुमत है तो फिर आपको क्या डरना चाहिये? फिर किरणशंकर रायने मुझसे जो कुछ कहा था वह मने उन्हें बताया 'यदि बुरासे बुरी बात हुई तो हम बंगाली सब पाकिस्तानमें चले जायेंगे। लेकिन ईश्वरके लिए बंगालके टुकड़े न कीजिये, उसका अग भग न कीजिये।

मने कहा यदि आपका बहुमत है तो आप जो चाहेंगे वही होगा। मैं जानता हू कि यह आपके लिए बुरी बात है। लेकिन फिर भी यदि आप उसे चाहते है, तो वह आपको मिल जायगी। लेकिन यह आपके और मेरे बीचकी व्यवस्थाकी बात होगी। जब तक अंग्रेज यहां है तब तक यह संभव नहीं हो सकता।'

' फिर आपकी योजनाकी विभिन्न धाराओं पर वे मुझसे जिरह करने लगे। मने उनसे कहा, यदि आप इन बातोंका स्पष्टीकरण चाहते है तो क्या यह अधिक अच्छा न होगा कि योजना बनानेवालेसे ही आप उनका स्पष्टीकरण करायें?' 'जी नहीं।' वे ऐसा नहीं चाहते थे। मैंने कहा मुझसे जिरह करनेसे क्या लाभ? वे सभ्रम बोले, जी नहीं म आपसे जिरह नहीं कर रहा हूं। और फिर बोले म जीवन भर वकील रहा हूं इसलिए मेरे ढंगसे आपको ऐसा लगा होगा कि मैं आपसे जिरह कर रहा हूं। मने उनसे कहा कि आप इस योजना पर अपनी आपत्तियां लिख कर मुझे दे दीजिये। लेकिन उनकी इच्छा नहीं थी। उन्होंने पूछा क्या ऐसा करना ही होगा? हां म चाहता हू कि आप ऐसा करें। वे सहमत हो गये।

अन्तमें उन्होंने कहा म आपके साथ समझौता कर लेना चाहता हू। मने उत्तर दिया, आपको याद है कि मने क्या कहा था। यही कहा

था कि जब तक हम समझौता न कर ले तब तक हम अलग नही होगे।' उन्होने कहा, हा। मै सहमत हू। मैने सुझाया, 'हम यह बात भी अपने वक्तव्यमे रख दे तो?' उन्होने कहा, 'नही, न रखना ही ज्यादा अच्छा है। फिर भी हमारे बीच समझ यही रहेगी और हमारे सार्वजनिक उद्गारोमे भी हमारी बातचीतका प्रेम और मैत्रीभाव प्रतिबिम्बित होगा।'

राजाजी "आप मानते है कि वे समझौता चाहते है?'

गाधीजी "मै निश्चित रूपसे नही कह सकता। शायद उन्हे ऐसा लगता हो।"

राजाजी "तब आप इसे पार लगा देगे?"

गाधीजी "हा। . . यदि मुझे ठीक शब्द सूझ गया।"

दूसरे दिन दोनो नही मिले। जिन्नाने कहा, "आज रमजानका इक्कीसवा दिन है। सभी मुसलमानोंके लिए यह बडा महत्त्वपूर्ण दिन है।" जिन्नाके एक पहलेके साथीने टीका की, "उन्होने यह क्यो नही कहा कि वह रविवारका दिन है और उन्हे छुट्टी चाहिये? वे रमजानकी अपेक्षा रविवारको ज्यादा अच्छी तरह समझते है।"

११ सितम्बरकी शामको दोनोकी बातचीत फिर आरम्भ हुई। महात्माजीका शामका भोजन उनकी बातचीतके बीच जिन्नाके मकान पर ही हुआ। उनके भोजनके साथ उबले हुए पानीकी एक बोतल भी थी। कही कोई यह न समझ ले कि मुसलमानके घरमे खाते समय महात्माजी पवित्र गंगाजलका या ऐसी ही किसी वस्तुका उपयोग करते है, इसलिए गाधीजीने आदेश दिया कि आगेसे भोजनके साथ पानीकी बोतल न भेजी जाय।

१२ सितम्बरको भी कायदे आजमकी मीठी मीठी बाते चली। मै गाधीजीके ही शब्दोमे उनका वर्णन यहा दू:

"उन्होने पाकिस्तानकी सरकारका बडा मोहक चित्र खीचा। उसका स्वरूप पूर्ण लोकतन्त्रका होगा। मैने पूछा, 'क्या आपने मुझसे यह नही कहा था कि हिन्दुस्तानकी परिस्थितियोके लिए लोकतन्त्र उपयुक्त नही है?' उन्हे यह याद नही था। उन्होने मुझसे कहा, 'आप बताइये कि मैने क्या कहा था।' इस पर मैने सारी बात कह बताई और कहा कि 'सभव है मैने आपको समझनेमे भूल की हो। ऐसा हो तो आप मेरी भूल सुधार दीजिये।' लेकिन जब मैने उनकी कही हुई बात विस्तारसे दोहरायी, तो वे इनकार नही कर सके। उन्होने कहा, 'हा, मैने ऐसा कहा था। लेकिन वह ऊपरसे थोपे हुए लोकतन्त्रके बारेमे कहा था।'

"फिर उन्होने कहा, 'क्या आपके खयालसे हमारे लिए यह धार्मिक अल्पमतका प्रश्न है?' मैने कहा, 'हा। यदि ऐसा नही है, तो आप बताइये

कि वह क्या है? उन्होंने लम्बा भाषण ही दे डाला। उस सारे भाषणमें न यहां नहीं दोहराऊंगा। मैंने उनसे पूछा कि पाकिस्तानमें दूसरे अल्पमतों अर्थात् सिक्खों ईसाइयों दलित वर्गों आदिका क्या स्थान होगा? उन्होंने कहा कि वे पाकिस्तानके अंग होंगे। मैंने उनसे पूछा क्या आपका मतलब सम्मिलित मताधिकारसे है? वे जानते थे कि मैं उस प्रश्न पर आ रहा हूं। उन्होंने कहा हां मैं चाहूंगा कि वे समग्र पाकिस्तानके अंग बनें। मैं उन्हें सम्मिलित मताधिकारके लाभ समझाऊंगा। परन्तु यदि वे पृथक् निर्वाचन चाहेंगे, तो वह उन्हें मिल जायगा। सिक्ख चाहेंगे तो उन्हें गुरुमुखी मिल जायगी और पाकिस्तान सरकार उन्हें आर्थिक सहायता देगी। मैंने पूछा जाटोंका क्या होगा? पहले तो उन्होंने इस विचारको ही टालना चाहा। फिर बोले, 'वे चाहेंगे तो उन्हें भी मिल जायगा। वे चाहेंगे तो उनका अलग अस्तित्व रहेगा। मैंने कहा ईसाइयोंका क्या होगा? वे भी कोई ऐसा स्थान चाहते हैं जहां उनका बहुमत हो और जहां वे राज्य कर सकें — उदाहरणके लिए, त्रावणकोरमें? उन्होंने कहा कि यह समस्या तो हिन्दुओंके लिए है। मैंने कहा, मान लीजिये कि त्रावणकोर पाकिस्तानमें हो तो?' उन्होंने कहा मैं उन्हें दे दूंगा। उन्होंने न्यू फाउंडलैंडकी मिसाल दी। बाकीकी हमारी बातें तो सामान्य थीं। मैं उनके मनकी बात जाननेका प्रयत्न जारी रखूंगा।

राजाजी मालूम कीजिये कि वे क्या चाहते हैं।'

गांधीजी हां यही तो मैं कर रहा हूं। मैं उन्हींके शब्दों द्वारा यह सिद्ध कर देना चाहता हूं कि पाकिस्तानका सारा प्रस्ताव ही बेहूदा है। मैं समझता हूं कि वे बातचीतको तोड़ना नहीं चाहते। अपनी ओरसे मैं भी कोई जल्दी नहीं करूंगा। परन्तु वे मुझसे यह आशा नहीं रख सकते कि मैं किसी अनिश्चित स्वरूपके पाकिस्तानका समर्थन करूंगा।

राजाजी क्या आप मानते हैं कि वे यह दावा छोड़ देंगे?'

गांधीजी उन्हें छोड़ना पड़ेगा यदि कोई समझौता करना है। वे समझौता तो चाहते हैं परन्तु उन्हें यह पता नहीं कि वे क्या चाहते हैं। मैं उन्हें यह दिखा देना चाहता हूं कि वे उचित रूपमें जो चीज मांग सकते हैं वह आपकी योजनामें आ ही जाती है।

जहां तक बाहरी समारकका संबंध था ९ से १३ सितम्बर तकका समय कुछ हद तक आशाका समय था। उसके बाद आशा घटने लगी। १४ से १९ तक निराशा बढ़ती रही। इस अर्सेमें कायदे आजमने अपने ईदके सन्देशमें 'एक राष्ट्रके रूपमें' मुसलमानोंकी प्रगतिका उल्लेख किया और मित्रता या सद्भावनाका स्वर निकालनेके बजाय मिल्लतके उन गद्दारोंको जो हमारी

प्रगतिको रोक रहे है" खरी-खोटी सुनाई। उसके बाद तो आशा तेजीसे कम होती गई, और अन्तमे २७ तारीखको वार्ताए पूरी तरह भग हो गई।

वार्ताओके इस सारे कालमे पत्रोका आदान-प्रदान बना रहा। इससे अधिक विचित्र पत्र-व्यवहार शायद ही कभी मित्रतापूर्ण सधिवार्ताओकी अवधिमे हुआ हो। पत्र-व्यवहार और वार्ताए कभी किसी बात पर केन्द्रित नही हुए, परन्तु समानान्तर रूपमे चलते रहे और मानो दोनों अलग अलग भाषाओमे होते रहे। इस पर राजाजीकी मार्मिक टीका थी . "वार्ताए आपको समझाने और दाब रखनेके लिए है और पत्र-व्यवहार पहलेसे उनकी असफलताकी आशा रख कर हो रहा है।"

गाधीजीने इस भूमिका पर अपनी बातचीत शुरू की कि उनके जीवनका मिशन हिन्दू-मुस्लिम एकता है। इसलिए मुसलमान चाहे तो वे लाहौरके प्रस्तावमे रखी गई मुस्लिम लीगकी मागको साररूपमे स्वीकार करनेके लिए तैयार है — अर्थात् जहा मुसलमानोका बहुमत है उन प्रदेशोको आत्म-निर्णयका अधिकार दे दिया जाय। परन्तु यह स्पष्ट था कि स्वतत्रताके अभावमे आत्म-निर्णयके अधिकारको कार्यका रूप नही दिया जा सकता। इसलिए पहले लीगको और भारतकी दूसरी तमाम पार्टियो और दलोंको अपने सम्मिलित प्रयत्नसे स्वाधीनता-प्राप्तिके लिए एकत्र होनेमे सहमत होना चाहिये।[२९]

जिन्नाने कहा, "यह तो घोडेके आगे गाडीको रख देने जैसी उलटी बात हुई।" स्वाधीनता-प्राप्तिके लिए सम्मिलित प्रयत्न लीगके साथ समझौता होनेसे पहले नही किन्तु बादमे हो सकता है।[३०]

गाधीजीकी राय यह थी कि जब तक हम तीसरे पक्षको देशसे निकाल नही देते तब तक हम एक-दूसरेके साथ शान्तिसे नही रह सकते। परन्तु मै "हमारे बीच सजीव शान्ति स्थापित करनेके उपाय और साधन खोजने" का प्रयत्न करनेको हमेशा तैयार हू।

इसी कारण उन्होने राजाजीकी योजनाके लिए अपनी स्वीकृति दी थी। लाहौरके प्रस्तावमे रखी गई मागका सार उसमे आ गया था और उसे मूर्त स्वरूप मिल गया था।[३१]

जिन्नाको उस पर आपत्ति थी। राजाजीकी योजनाके अनुसार यह आवश्यक था कि मुस्लिम लीग सयुक्त भारतके आधार पर स्वाधीनताकी मागका समर्थन करे।[३२]

गाधीजीने समझाया कि राजाजीकी योजना सयुक्त भारतके आधार पर नही बनाई गई है। "हम यदि समझौता कर लेते है और भारत आज जैसा है- उसके लिए हम सम्मिलित प्रयत्न करके स्वाधीनता प्राप्त कर लेते है, तो आजाद भारत सम्बन्धित लोगोंके विभाजनके पक्षमें मत देने पर

प्रदेशोंकी सीमा बांधने लोकमत लेने विभाजन करने आदिके कार्य हाथमें लेगा।" क्या यह वस्तुतः आत्म निर्णय नहीं है? "

जिन्ना यह सिद्ध करने लगे कि राजाजीकी योजनामें न्यूनता कहां रहती है। प्रदेशोंकी सीमा बांधनेके लिए कमीशन कौन नियुक्त करेगा? योजनामें जिस लोकमत और मताधिकारका विचार किया गया है उसका स्वरूप कौन निश्चित करेगा? लोकमतके निर्णयको कार्यान्वित कौन करेगा? '

गांधीजी 'यदि हम अभी इसका निर्णय नहीं कर देंगे तो अस्थायी अंतरिम सरकार यह सब काम करेगी।' '

जिन्नाने पूछा अस्थायी राष्ट्रीय सरकार किस आधार पर बनेगी? "

गांधीजीने उत्तर दिया कि यह आधार तो लीग और कांग्रेसको मिल कर निश्चित करना होगा। यदि किसी आधार पर उनमें समझौता हो गया, तो स्वभावतः दूसरे दलोंसे विचार विमर्श करना उनका काम होगा।'

इससे जिन्नाको सन्तोष नहीं हुआ। वे चाहते थे कि गांधीजीके पास यदि कोई निश्चित रूपरेखा हो तो वे बतायें। उन्होंने कहा कि चूंकि वह गांधीजीकी योजना है इसलिए उन्होंने कोई रूपरेखा अवश्य सोच निकाली होगी।"

गांधीजीने समझाया कि वे कोई रूपरेखा लेकर नहीं आये हैं। लेकिन यदि उनके (जिन्नाके) पास लाहौरके प्रस्तावके सन्दर्भमें कोई रूपरेखा हो, तो वे उसकी चर्चा कर सकते हैं। मैं मानता हूं कि उस प्रस्तावके अनुसार भी अस्थायी सरकार आवश्यक है। "

इस परसे दोनोंके बीच लाहौरके प्रस्तावकी चर्चा चली।

गांधीजीने कहा था कि राजाजीकी योजनामें लाहौर प्रस्तावका माग सार रूपमें मान ली गई है तो फिर गांधीजीने लाहौरका प्रस्ताव क्यों नहीं स्वीकार कर लिया?

गांधीजीने अपनी कठिनाई बताई कि लाहौरका प्रस्ताव अस्पष्ट और अनिश्चित है। उसमें पाकिस्तान शब्द नहीं है और न उसमें दो राष्ट्र' के सिद्धान्तका कोई उल्लेख है। यदि लीगकी पाकिस्तानकी मांगका आधार धार्मिक हो तो क्या सारे संसारके मुसलमान एक कौमके होनेके कारण इस्लामके समस्त अनुयायियोंका एकीकरण उसका अन्तिम लक्ष्य है? इसके विपरीत यदि पाकिस्तानको केवल भारतीय मुसलमानों तक ही सीमित रखा हो तो क्या आप (जिन्ना) यह समझायेंगे कि एक भारतीय मुसलमानमें और दूसरे प्रत्येक भारतीयमें धर्मके सिवा क्या भेद है? क्या वह किसी तुर्क या अरबसे भिन्न है? '

जिन्नाने उत्तर दिया कि सारे जगतके मुसलमानोका एकीकरण तो एक ौआ भर है। उन्होने स्वीकार किया कि 'पाकिस्तान' शब्द लाहौरके प्रस्ताव-ं नही आया है और उसके मूल अर्थमे उन्होने या लीगने उसका उपयोग ाही किया है।[४१] "अब यह शब्द लाहौर-प्रस्तावका समानार्थक बन गया ै।... हमारा ऐसा मत है कि राष्ट्रकी किसी भी व्याख्या या कसौटीके अनुसार मुसलमान और हिन्दू दो विशाल राष्ट्र है।" मुसलमान अलग राष्ट्र ै, क्योकि उनकी "सस्कृति और सभ्यता अलग है, भाषा और साहित्य अलग ै, कला और स्थापत्य अलग है, नाम और नामकरण-पद्धति अलग है, जीवनके मूल्यो और अनुपातकी दृष्टि अलग है, कानून और नैतिक नियम अलग है, रिवाज और पचाग अलग है तथा इतिहास और परम्परा भी अलग है।" और इसलिए उनका यह अधिकार है कि उनके अपने देशमे उनका स्वतत्र सार्वभौम अस्तित्व हो।[४२]

इनमे से हरएक विधान सत्यके विरुद्ध था या कमसे कम अर्धसत्य था। 'मुसलमानोकी भाषा' उर्दू, उनकी सस्कृति, कला और स्थापत्य सब समन्वयके परिणाम है। पूर्वी बगालके मुसलमान केवल बगला भाषा समझते और बोलते है और दक्षिणके मुसलमान केवल तमिल, तेलगू और मलयालम बोलते-समझते है। बिहारके गावोमे पोशाकके आधार पर किसी हिन्दू स्त्रीसे मुस्लिम स्त्रीका भेद करना असभव है। उनके कुछ रीति-रिवाजो पर भी इसी प्रक्रियाकी छाप है। ऐसे मुसलमानोके अनेक उदाहरण दिये जा सकते है, जिनके हिन्दू नाम है और अनेक लोगोने हिन्दू धर्मसे इस्लाममे आनेके बाद भी पडित, राय, चौधरी, मजूमदार आदि कुलनाम वैसे ही रख छोडे है।

गाधीजीने विरोध किया कि "केवल जोर देकर किसी बातका कहा जाना कोई प्रमाण नही है।"[४३]

जिन्नाने गाधीजीसे दो पुस्तके पढनेकी सिफारिश की। उनमे से एक किसी मुस्लिम लीगी सिद्धान्तवादीकी लिखी हुई थी। गाधीजीने कष्ट उठा कर और अन्त करणपूर्वक दोनो पुस्तकोका अध्ययन किया। परन्तु इससे उन्हे कोई मदद नही मिली। "उसमे अर्धसत्य भरे है और उसके निर्णय अथवा अनुमान निराधार है।"[४४]

गाधीजीने जिन्नासे पूछा, लाहौरके उस प्रस्तावके अन्तर्गत आनेवाले प्रदेशोके लोगोको विभाजनके बारेमे कुछ कहनेका अधिकार होगा या नही? और यदि होगा तो उनका मत कैसे मालूम किया जायगा?[४५]

जिन्ना: "आत्म-निर्णयके जिस अधिकारका हम दावा करते है, उसमें यह वस्तु स्वीकार करके चला गया है कि हम एक राष्ट्र है और इसलिए

वह मुसलमानोंका आत्म निर्णय होगा और केवल उन्हींको वह अधिकार भोगनेका अधिकार है।" [१]

जिन मुसलमानोंने मुस्लिम लीगकी नीतिसे असहमति प्रगट की है उनका क्या होगा? क्या उनकी शंकाएं दूर नहीं की जानी चाहियें? या उन्हें वस्तुतः मताधिकारसे वंचित कर दिया जाय?

"मुस्लिम लीग ही भारतके मुसलमानोंकी एकमात्र अधिकारपूर्ण और प्रतिनिधि संस्था है।"

इतना काफी था। गांधीजीने जिन्नासे यह विचार करनेके लिए अनुनय विनय किया कि देशके टुकड़े हो जानेसे उनकी कल्पनाके 'स्वाधीन राज्यों' को कौनसा भौतिक या अन्य लाभ होगा और क्या वे स्वाधीन राज्य एक दूसरेके लिए और शेष भारतके लिए भी खतरा नहीं बन जायंगे? जिन्नाका दो टूक उत्तर यह था कि भारतीय समस्याका यही एकमात्र हल है और भारतको अपनी स्वाधीनताका यह मूल्य चुकाना ही होगा।

आज तक पाकिस्तानको परदेमें बहुत अच्छी तरह ढक कर रखा गया था। जब पहली बार जब उसकी रूपरेखा प्रकट हुई, तो वह पाकिस्तानका बहुत आकर्षक रूप नहीं लगा। गांधीजीने वार्ताओंके पहले सप्ताहके अन्तमें १५ सितम्बरको जिन्नाको लिखा "ज्यों ज्यों हमारी बातचीत आगे बढ़ती जाती है त्यों त्यों आपका चित्र मुझे चौंकानेवाला दिखाई देता है। जब मैं लीगके (लाहौर) प्रस्तावके अमलकी कल्पना करता हूं तब मुझे सारे भारतके लिए बरबादीके सिवा कुछ दिखाई नहीं देता।"

आगेकी चर्चा जिन्नाकी ओरसे कड़वी होती गई। यद्यपि मैं किसीका भी प्रतिनिधि नहीं हूं तो भी मेरी आकांक्षा भारतके सारे निवासियोंका प्रतिनिधि बननेकी है क्योंकि जात-पात वर्ग या धर्मके किसी भेदके बिना वे सब समान रूपसे जो मुसीबत और अवनति भोग रहे हैं उनको मैं स्वयं अनुभव कर रहा हूं—गांधीजीके इस कथनका भी जिन्नाने विरोध किया।

कायदे आजमके लिए यह बहुत कठिन बात थी। वे इतना माननेको तो तैयार हो गये कि गांधीजी "एक महापुरुष" हैं और हिंदुओं पर "विशेषकर हिन्दू जनता पर" उनका जबरदस्त प्रभाव है फिर भी वे गांधीजीका यह कथन स्वीकार नहीं कर सके कि वे भारतके सब निवासियोंके प्रतिनिधि होनेकी आकांक्षा रखते हैं। "यह बिलकुल स्पष्ट बात है कि आप हिंदुओंके सिवा अन्य किसीके भी प्रतिनिधि नहीं हैं और जब तक आप अपनी सही स्थितिको समझ नहीं लेते तब तक आपके साथ चर्चा करना मेरे लिए बहुत कठिन है।" [१२]

गाधीजीने पूछा · "आप यह क्यो नही मान सकते कि मै भारतके सभी वर्गोका प्रतिनिधि होनेकी आकाक्षा रखता हू? क्या आप ऐसी आकाक्षा नही रखते? क्या प्रत्येक भारतीयको यह आकाक्षा नही रखनी चाहिये? यह अलग बात है कि वह आकाक्षा कभी पूरी न हो।"[५३]

जिन्नाने आग्रह किया कि गाधीजीको वे "आधारभूत और मूलभूत सिद्धान्त" मान लेने चाहिये, जिनका लाहौर-प्रस्तावमे निर्देश किया गया है। गाधीजीने उनसे कहा: क्या ऐसा करना अनावश्यक नही है, क्योकि इस प्रकारकी स्वीकृतिमें से फलित होनेवाले 'ठोस परिणाम' को तो — जिस हद तक वह उचित और व्यावहारिक है — मैने स्वीकार किया ही है? "आप जिस तरह स्वीकार कराना चाहते है उस तरह मै लाहौर-प्रस्तावको स्वीकार नही कर सकता — विशेषत जब आप उसका अर्थ लगानेमे ऐसे सिद्धान्त और दावे दाखिल कर देना चाहते है, जिन्हे मै स्वीकार नही कर सकता और जिन्हें स्वीकार करनेके लिए भारतको समझानेकी मै कभी आशा नही रख सकता।"[५४]

अतमे गाधीजीने जिन्नासे पूछा, "क्या हम 'दो राष्ट्रो' के प्रश्न पर हमारे मतभेदको स्वीकार करके भी समस्याको आत्म-निर्णयके आधार पर हल नही कर सकते?"[५५]

गाधीजीके इस प्रस्तावका आधार यह था कि भारतको दो या दोसे अधिक राष्ट्रोका घर न मानकर कई सदस्योका एक परिवार माना जाय, जिनमे से एक सदस्य — अर्थात् नितान्त बहुमतवाले प्रदेशोमे रहनेवाले मुसलमान — शेष भारतसे अलग होकर रहना चाहता है। "यदि मुस्लिम बहुमतवाले प्रदेशोको लाहौर-प्रस्तावके अनुसार अलग करना हो, तो अलग होनेका यह गभीर कदम उन प्रदेशोके लोगोके सामने निश्चित रूपमे रखकर उस पर उनकी स्वीकृति लेनी चाहिये।"[५६] मुस्लिम लीग द्वारा प्रस्तावित 'दो राष्ट्रो' के सिद्धान्तके सामान्य आधारसे असहमत होते हुए भी गाधीजीने कहा कि मै काग्रेससे और देशसे यह सिफारिश कर सकता हू कि उन भागोके अलग होनेका दावा स्वीकार कर लिया जाय। यदि उन भागोकी सारी वयस्क जनताका बहुमत अलग होनेके पक्षमे राय दे, तो ज्यो ही भारत स्वतत्र हो जायगा उन प्रदेशोका एक अलग राज्य बना दिया जायगा।

इसे गाधीजीने "दो भाइयोके बीचका बटवारा" कहा। एक ही परिवारके बालक धर्म-परिवर्तनके कारण एक-दूसरेसे असतुष्ट होकर चाहे तो अलग हो सकते है। परन्तु उस स्थितिमें अलग होनेकी क्रिया भीतर ही भीतर होगी, सारी दुनियाके सामने नही होगी। "जब दो भाई अलग होते है तो

ममीहको 'ईश्वरका एकमात्र पुत्र' मान ल। (श्रीमती एमिली 'व अर्थात ईसा मसीह ईश्वरके पुत्र थे।' गांधीजी "और हम सब भी उसके पुत्र हैं।' श्रीमती एमिली 'नहीं वे ही एकमात्र ईश्वर-पुत्र थे और उन्हे अपने हृदयोंमें स्थापित किये बिना हमारा उद्धार नहा हो सकता।')

जिन्नाके नाम लिखे एक पत्रमें उस दिन गांधीजीने लिखा 'कल शामकी बातचीतसे मेरे मन पर अच्छा प्रभाव नहा पडा है।" और फिर २६ सितम्बरको यह लिखा 'आप यह कहते रहते ह कि मुझे ऐसी कुछ बातें स्वीकार कर लेनी चाहिये जिन्हे आप लाहौर प्रस्तावका आधार और बुनियादी सिद्धात बताते ह। परन्तु मेरा कहना यह रहा है कि हमारे लिए, जो समस्याके प्रति भिन्न दृष्टिकोण रखते ह उत्तम उपाय यह है कि लाहौर प्रस्तावमें जो माग की गई है उसकी स्पष्ट रूपरेखा तयार कर ली जाय और हम दानोंको सन्तोष हो इस प्रकार उसमें सशाधन अथवा परिवर्धन कर लिये जाय।

परन्तु जिन्नाने गांधीजीके प्रस्ताव पर चर्चा करनेसे भी इनकार कर दिया। आप बार बार कहते ह कि यदि हम दोनो मिलकर कोई सामान्य कार्य प्रणाली निश्चित कर लें तो उसे कांग्रेससे और देशसे मनवानेके लिए आपका जो भी प्रभाव है उसका आप उपयोग कर सकते ह। म शुरूसे ही कह चुका हू कि यह काफी नही है।'"

उन्होंने गांधीजीका स्वागत करना और उनसे मिलना" इसलिए स्वीकार किया था कि गांधीजीने कहा था कि वे प्रकाश और ज्ञानकी खोजमें आये ह और 'यदि म (जिन्ना) आपके विचार बदल सकू तो आपका हिन्दू भारत पर जबरदस्त प्रभाव होनेके कारण मुझे अपने कार्यमें उससे बडी सहायता मिलेगी।'" परन्तु व एसे पुरुषके साथ जो पूरी सत्ताके साथ आया हुआ प्रतिनिधि नही था समझौतेके लिए उसके प्रस्तावो पर चर्चा करनेके लिए तयार नही थे। (जब तक) हम लाहौर प्रस्ताव तक सीमित रहे तब तक आपके प्रतिनिधित्वका प्रश्न पदा नही हुआ। अब आपने अपने ही आधार पर स्वय अपना एक नया प्रस्ताव सामने रखा है इसलिए जब तक वह आपकी ओरसे प्रतिनिधिके रूपमें नही आता तब तक उसकी चर्चा करना कठिन है। "

गांधीजीने उत्तर दिया मेरे पास प्रतिनिधिकी सत्ताके न होनेकी बातका आप हमेशा उल्लेख करते हैं। यह सचमुच अप्रस्तुत है। यदि आप बातचीत तोडेंगे तो यह नही कहा जा सकता कि मेरे पास प्रतिनिधिके रूपमें कोई सत्ता नहा है या लाहौर प्रस्तावमें जो दावा किया गया है उसके बारेमें मैं आपको सन्तोष दिलानेमें आनाकानी करता रहा हू। "

जब इस तरह दोनोकी बातचीतके टूटनेकी नौबत आ पहुची, तो गाधीजीने सुझाया कि उन्हे अपने प्रस्तावोका औचित्य समझानेके लिए मुस्लिम लीग कौन्सिलसे मिलने दिया जाय। "मेरी प्रार्थना है कि प्रस्तावको अस्वीकार करनेकी जिम्मेदारी आप न लीजिये। इसे अपनी कौन्सिल पर डाल दीजिये। मुझे अपनी बात उसके सामने रखनेका मौका आप दीजिये। यदि उसे मेरी बात अस्वीकार करने जैसी लगे, तो मै चाहूगा कि आप कौन्सिलको मेरी बात लीगके खुले अधिवेशनमे रखनेकी सलाह दे। यदि आप मेरी सलाह मान ले और मुझे इजाजत दे, तो मै लीगके खुले अधिवेशनमे उपस्थित रहूगा और अपनी बात उसे समझाऊगा।"[६७]

एक विकल्पके रूपमे गाधीजीने सुझाया कि यह प्रश्न पंचके सुपुर्द कर दिया जाय। उन्होने पूछा, "बाहरी सहायता, मार्गदर्शन, सलाह या पच-फैसलेसे भी एक-दूसरेको अपनी बात समझानेके लिए अतिरिक्त प्रयत्न करना क्या अप्रस्तुत या अनुचित है?" यदि हम समझौता करनेके लिए कटिबद्ध हो, तो इन सारे उपायोका लाभ उठाया जा सकता है।

परन्तु जिन्नाको इनमे से एक भी सुझाव मंजूर नही था। "यह एक अत्यन्त असाधारण और अभूतपूर्व सुझाव है। लीगकी कौन्सिलकी बैठकमें या उसके खुले अधिवेशनकी चर्चाओमे भाग लेनेका अधिकार उसके सदस्य या प्रतिनिधिको ही होता है।"[६८]

किसी सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न ससदके लिए दूसरे मित्रदेशके नेताओ और राजनीतिज्ञोको अपने सदस्योके समक्ष भाषण देनेको निमंत्रित करना न तो 'असाधारण' माना जाता और न 'अभूतपूर्व' ही। यदि जिन्नाका उद्देश्य हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच समझौतेके मार्ग ढूढना था, तो उन्हे गाधीजी और मुस्लिम लीग कौन्सिलके बीच कोई सपर्क स्थापित होने देनेमे इतनी चिन्ता क्यो थी? क्या इसीलिए कि उन्हें यह डर था कि जहा वे समझनेको तैयार नही थे, वहा कौन्सिलके सदस्य शायद समझ जाते? या जिन्नाका यह खयाल था कि उनके अनुयायियोकी महात्माजीके 'दुष्प्रभाव' से जितनी भी रक्षा की जाय उतना ही उनके लिए अपने अनुयायियोको आज्ञाकारी बनाये रखना आसान होगा? अजीब बात तो यह है कि जब एक बार समझौतेकी वार्ताओके दौरान मैंने जिन्नाके निजी स्टाफके सदस्योको गाधीजीकी मडलीके साथ चाय पीने ओर मैत्रीपूर्ण बातचीत करनेके लिए निमत्रण दिया, तो जिन्नाके सचिवसे मुझे यह उत्तर मिला · "आपको . . . दु:खके साथ मुझे यह कहना पडता है कि . . . जब तक वार्ताए समाप्त न हो जाय, हमारे लिए आपका प्रेमपूर्ण निमत्रण स्वीकार करना सभव नही होगा।"

मैंने सबकी भलाईके लिए जिन्ना साहबके दृष्टिकोणके अनुकूल बननेकी पूरी कोशिश की। मैंने कायदे आजमका द्वार खटखटाया, लेकिन मुझे सफलता नही मिली। परन्तु सत्य और अहिंसाके पुजारीके प्रयत्नोका कभी वाछित परिणाम न निकले, तो उसे निराश नही होना चाहिये। हम ईश्वरकी योजनाके बारेमे शका नही कर सकते। ईश्वर ही जानता है कि हमारे लिए उत्तम क्या है।"

दूसरे दिन गाधीजीने एक अखबारी वक्तव्यमे कहा, "सभी पार्टियोको और खास तौर पर मुस्लिम लीगके सदस्योको कायदे आजमसे कहना चाहिये कि वे अपनी राय बदले। यदि राजाजीने और मैंने लाहौरके प्रस्तावको व्यर्थ बना दिया हो, तो यह वस्तु हमे समझानी चाहिये।"

गाधीजीने 'न्यूज क्रॉनिकल' के प्रतिनिधि श्री गेल्डरसे एक मुलाकातमे कहा, "मेरा विश्वास है कि मि० जिन्ना सच्चे है, परन्तु मेरे खयालसे उन्हें यह भ्रम हो गया है कि भारतके अस्वाभाविक विभाजनसे सम्बन्धित लोगोको सुख या समृद्धि प्राप्त हो सकती है।"

गाधीजीने पत्रकारोके एक अन्य दलको समझाया कि उनकी बातचीत अनिश्चित कालके लिए स्थगित ही हुई है। "मेरा विश्वास है जिन्ना साहब सज्जन पुरुष है। मुझे आशा है कि हम दोनो फिर मिलेगे।. इस बीच जनताका कर्तव्य है कि वह स्थितिको अच्छी तरह समझे और अपनी रायका दबाव हम दोनो पर डाले।"

४

कुछ आलोचकोने यह प्रश्न उठाया "गाधीजी राजाजीकी योजनाका समर्थन कैसे कर सके और पाकिस्तानके सिद्धान्तको मान लेनेका साहस उन्होने कैसे किया? क्या उन्होने विभाजनके प्रस्तावको असत्य और भारतके अग-भगको पाप नही बताया था?" गाधीजीने उन्हें समझाया, "मैंने जो चीज स्वीकार की है वह उस आत्म-निर्णयके सिद्धान्तसे भिन्न नही है, जो काग्रेस कार्यसमिति स्वीकार कर चुकी है।[११] उसमे यह अर्थ निहित है कि जो प्रदेश अलग होना चाहे उनके निवासियोकी इच्छा उचित ढगसे लिये गये लोकमत द्वारा जानकर उन्हे इस प्रकार अलग होनेका अधिकार दिया जाय, जिससे सपूर्ण देशकी सुरक्षा, एकता और आर्थिक प्रगतिकी रक्षा हो सके। जो चीज मेरे प्रस्तावमे और राजाजीकी योजनामे नही मानी गई है, वह है परस्पर शत्रुताके कार्य करनेमे लगे रहनेकी स्वतत्रता। इसीको मैंने पाप बताया है।"

दोनो भागोके समान हितके विषयोके प्रबधके लिए विशेष तत्र — जिसे गाधीजीने स्वयसिद्ध मान लिया था — सविधानका अग न होकर दोनो राज्योके बीचकी सधिके द्वारा खड़ा किया जायगा और विभाजनके अधिकार-

पन्थमें उनका उत्कर्ष होगा, ऐसा गांधीजीका कहना था। गांधीजीका प्रस्ताव आपसी टक्कर करनेकी सम्मति देनेवाला नहीं था, वह तो एकनिष्ठ और स्थायी एकताका सम्बन्ध निर्माण करनेका एक साहसपूर्ण प्रयोग था। गांधीजीकी वार्ताओंके बीच केवल नारों और सूत्रोंके परे जाकर बाहरसे परस्पर विरोधी दिखाई देनेवाली बातोंके द्वारा साधा हुआ परिणाम लानेकी गांधीजीकी विशेषता अपने उत्तम रूपमें प्रकट होती थी। उन वार्ताओंने गीता और उपनिषदोंमें बद्धमूल हुई परस्पर विरोधी वस्तुओंके बीच समन्वय साधनेकी पद्धतिका उत्तम उदाहरण प्रस्तुत किया। यह पद्धति सत्याग्रहका प्रयोग करते समय विरोधी दृष्टियोंका समन्वय करके समझौते पर आनेमें सत्याग्रहीकी बहुत सहायता करती है।

गांधीजीके प्रस्तावके अनुसार देशका विभाजन हो जानेके बाद पाकिस्तान यदि संधिका पालन करनेसे इनकार कर दे तो क्या होगा? गांधीजीने स्वीकार किया कि बदनीयतीके खिलाफ कोई गारंटी नहीं होती, हो भी नहीं सकती। परन्तु उस स्थितिमें दोषी पक्ष संसारके कानूनकी दृष्टिमें अपनी प्रतिष्ठा खो बैठेगा। इसलिए बदनीयतीका खतरा तो उठाना ही होगा। पूर्ण स्वाधीनताके अस्तित्वके साथ यह खतरा लगा ही हुआ है। स्वाधीनताका भवन डरकी बुनियाद पर खड़ा नहीं किया जा सकता।

गांधीजीने कहा: राजाजीकी योजनामें मुस्लिम लीगकी मांगको, जहां तक वह उचित है, सार रूपमें मान लिया गया है। यदि उसे 'पाकिस्तान' का नाम दिया जाय तो मुझे उसकी परवाह नहीं। परन्तु जिन्नाने उसे पाकिस्तानका मजाक अथवा उसका निषेध बताया और मार्च १९४० के मुस्लिम लीगके लाहौरवाले प्रस्तावको खतम करनेकी योजना कह दिया, इसलिए मैंने जिन्नाकी इस आपत्तिके आधारको समझ लेना जरूरी समझा। यदि लीगकी मांग — जिसे वह 'पाकिस्तान' कहती है — संपूर्ण प्रभुता-संपन्न पाकिस्तान नहीं है तो और क्या है? हां, उसमें केवल परस्पर युद्ध करनेकी छूटका अथवा अखंड देश माने जानेवाले दो भागोंको हानि पहुंचायें ऐसे कदमोंसे बचनेका ही अपवाद रहेगा। यदि लीगका उद्देश्य एक ऐसा घटक रचना ही हो जिसमें मुस्लिम धर्म और मुस्लिम संस्कृतिके विकासके लिए तथा मुसलमान जातिके नेताओंकी प्रतिभा और व्यक्तित्वकी अभिव्यक्तिके लिए पूरा अवकाश हो और संयुक्त भारतकी अधिक प्रखर प्रतिभाके नीचे दबकर पूर्ण विकास न कर पानेका भय न रहे, तो राजाजीकी योजना पूरी तरह सन्तोष दे सकती है। इसके विपरीत यदि 'पाकिस्तान' का उपयोग भारतके विरुद्ध सुडेटन लैण्ड जैसी चालें चलनेके — भारतके विरुद्ध भारतमें ही विरोधी दल

खड़ा करनेके — केन्द्रके रूपमे करनेकी योजना हो, तो राजाजीकी योजना यह काम करनेवाली नही है।

गाधीजीके मनमे जिन्नाकी अनन्य ध्येयनिष्ठा, उनकी महान योग्यता और अविचल प्रामाणिकताके लिए बहुत आदर था। अवश्य ही जिन्ना देशभक्त थे। वे भाई-भाईकी लडाई लड़ने या समग्र दृष्टिसे देखते हुए दोनो भागोको कमजोर करनेवाली आर्थिक या प्रतिरक्षा-सम्बन्धी कार्रवाइया करनेकी स्वतत्रताका आग्रह नही रखेगे, ऐसा मानकर ही गाधीजीने जिन्नाका द्वार खटखटाया, उनके सामने अपनी सारी बाते खोलकर रख दी और उनसे प्रार्थना की कि वे भी अपने मनमे कोई बात गुप्त न रखकर सब कुछ स्पष्ट बता दे।

परन्तु गाधीजीको तो भरी बंदूकका सामना करना था। प्रसिद्ध कानून-शास्त्री और महाराष्ट्रके उदारपथी नेता डॉ० एम० आर० जयकरने गाधीजीको लिखा : "मि० जिन्ना अपने ही देशवासियोके बजाय हमेशा अग्रेजोसे समझौता करना ज्यादा पसन्द करेगे, यह उनके पत्र-व्यवहारसे स्पष्ट लगता है। . . वे आपके प्रस्तावका ब्रिटिश सरकारसे सौदा करनेमे उपयोग करेगे और उसीके आधार पर भारतीय नेताओके साथ भविष्यमे सधिवार्ता चलायेगे।" [७०]

पाचवा अध्याय

बदलता हुआ दृश्य

१

भारतमें और भारतके बाहर भी लाखों लोगोंने यह आशा लगा रखी थी कि गांधी जिन्ना वार्तासे हिन्दू मुसलमानोंके सम्बन्धमें एक नया अध्याय आरम्भ होगा। परन्तु दोनोंकी वार्ताएं असफल रहीं, क्योंकि — जैसा गांधीजीने कहा था — 'गुलामीमें बंधा हुआ मस्तिष्क स्वतंत्र मस्तिष्ककी तरह काम नहीं कर सकता।'[1] तीन सप्ताहकी संधिवार्ताओंके अनुभवसे गांधीजीका यह विचार और भी पक्का हो गया था कि तीसरे दलकी अर्थात् अंग्रेजोंकी उपस्थितिसे साम्प्रदायिक समस्याके हलमें बाधा पड़ती है। जब मुस्लिम लीगके सहयोगसे राष्ट्रीय सरकारकी मांग प्रस्तुत करनेकी आशा विलीन हो गई तो गांधीजीके मनमें यह प्रश्न पुनः रह रहकर उठने लगा : आगे क्या?

बंगालके अकालमें लाखों आदमी भूखसे तड़प तड़प कर मर गये। अनाजकी कमी इसका इतना बड़ा कारण नहीं थी। इसका बड़ा कारण था राज्यतन्त्रमें तथा उसके बाहर भयंकर रूपमें फैला हुआ वह भ्रष्टाचार और निर्दयता जिस पर विश्वास होना कठिन है। दलालों, छोटे व्यापारियों और बड़े व्यवसायियोंको मानव प्राणोंकी बलि चढ़ा कर धन कमानेमें जरा भी संकोच नहीं हुआ। साथ साथ सरकारी और गैर सरकारी शोषण भी चलता रहा। सच तो यह है कि सरकारी अधिकारियोंके शोषणके बिना गैर-सरकारी लोगोंका शोषण संभव ही न होता।[2]

गांधीजी गहरी पीड़ासे बोले : ऊपरसे नीचे तक सारी व्यवस्था भ्रष्ट हो गई है। सरकार गैर सरकारी भ्रष्टाचार पर — प्रजाजनोंके भ्रष्टाचार पर आंखें बन्द कर लेती है। यदि सरकार पर राष्ट्रका नियंत्रण होता तो इस पाशविक घूसखोरी और भ्रष्टाचारको एक दिनके लिए भी सहन न किया जाता। इसकी तुलनाका कोई उपयुक्त उदाहरण यदि मिल सकता है तो वह क्लाइव और वारेन हेस्टिंग्सके युगमें ही मिल सकता है। इस समस्याका जनताकी विश्वस्त राष्ट्रीय सरकार ही हल कर सकती है। परन्तु आज तो ऐसी कोई संभावना दिखाई नहीं देती। विजयका प्रतीतिक मदमें सत्ताधारी लापरवाह हो गये हैं।

संगठित हिंसा और सत्यकी हत्या — युद्ध जिनका प्रतीक है — गांधीजीको बहुत सता रहा थी। युद्ध समाप्ति पर था परन्तु हिंसा ... स्वप्नको

स्मृतिकी भाति विलीन हो जानेके वजाय वह मूर्खतापूर्ण रक्तपात, मिथ्या स्वप्नो तथा आहत आगाओकी चिरस्थायी स्मृतिका रूप लेता दिखाई दे रहा था। गाधीजीको यह साफ दिखाई दे रहा था कि इन परिस्थितियोमे विजय शान्तिका सूत्रपात करनेके स्थान पर तीसरे युद्धकी तैयारीकी ही भूमिका होगी।

उन भली अग्रेज महिला म्यूरियल लेस्टरने — जिनके यहा दूसरी गोल-मेज परिपद्के दिनोमे गाधीजी लदनके ईस्ट एण्डमे ठहरे थे — अपने एक पत्रमे इस दु खद घटनाका उल्लेख इस प्रकार किया "आप और मै जिन वस्तुओको अत्यत मूल्यवान समझते है, वे सव दिनोदिन हमारी आखोके सामने ही भ्रष्ट की जा रही है। . पृथ्वीके जिस किसी भी स्थान पर हमारा मन और स्मृति जाती है, वही लोग इस करुणतामे फसे हुए दीखते है। यह भी स्पष्ट है कि जो अकल्पनीय और अदृश्य मूल्य मनुष्यको शरीर, मन और आत्मासे विवेक-शील बनाये रखते है, वे सव घट रहे है।" उनके पत्रके अन्तमे यह लिखा था. "फिर भी ईश्वर है — वही सत्य है — वह हम सवके हृदयोमे वसा हुआ है — वह पूर्ण प्रज्ञा, सत्य और शक्ति है!"

गाधीजी विचारोमे मग्न हो गये "वेशक, ईश्वर है और किसी दिन हमारी युद्धके कारण त्रस्त बनी हुई इस पृथ्वी पर सघर्पका अत होकर शान्ति स्थापित होगी।" परन्तु भारत या इग्लैण्डको इससे क्या सतोप मिलेगा, यदि भारतको उसके लाभोसे वचित रखा जाय और इग्लैण्डके न चाहने पर भी भारतको वे लाभ मिल जाय? "विजयके पश्चात् स्वतत्रता" यह एक भ्रामक नारा है। जैसा कैप्टन लिडेल हार्टने सारगर्भित शब्दोमे कहा था, यदि स्वतत्रता और सारे मानव-मूल्योका वलिदान करके लडाई जीती गई, तो सभव है अतमे ऐसी कोई चीज बचे ही नही, जिसके लिए लडाई जीती जानी चाहिये।

ऐसी परिस्थितियोमे गाधीजी अहिसाकी क्षमताका प्रत्यक्ष प्रमाण कैसे देते और लाखो पीडितोकी पीडाको कैसे मिटाते? उनका दावा था कि हिसाकी शक्तिया कितनी ही सुसगठित क्यो न हो, अहिसा उनकी तुलनामे सदा ही श्रेष्ठ शक्ति सिद्ध होगी। युद्धके आरभमे कुछ अग्रेज मित्रोने गाधीजीको लिखकर पूछा था कि शान्तिवादी लोग व्यक्तिगत रूपमे हिसा और रक्तपातकी फैलती हुई लहरका सामना कैसे कर सकते है। गाधीजीने एक उपाय उन्हे उपवासका सुझाया था। कुछ लोगोने इस सुझावकी हसी उडाई थी, परन्तु वे इस पर डटे रहे। उनका अपने ही उदाहरणमे उस उपायकी परीक्षा करनेका और उसकी क्षमताका प्रत्यक्ष प्रमाण देनेका समय आ गया था। इसी एक उपायसे वे मानव-जातिकी अन्तरात्माको जगा सकते थे।

"क्या आपको भूखकी पीड़ाके द्वारा ही वोलना चाहिये? क्या इसके लिए और कोई कार्य-पद्धति नही है?"

"अनेक है। वे आपके अपनानेके लिए है। मुझे अपनी ही पद्धति काममे लेनी होगी, क्योकि उसे मै लोगोके हृदय और आत्मा पर प्रभाव डालनेके लिए ईश्वरकी विशेष देन समझता हू।"

मित्रोको इससे सन्तोष नही हुआ। इस वातका क्या विश्वास कि यदि गाधीजीको उपवासके परिणाम-स्वरूप कुछ हानि पहुची, तो ऐसा तूफान नही उठ खडा होगा जिसे कोई भी दवा नही सकेगा?

गाधीजीने उत्तर दिया, "यह भी हो सकता है। मै ऐसा नही चाहता। परन्तु मै इस खतरेका भी सामना कर लूगा, यदि आधी शताब्दीसे अधिक समय तक सत्य और अहिंसाका ज्ञानपूर्वक जीवन वितानेका यही परिणाम हो कि भारतको भी रक्तस्नान करना पडे।"

मित्रोने पूछा, "तो फिर आपको अहिंसाका पालन करते हुए अराजकताका खतरा क्यो नही मोल लेना चाहिये, जव आप उस पर नियत्रण रखनेके लिए सशरीर विद्यमान है?"

गाधीजीने उत्तर दिया, "क्योकि मै अराजकता और अव्यवस्था नहीं चाहता। अत मुझे अराजकताके लिए नही, परन्तु व्यवस्थितताके लिए काम करना चाहिये। परन्तु इस प्रयत्नमे अराजकता मेरे रास्तेमे आ जाय, तो मै उससे विचलित नही होऊगा। जापानियोकी जीवनकी उपेक्षा करनेवाली वहादुरीसे दुनिया रोमाचका अनुभव कर रही है। इस अवसर पर यदि जगलके कानूनके स्थान पर प्रेमधर्मकी स्थापना करनी है, तो अहिंसासे जापानियोकी अपेक्षा कही अधिक साहस और शौर्यकी आशा रखी जाती है।"

*

जहा मित्रोंका समझाना-वुझाना वेकार हुआ वहा कुदरत सहायताके लिए आ पहुची।

गाधीजी अपनी अतिशय कडी कसौटी कर रहे थे। जेलसे वे जो पेचिश लाये थे वह पूरी मिटी नही थी। उस पर कावू पानेके लिए उन्हें अपना भोजन कमसे कम कर देना पडा। इस धीमी भुखमरीके कारण उन्हे अतिशय थकावट आ गई थी। उन्हे सख्त जुकाम हो गया और कफ भर जानेसे छातीका दर्द खड़ा हो गया। उन्होने एक प्रसिद्ध वैद्यसे — रोगीके वजाय प्रयोगके एक पात्रके रूपमें — इसका उपचार करवाया। ये वही वैद्य थे जिन्होने कस्तूरवा गाधीकी आगाखा महलमे उनकी आखिरी वीमारीमें वड़ी भक्तिसे चिकित्सा की थी। वैद्यजीने कोई दवा तो उन्हें नही दी,

...तु ऐसा आहार बताया जिसमें बादामकी मात्रा अधिक थी। इससे गांधीजीकी पाचन क्रियामें गड़बड़ हो गई। उसे ठीक करनेके लिए उन्होंने एक दिन अंडीके तेलकी एक खुराक ले ली जिससे वे बेहोश हो गये और एक आश्रमवासीके समय पर पहुंच जानेके कारण ही गिरनेसे बच गये। इस घटनाके कुछ ही दिन बाद राजाजी आश्रममें आ पहुंचे। गांधीजीका उपवास करना जितना और किसीको नापसन्द था उतना ही उन्हें भी नापसंद था। अपनी अद्वितीय कुशलतासे उन्होंने समझा-बुझा कर गांधीजीको राजी कर लिया कि वे एक महीने तक शारीरिक उपवास करनेके बजाय कामका उपवास कर लें — अर्थात् काम बिलकुल बंद रखें।

गांधीजीने एक बार कहा था: "आत्म-निरीक्षणके समय मैं अक्सर अपने आपसे पूछता हूं कि अपना मिशन सिद्ध करनेके लिए मैं अपने शरीर पर जो भयंकर जोर डालता हूं वह मेरे संकल्प-बलका चिह्न है या ईश्वरकी कृपाका। इसकी कसौटी यह है: यदि इस भारके नीचे मैं दब जाऊं तो कहना चाहिये कि वह मेरे संकल्प-बल, मोह या फलकी आतुरताका परिणाम था, लेकिन यदि मेरा परिश्रम केवल ईश्वरेच्छासे ही हुआ है, तो उसकी कृपा मेरे साथ रहेगी और मैं इस तनावको सहन कर लूंगा।"

इस प्रसंग पर शरीरकी शक्तिका टूटना इससे विपरीत वस्तुका चिह्न था। उसमें अनासक्तिका अभाव या संपूर्ण आत्म-समर्पणका अभाव सूचित होता था। लेकिन जो व्यक्ति भगवानका हेतु सिद्ध करनेके लिए उसका साधन बननेकी आकांक्षा रखता है उसके लिए ये दोनों वस्तुएं अत्यावश्यक हैं। इसलिए उन्होंने अपनी शुष्क बुद्धिके सारे निर्णय और उपवास करनेकी अपनी प्रबल वृत्तिको एक ओर रख दिया और अत्यन्त नम्रतापूर्वक अपना पहला निश्चय बदल कर पूरी तरह अपने आपको अन्तरात्माके नादके वश कर दिया।

तदनुसार उनके वातावरणको उनके निश्चयकी भावनाके अनुकूल बनानेके लिए उनकी कुटियामें से सारे कागजात और फाइलें वगैरा हटा दिये गये। अखबारोंको भी देशनिकाला दे दिया गया। वे एक घंटा कताई करते और आध घंटा धुनाई करते थे। बाकी समय पूरा मौन रखते थे। और नितान्त आवश्यक होने पर पुर्जों पर लिख लिखकर बातचीत करते थे। मनोरंजनके लिए जब तब उनके जीमें आता वे अपनी पसन्दकी किसी पुस्तकके पन्ने पलटने लगते। ऐसी एक पुस्तक थी पतंजलिका योगसूत्र और दूसरी एक उर्दू पुस्तक थी। जब उनमें काफी शक्ति आ गई तब वे पासके कुछ गांवोंमें पैदल जाते थे, जहां विविध रचनात्मक प्रवृत्तियां चल रही थीं। वे स्व० सेठ जमनालाल बजाजकी समाधि पर और बजाज परिवारके आगार पास भी पैदल चलकर

जाते थे। (जमनालालजी गाधीजीके 'पाचवे पुत्र' और उनके सरक्षकताके आदर्शके अनुसार अपनी सम्पत्तिके 'आवे सरक्षक' थे।) परन्तु कभी कभी आश्रमकी छोटी-छोटी 'घरेलू वाते' गाधीजीके निश्चय पर विजय प्राप्त कर लेती थी और उनके विश्रामके शरीर और मन पर कार्यसे अधिक जोर डालनेवाला वन जानेका भय रहता था। राजाजीका ऐसे मौको पर उपस्थित रहना ईश्वरका वरदान सिद्ध होता था।

गाधीजीने अत्यन्त उच्च कोटिकी अनासक्ति सिद्ध कर ली थी। फिर भी उनमे मानव-भावनाये भरपूर थीं और राजाजी जैसे पुराने साथियोमे से किसीका उनके निकट रहना वहुत मूल्यवान था। मुझे ६ दिसम्वर, १९४४ की अपनी डायरीमे यह नोट लिखा मिलता हे "वापूके अत्यधिक आध्यात्मिक एकाकीपनमे कुछ भयकर वात है। एक हद तक तो महानताके साथ यह वस्तु अविच्छिन्न रूपसे जुडी हुई है। परन्तु इसे कम करनेके लिए कुछ न कुछ जरूर किया जाना चाहिये। . . उनके कार्यके स्वरूप और क्षेत्रमे वुनियादी परिवर्तनकी जरूरत हे। आगेसे उनका काम इजन चलानेवालेका न होकर मार्ग दिखानेवालेका होना चाहिये। उन्हे दिशा वता देनी चाहिये। नये नये विचार देने चाहिये और नैतिक तथा आध्यात्मिक प्रभाव फैलाना चाहिये। मै मानता हू कि हमे भविष्यमें उनके पथ-प्रदर्शनकी कितनी जरूरत होगी, इसकी आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते।"

ऐसे समय रगूनके रेवरेड विशप जॉर्जका आगमन अत्यन्त मवुर सिद्ध हुआ। वे आग्रहपूर्वक सायकालकी और प्रात ४ वजेवाली आश्रम-प्रार्थनाओमे शरीक हुए और गाधीजीके अनुरोध पर उन्होने एक छोटीसी अत्यन्त प्रभावोत्पादक और हार्दिक प्रार्थना गाकर सुनाई, "भगवान, सारी कायरता दूर कर दो, हमारा सारा भय मिटा दो।" इस प्रार्थनामे उन्होने ईसाका नाम तक नही आने दिया।

वडे दिनके एक छोटेसे सन्देशमे गाधीजीने आश्रमवासियोसे कहा "हम सर्वधर्म-समभावको माननेवाले है, इसलिए हमे ऐसे तमाम अवसर जरूर मनाने चाहिये। . हम अन्तर्मुख वने, आत्म-निरीक्षण करे। . अपने भीतरका सारा मैल हम वो डाले और ईश्वरकी एकताका और उसके आदेशकी मूलभूत समानताका अनुभव करे। जिसे हम सच्चा या न्यायपूर्ण मानते है, उसके लिए अपने प्राण भी न्योछावर करनेको तैयार रहकर हमे अपनी श्रद्धाका प्रमाण देना चाहिये। इस अवसर पर हमको यह वात याद रखनी चाहिये और उसका मनन करना चाहिये कि ईसा जिसे सत्य समझते थे उसीके लिए वे सूली पर चढे थे।"

यूरोपका गांधीजीका परिचय करानेका मुख्य श्रेय रोमां रोलांको था। उनके अवसानसे गांधीजीको बड़ा आघात लगा था। १९३१ में गांधीजी रोमां रोलांके साथ विलनवमें ५ दिन रह कर अलग हुए तब उन्होंने गांधीजीसे पूछा था "आपके आगमनकी कृतज्ञतापूर्ण स्मृतिमें आपकी इच्छानुसार, मुझे क्या करना चाहिये? क्या मैं संसारके सामने भारतके अहिंसक संग्रामको सही अर्थमें प्रस्तुत करूं? हिन्दुस्तानी सीखूं?' गांधीजीने उत्तर दिया 'हां।' परन्तु तुरंत अपनी भूल सुधार कर वे बोले "यहां भारतमें आकर भारतसे मिलिये, उसका परिचय करिये। परन्तु यह होना नहीं था। वे गांधीजीके इस विश्वाससे सहमत थे कि अहिंसा मानव जातिके लिए सर्वोच्च आदर्श है। परन्तु उनका यह मत था कि यूरोप अभी उस आदर्शको स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं है, और यदि तुरन्त कोई उपाय न किया गया, तो फिर यूरोपकी संस्कृति और सभ्यताको विनाशसे बचाना असंभव होगा। यह चिन्ता लगभग उनके मन पर हावी हो गई थी और इससे वे मुक्त नहीं हो पाते थे। गांधीजीकी अनासक्तिके स्पर्शकी ही उन्हें जरूरत थी। परन्तु अफसोस है कि इसके लिए उनके अत्यन्त तार्किक और विश्लेषणशील मस्तिष्कमें स्थान ही नहीं था। उनकी प्रामाणिकता स्फटिक मणिकी तरह शुद्ध और निर्मल थी और उनकी आध्यात्मिक निष्ठा निष्कलंक थी। गांधीजी उन्हें सत्यरूपी ईश्वरके मंदिरमें उपासना करनेवाला एक साथी मानते थे। इससे अधिक घनिष्ठ संबंध और क्या हो सकता था? उनकी मृत्युका समाचार पाकर गांधीजीने कहा 'वे सचमुच अपने अनेक नामरहित मूक कार्योंमें जीवित हैं। उन्होंने सत्य और अहिंसाको जैसा समझा और समय समय पर माना, उसीके अनुसार वे चले। समाजके किसी भी भाग पर पड़े हुए दुःखसे उनका हृदय दुःखी होता था। निर्मम मानव-हत्याकांडके प्रति उनकी आत्मा विद्रोह करती थी।'

सत्य और अहिंसाके मार्गके अनेक सहयात्री थे जिन्होंने गांधीजीकी ज्योतिसे अपने दीपक जलाये थे और जो समान ध्येयके लिए संसारके विभिन्न भागोंमें काम कर रहे थे। ऐसे कुछ यात्री तो एक-दूसरेको जानते तक न थे। उनमें से एक अमरीकन सज्जन रिचर्ड ग्रेग थे। वे कुछ समय तक गांधीजीके साबरमती आश्रममें रहे थे। उन्होंने अहिंसाकी शक्तिके विषयमें तथा खद्दरके अर्थशास्त्रके विषयमें अत्यन्त वैज्ञानिक ग्रन्थ लिखे हैं। उन्होंने गांधीजीको लिखा कि वे थोड़े ही समयमें उनके पास वापस आनेकी आशा रखते हैं। दूसरी कुमारी श्लेसिन था जो दक्षिण अफ्रीकामें गांधीजीकी श्रद्धालु सचिव थी और उनको पुत्रीके समान थी। गांधीजीकी बीमारीके समाचारोंसे उल्लसित करके उन्होंने अपना अनुपम शैलीमें गांधीजीको लिखा "जब आप बीमार थे तब मैं बहुत अशांत नहीं बनी थी (यद्यपि आपके कष्टसे मुझे अवश्य ही

दु ख हुआ था), क्योकि मुझे यह विश्वास था कि जब तक भारत स्वतत्र नही हो जायगा तब तक आप इस धरती पर अवश्य रहेगे।... मुझे इसमे जरा भी शका नही कि आप १२५ वर्ष तक **अवश्य जीवित रहेंगे**, यदि आप **सचमुच** चाहे तो।" उन्होंने पत्रमे यह भी लिखा कि वे गाधीजीसे सान फ्रान्सिस्कोकी शाति-परिषद्मे मिलनेकी और वहासे उनके साथ भारत लौटनेकी आशा रखती है। "यदि शान्ति-परिषद्मे आपके साथ जानेवाले सचिवोंकी कमी हो, तो इधर होकर वहा जानेका कार्यक्रम बनाइये। मै आपके साथ चलूगी।"

गाधीजीने उत्तर दिया . "मै नही मानता कि मेरे दक्षिण अफ्रीका आने या अमरीका जानेकी कोई सभावना है। परन्तु मै जाऊ या न जाऊ, अवश्य ही मै आशा करता हू कि तुम किसी दिन यहा आ जाओगी और अपने बाकीके दिन भारतमे ही बिताओगी।" अपने दूसरे पत्रमे उन्होने मिस श्लेसिनको लिखा "तुमने देख लिया न कि सान फ्रान्सिस्कोका काम तुम्हारे और मेरे बिना चल गया! परन्तु तुम यहा किसी दिन आ रही हो न? आशा है, मै सवा सौ वर्षकी कहानी लिखूगा। जब तक न लिखू, तुम धीरज रखना।"

मिस श्लेसिनका दूसरा पत्र इस प्रकार था "आगाखाने . . यही कहा बताया जाता है . . . कि भारत पर जो बादल छाया हुआ है वह आपकी वृद्धावस्थाका है। क्या यह सभव है कि उन्होने आपके सवा सौ वर्ष तक जीनेके निश्चयकी बात न सुनी हो? या वे उसे समझते नही है? जो कुछ भी हो, आपके निश्चयने वह बादल दूर कर दिया है, क्योकि आप फिर एक बार जीवनकी वसन्त ऋतुमे आ गये है। यह अधिक अद्भुत वसन्त है, क्योकि वह वर्षोके अनुभवसे सम्पन्न हो गया है—इतना ही क्यो, आपके अक्षरोमे भी एक नई शक्ति आई हुई दिखाई देती है। आप कहते है कि आप उन सवा सौ वर्षोका अनुभव लिखेगे। आशा है कि मुझे उस पुस्तकके कमसे कम एक भागका सम्पादन करनेमे हाथ बटानेका सौभाग्य मिलेगा।"

जर्मन यहूदी हर्मन कैलनबैक एक और ऐसे सहयात्री थे। वे गाधीजीके अत्यन्त घनिष्ठ मित्र और दक्षिण अफ्रीकाके सारे सघर्षो और अनुभवोमे उनके अभिन्न साथी रहे थे। उन्होने प्रण किया था कि सारी दुनिया गाधीजीको छोड दे, तो भी वे गाधीजीको कभी नही छोडेगे। गाधीजीके जीवनके सन्ध्याकालमे ये सब साथी उनके पास लौट आनेकी आशा रखते थे और एक सुदीर्घ और दु खदायी वियोगके बाद एक परिवारके बालकोकी तरह एक ही स्थान पर एकत्र होनेकी आशा रखते थे। परन्तु ऐसा नही होना था। कैलनबैक कुछ महीने बाद मर गये और बाकी दोको गाधीजीके जीवन-कालमें भाग्यने भारतमे आने नही दिया।

उत्तर नहीं हुई थी। गांधीजीको भी यही आशा थी। उस पत्रका प्रकाशित होना भारतके अहिंसक स्वातन्त्र्य-संग्रामके इतिहासमें एक और भव्य सीमाचिह्न था। पत्र इस प्रकार था

> यह विचित्र बात है कि काफी लम्बे पत्र-व्यवहारमें और विभिन्न सरकारी वक्तव्योंमें महासमितिके पास किये हुए प्रस्तावके गुण-दोषों पर कुछ भी नहीं कहा गया है। उसमें यह स्पष्ट कर दिया गया था कि स्वतंत्र भारत आक्रमणका अधिकसे अधिक सामना करेगा। आपको यह मालूम होगा कि अफ्रीका, एशिया और यूरोपमें फासिस्ट जापानी और नाजी आक्रमणोंका आरम्भ हुआ तबसे कांग्रेस निरन्तर उसकी निन्दा करती रही है। आपको यह भी मालूम होगा कि वर्तमान ब्रिटिश सरकारके कई सदस्योंने भूतकालमें फासिस्ट और जापानी आक्रमणका अनेक बार समर्थन या स्वागत किया था।
>
> महात्मा गांधीके नाम लिखे अपने पत्रके अन्तमें आपने कहा है कि आगे पीछे कांग्रेसको उसके विरुद्ध लगाये गये अभियोगोंका उत्तर देना होगा। हम उस दिनका स्वागत करेंगे जब हम दुनियाकी प्रजाओंके सामने खड़े हो सकेंगे और निर्णय देनेका कार्य उन्हीं पर छोड़ सकेंगे। पर उस दिन और लोगोंको भी जिनमें ब्रिटिश सरकार भी शामिल होगी आक्षेपोंका उत्तर देना होगा। मुझे विश्वास है कि वे भी उस दिनका स्वागत करेंगे।

ऐसा लगता है कि सत्ताधारियोंने यह हिसाब लगाया था कि राजनीतिक जीवनको दूर करनेके लिए केवल इतना ही करना जरूरी है लोगोंको वशमें करनेके लिए लार्ड बेल्फोरकी नीतिके अनुसार 'दस वर्ष तक सन्तोषसे राज काज चलाया जाय' कांग्रेसके तथाकथित 'दक्षिण पक्ष' और 'वाम पक्ष' के बीच फूट डाल दी जाय आज्ञाकारी नेताओंके हाथमें भारतके शासनका अधिकार दे दिया जाय और उन्हें कांग्रेस कार्यसमितिकी परवाह न करके सरकारके साथ समझौता करनेकी प्रेरणा दी जाय। इस विचार दृष्टिका समर्थन करनेवाले बुद्धिशाली लोगोंको एकत्र करनेके लिए तथा कांग्रेस कार्य समितिके सदस्योंको जेलमें बन्द रखनेके एक बहानेके रूपमें उनका उपयोग करनेके लिए वाइसरायकी कार्यकारिणी समिति (एक्जिक्यूटिव कौंसिल) के गृह-सचिव (होम मेम्बर) सर फ्रांसिस मुडीने जनवरी १९४५ में प्रान्तोंमें प्रचार-यात्रा की। उत्तर भारतमें अपनी 'मान्यता' का समर्थन करनेवाली कुछ सामग्री पानेके बाद ये महाशय बम्बई गये और प्रान्तके भूतपूर्व कांग्रेसी मुख्यमंत्री श्री बी० जी० खेरसे मुलाकात की। भारतके विभाजनके बाद

पश्चिमी पजावके गवर्नरके ऊचे पदकी इनकी कल्पना यही मालूम होती थी कि भारत-पाकिस्तान सम्मेलनके भारतीय प्रतिनिधि-मडलके दो सदस्योके बीच अपने साथीके विपयमे जो निजी वातचीत हुई, उसे अपने गवर्नर-जनरल कायदे आजम जिन्नाके कानो तक पहुचा दी जाय। जैसा खेर साहवने वर्णन किया, सर फ्रासिस मुडीने अपने दिमागमे उनके लिए यह मत वनाया था कि "वे एक शालाके शिक्षक जैसे भले और भोले आदमी है, लेकिन कोई राजनीतिक दृष्टिकोण नही रखते।" उन्होने श्री खेरसे जो प्रश्न पूछे और उनके जो उत्तर दिये गये, उनमे से कुछ इस प्रकार है

"इस गतिरोधका आपके पास क्या हल है?"

"गाधीजीसे चर्चा कीजिये और कार्यसमितिको मुक्त कर दीजिये, इससे रास्ता निकल आयेगा।"

"क्या जवाहरलाल किसी समझौतेमे रुकावट नही डालेगे? उनकी रिहाईसे समझौतेमे मदद तो नही मिलेगी, उलटे कोई समझौता हो रहा होगा तो वे उसमे वाधा डालेगे।"

"क्या इसी कारण उन सवको जेलखानेमे रखा गया है?"

श्री खेरने वादमे लिखा कि जिन गवर्नरो, दो वाइसरॉयो और वाइसरॉयकी कार्यकारिणीके कई सदस्योसे वे पहले मिले थे, उनके व्यवहारके विपरीत मुडीने इतनी भी शिष्टता नही दिखाई कि विदाके समय एक-दो कदम उनके साथ आये। "मैने यह देखा, मैने ही दरवाजा ढूढा और मै चला आया।"

एक और काग्रेसी नेताके साथ वम्वईमे मुलाकात करते समय सर फ्रासिसने पूछा "यहा राजनीतिका क्या हाल है?"

"हम गाधीजीके वताये हुए रचनात्मक कार्यक्रमका अमल कर रहे है।"

"क्या यह रचनात्मक कार्यक्रम कवायदकी तरह नही है? सिपाही कवायद इसीलिए करता है कि अन्तमे वह युद्धमे शरीक होकर लडनेके योग्य वन जाय।"

"रचनात्मक कार्यक्रम तो राष्ट्रीय उन्नति सिद्ध करनेके लिए है।"

"जिनसे आपका लडनेका इरादा है उनसे आप कैसे किसी वातकी आशा रख सकते है?"

"हमारी लडाई अहिंसक है।"

"क्या काग्रेसके दक्षिण पक्षमे सरकारके साथ समझौता करनेकी इच्छा नही है?"

"काग्रेसके दक्षिण पक्षसे आपका क्या मतलव है? क्या आप गाधीजीको दक्षिण पक्षमे शामिल करते है?"

'हां, मैं गांधीजीको दक्षिण पक्षमें गिनूंगा। जवाहरलाल और सरदार पटेल वामपक्षमें हैं। वे किसी भी प्रकारका समझौता नहीं करना चाहते।'

इन गृह-सदस्यका रवैया गवर्नरोंके शासनवाले प्रान्तोंके प्रशासनमें काफी स्पष्ट हो रहा था। मध्यप्रान्तमें एक जगह स्वाधीनता दिवसके अवसर पर (२६ जनवरी, १९४५) रखे गये सामूहिक कताईके एक कार्यक्रमकी मनाही कर दी गई। एक दूसरे स्थान पर रचनात्मक कार्यको संगठित करनेके लिए रखी गई कांग्रेसी कार्यकर्ताओंकी एक निजी सभा पर प्रतिबंध लगा दिया गया। सेवाग्राममें (क) गांधीजीके पोते कनु गांधी द्वारा आयोजित रचनात्मक कार्यकर्ताओंके एक प्रशिक्षण शिविर पर (ख) हिंदुस्तानी तालीमी संघ द्वारा आयोजित बुनियादी शिक्षकोंके प्रशिक्षण शिविर पर, और (ग) गांधीजीके आश्रमके व्यवस्थापक पर 'शिविर और सामूहिक कूच नियंत्रण आज्ञा' के अनुसार नोटिस जारी कर दिये गये। बिहारमें रचनात्मक प्रवृत्तियोंका पुनर्गठन करनेके स्पष्ट उद्देश्यसे आयोजित कांग्रेस कार्यकर्ताओंका एक सम्मेलन होनेके बाद घबराहटमें पांच प्रमुख कांग्रेसी नेताओंके नाम — जिनमें दो भूतपूर्व मंत्री भी थे — उनके कार्यों पर प्रतिबंध लगानेवाली आज्ञा जारी कर दी गई। देशके दूसरे भागोंमें भी इसी तरहके समाचार मिले थे।

इसके साथ साथ 'युद्धके बाद राष्ट्रीय पुनर्रचना' का एक भीमकाय कार्यक्रम लोगोंकी दृष्टिके सामने उन्हें ललचानेको रखा गया ताकि स्वाधीनताका प्रश्न खटाईमें पड़ जाय। खेतीके मजदूरोंको औद्योगिक मजदूरोंके खिलाफ और जमींदारोंको उद्योगपतियोंके विरुद्ध खड़ा करना सरकारका उद्देश्य था। नियोजित अर्थ-व्यवस्था और 'ग्राम-पुनर्निर्माण' के नाम पर ऐसी योजनाएं शुरू की गईं जिनके द्वारा गांवोंमें खेतीकी मशीनें, सरकारी खाद और बिजली तथा प्रतिदिनकी जरूरतका सस्ता माल बहुत बड़ी मात्रामें भर दिया जाय। देशमें सच्ची राष्ट्रीय सरकारके अभावमें ये योजनाएं भारतीय स्वातंत्र्यके विरुद्ध षड्यंत्र जैसी बन जाती थीं और [illegible] जीवन और देशकी साधन-सम्पत्ति पर तानाशाही नियंत्रणमें गुलामीकी बेड़ियां और भी मजबूत हो जाती थीं। गांधीजीके सब साथी जेलमें थे और वे अकेले ही कांग्रेसी चौकीदार रहे थे, इसलिए उन्हें लगा कि जागृतिका शंख फूंकनेका समय आ गया है।

जब भारतीय उद्योगपतियोंका एक शिष्टमंडल, जिसमें गांधीजीके निकटके मित्र घनश्यामदास बिड़ला और जे० आर० डी० टाटा भी थे, इंग्लैंड और अमरीकाके लिए रवाना होनेवाला था, उस समय एक मशहूर [illegible] गांधीजीसे पूछा [illegible] राष्ट्रवादी विचारके [illegible] पूंजीपतियों द्वारा बनी बड़ी बड़ी आडम्बरपूर्ण [illegible] सरकार भारतीय उद्योगोंका [illegible] करनेकी जो नीति योजनाएं इस समय बना रही है उनके बारेमें आपका क्या

विचार है?" यह कहा गया था कि ये उद्योगपति सरकारकी छत्रछायामे विदेश जा रहे है और सरकारका उद्देश्य यह था कि उन्हे ललचा कर विदेशी व्यापारिक स्वार्थोके साथ कोई 'शर्मनाक सौदा' करवा लिया जाय।

गाधीजीने एक अखबारी वक्तव्यमे इस प्रश्नका उत्तर दिया. "सरकार समझ गई है कि हममे जो श्रेष्ठ लोग है वे वाते तो जोर जोरसे करेगे, पर अपने आचरणसे उन्हे झूठा सावित करेगे। वडे व्यापारी, पूजीपति, उद्योग-पति और दूसरे लोग सरकारके विरुद्ध वोलते और लिखते तो है, परन्तु व्यवहारमे वे सरकारकी इच्छाका ही पालन करते है और उसके जरिये लाभ भी उठाते है—भले ही वह लाभ सरकारको ९५ प्रतिशत और उन्हे ५ प्रतिशत ही क्यो न मिले।"[७] गाधीजीने अपने वक्तव्यमे आगे कहा कि तमाम वडे हितोने एकस्वरसे घोपणा की है कि भारत अपने भाग्यका स्वय निर्माण करनेके लिए अपनी ही चुनी हुई राष्ट्रीय सरकारसे कम कुछ नही चाहता और वह सरकार ब्रिटिश या दूसरे सभी विदेशी नियत्रणसे मुक्त होनी चाहिये। परन्तु स्वाधीनता मागनेसे नही मिलेगी। वह तो तभी आयेगी जव "छोटे-वडे सभी स्वार्थ उन टुकडोका मोह छोडनेको तैयार होगे, जो ब्रिटिश राज्य द्वारा भारतमे मचाई जा रही लूटमे ब्रिटेनके साझेदार वननेसे उन्हे प्राप्त होते है। जव तक यह साझेदारी अवाधित रूपमे चलती रहेगी तब तक मौखिक विरोधसे कुछ भी होना-जाना नही है।" गाधीजीने यह भी कहा कि यह शिष्ट-मडल, जो विरोधियोकी आशकाके अनुसार (सरकारकी छत्रछायामे) इग्लैड और अमरीका जायगा, उस समय तक "किसी निरीक्षणके लिए या कोई शर्मनाक सौदा करनेके लिए" वहा जानेकी हिम्मत नही करेगा जब तक कि काग्रेस कार्यसमितिके प्रमुख सदस्य अदालतमे किसी तरहका मुकदमा चलाये विना नजरवन्द है—जिनका "एकमात्र अपराध यह है कि वे अपने रक्तके सिवा अन्य किसीका एक वूद रक्त भी गिराये विना भारतकी स्वाधीनता-प्राप्तिके लिए सच्चे हृदयसे प्रयत्न कर रहे है।"

गाधीजीने स्थितिको समझा उसके अनुसार, जहा तक अग्रेजोके इरादोका सम्वन्ध था, खतरा वहुत सच्चा था। इसलिए इस विपयमे चेतावनी देना आव-श्यक हो गया। और ऐसा करनेका उत्तम मार्ग यह था कि जो लोग यह जानते थे कि गाधीजी उनका वडा आदर करते है और जिनके मनमे गाधी-जीके वारेमे कोई गलतफहमी पैदा नही हो सकती थी, उन्ही मित्रोको चेता-वनी दी जाय। गाधीजीका यह अपना ढग था। जव १९३१ मे दूसरी गोलमेज परिपद्मे लन्दनमे उन्होने यह घोषणा की थी कि जो स्थापित स्वार्थ उचित जाचके वाद अनुचित या अन्यायपूर्ण ढगसे प्राप्त किये हुए पाये जायगे उन सबको खतम कर दिया जायगा, तव वम्वईके एक सरकारी पदवीधारी महाशय

गांधीजी न होते तो — जैसा उनमें से एक उद्योगपतिने कहा — ऐसी स्थितिकी कल्पना की जा सकती थी कि देशकी प्रमुख राजनीतिक संस्था कांग्रेस बुनियादी तौर पर व्यावसायिक वर्गके विरुद्ध होती और व्यावसायिक वर्ग पर व्यक्तिगत सम्बन्धोंका कोई प्रभाव न होता। उस सूरतमें परिणाम सर्वथा भिन्न होता।

३

युद्ध-प्रयत्नके नाम पर नागरिक स्वतंत्रताओंका जो निरंकुश दमन हो रहा था, उसके बीच देशके राजनीतिक जीवनकी पुनर्रचना अहिंसक पद्धतिसे कैसे की जाय, यह एक प्रश्न था। इस उद्देश्यके लिए गांधीजीने जिस साधनका उपयोग किया वह था रचनात्मक कार्य। यह रचनात्मक कार्य राजनीतिसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता था, परन्तु कार्यकर्ताओं तथा जनताको इस बातका स्पष्ट भान था कि यह रचनात्मक कार्य उनके राजनीतिक ध्येयके साथ जुड़ा हुआ है।

देशके विशाल भागोंमें कांग्रेसका संगठन निष्क्रिय बना दिया गया था। परन्तु गांधीजीने कहा कि सत्याग्रहकी लड़ाईमें यह संभावना तो सदा ही रहती है। इससे सच्चे अहिंसक कार्यकर्ताओंका समूह न तो कभी निराश होगा, न पंगु और निष्क्रिय बनेगा। "कांग्रेसको फिरसे सजीव बनानेका प्रयत्न किया जा सकता है और करना चाहिये। परन्तु आप मुझसे अगर यह कहें कि कांग्रेस संस्था न हो तब तक रचनात्मक कार्य नहीं किया जा सकता, तो मैं आपसे कहूंगा कि आप नहीं जानते कि अहिंसा कैसे काम करती है। समूहों अथवा व्यक्तियोंके रूपमें काम करनेसे कांग्रेसजनोंको कोई रोक नहीं सकता। **वे एक-दूसरेसे स्वतंत्र रह कर भी परिणाममें समन्वय और संयोजन साध सकते हैं।** प्रत्येक कांग्रेसीके लिए आदर्श यह है कि वह कांग्रेसका सारा बोझा अपने कंधे पर उठा ले।"[११] अगर यह न हो सके तो कांग्रेसी कार्यकर्ताओंके समूह रचनात्मक कार्य जारी रखनेके लिए कामचलाऊ संस्थाएं बना लें। यदि वे ठोस, मूक और आडम्बर-रहित कार्यमें ही लगे रहें और उत्तेजना, प्रसिद्धि तथा भाषणबाजीसे बचे रहें, तो उनका मार्ग काफी सरल हो जायगा और वे अनेक कठिनाइयोंसे बच जायेंगे।

राजनीति-मात्रसे सर्वथा अलग रह कर अधिकसे अधिक राजनीतिक परिणाम प्राप्त करनेवाली रचनात्मक प्रवृत्तिकी सफलताका रहस्य यह है कि उसमें किसीके प्रति शत्रुताका भाव नहीं होता। उसमें शुद्ध अहिंसाकी अर्थात् अपने मानव-बन्धुओंकी सेवाकी भावना ही अभिव्यक्त होती है। उसका लक्ष्य व्यक्ति और समाजको उन कमजोरियों और बुराइयोंसे मुक्त करना होता है, जिनका दुरुपयोग करके अत्याचारी एक टुकड़ा डाल कर लोगोंकी आत्माओंको खरीदता है और वे मानो स्वयं अपनी गुलामीकी जंजीरें तैयार करते हैं।

ऐसी प्रवृत्तिमें उद्धतता, नेखी अथवा घमंडकी बातोंके लिए कोई गुंजाइश नहीं हो सकती। वह कभी जान-बूझ कर किसीको उत्तेजित करनेवाली या कष्टमें डालनेवाली नहीं हो सकती। उसमें कायरता, सूझ-बूझके अभाव या मूर्खताका कोई भी स्थान नहीं हो सकता। रचनात्मक कार्यमें लगे हुए लोग अगर उनके रचनात्मक प्रयत्नको विफल करनेकी कोशिश की गई तो उसका सामना करनेके लिए अवश्य तैयार रहेंगे,' परन्तु वे "सविनय प्रतिकारका अवसर खोजने कभी नहीं जायेंगे।' यदि लोग बड़ी संख्यामें पूरी तरह यह रचनात्मक कार्य कर लें तो उससे सविनय कानून भंग सहित सीधी कारवाईका स्थान लेनेवाली एक सम्पूर्ण वस्तु मिल सकती है। कारण कोई अत्याचारी — वह कितना ही निरंकुश अथवा अनियंत्रित क्यों न हो — आत्मशुद्धि और सेवाके किसी कार्यक्रमको इसलिए दबा देनेका साहस नहीं कर सकता कि उसका अन्तिम लक्ष्य अत्याचारी शासनका अन्त करना है जिस प्रकार कोई अत्याचारी सत्य पर इसलिए प्रतिबंध लगानेका साहस नहीं कर सकता कि सत्य मनुष्यको स्वाधीन बनायेगा। और हर तरहके जलवायु और देश कालके अनुकूल इस रचनात्मक प्रवृत्तिके अनन्त रूप हो सकते हैं, इसलिए उसके उपयोग भी लगभग अनन्त हो सकते हैं — जिनसे किसी भी तरहके दमनके होते हुए भी कोई न्यायपूर्ण संग्राम जारी रखा जा सकता है और अन्तमें उस दमन पर विजय प्राप्त की जा सकती है। वर्तमान कहानीके दौरान पाठकोंको इसके अनेक उदाहरण मिलेंगे।

सरकारके प्रति कांग्रेसजनोंका क्या रवैया होना चाहिये? जहां मिल सके वहां सरकारी सहायता रचनात्मक कार्यके लिए मांगी या स्वीकार की जाय या नहीं? इन प्रश्नोंके उत्तरमें गांधीजीने कहा कि जहां हमारा अपनी ही शर्तों पर अर्थात् अपनी प्रारंभ शक्ति या कार्यकी स्वतंत्रता खोये बिना सरकारी सहायता मिल सकती हो वहां वह ली जा सकती है और ली जानी चाहिये।

उनसे यह प्रश्न भी पूछा गया कि अहिंसाकी प्रतिज्ञासे बंधे हुए कांग्रेसजन सरकारकी तरफसे चलाये जानेवाले मुकदमोंमें उन लोगोंके बचावमें मदद दे सकते हैं या नहीं जिन पर हिंसाके गंभीर अपराधोंका अभियोग लगाया गया हो? गांधीजीने उत्तर दिया कि अहिंसाका धर्म बुरेसे बुरे अपराधीको भी कानूनी न्याय दिलानेकी मनाही नहीं करता। १९४२के आंदोलनके सिलसिलेमें जिन लोगों पर मुकदमे चल रहे हैं या जिन्हें सजा हो चुकी है वे यदि अपना बचाव करना चाहें तो उन्हें मदद देनी चाहिये।

मध्यप्रान्तमें भारत छोड़ो आन्दोलनके समय कुछ लोगोंको दंगेके एक मामलेमें मृत्युदण्ड सुनाया गया था। इस दंगेमें आष्टी और चिमूर गांवमें

लोगोकी भीडने कुछ पुलिसवालोको मार डाला था। इसके वाद सरकारकी ओरसे वदलेकी भयकर कार्रवाइया की गई और ऐसा कहा जाता है कि अभियुक्तोकी गिरफतारीके वाद सेनाने उनकी स्त्रियो पर अवर्णनीय अत्याचार किये।

भारतके लाखो लोगोके लिए चिमूर और आप्टीकी वह करुण घटना एक ऐतिहासिक स्मृति वन गई थी। जिन दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियोमे वह घटना हुई, उसके जो करुण परिणाम हुए और कैदियोको लम्वे समय तक जो सतत भयकर मानसिक और शारीरिक पीड़ा भुगतनी पडी, उससे सारा किस्सा एक अनोखी वेदना और कडवाहटसे भर गया था। उन कैदियोको फासीकी सजा दी जायगी, इस आशकाने जनताकी भावनाओको अतिशय उत्तेजित कर दिया था। देशका प्रत्येक व्यक्ति निराश हो गया था। केवल गाधीजीको ही निराशा नही हुई, क्योकि उनका यह गहरा विश्वास था कि कोई व्यक्ति उद्धारसे परे नही होता और कोई अपराध दयाके सर्वव्यापी क्षेत्रसे वाहर नही होता। उन्होने ब्रिटिश शासकोसे अपील की . "मै किसी भी मामलेमे राज्यकी तरफसे फासी दिये जानेके विरुद्ध हू। परन्तु चिमूर-आप्टी जैसे मामलोमे तो फासीकी सजाके अधिकसे अधिक विरुद्ध हू। लोगोने ८ अगस्त, १९४२ को तथा उसके वाद जो कुछ किया, वह उत्तेजनाकी स्थितिमे किया था। अगर इस समय ये फासिया दी जायगी, तो यह निर्दयतापूर्वक और जान-वूझकर किया हुआ खून और उससे भी अधिक भयकर वस्तु सिद्ध होगी। क्योकि यह विधिवत् किया जायगा और तथाकथित कानूनके नाम पर किया जायगा। इस घटनाके कारण पहलेसे ही मौजूद दु खदायी कटुतामे अतिशय वृद्धि होनेके सिवा और कुछ नही होगा। मैं हृदयसे चाहता हू कि इन फासियोका विचार छोड दिया जाय!"[१२]

साथ ही उन्होने इस विपयमे लोकमतको गति देनेका काम भी आरम्भ कर दिया। वम्वईमे गाधीजीके यजमानके घर फासियोके लिए नियत तारीखकी पहली रात देर तक टेलीफोन जाते-आते रहे। उन्होने विभिन्न समाचारपत्रोके सपादको द्वारा प्रकाशित करनेके लिए एक अपील सवके पास भिजवाई। उनके एक आदेशमे यह कहा गया था "जिन स्थानोमें लोग सर्वसम्मत हो सके और जहा मतभेद पैदा होनेका जरा भी खतरा न हो, वहा ३ अप्रैलको विरोध और प्रार्थनाके चिह्नस्वरूप कामकाज वन्द रख कर अखिल भारतीय विरोध दिवस मनाया जाय।"

सफलताकी सभावनाके विरुद्ध भारी कठिनाइया दिखाई देती थी। परन्तु गाधीजी मृत्युसे पहले मरनेमे विश्वास नही रखते थे। उन्होने अन्तिम क्षण तक आशा नही छोडी। सौभाग्यसे फांसीकी आज्ञामे वचाव

करनेवाल वकीलको एक दोषका पता चल गया। परिणाम यह हुआ कि नजरसानी और पुन मुकदमा चलानेके प्राथना-पत्रकी सुनवाई होने तक फांसिया रोक दी गई। बादमे गांधीजीने इस सम्बन्धमे वाइसरायके साथ पत्र व्यवहार आरम्भ कर दिया। उस समय तक सारा राजनीतिक परिस्थितिमे नया मोड आ चुका था और बदली हुई परिस्थितियोमें वाइसरायने मृत्यु दण्डको घटा कर आजीवन कारावासकी सजामें बदल दिया।

*

यह आश्चर्यकी बात है कि स्वतत्रताकी गम्भीर लडाईमें स्पष्ट और स्थिर दृष्टिवाले तथा अविचल आतरिक शाति धारण करनेवाले व्यक्तिकी उपस्थितिसे वातावरणमे कितना बडा परिवतन हो जाता है। यह परिवतन उसके अमुक बात कहनेसे या अमुक काय करनेसे नही होता परन्तु केवल ऐसे व्यक्तिके व्यक्तित्वसे ही हो जाता है। लोग गांधीजीके पास — किसी प्रामाणिक कपासकी तरह — अपने मार्गकी दिशा निश्चित करनेके लिए जाते थे। गांधीजीके केवल उपस्थित रहनेसे ही लोगोको शक्ति और सुरक्षितता अनुभव होती थी। छोटेसे छोटे और बडेसे बडे सबको समान रूपसे उनके प्रेम सहानुभूति सात्वना और परिपक्व ज्ञानका प्रकाश मिलता था। उनके पत्र-व्यवहारके विपुल भडारसे हमें इस बातकी झांकी मिलती है कि यह जनीर किस तरह काम करता था। इस पत्र-व्यवहारके द्वारा वे मित्रो साथियो विरोधियो और बाहरवालो तकसे अपना सजीव सम्बन्ध जोड लेते थे और वे सब गांधीजी और भारतकी ओर आकर्षित होते थे। इस आकर्षणका आधार वे विश्वव्यापी आदश थे जिनके आधार पर गांधीजीका जीवन खडा था और उनके नेतृत्वमें भारतीय स्वातत्र्य-सग्राम लडा जा रहा था। उदाहरणके लिए डॉ० मुल्यारायन और डॉ० महमूद तो दोनो कट्टर काग्रेसी थे परन्तु उनके लडके साम्यवादी दलमें शरीक हो गये थे। डॉ० मुल्यारायनका लडका कद हो गया था। उसकी रिहाई पर गांधीजीने उसके सुखी माता पिताको लिखा

आपके पुत्रको फिरसे स्वतत्रता मिलने पर मुझे भी अपने आनन्दमें हिस्सेदार समझिये। परमात्मा करे वह जल्दी ही आपके पास पहुच जाय। मोहन (उनका लडका) को मुझसे इसी सप्ताहमें मिलना चाहिये। मुझे वह अच्छा लगता है। ॥

जब लडका उनसे मिल गया तो गांधीजीने फिर माता-पिताको लिखा मेरा खयाल था कि मैने आपको यह बता दिया है कि मोहन मुझसे मिल कर चला गया है और अपने बारेमें पुन मुझ पर अच्छी छाप छोड गया है। मैने उसे अपने विचारको बनानेका कोशिश तक नहा की। मन कवल उसे यहा अनुभव कराया कि मुझे उसमें कितना स्नेह है। ।

मोहनको उन्होने बादमे लिखा "जो भी काग्रेसी नेता मुझसे मिलने आता है, वह (भारतीय साम्यवादियोके बारेमे) एक ही कहानी कहता है। मै उनके कहनेके आधार पर कोई मत नही बनाऊगा। परन्तु उनकी बाते मुझ पर अनजाने ऐसा असर करती है, जिसे मै खुशीसे टालना चाहूगा। यह मै अपने मनकी बात कह रहा हू, ऐसा समझना। (साम्यवादियोके साथ सहयोग करनेके बारेमे) जहा तक एल० का सम्बन्ध है, मै उनसे सहमत हू। जहा तक मेरा सम्बन्ध है, मै सहमत नही हू। कारण, मुझे साम्यवादियोके साथ कधेसे कधा मिला कर काम करनेमे कोई कठिनाई नही है। हम सबको अपने अपने अनुभवो पर निर्भर करना चाहिये।"[१५]

डॉ० सैयद महमूदने साम्यवादियोके साथ अच्छे सम्बन्ध रखनेकी हिमायत की थी। उन्हे गाधीजीने लिखा "साम्यवादियोकी बात यदि कहू तो . . . मैने उनसे मिलने और उनसे मित्रता करनेकी कोशिश अपना रास्ता छोड कर भी की है। परन्तु जोशीने तो मुझे एकदम यही लिख दिया कि मैं उन्हे अधिक कुछ न लिखू। मै स्वय तो यह चाहता हू कि जैसे हबीब (डॉ० महमूदका लडका) यहा आया है वैसे उनमे से कोई भी यहा आ जाय। वे मुझे अपने विचारका बना सकते है। उनमे से कुछ यहा आकर रह चुके है। इससे अधिक मै कुछ कर सकता हू? क्या मुझे करना चाहिये?"[१६]

राजाजीके साथ राजनीतिक दृष्टिकोणका मतभेद पहलेकी तरह ही बना रहा। परन्तु जब एक काग्रेसी साथीने राजाजी पर अखबारोमें हमला किया, तो गाधीजीने राजाजीको लिखा "मुझे इसकी चिन्ता नही है। मै इस आदेशका अक्षरश पालन करता हू कि 'किसी भी बातकी चिन्ता मत रखो।' यदि हम ठीक है तो सब कुछ ठीक हो जायगा। क्या आप अभी तक अकेले है? मुझे एम० का अप्रत्यक्ष प्रहार पसन्द नही आया। यह बात मैने उन्हे भी लिखी है। ईश्वरको धन्यवाद है कि उसने आपको गैंडेकी खाल दी है!"[१७] काश, राजाजीकी चमडी सचमुच इतनी मोटी होती!

सरोजिनी नायडूका पुत्र चल बसा था। उन्होने गाधीजीको 'भाग्य-विधाता" का विशेषण दिया था। उसीका उपयोग करके गाधीजीने उन्हे लिखा[१८]

प्रिय गायक,

मैने पिछले महीनेकी १३ तारीखका आपका तार इसीलिए रख छोडा था कि आपके महान मातृस्नेहके लिए प्रेमकी कुछ पक्तिया लिखू। आपका तार उतना ही अच्छा था जितना किसी ऐसे तत्त्व-ज्ञानीका हो सकता है — जो उपयुक्त अवसर पर अपने तत्त्वज्ञानका उपयोग करता हो। आपके पत्रसे माताका उत्तम वात्सल्य प्रगट होता

है। पता नहीं कि आपसे अधिकसे अधिक प्रेम कवयित्रीके नाते किया जाय अथवा तत्त्वज्ञानीके नाते या माताके नाते? आप ही बताइये।

विधाता

बादमें जब उनकी पुत्री बीमार हुई, तो गांधीजीने सरोजिनी देवीको लिखा :[1]

प्रिय गायक,

मैं उत्तम कोटिका महात्मा नहीं हूं — वास्तवमें तो महात्मा ही नहीं हूं। परन्तु मैं इतना जानता हूं कि मैं एक वत्सल पिता हूं और इसलिए मेरा हृदय आपके जैसी वात्सल्यमयी माताकी तरफ अपने आप दौड़ जाता है। लीलामणिके लिए एक पत्र भेज रहा हूं। आशा है वह औरोंके लिए न सही परन्तु आपके लिए तो जरूर जीवित रहेगी। लीलामणिकी प्रगतिकी सूचना मुझे देती रहिये।

आपने जिस क्षणभंगुर दश्यका उल्लेख किया है उसमें मेरी बहुत कम दिलचस्पी है।

विधाता

उनकी बीमार पुत्रीको गांधीजीने इस प्रकार लिखा :[2]

प्रिय लीलामणि,

तुम्हें स्मरण है कि जब मैं तुम्हारे साथ गोल्डन थ्रेशहोल्ड में था तब बरसों पहले तुम मेरी गोदमें बैठी थी? अब तो तुम इतनी बड़ी हो गई हो कि मेरी गोदमें नहीं बैठ सकती। परन्तु मैं तुम्हारे पास होऊं तो तुम्हारा सिर उठा कर अपनी गोदमें रख लूं और तब तक तुम्हें न छोड़ूं जब तक तुम मुझे यह वचन न दे दो कि तुम तमाम डाक्टरी आदेशोंका अक्षरशः पालन करोगी। तुम्हारे शिष्योंको तुम्हारी जरूरत होगी। परन्तु तुम्हारी पुत्र वियोगसे पीड़ित माताको तुम्हारी सबसे अधिक आवश्यकता है। उनके खातिर हां कहो और जीती रहो।

बापूके आशीर्वाद

हरिजन काम करनेवाले एक कार्यकर्ताको यह पत्र लिखा : "अपना काता सूत आवश्यक खादीके लिए बेच देना (बजाय इसके कि सूत दानमें देकर अपने पहननेकी खादीके लिए दूसरों पर निर्भर रहा जाय) अपनी भिक्षासे जीवन-निर्वाह चलाना और बाकी हरिजन काममें लगा देना अधिक ईमानदारीकी बात है। लोगोंको तुम्हारी योग्यता मालूम हो जानी चाहिये। अस्पृश्यता

निवारणका एकमात्र उपाय हरिजनोका मदिर-प्रवेश ही नही है। वह तो अनेक उपायोमे से एक है। सभी उपाय आजमाने चाहिये।"[२१]

एक मित्रकी लडकीको गाधीजीने लिखा [२२]

प्यारी बच्ची,

तुम अब भी बच्ची ही हो——सदाकी भाति ही लापरवाह हो। तुमने पता नही लिखा। तारीख अधूरी छोड दी। लिखनेमें अशुद्धिया है। और तुम्हारा पत्र मुझे कल मिला, जो विवाहका दिन था। खैर, देरसे भी मिला तो सही। अस्तु, मै 'क' और उनकी पत्नीके लिए आशीर्वाद भेजता हू। उनमे से कौन किसके योग्य सिद्ध होगा?

बापूके आशीर्वाद

फ्रेन्ड्ज एम्बुलेस यूनिटवाले रिचर्ड साइमन्ड्सको, जिन्होने एक साथी कार्यकर्ता ग्लैन डेविस और उनकी भारतीय पत्नी सुजाताको गाधीजीसे मिलने भेजा था, यह 'छोटा और मीठा' पत्र लिखा "डेविसने 'चोरी कर ली है।' उसे इस चोरीके योग्य सिद्ध होना पडेगा।"[२३]

५

गाधीजी समय समय पर ऐसे प्रेरक सन्देश भेजा करते थे, जो निर्भयता-पूर्ण साहस, भारतके उज्ज्वल भविष्य तथा नैतिक नियमकी अतिम विजयकी अमर श्रद्धासे भरे होते थे। ये सन्देश करोडो लोगोके हृदयोमे प्रतिध्वनित होते थे और उनके भीतर भी उनके (गाधीजी) जैसी श्रद्धाकी जोत जगाते थे।

"गाधीजीज कॉरेस्पॉन्डेन्स विथ दि गवर्नमेन्ट १९४२–४४" नामक पुस्तकका उन्होने एक छोटासा प्राक्कथन लिखा था, जो इस प्रकार था "सारा भारत एक विशाल जेलखाना है। वाइसरॉय उस जेलखानेके गैर-जिम्मेदार सुपरिन्टेन्डेन्ट है। उनके मातहत बहुतसे जेलर और वॉर्डर है। . यदि कयामतका दिन है, अर्थात् कोई ऐसा न्यायाधीश है जिसे हम देखते नही है किन्तु फिर भी जो हमारे क्षणभगुर अस्तित्वकी अपेक्षा कही सच्चे रूपमे विद्यमान है, तो उसका न्याय जेलरके विरुद्ध कठोर और कैदियोके पक्षमे होगा। . सत्य और अहिंसा . कहीसे भी मिलनेवाली सच्ची सहायताका तिरस्कार नही करते। यदि वह सहायता अग्रेजो और मित्रराष्ट्रोसे मिलती है, तो और भी अच्छा। तब मुक्ति जल्दी आयेगी। यदि वे मदद नही करेगे, तो भी मुक्ति तो निश्चित ही है। इतनी ही बात है कि पीडा . . . अधिक सहन करनी होगी, समय अधिक लगेगा। परन्तु अधिक पीडा और अधिक समयकी क्या चिन्ता, यदि स्वतन्त्रताके पक्षमे उनका उपयोग हो, विशेष रूपमे जब सत्य और अहिंसाके द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त की जाय!"

धीरे धीरे स्थिति सुधरने लगी। ३१ मार्च, १९४५ को — राष्ट्रीय सप्ताहके समारोहसे" पहले अपने एक वक्तव्यमें गांधीजी यह कह सके थे 'हमारी अनेक भूलोंके होते हुए भी आज हम अपने लक्ष्यके जितने निकट हैं उतने पहले कभी नहीं थे।

८

यूरोपमें युद्ध समाप्त होने आ रहा था। सुदूर पूर्वमें भी युद्धका अंत कुछ ही समयमें होनेकी आशा बंधने लगी थी। परन्तु ज्यों ज्यों विजय समीप आती जा रही थी त्यों त्यों शान्ति दूर चली जा रही थी। तीसरे विश्वयुद्धके बीज पहले ही बोये जा चुके थे। कुछ ही महीने बाद अगस्त १९४५ में जापान पर गिराये गये अणुबम भावी घटनाओंके स्वरूपकी आगाही कर रहे थे।

बाहरकी अव्यवस्थासे भी मनुष्योंके मनकी अव्यवस्था अधिक बुरी थी। जैसे पहले विश्वयुद्धके बाद 'कैसरको फांसी पर चढ़ाओ' का नारा जोरोंसे उठा था वैसे ही इस बार युद्धके अपराधियों पर मुकदमा चलानेकी आवाज लोगोंके मन पर हावी हो गई थी।

यूरोपमें युद्धका अन्त हुआ उससे दो महीने पूर्व अर्थात् ७ मार्च १९४५ को लिखते हुए गांधीजीने कहा था युद्ध इस वर्ष या अगले वर्ष खतम हो जायगा। उसमें मित्रराष्ट्रोंकी विजय होगी। परन्तु अफसोस यही है कि वह नाममात्रकी विजय होगी। वह विजय अवश्य ही अधिक घातक युद्धकी पूर्व भूमिका सिद्ध होगी।

१६ अप्रैलको राष्ट्रपति रूजवेल्टके निधन पर गांधीजीने श्रीमती रूजवेल्टको शोक और अभिनन्दनका यह सन्देश भेजा अभिनन्दन इसलिए कि आपके प्रख्यात पतिको काम करते करते और ऐसे अवसर पर अवसान हुआ जब युद्धमें मित्रराष्ट्रोंकी विजय निश्चित हो चुकी है। भगवानने उन्हें ऐसी मृत्युमें शामिल होनेके अपमानसे बचा लिया जो अधिक घातक युद्धकी पूर्व भूमिका बन सकती है।

श्रीमती रूजवेल्टने उत्तर दिया मुझे तो हार्दिक आशा है कि भविष्यके बारेमें आपका भय निराधार सिद्ध होगा।" परन्तु चिह्न तो ऐसी आशाके विरुद्ध ही थे।

वाशिंग्टन वार्ताके बाद श्री राल्फ कॉनिस्टनने एक अनौपचारिक भेंटमें गांधीजीसे पूछा भूरी राष्ट्रोंको गोरोंसे न उत्पन्न होनेवाला संघर्ष स्थायी होनेके बारेमें आपको इतना डर क्यों होता है?

गांधीजीने उत्तर दिया 'कारण बिलकुल स्पष्ट है। हिंसाका तो आगे पीछे अन्त होने ही वाला है। परन्तु उसे अन्तमें शान्तिका जन्म नहीं हो

सकता। मै निश्चित रूपसे कह रहा हू कि यदि फिरसे ससार सयानपनकी दिशामे नही मुडा, तो हिंसक मनुष्योका पृथ्वी परसे सफाया हो जायगा। . . . जिनके हाथ खूनसे गहरे रगे हुए है, वे लोग ससारके लिए अहिंसक व्यवस्थाका निर्माण नही कर सकते।"

गाधीजीसे मुलाकात करनेवाले मित्रका कहना था कि वडे राष्ट्रोके जो प्रतिनिधिगण सान फ्रासिस्कोमे इकट्ठे होगे, वे तो जैसे है वैसे ही रहेगे; परन्तु सामान्य जनता युद्धकी भयकरताओका अनुभव करनेके वाद अपनी अपनी सरकारोको इसके लिए विवश कर देगी।

गाधीजी उनसे सहमत नही हुए। बोले "मै यूरोपियन मानसको अच्छी तरह जानता हू। जव उसे विशुद्ध न्याय और स्वार्थके वीच चुनाव करना पडेगा, तो वह स्वार्थकी ओर ही झपटेगा। अमरीकाका साधारण मनुष्य भी वहुत स्वतत्र विचार नही करता। रूजवेल्ट जो कहेगे उस पर वह विश्वास कर लेगा। रूजवेल्ट उसे वाजार देते है, उधार पूजी देते है और दूसरी ऐसी अनेक चीजे देते है। इसी तरह चर्चिल अग्रेज श्रमजीवी वर्गसे कह सकते है कि उन्होने साम्राज्यको सुरक्षित रूपमे टिकाये रखा है और उसके लिए विदेशी वाजार भी सुरक्षित कर दिये है। ब्रिटेनके लोग हमेशाकी तरह उनके पीछे चलेगे।"

"तो आप यह नही मानते कि यूरोप या अमरीकामे साधारण मनुष्य उन ऊचे आदर्शोकी वहुत परवाह करते है, जिनके लिए यह युद्ध लडनेका दावा किया जाता है?"

"नही, मै ऐसा नही मानता। अगर आपका इससे उलटा विचार हो, तो मै आपकी मान्यताका आदर करूगा, परन्तु मै उसमे भागीदार नही वन सकता।"

"तो क्या आप नही मानते कि पाच वडी सत्ताये या तीन वडी सत्ताये शातिकी गारटी दे सकती है?"

"मै निश्चय ही ऐसा नही मानता। अगर वे अहकारवश यह सोचती हो कि रगीन और तथाकथित पिछडी हुई जातियोका शोषण जारी रहते हुए भी वे स्थायी शान्ति स्थापित कर सकती है, तो वे मूर्खोके स्वर्गमे रहती है।"

"क्या आपके विचारसे वे जल्दी ही आपसमे लड पडेगी?"

"आप तो ठीक मेरी ही भाषामे वोल रहे है। रूसके साथ तो झगडा अभीसे शुरू हो गया है। प्रश्न यही है कि अन्य दो — यानी इग्लैड और अमरीका कव झगडना शुरू करते है। सभव है, शुद्ध स्वार्थ उन्हे सयाना वना दे और जो लोग सान फ्रासिस्कोमे एकत्र होगे वे यह कहे 'गिरी हुई लाशके लिए हमे आपसमें नही लडना चाहिये।' साधारण मनुष्यको इससे कोई लाभ

नहीं होगा। इसके विपरीत अहिंसक मार्गसे भारतको स्वतंत्रता आयेगी, तो वह संसारकी शोषित जातियोंके लिए सबसे बड़ी बात होगी। इसलिए मैं इसी पर संपूर्ण ध्यान केन्द्रित करनेका प्रयत्न कर रहा हूं। यदि भारत अपनी बारी आने पर न्यायका मार्ग ग्रहण करेगा तो वह शान्ति परिषदमें अपनी शर्तें नहीं रखेगा। परन्तु शान्ति और स्वतंत्रता उसकी धरती पर उतर आयेंगी — एक भयंकर प्रचंड धाराके रूपमें नहीं बल्कि 'स्वर्गसे बरसनेवाली कोमल वर्षा' के रूपमें। अहिंसा द्वारा प्राप्त स्वतंत्रता भारतके छोटेसे छोटे आदमीके लिए भी होगी। इसीलिए मैं अहिंसाका पुजारी हूं। जब देशका छोटेसे छोटा आदमी भी यह कह सकेगा कि 'मुझे मेरी स्वतंत्रता मिल गई', तभी मैं कह सकता हूं कि मुझे भी स्वतंत्रता मिल गई है।

इसके बाद बातचीत आक्रमणकारी राष्ट्रोंके साथ युद्धके बाद कैसा व्यवहार किया जाय इस विषय पर चल पड़ी।

गांधीजी बोले: 'एक अहिंसक मनुष्यके नाते मैं व्यक्तियोंको दण्ड देनेमें विश्वास नहीं रखता। किसी समूचे राष्ट्रको दंड देनेकी बात तो मुझे और भी कम बरदाश्त हो सकती है।'

युद्धके अपराधियोंका क्या होगा?

गांधीजीने तुरन्त तीखे स्वरमें पूछा: 'युद्धके अपराधी क्या होते हैं? क्या युद्ध स्वयं ईश्वर और मानवताके विरुद्ध एक अपराध नहीं है? और इसलिए जिन लोगोंने युद्धको स्वीकृति दी, उसकी योजना बनाई और उसका संचालन किया, वे सब क्या युद्धके अपराधी नहीं हैं? युद्धके अपराधी केवल धुरी राष्ट्रोंमें ही नहीं हैं। रूजवेल्ट और चर्चिल हिटलर और मुसोलिनीसे युद्धके कम अपराधी नहीं हैं।'

इससे अधिक अंग्रेजोंने गांधीजीके सामने जो बात स्वीकार की थी उसीको गांधीजीने दोहराया कि हिटलर तो 'ब्रिटेनका पाप' है। हिटलर ब्रिटिश साम्राज्यवादका उत्तरमात्र है और यह बात मैं इन तथ्योंके बावजूद कहता हूं कि हिटलरवाद और उसके पहलूका विरोध [illegible] है। केवल जर्मनी और जापानने ही नहीं परन्तु इंग्लैंड, अमरीका और रूसने अपने हाथ [illegible] खूनसे रंगे हैं। जापानियोंने अपनेको स्वयं पश्चिमका योग्य शिष्य ही सिद्ध किया है। उन्होंने पश्चिमके चरणोंमें बैठ कर जो [illegible] उससे पश्चिमको पराजित कर लिया।

आप शांति परिषद्में किस बातका सिद्ध होना पसन्द करेंगे?

मैं राष्ट्रोंमें समानता — बलवानसे बलवान और दुर्बलसे दुर्बल राष्ट्रके बीच समानता। बलवानोंको दुर्बलोंके स्वामी या मालिक न बन कर उनके सेवक बनना चाहिये।

"क्या यह अतिशय आदर्शवादी बात नहीं है?"

"हो सकती है। परन्तु आपने मुझसे यह पूछा था कि मैं क्या होना पसन्द करूंगा। मेरा यह विश्वास है कि मानव-स्वभाव सदा ऊंचा उठता रहा है। इसलिए मैं मानव-स्वभावके भविष्यके बारेमें कभी निराशावादी विचार नहीं रख सकता। यदि पांच महासत्तायें यह कहें कि 'हमारे पास जो कुछ है उसे तो हम रखेंगे ही', तो परिणाम एक भयंकर विपत्ति होगी और फिर तो संसारका और पांच महासत्ताओंका भगवान ही मालिक है। फिर दूसरा अधिक संहारक युद्ध होगा, और दूसरी सान फ्रान्सिस्को परिषद् होगी।"

"दूसरी सान फ्रांसिस्को परिषद्के परिणाम क्या पहलीसे कुछ अधिक अच्छे होंगे?"

"आशा तो यही है। तब लोग अधिक सयाने हो जायंगे। अपने तीसरे अनुभवके बाद वे कुछ सन्तुलन प्राप्त कर लेंगे।"

"क्या आप पश्चिमके लोगोंको शान्तिकी कला सिखानेके लिए वहां नहीं जायंगे?" मुलाकातीने पूछा।

उत्तरमें गांधीजीने बताया कि किस प्रकार दूसरे विश्वयुद्धके पहले कुछ ब्रिटिश शान्तिवादियोंने, जिनमें डिक शेपर्ड और मॉड रॉयडन भी थे, उन्हें लिख कर मार्गदर्शन चाहा था। "मेरे उत्तरका सार यह था: 'यदि आपमें से एक भी शान्तिवादी सही मानेमें सच्चा अहिंसक बन सके, तो वह अकेला यूरोपके लोगोंमें अहिंसाका प्रचार कर सकेगा। मैं कितना ही चाहूं तो भी आज मैं यूरोपको नहीं बचा सकता। मैं यूरोप और अमरीकाको जानता हूं। अगर मैं वहां जाऊं तो अजनबी माना जाऊंगा। कदाचित् मेरी अतिशय प्रशंसा कर दी जाय, परन्तु इतना ही होकर रह जायगा। जिस भाषाको वे लोग समझ सकते हैं, उसमें मैं उनके सामने शान्तिका विज्ञान प्रस्तुत नहीं कर सकूंगा। परन्तु यदि मैं भारतमें अपनी अहिंसाको सफल बना सकूं, तो वे मेरी बात समझेंगे। तब मैं भारतके द्वारा बोलूंगा।' इसलिए मैंने अमरीका और यूरोपके निमंत्रण स्वीकार नहीं किये। आज भी मेरा यही उत्तर होगा।"

"अगर आप सान फ्रांसिस्कोमें हों, तो किस चीजकी हिमायत करेंगे?"

"अगर मैं यह जानता होता तो आपको जरूर बता देता। परन्तु मेरा स्वभाव कुछ अलग ही है। जब कोई स्थिति मेरे सामने पैदा होती है तब उसका हल मुझे सूझ जाता है। मैं ऐसा आदमी नहीं हूं, जो एकान्तमें बैठ कर समस्याओं पर विचार करता हो। मैं कर्मयोगी मनुष्य हूं। कोई परिस्थिति मेरे सामने खड़ी होती है तब उसमें व्यवहारकी दिशा मुझमें अपने आप स्फुरित होती है। तर्क किसी घटनाके पहले नहीं किन्तु बादमें आता है। मैं जानता हूं कि जिस क्षण मैं सन्धि-परिषद्में पहुंचूंगा उसी क्षण उपयुक्त वाणी मुझे

टूट जायगी, पहले नहीं टूटेगा। परन्तु इतना मैं जरूर कह सकता हूं कि यहां मैं जो भी कुछ कहूंगा वह युद्धकी दृष्टिसे नहीं परन्तु शान्तिकी दृष्टिसे ही कहूंगा।"

इसके बाद वे विश्व-सरकारके प्रश्न पर आये। किस प्रकारका विश्व-संगठन स्थायी शान्ति स्थापित करेगा या उसकी रक्षा करेगा?

'केवल मुख्यतः सत्य और अहिंसा पर आधारित संगठन।'

संसारकी वर्तमान अपूर्ण अवस्था और अपूर्ण मानव-स्वभावको देखते हुए आपकी रायमें किन साधनोंसे शान्तिकी स्थापना होगी?

पिछले प्रश्नके उत्तरमें बताई गई बात लगभग पूरी हो, तो ही शान्ति की स्थापना हो सकती है।

क्या आप चाहते हैं कि विश्व-सरकारकी स्थापना हो?'

हां, मैं व्यावहारिक आदर्शवादी होनेका दावा करता हूं। जिस हद तक सिद्धान्तोंका बलिदान न करना पड़े उस हद तक मैं समझौतेमें विश्वास करता हूं। मैं जैसी विश्व-सरकार चाहता हूं वह शायद आज ही बने न मिल सके। परन्तु यदि वह सरकार ऐसा ढूंढ़ जो मेरे आदर्शको स्पर्श कर सके तो मैं समझौतेके रूपमें उसे स्वीकार कर लूंगा। इसलिए यद्यपि मैं विश्व संघ पर मोहित नहीं हूं फिर भी यदि वह वास्तवमें अहिंसात्मक आधार पर बना तो उसे स्वीकार करनेके लिए मैं तैयार रहूंगा।'

गांधीजी किस हद तक समझौता कर सकते थे, यह उन्होंने एक पोलिश मित्रको लिखे पत्रमें इस प्रकार समझाया था "अहिंसामें विश्वव्यापी विश्वास उत्पन्न न हो तब तक व्यवस्था रखनेके लिए विश्व-पुलिस रह सकती है।"

अन्तमें उनसे यह पूछा गया: यदि संसारके राष्ट्र शान्तिकी रक्षा और सब प्रजाओंके कल्याणकी साधनाके लिए विश्व-सरकारका विचार करें तो क्या उस सामान्य योजनामें सम्मिलित होनेके लिए आप स्वाधीनताकी भारतीय आकांक्षाका परित्याग करनेका समर्थन करेंगे?

गांधीजीने उत्तर दिया: यदि आप अगस्त १९४२ के कांग्रेसके उस प्रस्तावको जिसकी इतनी निन्दा की गयी है ध्यानसे पढ़ेंगे तो आपको पता लग जायगा कि संसारमें स्थायी शान्ति बनाये रखनेकी किसी भी योजनामें असरकारी भाग लेनेके लिए भारतको स्वाधीनता मिलना आवश्यक है।

सान फ्रान्सिस्को सम्मेलनके पहले ही गांधीजीने एक वक्तव्यमें कहा था कि कांग्रेसने १९४२ में ही यह घोषणा कर दी थी कि संसारकी भावी शान्ति सुरक्षा और व्यवस्थित प्रगति स्वतंत्र राष्ट्रोंके एक ऐसे विश्व-संघका तकाजा करती है जो अपने अंगभूत राष्ट्रोंकी स्वतंत्रताकी एक राष्ट्र द्वारा दूसरे

राष्ट्रके शोषण तथा उस पर होनेवाले आक्रमणको रोकनेकी, राष्ट्रीय अल्प-सख्यक जातियोके सरक्षणकी, विश्वके सारे पिछडे हुए प्रदेशो और जातियोकी प्रगतिकी तथा समस्त मानव-जातिके कल्याणके लिए विश्वकी सावन-सामग्रीको एकत्र करने तथा उसका उपयोग करनेको गारटी देगा।" उस प्रस्तावमे यह भी कहा गया था कि ऐसे विश्व-सघकी स्थापना होने पर सव देश नि शस्त्रीकरण पर अमल करेगे और स्वावीन भारत ऐसे विश्व-सघमे सहर्ष सम्मिलित होगा।

उसी वक्तव्यमे गाधीजीने कहा था कि जीवनभर युद्धका विरोधी और शान्तिका उपासक होनेके कारण मेरा यह दृढ विश्वास है कि जव तक मित्र-राष्ट्र या ससार युद्धकी सफलता और उसके साथ लगी हुई भयकर धोखे-वाजो और छल-कपटमे विश्वास रखना नही छोड देगे, तव तक शान्तिकी आशा नही रखी जा सकती। "मुझे इस वातका वडा भय है कि विश्व-सुरक्षाकी जो रचना खडी करनेका विचार किया जा रहा है, उसकी तहमे अविश्वास और भय है और ये दोनो ही युद्धको जन्म देते है।"

इसी प्रकार जव तक मित्रराष्ट्र समस्त जातियो और राष्ट्रोकी समानता और स्वतन्त्रता पर आवारित सच्ची शान्ति स्थापित करनेका निश्चय नही कर लेगे, तव तक विश्वशान्ति या विश्व-सुरक्षाकी आशा नही रखी जा सकती। "एक राष्ट्रके द्वारा दूसरे राष्ट्रके शोषण और एक राष्ट्र पर दूसरे राष्ट्रके प्रभुत्वके लिए ऐसे ससारमे कोई स्थान नही हो सकता, जो युद्धमात्रका अन्त करनेका प्रयत्न कर रहा हो। ऐसे ससारमें ही सैनिक दृष्टिसे निर्वल राष्ट्र वलवान राष्ट्रोकी धौस या शोषणके डरसे मुक्त होगे।"

इस स्थितिको जन्म देनेके लिए पहला कदम यह होगा कि भारतको तुरन्त स्वावीन घोषित कर दिया जाय। जव तक भारत और उसके जैसे दूसरे देश मित्रराष्ट्रोके पैरोमें लोटते रहेगे तव तक ससारने शान्तिकी स्थापना नही हो सकती। "भारतकी स्वतन्त्रतासे दुनियाकी तमाम शोषित जातियोको इस वातका प्रत्यक्ष प्रमाण मिल जायगा कि उनकी स्वतन्त्रता वहुत निकट है। . . इस प्रकार भारतीय स्वाधीनताकी माग किसी भी तरहसे स्वार्थ-पूर्ण नही है। उसके राष्ट्रवादमे आन्तर-राष्ट्रवाद समाया हुआ है।"

गाधीजीने यह भी कहा कि शान्तिकी सधि न्यायपूर्ण होनी चाहिये। "इसके लिए वह दण्ड देनेवाली और वदला लेनेवाली न हो। जर्मनी और जापानको अपमानित नही करना चाहिये। तव प्रयत्न उन्हे मित्र वना लेनेका होना चाहिये। वलवान कभी वदला लेनेवाले नही होते। . . इसलिए शान्तिके फल सवको समान रूपसे वाट कर खाने चाहिये। . मित्रराष्ट्र अन्य किसी उपायसे अपने लोकतन्त्रका प्रमाण नही दे सकते। . . इन वातोसे

यह निश्चय निकलता है कि जबरन निःशस्त्र बनाये हुए राष्ट्र पर शस्त्रोंके बल पर कोई संधि नहीं थोपी जायगी।

गांधीजीका कहना था कि शान्तिके पुजारियोंके लिए फिर कार्य करनेका समय आ गया है। युद्धके कारण दृढ़से दृढ़ मनवाले पुजारी भी निर्बल सिद्ध हुए थे। उस समय डरने लायकोंका गला दबा रखा था। इससे उनकी क्रिया कुंठित हो रही थी। परन्तु अब तो भयंकर बद दुःस्वप्न समाप्त हो गया है। इसलिए ऐसे लोगोंको विजेताओंको पराजितोंसे बदला लेनेकी उनका शोषण करनेकी तथा उनका अपमान करनेकी लालसाका साहस और दृढ़तासे विरोध करना चाहिये। विश्वशान्तिके लिए बताई हुई गांधीजीकी शर्तें अर्वाचीन सभ्यताकी सच्ची कसौटी करनेवाली थीं।

अन्तमें गांधीजीने कहा कि यदि शान्तिकी उपरोक्त जरूरी शर्तें मान ली जायं तो सान फ्रांसिस्कोके सम्मेलनमें ब्रिटिश साम्राज्यवादके नियुक्त किये हुए भारतीयों द्वारा भारतके प्रतिनिधित्वकी पोगापंथी एक स्वाभाविक कदमके रूपमें बन्द होनी चाहिये। ऐसा प्रतिनिधित्व कोई प्रतिनिधित्व न होनेसे ज्यादा बुरा होगा। या तो सान फ्रांसिस्कोमें भारतका प्रतिनिधित्व कोई चुना हुआ प्रतिनिधि करे या उसका कोई प्रतिनिधित्व ही न हो।

परन्तु इसका समय अभी आया नहीं था। भारतको स्वतंत्र राष्ट्रोंकी परिषदमें उचित स्थान पानेके लिए भयंकर अग्नि-परीक्षामें से गुजरना बाकी था।

५

अन्तमें परिस्थितियां बदलने लगीं।

यूरोपमें युद्धके प्रवाहकी दिशा निश्चित रूपमें पलट चुकी थी। परन्तु यह माना गया था कि यूरोपमें धुरीराष्ट्रोंकी पराजय हो जानेके बाद भी जापानको मैदानसे भगानेमें कमसे कम दो वर्ष और लगेंगे और युद्धकी इस आखिरी मंजिलमें मित्रराष्ट्रोंकी पूर्वीय फौजी कारवाइयोंका मुख्य केंद्र भारत बनेगा। लार्ड वेवेल भारतके वाइसराय थे। इसलिए उन्हें लगा कि भारतके विभिन्न राजनीतिक दलोंके सहयोगके बिना अकालसे तबाह हुए और असन्तोषकी आगसे जल रहे भारतसे उन्हें वह सक्रिय सहयोग नहीं मिल सकेगा जो इस कामके लिए जरूरी है। इसलिए वे कोई मार्ग निकालनेमें रस लेने लगे।

गांधी-जिन्ना वार्ताओंके कुछ समय बाद केन्द्रीय विधान-सभाके कांग्रेस दलके नेता श्री भूलाभाई देसाईके साथ हुई एक भेंटमें वाइसरायने उनसे कहा राजनीतिक गतिरोधको समाप्त करनेके लिए मैं आपकी सहायता चाहता हूं। अब परिस्थितियां बहुत विषम हो गई हैं। अब उन्हें जहांका तहां नहीं रहने दिया जा सकता। आगे-पीछे तो हमें मिल कर ही काम करना होगा।

यदि कांग्रेस और मुस्लिम लीगके संसदीय दल मिलकर राष्ट्रीय सरकार रचें, तो मैं उसका स्वागत करूंगा।"

वाइसरॉयने श्री भूलाभाईको यह भी आश्वासन दिया कि यद्यपि मिश्र राष्ट्रीय सरकारको १९३५ के भारतीय शासन-विधानकी मर्यादाके भीतर ही रह कर काम करना पड़ेगा, फिर भी मैं स्वयं भारतीय दृष्टिकोणको अधिकसे अधिक सन्तोष देनेकी कोशिश करूंगा। श्री भूलाभाईको ऐसा लगा कि इस बातकी कोई गारंटी नहीं कि युद्ध जल्दी खतम हो जायगा या उसके अन्तमें कोई अधिक अनुकूल परिस्थिति सामने आयेगी। यह अवसर और प्रस्ताव इतना अच्छा है कि इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। साथ ही, इससे कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्योंकी रिहाईकी संभावना भी बढ़ जायगी, क्योंकि उनकी नजरबन्दीके कारण किसी भी राजनीतिक समझौतेमें रुकावट होती है।

वाइसरॉयके साथ हुई बातचीतसे प्रोत्साहित होकर श्री भूलाभाई केन्द्रीय विधान-सभाके मुस्लिम लीगी दलके उपनेता नवाबजादा लियाकतअली खांसे मिले। नवाबजादाने उनसे कहा कि केन्द्रमें कांग्रेस और लीगकी मिश्र सरकार न केवल वांछनीय है, परन्तु संभव भी है। श्री भूलाभाईने बादमें बताया कि इन वार्ताओंके दौरान उन्होंने यह बात जिन्नाके कान पर डालनेकी सूचना नवाबजादाको की थी और "बादमें उन्होंने मुझे बताया कि यह बात उन्होंने जिन्नाके कान पर डाल दी थी।"[२८] श्री भूलाभाईकी आशा बंधी।

जनवरी १९४५ के प्रथम सप्ताहमें श्री भूलाभाई सेवाग्राममें गांधीजीसे मिले और सारे प्रश्नकी उनसे चर्चा की। गांधीजीने उनसे कहा कि संसदीय रीति-नीतिको और जो कांग्रेसी उस दिशामें सोचते हैं उनके मानसको आप अच्छी तरह जानते हैं। मेरा अपना मन तो उलटी ही दिशामें चलता है। मैं नहीं मानता कि स्वाधीनता संसदीय प्रवृत्तिसे आ सकती है। परन्तु मैं मानता हूं कि संसदीय मनोवृत्तिकी जड़ देशमें जम चुकी है। कांग्रेसमें दोनों दृष्टि-कोणोंके लिए गुंजाइश है। आप अपने निर्णयके अनुसार काम करनेको स्वतंत्र हैं। श्री भूलाभाईके साथ हुई अपनी बातचीतका सार नोट करते हुए उन्होंने लिखा : "कोई भी व्यक्ति अपने लिए इसे ढाल न बनाये। परन्तु सब स्वतंत्र रूपसे विचार और निर्णय करें। परन्तु इसका उपयोग यह बतानेके लिए किया जा सकता है कि मैं इस प्रस्तावके विरुद्ध नहीं हूं।"[२९]

गांधीजीने अपने नोटमें यह भी लिखा था : "यदि मेरी कल्पनाकी कांग्रेस और लीगकी मिश्र सरकार बने, तो मैं उसका स्वागत करूंगा। यदि कांग्रेस और लीग मिल कर संसदीय कार्य करें, तो मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु इसके लिए आपको कार्यसमितिसे सत्ता प्राप्त करनी चाहिये। यह सत्ता प्राप्त किये बिना कोई समझौता कर लेनेमें मुझे खतरा दिखाई देता है। लीगको

काग्रेस कार्यसमितिकी रिहाई करानेके प्रयत्नमें शामिल होना चाहिये।" नाटके अन्तमें यह कहा गया था मैं नहीं चाहता कि आप इसमें किसी तरह खिंच जाय।

इस सम्बन्धमें नीचेके विभिन्न कदम उठानेकी सूचना की गई थी। ये कदम दोनोंकी चर्चाओंके फलस्वरूप तथा समय समय पर गांधीजी द्वारा किये गये स्पष्टीकरणोंसे सामने आये थे।

१ काग्रेस और लीग इस बातके लिए सहमत हो कि वे केन्द्रमें अन्तरिम सरकार बनानेमें शरीक होगी। (क) इस सरकारमें केन्द्रीय विधान-सभाके सदस्योंमें से काग्रेस और लीग द्वारा नियुक्त सदस्य समान सख्यामें होंगे। (ख) अल्पसख्यकोंके प्रतिनिधि होंगे। और (ग) प्रधान सेनापति होगा।

२ सरकार तो भारतके वर्तमान शासन विधानके ढांचेके भीतर रहकर ही बनाई जायगी और काम करेगी परन्तु काग्रेस और लीगके बीच यह स्पष्ट समझौता रहेगा कि केन्द्रीय विधान-सभाने जिस कदमके विषयमें कोई कानून पास न किया हो ऐसा कोई कदम विधानके अनुसार गवर्नर जनरलको प्राप्त सत्ताके आधार पर न तो उठाया जाना चाहिये और न उठानेका प्रयत्न होना चाहिये। यह वस्तु गवर्नर जनरलको विधानके अनुसार प्राप्त वीटो की सत्ताको व्यवहारमें खतम कर देगी और नियुक्त किये गये सदस्योंको चुनी हुई विधान सभाके प्रति जिम्मेदार बनायेगी।

३ किसी यूरोपियन सदस्यको शामिल करना जरूरी हो, तो वह काग्रेस और लीगका पसन्द किया हुआ होना चाहिये।

४ काग्रेस और मुस्लिम लीगके बीच पहलेसे ही यह समझौता हो जाना चाहिये कि यदि ऐसी अन्तरिम सरकार बनी तो उसका पहला कदम काग्रेस कार्यसमितिके सदस्योंको नजरबन्दीसे मुक्त करना होगा। इस मामलेमें लीगका दृढ और स्पष्ट वचन उसकी प्रामाणिकताका प्रारम्भिक प्रमाण होगा।

५ भूलाभाईको किसी बातसे बच जानेके पहले यह विश्वास कर लेना चाहिये कि वे जो समझौता करना चाहते हैं उसे जिन्नाकी पहलेसे स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है सारी बातें स्पष्ट हो जानी चाहिये और वह लेखबद्ध भी हो जानी चाहिये ताकि बादमें कोई सन्देह या गलतफहमी न उत्पन्न होने पाये।

६ यदि केन्द्रमें ऐसी सरकार बने तो फिर दूसरा कदम यह होगा कि प्रान्तोंसे गवर्नरोंका शासन हटा दिया जाय और जल्दीसे जल्दी मिश्र सरकार बनाई जाय।

७ उचित समय पर गांधीजी काग्रेसकी कार्यसमितिसे ऐसा कहेंगे कि भूलाभाईने उनकी अनुमतिसे यह काम किया है।

गांधीजीसे पूछा गया, "यदि कांग्रेस कार्यसमितिसे आपका मिलना सम्भव हो, तो क्या आप कार्यसमितिको यह योजना स्वीकार करनेके लिए समझानेका प्रयत्न करेंगे?"

"हां।"

"इस योजनाके पक्षमें आपकी क्या दलीलें हैं?"

"जिन्नाके साथ हुई मेरी वार्ताओंके बाद जिन्नाने कई लोगोंसे कहा कि गांधीने अन्तरिम सरकारका उल्लेख तक नहीं किया था। भूलाभाईका प्रयत्न इसका उत्तर है। लेकिन अगर लीगकी नीयत सच्ची नहीं हो, तो इसका कोई नतीजा नहीं निकलेगा।"

"यदि वाइसरॉय कांग्रेस और लीगकी परवाह न करके अपने 'वीटो' का उपयोग करें तो क्या होगा?"

"उस स्थितिमें भूलाभाई और लियाकतअलीके बीच यह समझौता होगा कि सरकार त्यागपत्र दे दे।"

इसके परिणाम-स्वरूप 'भूलाभाई-लियाकतअली करार' के नामसे पुकारा जानेवाला एक समझौता हुआ और ११ जनवरी, १९४५ को केन्द्रमें एक अन्तरिम सरकार बनानेके बारेमें उस करारकी हस्ताक्षरवाली प्रतियां भूलाभाई और नवाबजादा लियाकतअली खांने एक-दूसरेको दीं। नवाबजादाके साथ हुई अपनी बातचीतके अनुसार भूलाभाईने वाइसरॉयको इस समझौतेका आधार ओर सिद्धान्त बता दिया और उनसे तुरन्त कार्रवाई करनेका अनुरोध किया।

आरम्भसे ही गांधीजीने इस बात पर बहुत जोर दिया था कि अगर किसी सन्तोषजनक समझौते पर पहुंचना हो, तो भूलाभाईको दृढ़ता और अनासक्तिका पालन करना होगा। उन्होंने १४ जनवरीको भूलाभाईको एक पत्रमें लिखा. "अखबारोंमें जो कुछ निकला है उससे तो मैं चौंक गया हूं। जिन्ना साहब जो जीमें आता है, कहते हैं। लियाकतअली भी वही करते हैं। यह भी कहा जा रहा है कि मैं कांग्रेस कार्यसमितिको एक ओर रखकर मिश्र मन्त्रि-मंडल बनाना चाहता हूं। यह सब क्या है? मुझे आपमें अपार विश्वास है। आप इसका ध्यान रखें कि कांग्रेस कार्यसमितिकी इजाजतके बिना कुछ भी न किया जाय। . सब बातें साथ साथ की जाय, यह तो मैं समझ सकता हूं। परन्तु आपको स्पष्ट कर देना चाहिये कि कार्यसमितिके बगैर हम एक कदम भी नहीं उठा सकते।"

इसके थोड़े ही समय बाद नवाबजादाने टिनेवेलीके अपने एक भाषणमें और बादमें विधान-सभामें इस बातसे इनकार कर दिया कि उनके और भूलाभाईके बीच कोई भी 'करार' हुआ था; और जिन्नाने तो इस बातसे

बिलकुल साफ इनकार कर दिया कि इस सम्बन्धमें उनसे कोई परामर्श कभी किया गया था या वे उसमें किसी तरह शरीक थे।

३१ जनवरीको नवाबजादाके भाषणका उल्लेख करते हुए गांधीजीने भूलाभाईको लिखा 'उनके साथ कोई समझौता कैसे हो सकता है? यह केवल आपका ध्यान खींचनेके लिए है ताकि आप सचेत हो जायं। दूसरे सारी बातें मुझे जैसी दिखाई देती हैं, वे तो भयंकर मालूम हो रही हैं।'

भूलाभाईने जवाबमें लिखा मुझे उनसे (नवाबजादासे) फिर बात करके आपसे मिलना होगा। मैं आप पर भारी बोझ डाल रहा हूं परन्तु हम लोग इसके आदी हो चुके हैं और हमारा कल्याण तथा देशका कल्याण यही चाहता है।"[1]

इस बीच दोनों पक्षोंके एक सामान्य मित्र गांधीजीसे मिले। उन्होंने कुछ विवादास्पद प्रश्नों पर गांधीजीसे अधिक स्पष्टीकरण करा लिया। इन मित्रके साथ हुई बातचीतके दौरान गांधीजीने कहा 'गिरफ्तारियां फिर शुरू हो गई हैं और यह एक अपशकुन है। भूलाभाईको मजबूत रवैया अपनाना होगा और वाइसरायसे कह देना होगा कि यह नहीं चलेगा।'

२० फरवरीको गांधीजीने भूलाभाईको एक पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने लिखा "देशमें जो घटनाएं हो रही हैं उनसे मैं उद्विग्न हो गया हूं। परन्तु आपको तो जरा भी अस्वस्थ हुए बिना आगे बढ़ना चाहिये और जो कुछ सही और उचित है वही करना चाहिये। परवाह नहीं यदि समझौतेकी बातचीत भंग हो जाय।

इसी समय आष्टी और चिमूरके कैदियोंकी ओरसे की गई दयाकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी जानेसे गांधीजीका रवैया कड़ा हो गया। अपने चारों ओरके नैतिक वातावरणमें जरासा भी परिवर्तन होता तो वे उसे ताड़ जाते थे। इसलिए वे 'वर्तमान काल' का अधिकाधिक आग्रह करने लगे। जब भूलाभाई उनसे जून १९४५ में महाबलेश्वरमें मिले तब यह वस्तु अधिक स्पष्टतासे सामने आई। उस दिन गांधीजीका मौन दिन था। इसलिए उन्होंने लिख कर कहा हमारे चारों ओर जो घटनाएं हो रही हैं उन पर विचार करनेसे मुझे मुस्लिम लीगके साथ सम्बन्ध जोड़नेमें खतरा दिखाई देता है। इतना तो स्पष्ट है कि कांग्रेस कार्यसमितिकी मुक्ति और उसकी स्वीकृतिके बिना कांग्रेसके नाम पर कुछ नहीं किया जा सकता। यह भी उतना ही स्पष्ट समझ लेना चाहिये कि यदि आष्टी और चिमूरके कैदियोंको फांसी दे दी गई तो सारी बात बिगड़ जायगी। यदि लीगका रवैया न बदला और वह भी किसी सौदेबाजीके बिना तो कांग्रेस कार्य-समितिकी स्वीकृति मिलने पर भी मैं लीगके साथ कोई समझौता नहीं करूंगा।

. जिन्ना लीगी और गैर-लीगी मुसलमानोके बीच जो भेद करते है, वह खतरनाक हे। . . . मै ऐसी किसी चीजको दूरसे भी नही छुऊगा। . . मै चाहता हू कि आप (वाकीके) सब प्रश्नोका स्पष्टीकरण करनेवाला एक मसौदा तैयार करे। . . . काग्रेस लीगकी नकल नही कर सकती। . लीग लीगसे वाहरके किसी मुसलमानको भले ही न माने। परन्तु काग्रेसको तो सारे राष्ट्रकी दृष्टिसे सोचना होगा। आप गैर-लीगी मुसलमानोको छोडकर अपनी नाव किनारे नही लगा सकते। . आपको मेरी मर्यादाए पूरी तरहसे ध्यानमे रख कर आगे वढना चाहिये। मेरा रवैया दिनोदिन कठोर होता जा रहा हे। . . इसकी तहमे अहिसक असहयोगमे मेरी वढती हुई श्रद्धा है और ससदीय प्रवृत्तिके प्रति वढती हुई उदासीनता हे। . मेरे लिए यह कहना कठिन हे कि मेरी वर्तमान मन स्थिति मुझे अन्तमे कहां ले जायगी, क्योकि उस अदृश्य शक्तिमे मेरी श्रद्धा दिन प्रतिदिन वढ रही हे। इसलिए मै कलकी वात वहुत कम सोचता हू।"

पर गाधीजीकी वार वारकी इन चेतावनियोके वावजूद कि भूलाभाईको किसी भी वातसे वधनेके पहले प्रत्येक वात लिखित रूपमे ले लेनी चाहिये ओर यह भी देखना चाहिये कि उसके वारेमे जिन्नाकी सम्मति है, ऐसा मालूम होता है कि भूलाभाईने परिणामोके लिए अपनी अत्यधिक उत्सुकताको अपनी कानूनी वुद्धि और अपनी दूरदर्शिता पर छा जाने दिया और जो प्रारम्भिक सावधानिया उन्हे सुझाई गई थी उनको ध्यानमे रखकर काम नही किया। उन्होने कमसे कम विरोधका तरीका अपनाया। इसके लिए उन्हे भारी कीमत चुकानी पडी।

नवावजादाके साथ हुए करारकी जो प्रति भूलाभाईने गाधीजीके पास भेजी थी, उस पर नवावजादा और भूलाभाई दोनोके हस्ताक्षर थे। परन्तु वादमे नवावजादाने कहा, "यह वात नही है। श्री देसाईने एक प्रति हस्ताक्षर करके मुझे दे दी और दूसरी प्रति पर मेरे हस्ताक्षर ले लिये। जो प्रति मेरे पास हे उस पर केवल श्री देसाईके ही हस्ताक्षर है और जैसा उन्होने वताया हे, उस पर हम दोनोके हस्ताक्षर नही है। उस समय इस वात पर इतना ओपचारिक होना अनावश्यक समझा गया था। परन्तु वादमे जो घटनाए हुई उन्हे देखते हुए ऐसा लगता है कि जो कुछ हुआ वह अच्छा ही हुआ। श्री देसाई अच्छी तरह जानते है कि कोई 'करार' नही हुआ है। केवल प्रस्ताव ही रखे गये थे और वे चर्चाका आधारमात्र थे। . . ."[३१]

इन प्रस्तावोके वारेमे पहलेसे जिन्नाकी सम्मति प्राप्त कर लेनेकी महत्त्व-पूर्ण शर्तके सम्बन्धमे भी भूलाभाईने अपने पर पडी हुई छापसे ही सन्तोष मान लिया था। वादमे नवावजादाने कहा, "मैने उन्हें (भूलाभाईको) स्पष्ट वता

दिया था कि जो कुछ मैं कह रहा हूं वह मेरा अपना मत है और इस मामलेमें मि० जिन्नाकी सलाह लेनेका मुझे बाद मौका नहीं मिला था। ”

इस प्रकार इस समझौतेकी गर्भमें ही मृत्यु हो गई। और कांग्रेस कार्य समितिके सदस्योंकी रिहाई होनेके बाद जब उनको खबर हुई, तो उन्होंने उसे नापसन्द किया और भूलाभाईने जिस ढंगसे अपना काम किया था उसे अत्यन्त गम्भीर समझा। बादमें १९४५में हुए शिमला-सम्मेलनके समय राष्ट्रीय सरकारकी रचनाके लिए उनका नाम कांग्रेसकी सूचीमें शामिल नहीं किया गया और बादके आम चुनावोंमें उन्हें केन्द्रीय विधान-सभाके लिए उम्मीदवार नहीं बनाया गया। इससे उन्हें गंभीर आघात लगा और कुछ ही समय बाद उनका अवसान हो गया। परन्तु इसी बीच जो समझौता उन्होंने किया था वह केन्द्रमें अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार बनानेके लिए जून १९४५ में लॉर्ड वेवलने जो प्रस्ताव रखा उसकी नींव बन गया।

गांधीजी भूलाभाईके प्रयत्नका सदा बचाव करते रहे क्योंकि वह तीसरे पक्षके हस्तक्षेपके बिना आपसमें समझौता करके गतिरोधको दूर करने और साम्प्रदायिक प्रश्नका निबटारा करनेका एक प्रयत्न था। और यदि वह सफल हो जाता, तो कांग्रेस और लीगके सम्मिलित कार्य द्वारा केन्द्रमें जिम्मेदाराना सिद्धान्तको दोनोंने अमली रूप दिया होता। इसलिए गांधीजी बाहरी सत्ताके थोपे हुए किसी हलकी अपेक्षा इसे कहीं अधिक पसन्द करते। 'तीसरे पक्ष' के दुष्ट प्रभावसे बचना अधिकाधिक उनकी नीतिका मुख्य आधार बनता गया था, क्योंकि केवल इसी प्रकार भारतके विभाजनको और शत्रुभाव रखनेवाले दो पड़ोसी राज्योंके जन्मको रोका जा सकता था। अन्यथा भारतका विभाजन उन्हें अनिवार्य दिखाई देता था।

*

क्षितिजमें अपशकुनके अन्य लक्षण भी धीरे धीरे दिखाई पड़ने लगे।

मुस्लिम बहुमतवाले उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तमें कांग्रेस कार्यसमितिके निर्णयके अनुसार अन्य प्रान्तोंके कांग्रेसी मन्त्रि मंडलोंके साथ साथ, डॉ० खान साहबके कांग्रेसी मन्त्रि मंडलने भी ७ नवम्बर १९३९ को इस्तीफा दे दिया था। वहां दूसरा कोई मन्त्रि मंडल नहीं रचा जा सका और भारत शासन विधानकी धारा ९३ के अनुसार प्रान्तमें गवर्नरका शासन स्थापित कर दिया गया था। यह गतिरोध मई १९४३ तक बना रहा। उस समय प्रांतके गवर्नरने सरदार औरंगजेब खांको मुस्लिम लीगका मन्त्रि मंडल बनानेका निमंत्रण दिया यद्यपि ५० सदस्योंकी विधान-सभामें उन्हें केवल २० सदस्योंका ही समर्थन प्राप्त था। इन ५० सदस्योंमें से ३३ ही सक्रिय सदस्य थे, ७ खाली जगह भरी नहीं गई थीं और १० कांग्रेसी सदस्य 'भारत छोड़ो' आंदोलनके सिलसिलेमें

जेलमे वन्द थे। काग्रेसी सदस्योको लगातार जेलमे रख कर ही इस मन्त्रि-मडलको पदारूढ रखा गया था। उसने अपनी अयोग्यता, लोभ और भ्रष्टाचारके कारण अपने-आपको लोगोमे इतना अप्रिय वना लिया था कि उसके कुछ अनुयायियोको भी उससे घृणा हो गई और उन्होने अपना समर्थन वापस ले लिया। इसके फलस्वरूप और ५ काग्रेसी सदस्योके जेलसे रिहा होनेके कारण विधान-सभामे काग्रेसकी सख्या २३ हो गई और लीगके मन्त्रि-मडलके समर्थकोकी सख्या २१ रह गई।

जनवरी १९४५ मे श्री मेहरचन्द खन्नाके नेतृत्वमे सीमाप्रान्तसे एक शिष्ट-मडल सेवाग्राम आया। श्री मेहरचन्द खन्ना वादमे पहले तो सीमाप्रान्तमे वित्तमत्री वने, फिर निराधार शरणार्थी हुए और अन्तमे स्वाधीनताके वाद भारतीय सवमे पुनर्वास-मत्री हुए। उन्होने गाधीजीसे कहा कि विधान-सभाके सदस्योका वहुमत औरगजेव खाके मन्त्रि-मडलके विरुद्ध अविश्वासके प्रस्तावका समर्थन करनेको तैयार है। गवर्नरने यह वचन दिया है कि यदि डॉ० खान साहव मन्त्रि-मडल वनानेको तैयार हो, तो वे अविश्वासका प्रस्ताव विधान-सभामे पेश करने देगे।

भूलाभाई देसाई इस कदमके पक्षमे नही थे, क्योकि इससे समझौतेकी उस वातचीतमे वाधा पड सकती थी, जो वे लियाकतअली खाके साथ चला रहे थे। परन्तु गाधीजीका विचार इसके विपरीत था। उन्होने शिष्ट-मडलसे कहा, अन्य प्रान्तोकी वात कुछ भी हो, किन्तु मेरा यह दृढ मत है कि सीमाप्रान्तमे यदि अविश्वासका प्रस्ताव सफल हो जाय, तो वहा काग्रेसियोको दूसरा मन्त्रि-मडल वना लेना चाहिये। आप गतिरोध पैदा किये विना आजादीकी लडाईमे पूरा योग दे सकते है। मै आपसे और तमाम काग्रेसियोसे भी यह अनुरोध करता कि सब कोई विधान-सभासे हट जाय और सम्पूर्ण असहयोग कर दे, यदि आप आज मै मानता हू उससे अधिक प्रगति अहिसामे कर लेते। पर आजकी स्थितिमे ऐसा मार्ग गम्भीर खतरेसे भरा हुआ है। उसके लिए आज कोई वायुमडल नही है। इसलिए आप अविश्वासके प्रस्तावको लेकर आगे वढ सकते है और काग्रेसी मन्त्रि-मडल वना सकते है।"

इस सलाहसे सुसज्जित होकर (मेहरचन्द खन्नाने वादमे अखवारवालोको गर्वके साथ वताया था कि यह "लाख रुपयेका भेद" है) श्री खन्ना पेशावर लौट गये। १२ मार्च, १९४५ को मुस्लिम लीगका मन्त्रि-मडल उखाड दिया गया और उसके स्थान पर डॉ० खान साहवके नेतृत्वमे काग्रेसी मन्त्रि-मडल स्थापित हो गया। उसका पहला काम डॉ० खान साहवके छोटे भाई खान अब्दुल गफ्फार खाको जेल-मुक्त करना था। उन्हे लोग वादशाह खान कहते थे और कभी कभी 'सरहदी गाधी' भी कहते थे। उनके साथ खुदाई खिदमतगारोको

भी मुक्त कर दिया गया, जिन्होने वादशाह खानके अहिसक नेतत्वका अनु गमन करनेके लिए अपने हथियार फेक दिय थे।

कुछ ही रोजमें आसामने भी इसका अनुसरण किया। वहा शुद्ध लीगी मत्रि मडलको काग्रमके समथनसे मिश्र मत्रि मडलका रूप लेना पडा।

६

ग्रट ब्रिटनका लोकमत और समस्त ससारका तटस्थ लोकमत भारतीय स्वाधीनताके पक्षमे होता जा रहा था। राष्ट्रसघकी परिषद (कामनवल्थ रिलेशन्स कान्फरेन्स) में ग्रट ब्रिटेनको बहुत थपना पडा, जब उसके अपने नियुक्त किये हुए भारतीय प्रतिनिधि मडलके नतान एक निश्चित ताराख तक भारतके लिए औपनिवेशिक स्वराज्यकी माग परिपदमें रखी और ब्रिटिश राजनीतिज्ञोसे यह कह दिया कि वे भारतको अपना लक्ष्य सिद्ध करनसे अव नही रोक सकते। लाड वेवेल ब्रिटिश सरकार पर भारतीय गतिरोधको दूर करनेकी आवश्यकताके वारेमे सतत दवाव डालते रहत थे क्योकि उसक बिना सुदूर पूवके युद्ध-सचालनके लिए भारतका सक्रिय सहयोग प्राप्त नही किया जा सकता था। माच १९४५ मे उन्हे सम्राटकी सरकारन सलाह मशविरेके लिए लदन बुलाया। व वहा थे तभी मइक पहले सप्ताहमें यूरोपका युद्ध समाप्त हो गया। और ब्रिटेनके मजदूर दलने जापानके साथका युद्ध समाप्त होने तक मिश्र सरकार चलानेसे इनकार कर दिया, इसलिए २३ मईको मिश्र-सरकारने त्यागपत्र दे दिया। चर्चिलके नतत्वम रक्षक सरकारने काम सभाल लिया और ग्रट ब्रिटेनके आम चुनावोके लिए ५ जुलाईकी तारीख निश्चित कर दी गई।

ज्यो ज्यो ब्रिटेनके चुनावका दिन नजदीक आता गया कट्टर अनुदार दलवाले लाग भी यह अनुभव करने लगे कि वास्तविकताकी उपेक्षा अब नहा की जा सकती। इसलिए ग्रट ब्रिटेनकी सरकारसे सलाह करनेके बाद और उसकी सहमतिसे लाड वेवेलने १४ जूनको यह घोषणा की कि १९३५ के भारतीय शासन विधानके ढाचेके भीतर रहकर वधानिक परिवतन करनेका प्रयत्न किया जायगा। इस घोषणाके अनुसार वाइसराय एसी राष्ट्रीय सरकार वनानेका प्रयत्न करनेवाले थे जो वाइसरायकी वतमान कायकारिणी परिपद (एक्जिक्यूटिव कौन्सिल) का स्थान ले ले और उसमें राजनीतिक नताओकी सलाहसे अन्य सदस्योके साथ साथ सवण हिन्दुओ और मुसलमानोके बराबर सदस्य ले लिये जाय। इस घोषणाके साथ ही काग्रस कायसमितिके सदस्योको नजरवदीसे रिहा कर दिया गया।

वाइसरायकी घोषणाके अनुसार उनके द्वारा चुने हुए विभिन्न दलोके प्रतिनिधियोका एक सम्मेलन (प्रथम शिमला-सम्मेलन) शिमलामें वाइसरायकी

अध्यक्षतामे हुआ। सम्मेलन २५ जूनको प्रारम्भ हुआ और १४ जुलाई, १९४५ को समाप्त हुआ।

सम्मेलनमे उपस्थित रहनेके लिए २१ व्यक्तियोको निमत्रण भेजा गया था — ११ प्रान्तोके मुख्यमत्री, केन्द्रीय विधान-सभाके काग्रेस-दलका नेता और मुस्लिम लीग दलका उपनेता, राज्य-परिषद् (कौसिल ऑफ स्टेट) के काग्रेस-दल और मुस्लिम लीगके नेता, केन्द्रीय विधान-सभाके नेशनलिस्ट पार्टी और यूरोपियन मडलके नेता, एक एक नेता अनुसूचित जातियोका और सिक्खोका और अन्तमे गाधीजी और जिन्ना। "इन दोनोको मुख्य राजनीतिक पार्टियोके नेताओकी हैसियतसे" बुलाया गया था। काग्रेसके अध्यक्षको उसका निमत्रण नही भेजा गया था।

उस समय गाधीजी पूनाके समीप पचगनी नामक एक हिल-स्टेशनमे थे। हालकी बीमारीमे आई उनकी कमजोरी अभी मिटी नही थी। इसलिए गर्मी शुरू होते ही वे डॉक्टरोकी सलाहसे स्वास्थ्य-लाभ और आरामके लिए पचगनी चले गये थे। वही एक पत्र-प्रतिनिधिने वाइसरॉय द्वारा रेडियो पर की गई घोषणाकी प्रति उनके हाथोमे सौपी। उन्होने तुरन्त वाइसरॉयको तार किया कि मै किसी सस्थाका प्रतिनिधि नही हू। १९३४ से मै काग्रेसका प्राथमिक सदस्य भी नही रहा हू। "व्यक्तिकी हैसियतसे मै केवल सलाह दे सकता हू।"[33] उन्होने आगे लिखा "सम्मेलनमे मेरी उपस्थितिसे उसका सरकारी स्वरूप बदल जायगा, हा, मै काग्रेसका सत्ताधारी प्रतिनिधि बन जाऊ तो बात दूसरी है।"[34] उन्होने वाइसरॉयको सुझाया कि जहा तक काग्रेसका दृष्टिकोण जाननेका सम्बन्ध हे, उसके लिए काग्रेसके अध्यक्षको बुलाना चाहिये। उसीको यह सत्ता है। वाइसरॉयने उनकी दलीलके औचित्यको मान लिया और सम्मेलनमे आनेके लिए काग्रेसके अध्यक्षको निमत्रण भेज कर अपनी भूल सुधार ली।

किन्तु गाधीजीने शिमला जाना, वाइसरॉयसे मिलना तथा जब तक वे चाहे तब तक वहा ठहरना मजूर कर लिया। उन्होने वाइसरॉयको लिखा, "आप तो स्वर्गवासी दीनबन्धुको जानते है। हम लोग सी० एफ० एन्ड्रूजको प्रेमसे इसी नामसे पुकारते थे। उन्होने कैम्ब्रिज मिशन और चर्चसे अपना अधिकृत सम्बन्ध तोड दिया था, ताकि वे धर्मकी, भारतकी और मानव-जातिकी अधिक अच्छी सेवा कर सके। वे इग्लैड और भारतके बीच तथा समस्त वर्गो और पार्टियोके बीच — अधिकृत अथवा अनधिकृत रूपमे — एक महत्त्वपूर्ण कडीका काम करते थे। और दिन-प्रतिदिन उनके इस स्थानका महत्त्व बढता गया था। सभव हो तो मै वैसा ही स्थान ग्रहण करना पसन्द करूगा। शायद वह स्थान मुझे कभी न मिले। मनुष्य तो सिर्फ कोशिश ही कर सकता है।"[35]

वाइसरायकी रेडियो घोषणामें 'स्वतंत्रता' शब्दको टाला गया था और प्रस्तावित राष्ट्रीय सरकारमें "सवर्ण हिन्दुओं और मुसलमानोंकी समान संख्या (परिटी) की बात एक मूलभूत शर्तके रूपमें प्रस्तुत की गई थी। यह और भी अधिक अशुभका सूचक था। गांधीजीने इस प्रश्नकी ओर ध्यान खींचकर वाइसरायको तारमें लिखा : "मैं स्वयं और कांग्रेसके विचारोंको यदि मैं जानता होऊं तो वह भी इस (सवर्ण हिन्दुओं तथा मुस्लिमोंकी समान संख्याकी) शर्तको हरगिज नहीं मान सकती। यद्यपि कांग्रेसमें बहुत बड़ी संख्या हिन्दू सदस्योंकी है फिर भी उसने सदा शुद्ध राजनीतिक संस्था बने रहनेका प्रयत्न किया है। मैं कांग्रेसको तमाम अहिन्दुओं और निश्चित रूपसे असवर्ण हिन्दुओंका नामजद करनेकी सलाह दे सकता हूं।" उन्होंने यह भी लिखा : "कांग्रेस सवर्ण या अवर्ण हिन्दुओंके साथ कभी एकरूप नहीं हुई। स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए भी वह कभी ऐसा नहीं कर सकती, क्योंकि वह इकतरफा असत्य और आत्मघातक बात होगी।"

उत्तरमें वाइसरायने गांधीजीको आश्वासन दिया कि निमंत्रण स्वीकार करनेसे "दल किसी चीजसे बंध नहीं जायगे।" सम्मेलनमें सदस्य प्रस्तावोंके पक्ष या विपक्षकी चर्चा करनेके लिए और इच्छानुसार उन्हें मानने या न माननेके लिए स्वतंत्र होंगे। इससे सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए कांग्रेसका मार्ग खुला हो गया।

तीन वर्षकी अवधिके बाद बम्बईमें कांग्रेसकी कार्यसमितिकी बैठक हुई और शिमला-सम्मेलनमें उसके जो ९ प्रतिनिधि बुलाये गये थे उनके लिए उसने आदेशरूप सूचनायें तैयार कर दीं। अन्य बातोंके साथ साथ बैठकमें इस बातका भी उल्लेख किया गया कि "कांग्रेस महासमिति और दूसरी कांग्रेस कमेटियों पर अभी तक कानूनी प्रतिबंध लगा हुआ है। और यह हमारे रास्तेमें रुकावट है और इसे दबाव समझा जाना चाहिये।" यह भी कहा गया कि "कांग्रेसी कैदियोंकी बहुत बड़ी संख्या सम्मेलनकी प्रगतिमें बाधक होगी। अधिकांश कांग्रेसी नेता जर्जर स्वास्थ्य लेकर जेलसे बाहर निकले थे। एक मित्रने कार्यसमितिकी बैठकको बीमारोंकी कवायद कहा था! फिर भी कार्यसमितिने निश्चय किया कि "कांग्रेसको संस्थाके रूपमें" आगामी सम्मेलनमें भाग लेना चाहिये। कार्यसमितिने सम्मेलनमें भाग लेनेवाले अपने प्रतिनिधियोंको खास तौर पर यह ध्यानमें रखनेका आदेश दिया कि "दक्षिण पूर्वी एशियामें मित्रराष्ट्रोंकी विजयका परिणाम ब्रिटिश अथवा अन्य किसी भी साम्राज्यवादी आधिपत्यसे पराधीन देशोंकी सम्पूर्ण मुक्ति होनी चाहिये। अन्य किसी भी देशकी स्वतंत्रताका अपहरण करनेके लिए भारतीय साधनोंका उपयोग नहीं होगा यह बात स्वीकार कर ली जानी चाहिये।"

चौंतीस महीनेके कारावासके वाद कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्य जेलमुक्त हुए, तव उनका स्वागत करनेके लिए वम्वई और शिमलाके वीचके ११०० मील लम्वे रास्तेमे विभिन्न स्टेशनो पर हर्षोन्मत्त वनी भीड इकट्ठी हुई थी। धीरज और अहिंसाकी विजय हो चुकी थी। लोगोके आनन्दकी कोई सीमा नही थी। इसीके साथ यह भी स्मरण रखना चाहिये कि भारतमे शासकोने कलके विद्रोहियोंके लिए सैनिक मोटरे, स्पेशियल ट्रेनें और हवाई जहाज आदिकी सुविधाए खडी की थी, ताकि वे लोग शिमला-सम्मेलनमे उपस्थित हो सके। इसकी तुलना उस समय पराजित जर्मनीमे होनेवाली घटनाओसे की जाय, तो हिंसक और अहिंसक सग्रामके वीचका फर्क समझमे आयेगा।

गाधीजीने रेलके तापानुकूलित डिब्बेमे जानेसे इनकार कर दिया, जो शिमला जानेवाले दूसरे कांग्रेसी नेताओके लिए सुरक्षित रखा गया था। उन्होने तीसरे दर्जेमे ही सफर करनेका आग्रह किया। यूनाइटेड प्रेस ऑफ अमेरिकाके पत्र-प्रतिनिधि श्री प्रेस्टन ग्रोवर उसी गाडीमे गाधीजीके साथ थे। उन्हे गाधीजीके स्वास्थ्यकी चिन्ता थी, इसलिए रास्तेमे एक जगह गाडी ठहरी तव उन्होने एक छोटासा पर्चा लिख कर गाधीजीके हाथमे दिया "क्या तीसरे पहरके लिए आप कांग्रेसके अधिक ठडे डिब्बेमे यात्रा करे यह अधिक वुद्धि-मानीकी वात नही होगी? इससे थोडी देर आप लेट कर आराम कर सकेंगे। आपको २४ घटेसे जरा भी नींद नही आई है। रास्तेके स्टेशनो पर आपकी नींदमे वाधा पडनेके कारण आप थके-मादे शिमला पहुचेंगे, तो इससे आपको कोई लाभ नही होगा। जैसा हम लोग अमेरिकामे कहते है, 'अपने आपको थोडा आराम दीजिये।'"

उन्हे महात्माजीकी तरफसे यह उत्तर मिला "आपके ममताभरे पत्रके लिए अनेक धन्यवाद! लेकिन मुझे इस स्वाभाविक गर्मीमे पिघल जाने दीजिये। भाग्यकी तरह यह भी निश्चित है कि इस गर्मीके वाद ताजगी लानेवाली ठडक आयेगी और उसका आनन्द मै लूगा। मुझे सच्चे भारतका थोडा स्पर्श अनुभव करने दीजिये।"

शिमला पहुचकर जल्दी जल्दी नहा और खाकर गाधीजी वाइसरॉयसे पहली मुलाकात करने वाइसरॉय-भवन गये। गाधीजीने वाइसरॉयके साथ अपनी मुलाकात शुरू करते हुए कहा, "मै भी आपकी तरह एक सैनिक हू, यद्यपि मै कोई हथियार नही रखता।" जव गाधीजी मुलाकातके अन्तमे रवाना होनेके लिए उठे, तो उन्होने श्रीमती वेवेलको नमस्कार कहलवाया। वाइसरॉयने श्रीमती वेवेलसे उनका परिचय कराया। आधे घटे तक गाधीजीकी उनसे वाते हुईं। इस वातचीतके समय वाइसरॉयका पुत्र उपस्थित था और उसने दोनोकी वातोमे गहरा रस लिया।

गांधीजी राजकुमारी अमृतकौरके निवास-स्थान पर अगले तीन सप्ताह तक रहे। वहां उनके ऊंचे आसनसे हल्की हल्की धुंधके पार देवदारकी चादर ओढ़ी हुई पहाड़ियों और गहरी घाटियोंका मनोहर दृश्य दिखाई देता था। वर्षा और धुंधके बीच बीचमें निकल आनेवाला भव्य सूर्य प्रकाश सूर्यकी किरणोंसे चमचमाते पहाड़ियोंके ... उनके उस पार दूर दूर तक फैले हुए नीले आकाशकी पृष्ठभूमिमें स्फटिकके मुकुटके समान चमकते हिमालयके श्वेत हिमकी आखाका चौंधिया देनेवाला मनोरम दृश्य उपस्थित करता था। गांधीजी आनन्द विभोर होकर बोल उठे 'दुनियामें इसके जैसा दूसरा कोई भव्य दृश्य नहीं हो सकता!' सम्मेलनके दिनोंमें गांधीजीने सख्त परिश्रम किया था। फिर भी सम्मेलनके अन्तमें शिमला छोड़नेसे पूर्व अत्यधिक तनाव और थकानके कारण बीच बीचमें लुप्त होनेवाली उनके हृदयकी धड़कनें पुनः नियमित हो गईं — इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। हिमालयके भव्य दृश्यसे हुए आनन्दका यह फल आना स्वाभाविक था।

वाइसराय इस बातके लिए बहुत उत्सुक थे कि गांधीजी सम्मेलनमें प्रतिनिधिकी हैसियतसे शरीक हों। परन्तु गांधीजी मानते थे कि इस तरहके प्रतिनिधि-सम्मेलनमें ऐसे किसी व्यक्तिका — फिर वह कितना ही बड़ा हो — कोई स्थान नहीं हो सकता जो प्रतिनिधि न हो। उन्होंने कहा कि सवैधानिक दृष्टिसे सही चीज यही होगी कि उन्हें छोड़ दिया जाय। परन्तु यदि उनकी सलाहकी जरूरत हो तो वे सम्मेलनके दिनोंमें शिमला रहेंगे और दर्शकके रूपमें सम्मेलनमें उपस्थित भी रहेंगे। वाइसरायने कहा कि वे चाहते हैं कि गांधीजी सम्मेलनके दिनोंमें शिमला रहें। गांधीजीने उनकी बात स्वीकार कर ली।

बादमें पता चला कि जिन्नाने ऐसी शिकायत की कि गांधीजी सम्मेलनमें हट गये हैं। गांधीजीने प्रस्टन ग्रावरके साथ हुई एक मुलाकातमें कहा यदि जिन्ना साहब मुझे वहां चाहते हैं तो मुझे ... जा सकते हैं। उनकी ओरसे ऐसी चेष्टाका अर्थ यह होगा कि सम्मेलनके सामने जो मतभेद और कठिनाइयां हैं उनके बावजूद वे समझौता चाहते हैं।

सब बातोंको देखते हुए लार्ड वेवलने कार्यका प्रारम्भ अच्छा किया और सम्मेलनकी चर्चाओंका बड़ी कुशलता कोमलता और शान्त बुद्धिमत्तासे मार्गदर्शन किया। ... मैंने अपना रेडियो भाषणमें कहा था कि मेरे दोनोंको कुछ न कुछ भूलने और क्षमा करनेकी वृत्ति अपनानी है। ... फिलहाल आपको मेरा नेतृत्व स्वीकार करना होगा। ... मैं सम्मेलनकी चर्चाओंका ... स्थितिमें मार्गदर्शन प्रदान करूंगा जिसमें मेरे ख्यालसे उनमें हित मालूम होगा।

वाइसरायके भाषणके इन शब्दोंका उल्लेख करते हुए गांधीजीने एक टीका की ... लॉर्ड वेवलके ये वचन कहे थे उचित और गौरवपूर्ण हैं। इस प्रकार

वे सम्मेलनमे उसके नेताकी हैसियतसे काम करते है, न कि ब्रिटिश सरकारके एजेन्टके रूपमे।"

वाइसरॉयने झगडेकी वातोको कुशलतासे छोड दिया, जब उनसे सम्मेलनकी प्रगति रुक जानेका खतरा पैदा हुआ। वे यह समझानेका प्रयत्न कर रहे थे कि उन्होने कही एसा नही कहा है कि काग्रेस हिन्दू सस्था है। यह उस समयकी वात है जब जिन्नाने काग्रेसके विरुद्ध अपनी आदतके अनुसार आक्रमण शुरू किया और उसे हिन्दू सस्था वताया। इसके वाद दोनोके बीच यह झडप हुई

वाइसरॉय "मेरे प्रस्तावोमे ऐसी कोई बात नही है, जिसमे काग्रेसको साम्प्रदायिक सस्था वताया गया हो।"

जिन्ना "हम यहा जातियोके रूपमे एकत्र हुए है और काग्रेस हिन्दुओके सिवा और किसीकी प्रतिनिधि नही है।"

वाइसरॉय "काग्रेस अपने सदस्योकी प्रतिनिधि है।"

डॉ० खान साहब "ये क्या कहना चाहते है? मै काग्रेसी हू। मै हिन्दू हू या मुसलमान?"

वाइसरॉय "इसे यही रहने दीजिये। काग्रेस अपने सदस्योकी प्रतिनिधि है।"

गाधीजीने काग्रेसी नेताओसे कहा कि मैने वाइसरॉयकी समान सख्या-सम्वन्धी घोपणाका यह अर्थ समझा है कि दोनोमे से कोई एक जाति दूसरेकी अपेक्षा अधिक प्रतिनिधित्व नही माग सकती, परन्तु "वह चाहे तो कम प्रतिनिधित्व स्वीकार करनेको स्वतत्र है।" काग्रेसको यह स्थिति स्वीकार कर लेनी चाहिये कि सवर्ण हिन्दुओकी सख्या किसी हालतमे मुसलमानोसे अधिक नही होगी और समस्त अल्पसख्यक समूहोमे से उत्तम भारतीयोको नामजद करके सख्याकी समानताके सिद्धान्तको तोड देना चाहिये। इनमे एग्लो-इडियनो, अग्रेजो, पारसियो, सिक्खो, यहूदियो (यदि मिल सके), भारतीय ईसाइयो, अनुसूचित जातियो और स्त्रियोमे से एक एक प्रतिनिधि लिया जाय। इस वातका खयाल न रखा जाय कि वे काग्रेसके सदस्य है या नही। इस प्रकार अनुसूचित जातियोके प्रतिनिधियोके अलावा एक-दो हिन्दुओसे ज्यादा रखनेकी जरूरत नही। और वे भी इसलिए नही रखे जाय कि वे हिन्दू है, वल्कि इसलिए कि वे उत्तम भारतीय है—जैसे प० नेहरू। इस प्रकार मुस्लिम लीगके हिस्सेमे चौदह सदस्योकी वाइसरॉयकी परिषद्मे एक राष्ट्रीय मुसलमानके साथ तीन या अधिक सदस्य नियुक्त करने रहेगे। हिन्दुओकी तरफसे समान सख्याके अधिकारका उपयोग करनेसे इनकार करके आप साम्प्र-

कि उन्होंने जो कुछ कहा था वही उनका मतलब था, तो गतिरोध पैदा हो गया। इस पर वाइसरॉयने यह सुझाया कि जिन्ना और कांग्रेस-अध्यक्ष उनकी और यूरोपियन मंडलके नेता रिचार्डसनकी उपस्थितिमें मिलें। जिन्ना यह कह कर इससे छटक गये कि वे और गोविंदवल्लभ पंत उस दिन शामको मिलेंगे इसलिए कांग्रेस-अध्यक्षसे उनके मिलनेकी जरूरत नहीं रह जाती। जब पंत जिन्नासे शामको मिलने गये तो उन्होंने पंतसे पूछा, 'आपको कोई नया प्रस्ताव करना है?' पंतके यह कहने पर कि उनके पास कोई नया प्रस्ताव नहीं है दोनोंकी मुलाकात खतम हो गई।

जब सम्मेलनकी बैठक २९ जूनको हुई तो वाइसरायने कहा कि चूंकि सरकारकी रचना और सदस्य-संख्याके मामलेमें विभिन्न दलोंमें कोई समझौता नहीं हो सका है इसलिए वे अपना प्रभाव काममें लेकर इस कठिनाईको दूर करेंगे। उन्होंने जिन जिन हितोंके प्रतिनिधि सम्मेलनमें उपस्थित थे उन सबसे कहा कि वे जिन जिन व्यक्तियोंको राष्ट्रीय सरकारकी रचनामें पसन्द करना चाहें उनके नामोंकी सूचियां मेरे पास भिजवा दें। उनमें कुछ नाम मैं खुद जोड़ दूंगा और सब नामोंकी जांच-पड़ताल करनेके बाद और सम्बन्धित दलोंसे सलाह करनेके बाद अन्तमें मैं एक ऐसी सूची तैयार करूंगा, जो सामान्यतः सम्मेलनको स्वीकार होगी।

जिन्नाको यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं था। वे पहले यह जानना चाहते थे कि अगर लीग कोई सूची भेजे तो वाइसराय लीगकी पूरी सूची स्वीकार करेंगे या नहीं। वाइसरायने उत्तर दिया कि पहलेसे मैं ऐसा कोई आश्वासन नहीं दे सकता। अन्तिम चुनाव करना मेरा काम है। परन्तु मेरे सिफारिश किये हुए नामोंकी चर्चा करनेका और अन्तमें उन्हें स्वीकार करने या न करनेका अवसर सम्मेलनको दिया जायगा।

इसके बाद जिन्नाने पूछा कि यदि एक दल उनके प्रस्तावको अन्तिम रूपसे अस्वीकार कर दे तो भी क्या वे अपने प्रस्तावको आगे बढ़ायेंगे? इस पर वाइसरायने फिर वही जवाब दिया कि जिस विशेष स्थितिकी कल्पना की गई है उसमें मैं क्या करूंगा, इस बारेमें मैं पहलेसे अपने-आपको बांध नहीं सकता।

अन्तमें जब वाइसरॉयने उनसे सीधा प्रश्न किया कि लीग नामोंकी सूची पेश करेगी या नहीं तो जिन्नाने उत्तर दिया कि मैं तो अपनी व्यक्तिगत हैसियतसे ही सम्मेलनमें आया हूं। मुझे लीगकी कार्यसमितिके सामने रखनेके लिए लिखित रूपमें वाइसरायके प्रस्तावकी जरूरत होगी। उसके बाद ही मैं कोई निश्चित उत्तर दे सकूंगा। जिन्नासे कहा गया कि उन्हें प्रस्ताव लिखित रूपमें मिल जायगा।

इसके वाद सम्मेलन एक पखवाडेके लिए स्थगित रखा गया।

मुस्लिम लीगके सिवा अन्य सव दलोने वाइसरॉयको अपने नामोकी सूची दे दी। यूरोपियन मडलने अपनी ओरसे कोई अलग सूची पेश न करनेका निर्णय किया। काग्रेसने वाइसरॉयकी इस प्रस्तावित कार्यकारिणी परिषद् (एक्जिक्यूटिव कौसिल) के लिए पन्द्रह नामोकी सूची प्रस्तुत की। काग्रेसको लगा कि अधिकसे अधिक अल्पसख्यक जातियोको प्रतिनिधित्व देनेके लिए कार्यकारिणी परिषद्की सदस्य-सख्या वाइसरॉय और प्रधान सेनापतिके सिवा पन्द्रहकी होनी चाहिये। काग्रेस द्वारा प्रस्तुत किये गये नामोकी सूची इस प्रकार थी·

१ मौलाना अबुलकलाम आजाद (काग्रेसी मुसलमान)।
२. आसफअली (काग्रेसी मुसलमान)।
३ प० जवाहरलाल नेहरू (काग्रेसी हिन्दू)।
४. सरदार वल्लभभाई पटेल (काग्रेसी हिन्दू)।
५ डॉ० राजेन्द्रप्रसाद (काग्रेसी हिन्दू)।
६ मोहम्मद अली जिन्ना (मुस्लिम लीग)।
७ नवाव मोहम्मद इस्माइल खा (मुस्लिम लीग)।
८ नवावजादा लियाकतअली खा (मुस्लिम लीग)।
९ डॉ० श्यामाप्रसाद मुकर्जी (हिन्दू महासभा)।
१० गगनविहारी मेहता (हिन्दू)।
११ राजकुमारी अमृतकौर (स्त्री, भारतीय ईसाई)।
१२ मुनिस्वामी पिल्ले (अनुसूचित वर्ग)।
१३ राधानाथ दास (अनुसूचित वर्ग)।
१४ सर आरदेशिर दलाल (पारसी)।
१५ एक सिक्ख सदस्य (नाम वादमे पेश किया जायगा)।

जिन्नाने लॉर्ड वेवेलको लिखा "नामोकी सूची पेश करनेके आपके सुझावके वारेमे मुस्लिम लीगकी कार्यसमिति यह वताना चाहती है कि जव आपके पुरोगामी लॉर्ड लिनलिथगोने ऐसा ही प्रस्ताव रखा था . तव कार्यसमितिने उसका विरोध किया था और जव उसके विरोधो पर लॉर्ड लिनलिथगोका ध्यान खीचा गया तव उन्होने उस प्रस्तावको छोड दिया था और दूसरा विकल्प सुझाया था।" लॉर्ड लिनलिथगोका विकल्प लॉर्ड लिनलिथगोके २५ सितम्वर, १९४० को जिन्नाके नाम लिखे गये निम्नलिखित पत्रमे दिया हुआ था "मुझे सन्तोष है कि प्रतिनिधियोके चुनावका अधिकार गवर्नर जनरलका होते हुए भी मुस्लिम लीगके मामलेमें उसका आधार किसी औपचारिक रीतिसे प्रस्तुत की गई सूची पर न होकर सम्वन्धित दलके नेताके

और मेरे (वाइसराय) बीचकी गुप्त चर्चा पर रहेगा। " जिनाने अपने पत्रके अंतमें लिखा था कायसमितिका यह मत है कि जहां तक मुस्लिम लीगका सम्बन्ध है मौजूदा प्रश्न पर भी वही काय-पद्धति अपनाई जानी चाहिये जो पिछले अवसर पर निश्चित हुई थी। '

जब वाइसरायने उस काय-पद्धतिको स्वीकार करनेमें अपनी असमर्थता प्रगट की तो जिनाने नामोंकी सूची पेश करनेसे इनकार करते हुए फिर लिखा "समिति चाहती है कि मै आपको बता दू कि उसे यह जान कर बड़ा अफसोस होता है कि आप यह आश्वासन देनेमें असमर्थ है कि प्रस्तावित कार्यकारिणी परिषदके सारे मुसलमान सदस्य मुस्लिम लीगमें से पसन्द किये जायंगे और ऐसी परिस्थितिमें मुझे खेद है कि मै प्रस्तावित कार्यकारिणी परिषदमें शामिल करनेके लिए मुस्लिम लीगकी ओरसे नाम भेजनेकी स्थितिमें नहीं हू।

१४ जुलाईको सम्मेलनकी अंतिम बैठकमें वाइसरायने प्रगट किया कि मुस्लिम लीगकी ओरसे नामोंकी कोई सूची प्राप्त हुए बिना भी मैने कागज पर एक कार्यकारिणी परिषद बना ली है और मै मानता हूं कि वह सम्मेलनको स्वीकार होगा। परन्तु मुसलमानोंके जो नाम उन्होंने सूचित किये थे वे जिन्नाको मंजूर नहीं थे। मांगने पर भी वाइसरॉयने नामोंकी अपनी सूची कांग्रेस अध्यक्षको या और किसीको नहीं बताई। अपनी सूचीको वाइसरॉयने सम्मेलनके सामने भी नहीं रखा। उन्होंने सम्मेलनमें सिर्फ इतनी घोषणा कर दी कि सम्मेलन अपना उद्देश्य पूरा करनेमें असफल रहा है। किन्तु सारी असफलताकी जिम्मेदारी उन्होंने अपने सिर ले ली।

अपने अन्तिम पत्रमें गांधीजीने वाइसरायको लिखा मुझे यह देख कर दुःख होता है कि जो सम्मेलन इतने प्रसन्न और आशापूर्ण वातावरणमें आरंभ हुआ था वह स्पष्टतः अंतमें असफल हो गया। मालूम होता है कि इसका कारण ठीक पहले जैसा ही है। इस बार सारा दोष आपने अपने ही कंधों पर उठा लिया है परन्तु दुनिया तो और ही कुछ सोचेगी। भारत तो निश्चित ही ऐसा मानता है। ' असफलताके कारणोंकी गहरी खोज करते हुए उन्होंने आगे लिखा मुझे अपना यह सन्देह छिपाना नहीं चाहिये कि असफलताका अधिक गहरा कारण शायद यह है कि अधिकारी वर्ग सत्ता छोड़नेके लिए अनिच्छुक है — यद्यपि एक समयमें उनके कल्याणके हाथमें भारतकी सच्चा सत्ताके चले जाने पर तो अधिकारियोंके हाथमें यह सत्ता जाने ही वाली है।

यह दुःखकी बात थी कि गवर्नरोंको मिलानेका प्रयत्न इस प्रकार फिर उन्हीं पुरानी चट्टानों पर टकरा कर असफल हो गया। दो समझौतेके ब्रिटिश

प्रस्तावको उसके वाह्य रूपमे स्वीकार करनेको जितना इस वार तैयार था उतना पहले कभी नही था। वाइसरॉयकी पहलेकी घोपणाओने लोगोको यह आशा दिलाई थी कि इस वार कोई नया प्रारम्भ किया जायगा। लोग अव पूछने लगे कि यह सर्वदल सम्मेलन वुलानेकी क्या जरूरत थी, यदि किसी भी प्रगतिके लिए काग्रेस-लीग समझौतेकी आवश्यक शर्त रखनी थी या लीगके सहयोग देनेसे इनकार करने पर वाइसरॉयको अपनी योजनाए आगे नही वढ़ानी थी? उस सूरतमे काग्रेस और लीगके अध्यक्षोको ही वुलाना चाहिये था और वाकीके लोगोको एक झूठे प्रदर्शनकी दिक्कतसे वचा लेना चाहिये था।

जिन्नाने एक वक्तव्यमे[४२] वेवेल-योजनाको मुस्लिम लीगके लिए एक 'मोहजाल' और 'मृत्युदण्डका वारट' वताया, क्योकि सरकारमे सारे मुसलमान सदस्य मुस्लिम लीगी होते तो भी वे मन्त्रि-मण्डलमे एक-तिहाईके अल्पमतमे रहते। जिन्नाने कहा, "तमाम अल्पमतो" के प्रतिनिधि "वास्तविक व्यवहारमे सरकारके भीतर हमेशा हमारे खिलाफ मत देते।" पहले जिन्ना यह कहा करते थे कि मुस्लिम लीग भारतकी तमाम अल्पसख्यक जातियोकी हितेच्छु और रक्षक है और काग्रेस समस्त हिन्दुओकी भी प्रतिनिधि नही है, परन्तु केवल 'सवर्ण हिन्दुओ' की ही प्रतिनिधि है। परन्तु अव उन्होने कहा "अनुसूचित जातिया, सिक्ख और ईसाई आदि दूसरे सारे अल्पसख्यक समुदायोका वही लक्ष्य है जो काग्रेसका है। . . उनका लक्ष्य और उनकी विचारधारा अखण्ड भारतकी है। जाति और सस्कृतिकी दृष्टिसे उनका हिन्दू समाजके साथ वहुत निकटका सम्वन्ध है।" अवश्य ही ये दोनो दावे सही नही हो सकते थे। साथ ही, यह भी पूछा जा सकता है कि यदि मन्त्रि-मण्डलमे सारे मुसलमानोको मुस्लिम लीगसे ही लेनेकी लीगकी माग स्वीकार कर ली जाती, तो भी वेवेल-योजना 'मोहजाल' और 'मृत्युदण्डका वारट' कैसे न रहती?

सम्मेलनमे कायदे आजमने जो रुख अपनाया, उसका गहरा विश्लेपण करते हुए डॉ० जयकरने गाधीजीको इस प्रकार लिखा "जव मैने (जिन्नाके) उस भापणको पढा, जिसमे उन्होने लॉर्ड वेवेलकी योजनाको एक मोहजाल वताया है, तो मुझे स्पष्ट हो गया कि उनको डर इस वातका था कि . . यदि उन्होने अन्तरिम व्यवस्था स्वीकार कर ली, तो जिस कटुता और शत्रुताकी भावनासे पाकिस्तानकी भावनाका जन्म और पोपण हुआ है वह कामकाजके हर दिनके मेलजोलसे धीरे धीरे मन्द पड जायगी, और मुसलमानोको जव यह पता लग जायगा कि पाकिस्तानका आधार वास्तविकता पर नही, किन्तु केवल चिरपोपित सन्देह पर है, तो पृथक् अस्तित्वका उनका जोश खतम हो जायगा। . . . वे अपनी स्वीकृति देनेसे पहले दो शर्ते पेश

करते ह —अर्थात (१) पाकिस्तानके बारेमें आश्वासन, और (२) भारतके अय सब हितोके मताके साथ मुसलमानाके मताकी समानता। लेकिन उ हे समझ लेना चाहिय कि ये असम्भव शर्तें ह। बार बारकी सफलताओसे उनकी जो आदत गहरी हो गई है उसके अनुसार जा रियायतें मुसलमानोको मिली ह उ हे तो वे निगल जाते ह —जस, सवण हिदुआ और मुसल्मानोकी समान सख्या —और अब वे मुसलमाना और अय सब हिताके बीच समान सख्या चाहते हैं। अर्थात् ५० प्रतिशत मुसल्मानाके लिए और ५० प्रतिशत सारे भारतके लिए। यह तो २७=७३ जसा गणितका भयकर अनथ हुआ।

उ ह तो आजादी प्राप्त करनेकी काइ जल्दी नही है, और उसकी प्राप्तिके लिए वे एसा मूल्य चाहगे जिससे वह आजादी लगभग बकार हो जायगी। "

सम्मेलनका परिणाम यह निकला कि व्यावहारिक राजनीतिमें "सवण हिन्दू मुस्लिम समान सख्या का सूत्र दाखिल हो गया और स्वाधीनताके जमके समय धार्मिक विभाजनके सिद्धान्तको सरकारका मान्यता प्राप्त हो गई। सम्मलनके समयसे 'दोहरी बात बोलनकी प्रथा शुरू हो गई और बादमें ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधि-मडल (कबिनट-मिशन) की वाताओके समय इस प्रथाका मुख्यत उपयाग किया गया। इस प्रथाके अनुसार ब्रिटिश राजनीतिनोके आशय उनकी घाषणाके शब्दा द्वारा नठलाय जाते थ और कथनमें जिन बातोका विरोध किया जाता था उनको 'द्वि अर्थी विधाना' की युक्तिसे व्यवहारमें उतारा जाता था।

सयुक्त राष्ट्रसघके कष्ट निवारण और पुनर्वास विभागके एक अधिकारी श्री फ्रासिस सयरने गाधीजासे मिलने पर पूछा था आप स्वाकार करग कि वेवलने गतिरोधका भग करनका एक प्रामाणिक प्रयत्न अवश्य किया था।"

गाधीजीने उत्तर दिया था प्रामाणिक प्रयत्नका अत भी प्रामाणिक होना चाहिय था।

एक पखवाडके बाद लन्दनसे पडित नेहरूके नाम आये हुए एक पत्रमें इस बातका समथन हा गया अब यह मालूम हुआ है कि ववलका प्रस्ताव चुनावकी आवश्यकताओके एक अगके रूपमें चालू रखा गया था। यह भी मालूम हुआ है कि जिनाके बिना भी सरकार बनानेका स्पष्ट माग ग्रहण न करके अन्तमें ववलन बातचीत जो खतम कर दी उसका आदेश भी यहांसे दिया गया था।"

छठा अध्याय

जागरूक प्रहरी

१

कांग्रेस कार्यसमितिकी मुक्तिसे गांधीजीको दिन-प्रतिदिन कांग्रेसके कार्यका संचालन करनेके भारसे मनचाही मुक्ति मिल गयी। कार्यसमितिकी अनुपस्थितिमें यह भार उन्होंने अपने कंधों पर ले लिया था। परन्तु इसमें यह भय था कि "स्वतंत्र रूपसे दी हुई मेरी सलाह कार्यसमितिकी रायके विपरीत भी हो सकती है और उसको परेशानीमें डाल सकती है, और कार्यसमिति या मैं विषम स्थितिमें भी पड़ सकते हैं। इससे भी बड़ी बात यह है कि इससे जनताके दिमागमें गड़बड़ी पैदा हो सकती है।"[1] इसलिए गांधीजीने यह घोषणा करनेमें देर नहीं लगाई कि आइन्दा वे कार्यसमिति और उसके अध्यक्षके द्वारा ही सलाह दे सकेंगे। इससे उनको जो राहत मिली उसके कारण वे अपने प्रिय कामोंमें अधिक मन लगा सके।

सरदार पटेल बिलकुल जर्जर स्वास्थ्य लेकर नजरबन्दीसे बाहर निकले थे। बड़ी आंतका दर्द उन्हें कष्ट दे रहा था। वह बिलकुल निष्क्रिय बन गई थी। इसलिए डॉक्टरोंने उन्हें ऑपरेशन करानेकी सलाह दी थी। परन्तु यह ऑपरेशन बड़ा और गंभीर था और उसमें बहुत बड़ा खतरा था। गांधीजीने सरदारको सुझाया कि उन्हें प्राकृतिक चिकित्सा आजमानी चाहिये और उन्हें राजी करनेके लिए उपचारके दिनोंमें स्वयं उनके साथ रहनेका प्रस्ताव सामने रखा। सरदार सहमत हो गये। इसलिए अगस्त १९४५ के तीसरे सप्ताहमें गांधीजी सरदारके साथ डॉ० दिनशा मेहताके प्राकृतिक चिकित्सालयमें रहनेके लिए पूना चले गये।

जैसा कि गांधीजीके जीवनमें प्रायः हुआ था, इस प्रसंगने अपने जीवनका एक और बड़ा साहस आरम्भ करनेकी प्रेरणा उन्हें दी। जब पूनाके प्राकृतिक चिकित्सालयमें ३ महीने रहनेके बाद वे सेवाग्राम लौटे, तो अपने साथ प्राकृतिक चिकित्साके विश्वविद्यालयकी योजनाके रूपमें एक और पालित बालक साथ ले आये। डॉ० दिनशा मेहता उस प्राकृतिक चिकित्सालयके संस्थापक और मालिक थे और गांधीजीकी तरह प्राकृतिक चिकित्साके अति उत्साही प्रचारक और स्वप्नद्रष्टा थे। बरसों पहले उन्होंने अपनी निष्ठावान पत्नीके साथ एक मिशनरीके उत्साहसे प्राकृतिक चिकित्साके कार्यके लिए अपने आपको अर्पण कर दिया था। वे प्राकृतिक चिकित्साका एक विश्वविद्यालय स्थापित करना

चाहते थे। गांधीजी भी यही चाहते थे। डा० मेहताने पूना और सिंहगढ़की अपनी संस्थाएं एक ट्रस्टको सौंप दीं। गांधीजीने ट्रस्टी मंडलका एक ट्रस्टी बनना स्वीकार कर लिया।

मस्तानने गांधीजीसे विनोद किया "७६ वर्षकी आयुमें आम लोग अपने घरबारकी जिम्मेदारियां भी दूसरोंको सौंप कर संन्यास ले लेते हैं और आप दूसरे लोगोंकी जिम्मेदारियां अपने कंधों पर इस उमरमें ओढ़ रहे हैं!" गांधीजीने समझाया कि बचपनसे ही प्राकृतिक चिकित्सा मेरा बड़ा प्रिय विषय रहा है। मैं अपनी अनेक प्रकारकी प्रवृत्तियोंके बीच उस सपनेको मूर्तरूप देनेका प्रयत्न नहीं कर सका। इसलिए जब ईश्वरने पूनामें मुझे अवसर दे दिया तो मैंने उसे ईश्वरका वरदान मानकर पकड़ लिया।

गांधीजी पूनामें थे उसी समय ट्रस्टका दस्तावेज तैयार हो गया था। डा० मेहताने उस अवसरकी स्मृतिरूप एक मुद्रा बनवाई थी। उसमें डाक्टर और उनकी पत्नीके हस्ताक्षरोंसे यह मुद्रालेख अंकित किया गया था "इस ट्रस्टके द्वारा हम नम्रतापूर्वक यह चीज आपके हाथोंमें सौंपते हैं और भगवानसे हार्दिक प्रार्थना करते हैं कि आपका पोषण पाकर वह प्राकृतिक चिकित्सा विश्वविद्यालयका रूप ग्रहण करे। हमें दृढ़ विश्वास है कि इस कार्यके पीछे भगवानका हाथ है। हम केवल उसकी इच्छाके साधन भर हैं।" इसे कोई भावुकता कह सकता है, परन्तु यह उन भावनाशील व्यक्तियोंके स्वभावके अनुकूल ही थी, जिन्हें गांधीजी अपने पास आकर्षित कर लेते थे। एक बार उन्होंने कहा था "सनकी, झक्की और पागल लोग मेरे आश्रममें चले आते हैं और मैं उन सबमें बड़ा पागल हूं!"

प्रस्तावित परिवर्तनकी दिशामें उठाये जानेवाले पहले कदमके रूपमें गांधीजीने यह घोषणा की कि आगामी पहली जनवरीसे यह प्राकृतिक चिकित्सालय गरीबोंकी सेवाके लिए और गरीबोंको शोभा देनेवाली पद्धति पर चलाया जायगा। "इसमें अमीरोंको तभी लिया जायगा जब वे गरीबोंके साथ रह सकें और इस संस्थामें गरीबोंको मिलनेवाले स्थान और आरामसे अधिककी आशा न रखें। यह आश्वासन दिया जायगा कि स्वच्छताका मापदंड वैभव और विलासिताससे दूर होने पर भी इस तरहकी अन्य किसी भी संस्थामें प्राप्त मापदण्डके समान ऊंचेसे ऊंचा होगा।"

संस्थाके एकत्रित कार्यकर्ताओंसे उन्होंने पूछा "क्या आप इस परिवर्तनके अनुकूल बन जानेको तैयार होंगे? और क्या गरीबोंकी उतनी ही लगन और सावधानीके साथ आप सेवा करेंगे जितना लगन और सावधानीसे आप अपने अमीर रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषा करते हैं?" गांधीजीने कार्यकर्ताओंको

विचारपूर्ण उत्तर लिखित रूपमे मागा, जो दो दिन बाद उन्होने दे दिया और यथासभव सब कुछ करनेका वचन भी दिया।

उन लोगोको किये जानेवाले परिवर्तनोकी अधिक अच्छी कल्पना करानेके लिए गाधीजीने चिकित्सालयका निरीक्षण किया। और यह चीज हमेशा डरानेवाली होती थी। गन्दगीको पकडनेकी, चाहे वह भौतिक हो या नैतिक, उनकी इन्द्रियोमे असाधारण शक्ति थी। इसलिए उन्होने चिकित्सालयका एक एक कोना बारीकीसे देखा और पालिशवाली लकडीकी चीजो पर उगलिया घिस घिस कर यह जाचा कि उन पर मैलके दाग तो नही है। लेकिन मैलके दाग तो उन पर थे। उन्होने व्यवस्थापकोसे कहा "खैर, इस बार तो मै आपको छोड देता हू, परन्तु इसका काम सभालनेके बाद मै यहाकी स्वच्छताके मामलेमे किसी त्रुटिको बरदाश्त नही करूगा।" हर आदमी जानता था कि "बरदाश्त न करने" का मतलब क्या होता है। इससे तो वे फासी पर चढना ज्यादा पसन्द करते।

कुछ दिन बाद सेवाग्राममे गाधीजीको यही पाठ पढानेका एक और अवसर मिला। पूनामे वह पाठ स्वास्थ्य-सम्बन्धी था, यहा वह शिक्षासे सम्बन्ध रखता था।

नौ बरसके एक छोटेसे तेजस्वी लडकेकी विधवा मा आश्रममे भरती हुई थी। लडकेको आश्रमकी बुनियादी शालाके छात्रावासमे भेज दिया गया था। उसने शाला जाना इस शर्त पर स्वीकार किया था कि गाधीजी उसके छात्रालयमे उससे मिलने आयेगे।

तदनुसार गाधीजी अपने बालमित्रके छात्रावासमे अचानक उससे मिलने चले गये। ज्यो ही वे कमरेमे घुसे, उनकी नजर कमरेके बीचमे चटाई पर पडी हुई कलम-दावात पर गई। दावात मैली-सी थी। उन्होने कलमकी निब देखी। वह खुरदरी थी। एक रजाईमें भरी हुई रुई जगह-जगह इकट्ठी हो गई थी। एक फटी हुई चादरकी सिलाई बेढगेपनसे की हुई थी। कुछ लडकोके पास सरदीके कपडे काफी नही थे। गाधीजीका इरादा वहा ५ मिनटसे ज्यादा रुकनेका नही था। परन्तु वस्तुओका निरीक्षण करने और उन्हे रखनेका ढग समझानेमे उन्होने ४५ मिनट खर्च किये। बादमे उन्होने एक नोटमे अपने अवलोकनको इस प्रकार व्यक्त किया· "फटी हुई चादरोको या तो पैवद लगाने चाहिये थे या दोहरा करके उनकी रजाई बना देनी चाहिये थी। जब मै ट्रान्सवालके जेलमे था तब मैने कबलोकी गुदडी और रजाई बनानेका बहुत काम किया था। ऐसे कबल गरम और टिकाऊ होते है। . . फटे हुए कपडोको . . धोकर और तहा कर रखना चाहिये। वे फटे हुए कपडोमे पैवद लगानेके काम आ सकते है। और जिनके पास सरदीके

कपडे अपनी आवश्यकतासे अधिक हो, उनको यह क्या नही सिखाना चाहिये कि वे अपनी आवश्यकतासे ज्यादा कपडे उन लोगोको दे दें, जिनके पास पूरे कपडे नही हो? पारस्परिक सहायताका यह एक बढिया प्रत्यक्ष पाठ होगा।

नोटमे उन्होने आगे कहा था "ये सब बातें आपको तुच्छ दिखाई दे सकती है परन्तु सारी बडी बाते छोटी छोटी बातोसे ही बनती है। मेरा सारा जीवन छोटी छोटी बातोसे ही बना है। जिस हद तक हमने अपने लडकोको छोटी छोटी बातोका महत्त्व सिखानेमें उपेक्षा की है, उसी हद तक हम असफल हुए है या यो कहिये कि मै असफल हुआ हू। कारण मैने ही तो नई तालीमका प्रयोग आरम्भ किया है। परन्तु मै खुद इस प्रयोगको आगे बढानेके लिए समय नही निकाल सका, इसलिए मुझे उसे दूसरो पर छोड देना पडा। मेरी रायमे स्वच्छता सुघडता और शुद्धताकी दृष्टि नई तालीमका हार्द है। इसकी आदत डालनेमे कोई खर्च नही होता, केवल सूक्ष्म और सावधान दृष्टि तथा कलाप्रेमकी आवश्यकता है।"

नोटके अन्तमे कहा गया था 'यदि आप मुझे यह कहें कि इस तरह तो आप एक दो लडकोसे ज्यादाके साथ न्याय नही कर सकते, तो मै कहूगा तब आप एक दो लडके ही रखिये, अधिक नही।' जितना काम हम अच्छी तरह कर सकते है उससे अधिक काम अपने सिर लेकर हम अपनी आत्माको असत्यका कलक लगाते है।"

वन-कुसुम मध्य हो स्वर्गलोक,
जगतीके दर्शन रजकणमें।
करतल अनन्तको धारण कर
शाश्वत अन्तर्हित लघु क्षणमें।

इस घटनाका उल्लेख करते हुए उस दिन बादमें गाधीजीने कहा था "आज मैने स्वराज्यकी इमारतमें एक और इट चुनी है।"

सेवाग्रामके उस अल्प निवास कालका शेष भाग गाधीजीने अपनी नई खादीनीतिके स्पष्टीकरणमे व्यतीत किया। उसका विचार भी उन्होने उसी मौलिकता एकाग्रता और सूक्ष्मतासे किया। उन्होने यह नियम बना दिया कि खादी भडारोके व्यवस्थापकोको भविष्यमें आग्रहपूर्वक समझा कर खादी खरीदनेके लिए ग्राहकोको ललचानेका प्रयत्न नहीं करना चाहिये। उन्हें अपने खादी भडारोको कताई और उसके साथ जुडी हुई प्रक्रियाओसे सम्बन्धित विभिन्न कलाए सिखानेकी सजीव सस्थाओमें बदल देना चाहिये उन्हे स्वावलम्बनकी कताई करनेवालो और जुलाहोके बीच एक कडी बन जाना चाहिये ताकि कातनेवाले लोग निजी उपयोगके लिए अपने सूतकी खादी बुनवा सकें और

जिन्हे जरूरत हो उनके लिए उन्हे खादी-सरजाम इकट्ठा रखना चाहिये। "मै यह चाहता हू कि हम किसी स्वस्थ और अनुकूल वातावरणमे जमीनका एक वडा-सा टुकडा खरीद ले।...मै तरह तरहके कारीगरो और दस्तकारोको समझाकर वहा वसाऊगा और हमारे खादी-कार्यकर्ताओको भी वसाऊगा। और उस स्थानको सचमुच एक छोटासा आदर्श गाव वना दूगा, जो पुनर्जीवित ग्रामोद्योगोके एक जीते-जागते सग्रहालयका काम देगा। कहा जाता है कि पुराने जमानेमे तापी नदीके किनारे ईस्ट इडिया कपनीके कारखानेका सूरतके आसपासके सारे ग्राम-प्रदेश पर और सूरत शहर पर भी प्रभुत्व था। आपका खादी-भडार आपका कारखाना होगा। अन्तर इतना ही होगा कि ईस्ट इडिया कपनीके कारखानेका काम खादी और हमारे देशी ग्रामोद्योगोका नाश करना था, जव कि आपका काम उन मृत ग्रामोद्योगोमे फिरसे जीवन और शक्तिका सचार करना होगा। आप स्वय ग्रामीण मानसवाले वन जायगे और गावोका सारा माल सीधे-सादे और ग्रामीण ढगसे तैयार करनेकी कोशिश करेगे। आप अपने केन्द्रको शहरी लोगोके आकर्षणका स्थान वना देगे, ताकि वे विलास-केन्द्रोमे जानेके वजाय अपनी सप्ताहातकी छुट्टी वहा आकर वितायें। जो लोग खादी खरीदना चाहेगे वे केवल वहा आकर खादी ही नही खरीदेगे, वल्कि आदर्श ग्रामीण वातावरणमे सादे और स्वास्थ्यप्रद ग्राम-जीवनका आनन्द और सतोष भी प्राप्त करेगे। इसके अलावा, वे कातना, धुनना वगैरा क्रियाए पहलेसे नही जानते होगे तो उन्हे भी सीख लेगे।"[२]

उनसे पूछा गया, "क्या इसका यह अर्थ है कि हम शहरोके प्रति अपनी सारी जिम्मेदारीसे हाथ धो ले?"

गाधीजीने उत्तर दिया, आप उन शहरी लोगोकी सहायताकी दृष्टिसे अपना काम नही कर सकते, जो घुडदौडके मैदानमे, ताशके क्लवोमे, सिनेमा और नाटक-घरोमे भीड लगाते है। "अगर उन्हे उत्सुकता हो तो हम केवल उन्हे अपनी खुदकी खादी तैयार करना ही सिखा सकते है और उसमे उनकी मदद कर सकते है।"

कार्यकर्ताओमे से एकने पूछा, "खादीके मोर्चे पर शहर सवसे कमजोर स्थान है। क्या चरखा-सघके ट्रस्टी-मण्डलमे शहरोके प्रतिनिधियोका होना उसके लिए कमजोरीका कारण नही होगा?"

"उनका असर सघको कमजोर करनेवाला नही होगा। ..वे शहरोमे नई खादी-नीतिकी चौकियोका काम करेगे। आज तो शहर गावोका शोषण कर रहे है। वे कहते है कि 'हम भारत है!' एक समय ऐसा आना चाहिये जव यह प्रक्रिया उलटी हो जाय। आपका काम उस दिनके लिए रास्ता तैयार करना है।"

एक प्रमुख खादी-कार्यकर्ताने जो ४ वर्ष पहले बम्बईके पासके एक गावमें बस गये थे शिकायत की कि अब तक वे किसी स्थानीय कार्यकर्ताको अपने साथ जुडनेकी बात समझा नही सके। वह स्थान मलेरियाके उपद्रव वाला है और शहरके कार्यकर्ता वहा आकर बसनेको तैयार नही है। उन्होने पूछा 'मै क्या करू?'

गाधीजीने एक अमरीकी लेखकका उद्धरण देते हुए उत्तर दिया "पद नहा बढना किन्तु काम बढना है। परमार्थ घरसे आरम्भ होना चाहिये। आप अपने घरवालोको आपके काममें शरीक होनेके लिए क्या नही समझाते?

मान लीजिये कि वे तैयार न हो?'

तब आपको अकेले ही अपना काम करके सतोष मानना होगा। अगर आपमें दृढ सकल्प है और आप कोई बाहरी मदद न लेकर अपने निश्चय पर अटल रहेगे तो समय पाकर स्थानीय लोग आपकी सहायता करने लगेगे। यदि आप बीमार पड जाये तो स्थानीय आदमियोसे अपनी सेवा करायें। अपने घरवालोसे आप कह दीजिये कि वे आपकी सेवा करना चाहे तो उन्हे वहा आकर बस जानेको तैयार रहना पडेगा। और यदि बुरीसे बुरी बात हो जाय और आपकी मृत्यु हो जाय तो स्थानीय लोगो द्वारा होनेवाले दाह-सस्कारसे आपको सन्तोष कर लेना होगा। यदि आप 'करने या मरने' का दृढ निश्चय प्रगट नही करेगे तो आपको अपने काममें सफलता नही मिल सकेगी और वह काम तो भारतके उन करोडो अधभूखे गरीबोके उद्धारका है जो आज उदासीनता और निराशाकी गहरी नीदमें सोये हुए है।

सेवाग्रामके ग्रामसेवकोके प्रशिक्षण केन्द्रके प्रशिक्षणार्थियोको ग्रामसेवाके आदर्श समझाते हुए गाधीजीने कहा "याद रखो कि ग्रामोद्धारके कार्यमें जबरदस्तीकी या दबावकी गुजाइश नही है। तुम्हारे पास अहिंसाके सिवा और कोई शक्ति नही है और अहिंसा कछुएकी चाल चलता है। परन्तु मुझे पहलेसे भी अधिक दृढ विश्वास है कि उसकी प्रगतिको कोई रोक भी नही सकता। इसलिए तुम्हे आम लोगोका विश्वास प्राप्त करनेके लिए अनन्त धैर्य और अध्यवसायकी आवश्यकता होगी। तुम्हें न केवल कारीगर बनना है बल्कि कुशल कारीगर बनना चाहिये। परम्परागत कारीगरमें हाथकी कुशलता अधिक हो सकती है। लेकिन तुममें अधिक बुद्धिका होना जरूरी है। तुम्हें अपने अपने क्षेत्रमें मौलिक विचारक और आविष्कारक बनना होगा। 'ससारके नक्शेमें भारत एक छोटासा भूभाग है और उसमें सेवाग्राम एक बहुत ही छोटा बिन्दु है। परन्तु तुम्हे कभी निराशा नही होगी यदि तुम यह बात ध्यानमें रखो कि जो बात सेवाग्राममें सिद्ध की जा सकती है उसे सारे

भारतमे फैलाया जा सकता है और जो बात भारतके लिए सभव है वह सारी दुनियाके लिए भी सभव होनी चाहिये। आज तो तुम केवल मुट्ठीभर ग्रामसेवक हो, परन्तु तुम्हारे हृदय लाखो भूखे लोगोके साथ तादात्म्य साधने, उनके साथ एकरूप हो जानेकी लगनसे परिपूर्ण हो — यहा तक कि पहले उनकी भूख मिटाये बिना तुम स्वय खाना न चाहो — तो तुम्हारे भीतरकी तीव्र लगन दूर दूर तक फैल जायगी और तुम्हारी सस्था गगोत्रीके समान बन जायगी, जहासे विशाल गगाकी धारा निकलती है। गगोत्रीसे निकलते समय गगाकी धारा पतली-सी होती है। लेकिन जैसे जैसे वह मैदानोमे आगे बढती जाती है, हजारो नदी-नाले उसमे मिलते जाते है और उसका प्राण-दायक जल सपूर्ण प्रदेशको सुख और समृद्धिसे परिपूर्ण करता है।"[३]

२

गाधीजीने ऐसा सोचा था कि पूनाके प्राकृतिक चिकित्सालयमे जो कठोर परिवर्तन उन्होने सुझाये थे, वे उसे उनकी कल्पनाके प्राकृतिक चिकित्सा विश्वविद्यालयका केन्द्र बनानेके लिए काफी होगे। किन्तु फरवरी-मार्च १९४६ मे वे ११ दिन चिकित्सालयमे ठहरे तब उन्हे मालूम हुआ कि उनकी यह धारणा गलत थी। "मै मूर्ख था जो यह समझ बैठा कि किसी शहरमे गरीबोके लिए ऐसी सस्था बनाई जा सकती है। मैने अनुभव कर लिया कि गरीब बीमारोकी यदि मुझे चिन्ता हो, तो मुझे उनके पास जाना होगा, यह आशा नही रखनी चाहिये कि वे मेरे पास आयेगे। . पूना आनेवाला कोई ग्रामवासी कैसे मेरी सूचनाओको समझेगा और उनका पालन करेगा? वह तो यह आशा रखेगा कि मै उसे कोई पुडिया या दवाकी खुराक दे दूगा, जिसे वह निगल लेगा और चगा हो जायगा। प्राकृतिक चिकित्सा तो एक जीवन-प्रणाली है, जिसे सीखना पडता है। . इसलिए यह उपचार तभी सफल हो सकता है जब वह किसी मनुष्यकी कुटिया या घरके भीतर या उसके नजदीक ही हो। उसके लिए चिकित्सकमे सहानुभूति और धीरज होना चाहिये और मानव-स्वभावका उसे ज्ञान होना चाहिये। जब वह इस प्रकार किसी गाव या गावोमे सफलतापूर्वक उपचार कर लेगा और जब काफी पुरुष और स्त्रिया प्राकृतिक चिकित्साका रहस्य समझ लेगी, तभी प्राकृतिक चिकित्सा विश्वविद्यालयके केन्द्रकी नीव डाली जा सकेगी।"[४]

कोई साधारण गलतीकी बात होती, तो मामला वही खतम हो जाता। परन्तु बात इससे अधिक थी। यह गाधीजीके सत्यके प्रयोगोका एक भाग था और जो गरीब लोग उनके प्रयोगोके साधन थे उनके साथ आध्यात्मिक सम्बन्ध बाधनेकी बात थी। उन्होने यह अनुभव किया कि सार्वजनिक रूपसे

अपना दोष स्वीकार करके और उस सुधार कर ग्रामजनाके साथ अपना सम्बध सुधार लेना चाहिये। उन्होने 'हरिजन' में लिखा 'मेरे लिए यह स्पष्ट है कि मेरी आदत सुधर नही सकती। म अपनी गलतियासे ही सीख सकता हू। मुझे अभी अभी यह पता लगा है कि मने एक एसी गलती की है जो मुझ हरगिज नही करनी चाहिये था। म नही जानता कि मुझे अपनी इस मूखता पर हसना चाहिये या रोना चाहिये। मेरी मूखता इतनी स्पष्ट है। पता नही म अब अपने मानव-बन्धुओके विश्वासका पात्र हू या नही। अगर म वह विश्वास खो दू, तो मैं जानता हू कि म उसका पात्र हू।'

इसका अथ यह नही कि प्रयोग छोड दिया जाय। परन्तु इसके विपरीत लाखो लोगोके लिए प्राकृतिक चिकित्साके आदशकी पूर्ति और भी अधिक स्पष्ट रूपमे और अधिक उत्साहसे होनी चाहिये यदि एसा करना व्यावहारिक हो। सभव तो वह अवश्य है।''

तदनुसार माचके अतिम सप्ताहमें गाधीजी उरुलीकाचन चले गये। उसकी आबादी लगभग ३ हजारकी थी। वह पूना शोलापुर रेलमाग पर एक छोटासा स्टेशन है। वहा रेल्वेका तारघर था और डाकघर था परन्तु टेलिफोन नही था। मेल और एक्सप्रेस गाडिया वहा ठहरती नही थी। जलवायु वहाका अच्छा था। पास ही फौजी छावनी थी जिसकी टकीसे छना हुआ पानी काफी मात्रामे मिल जाता था। उस स्थानमें अमरूद सतरा और पपीता खूब पदा होता था। कुछ मित्रोने इस कामके लिए काफी जमीन देनेका वचन दिया और प्रारम्भिक खचके लिए १० हजार रुपयेका दान भी दिया। एक स्थानीय निवृत्त रेल्वे ठेकेदारने गाधीजीके अस्थायी निवासके लिए अपना बगला खाली कर दिया। इस प्रकार उरुलीकाचनमें यह प्रयोग आरम्भ हुआ।

दूसरे ही दिन प्रातःकालसे रोगी आने लगे। पहले दिन लगभग ३० रोगी आये। गाधीजीने इनमें से ५-६ को देखा और सबके लिए लगभग वही उपचार प्रत्येककी प्रकृतिके अनुसार थोडा फक करके बताया। उदाहरणके लिए रामनामका जप सूयस्नान मालिश और कटिस्नान दूध छाछ फल और फलोका रस तथा साथमें स्वच्छ ताजा पानी काफी पीनेकी सूचना की।

राजाजीने अपनी कटाक्षपूण भाषामें एक पत्रमें महात्माजीको लिखा राजकुमारी लिखती ह कि उरुलीमें आपकी प्रैक्टिस बड आरामसे चल रही है। मुझे डर है कि कही वह महात्माके स्पशके अध विश्वासका आधार रखनेवाला प्रपच न बन जाय। कुछ भी हो बुरी दवाइयोसे यह अच्छा ही है।

गाधीजीने लोगोको प्राकृतिक चिकित्साका रहस्य समझाया "जैसे सब रोगोका एक ही कारण होता है वैसे सबका उपचार भी एक ही तरहका होता है। समस्त मानसिक और शारीरिक व्याधिया एक ही समान कारणसे होती हैं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि उनका उपचार भी एक ही हो। इसलिए मैने आज प्रात काल मेरे पास आनेवाले सब रोगियोको रामनामका जप और लगभग एक ही उपचार बताया।"[८]

तीसरे दिन रोगियोकी सख्या बढ कर ४३ हो गई। उन्होन लोगोसे कहा कि यदि काम योजनाके अनुसार चला, तो मेरा इरादा वर्षमें कमसे कम ४ महीने आपके बीच ठहरनेका है। मेरी अनुपस्थितिमे मेरे साथी मेरी सूचनाओके अनुसार आपका पथ-प्रदर्शन करते रहेगे। प्राकृतिक चिकित्साके लिए ऊचे दर्जेकी पुस्तकीय योग्यताए या विद्वत्ताकी आवश्यकता नही। "सादगी ही उसे सार्वत्रिक बनाती है। लाखोके लाभके लिए जो भी चीज होती है, उसमे बहुत पाडित्यकी जरूरत नही होती। पाडित्य तो थोडे ही लोग प्राप्त कर सकते है और इसलिए उससे केवल धनवानोको ही लाभ पहुच सकता है। परन्तु भारत अपने ७ लाख छोटे ओर दूर दूर बसे हुए गावोमे रहता है। . मुझे किसी गावमे जाकर बसना पसन्द है। वही सच्चा भारत, मेरा भारत है, जिसके लिए मै जिदा हूं। आप इन गरीब लोगो तक बडी बडी डिग्रिया रखनेवाले डॉक्टरो और अस्पतालके ऊचे महगे साधनोका लवाजमा नही ले जा सकते। ग्रामवासियोकी एकमात्र आशा सादे नैसर्गिक उपचार और रामनाममे है।"[९]

गाधीजीने गाववालोंको यह चेतावनी दी कि आपको जानना चाहिये कि मै सख्त काम लेनेवाला आदमी हू। अगर मै आपके बीच रहा, तो न मै खुद चैन लूगा और न आपको लेने दूगा। मै आपके घरोको देखूगा, आपकी नालियो, रसोईघरो और पाखानोका निरीक्षण करूगा। कही भी धूल, मैल या मक्खिया मै बरदाश्त नही करूगा।

उन्होने समझाया कि मेरी कल्पनाकी प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणालीमे और दूसरी प्रणालियोमें यह अन्तर है दूसरी प्रणालियोमें रोगी डॉक्टरके पास अपना रोग मिटानेकी दवाइया लेने जाता है। रोगके असाधारण लक्षण मिट जाने पर डॉक्टरका काम खतम हो जाता है और फिर रोगीमे उसकी कोई दिलचस्पी नही रहती। प्राकृतिक चिकित्सक अपना उपचार 'बेचता' नही है। वह अपने रोगीको रहन-सहनकी सही पद्धति सिखाता है, जिससे न केवल उसकी विशेष व्याधि दूर हो जाती है बल्कि वह भविष्यमे बीमार पडनेसे भी बच जाता है। साधारण डॉक्टरकी दिलचस्पी ज्यादातर रोगके अध्ययनमे होती है। प्राकृतिक चिकित्सककी रुचि स्वास्थ्यके अध्ययनमे अधिक होती है।

जहां मामूली डॉक्टरोंकी चिकित्साका अन्त होता है वहां प्राकृतिक चिकित्सककी चिकित्सा शुरू होती है। प्राकृतिक चिकित्सासे रोगीका रोग दूर होनेके साथ एक ऐसी जीवन-पद्धतिका प्रारम्भ होता है जिसमें बीमारी या रोगकी गुंजाइश ही नहीं रहती। इस प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा उपचारकी पद्धति न होकर जीवनकी पद्धति है।

“और प्राकृतिक चिकित्सक रोगीसे यह नहीं कहेगा ‘मुझे बुला लो, मैं तुम्हारा रोग अच्छा कर दूंगा।’ वह तो केवल प्राणीमात्रमें बसा हुआ सारे रोगोंको मिटानेवाला सिद्धान्त बतायेगा और यह बतायेगा कि उस सिद्धान्तको जाग्रत करके और उसे जीवनका प्रेरक शक्ति बनाकर रोगको कैसे मिटाया जाय। यदि भारत उस सिद्धान्तकी शक्तिको अच्छी तरह समझ ले तो न केवल हम स्वतंत्र ही हो जायंगे बल्कि हमारा देश स्वस्थ व्यक्तियोंका देश भी बन जायगा और आजकी तरह संक्रामक रोगों और कमजोर स्वास्थ्यका देश नहीं रहेगा।”

गांधीजी स्वीकार करते थे कि प्राकृतिक चिकित्सासे सब रोग अच्छे नहीं हो सकते। “किसी भी चिकित्सा प्रणालीसे ऐसा नहीं हो सकता। अन्यथा हम सब अमर हो जायं। परन्तु जिस रोगको प्राकृतिक चिकित्सा मिटा नहीं सकती उसका शान्त चित्तसे सामना करने और उसे सहन करनेकी शक्ति वह मनुष्यको देती है।”

उन्होंने प्राकृतिक चिकित्साका अपना तत्त्वज्ञान इस प्रकार समझाया है — “मनुष्यका भौतिक शरीर पांच नैसर्गिक तत्त्वों (महाभूतों) का बना हुआ है — वायु, जल, पृथ्वी, तेज (शरीरको शक्ति देनेवाला तत्त्व) और आकाश। आत्मा उसमें प्राण-संचार करती है। प्राकृतिक चिकित्साके विज्ञानका आधार इन्हीं पांच तत्त्वोंके उपयोग पर है जिनसे मानव शरीर बना हुआ है। व्यवहारमें उस चिकित्साके रूप जल चिकित्सा, मालिश और मिट्टी-स्नान, गर्म और ठंडी मिट्टीकी पट्टियां, सूर्यस्नान और वायुस्नान आदि हैं। किन्तु इन पंचतत्त्वोंको उनके स्थूल प्रारम्भिक अर्थमें नहीं समझना चाहिये। उनका सूक्ष्मतर रूप होता है। पानी केवल जल नहीं है। न वायु हवा है, पृथ्वी मिट्टी है या तेज प्रकाश है। आकाश भी केवल ईथर नहीं है। अपने मूल रूपमें पांचों तत्त्व जीवनकी तरह सजीव हैं।”

आकाश (ईथर) के बारेमें गांधीजीका विवेचन रसप्रद है। “आकाशको अवकाश कहा जा सकता है। उसका कोई ओर छोर देखनेमें नहीं आता। जहां कुछ भी नहीं है वहां आकाश है। वह जितना दूर है उतना ही हमारे पास है। वह हमारे पाससे ही आरंभ होता है। वह हमारे भीतर भी है। अगर हम ईश्वरका भेद जान सकें तो आकाशका भेद जान सकेंगे। इस महान

तत्त्व आकाशका उपयोग जितना हम करेंगे उतना ही अधिक आरोग्यका उपभोग हम कर सकेंगे। . पहला पाठ सीखनेका यह है कि इस सुदूर और अदूर तत्त्वके बीच और हमारे बीच कोई आवरण नही आने देना चाहिये। . . . जिस हद तक हम इस आदर्शको प्राप्त कर सकेंगे उस हद तक हम सुख, शाति और सन्तोषका अनुभव करेंगे। इस आदर्शको मैं अन्तिम सीमा तक प्रस्तुत करूं, तो मुझे कहना पडेगा कि शरीरका अन्तराय भी नहीं होना चाहिये। अर्थात् शरीर रहे या जाय, इस बारेमे हमे तटस्थ रहना चाहिये।"[१४]

प्राकृतिक चिकित्साके शस्त्रागारमे सबसे शक्तिशाली शस्त्र रामनामका है। किन्तु रामनामकी शक्ति कुछ शर्तो और मर्यादाओके अधीन है। उदाहरणके लिए, यदि किसीको अधिक भोजन करनेसे पीडा हो रही है और वह उसके बादके परिणामोसे इसलिए मुक्त होना चाहता है कि फिर वह मनचाहा भोजन कर सके, तो ऐसे आदमीके लिए रामनाम नही है। "रामनाम तो शुद्ध हृदयवालोके लिए है और उन लोगोके लिए है, जो शुद्धता प्राप्त करना और शुद्ध रहना चाहते हैं। वह भोग-विलासका साधन कभी नही बन सकता। अधिक भोजनका इलाज उपवास है, न कि प्रार्थना। प्रार्थना तभी बीचमे आ सकती है जब उपवास अपना काम कर चुकता है। वह उपवासको सरल और सह्य बना सकती है। इसी तरह रामनाम व्यर्थका मजाक हो जायगा, यदि उसके साथ हम अपने शरीरको दवाओसे भी भरते रहे। जो डॉक्टर अपनी बुद्धिका उपयोग अपने रोगीकी बुराइयोको प्रोत्साहन देनेके लिए करता है, वह अपना और अपने रोगीका पतन करता है। . . इसके विपरीत, रामनाम रोगको मिटानेके साथ साथ मनुष्यकी शुद्धि भी करता है और इसलिए रोगीको ऊचा उठाता है। इसीमे रामनामका उपयोग और रामनामकी मर्यादा दोनो हैं। . . यदि आपको क्रोध आता है और आप भोगके लिए खाते और सोते हैं — केवल शरीरके पोषणके लिए नही, तो आपका रामनामका जप केवल मुहका है, हृदयका नही। रामनाम तभी फलदायी होगा जब वह आपके व्यक्तित्वमे व्याप्त हो जायगा . . . और आपके समस्त जीवनमे प्रगट होगा।"[१५]

गाधीजी पर लुई कुने और एडॉल्फ जुस्ट जैसे प्राकृतिक उपचारकोकी रचनाओका बडा असर पडा था, लेकिन प्राकृतिक चिकित्सा पर गाधीजीका दृष्टिकोण मूलत आध्यात्मिक था। उनका विश्वास था कि स्वस्थ शरीरमे ही स्वस्थ मन रह सकता है। परन्तु इससे उलटी बात पर उनका और भी ज्यादा जोर था — अर्थात् बाहर हम जो कुछ देखते है, वह भीतरका ही प्रतिबिम्ब और आविर्भाव होना चाहिये। उदाहरणके लिए, एक निसर्गोपचारककी हैसियतसे वे शाकाहार पर बडा जोर देते थे। परन्तु उनके शाकाहारवादका आधार भी

भौतिककी अपेक्षा नतिक ही अधिक था। २० नवम्बर १९३१को लन्दनके शाकाहारी मण्डलमें भाषण देते हुए उन्होने कहा था, 'हमारे गाय-बैल भी शाकाहारी ह और वे हमसे ज्यादा अच्छे शाकाहारी ह। परन्तु उससे कहा अधिक ऊची वस्तु हमें शाकाहारकी प्रेरणा करती है।   मनुष्य हाड-मासका पुतला ही नहा है वह इससे कुछ अधिक है। हमें मनुष्यकी आत्माकी चिन्ता है। इसलिए शाकाहारवादियोका नतिक आधार यह होना चाहिये कि — मनुष्य मासाहारी प्राणी बननेके लिए उत्पन्न नही हुआ है परन्तु पृथ्वी पर पदा होनेवाले फल और शाकभाजी पर निर्वाह करनेके लिए उत्पन्न हुआ है। इसलिए म मानता हू कि शाकाहारियोको शाकाहारवादके शारीरिक परिणामो पर जोर न देकर उसके नतिक परिणामोकी खोज करना चाहिये। शाकाहारी यदि दूसरोको शाकाहारी बनाना चाहते ह, तो उन्हें सहिष्णु बनना चाहिये। थोडासी नम्रता अपनाइये। जो लोग हमसे सहमत नहा ह उनकी नैतिक भावनासे हमें अपील करना चाहिये।

गाधाजी इस विचारको मानते थे कि तमाम व्याधिया प्रकृतिके नियमोका भग करनेके कारण होती ह और स्वास्थ्यका माग प्रकृतिके नियमोका पालन करना है। इसलिए जीवनकी कृत्रिम पद्धतिको — जिसे आज आधुनिक जीवन कहा जाता है — छोड कर मनुष्य शरीर और मनका स्वास्थ्य फिरसे प्राप्त कर सकता है। परन्तु गाधीजीका 'प्रकृति-परायण मनुष्य' निसर्गवादियोका 'उदात्त वनवासी' नहा था। प्रकृतिकी दिशामें फिरसे जानेका गाधीजीका आग्रह यह था कि पशुता पर — जो अपनी प्राथमिक अवस्थामें मनुष्यको दबा डालती है — विजय प्राप्त करके हम अपनी आत्माके धर्मका अनुसरण करें। यह काम आध्यात्मिक संयम — यमनियमादिके पालन — से हो सकता है जिसके बिना मनुष्य पशु रह जाता है

न अपनी भूमिकासे उठ
प्रतिष्ठित हो सके उन्नत
उसे मानव कहें? वह तो
निरा पशु रह जाता है।

•

गाधीजीके निसर्गोपचार और रामनामके तत्त्वज्ञानका एक परिणाम उनका [illegible] वर्ष तक जीनेका सिद्धान्त था। गाधीजी कहते थे कि निष्काम सेवा करनेवाले प्रत्येक मनुष्यको १२५ वर्ष जीनेका अधिकार है और उसे १२५ वर्ष तक जीनेकी अभिलाषा रखनी चाहिये। "इस अभिलाषाका [illegible] [illegible] [illegible] है कि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

इस अवस्थाको पहुचे विना १२५ वर्ष तक जीना असंभव है। . . . मानव-शरीर सेवाके लिए ही है, भोगके लिए कभी नही। . . त्याग जीवन है। भोग मृत्यु है। . . . ऐसी सेवाके लिए किया गया त्याग शाश्वत आनन्द है, जो भीतरसे उत्पन्न होता है और जीवनका आधार है। इसमें चिन्ता या अधीरताके लिए कोई स्थान नही हो सकता।"[१६]

गाधीजी व्यवहारमे इस आदर्शको प्राप्त करनेकी आशा कैसे रखते थे, जब कि रहन-सहनकी भूतकालमे की गई गलतियोसे कोई भी आदमी पूरी तरह मुक्त नही है? यह प्रश्न एक वार कलकत्ताके प्रमुख अग्रेजी दैनिक 'दि स्टेट्समैन' के मि० ईयान स्टीफेन्सने उठाया था: "हमारे भूतकालके जीवनके सस्कारोका क्या होगा? उनको वट्टे खाते तो नही लिखा जा सकता?"

गाधीजीने उत्तर दिया था· "मेरे पास इसका उत्तर है। मेरा वर्तमान जीवन कितना ही अच्छा क्यो न हो, लेकिन यदि मेरा भूतकालका जीवन मुझे पूरी आयु जीने योग्य नही वनाता, तो मै मन और शरीरके वीच सम्पूर्ण अनासक्ति साध कर भूतकालीन दोपयुक्त जीवनके असरको मिटा सकता हू। अनासक्तिसे परम्परा और वायुमण्डलकी वाधाओ और भूतकालीन दोप-पूर्ण आचरणके परिणाम दोनोको मिटाया जा सकता है। साधारणतः प्रकृतिके नियमके प्रत्येक भगका — चाहे वह अज्ञानमे हुआ हो या जान-वूझ कर हुआ हो — जैसे क्रोध, चिडचिडापन, अधीरता और विवाहित जीवनकी भूलोका, दड अवश्य मिलता है। परन्तु इसमे इतनी आशा है कि यदि आप सम्पूर्ण अनासक्ति साध लेते है, तो आप इन सव परिणामोको मिटा सकते है। जव तक मनुष्य 'द्विज' नही वनता अर्थात् वह अपने जीवनमे परिवर्तन नही करता, तव तक उसे शाश्वत जीवन प्राप्त नही हो सकता। इसके विपरीत, मनुष्य यदि अपने जीवनको वदल दे, तो वह शाश्वत जीवन प्राप्त कर सकता है। . मनुष्य जव चाहे तभी अपने जीवनमे परिवर्तन कर सकता है और नया जीवन आरम्भ कर सकता है। भूतकाल उसकी गतिमे दखल नही देगा, वशर्ते वह अनासक्तिके कुल्हाडेसे उसके साथ और उसके संस्कारोके साथ सम्पूर्ण सम्वन्ध-विच्छेद कर ले।"[१७]

एक लोकतंत्रवादीके नाते गाधीजी यह मानते थे कि जो औरोको नही मिल सकता वह उन्हे नही लेना चाहिये। परन्तु सुधारकके नाते वे यह मानते थे कि दूसरोकी प्रतीक्षा किये विना उनको आगे वढना चाहिये और स्वय कार्य करना चाहिये। इससे कभी कभी उनके सिद्धान्त और व्यवहारके वीच सघर्पका आभास मालूम होता था। गाधीजीका दावा था कि प्राकृतिक चिकित्सा और रामनामका उनका तत्त्वज्ञान लाखो आदमियोके हितमे सोचा गया है। इस वारेमें एक पत्रलेखकने गाधीजीको लिखा, "मै नही समझ पाता

कि अपनी शारीरिक व्याधियोंके लिए आध्यात्मिक शक्ति पर मैं कैसे आधार रखूं। मुझे यह भी विश्वास नहीं है कि अपने मोक्षके लिए मेरा प्रार्थना करना उचित है या नहीं, जब कि मेरे देशवासियोंमें इतना दुःखदर्द फैला हुआ है।'

गांधीजीने अपने साप्ताहिक पत्रमें उत्तर दिया, 'यदि आप कुनैन लेकर मलेरियासे छुटकारा पा लेते हैं और उन लाखों लोगोंका विचार नहीं करते जिनको कुनैन नहीं मिलती, तो आप वह उपाय क्यों न काममें लें जो आपके भीतर मौजूद है और जिसका करोड़ों लोग अपने अज्ञानवश उपयोग नहीं करते? दूसरे लाखों लोग यदि अपने अज्ञान या जड़ताके कारण साफ और तन्दुरुस्त नहीं रहना चाहते तो क्या आपको भी साफ और तन्दुरुस्त नहीं रहना चाहिये? यदि आप परोपकारकी गलत कल्पनाके कारण साफ-स्वच्छ नहीं रहेंगे तो आप गन्दे और बीमार रह कर उन्हीं लाखों मनुष्योंके सेवाधर्मसे अपनेको वंचित कर लेंगे। किन्तु सही बात यह है कि रामनामके उपयोगका ज्ञान प्राप्त करनेसे कुनैनकी एक दो गोलियां ले लेना कहीं ज्यादा आसान है। कुनैनकी गोलियां खरीदनेके खर्चकी अपेक्षा इसमें कहीं ज्यादा प्रयत्न करना पड़ता है। यह प्रयत्न उन लाखों लोगोंके खातिर भी करने जैसा है, जिनके नाम पर और जिनके लिए पत्रलेखक रामको अपने हृदयसे निकाल देना चाहते हैं।'[१८]

गांधीजीने यह भी कहा: "मैं तो यहां तक कहता हूं कि यदि अहिंसाका पालन लाखों लोग नहीं कर सकते तो स्वयं मेरे लिए उसका कोई उपयोग नहीं है। परन्तु यदि उपयोग करनेकी शक्ति उनमें होने पर भी वे अहिंसाका उपयोग न करना चाहें तो बिलकुल अकेला रह जाने पर भी मैं उस पर अटल रहूंगा। इसी प्रकार यदि अकेले मुझे ही १२५ वर्ष तक जीनेकी इच्छा करने और कोशिश करनेकी छूट हो, तो मैं ऐसी इच्छा नहीं रखूंगा। परंतु ईश्वर और उसकी सृष्टिकी सेवाके लिए १२५ वर्ष जीनेकी इच्छा प्रत्येक मनुष्य कर सकता है और उसे करना चाहिये।"[१९]

*

गांधीजीकी कल्पनाके अनुसार प्राकृतिक चिकित्सा सम्पूर्ण जीवनको व्याप्त करती है। एक दिन उरुलीकांचनमें उनके पास एक ग्रामीणको लाया गया। उसके शरीर पर चोरोंके प्रहारोंसे कई घाव हो गये थे। चोर उसके घरसे गहने-गांठे उठा ले गये थे। इससे गांधीजीको यह समझानेका मौका मिला कि किस प्रकार प्राकृतिक चिकित्साके सिद्धान्त द्वारा चोरी छुड़ाया जा सकता है। इस समस्याके विरोधी तत्त्वोंको उनकी बुरी आदतोंसे छुड़ाया जा सकता है। इस समस्याके निराकरणके तीन उपाय हैं। पहला है परम्परासे चला आया और पुराना

उपाय पुलिसको खवर देनेका। दूसरा, जिसे साधारण ग्रामीण लोग अपनाते है, विना कुछ किये-कराये चुपचाप सहन कर लेना है। यह निन्दनीय है, क्योकि इसकी जडमे कायरता है। जव तक कायरता रहेगी तव तक अपराध फले-फूलेंगे। "इतना ही नही, इस प्रकार चुपचाप सह लेनेसे हम स्वय अपराधके भागी वन जाते है।" तीसरा उपाय सत्याग्रहका है। किसी चोर या अपराधीके प्रति दुर्भाव रखे विना और उसे सजा दिलवानेकी कोशिश किये विना हमे उसके हृदयके भीतर घुसना चाहिये और जिस कारणसे उसने अपराध किया उसे समझ कर उसका उपाय करना चाहिये। कोई चोर या अपरावी हमसे वहुत भिन्न नही होता। जो धनी आदमी शोपण और दूसरे वुरे उपायोसे दौलत जमा करता है, वह किसीकी जेव काटनेवाले आदमीसे या किसीके घरमे घुस कर चोरी करनेवाले चोरसे कम लूटका अपराधी नही है। फर्क इतना ही है कि धनी आदमी अपनी सम्मानित स्थितिकी आड़ लेकर कानूनके दडसे वच जाता है। अपराधी व्यक्ति सामाजिक रोगका चिह्न मात्र होता है। इसलिए सत्याग्रहीको चाहिये कि अपना उपचार (सुधार) करनेके वाद वह चोरका उपचार करनेकी कोशिश करे। "वह एक साथ दो घोडो पर सवारी करनेका प्रयत्न न करे। अर्थात् एक ओर पुलिसकी मदद लेनेका और दूसरी ओर सत्याग्रहके नियमका पालन करनेका नाटक वह न रचे।"[२०] कोई भी पुलिस अधिकारी सत्याग्रहीको ऐसे आदमीके विरुद्ध गवाही देनेके लिए विवश नही कर सकता, जिसने उसके सामने अपना अपराध स्वीकार किया हो।

और जो वात उरुलीकाचन पर लागू होती थी वह सारे भारत पर लागू होती थी। अगस्त १९४६ मे लोकमान्य तिलककी २६ वी पुण्यतिथि पर वोलते हुए गाधीजीने कहा कि मेरी कल्पनाके स्वराज्यका निर्माण करनेमे प्राकृतिक चिकित्सा एक आवश्यक तत्त्व है। सच्चे स्वराज्यकी तालीमसे पहले शरीर, मन और आत्मा तीनोकी शुद्धि होनी चाहिये।

मार्च १९४६ के अन्तमे गाधीजी दिल्ली वुला लिये गये, इसलिए उन्हे अपना उरुलीकाचनका प्रयोग अधूरा छोडना पडा। उसके वाद केवल एक वार अगस्तमे वे उरुली जा सके थे। परन्तु प्राकृतिक चिकित्साका महत्त्व उनके मनमे वढता रहा और वे अन्त तक उरुलीके काममे सक्रिय रस लेते रहे। नवम्वर १९४७ मे जव साम्प्रदायिक वैर-द्वेपके समग्र भारत पर हावी हो जानेका भय पैदा हो गया था, तव उन्होने दिल्लीसे एक साथीको पत्रमे लिखा "उरुलीमे सव सम्वन्धित लोगोसे कह दीजिये कि उरुलीमे न रह सकनेका मुझे दु ख और सन्तोप दोनो होता है। सन्तोप इस वातसे होता है कि जो कुछ मै यहा कर रहा हू वह भी उरुलीकाचनके कामका ही एक

अग है। मेरी प्राकृतिक चिकित्सामें शरीर और आत्मा दोनोंका समावेश होता है। इसलिए मेरे विचारके अनुसार यदि मैं यहाके लोगोंको पुन सही विचार पर ले आता हू तो उसका असर हमारे उरुलीकाचनके काम पर भी पडेगा। और उससे प्राकृतिक चिकित्साके प्रयोगका एक ज्वलन्त प्रमाण मिल जायगा। प्राकृतिक चिकित्साकी मेरी व्याख्याके अनुसार निसर्गोपचार, ग्रामोद्धार और आश्रमकी जीवन प्रणालीको मिला कर एक अविभाज्य सम्पूर्ण वस्तु बनती है। सर्वांगीण ग्रामोद्धार प्राकृतिक चिकित्साकी चरम सीमा है और आश्रमकी जीवन प्रणालीके बिना गावोंके लिए प्राकृतिक चिकित्साकी मैं कल्पना ही नही कर सकता। इसलिए जो आदमी अपने आपको आश्रम-जीवनके अनुकूल बनानेके लिए तैयार नही है वह मेरी रायमें हमारे कामका नही है।"

एक और अवसर पर गाधीजीने कहा 'जो भी संस्था मैं हाथमें लेता हू उसे आश्रम बना देता हू। मालूम होता है कि मुझे और कोई धधा आता ही नही है।" क्योंकि ' मानव सारी वस्तुओंका मापदड है इसलिए गाधीजीके लिए प्राकृतिक चिकित्साका आदर्श और उनकी सारी सामाजिक और राज नीतिक प्रवृत्तियोंका अंतिम लक्ष्य दोनों एक ही वस्तु बन गये थे। और यह अन्तिम लक्ष्य था स्वस्थ वृत्तियों और स्वस्थ पारस्परिक सम्बन्धोंवाले स्वस्थ व्यक्तियोंके समाजकी स्थापना। इस प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा गाधीजीके मनुष्य और समाजकी पूर्णताके स्वप्नको मूर्त रूप प्रदान करती है— प्रत्येक युग और प्रत्येक देशमें सत्ययुगकी कल्पना इस पूर्णताकी प्रतीक मानी गयी है। इसे उन्होंने रामराज्य अथवा अपने सपनोंका स्वराज्य नाम दिया था। और चूकि अपने समयके भारतीय समाजमें उस रामराज्यको साकार करना उनके सारे प्रयत्नोंका लक्ष्य था, इसलिए उनका आश्रम उनकी सारी प्रवृत्तियोंका केन्द्र बन गया था — जहा उन्होंने सामान्य स्त्री पुरुषोंको अपने मार्गदर्शनमें भारतकी प्राचीन संस्कृतिके आधारभूत यम नियमोंका पालन करनेके लिए एकत्र कर लिया था।

३

ग्रेट ब्रिटेनके जुलाई १९४५ में हुए आम चुनावोंमें वामपक्षकी बडी जीत हुई। अनुदार पक्षकी भाग हार गये और मजदूर-दल भारी बहुमतके साथ सत्तारूढ हुआ। सबसे उल्लेखनीय हार तो प्रतिक्रियावादी भारत-मंत्री श्री एमरीकी हुई।

चुनावके परिणामोंसे यह सिद्ध हो गया कि ब्रिटेनमें जनताका बहुत भारी बहुमत भारतमें अंग्रेजी राज्यका अन्त करनेके पक्षमें था। नये भारत मंत्री लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स गाधीजीके कोई ४० वर्ष पुराने मित्र थे। उनकी नियुक्ति पर बधाई देते हुए गाधीजीने लिखा यदि इंडिया आफिसका पानगार ढगसे

दफना कर उसकी भस्म पर अधिक उदात्त स्मारक खडा करना हो, तो इस कामके लिए आपसे अधिक योग्य व्यक्ति और कौन हो सकता है?"[२२]

लॉर्ड पेथिक-लॉरेंसने उत्तर दिया: "मुझे वडी आशा है कि हमारी इतने वर्षोंकी व्यक्तिगत मित्रता भारत और उसकी जनताका स्थायी कल्याण साधनेके लिए सामंजस्यपूर्ण सहयोग निर्माण करनेमे सफल होगी।"[२३]

नई मजदूर-सरकारने अगस्तके अन्तिम सप्ताहमे लॉर्ड वेवेलको लन्दन बुलाया, ताकि उनके साथ परामर्श करके सारी भारतीय समस्याका फिरसे सिंहावलोकन किया जाय। साथ ही, भारतमे यह घोषणा की गई कि युद्धके कारण केन्द्रीय और प्रान्तीय विधान-सभाओके जो चुनाव अब तक स्थगित रहे थे, वे आगामी शीतकालमे किये जायगे। लॉर्ड वेवेलके लन्दनसे लौटने पर १९ सितम्बर, १९४५ को भारतमे एक घोषणा की गयी, जिसमे सम्राट्की सरकार और वाइसरॉयका यह इरादा बताया गया कि केन्द्रीय विधान-सभा और प्रान्तोके चुनाव पूरे होनेके तुरन्त बाद (१) प्रान्तोमे प्रजाकीय मन्त्रि-मडलोको फिरसे शासनकी जिम्मेदारी ग्रहण करनेके लिए कहा जायगा। (२) जल्दीसे जल्दी सविधान बनानेवाली सभा बुलाई जायगी। और (३) प्रमुख भारतीय दलोके समर्थनसे वाइसरॉयकी कार्यकारिणी परिषद्की पुनर्रचना की जायगी।

जब देश चुनावकी तैयारीमे लगा हुआ था तब गाधीजी बहुत दिनसे मुलतवी की हुई बगालकी यात्राके लिए निकले। मई १९४४ मे अपनी रिहाईके बादसे ही वे बगाल जानेको उत्सुक थे, क्योंकि वहा प्रकृतिने मनुष्यके साथ षड्यन्त्र करके लोगोके दुःखोको चरम सीमा पर पहुचा दिया था। परन्तु बगालमें मुस्लिम लीगी मन्त्रि-मडल सत्तारूढ था और दोनोके एक सामान्य मित्रने गाधीजीको बताया था कि मुख्यमंत्री ख्वाजा नजीमुद्दीनको गाधीजीका बगाल जाना पसन्द तो बहुत होगा, परन्तु वे घबरा रहे हैं कि कही गाधीजीकी मुलाकातके कारण उनके मन्त्रि-मडलका पतन न हो जाय। गाधीजीने कहा कि बगालके मुस्लिम लीगी मन्त्रि-मडलको परेशान करनेकी मेरी जरा भी इच्छा नही है, और जब तक लीगी मन्त्रि-मडल मुझे नही बुलायेगा तब तक मैं वहा नही जाऊगा। मार्च १९४५ मे विधान-सभामे बजटकी एक बड़ी मद बगाल सरकार स्वीकृत नही करा सकी, इसलिए नजीमुद्दीन मन्त्रि-मडलका पतन हो गया, और कोई दूसरी स्थायी सरकार बननेकी सभावना नही थी, इसलिए बंगालके युद्धकालीन ऑस्ट्रेलियन गवर्नर श्री केसीने भारतीय शासन-विधानकी धारा ९३ के अनुसार बगालका प्रशासन सभाल लिया।

जुलाई १९४५ मे शिमलामे नेताओका सम्मेलन पूरा हो गया, उसके बाद श्री केसीने गाधीजीसे कहलवाया कि वे बगालमे गाधीजीके आगमनका स्वागत करेगे। बदली हुई परिस्थितियोंमे गाधीजीने निश्चय किया कि वे बगाल

जायगे, बशर्ते उन्हें मिदनापुर जिलेमें जानेकी स्वतंत्रता हो। उस जिलेमें तूफान बाढ़ अकाल और सरकारी दमनके कारण प्रजामें अवर्णनीय हाहाकार मचा हुआ था। गाधीजी चाहते थे कि इस मुलाकातमें उन्हें बिना किसी रुकावटके जिससे व मिलना चाहें मिलने दिया जाय। श्री केसीका सन्तोषजनक उत्तर मिलने पर गाधीजी ३० नवम्बर, १९४५ को बगालके लिए रवाना हुए।

गाधीजीकी पहलेकी रेलयात्राओके अनुभवसे बचनके लिए उनके डिब्बेसे कुछ दूर एक दूसरे डिब्बेमें लाउड-स्पीकर लगा दिया गया ताकि लोग गाडीके परले सिरे पर माइक्रोफोन पर बोले हुए गाधीजीके शब्द सुन सकें और आकर उनके डिब्बेको घेर न लें। परन्तु लाउड-स्पीकरने तो काम ही नही किया। पहले ही बड़े स्टेशन पर लम्बा फासला तय करके आये हुए तथा प्रतिकूल मौसममे गाधीजीके दर्शनाके लिए घटासे प्रतीक्षा करते हुए हजारो लोग इससे बहुत निराश हुए। उन्होने हरिजन-कोषमें खुले हाथो दान देकर अपना उत्साह प्रगट किया। यह दान गाधाजी जहा कही जाते थे वहा हरिजनोकी सेवाके लिए और उससे भी अधिक लोगोको अस्पृश्यता निवारणकी शिक्षा देनेके लिए इकट्ठा किया करते थे।

कभी कभी दानके बाद भेंटमें प्राप्त हुई वस्तुओ और मानपत्रोका नीलाम हुआ करता था। एक चादीकी तश्तरी तीन बार नीलाम हुई और वहीके वही उसके ४५०० रुपये लग गये। चौथी बार वह ज्योकी त्यो गाधीजीके पास लौट आई और फिर उन्हीके पास रही। एक और स्टेशन पर एक महिला सोने चादीके आभूषणोसे लदी हुई भीडको चीरती उनके डिब्बेमें पहुची और अपने आभूषण उतार कर उनके परोमें रखती हुई बोली, महात्माजी मुझे श्रद्धा दीजिये। महात्माजीने उत्तर दिया यह काम तो इश्वर ही कर सकता है। जो श्रद्धाकी खोज करता है उसे श्रद्धा जरूर मिलती है।

ब्रिटिश शासकोने काग्रेसके खिलाफ युद्ध छेडा तबसे आरम्भ हुआ वमनस्यका भाव गाधाजीके साथ लम्बे समय तक बना रहा। कलकत्तेमें हुई श्री केसीके साथ गाधीजीकी भेंट उस दीर्घकालीन वमनस्यके मरुस्थलमें हरियाली भूमिकी तरह थी। पहली ही भेंटमें दोनोके मन मिल गये। बादमें महात्माके बारेमें अपने मन पर पडी हुई छापकी बात केसीने इस प्रकार लिखी थी व सतामें राजनीतिज्ञ ह और राजनीतिज्ञोमें सत हैं। गाधीजीका सबसे बडा गुण उनकी स्नेहपूर्ण मानवता है। वे अपने विरोधी पर सार्वजनिक रूपमें विजय प्राप्त कर सकते हैं फिर भी — जब व चाहें — अपने विरोधीके मनमें कटुताकी भावना नहीं रहने देते।"

गाधी क्वचित् ही किसी मनुष्यकी बुराइ करते ह। मने उनके साथ ऐसे अनेक

व्यक्तियोकी चर्चा की, जिन्होने उनके साथ कठोर व्यवहार किया था। परन्तु उन सबके वारेमें वे कोई न कोई अच्छी बात ढूढ कर कह सकते थे, जव कि बुरी बात एक भी नही कहते थे। . जो लोग गाधी पर विश्वास करते है, उन पर वे भी विश्वास करते है।"[२६]

दोनोकी बातचीतमे श्री केसीने गाधीजीसे कहा कि आप भारतीय नेताओको अपनी वाणी पर सयम रखनेके लिए समझाये, क्योकि उनके वक्तव्योसे नई दिल्लीके शासकोकी भावनाको वहुत चोट पहुचती है। "यदि इस समय कोई हल नही निकला, तो यह एक बडी करुण घटना होगी। अवश्य ही कोई भी ऐसा नही चाहता।"

गाधीजीने उत्तर दिया "बेशक, ऐसा कोई नही चाहता। परन्तु यदि आपकी यह आशा हो कि भारतको आजादी दानकी तरह स्वीकार करनी चाहिये और उसके लिए वह अग्रेजोका आभारी रहे, तो आप वडी भूल कर रहे हैं।"

श्री केसीने कहा कि यदि आप मदद करे तो भारतका गतिरोध मिट सकता है। गाधीजीने उनसे कहा कि यदि ब्रिटिश शासकोका भारतके साथ पूरा, शुद्ध और विना शर्त न्याय करनेका दृढ निश्चय न हो, तो मै कोई मदद नही कर सकता। केसीने गाधीजीको विश्वास दिलाया कि स्वाधीनता आ रही है और वह बरसोकी वात नही परन्तु कुछ महीनोकी ही वात है। अग्रेजोने भारतको स्वतत्र करनेका दृढ निश्चय कर लिया है। गाधीजीने उत्तर दिया, तव तो आनेवाली घटनाओके आसार पहलेसे दिखाई देने चाहिये। उदाहरणके लिए, राजनीतिक कैदियोको छोडनेका सवाल ही लीजिये। केसी बोले, मै वहुतोको पहले ही छोड चुका हू। अव कोई २९० के करीब रह गये हैं। "बाकी लोगोको जव आप शासनका भार सभाले तव आप देख लीजियेगा।" गाधीजीने तर्क किया, "राष्ट्रीय सरकार पर इस प्रश्नको क्यो छोडे? उससे पहले ही यह कार्रवाई क्यो न की जाय? जो काम करना है उसे रुक रुक कर करनेसे या समय वीत जाने पर करनेसे उसकी शोभा मारी जाती है।" गवर्नरकी समझमे उनकी वात आ गई। उसके वाद रिहाइयोकी रफ्तार तेज कर दी गई और मार्च १९४६ के मध्य तक केवल ११५ व्यक्ति नजरवन्दीमे रह गये।

श्री केसीने अपनी सिचाईकी और विकासकी अन्य योजनाओकी चर्चा भी गाधीजीसे की और इस विषय पर उन्होने रेडियोके लिए जो भाषण तैयार किया था उसकी प्रतिलिपि पहलेसे ही गाधीजीके पास भेज दी। गाधीजीने उन्हे वताया कि ये सब दीर्घकालीन योजनाए हैं। अपनी जगह पर वे सव ठीक है, परन्तु बीचके समयमें लाखो लोगोको अपने वेकार समयका एक एक क्षण काममें लेना सिखाना चाहिये। "मानव-श्रमको आप रुपयेसे अधिक मान

लीजिये। फिर तो आपके पास आयका आज तक काममें न लिया गया एक अटूट साधन खड़ा हो जायगा, जो उपयोग करनेसे सदा बढ़ता ही रहता है।"[२७] उन्होंने मानव प्रयत्नके तात्कालिक उपयोगके साधनके रूपमें और जिसे श्री केसीने "संसारकी सबसे बड़ी बेकारीकी समस्या"[२८] बताया था, उसके उपायके रूपमें अपनी हाथ-कताई और हाथ-बुनाईकी योजना श्री केसीके सामने रखी।

श्री केसीने दलील दी कि ऐसी योजना पर अमल किया भी गया तो उससे वह काम नहीं होगा जो सिंचाईसे होगा — वह किसानको वर्षाकी गुलामीसे या दूसरी बहुतसी दिक्कतोंसे जो सिंचाईके अभावसे पैदा होती हैं मुक्त नहीं कर सकेगा।' और इसलिए उनका कहना था कि, "मेरा इस बात पर सारा जोर लगाना उचित है कि बंगालकी सम्पन्नताके लिए भौतिक वातावरण पर नियंत्रण प्राप्त करना बुनियादी तौर पर जरूरी है।"[२९]

गाधीजीने उनसे कहा "मैंने सिंचाईकी योजनाकी उपेक्षा नहीं की है। यदि नदियोंके पानीको बाँध कर बंगालके लोग उपयोगमें ले सकें और उसे खाड़ीमें बर्बाद न होने दिया जाय तो इससे उन्हें बड़ा लाभ होगा। परन्तु यदि पहले लोगोंको अपना बरबाद होनेवाला समय काममें लेनेकी कला सिखा दी जाय, तो वे नियंत्रित जलका सदुपयोग कर सकेंगे। मैंने तो सिंचाईकी योजनामें वृद्धि करनेका ही सुझाव दिया है ताकि ग्रामजनोंको लगभग तुरन्त व्यक्तिगत राहत मिल जाय। मुख्य प्रश्न उनकी बरबाद होनेवाली मेहनतके उपयोगका है। ... आपकी योजनामें मुख्य प्रश्न बरबाद होनेवाले पानीको उपयोगमें लानेका है।"[३०]

परन्तु इस विषयमें श्री केसी उन्हें कोरे मालूम हुए। बादमें बंगालके गवर्नरने यह टीका की ... इस प्रश्न पर गाधीजीके विचारोंके खिलाफ तर्क करना ... समय बरबाद करना था।"[३१]

गाधीजीने श्री केसीको अन्तमें सुझाया कि भावी परिवर्तनोंके बारेमें ब्रिटिश घोषणाओंको देखते हुए विकासकी जो भी योजनाएं अधिकारियोंके पास हों उन सबको लोगोंसे सलाह करके तैयार किया जाय। लेकिन कोई चीज कितनी ही लाभदायी क्यों न हो उसे ऊपरसे लोगों पर थोपना नहीं चाहिये। स्वाधीनता बाहरसे आनेवाली नहीं है। उसका जन्म भीतरसे होना चाहिये।

अब दोनों साम्प्रदायिक प्रश्न पर आये। श्री केसीने इस बात पर जोर दिया कि मुसलमानोंका डर मिटानेके लिए जो भी गारंटी मांगें वह उन्हें देनी चाहिये। गाधीजीने उन्हें बताया कि औचित्यकी सीमामें रह कर इस दिशामें उन्होंने क्या क्या किया था। श्री केसीने गाधीजीको विश्वास दिलाया

कि इस बार ब्रिटिश सरकारने निश्चय कर लिया है कि जिन्नाको देशकी राजनीतिक प्रगतिमे बाधक नही बनने दिया जायगा।

गाधीजीने केसीके साथ हुई अपनी मुलाकातके बाद पं० नेहरूसे कहा, "वे अच्छे आदमी है। उनसे मिलकर मुझे स्मट्सका स्मरण हो आया।"

प० नेहरूने अपने सदाके सौम्य ढगसे उत्तर दिया, "ये सब लोग आदमी तो अच्छे है, परन्तु उनकी धारणाए सब गलत है। इसलिए अच्छेपनका सवाल पैदा नही होता।"

श्री केसीने लॉर्ड वेवेलके कलकत्ता आने पर उनकी और गाधीजीकी मुलाकातका भी प्रबन्ध किया था। यह भेंट सर्वथा असफल सिद्ध हुई। मुलाकातसे पहले कलकत्ताके एसोसियेटेड चेम्बर ऑफ कॉमर्समे लॉर्ड वेवेलका भाषण बहुत ही खराब हुआ। उसमे पुरानी ब्रिटिश शासन-व्यवस्थाके वही निर्जीव जर्जर सूत्र भरे थे और उसमे इसका जरा भी सकेत नही दिया गया कि जिन परिवर्तनोका श्री केसी गाधीजीको विश्वास दिला रहे थे वे आनेवाले है। वाइसरॉयने कहा, "'भारत छोडो' का नारा ऐसे किसी मत्रका काम नही देगा, जिससे अलीबाबाकी गुफाका दरवाजा खुल जाय। समझौतेके लिए अलग अलग दल है, जिन्हे किसी न किसी तरह आपसमे एक हद तक समझौता करना होगा — काग्रेस है, . . अल्पसख्यक जातिया है, . मुसलमान है, . . देशी राजा है, . ब्रिटिश सरकार है।"

गाधीजीने लॉर्ड वेवेलको अपनी ३० मिनटकी मुलाकातमे कहा, भारतीय प्रश्नका एकमात्र हल यह है कि अग्रेज इस बातको अच्छी तरह समझ ले कि भारत पर अधिकार बनाये रखने और 'बानर-न्याय' करते रहनेका उन्हे कोई नैतिक अधिकार नही है। जो भी दल शासन सभालनेको तैयार हो उसे सत्ता सोप कर उन्हे भारतसे चले जाना चाहिये। लॉर्ड वेवेलने उन 'तेज' भाषणोकी शिकायत की, जो काग्रेसी नेता दे रहे थे। गाधीजीने उनसे कहा, अगर आप लोगोने भारतसे जानेका सचमुच निश्चय कर लिया है, तो इस विषयमें भावुक बननेकी जरूरत नही है।

लॉर्ड वेवेलने पूछा तो क्या आपको अग्रेजोकी नेकनीयत पर शक है?

गाधीजीने उलटा प्रश्न किया . क्या अग्रेजो द्वारा किये हुए वचन-भगका बार बार अनुभव होनेके बाद इसके लिए काफी कारण नही है? वाइसरॉयने साफ इनकार करते हुए उनसे कहा कि अग्रेजोने कोई वचन-भग नही किया। यदि भारतीय दल आपसमे समझौता कर लेते, तो अग्रेज तुरन्त सत्ता सौंपनेको तैयार थे। गाधीजीने उनसे कहा . तब तो भारतीय प्रश्नका निबटारा कयामतके दिन तक नही होगा। "यदि आप कहते है कि व·त॰ भारतवासियोमें

गवर्नमेण्ट नहीं होगी तब तक आप यहां रहेंगे तो विरोधियोंको कोई आधार नहीं हो सकता — क्योंकि आप किसीकी कभी हानि ही न करेंगे।

केसीने ऐसा सद्भावना प्रगट किया था परन्तु उन्हें कडवा अनुभव हुआ। दिल्लीसे वाइसरॉय और गांधीजीकी मुलाकातके बारेमें जो वक्तव्य जारी किया जानेवाला था उसमें कहा गया था कि वाइसरॉयने गांधीजीसे मिलना स्वीकार कर लिया था। जब वक्तव्यकी मूल प्रति गांधीजीको दिखाई गई तो उन्होंने बताया कि मैंने मुलाकात नहीं मांगी थी, क्योंकि उस समय मेरे पास वाइसरॉयसे कहनेके लिए कोई भी ऐसी उपयोगी बात थी ही नहीं। इसलिए इस वक्तव्यमें उचित संशोधन करना होगा। गांधीजीने आवश्यक परिवर्तन भी सुझाया परन्तु नई दिल्लीवालोंने स्वीकार नहीं किया।

इस पर श्री केसीने नई दिल्लीको सुझाया कि सारी जिम्मेदारी मुझ पर डाली जा सकती है और यह कहा जा सकता है कि वाइसरॉय और गांधीजीकी मुलाकातका सुझाव केसीकी तरफसे आया था और दोनोंने उसे स्वीकार किया था। परन्तु नई दिल्लीवालोंको यह भी स्वीकार नहीं हुआ। अन्तमें नई दिल्लीकी ही तारीख लगा कर (!!!) कलकत्तेसे एक अनधिकृत वक्तव्य निकाला गया और उसमें यह स्पष्टीकरण किया गया कि कलकत्ता और नई दिल्लीके बीच कुछ गलतफहमी हो गई थी और वास्तवमें गांधीजीने यह मुलाकात नहीं मांगी थी।'

बादमें वाइसरॉयके निजी सचिवने उनकी कठिनाई समझाई। वाइसरॉयके मन पर सचमुच यह छाप पडी थी कि जब गवर्नर केसीने गांधीजीसे मिलनेका सुझाव उनके सामने रखा, तब वे गांधीजीकी मांग उनके सामने रख रहे थे। वाइसरॉयके निजी सचिवने कहा, यह तो हम कह नहीं सकते थे कि वाइसरॉयने गांधीजीको बुलाया है, क्योंकि उससे यह छाप पडती कि वाइसरॉयने कांग्रेसके साथ संधिवार्ताएं आरम्भ कर दी हैं और फिर उसमें से यह सवाल पैदा होता कि जिन्नाको और दूसरी अल्पसंख्यक जातियोंके प्रतिनिधियोंको क्यों नहीं बुलाया गया।

क्या यह सब बातका बतंगड ही था? क्या 'प्रतिष्ठा' के बारेमें अत्यधिक भावुकता ही थी? नहीं, बात इससे अधिक गम्भीर अपशकुनकी सूचक थी। स्वाधीनताके उषाकालमें जो प्रातःकालीन कोहरा छाया हुआ था, उसके भीतरसे समान सख्या का भूत क्षितिज पर दिखाई देने लगा था। लेकिन उसके भयंकर रहस्यको भारतमें अभी तक किसीने पूरी तरह जाना नहीं था।

*

गांधीजीकी बंगाल-यात्राके दिनोंमें दिसम्बरके पहले सप्ताहमें कलकत्तामें कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक रखी गई। विषय-सूचीमें मुख्य वस्तु थी चुनावका

घोषणा-पत्र। गाधीजीका खयाल था कि चुनावकी सबसे अच्छी तैयारी यह होगी कि काग्रेस अपने घरको व्यवस्थित कर ले। गाधीजीके विचारके अनुसार काग्रेसको देशमे अद्वितीय पद उसकी अहिसाकी नीतिके कारण मिला था। अपनी उस नीतिका अधिक विकास करके वह अधिक ऊचाई पर पहुच सकती थी। परन्तु इस मामलेमे वह आगे बढनेके बजाय पीछे हटती नजर आती थी। गाधीजीने कभी जान-बूझ कर एक शब्द भी ऐसा नही कहा था, जिसका यह अर्थ लगाया जाय कि उन्होने किसी ऐसी बातकी निन्दा की है, जो अगस्त १९४२ मे काग्रेसी नेताओकी गिरफ्तारीके बाद लोगोने की हो। परन्तु वे दृढतापूर्वक यह मानते थे कि काग्रेस इस प्रश्न पर चुप नही रह सकती। अत॰ वह समय आ गया है जब लोगोके भावी मार्गदर्शनके लिए काग्रेसको यह स्पष्ट घोषणा कर देनी चाहिये कि 'भारत छोडो' सग्रामके दिनोमे किये गये कुछ कार्य काग्रेसकी अहिसा-नीतिके दायरेके भीतर आते है या नही और स्वातत्र्य-सग्रामको ऐसे कार्योसे सहायता पहुच सकती है या नही।

चुनावके खर्चका प्रश्न भी था। गाधीजीने इस बारेमे कहा कि काग्रेसकी सच्ची जीत तभी होगी जब वह एक पाई भी खर्च किये बिना चुनावमे जीते। अगर इस सिद्धान्त पर अटल रह कर काग्रेस चुनावमे हार भी जाय, तो उन्हे इसकी परवाह नही थी।

अन्तमे उन्होने अपना यह दृढ मत बताया कि रचनात्मक कार्यके द्वारा ही काग्रेसजन सत्याग्रहकी शक्ति पैदा कर सकते है। कुछ सदस्य ऐसे थे, जो रचनात्मक कार्यके प्रस्तावको दो भागोमे बाटना चाहते थे। उनका कहना यह था कि गाधीजीकी व्याख्याके रचनात्मक कार्यमे और काग्रेसकी अहिसक नीतिमे कोई अभिन्न सम्बन्ध नही है। गाधीजीने इसका कडा विरोध किया।

गाधीजीकी अधिकाश सिफारिशें कार्यसमितिने मान ली। उसका अहिसा-सम्बन्धी प्रस्ताव इस प्रकार था

> कार्यसमिति . . . सब सम्बन्धित लोगोके मार्गदर्शनके लिए स्पष्ट रूपमे यह घोषित करती है . . कि काग्रेस द्वारा अपनाई गई अहिसाकी नीतिमे सार्वजनिक सम्पत्तिको जलाने, टेलिग्राफके तारोको काट देने, रेलोको पटरीसे गिरा देने और डराने-धमकानेका समावेश नही होता है। कार्यसमितिका मत है कि अहिसाकी नीतिसे, जो समय समय पर समझाई और विकसित की गई है, और उसके अनुसार किये जानेवाले कार्यसे भारतका दर्जा इतना ऊचा उठ गया है जितना पहले कभी नही उठा था। कार्यसमितिका यह भी मत है कि काग्रेसकी रचनात्मक प्रवृत्तिया, जो चरखेसे शुरू होती है और खादी जिनका केन्द्र है, अहिसा-नीतिकी प्रतीक है और काग्रेसकी अन्य सब प्रवृत्तिया —

जिनमें ससदीय कायक्रम शामिल है—गाधीजी द्वारा समझाई हुई रचनात्मक प्रवृत्तियाके अधीन ह और उन्हें आगे बढ़ानेके लिए आयो जित की गई हं। कायसमितिका यह मत है कि स्वतत्रता प्राप्तिके लिए किये जानेवाले सामूहिक या अन्य किसी प्रकारके सविनय आज्ञा भगकी कल्पना तब तक नही की जा सकती, जब तक कि भारतके साधारण लोग अधिकसे अधिक व्यापक पैमाने पर रचनात्मक कायक्रमको न अपना ले।

थाडे दिन बाद बगालके भूतपूव मुख्यमत्री मौलवी फजलुल हक, जिन्हें उनके प्रशसक लोग 'शेरे बगाल' कहते थे, गाधीजीके पास आये। किसी समय वे बडे पक्के मुस्लिम लीगी थे लेकिन बादमें जिन्नाकी हा में हा न मिलानेके कारण उन्हें लीगसे निकाल दिया गया था। बगालमें चुनावकी सरगरमी चरम सीमा पर पहुच गई थी। मौलवी साहबने चुनावकी सभाओंमें मुस्लिम लीगके हिमायतियाके गुडेपनकी शिकायत की और कहा कि सरकार पूरा सरक्षण नही दे रही है। म स्वय एक अवसर पर एक हिन्दूके घरमें शरण लेकर मौतसे बाल बाल बचा हू।

गाधीजीने उनके साथ सहानुभूति प्रगट की और उनकी शिकायतो पर गवनरका ध्यान खीचा। परन्तु उन्होंने मौलवी साहबसे कह दिया कि इन सब बातोंसे यह सिद्ध होता है कि मुसलमानोकी हमदर्दी लीगके साथ है अन्यथा लीगी गुडे बहुत आगे नही बढ सकते थे। मौलवी साहबने यह दलील दी कि यह लीगके साथ मुसलमानोकी हमदर्दीकी निशानी नही है, परन्तु जनताकी उदासीनताको ही निशानी है। साधारण नागरिक स्वभावसे डरपोक होता है और कमसे कम विरोधका रास्ता अपनाता है। गाधीजी उनकी बातसे सहमत नही हुए। उन्होने कहा मेरा अपना खयाल तो यह है कि जो लोग जनताकी उदासीनताकी शिकायत करते ह वे खुद जनताके प्रति उदासीन रहे हं। उन्होंने लोगोके बीच काम करके लोकमत तयार करनेका बहुत कम प्रयत्न किया है। अपनी उपेक्षाके फल अब उन्हें भोगने पड रहे ह। पिछली बातो पर रोनेसे अब कोई फायदा नही। अब अगर वे गुडोसे डरते ह और सरकार उनकी रक्षा नही करती तो उनके लिए इज्जतका रास्ता यही है कि व सावजनिक रूपमें अपने कारण बता कर चुनावसे हट जाय। इसके फलस्वरूप यदि पाकिस्तान बन जाय तो उन्हें उस खतरेका सामना करना चाहिये और अहिंसक असहयोगकी शक्तिसे उसका मुकाबला करना चाहिये। क्योकि प्रयोगमें अनेक दोष होने पर भी असहयोगने हमें ग्रेट ब्रिटनकी शस्त्र शक्तिके बावजूद स्वतत्रताके द्वार तक पहुचा दिया है। उससे या तो पाकिस्तानका अन्त हो जायगा या उसकी बुराई नष्ट होकर वह सुधर जायगा।

४

रवीन्द्रनाथ ठाकुरने अपनी मृत्युसे पहले गाधीजीके कन्धो पर दो भार डाले थे (१) शातिनिकेतनके लिए द्रव्यकी कुछ व्यवस्था करना, और (२) शान्तिनिकेतनके कामकाज और प्रवन्धमे गहरी दिलचस्पी लेना।

दक्षिण अफ्रीकासे लौटने पर गाधीजी और उनसे पूर्व भारत पहुचनेवाले फिनिक्स आश्रमके उनके साथी यही आकर ठहरे थे। कविकी मृत्युके वाद गाधीजी वहा नही जा सके थे। दिसम्वर १९४५ के तीसरे सप्ताहमे वे इस यात्राके लिए रवाना हुए।

जव गाडी गाधीजीको और उनकी मडलीको लेकर वोलपुर स्टेशन पर पहुची, तव साय-प्रार्थनाका समय निकट था। उनके डिव्वेके सामनेका प्लेटफार्म परम्परागत भारतीय पद्धतिसे रागोली — अल्पना — की कलापूर्ण आकृतियोसे सजाया गया था। स्वागतकी एक एक वातमे कला और सादगीका सुमेल दिखाई पडता था। कोई शोरगुल या धक्कम-धक्का नही हुआ। सारा दृश्य एक गहरी सयमपूर्ण भावनासे ओतप्रोत था। स्वजनके दु खद वियोगके वाद परिवारके पुनर्मिलनका गाभीर्य सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा था।

सध्या हो रही थी। गाधीजीको सीधे प्रार्थना-सभामे ले जाया गया। प्रार्थना-सभा घने कुजोके बीच साफ की हुई भूमि पर हुई थी। जव साय-कालीन समीर स्थिर और शान्त कुजोके वीच निश्वास लेता था तव ऊपर हरे पत्तोके वदनवार और झडिया हल्के हल्के लहरा रही थी। धूपदीपकी सुगन्ध और गुरुदेवके गीतोका कोमल सगीत सध्याके धूमिल वातावरणमे अनोखा गाम्भीर्य पैदा कर रहे थे।

छोटेसे प्रार्थना-प्रवचनमे गाधीजीने गुरुदेवको एक ऐसे जन्मदाता पक्षीकी उपमा दी, जिसके फैले हुए पखोकी छत्रछायामे उनकी सस्थाने विकसित होकर वर्तमान आकार प्राप्त कर लिया था। "हम सव उनके सरक्षक पखोकी गर्मीका अभाव अनुभव कर रहे हैं। परन्तु हमे दु खी नही होना चाहिये। . . . सभी प्राणियोको एक न एक दिन जाना होता है। . अव आप कार्यकर्ताओ और शातिनिकेतनके निवासियोका कर्तव्य है कि सव मिल कर उनके आदर्शका प्रतिनिधित्व करे।"

मौसम सुहावना ओर खुशनुमा था, हवामे गुलावी सर्दीका स्पर्श था और नीले निरभ्र आकाशमे शीत ऋतुका पूर्ण चन्द्र चमक रहा था, जव दूसरे दिन प्रात काल शातिनिकेतनके लडके और लडकियोने वैतालिक गाते गाते आश्रम-भूमिकी परिक्रमा की और 'उदीचि' के जिस कमरेमें कविवर सदा वैठते और अपना काम करते थे उसकी खिडकीके नीचे आकर समूह गान तथा वन्दनाका कार्यक्रम पूरा करके गाधीजीको और उनकी मडलीको जगाया।

लिए यह निष्कष निकालना चाहिये कि दूसरी सब बातें तो ठीक ह, परन्तु आपमें ही कोइ न काई खराबी है।"

अन्तमें कविवरकी भतीजी इन्दिरा देवीने पूछा 'क्या यहा सगीत और नृत्य अत्यधिक मात्रामे नही होता? क्या यहा स्वर-सगीतमें जीवन-सगीतके डूब जानका खतरा नहा है?'

गाधीजी इस प्रश्नका उत्तर तुरन्त नही दे सके क्योकि उनके रवाना होनेका समय हा गया था। परन्तु यह प्रश्न उनके मनम बराबर बना रहा। कलकत्ता लौट कर उन्होने एक पत्रमें इन्दिरा देवीको लिखा

> मुझे सदेह है कि शायद जीवनके लिए जितना आवश्यक है उससे अधिक सगीत शातिनिकेतनमें है। स्वरके सगीतम वहा जीवनका सगीत खो जानेका डर है। चलनेका कूचका, हमारी हरएक गतिविधिका और हमारी प्रत्यक प्रवत्तिका सगीत क्यो न हो? म समझता हू कि हमारे लडको और लडकियोको चलना, कूच करना बठना खाना सार यह कि जीवनका प्रत्यक काय करनेकी पद्धति आनी चाहिये। सगीतका मेरी कल्पना यही है।
>
> लडको और लडकियोको विश्वविद्यालयकी परीक्षाके लिए तयार करना मुझे पसन्द नहा है। विश्वभारती स्वय एक विश्वविद्यालय है। गुरुदेवने निभय हाकर मानव कमजोरियाक लिए जो छूट दी थी, वह छूट उनकी अनुपस्थितिमे विश्वभारती नही दे सकती। यह देखनेके लिए म बडा उत्सुक हू कि शातिनिकेतन गुरुदेवके सर्वोच्च आदशका प्रतिनिधि बने।
>
> जब तक आप लाग कताईके बुनियादी उद्योगके साथ कामका आरभ नही करेगे तब तक आप सच्ची ग्रामीण पुनरचना नही कर सकेंग। आप जानते ह कि मने गुरुदवके सामने इसकी हिमायत की थी पहले तो वह व्यथ गई, किन्तु बादमें वे समझने लग गये थे कि मरा उद्देश्य क्या है। अगर आप सब मानते ह कि कताईके मामलेमें मने गुरुदेवकी बातको ठीक ठीक समझा है ता आप शान्तिनिकेतनमें चरखेका सगीत गुजानेमें सकोच नही करेंग।"

गुरुदेव और गाधाजी भारतीय आत्माके आनन्दमय और तपामय जस दो ध्रुवाके प्रतिनिधि थे। दोनामें एक-दूसरके अश मिले हुए थे। उपनिषद्कारा महान द्रष्टा विश्वके आदि-कारणका आवाहन 'कविम पुराणम् और अनुशासितारम शब्दा द्वारा जो करता है वह अत्यन्त सूचक है। पुराण कवि ताराको प्रकाशमान बनाता है और अनुशासन करनेवाला उन्ह उनक भ्रमण-मागस विचलित नही होन दता। दाना परस्पर पूरक ह। भेद केवल इस बातका है कि किस

अधिक महत्त्व दिया जाता है। दोनोके समुचित समन्वयमे भारतके भविष्यकी सिद्धि निहित है। गाधीजीकी अतिम शातिनिकेतन-यात्रा उसी समन्वयकी प्रतीक और सूचक थी।

*

अगले सप्ताह गाधीजी मिदनापुरके लिए रवाना हो गये और वहासे लौटकर उन्होने सात दिनका आसामका दौरा किया, जिसमे वे ब्रह्मपुत्राके साथ ऊपरकी ओर ठेठ सुआलकुची तक गये थे। इसके वाद दक्षिण भारतकी तेज यात्रा हुई। वहा उन्हे दक्षिण भारत हिन्दुस्तानी प्रचार सभाके रजत जयन्ती महोत्सवकी अध्यक्षता करनी थी। यह सस्था भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानीके प्रचारके लिए स्थापित की गई थी। उसके साथ गाधीजीका पच्चीस वर्षसे अधिकका गहरा सबध रह चुका था।

मिदनापुर जिला अभूतपूर्व भीषण तूफान, ज्वारकी भयकर बाढ और सरकारी दमनसे बरबाद हो चुका था। सरकारी दमन इतना भयकर हुआ कि भारतके २५ वर्षके अहिंसक स्वातत्र्य-सग्राममे वैसा दमन और कही नही हुआ था। उसके महीनो बाद तक धानके खेतोमें मनुष्य और पशुओकी लाशे तैरती रही थी और वे खारे पानी और बगालकी तेज धूपके असरसे इडिया-रबरसे भी ज्यादा सख्त और काली हो गई थी। जिस भूमि पर कोन्टाईमे गाधीजीकी प्रार्थना-सभा थी, उसके नीचे लगभग सात सौ मवेशियो और तीन सौ मानवोकी लाशे गडी हुई बताई जाती थी। वैसे तो तूफानमे इससे कही अधिक प्राणहानि हुई थी। मिट्टीमे मिट्टी मिल गई थी और यह कहानी कहनेके लिए वहा कोई निशान अब बाकी नही रहा था।

गाधीजीने अपने प्रार्थना-प्रवचनमे कहा, "ईश्वर दया करके हरियालीकी चादरके नीचे मनुष्यकी दुर्दशाकी लज्जाको छिपा लेता है; फिर भी इससे उन लोगोकी हृदयहीनता प्रगट होती है, जो इसके लिए जिम्मेवार थे। सामान्य प्रथा यह है कि प्रत्येक शरीरको अलग अलग स्थान पर दफनाया या जलाया जाता है और जिस भूमि पर यह सस्कार होता है वह पवित्र बन जाती है।"[३४] उन्होने आगे कहा, मैं इस भावनाका आदर करता हू, परन्तु उसे मूर्तिपूजाका रूप नही देता। मुझे इस बातसे सतोष भी होता है कि सबकी सामान्य विपत्तिने मनुष्यो और पशुओको मृत्युमें तो एक कर दिया और इस प्रकार यह सिद्ध कर दिया कि वास्तवमे प्राणिमात्र एक है। "इस विचारसे मनुष्यका अहकार मिटकर उसमे नम्रता आनी चाहिये और उसे अनुभव होना चाहिये कि मानव-जीवन कितना तुच्छ और भ्रमपूर्ण है और जीवनके भ्रमने उसे कैसे बधनमें डाल रखा है। यदि मनुष्य इस भ्रमजालको तोडना

सीख ले और अपने धर्मके पालनको अपनी जीवन-यात्राका ध्रुवतारा बना ले, तो जिस भारके नीचे दुनिया कराह रही है वह काफी हलका हो जाय।"

५

जुलाई १९४५ में हुए नेताओंके सम्मेलनके बाद शिमलासे लौटते हुए गांधीजीको स्पेशियल ट्रेनकी सुविधाका उपयोग करना पड़ा था। अधिकारियोंने उनके लिए यह प्रबंध किया था और जैसा गांधीजीने कहा, उन्हें कालकासे वर्धा तक 'चोरकी तरह' यात्रा करनी पड़ी। बादमें भी उन्हें कई बार इस मामलेमें झुकना पड़ा था। रास्तेमें कई स्टेशनों पर गाड़ीके ठहरने पर अनियंत्रित प्रदर्शनोंका नियंत्रण करना अधिकाधिक कठिन होता जा रहा था। कभी कभी घातक दुर्घटनाएं केवल चमत्कारसे टल जाती थीं। इसके सिवा, रेल्वे लाइन परका सारा व्यवहार रुक जाता था। अपने एक असबारी वक्तव्यमें गांधीजीने इस सारी विचारधाराको व्यक्त किया जो इस अनुभवसे उनके मनमें आरंभ हुई थी: "यह अनियंत्रितता स्वराज्यके आगमनकी सूचक नहीं है। वह अहिंसाकी निशानी भी नहीं है। नेताओंका स्वागत करनेके लिए लोगोंकी भीड़ तो होनी चाहिये परन्तु वह शान्तिपूर्ण, गौरवयुक्त और बिलकुल अनुशासनबद्ध होनी चाहिये। मैंने साधारण सैनिकोंको — चाहे वे कूच कर रहे हों या आराम कर रहे हों — हजारोंकी संख्यामें पूरी खामोशी रखते देखा है। हमारे जन-समूह यदि स्वराज्यके अहिंसक सैनिक हैं, तो उन्हें साधारण सैनिकोंसे अधिक अनुशासनबद्ध होना चाहिये।"

गांधीजीने अपनी बंगाल, आसाम और दक्षिण भारतकी इन यात्राओंको लोगोंके व्यवहारके निरीक्षण और अध्ययनका तथा लोगोंको शिक्षा देनेका साधन बना लिया। भारत शीघ्र स्वाधीन होने जा रहा था। उनके मनमें यह प्रश्न उठा करता था: कराड़ों लोगों पर स्वतंत्रताके पहले आघातकी क्या प्रतिक्रिया होगी? जहां भी वे जाते वहां उनका स्वागत करनेवाले आम लोगोंकी उमड़ती हुई भीड़ और भक्ति देखकर वे अपने आपसे यह प्रश्न पूछते थे: "यह हिंसाकी बनावट है या अहिंसाकी? यदि लोगोंको ठीक तरहसे संगठित न किया गया और उन्हें अहिंसक आचरणकी तालीम न दी गई, तो मुझे डर है कि वे स्वतंत्रताके

रूपमे रामधुन गाना और ताल देना अहिंसामे वैसे ही अनुशासनके अग है, जैसे सैनिक अनुशासनमे शारीरिक कवायद ओर हथियारोकी तालीम है।"[३६]

गाधीजीने यह भी कहा "यदि ४० करोड भारतीय एकस्वरसे बोल सकें, एकसाथ चल सके और एक होकर काम कर सके, तो स्वतत्रता उनके हाथमें आई हुई चीज समझिये। प्रार्थना मनुष्योको बाधनेवाली सबसे बडी शक्ति है और उससे मानव-परिवारमे सगठन तथा एकता पैदा होती है। यदि कोई व्यक्ति प्रार्थनाके द्वारा ईश्वरके साथ एकता स्थापित कर लेता है, तो वह सबको अपने जैसा ही समझेगा। तब कोई मनुष्य ऊचा और कोई नीचा नही होगा, सकीर्ण प्रान्तवाद न होगा और छोटी छोटी स्पर्धाए नही रहेगी।... यदि ईश्वरके साथ हम एकराग हो जाते है, तो सभा कितनी ही बडी क्यो न हो, उसमे पूर्ण शान्ति और व्यवस्था रहेगी और कमजोरसे कमजोर भी पूर्ण सुरक्षितताका अनुभव करेगा। सबसे बडी बात तो यह है कि ईश्वर-साक्षात्कारसे सारे भौतिक भय भाग जाते है। ईश्वरकी शरण स्वीकार कर लेनेके बाद राजनीतिक गुलामी नही रह सकती। दासोके लिए मोक्ष नही होता।"[३७]

अहिंसाकी पद्धतिमे यह एक क्रातिकारी परिवर्तन था। गाधीजीको इसका पूरा विकास करनेका या उसकी क्षमताकी जांच करनेका समय नही मिला, परन्तु जितना अनुभव इसका उन्हे हुआ उससे गाधीजीका यह पक्का विश्वास हो गया था कि इस पद्धतिमे अहिंसक सामुदायिक अनुशासन और सामुदायिक कार्यके सगठनके लिए अनन्त शक्तिया भरी है। मिदनापुरके अपने दौरेके दिनोमे उन्होने सरदार पटेलको एक पत्रमें लिखा था "सामुदायिक प्रार्थनाका लोगो पर जादूका-सा असर हो रहा है। मै उसे रोज देख रहा हू। प्रार्थनामें भीड हजारोकी नही, कभी कभी तो लाखोकी होती है। फिर भी प्रार्थनाके समय पूरी व्यवस्था और पूरी शान्ति रहती हे। कोई धक्कम-धक्का या शोरगुल नही होता है। यह बिलकुल नया अनुभव है।"[३८]

उन्होने नववर्षके दिन कोटाईकी एक लाखसे अधिक लोगोकी प्रार्थना-सभामे कहा, आज जो अनुशासन आप लोगोने दिखाया हे वैसा ही सवा छह करोड बगाली यदि दिखा सकें, तो हजार हिटलर भी न तो आपकी आत्माको दबा सकते है और न आपकी स्वतन्त्रताको छीन सकते है।

"भारत माताके उस अनाथ बालक" उडीसाकी रेलयात्राके दिनोमें यह प्रबन्ध किया गया था कि रातको गाधीजीकी स्पेशियल ट्रेन किसी स्टेशन पर न ठहरे। परन्तु गाधीजीने खास तौर पर कहकर कुछ स्टेशनो पर गाडीको ठहरवाया। कटकमें आधी रातको गाडी पहुची। स्टेशन पर एकत्र भीडमे विशेष रूपसे अनुशासनका अभाव था। इससे उन्हे चोट पहुची। उड़ीसामे ही

तो उन्होने अस्पृश्यता निवारणके लिए कई वर्ष पूर्व अपनी प्रथम 'धर्मयात्रा पदल की थी। इसलिए उन्हे उडीसासे बडी बडी आशाए थी। उन्होने लोगोसे पूछा क्या उडीसाके भले लोग यह समझते है कि इस तरह उन्हे स्वतत्रता प्राप्त हो सकती है? क्या पशुबलके अन्तिम रूप अणुबमका उत्तर अनुशासनहीन हुल्लडबाजीसे दिया जा सकता है? समय आ गया है जब यदि आपकी आत्मामें असत्य छिपा हो तो आप उसे निकाल दें। मुझे आपके स्वागतके नारे नही चाहिये और न आपका पसा चाहिये। परन्तु आपको अपने मन स्वच्छ कर लेने चाहिये और अपने साथ ईमानदारी बरतनी चाहिये। आपके दानकी अपेक्षा इससे मुझे अधिक प्रसन्नता होगी।"

दिनकी यात्रा वाल्टेयरसे शुरू हुई। वहा पिछली रातके अनुभवकी काफी क्षतिपूर्ति हो गई। लोगोके प्रचड समुदायोको धर्मपूर्वक प्रतीक्षा करते और महात्माके फलाये हुए हाथ पर अपनी पसीनेकी कमाईका पाई-पसा शातिपूर्वक धरते देखना एक अनोखा दृश्य था। उन्हे गिननेमें कनु गाधी और उनके ४० साथियोको मद्रासमें लगभग दो दिन और दो रातें लगी। दानमें ३ ८९५ नोट और ५४ ६०८ सिक्के आये। यात्रामें कुल ५५ ०७१ रुपये ७ आने ३ पाईकी रकम एकत्र हुई।

मदुराकी सभामें ५ या ६ लाखसे कम लोग नही थे। स्वयसेवक इतने विराट मानव-समुदायका प्रबध करनेके आदी नही थे। मचके पीछसे, जहा गाधीजी बठे थे दबाव बढ़ता जा रहा था। गाधीजीने घोषणा की कि वे सभामें व्याख्यान नही देंगे और उन्होने लोगोको चले जानेके लिए समझाया। वे चुप रहे परन्तु गये नही। इसलिए मने सोचा कि जब तक भीड बिखर न जायगी या मुझे जानेका रास्ता नही देगी तब तक जहा हू वहा रातको मैं आराम करूगा।'" किन्तु यह सूचना मिलने पर कि एक मोटर उनकी प्रतीक्षा कर रही है और भीड उन्हे रास्ता दे देगी वे मान गये। ज्यो ही वे भीडमें घुसे उन्हे अपना भूल मालूम हो गई वह कोलाहल रहित तथा अनुशासनपूर्ण भीड न होकर जानलेवा सुरक्षित मार्ग नही था जिसके लिए मैं लोगोको

पलनीका अनुभव मदुरासे उलटा था। पलनीमे पहाडीकी चोटी पर एक प्रसिद्ध दक्षिण भारतीय मदिर है। सभा मदिरकी छायामे हुई थी। हरिजन उस मंदिरमे स्वतत्रतापूर्वक जा सकते थे, इसलिए गाधीजीने निश्चय किया कि वे मदिरमे दर्शन करने जायगे। परन्तु यदि भीडने उनके साथ चलनेका आग्रह किया होता, जव उन्हे कुर्सी पर विठा कर पहाड़ी पर ले जाया जा रहा था, तो उस यात्रामे ६०० सीढियोकी चढाई चढना असम्भव हो जाता। तव तो वे पहाडीके नीचेसे ही दर्शन करके सतोप मान लेते। इस सम्वन्धमें उन्होने कहा "लोग यह न समझे कि मै मिट्टी या कीमती धातुकी मूर्तियोकी शक्तिमे विश्वास रखनेके कारण दर्शनके लिए प्रेरित हुआ था। . . . मेरा तो विश्वास है कि मैदानोमे जहा लाखो लोग रहते हैं वही भारतका ईश्वर रहता है। . . . वहुत लोग पलनी गये है और वहुतसे आगे भी जायगे। परन्तु करोडो आदमी वहा नही जा सकते। मै उनमे से ही एक रहना चाहूगा —जैसा कि मै हू भी। मुझे यह भी विश्वास था कि पहाडीके नीचेसे मेरी प्रार्थना मदिरके कुछ भक्तोसे अधिक सुनी जायगी। . . फिर भी जिन लाखो लोगोको विश्वास दिलाया गया था कि मै मूर्तिके ही दर्शन करूगा, वे यदि मै पहाडी पर न जा सका तो मेरे इस सदेशको नही समझेगे। . . . सभामे उनके मौनसे मुझे यह आशा हुई कि मै घोपित कार्यक्रमके अनुसार काम कर सकूगा।"[४१] भापणके वाद प्रवेश-द्वार पर भीड तो काफी वडी थी, लेकिन जव गाधीजीको और राजाजीको कुर्सियो पर बैठाकर पहाडी पर ले जाया जा रहा था तव किसीने उनके साथ जानेका आग्रह नही किया और घोपित कार्यक्रम सफलतापूर्वक पूरा हो गया। वादमे गाधीजीने कहा, "मै अवश्य ही आशा रखूगा कि स्वराज्य, होमरूल या स्वाधीनता, कुछ भी नाम रख लीजिये—भोगनेवाले भारतके लिए यह शुभ लक्षण माना जायगा।"[४२]

*

जिस समारोहके लिए गाधीजी मद्रास गये थे, उसमे उनका वहुत ही कम समय लगा। परन्तु उसके वादके उनके कदमसे उनके कुछ साथियोको आश्चर्य हुआ। उन्होने श्रीनिवास शास्त्री और डॉ० जयकर तथा डॉ० सप्रूको पत्र लिखकर पूछा कि क्या वे भविष्यमे उनसे राष्ट्रभापामे पत्र-व्यवहार कर सकते है? उन्होने सव सवधित लोगोसे कह दिया कि हमारी सामान्य जनताकी स्वाधीनताकी पुकार झूठी और थोथी होगी, यदि हम उसकी भापामे वोलने और सोचनेकी आदत नही डालेगे। यह काम या तो अभी होगा या फिर कभी नही होगा। राजाजीको तो परस्पर-विरोधी वातोसे हमेशा प्रेम रहता है। उन्हे जव गुरुके हाथका देवनागरीमे लिखा हुआ एक पत्र मिला, तो उनकी कलमसे यह अशोभनीय टीका निकल पड़ी "आपकी नागरी पढी नही जाती, इसलिए आप जो

कहना चाहते थे वह बडी मुश्किलसे मैं समझ सका हू। जिस भाषाको हम दोनो अच्छी तरह जानते है और जिसका माध्यमके रूपमें हम उपयोग कर सकते है, उसे छोड कर एक कठिन माध्यमको जान-बूझकर अपनाना ठीक नही होगा। कभी कभी विनोदके रूपमें इसका उपयोग कर लेना दूसरी बात है। आप पढ़ी न जा सकनेवाली नागरीमें मुझे लिखेंगे तो मैं तमिलमें उत्तर देना शुरू कर दूगा।''

गुरुने इसका उत्तर यह दिया हमें किसी भूलका पता चल जाय तब भी क्या हमें उसे जारी रखना चाहिये? हमने अग्रेजीके द्वारा प्रेमका व्यवहार आरम्भ किया था — यह भूल थी। तो क्या वह प्रेम उस प्रारम्भिक भूलको दोहरा कर ही प्रगट होना चाहिये? आप रोटीको बचाकर भी रखना चाहते है और उसे खाना भी चाहते है। प्रेम तो प्रेम ही है — भले हा उसका रूप अलग अलग हो और दोनो प्रेमी मूक हो या न हो। शायद जब प्रेम मूक होता है तब वह सम्पूर्ण होता है। मैंने समझा था कि प्रेमके कोमल और न खटकनेवाले दबावमें आप चुपकेसे और आसानीसे हिंदुस्तानीको अपना लेंगे और इस प्रकार हिंदुस्तानीकी अपनी सेवाको चमका देंगे। लेकिन खैर मेरी इच्छा न सही आपकी हो रहे।

राजाजीने पश्चात्तापके साथ उत्तर दिया हिंदुस्तानीके मामलेमें मैं अपना अपराध स्वीकार करता हू और आपसे क्षमा चाहता हू। इसका बचाव (जवानी नही) बुढापा है। परन्तु और तर्क न कीजिये। आपकी मिठास ही मुझे इतना अधिक अपराधी बना देती है। "

*

जब गाधीजी मद्रासमें थे तभी उन्होने हरिजन साप्ताहिकोका प्रकाशन फिरसे शुरू करनेका निश्चय कर लिया था। ये पत्र भारत छोडो सग्राम आरभ होनेके बाद सरकारने बद करा दिये थे। इनके पुन प्रकाशनमें भी थोडासा नाटकीय स्पर्श था। गाधीजीने यह आशा रखी थी कि पहले अकके लिए लेख वर्धासे अहमदाबाद भेज देंगे क्योकि वहीसे ये साप्ताहिक छपते और प्रकाशित होते थे। आधी शताब्दीकी अपनी सक्रिय पत्रकारिताकी अवधिमें गाधीजीको इस बातका गर्व रहा था कि उनके विभिन्न पत्रोका एक भी अक समय पर निकलनेसे कभी नही चूका था — भले ही वे भारत, बर्मा और सीलोनके एक कोनेसे दूसरे कोने तक घूमते रहे हो। वे इग्लैण्ड गये तब भी कभी ऐसा मौका नहा आया था। परन्तु उन्हे मद्राससे वापस लानेवाली स्पेशियल गाडीने उस नियमित ग्राड ट्रक एक्सप्रेस गाडीको भी मात कर दिया, जिसको एक बार केन्द्रीय विधान-सभामें मद्रासके एक यूरोपियन सदस्यने गति और स्थिरतामें शराब पीकर नशेकी अतिम हद तक पहुची हुई बीरबहूटी

की उपमा दी थी। गाधीजीकी स्पेशियल गाडी आधी रातको अर्थात् ७ घटे देरसे वर्धा पहुची। उस समय तक अहमदावादकी डाकगाडी वर्धासे रवाना हो चुकी थी। गाधीजीने इसे अशुभ प्रारम्भ समझा। उन्होने सुझाया कि, "हम साप्ताहिकोका पहला अक ववईसे निकाल दे। 'इडियन ओपीनियन' के मामलेमे मैने एक वार फिनिक्समे ऐसा ही किया था।"

"परन्तु ग्राहकोको अक भेजनेका क्या होगा? ग्राहकोके रजिस्टर तो सब अहमदावादमे है।"

किसीने सुझाव दिया, "सारी सामग्री (मेटर) हम तारसे अहमदावाद भेज दे।"

परन्तु इसके लिए सारा हिन्दुस्तानी और गुजराती मेटर रोमन लिपिमें लिखना पडता, क्योकि उस समय तक भारतीय लिपियोमे तार लेनेकी प्रणाली आरभ नही हुई थी। इसीमे सुबहका सारा समय पूरा हो गया। तव किसीको प्रेरणा हुई, "अग्रेजी लेख तारसे भेज दे और वाकी लेख विशेप सदेशवाहकके साथ। यदि प्रेसवाले अग्रेजी पहले निकाल दे, तो वे हिन्दी और गुजराती अक समय पर छाप सकेंगे।"

इसलिए विशेप सदेशवाहक भेजा गया और तीनो साप्ताहिक सारी कठिनाइयोके होते हुए भी समय पर निकल गये।

६

लॉर्ड वेवेलने १९४६ के फरवरीके दूसरे सप्ताहमे गाधीजीको लिखा, "मैं अभी दक्षिण भारतके दौरेसे लौटा हू। मेरे विचारसे अनेक लोगोके प्राणोका आधार सरकारके प्रशासनिक कदमोके विपयमे राजनीतिक दलोके रुख पर निर्भर होगा, जो हम अनाजकी किफायत करने और अकाल-पीडित प्रदेशोके लोगोके लिए जरूरी अनाज पहुचानेके लिए उठायेगे।" दक्षिण भारतमें सर्दीकी फसल मारी गई थी और भारतमे व्यापक अकालकी सभावनाका खतरा एक वार फिर दिखाई देने लगा था। सरकारी तन्त्र तो साधारण समयमे भी व्यवस्था करनेके लिए अत्यन्त जड हो चुका था। जिस सकटकी स्थितिकी सभावना दिखाई दे रही थी, उससे निवटनेके लिए तो वह विलकुल ही असमर्थ था। यदि सरकारको परिस्थितिका सामना करनेमे कुछ भी सफलता प्राप्त करनी हो, तो उसके लिए जनताका सहयोग आवश्यक था। इसलिए लॉर्ड वेवेलने आनेवाले सकटमे गाधीजीकी सहायता और सलाह चाही।

गाधीजीको अपने वंगालके दौरेमे ही आनेवाले खतरेके आसार दिखाई देने लगे थे। उसके वाद विहार और मद्रासकी हालतके वारेमें उन्हे जो कुछ मालूम हुआ, उससे वे और भी वेचैन हो गये थे। वाइसरॉयका पत्र आनेसे पहले ही उन्होने 'हरिजन' में अनाज और कपडेकी कमी पर एक लेख

लिखा था और यह समझाया था कि इस समस्याका सामना कसे किया जाय। उन्होने वाइसरायको कहलवा दिया कि वे सहप सरकारको सारी सभव सहायता देगे। परन्तु उन्होने जुलाई १९४४ में हो 'न्यूज क्रानिकल' के श्री गेल्डरसे जो बात कही थी वही बात उन्होने वाइसरायको याद दिलाई और कहा कि मेरा विश्वास है कि जब तक अंग्रेजोके हाथोसे भारतीयोके हाथोंमें सत्ता और शासनकी जिम्मेदारी नही सौंपी जायगी तब तक न तो अन्न-सबधी स्थितिका ठीक तरहसे सामना किया जा सकेगा और न लोगोके कष्ट दूर किये जा सकेंगे। यदि अनधिकृत रूपमें भारतीय दलोकी ओरसे मदद देनेकी कोशिश की जायगी तो उससे अधिकारियोंके साथ सघर्ष होनेकी सभावना रहेगी। इसलिए उन्होने वाइसरायको सलाह दी कि यदि विपत्तिको टालना है तो केन्द्रकी गैर जिम्मेदार कार्यकारिणीके स्थान पर तत्काल ही केन्द्रीय विधान-सभाके चुने हुए सदस्योंकी जिम्मेदार कार्यकारिणी नियुक्त की जानी चाहिये।

वाइसरायने गाधीजीकी सलाहका यह भाग तो स्वीकार नही किया परन्तु अन्न-सबधी परिस्थिति पर उनकी अच्छी सलाह की कद्र की। अपनी ओरसे कुछ और कदम उठानेके साथ वाइसरायने वाइसराय भवनमें अनाजका खर्च बहुत कम कर दिया। वाइसरायके निजी सचिव जार्ज एबेल्ने एक पत्रमें लिखा गेहू चावल और उनकी बनी हुई चीजोके उपयोगमें इतनी कठोर कटौती की गई है कि मुझे दिनभर भूखका ही अनुभव होता रहता है।' '

परन्तु यह समस्याका सच्चा हल नही था। इसलिए वाइसरायने मार्चके मध्यमें दुबारा श्री एबलको गाधीजीके पास यह प्रस्ताव लेकर भेजा कि देशके सामने अन्न-सबधी स्थितिके बिगडनेका जो खतरा है उसका नियत्रण और नियमन करनेके लिए वाइसरायकी अध्यक्षतामें गाधीजी जिन्ना और भोपालके नवाबका एक सलाहकार मडल बनाया जाय। जसा लार्ड वेवल्ने गाधीजीको लिखा था उनका यह विचार सही था कि लोगोको अकालके कष्टसे बचानेके लिए नेतागण गहरे सहयोगसे काम करे यह अत्यन्त आवश्यक है। ' परन्तु दालमें कुछ काला था।

वाइसरायके निजी सचिवके मुहसे वाइसरायके प्रस्तावके बारेमें सब बातें सुननेके बाद गाधीजीने उनसे पूछा क्या आप नही मानते कि इसमें एक पेच है? निजी सचिवने उत्तर दिया मै मानता हू कि पेच है परन्तु मुझे आशा है कि आप उससे ऊपर उठ सकेंगे।

फिर यहा समान सख्या का पुराना भूत सामने आ गया। जिन्ना और गाधीमें समानता अनके मोर्चे पर समानता अतरिम राष्ट्रीय सरकारमें

—अर्थात् पाकिस्तान! जून १९४५ में शिमला-सम्मेलनके समय वाइसरॉयने इसी तरह गाधीजी और जिन्नाको "वडे राजनीतिक दलोके दो सर्वमान्य नेता" समझ कर सम्मेलनमे वुलाया था, हालाकि गाधीजी किसी दलके प्रतिनिधि नही थे। मुस्लिम लीगका प्रतिनिधित्व उसके अध्यक्ष जिन्नाने किया था। काग्रेसका सच्चा प्रतिनिधित्व कर सकनेवाले एकमात्र उपयुक्त व्यक्ति काग्रेसके अध्यक्ष मौलाना आजाद थे या जिस किसीको वे अपना प्रतिनिधि नियुक्त करते वह होता — न कि गाधीजी। गाधीजी काग्रेस सगठनके एक विनम्र सेवक थे, इसलिए वे काग्रेसकी उपेक्षामे शरीक नही हो सकते थे। इसलिए उन्होंने वाइसरॉयके प्रस्तावको स्वीकार करनेमे अपनी असमर्थता प्रगट की। उन्होंने वाइसरॉयके निजी सचिवसे कहा, "प्रस्तावको मान लेनेसे पैदा होनेवाली स्थिति अवास्तविक होगी और उससे प्रस्तावका उद्देश्य ही विफल हो जायगा।"[४८]

गाधीजी इस वातकी सभावना पर विचार करनेको तैयार थे कि काग्रेसके अध्यक्ष मौलाना आजादको और उनकी मददके लिए स्वय उन्हे (गाधीजीको) वुलाया जाय, क्योकि गाधीजी अपने आपको ऐसे मामलोमे विशेषज्ञ मानते थे। परन्तु स्पष्ट था कि वाइसरॉय यह नही चाहते थ।

इसलिए गाधीजी अनधिकृत रूपमे और व्यक्तिगत रूपमे अन्न-संकटका मुकावला करनेमे देशकी जो सहायता कर सकते थे उसीसे उन्हे सतोप मानना पडा। सदाकी भाति उन्होंने अपने निकटके लोगोसे ही इसका आरभ किया। उन्होंने सेवाग्राम आश्रम और तालीमी सघके सदस्योको एकत्र करके उनसे अनुरोध किया कि वे अन्नको वचाने, उसके उपयोगमे किफायत करने तथा अन्न पैदा करनेके काममे आनेवाली एक एक इच जमीनमे खेती करनेकी परम आवश्यकताको समझे "आजके सकटमे — जव लोगोके सामने भूखसे मरनेका भय पैदा हो गया है — आपके यह कहनेसे काम नही चलेगा कि हम तो अपनी शिक्षाकी प्रवृत्तियोमे लगे हुए है। आजकी परिस्थितिमे नई तालीमको हमारी अन्नकी पूर्ति वढानेका साधन वन जाना चाहिये।"[४९] उन्होंने 'हरिजन' साप्ताहिकोमे उपयोगी सूचनाये देना आरम्भ कर दिया कि किस तरह लोग अपने स्वेच्छापूर्ण सहकारी प्रयत्नके द्वारा इस गभीर समस्याको सफलतापूर्वक हल कर सकते हैं "घवराहटसे हर हालतमे वचना चाहिये। हमे घवराहटमे विना मौत मरनेसे इनकार कर देना चाहिये। पुष्पवाटिकाओका अन्नकी पैदावारके लिए उपयोग करना चाहिये। . सारे ओपचारिक समारोह वन्द कर देने चाहिये।"[५०] हमेशाकी तरह, "स्त्रिया अपने घरोमे किफायत करके वर्तमान कष्टके निवारणमे वडेसे वडा हाथ वटा सकती है।"[५१] अन्तमें उन्होंने कहा कि यह सव और इससे भी अविक सरकारकी सहायताके विना ही किया जा सकता है "हम अपने जीवनके $\frac{9}{10}$ दैनिक कार्योका प्रवन्ध

सरकारकी मददके बिना कर सकते ह बशर्ते सरकार लोगोके काममें हस्तक्षेप न करे। [५१]

गाधीजीने बम्बईके अपने यजमान श्री घनश्यामदास बिडलाके बडे भाई श्री रामदास बिडलाको सुझाया कि वे अपने बागमे फूलोकी क्यारिया खुदवा कर उनम शाकभाजी पदा करायें। गाधीजीकी इस सूचना पर उलाहनके स्वरमें उनकी क्वकर मित्र मिस एगाथा हेरिसनने उनसे पूछा 'लाग फूल क्या न उगायें? रग और सौदय आत्माके लिए उसी तरह आवश्यक ह जिस तरह शरीरके लिए भोजन।

गाधीजीने उत्तर दिया हमे यह मानना सिखाया गया है कि जो सुन्दर है वह उपयोगी भी हो ऐसा जरूरी नही और जा उपयागी है वह सुन्दर नही हो सकता। म यह सिद्ध करना चाहता हू कि जो उपयागी है वह सुन्दर भी हो सकता है। म ता यह चाहता हू कि हम शाकभाजियाके रगके सौदयकी प्रशसा करना सीखे।

इसलिए बिडला भवनकी फूलोकी क्यारिया खाद डाली गइ और उनके स्थान पर चुकन्दर, गाभी और खीरा आदिकी क्यारिया लगा दी गइ।

७

दिसम्बर १९४५ म जब भारतमें चुनाव हो रहे थ वाइसरायने ब्रिटिश सरकारको एक रिपोट भेजी थी। उसम भारतकी बदली हुई परिस्थितिकी आर तथा भारतके सब वर्गोमें सरकारकी बढती हुई अप्रियताकी आर ब्रिटिश मत्रि-मडलका ध्यान आकर्षित किया गया था। आगे-पीछे उन्हे काग्रसके साथ हिसाब निबटाना ही होगा। बेशक काग्रेसको सवण हिन्दू सस्था बताया गया था परन्तु यह भी बताया गया था कि यदि काग्रेसको दबा दिया गया ता ऐसी रिक्तता पदा हो जायगी जिसे और कोई सगठन भर नहा सकेगा। रिपाटमें यह भी कहा गया था कि चुनावाके बाद काग्रेस जरूर अपनी मागका और भी उग्र रूपमें पश करेगा यदि इस बीच आजाद गतिरावको हल करनेक लिए काई कारवाई नही की गई। और उस समय उसका मुकाबला करना बहुत कठिन हा जायगा। काग्रस अपना माग स्वीकार करानक लिए साधी कारवाइका आश्रय भी ल सकती है और उस सूरतमें सरकारका काई समथक नहा रहेगा—राजा लाग भी नहा रहेंग।

जेलसे मुक्त हान पर जिस अन्म्य उत्साहस काग्रेमी नताआका स्वागत हुआ वह इस बातका स्पष्ट सकत था कि करा या मरा का भावनाने जनतामें जड पकड ली थी। दुख और निराशाके वष सनाके घोर दमन वाल्का स्मृतिया तथा युद्ध अकाल और आर्थिक मन्दाके बाद भारतके लाग

भूल गये थे। अव तो केवल स्वतत्र भारतका दर्शन ही लोगोके लिए एकमात्र महत्त्वपूर्ण वस्तु वन गयी थी।

सेना तक इस भावनासे प्रभावित हो चुकी थी। जवलपुर और कुछ अन्य स्थानोमे भारतीय सैनिकोने विद्रोह कर दिया था। पूनामे भारतीय सेनाके प्रतिनिधि विद्रोहके लिए गुप्त रूपसे गाधीजीकी अनुमति लेने आये थे, लेकिन उनकी सलाहसे इस प्रकारकी घटना टल गई। आजाद हिन्द फौजके जो अभियुक्त भारतकी स्वाधीनताके लिए वर्मामे अग्रेजोसे लडे थे, उनकी जनताने वीरोकी तरह पूजा की थी। फरवरी १९४६ मे कलकत्तेमे अचानक कौमी तूफान शुरू हुआ। उसमे पुलिसको छात्रोके नेतृत्वमे निकले जुलूसो पर १४ वार गोली चलानी पडी। इससे तीन दिन तक नगरका दैनिक जीवन-व्यवहार लगभग ठप हो गया। ये सव ऐसे अशुभ चिह्न थे, जिनके महत्त्वकी उपेक्षा नही की जा सकती थी।

भारतमे ब्रिटिश सत्ताके प्रतिनिधियो और भारतकी जनताके वीचकी खाई जितनी चौडी अव हो गई थी उतनी पहले कभी नही हुई थी, भारतके ब्रिटिश शासकोके इरादोके वारेमे जनताके मनमे जितना अविश्वास अव था उतना पहले कभी नही था और देशकी स्वतत्रताके लिए उसकी भावना जितनी तीव्र अव वन गई थी उतनी पहले कभी नही वनी थी। ऐसी हालतमे ब्रिटिश सत्ताके भारतसे पूरी तरह और स्वेच्छापूर्वक हट जानेका एकमात्र विकल्प यही था कि भारतको फिरसे जीतकर अनिश्चित काल तक उस पर सैनिक अधिकार रखा जाय। परन्तु १९४६ मे यह वात ब्रिटिश लोकमत वरदाश्त करनेको तैयार नही था।

वडे दिनोके मौके पर ब्रिटिश मन्त्रि-मडलके एक प्रमुख सदस्य सर स्टैफर्ड क्रिप्सने गाधीजीको एक पत्र लिखा। उसमे उन्होने गाधीजीको "आपके अपने और जो कार्य आपको प्रिय है उन सवके कल्याणके लिए अत्यन्त हार्दिक और नम्र शुभेच्छाए" भेजी थी और यह भी लिखा था:

> मुझे इस वातकी वहुत गहरी आशा है कि आनेवाले महीनोमे हम आपसी समझ, आदर और विश्वाससे भारतके लिए अधिक सुखी और उज्ज्वल भविष्यका निर्माण कर सकेगे। मै जानता हू कि आपने जीवन-भर इसके लिए किस प्रकार अथक परिश्रम किया है, मेरी प्रार्थना है कि आपको अपनी इच्छाओकी पूर्तिके रूपमे अपनी आशाओकी सपूर्ण सफलता देखनेका अवसर मिले। हमारे दोनो देशोके सामने जो वडी वडी समस्याए है, उनके सुखद अंतके लिए मै प्रयत्न करूगा और अपना हिस्सा अदा करूगा।[५३]

गाधीजीने उत्तर दिया, 'मं आशा करता हू कि इस बार भारतीय विचारके अनुसार सही चीज करनेका निश्चय कर लिया गया है।' एक बार राजा एडवर्ड सही व्यवहारके बारेमें जो कुछ कहा था, उसकी गाधीजीने उन्हे याद दिलाइ। प्रश्न अग्रेजो और बोअरोके बीचकी सधिका अर्थ करनेका था। राजाने कोमलतासे यह आग्रह किया था कि अग्रेजोके अर्थके बजाय बोअरोका अर्थ स्वीकार किया जाय। अन्तमें गाधीजीने लिखा 'क्या ही अच्छा हो यदि इस बार भी वही सुन्दर नियम अपनाया जाय!'[४]

परन्तु ब्रिटिश इरादोके प्रति अविश्वास भारतीयोंके मनमें घर करके बठ गया था। उस अविश्वासको मिटाने और पहलेसे लोकमत तयार करनेके लिए चुनावोंके बीच ही ग्रेट ब्रिटेनके सब दलोंके प्रतिनिधियोका एक ससदीय मडल भारत भेजा गया। उसने जनवरी और फरवरी १९४६ में सारे देशका दौरा किया। उसके सदस्य सब दलोंके प्रतिनिधियोसे मिले और गाधीजीको उन्होने मद्रासमें जा पकडा। गाधीजीके साथ अपने सम्पर्कके परिणाम-स्वरूप वे यह विश्वास करा सके कि इस बार अग्रेज भारतकी समस्या हल करनेका निश्चय कर चुके है।

*

१९४२–४५ के कालमें जब कांग्रेसको जेलखानेकी चारदीवारीमें बन्द करके उसकी आवाज दबा दी गइ थी तब मुस्लिम लीगके प्रचार-कार्यको खुला क्षेत्र मिला हुआ था और ब्रिटिश सरक्षण प्रोत्साहन और सक्रिय सहयोगके बल पर उसने अपनी शक्तिको मजबूत करके मुसलमानोके बहुत बडे हिस्से पर अपना असर जमा लिया था। परिणाम यह हुआ कि चुनावमें मुस्लिम लीगने उत्तर पश्चिम सीमाप्रान्तके सिवा केन्द्रीय विधान-सभा तथा प्रान्तीय विधान सभाओमे लगभग सारी मुस्लिम बठकें जीत ली थीं। सीमाप्रान्तमे तो खान बधुओके नेतृत्वमे कांग्रेसने न केवल विधान-सभाकी अधिकाश बठको पर बल्कि अधिकाश मुस्लिम बठको पर भी अधिकार कर लिया था। केन्द्र और प्रान्तोमें भी लगभग तमाम दूसरी बठको पर जिनमे कुछ मुस्लिम बठकें भी थीं कांग्रेसका अधिकार हो गया। इसके परिणाम-स्वरूप कांग्रेसने ११ प्रान्तोमें से ८ प्रान्तोमें अपने मत्रि मडल बना लिये और नवे प्रान्त अर्थात पजाबमें उसने असाम्प्रदायिक यूनियनिस्ट दलके साथ मिल कर मिश्र सरकार बनाई। बगाल और सिन्धमें मुस्लिम लीग अपने मत्रि मडल बना सकी थी। किन्तु सिन्धमें उसका बहुमत डगमगाता रहता था और वहा उसकी सत्ता गवनर सर फ्रासिस मुडीके सहारे ही टिकी रही।

इस प्रकार प्रमुख राजनीतिक दलोके समर्थनसे वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषदकी पुनरचनाके लिए और सितम्बर १९४५ में की गई वाइसरायकी

घोपणाके अनुसार सविधान-सभा वुलानेके लिए भूमिका तैयार हो गयी। भारतमे व्याप्त मनस्थितिको सही अर्थमे समझकर व्रिटिश सरकारने इस वार निश्चय किया कि भारतीय प्रश्नके निवटारेकी वातचीत करनेका काम अकेले वाइसरॉयके हाथोमें न छोडा जाय। १९ फरवरी, १९४६ को व्रिटिश पार्लमेन्टमे यह घोपणा की गई कि व्रिटिश मन्त्रि-मडलके ३ सदस्योका बना एक प्रतिनिधि-मडल शीघ्र भारत जायगा, ताकि वाइसरॉयकी सितम्वर १९४५ की घोपणामे वताये गये कार्यक्रम पर वाइसरॉयके साथ मिल कर अमल किया जाय। व्रिटिश मजदूर-दलके प्रधानमत्री श्री एटलीने १५ मार्च, १९४६ को लोकसभाकी चर्चामे जो भाषण दिया, उसमे ये अर्थपूर्ण उद्गार प्रकट किये गये थे

> यह तो भारतको ही चुनना होगा कि उसका भावी सविधान कैसा होगा। मुझे आशा है कि भारतीय प्रजा व्रिटिश राष्ट्र-मडलके भीतर रहना पसन्द करेगी। . . यदि वह ऐसा करे तो यह उसकी अपनी स्वतत्र इच्छासे होना चाहिये। . . . इसके विपरीत, यदि वह स्वाधीनता पसन्द करे, तो हमारे मतसे उसे ऐसा करनेका अधिकार है। . मैं अच्छी तरह जानता हू कि जव मैं भारतकी वात करता हू तव मैं एक ऐसे देशके वारेमे वोलता हू, जिसमे विभिन्न जातिया, विभिन्न धर्म और विभिन्न भाषाए है। . हमें अल्पसख्यक लोगोके अधिकारोका खूव ध्यान है और अल्पसख्यकोको भयमुक्त जीवन व्यतीत करनेका अवसर मिलना चाहिये। दूसरी ओर, हम किसी अल्पसख्यक समुदायको वहुसख्यक लोगोकी प्रगतिमे वाधा भी नही डालने दे सकते। . . देशी राज्योकी समस्या भी है। . मैं क्षणभरके लिए भी यह नही मानता कि भारतीय राजा-महाराजा भारतकी प्रगतिमें वाधक वनना चाहेगे। परन्तु दूसरी समस्याओकी तरह यह भी एक ऐसी समस्या है, जिसे भारतवासी ही अपने प्रयत्नसे हल करेगे।

इस प्रकार जहा तक व्रिटिश नीतिकी घोपणाका सम्वन्ध था, पहली ही वार वे तीनो मुख्य वाधाए दूर कर दी गईं, जो हमेशा भारतीय प्रश्नके निवटारेमे वाधक वनती रही थी — अर्थात् राजनीतिक प्रगतिमे अल्पसख्यकोका निर्णायक मत (वीटो), राजाओके प्रति चिरकालसे चला आया उत्तरदायित्व और पूर्ण स्वाधीनताके भारतीय अधिकारकी अस्वीकृति। परन्तु "अतीतकी परिस्थितियोसे उत्पन्न होनेवाली" दूसरी वाधाए, जो इतनी ही भयजनक थी, वनी रही — जिनसे इस घोपणामे दिया गया वचन वहुत-कुछ वेकार हो जाता था और जिनके कारण स्वातत्र्यका गौरवपूर्ण प्रभात एक रक्त वर्णवाले अशुभसूचक प्रभातमें वदल जाता था।

गाधीजीने उत्तर दिया, "यदि भारतको स्वाधीनताकी ज्योतिका अनुभव हुआ, तो कदाचित् वह स्वेच्छासे ऐसी सधि करनेका प्रस्ताव रखेगा।" उन्होने यह भी कहा, "परन्तु ब्रिटेनके लिए यह कहना शोभास्पद होगा कि स्वाधीन होनेके वाद भारत हमे कोई स्थान न दे, तो भी अपनी करनीके परिणाम हम सुखसे भोगेंगे।"

एक अग्रेज मित्र मानव-सेवा करनेके लिए फ्रैड्ज एम्बुलेंस यूनिटके साथ भारत आये थे। उन्होने गाधीजीके सामने अपनी दुविधा रखी। उन्होने कहा, "भारतके लोगोके साथ हम कितनी ही मित्रता करनेकी कोशिश क्यो न करे, उनका भूतकाल तो उनके साथ लगा ही रहता है और निराशासे उन्हें विवेक-शून्य वना देता है। यहाका वायुमडल इतना जहरीला हो गया है कि मैं सोचने लगता हू कि अग्रेजोके लिए यह वेहतर होगा कि अभी कुछ समय तक लोगोकी सेवाके लिए भारत आनेका प्रयत्न न करके वे ज्यादा अच्छे दिनोकी प्रतीक्षा करे।"

गाधीजीने जवाव दिया, आपको यह तथ्य स्वीकार ही कर लेना चाहिये कि जनतामे अग्रेजोके प्रति अविश्वास है। उसकी जड इतिहासमे है। भारतीयोने अव तक अग्रेजोको केवल शासक-जातिके आदमी भी जाना है — या तो अपार अहकार रखनेवाले या भारतीयोके आश्रयदाता होनेकी भावना रखनेवाले। साधारण लोग जिन पुराने ढगके साम्राज्य-निर्माता अग्रेजोसे उनका परिचय हो चुका है उनके और अपने पूर्वजोका प्रायश्चित्त करनेकी भावनासे इस समय भारत आनेवाले नये प्रकारके अग्रेजोके वीच कोई भेद नही करते। नये लोगोके लिए एकमात्र मार्ग यह है कि उनके विरुद्ध जो धारणा वनी हुई है उसे वे अपने उदाहरणसे दूर करनेकी कोशिश करे। "यदि आप सच्चे वीर हैं, तो आपको कोई कठिनाई नही होगी। यदि आप प्रयत्न करते रहे, तो अन्तमे आपका विश्वास लोग करेगे। . . (परन्तु) जिसमे त्यागकी अग्नि नही है, उससे मै कहूगा कि 'अभी भारतमे मत आओ'।"[५६]

८

फरवरी १९४६ के तीसरे सप्ताहमे शाही जलसेनाके खलासियो व सैनिकोने विद्रोह कर दिया। इसका असर ७४ जहाजो, ४ नौकादलो और २० समुद्र-तटवर्ती केन्द्रो पर हुआ — जिनमे ४ जलसेनाके वड़े केन्द्र भी थे। विद्रोहियोने सव प्रकारके २३ जहाजो पर कब्जा कर लिया था। विद्रोहका कारण यह वताया गया था कि जलसेनाके अग्रेज अफसरोका वरताव उनके साथ अपमानजनक था। शायद उनका कष्ट सच्चा था, परन्तु विद्रोहका आश्रय लेकर उन्होने बुद्धिमानीका काम नही किया। सरदार पटेलने वुद्धिमत्ता, स्वस्थता और साहस-पूर्ण दृढतासे परिस्थितिको विगडनेसे वचाया। उन्होने विद्रोहियोको यह वचन

दिया कि काग्रेस इस बातका ध्यान रखेगी कि उन्हें परेशान न किया जाय और उनकी उचित मांगें जल्दीसे जल्दी स्वीकार की जाय। इस वचनके बाद उन्होंने विद्रोहियोको बिना शर्त आत्म-समर्पण करनेके लिए राजी कर लिया।

इस घटनासे समयके मिजाजका पता चलता था। नौकादलके ब्रिटिश सर्वोच्च सेनापतिने यह धमकी दी थी कि भले ही जलसेना नष्ट हो जाय तो भी सरकारके पास जो "जबरदस्त शक्ति" है उसका उपयोग करनेमें वह सकोच नही करेगी। इस धमकीके कारण सारे भारतमें विरोधका जो उग्र तूफान उठ खडा हुआ उसे देखकर बादमें सफाई देनेके लिए सरकारको मजबूर होना पडा था।

इस विद्रोहके साथ साथ बम्बई, कलकत्ता मद्रास, दिल्ली और कराची आदि शहरोमें भी बडे पमाने पर उपद्रव फूट पडे। लोगोकी हुल्लडबाजीका मुकाबला अधिकारियोने भीषण दमनसे किया। उसके परिणाम-स्वरूप काफी हद तक रक्तपात हुआ, जिसे आसानीसे टाला जा सकता था। सदाकी भांति सबसे अधिक कष्ट निर्दोष लोगोको भोगना पडा।

गाधीजीको इन घटनाओमें और इनसे सम्बन्धित अन्य घटनाओमें भविष्यकी अशुभ घटनाओके चिह्न दिखाई पडे। भारतीय समाजवादियो और भूमिगत कार्यकर्ताओने बालोचित उत्साहमें आकर इन विद्रोहियोकी सुन्दर भावना' की भूरि भूरि प्रशसा की। गाधीजीने गभीर चेतावनी दी कि जब असमय आत्मघातक रूपमें दृढता दिखाई जाती है, तो वह मूर्खता बन जाती है। यदि कष्ट (दूर कराने) के लिए यह सब किया गया था तो उन्हें (विद्रोहियोको) अपनी पसन्दके राजनीतिक नेताओके मार्गदर्शन और हस्तक्षेपकी प्रतीक्षा करनी चाहिये थी। यदि उन्होने भारतकी आजादीके लिए विद्रोह किया हो तो उन्होने दोहरी भूल की। किसी तैयार क्रातिकारी दलके आह्वानके बिना वे ऐसा नही कर सकते थे।"[१]

मार्चके पहले सप्ताहमें राजधानीमें विजय दिवस (विक्टरी डे) मनानेके अवसर पर यूरोपियनोके खिलाफ हिन्दू-मुसलमानोकी मिली-जुली शक्तियोने हुल्लडबाजी की। गाधीजीने कहा हिन्दू-मुसलमान दोनो जान-बूझ कर हिसाब लगा कर हुल्लडबाजी और बर्बरता करनेकी तालीम पा रहे हैं। हिंसक कार वाईके लिए हिन्दू-मुसलमानो और दूसरे लोगोका आपसमें मिल जाना अपवित्र बात है। इसका नतीजा दोनो कौमोकी परस्पर हिंसामें आयगा और शायद यह ऐसी हिंसाकी तैयारी ही कहा जायगा। यह भारत और दुनिया दोनोके लिए दुर्भाग्यकी बात है।'[६]

उपद्रवके दिनोंमें यह नारा सर्वत्र फैल गया था कि हिंदू-मुसलमान लडाईके मोर्चे पर एक हो जाय।' गाधीजीने कहा, कमसे कम फिलहाल

तो भारतीय स्वातंत्र्य-सग्रामका युद्धके मोर्चेवाला दौर खतम हो गया है। "लडनेवाले सैनिक हमेशा युद्धके मोर्चे पर नही रहते। . . मोर्चेकी जिन्दगीके वाद हमेशा वैधानिक जीवन आना चाहिये। यह मोर्चा सदाके लिए निपिद्ध नही है।"[५९]

समाजवादी मित्रोने इसका उत्तर यह दिया कि आम लोगोकी अहिंसाके नीतिशास्त्रमे दिलचस्पी नही है। गाधीजीने प्रत्युत्तरमे कहा, परन्तु अवश्य ही लोगोकी यह जाननेमे वहुत ज्यादा दिलचस्पी है कि किस रास्तेसे उन्हे स्वतन्त्रता मिलेगी। "लाखो लोग भूगर्भमे नही जा सकते। लाखोको भूगर्भमे जानेकी जरूरत भी नही है। कुछ चुने हुए लोग यह कल्पना कर सकते है कि करोडोकी प्रवृत्तिका गुप्त रूपसे सचालन करके उनके लिए स्वराज्य लाया जा सकता है। यह क्या लोगोको पगु और परावलम्वी वनाने जैसी वात नही होगी? खुली चुनौती और खुली प्रवृत्तिका ही सव लोग अनुसरण कर सकते है। सच्चे स्वराज्यका स्त्रियो, पुरुपो ओर वच्चो सवको अनुभव होना ही चाहिये। इस स्थितिके लिए परिश्रम करना सच्ची क्राति है। भारत ससारकी तमाम शोपित जातियोके लिए एक उदाहरण वन गया है। क्योकि भारतका प्रयत्न सदा खुला और नि शस्त्र रहा है, जो सत्ता छीननेवालेको चोट पहुचाये विना सबसे त्याग और वलिदानका तकाजा करता है।"[६०]

देशको इसके लिए तैयार होना ही चाहिये। युद्धके मोर्चेको अलग रख देना चाहिये। कैविनेट-मिशन आ रहा है। सभव है कि मिशन कोई हल न होनेवाली पहेली पेश कर दे। "ऐसा हुआ तो यह उनके लिए और भी वुरी वात होगी। यदि वे अपनी ही पैदा की हुई कठिनाईसे निकलनेका कोई प्रामार्णिक मार्ग खोज निकालनेको उत्सुक हैं, तो इसमे मुझे कोई शका नही कि ऐसा मार्ग निकल आयेगा।"[६१] परन्तु राष्ट्रको भी इसमे अपना भाग अदा करना है। "यदि लडाईके मोर्चे पर (हिन्दू-मुसलमानोकी) एकता प्रामाणिक हो, तो वैधानिक मोर्चे पर भी उनकी एकता होनी चाहिये।"[६२] इसी चुनौतीका स्वातंत्र्य-सग्रामके योद्धाओको अव सामना करना है।

गाधीजीने 'हरिजन' में लिखा, "अव इसमें शका नही कि भारत स्वाधीनताके चिरपोपित लक्ष्य तक पहुचनेवाला है। उसमें हमे प्रार्थनाकी भावनासे प्रवेश करना चाहिये।"[६३] और वाणीके अनुसार कर्म करनेके लिए उन्होने निश्चय किया कि भविष्यमें वे अपने धनी मित्रोके महलो जैसे निवास-स्थान पर न ठहर कर हरिजन-वस्तीमें ठहरेगे। उन्होने वयोवृद्ध हरिजन-सेवक अमृतलाल ठक्करको, जो प्रेमसे ठक्करवापा कहे जाते थे, लिखा, "हम जिस क्षणसे जागते है उसी क्षणसे हमारा दिन निकलता है। जागनेके वाद अव मै आराम नही कर सकता।"[६४] उन्होने एक और पत्रमें लिखा, "अग्रेजोके राज्यमें भारत

मुश्किलसे दो सदी तक गुलाम रहा है। फिर भी हम यह लगनेका अधार हैं कि वह गुलामी तुरन्त समाप्त हो जाय। जब भारत स्वतन्त्रता दवाके द्वार पर पहुंच गया है, तो हम हरिजनोंसे कैसे कह सकते हैं कि वे दूरके आन्ध्र राज्यके वचन पर निर्भर रहें? हरिजनोंकी मुक्ति प्रतीक्षा नहीं कर सकता। वह आज और इसी समय होनी चाहिये।'

*

उरलीकांचनमें एक फौजी छावनी थी। शायद ही कोई दिन ऐसा बीतता होगा जब भारतीय सैनिकोंका कोई दल गांधीजीके सम्पर्कमें न आता हो। वे गांधीजीकी सुबहकी सैरमें साथ हो जाते थे। वे उनकी शामकी प्रार्थनामें उपस्थित रहते थे और उनके निवास-स्थान पर उनसे मिलते थे। गांधीजीके निवास-कालके अन्तिम दिनसे पहले दिन सैनिकोंके दो दल आये। उन्होंने कहा "हम सैनिक हैं, परन्तु भारतकी आजादीके सैनिक हैं।"

गांधीजीने उत्तर दिया "मुझे यह सुन कर खुशी होती है। आज तक आप अधिकतर भारतीय स्वतंत्रताके दमनके साधन बने हैं। आपने जलियांवाला बागकी बात सुनी है?'" जनरल डायरके अधीन गुरखा सैनिकोंने ही किसी खतरेकी आशंका न रखनेवाली निहत्थी भारतीय भीड पर वहां गोलियां चलाई थीं।

"जी हां, परन्तु वे दिन अब चले गये। उन दिनों हम कुएंके मेढकों जैसे थे। अब हमने दुनिया देख ली है। अब हमारी आंखें खुल गई हैं।"

दूसरे एक सैनिकने बीचमें ही कहा, "जैसा आपने एक बार कहा था, हम यह मानते हैं कि हम भाडेके टट्टू हैं। परन्तु अब हमारे हृदय वैसे नहीं हैं।"

गांधीजीने कहा "मुझे यह सुन कर खुशी होती है। परन्तु मैं आपको बता दूं कि मैंने वह बात आप लोगों पर कोई लांछन लगानेके इरादेसे नहीं कही थी। उसमें तो ऐसे सैनिकोंका वर्णन भर था जो निर्वाहके लिए किसी विदेशी सरकारकी नौकरी करते हैं।"

उनमें से एक और सैनिकने पूछा "जब भारत स्वाधीन हो जायगा तब हमारी क्या स्थिति होगी?"

"आप उस स्वाधीनताके पूरे हिस्सेदार बनेंगे और अपने देशवासियोंके साथ साथ आजादीकी हवामें सांस लेंगे। ... आपको फौजी तालीम मिली है। सामान्य खतरेके समय मिल-जुल कर उसका सामना करनेका सबक आपने सीखा है। आप अपनी इस तालीमका लाभ भारतको पहुंचायेंगे। स्वाधीन भारतको आपकी जरूरत होगी। ... परन्तु स्वतंत्र भारतमें आजकी तरह आपके लाड नहीं लड़ाये जायंगे। आप आज जो अपार विशेषाधिकार भोग

रहे हैं, वे तो भारतके गरीबोको कष्ट पहुचा कर विदेशी सरकार द्वारा आपको दी जानेवाली एक रिश्वत है। भारत अत्यन्त दरिद्र है। यदि आप अपनी विशेष सुविधाए छोडनेको तैयार नही होगे, तो जब स्वाधीनता आयेगी तब आपको दु ख होगा और पुराने समय और पुराने मालिकोके वापस आनेके लिए आप तरसा करेगे।"

उनमे से एक सैनिक बोला, "एक समय था जब हमे कोई नागरिक अखबार नही पढने दिया जाता था। लेकिन आज हम अपने अफसरोसे जाकर कहते है कि हम अपने सबसे बडे नेतासे मिलने जा रहे है और कोई हमे रोकनेकी हिम्मत नही करता।"

गाधीजीने उत्तर दिया, "मै जानता हू कि सेनाके सभी विभागोमे आज एक नया जोश और नई जागृति आ गई है। इस परिवर्तनका बहुत-कुछ श्रेय नेताजी बोसको है। मुझे उनकी कार्य-पद्धति पसन्द नही है, परन्तु भारतीय सैनिकोको एक नई दृष्टि और एक नया आदर्श देकर उन्होने भारतकी अनोखी सेवा की है।"

उनमे से एक बड़े पदवाले सैनिकने कहा, "हम सेनाके आदमी यह समझ ही नही सकते कि कोई आदमी भारतके दो, तीन या अधिक टुकडे करनेकी बात कैसे सोच सकता है। हम तो एक ही भारतको जानते है, जिसके लिए हम लडे है और हमने अपना खून बहाया है।"

गाधीजीने उत्तर दिया, "भाई, दुनियामे सब तरहके आदमी होते है।" और वे सब हस पडे।

"क्या हम नारे लगा सकते है?"

गाधीजीने उत्तर दिया, "अच्छा लगाइये।" और उन सबने छोटे बच्चोकी तरह उत्साहमे आकर 'जयहिंद', 'नेताजीकी जय' आदि नारे बार बार पुकार कर गाधीजीके छोटेसे कमरेकी छतको हिला दिया।

दूसरे दिन एक विशेष रेलगाडी उनमे से लगभग ८०० सैनिकोको दूसरी छावनीमे ले गई। जब उनकी गाडी गाधीजीके निवास-स्थानके सामनेसे गुजरी, तो उनके जय-जयकारसे आकाश गूज उठा और गाधीजीसे विदा मागने-वाले हाथ हिलते ही रहे। सैनिकोके नारोमे प्रकट होनेवाली देशभक्तिपूर्ण उमगको देख कर ऐसा प्रतीत होता था, मानो काग्रेसके असाधारण अधिवेशनके लिए प्रतिनिधियोको ले जानेवाली कोई काग्रेस स्पेशियल जा रही हो!

उसी दिन गाधीजी कैबिनेट-मिशनके प्रतिनिधियोसे मिलनेके लिए दिल्ली रवाना हो गये।

दूसरा भाग

मंडराता तूफान

सातवा अध्याय

अरुणोदय

१

नई दिल्लीकी रीडिंग रोड पर अनेक अट्टालिकाओ और झरोखोसे सुशोभित, लाल पत्थरो और सगमरमरोसे रचे हुए एक भव्य काव्यके समान स्थित बिडला-मदिरके पास ही, राजधानीकी तडक-भडक और ठाठवाटसे दूर वाल्मीकि मदिर वना हुआ है। वह वाल्मीकि ऋपिके नाम पर समर्पित है। वाल्मीकि ऋपि डाकूसे सत वने थे और उन्होने रामायणकी रचना सस्कृतमे की थी। वे उत्तर भारतके वाल्मीकि मेहतरोके आदि गुरु माने जाते है। उस वाल्मीकि मदिरके दक्षिण-पश्चिममे ऊवड-खावड जमीन है और उसके पीछे एक मनोहर पर्वत-श्रेणी है, जो यमुना नदी तक और उसके पार तक फैलती चली गई है।

अप्रैल १९४६ मे कैविनेट-मिशनकी वार्ताओके समय गाधीजी इसी स्थान पर रहे थे। उसके और नई दिल्लीके म्युनिसिपल मेहतरोकी गदी झोपडियोके वीच दोनोको अलग करनेवाली एक नीची दीवार ही थी। वही ये दरिद्र-नारायण रहते थे। रास्ता एक तग और टेढी-मेढी गलीमे होकर जाता था। दिनमे भारतकी ग्रीष्मऋतुकी चिलचिलाती धूपमें तैरनेवाले रजकणो, गदगी और भिनभिनाती मक्खियोके मारे मानवकी आखे दुखने लगती थी। परन्तु साझ होने पर सारा दृश्य जादूकी तरह वदल जाता था और चमकती हुई लाल वजरी, जो अभी अभी विछाई गई थी, उस गलीको परियोके देशका हीरोसे जडा हुआ मार्ग वना देती थी।

यही पर दिन-प्रतिदिन और सप्ताह-प्रतिसप्ताह काग्रेस कार्यसमितिके सदस्य नेहरू और पटेल, मौलाना आजाद और सरोजिनी नायडू — भारतकी कवयित्री जो वादमें एक वडे भारतीय प्रान्तकी पहली महिला राज्यपाल वनी — आदि मिलते थे और चर्चा करते थे। यही पर ब्रिटिश मन्त्रि-मडलके सदस्य और विभिन्न राष्ट्रोके राजनीतिज्ञ और कूटनीतिज्ञ आते थे, यही पर ससारके कोने कोनेसे अखवारोके प्रतिनिधि, जगतका भ्रमण करनेवाले यात्री, करोडपति, चोटीके काग्रेसी नेता और अनुभवी नौकरशाह — जो भारतीय 'फौलादी ढाचे' के गौरव माने जाते थे — आते थे और सेवाग्रामके सन्तके साथ, जो अपने चरखे पर भारतके भाग्यका धागा कातते रहते थे, सलाह-मशविरा करते थे।

इस प्रकार १९४६ की ग्रीष्मऋतुमें एक ही रातमें एक कोनेमें पड़ी हुई यह छोटीसी भंगीबस्ती एकाएक इस विशाल देशकी राजनीतिक हलचलोंका केन्द्र बन गई क्योंकि यह भारतीय नेताओंके साथ ब्रिटिश सरकारके कैबिनेट मिशनकी बातचीतका रंगमंच बन गई थी। इन्हीं बातचीतोंके परिणाम-स्वरूप भारतमें १५० वर्षके अंग्रेजी राज्यका अन्त हुआ और स्वतंत्र भारतीय राष्ट्रने जन्म लिया।

इसीके साथ साथ एक और रूप प्रगट हो रहा था जिसकी अशुभ छाया उस समय लोगोंकी नजरसे छिपी हुई थी। भंगीबस्तीके चौगानमें और उसी भूमि पर — जहां गांधीजी अपनी शामकी प्रार्थना-सभाएं किया करते थे — हिन्दू नौजवानोंका एक दल प्रतिदिन शारीरिक शिक्षाका व्यायाम करता था, लाठी चलानेका अभ्यास किया करता था और अन्तमें भारत माताके नक्शेको सलामी दिया करता था। यह भारत माता वह नहीं थी जो भारतकी भूमि पर पैदा होनेवाले सभी लोगोंको जाति, धर्म या रंगका भेद किये बिना समान रूपसे अपने बालक समझती थी। यह 'महाकाली' थी जो 'दुष्ट विधर्मियों' अर्थात् मुसलमानोंको उनके पापोंका दंड देनेकी आज्ञा देती थी। और यह दल राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघका था जो हिन्दुओंका सैनिकवादी साम्प्रदायिक संगठन था। यह मुस्लिम नेशनल गार्ड्सके मुकाबलेकी संस्था था। अन्तमें उसीकी कट्टर धार्मिकताके शिकार राष्ट्रपिता गांधी हुए।

२

कैबिनेट मिशनके तीन सदस्योंमें से लार्ड पेथिक-लॉरेन्स और सर स्टैफर्ड क्रिप्स गांधीजीको पहलेसे जानते थे। श्रीमती एमलिन पेथिक-लॉरेन्स गांधीजीको इंग्लैंडकी एक आरम्भकी यात्रामें स्त्रियोंके मताधिकारसे सम्बंधित आन्दोलनकी एक सभामें उनसे मिल चुकी थीं। उस सभामें गांधीजीने स्त्रियोंके अधिकार मांगनेकी प्रचलित कार्य-पद्धतिके कुछ पहलुओंकी यह कह कर आलोचना की थी कि उनका अहिंसासे मेल नहीं खाता। उनके उद्गार सुन कर तेज मिजाजवाली कुमारी पैन्खर्स्ट तुरन्त खड़ी हो गईं। उस अवसर पर श्रीमती पेथिक-लॉरेन्सने गांधीजीका साथ दिया था। गांधीजीने उस सुखद स्मरणको आज तक याद रखा था।

यह गांधीजीकी विशेषता थी कि सार्वजनिक जीवनके अनेक नेताओंके साथ उनका सम्बन्ध — चाहे वे मित्र हों, साथी हों या विरोधी ही क्यों न हों — अधिकतर इस कारणसे होता था कि गांधीजी उनके निजी जीवनके कुछ गुणोंको अधिक महत्त्वपूर्ण मानते थे और उनका आदर करते थे। यह सम्बन्ध उनके राजनीतिक विचारोंके साथ मेल बैठनेके कारण ही नहीं होता था। कभी विवाहित जीवनमें उनकी परस्पर निष्ठासे, कभी उनकी परस्पर

निष्ठाके फलस्वरूप उनमें विवाहित जीवनके अभाव अथवा उसके उदात्तीकरणसे, और कभी व्यक्तियोके विवाहित जीवन अथवा अपरिणीत जीवनमे पैदा होनेवाली दु खद समस्याओ या धर्म-सकटोके अवसर पर दिखाई गई उनकी किसी तरहकी वीरतासे गाधीजी उनकी परीक्षा करते थे और उसके आधार पर उनकी सच्ची योग्यताका अदाज निकालते थे। उदाहरणके लिए, अपनी पत्नीके खातिर भारतके वाइसरॉय-पदका त्याग करनेवाले सर माल्कम हेली, एकाग्र निष्ठासे अपने देशकी सेवा कर सकनेके लिए आजीवन अपरिणीत रहनेवाले लॉर्ड एम्प्टहिल और अपनी महान भगिनीकी विरल निष्ठा तथा आत्म-समर्पणके अधिकारी — दोनो भाई-वहन एक-दूसरेके प्रति उतनी ही निष्ठा और आत्म-समर्पणकी उदात्त भावना रखते थे — कायदे आजम जिन्ना गाधीजीके गहरे आदरके पात्र वने थे और राजनीतिक क्षेत्रके अधिकसे अधिक मतभेद या सघर्प भी उनका यह आदर न तो मिटा सके और न कम कर सके।

यही वात लॉर्ड और लेडी पेथिक-लॉरेन्सकी थी। गाधीजी विवाहित जीवनमे पति-पत्नीके समान दर्जेके वारेमे वहुत दृढ मत रखते थे, यहा तक कि अपने आश्रममे उन्होने प्राचीन हिन्दू विवाह-सस्कारमे भी परिवर्तन कराया और उसे अपने आदर्शके अनुकूल वनाया था। लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सने इस वातका आग्रह किया था कि उनके नामके वदले एमेलिनका नाम स्वीकार किया जाय। इसी वातसे अन्य किसी वातकी अपेक्षा वे गाधीजीके अधिक निकट आ गये थे। श्रीमती पेथिक-लॉरेन्स दोनोके वीच एक कडी वन गई थी।

सर स्टैफर्ड क्रिप्स अपनी तपस्याके समान कडी सादगी, शाकाहार और आत्माकी रोग-निवारक शक्तिमे विश्वासके कारण अपनी मानसिक रचनामे गाधीजीके सवसे अधिक निकट थे। यदि लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स अपनी प्रवल विवेक-वुद्धिके कारण कैविनेट-मिशनकी अन्तरात्मा थे, तो सर स्टैफर्ड क्रिप्स उसकी वुद्धि थे। अपनी असाधारण मानसिक शक्ति, सूझ-वूझ और कानूनी प्रतिभाके कारण उन्होने कई अवसरो पर अपने साथियोको गाधीजीका मानस समझनेकी कुजी वताई थी। गाधीजीको इस वातकी खुशी थी कि सर स्टैफर्ड भी "उनके जैसे ही एक झक्की और सनकी" थे और जव कैविनेट-मिशनकी वार्ताओके वीच सर स्टैफर्ड वीमार हो गये तो गाधीजीने उनके पास अपने "सवसे मोहक (प्राकृतिक चिकित्साके) डॉक्टर" दिनशा मेहताको भेजा था। उनके वारेमें सर स्टैफर्डने कहा था "उन्होने मेरे दिल पर पूरा अधिकार जमा लिया है!"[1] गाधीजीके हृदय पर पूरा अधिकार जमानेवाली वात यह थी कि सर स्टैफर्ड क्रिप्स उन्हे ऐसे व्यक्ति मालूम हुए, जिनमे अपने विश्वासके अनुसार आचरण करनेका साहस था। गाधीजीकी यह राय सच्ची सावित हुई

जब बादमें अपनी अंतिम बीमारीके समय सर स्टफड क्रिप्सने एक प्राकृतिक चिकित्सावादी होनेके नाते आत्माकी चिकित्सा शक्तिकी अपनी श्रद्धा पर आधार रखा। इससे उनका रोग तो नही मिटा लेकिन गाधीजीके रामनामकी तरह इस श्रद्धासे सर स्टफडको आध्यात्मिक सान्त्वना, बल और दृढता प्राप्त हुई और वे निश्चिन्त होकर उस प्राणघातक रोगका स्वस्थता साहस धीरज और शातिके साथ सामना कर सके।

लाड पथिक-लॉरेन्स और सर स्टफड क्रिप्स दानोकी गाधीजीके समान ही गहरी धार्मिक पष्ठभूमि थी। दिल्लास भेजे हुए अपने प्रथम पत्रमें सर स्टफडने गाधीजीको कबिनेट मिशनके सदस्याके साथ मित्राकी मूक प्राथनामें सम्मिलित होनेका निमत्रण दिया था। इस प्रार्थनाका आयोजन दो अग्रज क्वेकर मित्रो — अर्थात स्वर्गीय सी० एफ० एडरूजके निकटके साथी एगाथा हेरिसन और हॉरेस एलेक्जडरने अपने ईसाई शान्ति प्रचारके सिलसिलेमे किया था। सर स्टफडने गाधीजीको लिखा मने एगाथा हेरिसनको वचन दिया है कि अगले रविवारको मौन विचार और प्रार्थनाके समय म शरीक होऊगा और मुझे सचमुच बडी आशा है कि आप भी वहा उपस्थित होग, ताकि हम थोडी देरके लिए आध्यात्मिक एकरसतामें सम्मिलित हो सक। मेरी तीव्र इच्छा है कि आप वहा उपस्थित रह। इससे मुझे आपके साथ अधिक सरकारी वातावरणमें मिलनेसे पूव अनौपचारिक बातचीतके लिए मिलनेका अवसर मिल सकेगा। ' गाधाजीने हृषपूर्वक यह निमत्रण स्वीकार कर लिया। उधर सर स्टफड गाधीजाकी प्रार्थना-सभाम सम्मिलित हुए जब व गाधीजीसे मिलनेके लिए भगीबस्तीमें आये। दोनाके बीच आध्यात्मिक बाताम कितना गहरा मेल था यह उस पत्रसे प्रगट हाता है जो सर स्टफडने इग्लड लौटने पर गाधीजीको लिखा था। वह पत्र उनकी लडकीकी बीमारीके बारेमें था, जिसे स्टफड दपतीन एक विशेष क्वकर भवनमें रख दिया था। उस पत्रमें इस बातका उल्लेख था कि उस स्थानमें अदभुत आध्यात्मिक वातावरण ' है और कहा गया था कि हमारी आशा है कि वहा लडकीकी जो अन्य चिकित्सा की जायगी उसके साथ उस स्थानका भी स्वास्थ्यदायी प्रभाव हागा। '

इन मौन प्रार्थना-सभाओके कारण कबिनेट मिशनके प्रतिनिधियो तथा गाधाजीको परस्पर आध्यात्मिक सम्पक साधनका अमूल्य अवसर मिला। बादके सप्ताहोंमें गाधीजो कभी कभी लाड पथिक-लॉरेन्स और सर स्टफडको हरिजन के अपने किसी लखकी प्रकाशित होनेसे पहले एक प्रति या प्रार्थना सभामें गाये गये और उन्हें तन्मय बनानेवाले किसी सुन्दर भजनका अग्रजी अनुवाद भेज दिया करते थ। कभी लाड पथिक-लॉरेन्स अपना आरस कोई लोकप्रिय अग्रजी कहानी भिजवा देते थे जिसमें सवव्यापी प्रभुके उपकारक

प्रति साधारण अंग्रेजकी श्रद्धा प्रगट होती थी। एक-दूसरेको समझनेका जो गाढ सम्बन्ध इन आध्यात्मिक सम्पर्कोसे पैदा हो गया था, उससे राजनीतिके साथ अनिवार्य रूपसे जुडे हुए संघर्षो और मतभेदोके अनेक आघात वे सहन कर सके। इस सम्बन्धने अन्तिम समझौते पर पहुचनेमे भी काफी सहायता की।

क्वेकर लोगोका यह विश्वास है कि सामूहिक मौन प्रार्थनामे ईश्वर "हमसे अवश्य बोलता है" और हम "जीवनके सामान्य कार्योमे" उसकी इच्छाको समझ सकते हैं। साप्ताहिक मौन-दिवसके पालन पर आधारित गाधीजीका अपना अनुभव भी इससे मिलता था। "यदि हम उस शान्त और मन्द आवाजको सुनना चाहते हो, जो हमारे भीतर सदा बोलती रहती है, तो हमारे लगातार बोलते रहनेसे वह हमे सुनाई नही देगी।"[४] मौन-वृत्तिमे "आत्माको अधिक स्पष्ट प्रकाशयुक्त मार्ग मिल जाता है और जो वस्तु भ्रामक और धोखेमे डालनेवाली होती है वह स्फटिकके समान स्पष्ट हो जाती है।"[५] इस फलदायक मौनकी साधना और अभ्यास कोई यान्त्रिक क्रिया नही है। यह उदात्त कला है। "सीये हुए होठोका मौन सच्चा मौन नही होता। जीभ काट लेनेसे भी यही परिणाम निकल सकता है, परन्तु वह मौन नही कहा जायगा। सच्चा मौनी वह है जो बोलनेकी शक्ति होते हुए भी कोई व्यर्थका शब्द नही बोलता।"[६] क्वेकरोकी जिस पहली सभामे गाधीजी कैबिनेट-मिशनके सदस्योके साथ सम्मिलित हुए थे, उसमे उन्होने यह आशा प्रकट की थी कि, "इस मौन सामुदायिक प्रार्थनासे हमे उपद्रव और तूफानके बीच अटल शान्ति अनुभव होगी, हम क्रोधको शान्त कर सकेगे और धैर्यकी साधना कर सकेंगे।"[७]

क्वेकरोकी मौन प्रार्थनामे मौन तब भग होता है जब समुदायमे से कोई व्यक्ति शेष लोगोको 'अपनी चिन्ता' में हिस्सेदार बनानेकी जरूरत अनुभव करता हो। इस विशेष अवसर पर समुदायके एक भारतीय क्वेकरने चार्ली एन्ड्रूजका स्मरण दिला कर मौन भग किया। एन्ड्रूज "भारत और इग्लैंडकी अच्छी बातोके बीच एक आध्यात्मिक कडी" के समान थे। सर हेनरी कैम्प-बेल-बैनरमैनके चरित्र-लेखकने लिखा है कि किस प्रकार बोअर युद्धके बुरेसे बुरे दिनोमे एमिली हॉबहाउस नामकी एक अग्रेज महिलाने स्पष्ट शब्दोमे और साहसपूर्वक बोअरोकी हिमायत की और किस प्रकार उससे युद्धकी घटनाओसे पैदा होनेवाले द्वेषभावके मिटनेमे और दोनो राष्ट्रोके बीच अन्तिम समझौता होनेमे मदद मिली थी। चार्ली एन्ड्रूजका भारतके लिए वही स्थान था, जो एमिली हॉबहाउसका दक्षिण अफ्रीकामे बोअरोके लिए था। गाधीजी कहा करते थे, "जब हमारे सामने चार्ली एन्ड्रूजका उदाहरण मौजूद है, तब भारत अग्रेजोसे अग्रेज होनेके कारण द्वेष कैसे रख सकता है?" उस सभामे

गाधीजीने अपना वक्तव्य इस आशाके साथ समाप्त किया था कि भारतीय स्वाधीनताके पक्षमें चार्ली एन्डरूजका परिश्रम ब्रिटिश साम्राज्यवादने भारतके प्रति जो कुछ किया हो ' उसकी पर्याप्त मात्रामे क्षतिपूर्ति कर देगा।

३

कविनेट मिशनकी वाताए साम्प्रदायिक उपद्रवाकी अधकारपूण पष्ठभूमिमे हुई थी। मुस्लिम लीगको १५ माच १९४६ के श्री एटलीके पालमेटम दिये गये वक्तव्यमें यह धमकी नजर आई थी कि उसके हाथसे वह निषेधाधिकार (वीटो) छीन लिया जायगा, जो लाड लिनलिथगोने अपने अगस्त १९४० के प्रस्तावक द्वारा उसे दे दिया था। वह प्रस्ताव इस प्रकार था कि ब्रिटिश सरकार अपनी जिम्मेदारी किसी ऐसी शासन-व्यवस्थाको हस्तान्तरित नही करेगी जिसकी सत्ताको भारतके राष्ट्रीय जीवनके विशाल और शक्तिशाली तत्त्व प्रत्यक्ष रूपमें अस्वीकार करते हो। जिन्नाने कविनेट मिशनक लीगकी उपेक्षा करनेके किसी भी प्रयत्नको घोर विश्वासघात कह कर उसकी निन्दा की थी। इसके बाद बहुतसे स्थानो पर साम्प्रदायिक ढगकी छुरेबाजीकी कई घटनाए लगातार हुइ। ये एसे अज्ञात गुडो द्वारा और ऐसी परिस्थितियामें हुइ जिनसे उनके पीछे रहे राजनीतिक हेतुके विषयमें स्पष्टत कोई शका नही रह जाती थी।

महान खिलाफ्त और असहयोग आन्दोलनाके सुवण कालमें सिद्ध हुई हिन्दू-मुस्लिम एकताकी स्मृतियाकी सुगधसे आज भी दिल्ली सुवासित थी, लेकिन अब उसके बुरे दिन आ गये थे। फिर भी गाधीजीकी दष्टिमें वह नगर सच्चे ईसाई आचाय एस० के० रुद्रका तथा महान सुधारक और शिक्षाकार स्वामी श्रद्धानन्दजीका नगर था। रुद्र चार्ली एन्डरूजके सम्मानित साथी और गाधीजीके दिल्लीके सबसे पहले यजमान थे और स्वामी श्रद्धानन्दको उसी नगरमे गाधीजीसे २१ वष पहले शहीद होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वह हकीम अजमल खा और डा० अन्सारीका नगर था। ये दोना सज्जन इस्लामी सस्कृतिके उत्तम उदाहरण थे और इस्लामी उदारवाद तथा उत्तम हिन्दू मुस्लिम एकताक सजीव स्मारक थे। उनसे सभी जातिया प्रेम करती थी और सभी जातिया उनका सम्मान करती थी। वह अली बधुओका भी शहर था जो बादमें गाधीजी और काग्रेससे अलग होने तक गाधीजीके लिए सगे भाईके समान रहे थे। यह व्यक्तिगत सम्बध राजनीतिक सम्बध टूट जानेके बाद भी बना रहा। यहा पर १९१९ में भारतके अहिंसक स्वातन्त्र्य-सग्राममें शहीद बने हिन्दू और मुसलमान शहीदोका रक्त पहले-पहल एक साथ बहा था।

दिल्लीमे जामिया मिलिया या मुस्लिम राष्ट्रीय विद्यापीठका पौधा हकीम अजमलखा, डॉ० अन्सारी और अली भाइयोने गाधीजीके साथ मिलकर १९२० में असहयोग आन्दोलनके प्रारभमे लगाया था। उसकी रजत-जयन्ती थोडे ही दिनोमे मनाई जानेवाली थी। गाधीजी अपने व्यस्त कार्यक्रमके बीच भी एक दिन अचानक उस सस्थाको देखने चले गये और विद्यार्थियो तथा शिक्षकोकी एक शान्त पारिवारिक बैठक की। एक विद्यार्थीने पूछा, "हिन्दू-मुस्लिम-एकता स्थापित करनेके लिए हम क्या कर सकते है?" गाधीजीने उत्तर दिया, अगर सारे हिन्दू गुडे हो जाय और आपको गालिया दे, तो भी आप उन्हे अपने सगे भाई मानना न छोडें। यही बात मुसलमानोको लागू होती है। "अगर कोई भलाईके वदलेमे भलाई करता है, तो यह तो सौदा हुआ। ऐसा तो चोर और डाकू भी करते है। मानवता हानि-लाभके हिसावसे नफरत करती है। . . अगर सारे हिन्दू मेरी सलाह माने या सारे मुसलमान मेरी सलाह माने, तो भारतमें ऐसी शाति कायम हो जाय जिसे कोई भग नही कर सकेगा। जव वदला लेनेके लिए आक्रमण नही किया जायगा या वदलेमें उभाड़नेका प्रयत्न नही किया जायगा, तो गुडे छुरेवाजीके क्रूर कृत्यसे थक जायगे। कोई अदृश्य शक्ति उनके उठे हुए हाथको पकड लेगी और वह हाथ गुडेकी दुष्ट आज्ञा माननेसे इनकार कर देगा। . . ईश्वर भला है और वह दुष्टताको एक निश्चित मर्यादासे ज्यादा वढने नही देता।"

जामियाके मैदानके एक कोनेमे डॉ० असारीकी कब्र है। घर लौटनेसे पहले गाधीजीने उसकी यात्रा की। डॉक्टर गाधीजीके लिए सगे भाईके समान थे। १९३३ मे गाधीजीने पूनामे जो २१ दिनका आत्मशुद्धिका उपवास किया था, उस वीच उनकी स्थिति अचानक नाजुक हो गई। गाधीजीने दिल्लीमें उन्हे सदेश भेजा, मुझे आपकी गोदमें मरनेसे ज्यादा खुशी और किसी वातसे नही होगी। भले डॉक्टरका उत्तर आया, मै आपको अपनी या और किसीकी गोदमे नही मरने दूगा! और वे अपनी यूरोपकी यात्रा स्थगित करके तुरन्त अपने मित्रके पास पहुच गये, ताकि वे अपना उपवास सुरक्षित रूपमे पूरा कर सके। डॉक्टरकी कब्र पर कई सीढियोका एक चवूतरा है। एक सादी-सी सगमरमरकी तख्ती पर डॉक्टरका नाम और उनके जन्म और मृत्युकी तारीखें खुदी हुई है। स्मारककी इस अत्यन्त सादगीके कारण वहाकी यात्राकी गभीरता और भी वढ गयी। यह यात्रा गाधीजीकी इस अमर श्रद्धाका प्रतीक थी कि अन्तमे हिन्दू-मुस्लिम-एकता होकर रहेगी।

४

लाल किलेके मुकदमे पूरे जोरसे चल रहे थे। आजाद हिन्द फौज (आई० एन० ए०) के कैदियोका भाग्य अधरमें झूल रहा था। सारे देशमें भारी खलवली

गाधीजीको एक पशेवर सैनिक अफ्सरके मुहसे ऐस भाव सुनकर सानद आश्चय हुआ और वे बोल उठे यह आप कहते ह!"

आजाद हिंद फौजके मित्रोसे गाधीजीने कहा मुझे यह कहनेमें कोई सकोच नही कि मेरा भाग कही ज्यादा अच्छा है।"

अब तक गाधीजीने नेताजी बोसकी मृत्युके सब समाचारो पर अविश्वास किया था। इस भेंटसे उनकी यह राय बदल गई। जब वह दुर्भाग्यपूण घटना हुई थी उस समय कनल हबिबुरहमान नेताजीके साथ ही विमानमें थे। उन्होने दुघटनाका सारा वणन सजीव रूपमें गाधीजीके समक्ष किया "नेताजीके हाथ और शरीरके दूसरे हिस्से बहुत ज्यादा जल गये थे। परन्तु इसकी परवाह न करके उन्होने मुझसे पूछा कि मेरा क्या हाल है। मने उनसे कहा कि म बिलकुल ठीक हू और मुझे लगता है कि म बच जाऊगा। उन्होने कहा कि मेरे बचनेकी आशा नही है। और उन्होने मुझे अपना अतिम सदेश दिया म तो जा रहा हू परन्तु मेरे देशवासियो और तमाम सबधित लोगोसे कह देना कि जब तक लक्ष्य सिद्ध न हो जाय तब तक भारतीय स्वाधीनताकी लडाई जारी रहनी चाहिये।' यह दुघटना ९॥ बजे प्रात काल हुई थी। तीसरे पहर ३॥ बजे उनका प्राणान्त हो गया। वे लगभग अन्त तक होशमें रहे। अतिशय पीडाके बावजूद उनके मुहसे उफ तक नही निकली।' वणन-कर्ताका हृदय बोलते बोलते भर आया। गाधीजीने दूसरे दिन अपनी प्राथना-सभामें यह घोषणा कर दी कि पहले तो मेरी मान्यता दूसरी थी परन्तु अब मुझे विश्वास हो गया है कि नेताजी इस दुनियामे नही रहे।

आजाद हिन्द फौजकी उस टुकडीका एक और सनिक बोला, हमें न हताशा है और न निराशा है। अब जब सारे देशने स्वतन्त्रता-सग्रामको अपना लिया है तो हमें लगता है कि हमारा काम पूरा हो गया। यह देखकर हमारे हृदयको प्रसन्नता होती है कि जिस ध्येयके लिए हमने कोशिश की थी वह रक्तपातके बिना पूरा होने जा रहा है। इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है?'

जसा मेजर जनरल शाहनवाजने गाधीजीसे कहा था अग्रेजोंके आगे अन्तमें आत्म-समपण करनेसे पहले जुदा होते समय दी गई नेताजी बोसकी सलाहमें भी यही भावना थी।

आजाद हिन्द फौजके एक और सनिकने गाधीजीसे पूछा हम राष्ट्रकी सेवा कैसे कर सकते ह?" गाधीजीने उत्तर दिया, 'मन प्राणसे रचनात्मक कार्यमें ओतप्रोत होकर। रणभूमिमें शत्रुसे लडते लडते जितने लोगोंके प्राण गये उससे अधिक प्राण जानेका खतरा देश पर मडरा रहे अकालके कारण आज पैदा हो गया है।

नेताजी वोस गाधीजीके लिए पुत्रके समान थे। गाधीजी उनकी योग्यता, सच्चाई, त्याग, देशभक्ति और सूझवूझकी वडी तारीफ करते थे। परन्तु यह वात उन्होने कभी नही छिपाई कि वे नेताजीकी कार्य-पद्धतिसे सहमत नहीं हो सके। इसलिए उन्होने "वोसकी लोककथा" को कभी भी प्रोत्साहन नही दिया। उन्होने आजाद हिन्द फौजकी एक और टुकडीसे कहा, "हमने पिछले २५ वर्ष वरवाद कर दिये, यदि मारने और नाश करनेके धंधे पर मुलम्मेकी जो मोटी परत दीर्घकालसे चढी हुई है उसे हमने उतार नही फेंका।"[११] उन्होने आजाद हिन्द फौजके सैनिकोकी वहादुरी और भारतकी स्वतंत्रताके खातिर मरनेकी उनकी तैयारीकी खुले हृदयसे प्रशसा की। परन्तु उन्होने कहा कि इसमे मै अपने स्थितप्रज्ञके आदर्शको लेकर आपके साथ प्रतिस्पर्धा करनेको तैयार हू, क्योकि स्थितप्रज्ञका आदर्श मनुष्यसे नि शस्त्र होने पर भी उतने ही साहसके साथ मृत्युका सामना करनेकी अपेक्षा रखता है। उन्होने आजाद हिन्द फौजके लोगोंसे कहा: सशस्त्र युद्धमें जिस साहस और देशभक्तिकी जरूरत होती है, उससे कही ऊचे साहस और देशभक्तिकी आवश्यकता झाडू और वाल्टी उठाने और भगी वनकर नीचेसे नीचे मनुष्योके साथ तादात्म्य सिद्ध करनेमें होती है। सव कोई आजाद हिन्द फौजके सैनिकोकी शारीरिक वीरताकी वरावरी नही कर सकते। परन्तु स्थितप्रज्ञका आदर्श तो सवके लिए है—न कि थोडेसे चुने हुए लोगोके लिए, केवल सतो और ऋषियोके लिए ही। "एक विनीत साधकके नाते मै गवाही देता हूं कि कोई भी आदमी—यहा तक कि एक भोलाभाला देहाती भी चाहे और प्रयत्न करे, तो गीतामें वर्णित मानसिक सतुलनकी स्थितिको प्राप्त कर सकता है। हम सव कभी कभी अपना सयानपन खो देते है, भले ही हम इसे स्वीकार न करे। परन्तु स्थितप्रज्ञके आदर्शका तकाजा है कि किसी वच्चेके साथके व्यवहारमे भी मनुष्य धीरज न छोडे या क्रोध अथवा गाली-गलौज न करे। मैंने धर्मको जिस रूपमें समझा है उस रूपमें वह हमारे इसी जीवनमे पालन करनेकी वस्तु है। हमारे इस जन्मके किसी भी कार्यसे कोई सम्वन्ध न रखते हुए परलोकमे श्रेयप्राप्तिका साधन धर्म नहीं वन सकता।"

गाधीजीने कहा, इसलिए इस नाजुक मौके पर आजाद हिन्द फौजवालोका भारतके लिए यह सदेश है कि "झगडोका निवटारा करनेके लिए शस्त्रवलका आश्रय न लिया जाय, परन्तु अहिंसा, एकता, मेल-मिलाप और सगठनका विकास किया जाय।" गाधीजीकी दृष्टिमें उनकी सवसे वड़ी सिद्धि यह थी कि उन्होने भिन्न-भिन्न धर्मो और जातियोके लोगोको एक झडेके नीचे एकत्र किया था और किसी भी साम्प्रदायिक अथवा प्रादेशिक भावनाके विना उनमें एकताकी वृत्ति पैदा की थी। उन्होने युद्धके जादुई आकर्पण और उत्तेजनाके

वश होकर जो कुछ किया था वह अब उन्हें सर्वथा भिन्न और कहीं अधिक कठिन परिस्थितियोंमें कर दिखाना है और दूसरोंमें भी यह भावना भरनी है। इसके अलावा उन्हें दूसरोंको मारे बिना मरना सीखना है, अर्थात् गीतामें बताये गये स्थितप्रज्ञके गुण अपनेमें पैदा करने हैं।

आजाद हिन्द फौजके दलने गांधीजीको बताया कि हमने भी समझ लिया है कि अब हमें अहिंसाके सैनिक बनकर भारतकी सेवा करनी होगी। यह बात उनमें से कुछ लोगोंने नोआखाली और बिहारके संकटपूर्ण दिनोंमें प्रशंसनीय ढंगसे सिद्ध कर दिखाई थी।

आजाद हिन्द फौजके कैदियोंसे गांधीजीने अपनी मुलाकातमें जो प्रेरणाप्रद बातें कीं वे स्वतंत्रताके उषाकालमें भारतकी आत्माके नव प्रस्थानका तादृश चित्र प्रस्तुत करती हैं। वह नया जन्म और नई चेतना पाया हुआ भारत था जिस स्वर्णयुगकी वह चिरकालसे प्रतीक्षा करता आ रहा था उसके आगमनकी आशाओंसे पुलकित भारत था। भारतीय जनताने ब्रिटिश शासकोंके खिलाफ लड़ी गई अपनी लड़ाईमें दूसरोंको मारे बिना स्वयं मरनेकी कलाकी सफलताके दर्शन कर लिये थे। अब गांधीजी उसे यह समझानेकी कोशिश कर रहे थे कि भविष्यमें एक-दूसरेके साथ व्यवहार करते समय इस पाठको यदि उसने याद नहीं रखा, तो उसका स्वातंत्र्य-संग्राम अपनी आखिरी मंजिलमें भाई भाईके गृहयुद्धमें बदल जायगा और फिर जिस पुरस्कारके लिए वह अब तक लड़ रही थी उसे यह गृहयुद्ध जड़मूलसे नष्ट कर देगा।

५

एक अंग्रेज उपन्यासकारने अपनी एक अमर कहानीमें एक डाक्टरका चित्रण किया है। उस डाक्टरको एक अंधेरे जेलखानेमें लम्बे अर्से तक बन्द रखनेके बाद अचानक दिनके प्रकाशमें लाया जाता है। उस समय वह बड़ी मुश्किलसे आंखें खोल पाता है और फिरसे अपनी उसी अंधेरी कोठरीमें चला जाना चाहता है। क्या भारत वास्तविकताका सामना करनेकी हिम्मत दिखायगा, जब लगभग २०० वर्षकी गुलामीके बाद स्वाधीनता उस पर आ धमकेगा? अथवा उसकी हिम्मत उसे जवाब दे देगी और वह फिरसे गुलामीके आराम और सुरक्षिततामें लौट जाना चाहेगा? क्या लोग आजादीकी कीमत चुकानेको और वे कुर्बानियां करनेको तैयार होंगे जो आजादी मांगती है? या वे उन विशेष सुविधाओं और लाभोंसे चिपके रहेंगे जिनका आदी विदेशी शासकोंने उन्हें बना दिया है? गांधीजीने देख लिया था कि स्वतंत्रताके मन्दिरमें प्रवेश करनेसे पहले हरएक को कुछ लाभों और विशेष अधिकारोंका दावा छोड़नेका स्वेच्छासे त्याग करना होगा।

जमीदारोंका एक प्रतिनिधि भगीवस्तीमे गाधीजीसे मिलने आया था। उसे गाधीजीने जो उत्तर दिया वह बडा लाक्षणिक था:

"जब भारत स्वाधीन हो जायगा, तो हमारी क्या स्थिति होगी?"

"आप उतने ही स्वतत्र होगे जितना, उदाहरणके लिए, कोई भगी होगा।"

परन्तु मुलाकातीका मुद्दा यह नही था। वे तो यह जानना चाहते थे कि भारतके स्वतत्र होनेके बाद उनका वर्ग अपने विशेषाधिकारोकी रक्षा कर सकेगा या नही।

गाधीजीने उत्तर दिया, "अहिंसक मनुष्यके नाते मैं किसीको न्यायपूर्ण अधिकारोसे वचित करना पसन्द नही करूगा। परन्तु अग्रेजी राज्यमें कुछ असाधारण विशेषाधिकार हथियाये हुए जैसे ही थे। ऐसे अधिकारोको नही रहने दिया जा सकता।"

प्रतिनिधिने फिर पूछा, "बहुतसे जमीदार अग्रेजोके यहा आनेसे बहुत पहले भारतमे मौजूद थे। क्या आपके खयालसे उन्हे बने रहनेका अधिकार नही है?"

गाधीजीने उत्तर दिया, "जो भी वस्तु नैतिक मूल्योके साथ सुसंगत है, उसे मौजूद रहनेका अधिकार है। इसके विपरीत, बुराईको केवल इस कारणसे टिके रहनेका अधिकार नही है कि वह बहुत समयसे चली आई है।"

अन्तमें उन मित्रने तर्क किया, "हम निष्पक्ष न्याय चाहते हैं। स्वाधीन भारत सब प्रकारके स्थापित स्वार्थोको मिटा दे, तो हमे कोई आपत्ति नही। हम तो इतना ही चाहते है कि हमारे विरुद्ध खास तौर पर कोई भेदभाव न किया जाय।"

गाधीजीने जवाब दिया, "न्याय-परायण मनुष्यको स्वाधीन भारतसे किसी भी तरहका डर रखनेकी जरूरत नही है।"

एक और दलने पूछा, क्या इस बातका विश्वास रखा जा सकता है कि स्वाधीनतामे "धर्म-परिवर्तन करानेके अधिकार" की कानूनी गारटी होगी? इस पर गाधीजीने प्रश्न किया, क्या आप लोग सचमुच स्वाधीनताके आदर्शमें विश्वास रखते है या किसी शर्त पर आप स्वाधीनताके आदर्शका समर्थन करेंगे? यदि इसके लिए आपकी कोई शर्त हो, तो मैं कहूगा कि न तो स्वाधीनतामें आपका विश्वास है और न धर्ममे। यदि आपकी रग-रगमे सत्य भरा हो, तो उसकी आवाजको कौन दबा सकता है? इसके विपरीत, यदि आपके भीतर सत्यकी साक्षी बननेवाली आग न हो, तो कानूनी गारटी किस कामकी?

मुलाकातियोमें से एक मित्र बीचमें ही बोल उठे, यह निर्विवाद है कि सत्यको कोई नही दबा सकता। परन्तु क्या आप यह आश्वासन दे सकते है कि सत्यको दबानेका प्रयत्न नही किया जायगा?

महात्माजी ऐसा कोई आश्वासन नहीं दे सकते थे। क्या प्रश्नकर्ता डेनियलका किस्सा भूल गये थे जिसने राजा डेरियसकी आज्ञा भंग करनेका साहस किया था? राजाने अपने राज्यमें यह आज्ञा निकाली थी कि "मेरे सिवा किसी देवता या मनुष्यकी पूजा न की जाय।" जब डेनियलको भूखे शेरकी गुफामें फेंकनेकी आज्ञा दी गई तब क्या डेनियलने इस अग्नि-परीक्षामें से सकुशल बाहर निकल आनेकी 'गारंटी' मांगी थी या उसे ऐसी गारंटीकी जरूरत थी? कहानी यह है कि डेनियलकी श्रद्धाका राजा पर इतना गहरा प्रभाव हुआ कि उसने अपनी पहली आज्ञा — जो "मीडो और ईरानियोंके कानूनके अनुसार अपरिवर्तनीय थी" — रद कर दी और उसके स्थान पर इस आशयकी आज्ञा निकाली कि "मेरे राज्यके हरएक प्रदेशमें लोग डेनियलके ईश्वरके सामने कांपें और डरें, क्योंकि वह जीता-जागता और सदा स्थिर रहनेवाला ईश्वर है।... और इस प्रकार डेनियल डेरियस और साइरस दोनोंके राज्यमें फला फूला।"[१२]

विदाईके समय गांधीजीने उनको वही सलाह सुना दी जो लार्ड सलिस्बरीने पादरियोंके एक शिष्ट मंडलको दी थी। लार्ड सलिस्बरी उस समय इंग्लैण्डके प्रधानमंत्री थे और पादरी लोग चीनमें धर्म-परिवर्तन करानेके अपनी प्रवृत्तिके सम्बन्धमें उनसे मिलने आये थे। लार्ड सलिस्बरीने उन लोगोंसे कहा: "अगर आपको अपने मिशनके लिए ब्रिटिश तोपोंकी रक्षाकी जरूरत है तो आप हीन कोटिके मिशनरी हैं।"

साधारण नागरिकोंसे जिन बातोंका त्याग करनेकी अपेक्षा रखी गई थी उनमें सबसे कठिन त्याग बन्दूकोंकी हिफाजतमें मिलनेवाली सुरक्षा और सुविधाका त्याग था। इस सुरक्षा और सुविधाका सामान्य नागरिक ब्रिटिश राज्यमें आदी हो गया था। गांधीजीने सबको यह समझानेमें कसर नहीं रखी कि जो स्वाधीनता आयेगी वह कोई हंसी-खेल और मौज-शौककी चीज नहीं होगी। उनकी व्याख्याकी भारतीय स्वाधीनताका अर्थ न केवल राजनीतिक और आर्थिक स्वाधीनता था बल्कि नैतिक स्वाधीनता भी था। "राजनीतिक' स्वाधीनताका अर्थ यह था कि प्रत्येक स्वरूपमें ब्रिटिश सेनाका नियंत्रण भारतसे हट जाय, आर्थिक स्वाधीनताका अर्थ यह था कि ब्रिटिश पूंजीपतियों और पूंजीसे तथा भारतीय पूंजीपतियों और पूंजीसे पूरी तरह मुक्ति मिल जाय। और नैतिक स्वाधीनताका अर्थ यह था कि सशस्त्र सेनाका त्रास हमेशाके लिए मिट जाय। इस स्वतंत्रतामें ब्रिटिश सेनाकी जगह राष्ट्रीय सेनाके लिए भी कोई अवकाश नहीं हो सकता। जिस देश पर उसकी राष्ट्रीय सेनाका भी शासन हो वह कभी नैतिक दृष्टिसे स्वतंत्र नहीं हो सकता

और इसलिए उस देशका सवसे कमजोर नागरिक कभी अपनी सपूर्ण नैतिक ऊचाई तक नही उठ सकता।"[१३]

गाधीजीकी श्रद्धा ऐसी उत्कट थी जैसी किसी पैगम्वरकी होती है। अत: उनके सत्सगमे सभी लोग उन्हीकी तरह सोचने और अनुभव करने लगते थे। वे गाधीजीकी भापा वोलते थे और जव गाधीजी उन्हे रणक्षेत्रमे ले जाते थे तव उनके आदर्शोकी प्रेरणासे ओतप्रोत हो जाते थे। परन्तु जव सग्राममे अन्तिम उग्रता आई और गाधीजीकी श्रद्धाके गूढार्थ अधिकाधिक प्रगट होने लगे, तव वहादुरसे वहादुर लोग भी पीछे हट गये और अपनी एकाकी यात्रा जारी रखनेके लिए गाधीजी अकेले ही रह गये।

६

भगीवस्तीमे ठहरनेका गाधीजीका निर्णय उनके लिए केवल प्रतीक जैसा ही नही था। यह निर्णय गाधीजी स्वराज्यकी जिस इमारतकी धैर्यपूर्वक रचना कर रहे थे उसीका एक अग था। भगीवस्तीमे पहुचने पर उन्होने कह दिया, मेरे मनमें यह भ्रम नही है कि यहा ठहर कर मै हरिजनोके वास्तविक जीवनका भागीदार वन रहा हू। मेरा यहा ठहरनेका निश्चय उस दिशामें पहला कदम है, आखिरी नही। मुझे आशा है कि किसी दिन हरिजनोके मकानोमे सफाई, तन्दुरुस्ती और म्युनिसिपल सुविधाओके बारेमे ऐसी स्थिति पैदा हो जायगी कि मेरे जैसा आदमी भी यहा आकर बिना किसी हिचकके रह सकेगा। गाधीजी उनकी गदी झोपडियोमें जाते थे और अपने सहायकोसे भी वहा जानेको कहते थे। उन्होने हरिजनोके जीवनकी परिस्थितियोमे सुधार करानेके लिए म्युनिसिपल अधिकारियोसे पत्र-व्यवहार शुरू किया। उन्होने हरिजनोकी समस्याओका अध्ययन किया, उनके लिए अपना काफी समय दिया और उन्हे नेक सलाह भी दी, और जव उनके शिविरका प्रवन्ध करनेवाले स्वयसेवकोने अपनी रैली की तो उनसे कहा, आप प्रेमपूर्वक मेरी जो सेवा कर रहे है, उसके लिए मै आपका आभारी हू। परन्तु मुझे अधिक सतोष तव मिलेगा जव आप उतनी ही मेहनतसे उन 'नीचेसे नीचे लोगो' की भी सेवा करेगे, जो मेरे पडोसमे रहते है और "अतिशय गदगी और दरिद्रतामें जीवन विताते है।"

भगीवस्तीमे गाधीजीकी एक प्रार्थना-सभामें एक हिन्दी भजन गाया गया था। उसमे गाधीजीको अपने स्वतत्र भारतका चित्र उसके महत्त्वपूर्ण अशोमे मूर्त रूप लेता दिखाई दिया। उस पर वे मोहित हो गये और उसका अग्रेजी अनुवाद करके उन्होने लॉर्ड पेथिक-लॉरेंसके पास भिजवा दिया। भजन इस प्रकार था:

हम ऐस देशके वासी हं,
जहा शोक नहा और आह नहा।
जहा माह नही और ताप नहा,
जहा भरम नहा और चाह नहा॥
जहा प्रेमकी गगा बहती है,
सब सष्टि आनदित रहती है।
जो है या एक जहेती है,
दिन रात नहा, सन् माह नही॥
सबको है सब कुछ मिला हुआ,
या सब सौदा है तुला हुआ।
एक साचमें सब ढला हुआ,
कुछ कमी नही परवाह नही॥
जहा स्वारथका नाम-रूप नही,
कोई खास नही काई आम नही।
कोई करता और गुलाम नही,
जहा दीप्ति रहती पर दाह नहा॥
तेरे अतरमें वह है
वह स्वराज्य और स्वदेशी है।
तेरे अतर माह निलय,
जय जय जय, जय!
जय चाहनेसे मिलती है।

गाधीजीके मन चरखा उनके सपनोके इस स्वराज्यका मूत रूप और प्रतीक था — जिस स्वराज्यमें साधारण मनुष्योको अपने मूल अधिकार फिर प्राप्त होंगे। चरखेमें उन्हे ताल, सगीत काव्य साहस तथा शौय और आध्यात्मिक सतोष भी मिलता था। कुछ दिन बाद कनु गाधीने भगीबस्तीमें कताई और उससे सम्बधित दूसरी प्रक्रियाए सिखानेके लिए ११ दिनका जो वग चलाया था उससे गाधीजीको जितना सतोष हुआ उतना और किसी बातस नहा हुआ। ११० व्यक्ति कताईकी अन्तिम परीक्षामें बठे थे। आम तौर पर नवागन्तुकोन एक सप्ताहके भीतर इस कलाको सीख लिया। कताईकी सारी प्रक्रियाओकी प्रदर्शनीका उदघाटन समाजवादी नेता जयप्रकाशनारायणने किया। इस समारोहकी मुख्य घटना यह थी कि गाधीजीको उनकी ७७ वी वषगाठ पर भेंट स्वरूप देनेके लिए सार देशस सूतकी ७७ हजार गुडिया" इकट्ठा की गई थी।

जो लोग वर्गमें दाखिल हुए उनमें न्यूज क्रानिकल लदनके प्रतिनिधि श्री नामन क्लिफ और न्यूयार्क पोस्ट के प्रतिनिधि श्री एंड्रयू फ्रीमन भी थे। दाताने

कातना सीख लिया और चरखे खरीद लिये। श्री एन्ड्रयू फ्रीमैनने अपने पत्रसे अवकाश ग्रहण करनेके बाद गांधीजीके कताई-वर्गके "एक भूतपूर्व सदस्यके नाते" उनसे अनुमति मांगी कि वे अपने नामका उपयोग करके "गांधी स्पिनिंग सोसायटी ऑफ दि यूनाइटेड स्टेट्स" का संगठन उन्हें करने दें। गांधीजीका लाक्षणिक उत्तर इस प्रकार था, "क्या अमरीकामें कताई-मंडल शुरू करनेका विचार पागलपन नहीं है? पागलपन हो या बुद्धिमानी, आप मेरा नाम उसके साथ क्यों जोड़ना चाहते हैं? हाथ-कताईका अपना ही विशेष विश्वव्यापी कार्य है। . . . यदि अमरीकाको सचमुच चरखेमें दिलचस्पी हो, तो वह आविष्कारक प्रतिभाके अपने सारे भूतपूर्व पराक्रमोंको तोड़ सकता है। इसलिए मैं कहता हूं कि एक महान वस्तुको मेरे नामके साथ मिलाकर छोटी न बनाइये। चरखेके बारेमें लोगोंको समझाते समय मेरे नामका उपयोग करनेका आपको पूरा अधिकार है। और आप सही अर्थमें यह कह सकते हैं कि चरखेके बारेमें आपका उत्साह मेरे उस उत्साहका ऋणी है, जो मैं भारतमें चरखेके लिए दिखाता हूं।"

एन्ड्रयू फ्रीमैनने प्रस्ताव रखा था कि वे प्रस्तावित मंडलके सदस्योंका काता हुआ सारा सूत गांधीजीके पास भेज देंगे। इसके बारेमें गांधीजीने उन्हें लिखा, "अवश्य ही मैं उस सारे हाथकते सूतका स्वागत करूंगा, जो आप भारत भेज सकते हैं। परन्तु ठेठ अमरीकासे भारत तक हाथकते सूतका जो पार्सल आप भेजेंगे, उसके भीतर छिपे विनोदकी ओर मैं आपका ध्यान खींचना चाहूंगा। . शायद हाथकता सूत अमरीकासे भेजनेका डाकखर्च कताईमें उपयोग की गई रुईके मूल्यसे पचास गुना ज्यादा होगा!" अन्तमें उन्होंने यह लिखा, परन्तु अमरीका तो "लक्ष्मीका पुजारी देश है" इसलिए शायद आप "इस तरहका महंगा विनोद कर सकते हैं!"

७

आदर्शवादियोंको आम तौर पर गगन-विहारी, अव्यावहारिक समझा जाता है। पर गांधीजीका आदर्शवाद गगन-विहार करने जैसा नहीं था। उनका यह दावा था और उसे उन्होंने सिद्ध कर दिखाया था कि वे व्यावहारिक आदर्शवादी थे। उन्होंने दिखा दिया कि भलाईको परिणामकारी कैसे बनाया जा सकता है। अपने सत्यके आग्रह और पूर्ण पालनसे उन्हें वास्तविकता पर पूरा नियंत्रण प्राप्त हो गया था और मानव-स्वभावका अद्वितीय ज्ञान प्राप्त हो गया था। उसकी शक्तियों और उसकी दुर्बलताओंको भी जाननेके कारण वे अचूक अंतर्ज्ञानसे अपने अस्त्र चुन सकते थे और मिट्टीमें से शूरवीरोंको जन्म दे सकते थे। शायद हमारी जानकारीमें अन्य कोई व्यक्ति गांधीजीकी तरह इतने विभिन्न प्रकारके मनुष्यों और प्रतिभाशाली व्यक्तियोंको अपने चारों तरफ इकट्ठा करने या उन्हें एक साथ रखनेमें समर्थ नहीं हुआ। पंडित नेहरूने अपनी अनोखी शैलीमें

लिखा है 'हमारा एक-दूसरेसे सवथा भिन्न लोगोका शभुमेला था। हमारी पष्ठभूमिया, हमारी जीवन प्रणालिया और हमारी विचारधाराए सब कुछ भिन्न थी। परन्तु हमने एक सामाय उद्देश्यकी पूर्तिके लिए ऐस नताक साथ अपना विकास किया, जिसे (हम) अपने विभिन्न दष्टिकोणासे एक महान और भव्य विभूति समझत थे।'[5]

उदाहरणाथ, गाधाजीके निस्टके लोगामें घनश्यामदास बिडला जस चतुर पूजीपति और व्यवसायी थे पडित नेहरू जसे बुद्धिवादी और क्रान्तिवादी थे राजाजी जसे सूक्ष्मबुद्धि और प्रतिभाशाली वकील थे, डा० राजेद्रप्रसाद जस मानवतावादी और देशभक्त थे, मौलाना अबुल्कलाम आजाद जसे प्रगाढ पडित और धमशास्त्री थे मरहूम डा० असारी और हकीम अमजल खा — अपन अपने क्षत्रमे दाना ही अत्य त प्रतिभाशाली थे — जसे सफल चिकित्सक थे मातृतुल्य वात्सल्य बरसानेवाली सरोजिनी नायडू जसे रगीन व्यक्तित्ववाले लोग थे और सरदार वल्लभभाई जसे लौहपुरुप थे।

ये लोग अपने अपने क्षेत्रमे स्वय महान थे। इनके मन और इनक हृदय पर गाधीजीने जो अनोखा प्रभाव जमाया था उसका क्या रहस्य था? व गाधीजीको अपनेमे सव श्रेष्ठ और अपना ही एक उत्तम अग क्या समझते थे?

इसका रहस्य गाधीजीके गहरे और विविध यथायवादमें था जिसके कारण ये सब उनकी ओर आकर्षित हुए थे। इसका रहस्य उनके व्यवहार कौशल गहरी सहानुभूति कोमलता और व्यक्तिगत आकपणम भी था, जो इन सबको एक साथ बाध रखते थे। उदाहरणके लिए घनश्यामदास बिडला गाधीजीकी ओर इसलिए आकर्षित हुए थे कि उन्हे गाधीजीमें एक ऐसा ईश्वर-परायण व्यक्ति मिला जो सासारिक मनुष्य भी था और जिसमे उन्होने व्यक्तिगत शुद्धताके अपने आदशको मूर्तिमन्त हुआ देखा। क्रातिकारियोने उन्हे अपनेस भी अधिक सपूण क्रातिकारी पाया जिनमें युद्धका दढ सकल्प और साहस था, खतराका हसते हसते सामना करनेकी वत्ति थी और प्रतिकारकी अजय भावना थी। गाधीजीके इन गुणाके सामने क्रातिकारियाको अपने साहसिक काय बच्चोके खेल जसे मालूम होते थे। सुसस्कारी और बुद्धिवादी पडित नेहरूको गाधाजीके प्राणवान व्यक्तित्व और जीवनकी पूण कलामयताने मोहित किया था। एक और राजनीतिज्ञ पडित नेहरूके पिताजीने एक बार कहा था मुझे गाधीजीकी आध्यात्मिकतामें विश्वास नही है और न भविष्यमें कभी होगा। मने उनस कह दिया है कि कमस कम इस जीवनमें तो मेरा ईश्वरमें कभी विश्वास नही होगा। परन्तु हम यह देखत ह कि राजनीतिमें गाधीजी हमारे ही खेलमें हमें हरा देते ह! देशबन्धु चित्तरजन दासको गाधीजीमें भारतीय स्वाधीनताके लिए ऐसी उत्कट समपण भावना और आवश्यकता होने पर उसके लिए अपनका

मिटा देनेकी ऐसी तत्परता दिखाई दी, जो उनकी अपनी समर्पण-भावना तथा भारतकी स्वाधीनताके लिए अपने आपको मिटा देनेकी तत्परतासे कही बढी-चढी थी। मौलाना साहबको गाधीजी अपने जैसे एक गहरे धार्मिक विचारक और पूर्वी सस्कृति तथा परपराके उत्कट प्रतिनिधि मालूम हुए। मौलाना स्वय अपने व्यक्तित्व द्वारा इन दोनोका उच्च प्रतिनिधित्व करते थे। उन्होने कुरानकी शोधमे जिस विशाल दृष्टिकोणको मूर्त किया है, वही दृष्टिकोण उन्हे गाधीजीमे दिखाई दिया। राजाजीने देखा कि गाधीजीमे विचारोकी स्वच्छता और स्पष्टता है, किसी बातको जल्दी समझ लेनेकी अद्भुत क्षमता है, विरोधीकी बातकी कदर करनेकी शक्ति है और कानूनकी ऐसी सूक्ष्म और वेधक दृष्टि है, जिसके सामने पुरानी परपराके कानूनी महापडित भी लज्जित हो जाते थे। डॉक्टर राजेन्द्र-प्रसादको उनमें आदर्श नम्रता और मानव-सेवाकी उत्कट वृत्तिके दर्शन हुए। डॉक्टर असारीको अपने समकालीन अनेक प्रसिद्ध डॉक्टरोकी तरह, गाधीजीमे स्वास्थ्य और रोगके बारेमे अपने ही जैसी वैज्ञानिक और तटस्थ प्रयोगात्मक दृष्टिवाले तथा अपनी 'नीम-हकीमी' द्वारा — डॉ० असारी गाधीजीके कुदरती उपचारोके प्रयोगको मजाकमे नीम-हकीमी कहते थे — डॉक्टरी चिकित्साकी पाठ्यपुस्तकोके सिद्धान्तोको गडबडीमे डाल देनेवाले और झूठे सिद्ध करनेवाले एक डॉक्टरके दर्शन हुए थे। श्रीमती सरोजिनी नायडूकी कवि-प्रतिभाने गाधीजीमे एक ऐसे 'कार्यरत कवि'को पाया, जो एक प्राचीन और गौरवमय राष्ट्रका उद्धारक था — जिसे उसने सीना तानकर और सिर ऊचा रखकर चलना सिखाया — और जिसके भीतर उन्हीके जैसा कोमल और वात्सल्यपूर्ण हृदय था। अन्तमे ब्रिजके खिलाडी और निरन्तर सिगरेट फूकनेवाले बैरिस्टर वल्लभभाई पटेलको — जो अहमदाबादके अपने 'भजिया क्लब'के एकान्त कोनेमे बैठकर भारतके राजनीतिक दृश्य पर नास्तिककी वृत्तिसे दृष्टि घुमाते रहते थे — महात्मामे ऐसे राजनीतिक नेताके दर्शन हुए, जो बात करनेवाला नही किन्तु कार्य कर दिखानेवाला था और जो किसी कामको एक बार हाथमे लेनेके बाद उसे पूरा करके ही दम लेता था। इसलिए ये सब लोग गाधीजीके दास बन गये। और बादके वर्षोमे जब अपने भिन्न भिन्न स्वभावोके कारण और भिन्न भिन्न परिस्थितियोमें कार्य करना जरूरी होनेके कारण आचरणमे गाधीजीके सिद्धान्तो पर टिके रहना उनके लिए अधिकाधिक कठिन बनता गया, तब गाधीजीके नैतिक और बौद्धिक नेतृत्वसे, और इससे भी अधिक गाधीजीकी व्यावहारिक बुद्धिमत्ताके नेतृत्वसे, पिण्ड छुडाना उनके लिए कठिन — नही, लगभग असभव हो गया।

गाधीजी मानते थे कि वे अन्य मानवोकी तरह धरतीके सामान्य मानव है और उन्हीकी तरह दोषो और दुर्बलताओके पुतले है। इसलिए दूसरोके दोष

देखनेमें उन्हें दर लगती थी। व अपने साधनाके बारेमें कभी शिकायत नहीं करते थे। व मानव-स्वभाव जसा है उसीको स्वीकार करके चलते थ। उन्होंने पशुबलके उपयोगका त्याग कर दिया था, इसलिए उन्हें मानवकी मनोवृत्तिके रहस्योंमें गहरे गोते लगाने पडते थे और मानव-हृदयके विविध तारों पर अधिकार प्राप्त करना पडता था। और इस कारण व हमारे युगके सबसे बड़े मानव निर्माता बन गये थे।

उनकी बातका हर किसी पर गहरा प्रभाव इसलिए पड़ता था कि व अपने साधनोंका कभी दुरुपयोग नहीं करते थे। सनिक तानाशाह गौरव प्राप्त करनेके लिए अपने सिपाहियोंको तोपकी खुराक बना लेता है। गांधीजी कभी किसीसे ऐसा काम नहीं लेते थे जो स्वयं उस आदमीके लिए सबसे अधिक हितकर न हो। गांधीजी अपने साधनोंका उपयोग इस प्रकार करते थे कि उनके शीतरके उत्तम गुणोंका पूर्ण विकास हो और वे दिनादिन अधिक शक्तिशाली और उदात्त बनें।

जो बलिदान करनेको व स्वयं तैयार नहीं होते थ, वह दूसरोंसे व कभी नहीं कराते थे। अपनी दुबलताओंके बारेमें वे जितने असहिष्णु थे उतने ही दूसरोंकी दुबलताओंके विषयमें सहिष्णु थे। जिस कठोर मार्गसे उन्होंने अपने आप पर नियंत्रण प्राप्त किया था उसे याद करके व दूसरे लोगोंकी दुबलताओंको सहन करते थे। यह जानते हुए कि मानव-स्वभावका अपने बारेमें कितना पक्षपात हो सकता है उन्होंने यह सिद्धान्त बना लिया था कि हमें स्वयं अपने छोटे दोषोंको पर्वत जितने बढ़ाकर और दूसरोंके बड़े दोषोंको राई जितने घटाकर देखना चाहिये। इसे वे 'अतिशयोक्तिका धर्म' कहते थे। व न्याय परायण रहनेके लिए जान-बूझकर अपने विरोधियों और अपने साथ मतभेद रखनेवालोंके प्रति पक्षपात करनेकी कोशिश करते थे।

विरोधीके साथ इस प्रकार आध्यात्मिक तादात्म्य साध लेनेके कारण उन्हें यह शक्ति प्राप्त हो गई थी कि वे किसीका जी दुखाये बिना कटुसे कटु सत्य भी कह सकते थे और कठोरसे कठोर आध्यात्मिक 'शल्यक्रिया' करके भी विरोधीका सहर्ष पूरा सहयोग प्राप्त कर लेते थे। जब साम्प्रदायिक उपद्रवोंके दिनोंमें जघन्य अपराध करनेवाले बहुतसे लोगोंके साथ उन्हें निबटना पडता था, तब यह चीज उनके लिए बडी सहायक सिद्ध हुई थी।

गांधीजी अहिंसक पद्धतिसे काय करते थे इस बातका उनके साधनोंके चुनाव पर असर पडता था। उनमें बालक और अपढ स्त्रियां भी थीं, बूढ़ों और बीमारोंका भी समावेश होता था। उन्हें यह पता लग गया था कि अहिंसा तुच्छ दिखाई देनेवाली वस्तुओंके द्वारा उत्तम रूपमें प्रगट होती है। और व यह दुहराते कभी नहीं थकते थे कि उनका अपना जीवन एसी चीजोंसे बना

हुआ है, जो अपने आपमे साधारण और छोटी दिखाई देती है। यदि सत्याग्रह छोटी छोटी चीजोको सगठित करनेकी ओर ध्यान न दे, तो उसका उपयोग जन-साधारण नही कर सकते। उनके तमाम सामूहिक आन्दोलनोमे स्त्रिया और बच्चे ही उनके हार्द और खमीरका काम करते थे और उन्हीसे आन्दोलनोको दिनोदिन बढती हुई शक्ति मिलती थी। कोई आश्चर्य नही यदि उस समयकी अत्यावश्यक समस्याओमे दिन-रात उलझे रहने पर भी उन्हे स्त्रियो और बच्चोकी समस्याओ पर विचार करनेका समय मिल जाता था और उनके आश्रयमे जिस कोढी (परचुरे शास्त्री) ने शरण ली थी उसकी अपने हाथसे मालिश करनेका भी समय वे निकाल लेते थे। और जब कुछ आश्रमवासियोने कुष्ठरोगीको अपने बीच रखने पर आपत्ति उठाई, तो उन्होने कहा, "आश्रममे कोढीके लिए यदि स्थान नही है, तो मेरे लिए भी नही हो सकता!"

गाधीजीने दुनिया देखी थी, वे दुनियामें आखे खोल कर रहते थे और कडीसे कडी अग्नि-परीक्षाओमें से गुजरे थे। किसी न किसी तरह उन्हे इसका पता लग गया था कि वे मानव-प्राणियोके भीतरसे उत्तम गुणोको बाहर ला सकते है और इससे ईश्वर तथा मानव-स्वभावमें उनकी श्रद्धा बनी रही।

अन्य लोगोने केवल क्रातिकी बाते ही की थी, गाधीजीने क्राति करके दिखा दी। जब उनका जोश ठडा पड़ गया और बोलते बोलते उनके गले थक गये, तब वे गाधीजीके पास आये और गाधीजीने उन्हे बताया कि काम कैसे किया जाता है। उन लोगोने गाधीजीके भीतरके विद्रोहीकी तो प्रशसा की, लेकिन वे गाधीजीकी आत्म-समर्पणकी क्षमता और शून्यवत् बननेके उनके अथक प्रयत्नकी कदर न कर सके — क्योकि उनकी अपरिपक्व दृष्टि इस चीजको ग्रहण करनेमें असमर्थ थी — यद्यपि इन्ही दो गुणोसे गाधीजीकी आक्रमण करनेकी शक्ति पैदा होती थी।

८

गाधीजीके लिए ब्रिटिश कैबिनेट-मिशनके साथ बातचीत करना भी सत्यकी अनन्त शोधका ही एक बड़ा कार्य था। अपनी कल्पनाके सार्वजनिक जीवनको वे मनुष्यके उच्चतम आध्यात्मिक गुणोकी परीक्षा तथा साधनाका क्षेत्र समझते थे। उनका सत्याग्रह केवल वरदान-मात्र नही था, परन्तु कर्मका साधन था। मनुष्यका अपने कर्म पर ही अधिकार है, उसके फल पर नही। परन्तु यदि उसके कर्म उसके भीतरके सत्यको ही शुद्ध रूपमे प्रगट करते है, तो अन्तमे इहलोक और परलोक दोनोमें उसका श्रेय ही होता है। गाधीजी दोनो लोकोमे कोई भेद नही करते थे — "सब लोक एक ही है।" उनका दावा यह था कि इहलोक या परलोककी ऐसी कोई समस्या नही है, जिसका सत्य और अहिंसाकी दृष्टिसे हल न मिल सके। जब कभी पेचीदा राजनीतिक

वार्ताओंके बीच कोई चक्करमें डालनेवाला प्रश्न पैदा हो जाता था और किसीको उसका हल नहीं सूझता नहीं था, तब वे सत्यरूपी ईश्वरकी ही आराधना करते थे और वह सदा उनकी सहायता करता था।

आजकलकी कूटनीतिमें खेलके कुछ नियम स्वीकार कर लिये गये हैं। वह सब चतुराईकी लड़ाई होती है। उसके खिलाड़ियोंसे यह आशा रखी जाती है कि वे इस सिद्धान्तको मान चुके हैं कि धोखा देनेमें जितना आनन्द है, उतना ही धोखा खानेमें भी है। यदि एक अपने विरोधीको सफलतापूर्वक मात दे देता है या उससे खुद मात खा जाता है तो यह सब खेलका ही एक भाग होता है। इसलिए कोई शिकायत नहीं होती। इसके सामने गांधीजीने अपनी विशिष्ट कूटनीति सत्यकी कूटनीतिको खड़ा किया। उसमें अपनी चतुराईका पूरा प्रयोग करनेकी मनाही नहीं थी। वे भी रियायतें देते थे समझौते करते थे और अनुकूलताओंका खयाल करते थे, परन्तु अपने सिद्धान्तोंको हानि पहुंचाये बिना। वे भी लोगोंसे उनके मुंह पर अप्रियसे अप्रिय सत्य कहते थे परन्तु इस ढंगसे कि उनका जी न दुखे। उनका उद्देश्य कभी विरोधीको मात करनेका नहीं होता था। उनका सत्याग्रह नैतिक ज्यु-जित्सु (कुश्ती) नहीं होता था बल्कि इसका उलटा होता था। वे विरोधीको सत्यकी खोजमें अपना साथी बना लेते थे। उनका लक्ष्य विरोधीकी शक्तिको नष्ट करना नहीं होता था। वे उसकी शक्तिका परिवर्तन करके उसे विकसित करते थे। तर्कमें विरोधीको अपने बौद्धिक प्रहारोंसे हराने या दबा देनेकी कोशिश वे नहीं करते थे बल्कि यह दिखा कर कि उसकी दृष्टिमें क्या दोष है, वे उसका हृदय जीत लेते थे। ऐसा करनेमें कभी कभी उन्हें अपनी ही भूलका पता चल जाता था। इससे विरोधीका मन विरोध करनेके बजाय ग्रहणशील बननेकी ओर झुकता था। अन्तमें 'विजेता या विजित'की भावना बाकी ही नहीं रहती थी। दोनों पक्षोंको सत्यका पता लगने और उसकी विजय होनेसे एकसा रोमांच और प्रसन्नता होती थी।

गांधीजी स्वभावसे इतने सच्चे थे कि — जैसा एक बार श्री लॉरेन्स हाउसमनने कहा था — कुछ लोग उन पर सन्देह करने लगते थे। इतने सरल और निखालस थे कि कुछ लोगोंको आश्चर्यमें डाल देते थे। इन गुणोंके कारण कभी कभी उनके विरोधियों और मित्रों तकके लिए बहुत परेशान करनेवाली स्थिति खड़ी हो जाती थी। उदाहरणके लिए, वे हर आदमीकी बातका विश्वास करते थे। इससे उनके सामने झूठ बोलना बहुत कठिन हो जाता था। लेकिन अगर कोई उनके सामने ऐसी बात चलाना चाहता या जो सच्चे दिलसे न कही गई हो तो उसे चालका उनका पनी दृष्टि फौरन् पकड़ लेती था। इससे भी बड़ी बात यह थी कि वे अपनी

शका वहुत ही विनोदपूर्ण ढगसे परन्तु स्पष्ट शव्दोमे, और कभी कभी तो सामनेवालेको विलकुल धराशायी कर दे इतने अधिक स्पष्ट शव्दोमे, प्रगट कर देते थे। विरोधी यह समझ कर उस शकाका विरोध करता था कि कूटनीतिक भाषाके ऐसे आडम्वरको मूर्खके सिवा कोई गम्भीर नही मानेगा। गाधीजी इस विरोधको तुरन्त अक्षरश. मान लेते थे और छल करनेवाला आदमी उस समय तो यह सोचकर मन ही मन खुश हो जाता था कि इतनी आसानीसे वच गये। परन्तु हलके मनसे उसने जो वात स्वीकार की हो उसके तर्कशुद्ध फलितार्थ जव गाधीजी ऐसी उत्कट नैतिक भावनासे उसके सामने रखते —जो उसकी आत्माकी गहराईमे छिपे असत्यको जलाकर भस्मीभूत कर डाले—तव उसे तुरन्त समझमे आ जाता कि उसने कठिनाईका पूरा विचार किये विना वात मुहसे निकाल दी है। इसलिए राजनीतिज्ञ गाधीजीको ऐसा सन्त वताते थे, जो राजनीतिमे अपना अध्यात्मवाद घुसेड कर उसे विगाड देता है, और धार्मिक लोग उन्हे 'छिपा राजनीतिज्ञ' कहते थे। किन्तु उनमे ये दोनो ही वातें नही थी। लेकिन चूकि सत्य सवसे ऊची वुद्धिमत्ता है, इसलिए उनके कार्योमे आम तौर पर ऊचीसे ऊची कक्षाकी राजनीतिज्ञता रहती थी। और जव वे यह कहते थे कि वे अपने देश या धर्मके उद्धारके लिए भी सत्य या अहिंसाकी कुर्वानी नही करेगे, तो उसका अर्थ यही होता था कि "इन दोनोमे से एकका भी उद्धार इस तरह नही हो सकता।"[१६] उनके नैतिक निर्णय विना सोचे-विचारे नही किये जाते थे। अपनी परम श्रद्धाके वावजूद वे अपने तमाम कार्योको व्यावहारिक कसौटी पर कसनेका आग्रह करते थे। इतनी ही वात थी कि जव और लोग वुद्धि जहा हार जाती वही रुक जाते थे, तव गाधीजी अपनी श्रद्धाके वल पर वहासे आगे वढते थे।

गाधीजीका जीवन अविभाज्य और सम्पूर्ण था। उनकी सारी प्रवृत्तिया एक-दूसरेमे गुथी हुई थी। उन सवकी जड उनकी सत्यकी लगनमे होती थी। व्रिटिश राज्यके विरुद्ध उनके रोषपूर्ण विद्रोहमें भी उनकी गहरी नैतिक भावना ही थी। उन्हे यह देख कर गहरा आघात लगता था कि भारतके ४० करोड मनुष्य व्रिटिश शासनके वुरे असरसे इतने ज्यादा पतित हो गये हैं कि जो वे अनुभव करते हैं उसे कह भी नही सकते और उनका कायरतापूर्ण जीवन एक जीता-जागता असत्य तथा ईश्वरके इनकार जैसा वन गया है। गाधीजीकी वहुत वडी कार्यशील शक्तिका स्रोत थी उनकी उत्कट सत्यनिष्ठा तथा वह महत्त्व जो वे 'नैतिक स्वतत्रता'को देते थे। उनकी सत्यकी सतत साधनासे उन्हे विचारोमे इतनी स्पष्टता, व्यौरे पर इतना प्रभुत्व और ऐसी 'अचूक सूझ-वूझ' प्राप्त हो गई थी कि उसे देख कर पुराने विचारके घुटे हुए कूटनीतिज्ञो और राज-

नीतिपरक मनमें भी ईर्ष्या और प्रशंसाके भाव पैदा हुए थे। उस सत्यकी आराधनासे उनमें लगभग छठी इन्द्रिय जैसा विलक्षण अन्तर्दृष्टि आ गई थी। उससे वे साधारण लोगोंकी दृष्टिमें न आनेवाले असत्य और भ्रष्टाचारको देख लेते थे।

सत्य उनके लिए कोई निर्विवाद सिद्धान्त या प्राणहीन नियम नहीं था, बल्कि एक बहुविध लचीला और निरन्तर विकासशील सजीव तत्त्वबोध था। इससे उनका व्यक्तित्व सम्पन्न बहुरूपी और परस्पर विरोधी गुणोंसे पूर्ण हो गया था, जिससे जड़ दिमाग रखनेवाले और ऊपर ऊपरसे देखनेवाले लोग कभी चक्करमें पड़ जाते थे और कभी चिढ़ भी जाते थे। उदाहरणके लिए वे सादगीको मानते थे परन्तु फूहड़पनको नहीं मानते थे। उनकी सादगी इतनी सीधी-सादी बात नहीं थी जितनी वे बताते थे। वह एक अत्यन्त अस्पष्ट कला थी। सम्पूर्ण कलात्मकतासे उसमें अनोखा आकर्षण पैदा हो गया था। ये 'नंगे फकीर' वाइसरायों राजाओं और राज्याध्यक्षोंके साथ स्वाभाविकता अनुभव करते थे। वे भौतिकवादकी निंदा करते थे परन्तु करोड़ों लोगोंको प्रारम्भिक भौतिक सुविधाएं प्रदान करानेके लिए सबसे अधिक परिश्रम करते थे और यहां तक कहते थे कि भूखेके लिए रोटी ही ईश्वर है। वे सब लोगोंसे कहते थे कि सत्य-पालनमें जो भी कष्ट और दुःख भुगतने पड़ें उनके लिए हम तैयार रहें, परन्तु कष्टको कष्टके लिए ही सहन करनेको कभी उन्होंने धर्म नहीं बनाया था। वे खतरेका सामना करते हुए जीनेमें तो विश्वास करते थे, परन्तु खतरेसे भरा जीवन जीनेमें नहीं। वे कायाको कष्ट देनेमें विश्वास करते थे परन्तु उनकी मानसिक रचनामें शहीद बननेकी कोई ग्रंथि नहीं थी। सच तो यह है कि वे *शहीद बननेकी इच्छाको अनैतिक और पाप समझते थे,* क्योंकि यह इच्छा किसी न किसीका अधःपतन होनेसे ही पूरी हो सकती है।

गांधीजी अपने समयके सबसे बड़े लोकतंत्रवादी थे परन्तु दूसरी गोलमेज परिषदमें खुदको कांग्रेसका एकमात्र प्रतिनिधि बनानेकी या सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें कांग्रेसका सर्वाधिकारी बनानेकी सूचना करनेमें उन्हें कोई संकोच नहीं हुआ।

और उनके इस सर्वाधिकारके पीछे प्रेम और समझाने-बुझानेकी शक्तिके सिवा अन्य कोई बल नहीं था। और सर्वाधिकारी होनेके लायक सबसे योग्य व्यक्ति वे ही थे क्योंकि उन्हें किसी पर भी अपना हुक्म चलानेसे घृणा थी।

उन्होंने अपने आपको *पददलित और अत्याचार-पीड़ित मानव-समाजका* संरक्षक बना लिया था, इसलिए दुर्बल दया भावनाके प्रति उन्होंने अपना हृदय फौलाद जैसा बना लिया था। वे दयालु बननेके लिए निर्दय हो सकते थे, क्योंकि वे जानते थे कि इस कठोर और क्रूर संसारमें दुर्बलताका कोई स्थान नहीं

है। और इसलिए जहा अहिंसा उनके जीवनके लिए प्राणोके समान थी वहा वे शान्त चित्तसे यह वात भी कह सकते थे कि 'खूनकी नदिया' वहाकर भारत आजाद वने — खून विरोधीका नही, परन्तु अपनी ही निर्दोष सतानोका।

९

ब्रिटिश सरकारके कैविनेट-मिशनके साथ चल रही वार्ताओमे जव नाजुक स्थिति खड़ी हुई तव दो वार कार्य-पद्धतिके दो तत्त्वज्ञानोमे सघर्ष जमा . (१) 'साधन और साध्य' का तत्त्वज्ञान, जिस पर गाधीजीका जीवन रचा गया था, (२) ब्रिटिश सरकारके कैविनेट-मिशन द्वारा प्रस्तुत अनुभवजन्य ब्रिटिश तत्त्वज्ञान।

गाधीजी मानते थे कि यदि हम साधनोको विशुद्ध रख सकें, तो साध्य अपने-आप विशुद्ध हो जायगा। कैविनेट-मिशन इस सिद्धान्त पर काम करता था कि कभी कभी सिद्धान्तोके साथ भी अपना उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए समझौते करने पडते हैं और दो बुराइयोमे से 'छोटी वुराई' को पसन्द करना पडता है। जव कैविनेट-मिशन और समस्त भारतीय दल दुविधामें पड गये, तो गाधीजीने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको 'दि अननोन' (अज्ञात) शीर्षकसे 'हरिजन' के लिए लिखे अपने लेखकी एक पेशगी नकल भेजी

> कुछ विद्वान ईश्वरका वर्णन अज्ञेय वताकर करते हैं, कुछ उसे अज्ञात कहते हैं और कुछ 'नेति नेति' कहते हैं। .
>
> जव मैंने कल प्रार्थना-सभामें श्रोताओके सामने कुछ शव्द कहे थे तव मै इससे अधिक कुछ नही बोल सका कि सव लोगोको उस महान अज्ञात शक्तिसे मिलनेवाले बल और मार्गदर्शनके लिए हृदयसे प्रार्थना करनी चाहिये और उस पर भरोसा रखना चाहिये। जो महान भारतीय नाटक आप सवके सामने हो रहा है, उसमे खडी होनेवाली कठिनाइयो पर सव दलोको विजय प्राप्त करनी चाहिये। सवको अज्ञात शक्ति पर निर्भर रहना चाहिये, क्योकि वह अकसर मनुष्यकी बुद्धिको चकित कर देती है और उसकी वनाई हुई झूठी योजनाओको पल भरमें उलट देती है। ब्रिटिश दलका दावा है कि वह अज्ञात ईश्वरमे विश्वास करता है। . . .
>
> मेरा आशावाद तो अदम्य है, परन्तु कमसे कम राजनीतिक भाषामे मैं निश्चित रूपसे ऐसा नही कह सकता कि मैं यह लिख रहा हूं तब सब कुछ सुरक्षित है। इसलिए मैं इतना ही कह सकता हू कि यदि सव दलोके उत्तम प्रयत्न होते हुए भी विपरीत या प्रतिकूल घटना घटे, तो मै सवसे कहूगा कि वे मेरे इस कथनमे शरीक हो जायें कि यह अच्छा ही हुआ और अरक्षामे ही सुरक्षा है।[१७]

इसका उत्तर लार्ड पथिक-लॉरेन्सने यह दिया "मेरी भी यह प्रबल भावना है कि जहा मुझे अपनेसे बाहरकी शक्तिया पर अवलम्बित रहना पड़े वहा मुझे दवकी — जिसे आप अनात शक्ति कहते ह — इच्छाको स्वीकार करके सन्तोष करना चाहिये और कभी कभी जोसनके शब्दोमें परिणाम हमारी शक्तिके बाहर हो सकता है। लेकिन जहा मेरे अपने निर्णयकी बात आती है वहा उन सबके प्रति मेरी गभीर जिम्मेदारी खड़ी होती है जिन पर उसका असर होनेवाला है। मुझे अपना निर्णय सही ही करना चाहिये।"[१६]

लेकिन लॉर्ड पथिक-लॉरेन्सने यह सिद्ध करनेकी कोशिश की कि वे जो रवया अपना रहे ह उसमें श्रद्धाका निषेध नही है बस ही जसे गाधीजीकी श्रद्धामें बुद्धिके उपयोगका निषेध नही है 'क्या मने कभी आपको वह कहानी बताई है जिसमें अन्यायके पीछे न्यायके रहनेमें गहरा मानव विश्वास प्रगट किया गया है? किसी किसानको किसी बातकी चिन्ता थी। उसे पादरीने कहा, 'भाई, भगवान पर भरोसा रखो। किसानने कहा, नही मुझे भगवान पर भरोसा नही है। उसने दो वर्ष हुए मेरा सूअर खो जाने दिया था। पिछले साल उसने मेरा घर जल जाने दिया था। पिछली गर्मियोमें उसने मेरी पत्नीको छीन लिया था। नही म भगवान पर भरोसा नही करता। परन्तु म आपको बता दू कि म किस पर भरोसा करता हू। ईश्वरके ऊपर भी कोई शक्ति है — जो उसके कान खीच लेगी, अगर वह बहुत ज्यादती करेगा'

परन्तु इन दोनो वृत्तियोमें जो मौलिक भेद है उसे सब समझ सकते ह। यदि श्रद्धा 'अपेक्षित वस्तुओका सार है, अदृश्य चीजोका प्रमाण है" तो अन्यायके पीछे रहनेवाले न्याय' में विश्वास होनेके कारण अच्छी वस्तुकी प्राप्तिके प्रयत्नमें सदिग्ध वस्तुके साथ समझौता नही होना चाहिये। कारण मर्त्य मनुष्योको अपने कर्मों पर ही अधिकार दिया गया है कर्मोंके फल पर नही। इसलिए श्रद्धाको वहा आना पड़ता है जहा बुद्धि काम नही देती, ताकि उचित साधना पर हम सदा डटे रहें और अरक्षिततामें सुरक्षितता समझें — यदि कोई 'असुरक्षित' घटना सारी मानव दूरदर्शिता और सावधानीके बावजूद हो जाय। सत्य वस्तु असुरक्षित' मालूम होती है इसलिए उसके बजाय कार्यसाधक वस्तुको उसका स्थान नही दिया जा सकता। जसा प्रोफसर जक्सने कहा है जहा निश्चितता समाप्त होती है वही नतिकता आरम्भ होती है। दुर्भाग्यसे अनुभवसिद्ध कार्यसाधकताकी वृत्ति विजयी सिद्ध हुई। उसका परिणाम हम जानते हैं। यदि भारत और ब्रिटेनके प्रश्नके निबटारेके लिए गाधीजीकी पद्धति आजमायी जाती तो भारतीय इतिहासका क्रम क्या होता यह ससारकी सभावनाओमें हमेशा अनुमानकी वस्तु ही रहेगी।

आठवां अध्याय

जटिल और उलझी हुई कहानी

१

गाधीजी ब्रिटिश सत्ताके साथ अहिंसक असहयोग और सविनय अवज्ञाके द्वारा लड़े थे। जब दमन चरम सीमा पर था तब उन्होने रचनात्मक अहिंसाके द्वारा सग्रामको निराशा और पराजयसे बाहर निकाल कर उसे टिकाये रखा। अब उसे सधिवार्ताके स्तर पर जारी रखना था। साधन वे ही थे — सत्य और अहिंसा, और लक्ष्य भी वही था — विरोधीका हृदय-परिवर्तन, जिसके लिए स्वय कष्ट उठा कर रास्ता तैयार किया गया था। पहले मुख्यत हृदयसे अपील की गई थी, ताकि सहानुभूति जाग्रत हो — जो समझदारी पैदा करनेकी दिशामें पहला कदम था। अब अपील दिमागसे करनी थी। यम-नियम भी इसके लिए वही थे जो सत्याग्रहकी लडाईके समय जरूरी थे — अर्थात् परिस्थितिके अनुरूप बुद्धिमत्ता, लचीलापन, आत्म-सयम, धैर्य, सहिष्णुता और कर्म-कौशल, और सबसे अधिक सर्वव्यापक प्रेम।

कैबिनेट-मिशनके तीनो सदस्य — लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स, सर स्टैफर्ड क्रिप्स और श्री ए० वी० एलेक्झेंडर — २३ मार्च, १९४६ को कराचीके हवाई अड्डे पर पहुचे और दूसरे दिन दिल्ली आये। १ से १७ अप्रैल तक वे भारतीय प्रतिनिधियोंसे मुलाकात करनेमें लगे रहे। वे ४७२ नेताओसे १८२ बैठकोंमें मिले और उन्होने यह प्रयत्न किया कि विभिन्न दलोंमें "अधिकसे अधिक सहमति हो जाय।"

आरम्भ उन्होंने अच्छा किया। नौकरशाहीकी प्रतिष्ठा और अंग्रेजोके दूर दूर रहनेके अहकारको छोड कर उन्होंने भारतीय नेताओंके साथ व्यक्तिगत स्तर पर सम्पर्क स्थापित किया। पहले सप्ताहके बाद ऐसी आशा अधिकाधिक होने लगी कि जल्दी ही केन्द्रमें अन्तरिम राष्ट्रीय सरकार स्थापित हो जायगी। परन्तु यह आशा असामयिक सिद्ध हुई। उसका पूरा होना ब्रिटिश सरकारकी इस तैयारी पर निर्भर था कि जिस किसी दल पर उसका विश्वास हो और जो दल शासनका भार अपने कधो पर लेनेको तैयार हो उसे सत्ता सौंप दी जाय। वह इस बातको टालना चाहती थी इस कारण ही १९४५ की शिमला-वार्ता असफल रही थी। ब्रिटिश लोकसभामें श्री एटलीकी घोषणासे लोगोको यह विश्वास हुआ था कि पुराना इतिहास दोहराया नही जायगा।

अप्रलके दूसरे सप्ताहमें कबिनेट मिशनके अधिकारियोंमें स एक श्री वुडरा ब्याट गाधीजीसे मिले। उन्होंने गाधीजीसे पूछा आपको ऐसा लगता है कि हम आपकी पीठ परसे उतर रहे हं ? "

मुझे लगता है कि आप हमारी पीठ परसे उतरेंगे। परन्तु आपमें इसके लिए आवश्यक बल होना चाहिये।

श्री व्याटने मुस्लिम लीगकी पाकिस्तानकी मागसे पदा होनेवाली कठि नाईका जिक्र किया। मान लीजिये कि जिसे हम न्यायपूण हल समझें उस भारत पर थोप कर हम चले जाय तो ?

'तो सब कुछ अस्त-व्यस्त हो जायगा।"

"तो क्या उसे भारतके निणय पर छोड दिया जाय ?

"हा। काग्रेस और लीग पर छोड दीजिये। अपनी प्रतिभा और अग्रेजोंके सहयोगके बल पर जिन्नाने एक बलशाली सगठन बना लिया है जिसमें सब तो नही परन्तु देशके अधिकाश मुसलमान शामिल हं। मेरी सलाह है कि आप उन्हें आजमाइये और यदि आपको लगे कि वे सौदा नही निबटा सकते, तो काग्रेसको विश्वासमे लीजिये। परन्तु हर हालतमें अग्रेजोके आधिपत्यका अन्त हो जाना चाहिये।"

"और अग्रेजोके जानेके बाद क्या होगा ?

"कदाचित् पच फसला होगा। परन्तु रक्तस्नान भी हो सकता है। यदि भारतको म अपने रास्ते पर चला सका तब तो अहिंसासे समस्या दो दिनमें हल हो जायगी, नही चला सका तो अग्नि-परीक्षा लम्बे समय तक भी चल सकती है। फिर भी अग्रेजी राज्यमें आज भारतकी जो हालत है उसस बुरी हालत वह नही होगी। "

मान लीजिये कि हम अन्तरिम सरकारकी स्थापना करके चल जायें ?

बादमें यदि काग्रेस पाकिस्तानको स्वीकार कर ले तो यह उसकी जिम्मे दारी होगी।"

यह शुभारम्भ होगा। इस प्रकार यदि सारा भारत लीगके मातहत हो जाय तो भी कोई परवाहकी बात नही। वह जिनाकी कल्पनाका पाकि-स्तान नही होगा। तब भारतके समक्ष कोई ऐसी वस्तु होगी जिसके लिए जीना और प्राण निछावर करना साथक होगा।"

वतमान सरकारके स्थान पर हम किसे रखें ? '

' आप विधान-सभाके चुने हुए सदस्योको अपने प्रतिनिधि नामजद करनेके लिए कह सकते हं। मान लीजिये कि काग्रेसका भारी बहुमत होता है तो वह अन्तरिम सरकारके लिए नाम चुन लेगी। यदि काग्रेस लीगक साथ सम झौता कर सके, तो कोई कठिनाई नही होगी। परन्तु यदि जिन्ना अन्तमें

सरकारमे शरीक होना पसन्द न करे, तो कांग्रेसको और आपको डरना नही चाहिये। अथवा जैसा मैं कह चुका हू, आप जिन्नाको विधान-सभाके वर्तमान सदस्योमें से नामजद करने दीजिये।"

अन्तमें श्री व्याटने पूछा, "मान लीजिये कि मुस्लिम लीग जन-धनका विनाश आरम्भ कर देती है, तो क्या आप उसे जेल भेजेंगे?"

गाधीजीने उत्तर दिया, "मैं उसे जेलमे नही भेजूगा। परन्तु हो सकता है कि कांग्रेस लड़नेका निश्चय करे। तब वह साफ और शुद्ध लडाई होगी, न कि आजकी तरह मार कर भागनेकी कायरतापूर्ण लडाई होगी, और न एक अंग्रेजके बदले सौ आदमियोके प्राण लेनेकी लडाई होगी।"

किन्तु कैबिनेट-मिशन इस निर्णय पर पहुचा था कि कांग्रेस और लीगके परस्पर अनुकूल बननेके प्रयत्नके परिणाम-स्वरूप ऐसी स्थिति आ गई है कि वास्तवमे कांग्रेस जो रियायतें देनेको तैयार है या तैयार की जा सकती है, वे उस चीजसे बहुत भिन्न नही है जो मुस्लिम लीग चाहती है या काफी दबाव डालने पर मजूर कर लेगी।

सर गोपालस्वामी आयगरके साथ हुई बातचीतमे सर स्टैफर्ड क्रिप्सने कहा कि, "जहा समझौता करना ही पडता है, वहा मजबूतसे मजबूत पक्ष-वाले दलके लिए भी यह आवश्यक हो सकता है कि वह जिस चीजका उचित रूपमें अधिकारी समझा जाय उससे कम लेनेको तैयार हो, **ताकि उसके विरुद्ध निर्णय होनेकी संभावना न रह जाय।**"[1] (मोटे टाइप मैंने किये हैं।) क्या भारतीय इतिहासमे पहले भी ऐसा नही हो चुका है कि देशने अन्तमें उन निर्णयोको मान लिया, जिनसे उनकी घोषणाके समय किसी दलको प्रसन्नता नही हुई—उदाहरणार्थ, साम्प्रदायिक निर्णय?

सर गोपालस्वामीने कहा कि उस समय विरोध न करनेका कारण यह था कि निर्णय पर अमल करानेके लिए अंग्रेज मौजूद थे। बदली हुई परिस्थितियोमें उनके किसी निर्णयके सफलतापूर्वक कार्यान्वित किये जानेकी एकमात्र सम्भावना यह है कि वह गुणवत्ताकी दृष्टिसे उचित हो। यदि ऐसी ही बात हो तो क्या इससे जिन्नाका पाकिस्तान निरर्थक नही हो जाता?

सर स्टैफर्ड सहमत हुए कि जिन्नाका पाकिस्तान एक 'असम्भव विचार' है। लीगने भी इस बातको अच्छी तरह समझ लिया है। "जब मैं देखता हू कि कोई आदमी अपने विरोधियोकी निन्दा अधिक जोरशोरसे और अधिक हिंसक रूपमे कर रहा है, तब मैं सोचता हू . . कि वह मानने लगा है कि जिस उग्र पक्षकी वह हिमायत करता है उसके लिए उसे कोई आशा नही रह गई है।" उन्होने यह भी कहा "मैं आपसे यह कह दू कि मुस्लिम कन्वे-न्शनमें पिछले दो दिनोमें जो हिंसापूर्ण भाषण दिये गये है, उनके बावजूद

मुस्लिम समाजके प्रमुख प्रतिनिधि, अभी हम बात कर रहे हैं तब भी, जोरोंसे यह सोच रहे हैं कि वे अपनी प्रकाशित मांगोंको उत्तम ढंगसे कैसे नरम कर सकते हैं।'

सर गोपालस्वामीने सर स्टफर्डसे पूछा: तो क्या उस सूरतमें जिन्नाको उनके अत्यन्त उच्च स्थानसे नीचे उतार लानेका अधिक परिणामकारी मार्ग यह नहीं होगा कि कबिनेट मिशन जल्दीसे जल्दी उन्हें मोटे तौर पर यह इशारा कर दे कि इस बातकी संभावना नहीं है कि कबिनेट मिशन अथवा सम्राटकी सरकार पाकिस्तानकी मांग स्वीकार कर लेगी?

सर स्टफर्डने स्वीकार किया कि यह ज्यादा परिणामकारी होगा। परन्तु हमारी रायमें अभी ऐसा समय नहीं आया है कि अनौपचारिक रूपमें भी यह प्रगट कर दिया जाय कि हमारा अंतिम निर्णय क्या होगा — यदि हम ऐसा कोई निर्णय कर चुके हों तो भी।

इससे पर्याप्त संकेत मिल गया कि कबिनेट मिशन कौनसा मार्ग अपनानेका इरादा रखता था।

*

१७ अप्रलको कबिनेट मिशनने थोड़े आरामके लिए अपना कार्य स्थगित कर दिया और नेताओंके साथ हुई मुलाकातों और अनौपचारिक वार्ताओंके परिणामोंका सिंहावलोकन करनेके लिए वह ७ दिनकी छुट्टी पर काश्मीर चला गया। २४ अप्रलको वह दिल्ली लौटा और २७ अप्रलको लार्ड पेथिक-लॉरेन्सने कांग्रेस और मुस्लिम लीगके अध्यक्षोंके नाम लिखे एक पत्रमें सुझाया कि हमें 'मुस्लिम लीग और कांग्रेसके बीच समझौता करानेका एक और प्रयत्न करना चाहिये।

समझौतेके आधारके रूपमें उन्होंने एक योजना सुझाई। उसके 'मूलभूत सिद्धान्त" ये थे कि एक संघ-सरकार (यूनियन गवर्नमेंट) रखी जाय जो विदेशी मामलों प्रतिरक्षा और यातायात विभागोंका संचालन करे। प्रान्तोंके दो समूह होंगे। एक मुख्यतः हिन्दू आबादीवाले प्रान्तोंका और दूसरा प्रधानतः मुस्लिम आबादीवाले प्रान्तोंका। ये समूह (ग्रुप्स) ऐसे अन्य सब विषयोंका संचालन करेंगे जिनका प्रत्येक समूहके प्रान्त साथ मिल कर संचालन करना चाहेंगे। बाकी सब विषयोंका संचालन प्रान्तीय सरकारें करेंगी और शेष समूचे सार्वभौम अधिकार (सावरेन राइट्स) सब उनके पास होंगे। लार्ड पेथिक लॉरेन्सके पत्रमें यह भी कहा गया था कि यदि मुस्लिम लीग और कांग्रेस इस आधार पर बातचीत करनेको तैयार हों तो कबिनेट मिशनके साथ उनके सम्मेलनकी भी व्यवस्था (कदाचित् शिमलामें) की जायगी। इसके लिए

काग्रेस अध्यक्ष कृपा करके अपनी तरफसे वार्तालाप करनेके लिए चार व्यक्ति नियुक्त करके उनके नाम भेज दें।

काग्रेस इस वातके विरुद्ध थी कि साम्प्रदायिक ढग पर प्रान्तोके ऐसे समूह वनाये जाय, जिनमें से प्रत्येक समूहके लिए अलग विधान-सभा और प्रवध-तत्र हो। उसको इस वात पर भी आपत्ति थी कि प्रारम्भिक स्थितिमे किसी प्रान्तको एक विशेष समूहमे शरीक होनेके लिए वाध्य किया जाय। कांग्रेस-अध्यक्षने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सके पत्रके उत्तरमे यह लिखा, "किसी भी हालतमे किसी प्रान्तको उसकी अपनी इच्छाके विरुद्ध काम करनेके लिए विवश करना बिलकुल गलत होगा।"[२] उदाहरणके लिए, सीमाप्रान्तको, जो स्पष्ट रूपमे काग्रेसी प्रान्त है, काग्रेसके विरोधी समूहमें शामिल होनेके लिए क्यो वाध्य किया जाय? यदि प्रान्त चाहें तो समूहकी रचनाके विचारका काग्रेस त्याग नही करती। परन्तु उसे ऐसा लगता है कि यह एक ऐसा मामला है, "जिसे निर्णयके लिए सविधान-सभा पर छोड़ना ठीक होगा।"

कांग्रेस-अध्यक्षने यह भी लिखा: "आपने पत्रमे कुछ 'मूलभूत सिद्धान्तो' का उल्लेख किया है। परन्तु हमारे सामने जो आधारभूत प्रश्न है उसका आपने कोई उल्लेख नही किया है। वह प्रश्न है भारतीय स्वाधीनता और उसके परिणाम-स्वरूप भारतसे ब्रिटिश सेनाका हटना। यही एकमात्र आधार है जिस पर हम भारतके भविष्यकी या किसी अतरिम सरकारकी चर्चा कर सकते हैं। हम किसी भी दलके साथ भारतके भविष्यके वारेमें वार्ताए करनेको तैयार हैं, परन्तु हमे अपना यह दृढ विश्वास व्यक्त करना चाहिये कि जव तक कोई वाहरी शासक सत्ता भारतमें मौजूद रहेगी तव तक किसी भी वार्तामें वास्तविकता नही होगी।"

कैविनेट-मिशनने यह समझाया कि प्रस्तावित सम्मेलनके लिए निमत्रण स्वीकार करनेका अर्थ यह नही होगा कि जो शर्तें सुझाई गई हैं उन्हें पहले ही स्वीकार कर लिया गया है या उनका समर्थन किया गया है। इस पर काग्रेस-अध्यक्षने सम्मेलनमें उपस्थित होनेका निमत्रण स्वीकार कर लिया। मुस्लिम लीगने भी सम्मेलनमे भाग लेना स्वीकार किया, परन्तु किसी प्रकारसे 'वचन-वद्ध' हुए विना और पाकिस्तान पर १९४० के लाहौर प्रस्तावमें जो रुख अपनाया गया था तथा ९ अप्रैल, १९४६ को मुस्लिम लीगके विधान-सभाके सदस्योके कन्वेन्शनमे जिसका समर्थन किया गया था, उसे 'कोई हानि पहुचाये' विना।

२८ अप्रैलके तीसरे पहर जव काग्रेसकी कार्यसमिति कैविनेट-मिशनके प्रस्तावकी जाच करनेमें लगी हुई थीं तभी गाधीजीको कैविनेट-मिशनका सन्देश मिला कि लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स और सर स्टैफर्ड क्रिप्स उनसे या तो भंगी-वस्तीमें या वाइसरॉय-भवनके वागमें तुरन्त मिलना चाहते हैं। दूसरा स्थान

उन्हें अधिक पसन्द था, क्योकि व चाहते थे कि यह मुलाकात खानगीमें हो, भगीबस्तीमे उनके आनेसे मुलाकातकी प्रसिद्धि होनेकी आशका थी। सध्याके समय गाधीजी उनसे मिलने गये। जब वे वाइसरायके बागमें गोल तालावके पास बठ कर बाते कर रहे थे तब गाधीजीको पता चला कि काग्रसके भीतर ही कुछ गडबड है। ऐसा मालूम होता है कि कबिनेट मिशनको गाधीजीके एक काग्रेसी साथीका पत्र मिला था — जिसकी जानकारी न तो गाधीजीको थी और न कायसमितिको थी। इसमें महत्वकी बात यह नही थी कि पत्रमें लिखा क्या था बल्कि यह थी कि वह किन परिस्थितियामें लिखा गया था। गाधीजीको पत्रके बारेमें जानकर बडा गहरा आघात लगा। लौटने पर उन्होने इसका उल्लख दो मित्राके समक्ष किया। उनमें से एक कायसमितिके सदस्य थे। उन्हें विश्वास नहा हुआ। उन्ह लगा कि गाधीजीको जो कुछ कहा गया है उसे या तो उन्होने गलत सुना या गलत समझा है। परन्तु गाधीजीने दढता पूवक कहा म न तो बहरा हू और न इतना मूख हू कि इतनी सीधी-सी बातको सुन न सकू और सही सही बता न सकू। दूसरे दिन सर स्टफड क्रिप्स पत्रके साथ गाधीजीसे मिले। सर स्टफडने कहा जब हम कल शामको बातें कर रहे थे तब हमें ऐसा मालूम हुआ कि आपको इस पत्रकी जानकारी नही थी। इसलिए हमने सोचा कि आपके साथ इस मामलकी सफाई कर लेना बेहतर होगा। सर स्टफड क्रिप्स जो पत्र लाये थे वह गाधीजीने अपने दाकाकी साथियोका दिखाया तो उन्हे भी आश्चय हुआ।

कबिनेट मिशन चाहता था कि गाधीजी शिमलामें मौजूद रहें ताकि सम्मेलनके दिनामें उनसे सलाह-मशविरा किया जा सके। गाधीजी सहमत हो गए परन्तु उन्होने यह स्पष्ट कर दिया कि व ब्रिटिश प्रजा और कबिनेट मिशनके मित्र और हितचाक नाते ही सलाह दे सकेंगे। काग्रसका दष्टिकोण उसके अध्यक्ष मौलाना आजाद साहब या पडित नहरू ही प्रस्तुत कर सकते हैं। गाधीजीने उन्हें कहा कि यदि मेरी सलाह पडित नहरूकी सलाहके विपरीत हो, तो आपको मेरी बात न मान कर पडित नहरूकी बात माननी चाहिये। परन्तु मुझे अपने भीतर अशान्ति मालूम हो रही है। मुझे यह पसन्द नहा कि सत्ता हस्तातरित करनेके पहले सविधान बनानेके ब्यौरेको महत्त्व दिया जाय। उन्होने सर स्टफड क्रिप्सको लिखा आप नहा जानते कि मुझे कितनी बचनी मालूम हो रही है। कोई न कोई अनुचित वस्तु हो रही है।'

गाधीजी तो दिल्लीमें ब्रह्माण्डका दशन करते थ। शिमला पहुचकर व एगाथा हैरिसनसे कहने लगे सरदके भीतर सरद है। भीतर भी सरदी और बाहर भी ठडक है। उनके पास ऐसा स्पिरिट लिए एक ही इलाज था — अपने आपको सवथा ईश्वर पर छोड देना। उन्होने मेरा प्रयोग अपने मामलमें तो

शुरू कर दिया। उस दिन सायकालके प्रार्थना-प्रवचनका विषय उन्होंने अपने प्रिय ईशोपनिषद्के पहले मत्रको चुना . "सब कुछ भगवानको समर्पण कर दो और फिर जो नितान्त आवश्यक हो उतनेका ही, उससे जरा भी अधिक नही — उसकी सेवाके लिए उपयोग करो।" इसे समझाते हुए उन्होंने कहा . "पहले तो सब कुछ उसे समर्पण कर देना चाहिये और फिर उसकी कृपासे जो भी सामग्री मिल जाय उससे उसका काम करना चाहिये।"

इसे अपनी ही दुविधाके सदर्भमे रख कर उन्होंने अपने चिन्तनको शब्दोमे व्यक्त किया "जिसने सब कुछ ईश्वरको अर्पण कर दिया है, उसके लिए सब एकसा ही होना चाहिये। मै काग्रेसके लिए, कैबिनेट-मिशनके लिए और दूसरोके लिए बहुत घटिया मार्गदर्शक सिद्ध हूगा, यदि मै आसक्तिकी भावनाको अपने पर हावी होने दू। मेरा मार्गदर्शन विशुद्ध होना चाहिये। यदि आप अपने परिवारसे घिरे हुए है, तो वे आपका ध्यान, चाहे कितना ही कम या सूक्ष्म क्यो न हो, बटा लेगे। इस सकटमे मै अपनी सम्पूर्ण आत्मा ईश्वरको सौप देना चाहता हू। वर्तमान सदर्भमे इसका अर्थ यह है कि अपनी सचाईकी परीक्षाके तौर पर मुझे अपने-आपको तालीम पाये हुए सहायकोकी सेवासे वचित करके भगवान जो भी सहायता भेज दे उसीसे काम चला लेना चाहिये। यदि उनकी अनुपस्थितिमें कोई मुझे मदद देना चाहता है, तो इससे मेरी परीक्षा होगी। कारण यदि कलसे बाजी बिगडने लगी, तो उसके लिए मै अपने सिवा और किसीको जिम्मेदार नही मानूगा। और इस परीक्षामे यदि मै टूट जाऊ तो मैं कहूगा, 'मेरी परीक्षा हुई और उसमें मै पूरा नही उतरा।'"

उन्होने मुझसे कहा कि यदि मुझे उनकी बात ठीक लगती हो, तो उसे मैं अपने साथियोके सामने रखू। उन्होने कहा . अगर तुम लोगोका पूरा सहयोग मुझे न मिल सके, तो मै कोई कदम नही उठाना चाहता। "श्रद्धाका बटवारा नही हो सकता। या तो हम ईश्वर पर पूरी श्रद्धा रखे या बिलकुल न रखे। इसमें तुम्हारी और मेरी दोनोकी श्रद्धाकी परीक्षा है।" मैंने अपने साथियोके सामने उनकी बात रखी। वे तुरन्त सहमत हो गये। मैंने गाधीजीसे कहा, "जैसा आप चाहते है वैसा ही होगा। हम पहली गाड़ीसे दिल्ली लौट जायगे।"

मुझे पता नही था कि हमारे निर्णय पर सरदार क्या कहेगे। परन्तु मुझे आनन्दके साथ आश्चर्य हुआ कि जब मैंने उन्हे हमारा निश्चय बताया, तो उन्होने इतना ही कहा "तुमने ठीक किया। हम सदा उनकी ऊची उडानमें उनका साथ नही दे सकते या उनके तर्कको पूरी तरह समझ नही सकते। परन्तु हमें उनके मार्गमें बाधक बननेका कोई अधिकार नही है।" दूसरे दिन गाधीजीने अखबारोमें घोषणा कर दी कि उन्होने अपने स्थायी

सहयोगियोको वापस दिल्ली भेज देने और 'अपने-आपको केवल ईश्वरके हाथोंमें सौंप देनेका" फैसला कर लिया है।

२

शिमला सम्मेलनकी कारवाई ५ मईसे १२ मई तक चली। दो दिन तक सम्मेलन चला। उसके बाद सम्मेलनकी बैठकोंमें जो चर्चायें हो चुकी थीं उनके प्रकाशमें कैबिनेट मिशनने "समझौतेके लिए कुछ और सुझाव" पेश किये। कांग्रेसके दृष्टिकोणके सम्बन्धमें रियायतके तौर पर संघ-सरकारके विषयोंकी मूल सूचीमें विदेशी मामले, प्रतिरक्षा और यातायातके अलावा 'मूलभूत अधिकारों'का विषय और बढ़ा दिया गया और यह प्रस्ताव पेश किया गया कि संघ-सरकारको इन विषयोंके लिए आवश्यक धन प्राप्त करनेकी आवश्यक सत्ता होनी चाहिये। लीगके लिए संघको स्वीकार्य बनानेके लिए यह सुझाव रखा गया कि संविधान सभाके तीन विभाग (सेक्शन्स) कर दिये जायें। एक विभाग हिन्दू बहुमतवाले प्रान्तोंका प्रतिनिधित्व करे, दूसरा मुस्लिम बहुमतवाले प्रांतोंका और तीसरा देशी राज्योंका प्रतिनिधित्व करे। इसके बाद प्रथम दो विभागोंकी बैठक अलग अलग होगी और वे अपने समूहोंके लिए प्रान्तीय संविधानोंका और यदि वे चाहें तो समूहके संविधानोंका निर्णय करेंगे। विभाग (सेक्शन) में प्रान्तोंको जबरदस्ती समूह-बद्ध करनेके बारेमें कांग्रेसकी जो आपत्ति थी उसको दूर करनेके लिए कैबिनेट मिशनने यह प्रस्ताव रखा कि किसी प्रान्तको प्रान्तीय अथवा समूहका संविधान स्वीकार न हो तो उसे अपने बहुसंख्यक प्रतिनिधियोंके मतोंसे मूल समूहसे बाहर निकलनेकी और दूसरे समूहमें जानेकी अथवा किसी भी समूहसे अलग रहनेकी स्वतंत्रता होगी। उसके बाद तीनों विभागोंकी संयुक्त बैठकमें संघका संविधान (यूनियन कान्स्टिट्यूशन) तैयार किया जायगा।

संघके संविधानके अधीन इस प्रकार तीन उपसंघ (सब फेडरेशन) होंगे। एक मुस्लिम बहुमतवाले प्रान्तोंका, दूसरा हिन्दू बहुमतवाले प्रान्तोंका और तीसरा देशी राज्योंका। मुस्लिम बहुमतवाले प्रान्तोंको संघ राज्यकी विधान-सभामें और संघ-सरकारमें भी हिन्दू बहुमतवाले प्रान्तोंके बराबर प्रतिनिधित्व मिलेगा, चाहे सम्बन्धित प्रान्त अपने समूह बनायें या न बनायें। इसके सिवा मुस्लिम बहुमतवाले समूहोंमें उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तके संभवतः बाहर निकल जानेके कारण और इस समूहसे आसामके बाहर रहनेके कारण — मुस्लिम लीगने मुस्लिम बहुमतवाले समूहके लिए आसामकी मांग की थी — लीगको जो नुकसान हो सकता है उसकी पूर्तिके लिए यह सुझाया गया कि एक अतिरिक्त संरक्षणकी योजना भी की जाय। वह संरक्षण यह होगा कि संघके संविधानमें ऐसा कोई कानून जिसका सम्बन्ध किसी साम्प्रदायिक प्रश्नसे हो,

तब तक पास नही होगा जब तक दोनो बडी कौमोका बहुमत उसके पक्षमें अपना मत न दे।

काग्रेस समूहोकी रचनाको स्वीकार करनेके लिए तैयार थी, बशर्ते वह पूरी तरह स्वेच्छापूर्ण हो। परन्तु उसकी यह राय थी कि सविधान-सभा अखिल भारतीय सघ-राज्य (ऑल इडिया फेडरल यूनियन) के लिए सविधान बना दे उसके बाद प्रान्तोके प्रतिनिधि इस सम्बन्धमे निर्णय करेगे। इसके विपरीत, मुस्लिम लीगकी यह माग थी कि छह 'मुस्लिम प्रातो' के लिए — अर्थात् पजाब, उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान, सिंध, बगाल और आसामके लिए — शुरूसे ही सविधान बनानेवाली अलग सस्था होनी चाहिये (हालाकि आसाम एक हिन्दू बहुमतवाला प्रान्त था।) पाकिस्तानकी सघ–सरकार और प्रान्तोके सविधान बन जानेके बाद दोनो समूहोकी — अर्थात् पाकिस्तान समूह और हिन्दुस्तान समूहकी — सविधान-सभाए इकट्ठी बैठ कर तीनो विषयोका अर्थात् विदेशी मामलो, प्रतिरक्षा और "रक्षाके लिए आवश्यक यातायात" का विचार करेगी।

मतभेदके और मुद्दे भी थे। काग्रेस चाहती थी कि संघ-सरकारको अपने कर्तव्योका पालन करनेके लिए आवश्यक आय कर लगाकर प्राप्त करनेकी सत्ता होनी चाहिये। मुस्लिम लीगका आग्रह था कि सघ-सरकारको अपने ही अधिकारसे कर वसूल करनेकी किसी भी हालतमे सत्ता नही होनी चाहिये, उसे प्रान्तोका दिया हुआ पैसा ही मिलना चाहिये। लीग यह भी चाहती थी कि सघ-सरकारको तीन चौथाई बहुमतके बिना किसी भी विवादास्पद प्रश्न पर कानूनी, व्यवस्था-सम्बन्धी या प्रशासन-सम्बन्धी निर्णय नही करना चाहिये।

यह स्पष्ट था कि कैबिनेट-मिशनका सारा रुख और दृष्टिकोण काग्रेससे भिन्न था। शिमला-सम्मेलनके पहले सत्रके बाद ६ मईको काग्रेस-अध्यक्षने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको लिखा, "मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि हमारी बात-चीतकी अस्पष्टता और उनकी तहमे रही कुछ धारणाओके कारण मै उलझनमें पड गया हू और अस्वस्थ बन गया हू। जब तक भारतकी भूमि पर विदेशी सेना मौजूद है, तब तक स्वाधीनता जैसी कोई वस्तु नही हो सकती। हम इसी समय, न कि किसी दूर अथवा निकट भविष्यमे, सारे भारतके लिए स्वाधीनता चाहते है। दूसरी सब बाते गौण है और उन पर चर्चा और निर्णय करना सविधान-सभाके लिए ही उपयुक्त हो सकता है। . . सविधान-सभा स्वाधीनताके प्रश्नका निर्णय नही करेगी, इस प्रश्नका निर्णय अभी होना चाहिये ओर हम मानते है कि यह निर्णय अब हो गया है।"

काग्रेसके अध्यक्षने यह भी लिखा · अगर ऐसी बात है, तो इससे कुछ परिणाम अनिवार्य रूपसे निकलते है। फिर तो सविधान-सभा "स्वतत्र भारतीय राष्ट्रकी इच्छाका प्रतिनिधित्व करेगी और उसे कार्यान्वित करेगी।" इसके

लिए पहले एक अस्थायी सरकार स्थापित करनी होगी, 'जिसे यथासंभव स्वतंत्र भारतकी सरकारके रूपमें काम करना होगा और संक्रमण-कालके लिए सारी व्यवस्था करनेका बीड़ा उठाना होगा।'

परन्तु इस मंजिल पर कैबिनेट मिशन इसके लिए तैयार नहीं था। उसका इरादा इस चीजको दोनों मुख्य दलोंके लिए प्रलोभनके रूपमें सुरक्षित रखनेका था ताकि भारतके भावी संविधानके बारेमें वे अपने अपने दृष्टिकोणोंकी खाई पाट लें। कैबिनेट मिशनकी रायमें यह खाई पहले ही काफी कम हो गई थी क्योंकि कांग्रेसने प्रान्तोंके संबंधमें समूह बनानेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया था और मुस्लिम लीगने समग्र भारतके लिए संघ-सरकार स्वीकार कर ली थी। यह खाई सचमुच कम हो जाती अगर एक समान ध्येयको पूरा करनेके लिए कांग्रेस और लीगमें हार्दिक समझौता होनेके बाद यह लेनदेन हुआ होता। तब कैबिनेट मिशनको मजबूर होकर वास्तविकताओं पर ध्यान देना पड़ता। परन्तु तीसरे पक्षकी उपस्थिति जिसके हाथमें सत्ताका सन्तुलन था, इस वास्तविकताको दूषित कर रही थी और वह सब केवल अपनी अपनी स्थितिको सुरक्षित रखनेके लिए दावपेचका साधन बन गई। कांग्रेसने तो प्रान्तोंके एच्छिक समूह रचनेकी बातको और साम्प्रदायिक प्रश्नों पर मुस्लिम निषेधाधिकार (वीटो) का स्वीकार कर लिया था ताकि मुसलमानोंकी चिन्ता मिट जाय और हिन्दू तथा मुसलमान अपनी समान मातृभूमिमें एक राष्ट्र बनकर साथ साथ रह सकें। परन्तु मुस्लिम लीग इन रियायतोंको पाकिस्तानके लिए लड़ी जा रही अपनी लड़ाईमें एक व्यूहात्मक लाभ समझती थी।

कांग्रेसने अपना यह दृढ़ मत व्यक्त किया कि भारतके किसी भी प्रकारके बटवारेका विचार सम्मेलन नहीं कर सकता। 'अगर बटवारा होना ही है तो वह वर्तमान शासक-सत्ताके प्रभावसे सर्वथा मुक्त संविधान-सभाके द्वारा होगा।'

जैसा कि शुरूसे ही डर था १९ करोड़की आबादीके हिन्दू बहुमतवाले ७ प्रान्तों और ९ करोड़से कुछ अधिककी आबादीके ५ मुस्लिम बहुमतवाले प्रान्तोंके बीच कार्यकारिणी या विधान मंडलके सम्बन्धमें समान संख्याकी कठिनाई अजेय सिद्ध हुई। ८ मईको गांधीजीने सर स्टैफर्ड क्रिप्सको लिखा यह तो पाकिस्तानसे भी बुरी चीज है। उन्होंने इसका उपाय यह सुझाया कि लीग और कांग्रेसके बीच मतभेदके इस और दूसरे सभी मामलों पर जो और किसी तरह सुलझ न सकें एक निष्पक्ष गैरब्रिटिश पंच अपना निर्णय दे।

१९४५ के शिमला-सम्मेलनमें कांग्रेसने सवर्ण हिन्दू और मुस्लिमोंकी समान संख्या (परिटी) का सिद्धान्त मान लिया था यद्यपि इसके विरुद्ध गांधीजीकी सलाह यह थी कि एच्छिक रियायतके रूपमें हिन्दुओंकी समान संख्यासे कम

सख्याकी वात स्वीकार कर ली जाय। उनका कहना था कि यह वस्तु अधिक उदारतावाली भले मानी जाय, परन्तु लोकतन्त्रके साथ उसका मेल वैठ सकता है। परन्तु जातियोके बीच कानूनसे निश्चित की जानेवाली समान संख्या तो लोकतन्त्रका मजाक ही होगी। गाधीजीकी इस चेतावनी पर ध्यान नही दिया गया और काग्रेस हाई कमाडको व्यवहार-कुशलताके अपने प्रयोगकी कीमत अव व्याज सहित चुकानी पड रही थी। १९४५ के शिमला-सम्मेलनमे काग्रेसके अध्यक्षने तो स्पष्ट कर दिया था कि काग्रेसने समान सख्याको "शुद्ध अस्थायी और अन्तरिम रूपमे माना है और उसे भविष्यके लिए कोई स्थायी व्यवस्था नही समझा जाना चाहिये।"[५] परन्तु अव उनके सामने सघकी विधान-सभा और सघ-सरकार दोनोमे समान सख्याकी वातके भारतके भावी सविधानका एक स्थायी अग वना दिये जानेकी सभावना खडी हो गई थी।

किसी प्रान्त या कौमके मनसे भय और शकाको मिटानेके लिए औचित्यकी सीमाके भीतर रहकर काग्रेस कुछ भी करनेको तैयार थी। परन्तु वह ऐसी 'अवास्तविक पद्धतियो'का समर्थन नही कर सकती थी, जो 'लोकतंत्रकी मूलभूत पद्धति'के खिलाफ पडते हो, क्योकि उसी पद्धति पर तो वह अपना सविधान वनानेकी आशा रखती थी।[६]

सम्मेलनकी असफलता अव अनिवार्य मालूम होती थी। इस पर काग्रेसने सुझाया कि दलोके बीच मतभेदके मामले निवटा देनेके लिए काग्रेस और मुस्लिम लीग एक पच नियुक्त कर दे। किन्तु इस सुझावको लीगने ठुकरा दिया।

१२ मईको यह घोषणा कर दी गई कि सम्मेलन काग्रेस और लीगमे समझौता नही करा सका। इसके वाद कैविनेट-मिशनके सदस्य दिल्ली लौट आये।

३

राष्ट्रवादी भारतका धैर्य अव लगभग चुक गया था और कैविनेट-मिशनकी घोषणाओसे शुरू शुरूमे जो आशाए उत्पन्न हुई थी वे विलीन होने लगी। २ अप्रैलको ही गाधीजीने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको दो कदम सुझाये थे, जिससे जनताको स्वतत्रताका पहलेसे अनुभव होने लगे। पहला कदम यह था कि राजनीतिक कैदियोको तुरन्त छोड दिया जाय और उनमे वे लोग भी रहे, जिन पर स्वातत्र्य-सग्राममे हिंसात्मक अपराध करनेका आरोप भी लगाया जा सकता हो। वे लोग अव राज्यके लिए खतरनाक नही हो सकते, क्योकि स्वाधीनताकी आवश्यकता अव दोनोके लिए समान ध्येय वन गयी है। इसलिए जयप्रकाश नारायण अथवा डॉ० राममनोहर लोहिया जैसे व्यक्तियोको कारागारमें रखना हास्यास्पद मालूम होता है। "किसी व्यक्तिको भूमिगत कार्यकर्ता माननेके लिए भी कोई कारण नही है। कैदियोकी मुक्तिके प्रश्नको भावी राष्ट्रीय सरकारके

लिए पहले एक अस्थायी सरकार स्थापित करनी होगी 'जिसे यथासंभव स्वतंत्र भारतकी सरकारके रूपमें काम करना होगा और संक्रमण-कालके लिए सारी व्यवस्था करनेका बोझा उठाना होगा।'

परन्तु इस मंजिल पर केबिनेट मिशन इसके लिए तैयार नहीं था। उसका इरादा इस चीजको दोनों मुख्य दलोंके लिए प्रलोभनके रूपमें सुरक्षित रखनेका था ताकि भारतके भावी संविधानके बारेमें वे अपने अपने दृष्टिकोणोंकी खाई पाट लें। केबिनेट मिशनकी रायमें यह खाई पहले ही काफी कम हो गई थी, क्योंकि कांग्रेसने प्रान्तोंके संघमें समूह बनानेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया था और मुस्लिम लीगने समग्र भारतके लिए संघ-सरकार स्वीकार कर ली थी। यह खाई सचमुच कम हो जाती अगर एक समान ध्येयको पूरा करनेके लिए कांग्रेस और लीगमें हार्दिक समझौता होनेके बाद यह लेनदेन हुआ होता। तब केबिनेट मिशनको मजबूर होकर वास्तविकताओं पर ध्यान देना पड़ता। परन्तु तीसरे पक्षकी उपस्थिति जिसके हाथमें सत्ताकी सन्तुलन था, इस वास्तविकताको दूषित कर देती थी और वह सब केवल अपनी अपनी स्थितिको सुरक्षित रखनेके लिए दावपेंचका साधन बन गई। कांग्रेसने तो प्रान्तोंके ऐच्छिक समूह रचनेकी बातको और साम्प्रदायिक प्रश्नों पर मुस्लिम निषेधाधिकार (वीटो) को स्वीकार कर लिया था ताकि मुसलमानोंकी चिन्ता मिट जाय और हिन्दू तथा मुसलमान अपनी समान मातृभूमिमें एक राष्ट्र बनकर साथ साथ रह सकें। परन्तु मुस्लिम लीग इन रियायतोंको पाकिस्तानके लिए लड़ी जा रही अपनी लड़ाईमें एक व्यूहात्मक लाभ समझती थी।

कांग्रेसने अपना यह दृढ़ मत व्यक्त किया कि भारतके किसी भी प्रकारके बटवारेका विचार सम्मेलन नहीं कर सकता। 'अगर बटवारा होना ही है, तो वह वर्तमान शासक-सत्ताके प्रभावसे सर्वथा मुक्त संविधान-सभाके द्वारा होगा।'

जैसा कि शुरूसे ही डर था, १९ करोडकी आबादीके हिन्दू बहुमतवाले ७ प्रान्तों और ९ करोडसे कुछ अधिककी आबादीके ५ मुस्लिम बहुमतवाले प्रान्तोंके बीच कार्यकारिणी या विधान मंडलके सम्बन्धमें समान संख्यावाली कठिनाई अजेय सिद्ध हुई। ८ मईको गांधीजीने सर स्टैफर्ड क्रिप्सको लिखा, "यह तो पाकिस्तानसे भी बुरी चीज है।" उन्होंने इसका उपाय यह सुझाया कि लीग और कांग्रेसके बीच "मतभेदके इस और दूसरे सभी मामलों पर जो और किसी तरह सुलझ न सकें एक निष्पक्ष गैर-ब्रिटिश पंच अपना निर्णय दे।"

१९४५ के शिमला-सम्मेलनमें कांग्रेसने सवर्ण हिन्दू और मुस्लिमोंकी समान संख्या (परिटी) का सिद्धान्त मान लिया था यद्यपि इसके विरुद्ध गांधीजीकी सलाह यह थी कि ऐच्छिक रियायतके रूपमें हिंदुओंको समान संख्यासे कम

संख्याकी वात स्वीकार कर ली जाय। उनका कहना था कि यह वस्तु अविक उदारतावाली भले मानी जाय, परन्तु लोकतत्रके साथ उसका मेल वैठ सकता है। परन्तु जातियोके वीच कानूनसे निश्चित की जानेवाली समान संख्या तो लोकतत्रका मजाक ही होगी। गावीजीकी इस चेतावनी पर ध्यान नही दिया गया और काग्रेस हाई कमाडको व्यवहार-कुशलताके अपने प्रयोगकी कीमत अव व्याज सहित चुकानी पड रही थी। १९४५ के शिमला-सम्मेलनमें काग्रेसके अध्यक्षने तो स्पष्ट कर दिया था कि काग्रेसने समान सख्याको "शुद्ध अस्थायी और अन्तरिम रूपमें माना है और उसे भविष्यके लिए कोई स्थायी व्यवस्था नही समझा जाना चाहिये।"[५] परन्तु अव उनके सामने सघकी विधान-सभा और संघ-सरकार दोनोमे समान सख्याकी वातके भारतके भावी सविधानका एक स्थायी अग वना दिये जानेकी सभावना खड़ी हो गई थी।

किसी प्रान्त या कौमके मनसे भय और शंकाको मिटानेके लिए औचित्यकी सीमाके भीतर रहकर काग्रेस कुछ भी करनेको तैयार थी। परन्तु वह ऐसी 'अवास्तविक पद्धतियो' का समर्थन नही कर सकती थी, जो 'लोकतत्रकी मूलभूत पद्धति' के खिलाफ पडते हो, क्योकि उसी पद्धति पर तो वह अपना सविधान वनानेकी आशा रखती थी।[६]

सम्मेलनकी असफलता अव अनिवार्य मालूम होती थी। इस पर काग्रेसने सुझाया कि दलोके वीच मतभेदके मामले निवटा देनेके लिए काग्रेस और मुस्लिम लीग एक पच नियुक्त कर दे। किन्तु इस सुझावको लीगने ठुकरा दिया।

१२ मईको यह घोषणा कर दी गई कि सम्मेलन काग्रेस और लीगमे समझौता नही करा सका। इसके वाद कैविनेट-मिशनके सदस्य दिल्ली लौट आये।

३

राष्ट्रवादी भारतका वैर्य अव लगभग चुक गया था और कैविनेट-मिशनकी घोषणाओसे शुरू शुरूमे जो आशाए उत्पन्न हुई थी वे विलीन होने लगी। २ अप्रैलको ही गावीजीने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको दो कदम सुझाये थे, जिससे जनताको स्वतंत्रताका पहलेसे अनुभव होने लगे। पहला कदम यह था कि राजनीतिक कैदियोको तुरन्त छोड दिया जाय और उनमे वे लोग भी रहे, जिन पर स्वातत्र्य-सग्राममे हिंसात्मक अपराध करनेका आरोप भी लगाया जा सकता हो। वे लोग अव राज्यके लिए खतरनाक नही हो सकते, क्योकि स्वाधीनताकी आवश्यकता अव दोनोके लिए समान ध्येय वन गयी है। इसलिए जयप्रकाश नारायण अथवा डॉ० राममनोहर लोहिया जैसे व्यक्तियोको कारागारमें रखना हास्यास्पद मालूम होता है। "किसी व्यक्तिको भूमिगत कार्यकर्ता माननेके लिए भी कोई कारण नही है। कैदियोकी मुक्तिके प्रश्नको भावी राष्ट्रीय सरकारके

फसलेके लिए छोडना एक ऐसा कदम होगा, जिसे न तो कोई समझेगा और न उसकी कदर करेगा। इससे स्वाधीनताकी शोभा मारी जायगी।"

गाधीजीके दूसरे प्रस्तावका असर आम लोगो पर पडता था। उसका सबध नमक-करसे था। नमक-कर फ्रासके घणित गेबेले अथवा फ्रासके नमक पर स्थापित सरकारी एकाधिकार जसा अप्रिय और अन्यायपूण था। फ्रासकी क्रातिके पूव वहाकी प्रजाकी शिकायतें पेश करनेवाली जो पत्रिकायें निकाली गई थी, उनमें फ्रासके इस सरकारी एकाधिकारको अत्यन्त गभीर आर्थिक अनिष्ट बताकर उसकी निन्दा की गई थी। भारतके नमक-करकी निन्दा सर जेम्स वस्टलड (१८८८) भारत-मत्री लाड क्रास और भारतके उपमत्री सर जान गास्ट (ब्रिटिश लोकसभामें १८९०), सर इवेल्नि बेरिग (अल आफ क्रोमर) और हालमे ही श्री रम्जे मकडोनल्डने की थी। मकडोनल्ड साहबने तो यह कहा था कि, "यह रुपये ऐठने और अत्याचारकी बात है और एक मुनाफाखोर कम्पनीने भारतकी गरीबीका जो सामान्य शोषण किया था उसीका अवशेष है। आधी शताब्दीसे अधिक समयसे नमक-करका अन्त काग्रेसकी मागका एक अविभाज्य अग रहा था। दादाभाई नौरोजी बाच्छा फिरोजशाह मेहता और गोखले जसे देशभक्ताने इस करको रद्द करानेके लिए अविश्रान्त युद्ध किया था।

कबिनेट मिशनके आनेकी आशामें गाधीजीने ६ माच १९४६ को लाड वेवेलके सामने नमक-कर रद करनेकी बात रखी थी। उसका इतना-सा ही उत्तर उनकी ओरसे मिला था गाधीजीके इस सुझावकी जाच की गई कि नमकके निजी तौर पर बनाये जाने पर लगाई गई तमाम पाबदिया हटा ली जाय। मुझे डर है कि सरकार इस सुझावको माननेमें असमथ है।' '

लाड पथिक-लॉरेन्सके दिल्ली पहुचनेके दूसरे दिन गाधीजीने उन्हे एक पत्रमें लिखा 'आयके साधनके रूपमें तो यह नमक-कर तुच्छ है। यदि नमककी ठेकेदारीका बोझा उसे दुःख देता रहेगा तो आम जनता शायद ही स्वाधीनताकी कदर कर सकेगी।"[१]

५ अप्रलका वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषदके वित्त-सदस्य सर आर्चि- बाल्ड रोलडस गाधीजीसे मिले ताकि उनके प्रस्तावकी तफ्सील उनसे समझ लें। मुलाकातके अन्तमें सर आर्चिबाल्डने स्वीकार किया कि व पूरी तरह गाधीजीके दृष्टिकोणसे सहमत हो गये ह। इसका उल्लेख करते हुए गाधीजीने दूसरे दिन लाड वेवेलको लिखा हमारी बातचीतके अन्तमें उन्होंने (सर आर्चिबाल्डने) मुझसे खुले दिलसे यह कहा कि यदि वे मुझसे तीन महीने पहले मिले होते तो नमक-कर उठा दिया जाता। अब उनका इरादा ३–४ महीनेके भीतर यह कर उठा देनेका है। मैं इस दयाके काममें आपकी सहायता चाहता

हूं। इससे भी अधिक महत्त्व इस बातका है, जो मैंने कैबिनेट-मिशनके सामने रखी थी, कि स्वाधीनताका शुभ आरंभ अधिकसे अधिक सद्भावनाके साथ होना चाहिये, जिससे दूर दूरके गांवोंमें बसे गरीबसे गरीब ग्रामीण भी तुरन्त उसका अनुभव कर लें।"

बादमें पता चला कि गांधीजीसे सीधे मिल लेनेके लिए वाइसरॉयने वित्त-सदस्यको उलाहना दिया। एक समान मित्रको उन्होंने क्षमा-याचनाके रूपमें बताया कि कुछ कारणोंसे वे गांधीजीसे दुबारा नहीं मिल सकेंगे। वे कारण भी उन्होंने समझाये। जब गांधीजी वाइसरॉयसे बादमें मिले तो उन्होंने इस मामलेको जोरके साथ उठाया। तब कहीं वित्त-सदस्य पर लगी पाबन्दी उठाई गई और वे वाइसरॉयके 'आदेशानुसार' गांधीजीके साथ पुनः बातचीत करनेमें समर्थ हुए।

इसके बाद राजनीतिक कैदी धीरे धीरे छोड़ दिये गये। जयप्रकाश और डॉ० लोहिया १२ अप्रैलको रिहा किये गये। दो दिन बाद आजाद हिन्द फौजके अभियुक्त कैदियोंको छोड़नेकी आज्ञा दी गई। परन्तु नमक-कर उठा देनेका सवाल अधरमें ही लटकता रहा। ३ मईको गांधीजीने शिमलामें वाइसरॉयके सामने फिर इस मामलेको उठाया: "नमकका प्रश्न मेरे दिमागसे निकला नहीं है। ब्रिटेनके सम्मानके खातिर मैं यह कहता हूं कि इस एकाधिकारको उठा देनेमें एक दिनकी भी देर नहीं होनी चाहिये। इस एकाधिकारका क्या परिणाम हुआ है, यह श्रीमानके मन पर जमानेके लिए मैं साथमें श्री प्यारेलालका तैयार किया हुआ एक नोट भेजता हूं।"[१०]

वाइसरॉयका उत्तर दुबारा भी निराशाजनक ही आया। उसका उत्तर गांधीजीने भी तेज दिया:

> यह इस बातकी बढ़िया मिसाल है कि गैर-जिम्मेदार दिमाग किस तरह काम करता है। आपने पिछले सोमवारको मुझे कृपा करके बताया था कि . . . अंग्रेज प्रतिष्ठाकी परवाह नहीं करते। . . . आपके कथनसे यह फलित होता दीखता है कि ब्रिटिश लोग किसी कार्यसे पैदा हुई अप्रतिष्ठाकी भी परवाह नहीं करते।
>
> मेरा मन तो सदा आम जनताकी ही बात सोचता है, उसके प्रति जिम्मेदार रहता है और उसके साथ एकराग हो गया है। इसलिए उससे तो यही सीधा उत्तर निकलता है कि इस घृणित एकाधिकारको और करको . . . खास तौर पर अकालके इन दिनोंमें उठा दिया जाय।[११]

गांधीजीके प्रस्तावके सम्बन्धमें वाइसरॉयके निजी सचिवने राजकुमारी अमृतकौरसे कहा, "यह जिन्ना और मुस्लिम लीगके लिए कड़ी चोट होगी।" क्या वाइसरॉयकी अनिच्छाका यही कारण था कि इससे कांग्रेसकी प्रतिष्ठा

बढेगा और जिन्ना नाराज होगे? बादकी घटनाओमें ऐसा ही सकेत दिखाई दिया। गाधीजीने इसके अशुभ मर्मको समझ लिया।

४

१६ मईको कबिनेट मिशनने 'ब्रिटेनके सम्राटकी सरकारकी पूरी अनुमतिसे नया सविधान जल्दीसे रचा जाय इस हेतुसे" अपनी सिफारिशें प्रकाशित की। उसकी इस योजनाके दो भाग थे दीर्घकालीन योजना सविधान बनानेवाली सभाकी रचना करनेके लिए थी और अल्पकालीन प्रस्ताव १६ मईके वक्तव्यका स्वीकार करनेके लिए तैयार बडे राजनीतिक दलोके समर्थनसे एक अन्तरिम सरकार बनानेका था।

प्रश्न यह था कि भारतका विभाजन किया जाय अथवा वह अविभाजित रहे। मुस्लिम लीगका कहना यह था कि शुद्ध एककेन्द्री (यूनिटरी) राज्यवाले भारतमे मुसलमानोको सदा ही हिन्दू बहुमतके शासनमें रहना पडेगा। इसलिए उसने माग की कि देशका विभाजन कर दिया जाय और दो प्रदेशोका एक अलग सर्वथा स्वाधीन मुस्लिम राज्य अर्थात पाकिस्तान बना दिया जाय — इनमें से एक प्रदेश उत्तर-पश्चिममें पजाब सिंध उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त और बलूचिस्तानके प्रातोका हो और दूसरा उत्तर पूर्वमे बगाल और आसामके प्रान्तोका हो। इससे मुसलमानोके हाथमें उन सब बातोका सपूर्ण नियत्रण आ जायगा, जो उनकी सस्कृति धर्म और आर्थिक तथा दूसरे हितोकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। परन्तु जहा लीग मुस्लिम बहुमतवाले प्रदेशोके लिए उनकी इच्छानुसार शासनकी पद्धति रचनेका अधिकार चाहती थी, वहा वह यही अधिकार उन काफी बडे प्रदेशोको देनेके लिए तैयार नही थी जिनमें गैर मुस्लिमोका बहुमत था और जिन्हे वह पाकिस्तानके लिए इस बिना पर मागती थी कि पाकिस्तानको प्रशासनिक तथा आर्थिक दृष्टिसे स्वावलम्बी बनानेके लिए उनकी जरूरत है। उदाहरणके लिए वह सारा आसाम चाहती थी यद्यपि उसकी ६६ प्रतिशत आबादी गैर मुस्लिम थी और पजाब तथा बगालके वे हिस्से भी मागती थी जहा गैर मुस्लिमोका भारी बहुमत था। इसका विशेष बुरा असर पजाबके सिक्खो पर पडता था। उन्हे मनमाने ढगसे पाकिस्तानमें रखे जाने पर प्रबल आपत्ति थी। इसके पीछे कारण वही था जो मुस्लिम लीगने मुस्लिम क्षेत्रोको शेष भारतसे अलग करनेके लिए दिया था। उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त ऐसा दूसरा प्रान्त था। वहा आबादी तो मुख्यत मुसलमानोकी थी, परन्तु वहा काग्रेसी मत्रि-मडल सत्तारूढ था। उसने मुस्लिम लीगकी विचारधाराको विशेषत उसके दो राष्ट्रोके सिद्धान्त'को, और पाकिस्तानकी योजनाको कभी स्वीकार नही किया था। उत्तर-पश्चिम

सीमाप्रान्तमे १९४६ का चुनाव निश्चित रूपसे इसी प्रश्न पर लड़ा गया था और मतदाताओने उसके खिलाफ अपना स्पष्ट निर्णय दिया था।

पाकिस्तानके पक्षमे जो भी दलील दी जा सकती थी, वही गैर-मुस्लिम प्रदेशोको पाकिस्तानसे बाहर रखनेके लिए भी उसी तरह दी जा सकती थी। इसलिए कैबिनेट-मिशनने ध्यानपूर्वक विचार करनेके बाद अपनी १६ मईकी योजनामे मुस्लिम लीगकी मागके अनुसार पाकिस्तानको एक अलग और पूरी तरह स्वाधीन प्रभुसत्ताधारी राज्य बनानेके प्रस्तावको ठुकरा दिया। इसी तरह उसने मुस्लिम बहुमतवाले प्रदेशोमे ही सीमित "अधिक छोटे प्रभुसत्ताधारी पाकिस्तान" के प्रस्तावको भी अस्वीकार कर दिया। जिन्ना ऐसे छोटे पाकिस्तानको "कटाछटा और दीमकका खाया हुआ पाकिस्तान" बताकर पहले ही उसे मुस्लिम लीगके लिए सर्वथा अस्वीकार्य घोषित कर चुके थे। और सिक्ख इस बात पर तुले हुए थे कि कुछ भी हो जाय, पजाबके बटवारेसे वे अपनी जातिका अग-भग नही होने देगे। परन्तु भविष्यके गर्भमे ऐसी घटनाये छिपी थी, जिन्होने बादमें विभाजनके अत्यन्त उत्कट विरोधियोके भी पैर उखाड दिये और जिनके समक्ष देशका अंग-भग छोटी बुराई और एक बडी विपत्तिके निवारणका एकमात्र साधन दिखाई देने लगा।

मुस्लिम लीगकी पाकिस्तानकी मागके बजाय कैबिनेट-मिशनने १६ मईकी अपनी "तीन स्तरोवाली योजना" की सिफारिश की। इस योजनाका सकेत शिमला-सम्मेलनमे समझौतेके लिए प्रस्तुत कैबिनेट-मिशनके सुझावोमे मिलता था। ब्रिटिश भारत और देशी राज्योका एक सघ सबसे ऊपर होगा, जिसके हाथमे विदेशी मामलो, प्रतिरक्षा और यातायातके तीन विषय होगे। बिलकुल नीचेके स्तरमे प्रान्त और देशी राज्य होगे, जिनके पास समस्त शेष सत्ताये होगी। इसके साथ साथ एक व्यवस्था ऐसी भी होगी, जिससे प्रान्तोको अपनी व्यवस्थापिका-सभाओ तथा विधान-सभाओके साथ अपने समूह बनानेकी आजादी होगी। यह बीचका स्तर होगा। समूह बनानेका उद्देश्य मुस्लिम लीगको "पाकिस्तानका सार तत्त्व" देना था।

समूह बनानेकी कार्यविधि यह रखी गई कि समूची सविधान-सभाकी प्रारभिक बैठकके बाद प्रातोके प्रतिनिधि 'अ', 'ब' और 'क' इन तीन विभागो (सेक्शन्स) मे मिलेंगे; 'ब' विभागमें पजाब, उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त, बलूचिस्तान और सिन्ध होगे, 'क' विभागमे बगाल और आसाम होगे; और 'अ' विभागमे बाकीके वे प्रान्त होगे, जो इन दोनो विभागोमें से किसीमे भी शामिल नही किये गये हो। इसके पश्चात् ये सारे विभाग प्रत्येक विभागमें सम्मिलित प्रान्तोके लिए प्रान्तीय सविधान रचनेका काम करेंगे और यह भी निर्णय करेंगे कि इन प्रान्तोके लिए कोई समूह-सविधान (ग्रूप कॉन्स्टिट्यूशन)

रखा जाय या नहीं। अंतिम व्यवस्था यह रखी गई कि किसी भी प्रान्तको नये संविधानके अनुसार पूरी गई प्रान्तकी विधान-सभाके निश्चय द्वारा किसी समूहमें से निकल जानेकी सत्ता होनी चाहिये, यदि वह संविधान अपने अंतिम रूपमें उसको पसन्दका न हो। यह आशा रखी गई थी कि इस व्यवस्थासे उत्तर-पश्चिम और उत्तर-पूर्वमें अलग मुस्लिम क्षेत्रोंकी मुस्लिम लीगकी माग भी पूरी हो जायगी और साथ ही अविभक्त भारतकी एक समान केन्द्रवाली कल्पना भी ज्योंकी त्यों बनी रहेगी, यद्यपि उसके कार्य सीमित रहेंगे।

सम्प्रदायवादके राक्षसको पहले-पहल ब्रिटिश सत्ताने ही जन्म देकर और पाल-पोसकर अपनी "फूट फैलाकर राज्य करने" की नीतिके अनुसार निरंकुश और जिद्दी बनाया था। परन्तु अब उसकी अपनी इच्छाशक्ति भी विकसित हो गई थी और वह इंग्लैंडके अनुदार दलके कट्टर लोगोंका सहारा पाकर किसीके समझाने-बुझानेकी परवाह नहीं करता था। कैबिनेट मिशनको एक तरफ तो यह पक्का विश्वास था कि भारतका विभाजन अव्यावहारिक और हानिकारक सिद्ध होगा और दूसरी तरफ उसके सामने प्रभुसत्ताधारी पाकिस्तानकी मुस्लिम लीगकी अटल माग थी। इसलिए उसको विवश होकर 'करो या मरो' या ... शंकास्पद उपायका आश्रय लेना पड़ा। उसकी १६ मईवाली योजना गेटेकी एक सुप्रसिद्ध रचनाकी नायिकाके स्वरूपके अनुसार बनाई गई थी। उस नायिकाके पात्रके आलेखनमें सभीको अपनी प्रियतमाकी छवि दिखाई देती थी। उस योजनामें प्रत्येकके लिए कुछ-न-कुछ था। कांग्रेसके लिए उसमें एक समान केन्द्र दिया गया था यद्यपि वह दुर्बल था और प्रान्तोंको समूह बनाने या न बनानेकी 'स्वतंत्रता' दी गई थी। मुस्लिम लीगको उसमें उत्तर पश्चिमी और उत्तर पूर्वी भारतमें 'मुस्लिम क्षेत्र' बनानेकी संभावना दिखाई देती थी क्योंकि उसमें प्रान्तोंके प्रतिनिधियोंके लिए प्रान्तीय संविधान रचनेके लिए विभागोंमें बैठना अनिवार्य कर दिया गया था। राजाओंके लिए सार्वभौम सत्तासे मुक्ति प्राप्त करनेकी बात उसमें थी और वह सत्ता उत्तराधिकारिणी सरकारको हस्तांतरित नहीं की जानेवाली थी। सिक्खोंके लिए उसमें उनके घरकी एकताको सुरक्षित रखनेकी आशा दिखाई गई थी।

कठिनाई यह थी कि जो बात योजनाके शुरूके हिस्सेमें दी हुई दिखाई देती थी, उसे पिछले भागकी व्यवस्थाओंसे लगभग रद्द कर दिया गया था। योजनाके परा १५ धारा (५)की भाषामें और परा १९ उपधारा (४) और (५) की भाषामें स्पष्ट विरोध था। धारा (५) के परा १५ में कहा गया था कि, "प्रान्त समूह व्यवस्थापिका-सभा और विधान-सभा बनानेको स्वतंत्र होने चाहिये और प्रत्येक समूह एक साथ लिये जानेवाले प्रान्तीय विषयोंका निश्चय

कर सकता है।" (मोटे टाइप मैंने किये है।) परन्तु उपधारा (४) और (५) के पैरा १९ का अर्थ ऐसा समझा जा सकता था जिससे आसामका, जो एक गैर-मुस्लिम प्रान्त था, मुस्लिम प्राधान्यवाले समूह 'क' मे शामिल होना लगभग अनिवार्य हो जाय; और उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तका, जहा काग्रेसका मत्रि-मडल काम कर रहा था, उसके चुने हुए प्रतिनिधियोकी इच्छाके विरुद्ध मुस्लिम लीगकी प्रधानतावाले समूह 'ब' मे शरीक होना अनिवार्य हो जाय। वह पैरा इस प्रकार था . "इसके बाद प्रान्तीय प्रतिनिधि तीन विभागोमें बट जायगे। . . . ये **विभाग** प्रान्तीय सविधानोकी रचनाका कार्य हाथमे लेगे . . . और यह निर्णय करेगे कि उन प्रान्तोके लिए कोई समूह-सविधान रचा जायगा या नही।" (मोटे टाइप मैंने किये है।)

यह सच है कि नये सविधानके अनुसार चुनाव हो जानेके कुछ समय बाद प्रान्तोको "बाहर निकल जाने" की स्वतन्त्रता दी गई थी। यह सविधान विभाग (सेक्शन) को, सविधान रचनेके अपने अधिकारके अनुसार, नये सविधानके मातहत रहनेवाले प्रान्तोके विधान-सभाके सदस्योके बहुमतसे रचना था। परन्तु यह तो वस्तुत मूल मुद्देको छोड़ देनेकी बात हुई। विभाग 'ब' और 'क' इस तरहसे बनाये गये थे कि स्पष्ट ही एक प्रान्त अर्थात् पजाबकी विभाग 'ब' मे और बगालकी विभाग 'क' मे प्रधानता रहे। दोनो प्रान्तोमे मुस्लिम लीगका बडा बहुमत था और दोनोमे उसका प्रतिनिधित्व बडी मात्रामे था। अत यह कल्पना की जा सकती थी कि ये प्रभुत्व रखनेवाले प्रान्त अपने अपने विभागोमे दूसरे सहभागियो अर्थात् सिन्ध, उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त और आसामकी इच्छाओके बिलकुल विरुद्ध प्रान्तीय सविधान तैयार करते। "यह भी कल्पना की जा सकती थी कि वे चुनावोसे सम्बन्धित नियम और दूसरे ऐसे नियम बन दे, जिनसे किसी प्रान्तके किसी समूहके बाहर निकल जानेकी व्यवस्था बेकार हो जाय।"[१२]

इस प्रकार मई १९४६ के शिमला-सम्मेलनमे प्रस्तावित समूह-रचनाकी व्यवस्थाके अनुसार मूल समूहसे बाहर निकल जानेका अधिकार — यदि समूह द्वारा बनाया हुआ समूहका सविधान या प्रान्तीय सविधान किसी प्रान्तको पसन्द न हो तो — उस प्रान्तके पास ही था, परन्तु अब व्यवहारमें वह स्वतन्त्रता उस प्रान्तसे छीन ली गई थी और उस विभागके बहुमतको सौप दी गई थी, जो प्रान्तीय सविधानोकी रचना करनेवाला था।

उदाहरणके लिए, आसाममे ३४.४२ लाख मुसलमान थे और ६७.५० लाख गैर-मुस्लिम थे। परन्तु इन गैर-मुस्लिमोमे २४.८४ लाख पहाडी आदिवासी भी शामिल थे। मुस्लिम लीगकी बाजी सबको मालूम थी। वह यह थी कि आदिवासियोको हिन्दुओसे अलग कर दिया जाय, उन्हे अलग मताधिकार

दिया जाय और स्वशासनका वचन दिया जाय तथा बगालके अत्यधिक घनी आबादीवाले सीमावर्ती कुछ जिलासे मुसलमानोको सामूहिक रूपमें लाकर आसाममें बसा दिया जाय और इस तरह आसामका मुस्लिम बहुमतवाला प्रान्त बना दिया जाय। इस प्रकार यूरोपियनाके सहयोगसे — जिन्हे वतमान शासन विधानमे अन्यायपूण प्रतिनिधित्व प्राप्त था — आसामके लिए समूह क' से बाहर निकलना लगभग असभव बना दिया जाता। सविधान-सभामें विभाग क के विभिन्न जातियाके प्रतिनिधित्वकी स्थिति यह थी

	मुस्लिम	यूरोपियन	अन्य	कुल
बगाल	३३	५	२२	६०
आसाम	३	१	६	१०

परा १९ की भाषासे लाभ उठानेमें मुस्लिम लीगने जरा भी देर नही की। जिन्नाने यह घोषणा कर दी कि उन्हे कबिनेट मिशनकी योजनामें पाकिस्तानका आधार मालूम होता है और तदनुसार ६ जूनको मुस्लिम लीग कौसिलने प्रस्ताव पास किया कि विभाग ब' और क में "छह मुस्लिम प्रान्तोको जो अनिवाय रूपमें रखा गया है उस देखते हुए ब्रिटिश सरकारके कबिनेट-मिशनकी योजनामें पाकिस्तानकी नीव और आधार निहित है और इसलिए कबिनेट मिशन द्वारा प्रस्तावित सविधान बनानेवाले तत्रके साथ लीग सहयोग करनेको तयार है। प्रस्तावमें यह आशा छिपायी नही गयी कि 'अन्तमें इसका परिणाम सम्पूण प्रभुसत्ताधारी पाकिस्तानकी स्थापना होगा जिसे कबिनेट मिशनने अपने निवदनमें आरभसे ही रद्द कर दिया था'

लीगके इस प्रस्तावसे कबिनेट मिशन असमजसमें पड गया। ब्रिटिश सरकारकी परपरागत नीतियाकी कृपासे उसकी ऐसी स्थिति हो गई कि जो कुछ भी वह करने जाता था उसीमें वह गलत साबित होता था। परन्तु उसकी कठिनाईसे उसकी योजनाके भीतर रहे स्वाभाविक दोष उचित नहीं ठहरते थे। गाधीजीने वे दोष भी दिखाये और उनका उपाय भी बताया।

कबिनेट मिशनकी १६ मईवाली योजनाकी घोषणाके बाद अपनी मुलाकातके दौरान लार्ड पथिक-लारेन्सने गाधीजीको उनके एक प्रश्नके उत्तरमें यह विश्वास दिलाया था कि उनकी योजनाका सपूण आधार स्वेच्छापूण है। उसमें कहीं भी अनिवार्यताका तत्त्व नही है। गाधीजीने कहा कि अगर ऐसी बात है, तो बाकी बातें अथ लगानेकी पद्धतिसे ठीक की जा सकता हैं। गाधीजीने अपने सामने जो काम था उसमें अपना कानूनी दिमाग लगाया। जब वे वकालत करते थे तब भी यही मानते थे कि कानून सत्य और न्यायकी रक्षाके नियमोका नीतिशास्त्र है। १६ मईवाली योजनाके सबधमें उन्होंने 'हरिजन' के एक लेखमें यह लिखा

ब्रिटिश सरकारकी ओरसे कैबिनेट-मिशन और वाइसरॉयने जो राज्य-पत्र (स्टेट पेपर) प्रकाशित किया है, उसकी ४ दिन तक बारीकीसे जाच करनेके बाद मेरा यह दृढ विश्वास हो गया है कि वर्तमान स्थितिमे ब्रिटिश सरकारका यह उत्तम दस्तावेज है।

किन्तु मेरी प्रशसाका यह अर्थ नही है कि जो चीज ब्रिटिश दृष्टि-कोणसे उत्तम है, वह भारतीय दृष्टिकोणसे भी उत्तम अथवा कमसे कम अच्छी है। उनकी उत्तम वस्तु हानिकारक भी हो सकती है। . .

वह राज्य-पत्र एक अपील है और एक सलाहके रूपमें है। उसमें कोई अनिवार्यता नही है। इस प्रकार प्रान्तीय विधान-सभाए चाहे तो प्रतिनिधि चुने भी या न भी चुने। प्रतिनिधि चुन लिये जानेके बाद वे सविधान-सभामे चाहे तो शरीक हो भी या न भी हो। संविधान-सभाका अधिवेशन होने पर वह ऐसी कार्य-प्रणाली बना सकती है, जो कैबिनेट-मिशनके निवेदनमे बताई गई कार्य-प्रणालीसे भिन्न हो। किसी व्यक्ति अथवा दलके लिए कोई भी बात, जो बधनकारक है, स्थितिकी आव-श्यकतासे पैदा होती है।

इसलिए जब लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सने किसी पत्र-प्रतिनिधिसे कहा कि, "यदि वे लोग उस आधार पर एकत्र हो जाते हैं, तो इसका अर्थ यह होगा कि उन्होने उस आधारको स्वीकार कर लिया है; परन्तु फिर भी वे उसे बदल सकते हैं, यदि प्रत्येक दलके बहुमतसे वे उसे बदलना चाहे," तब उनकी बात इस अर्थमें सही थी कि जो लोग निवेदनमे रही वस्तुको भलीभाति समझकर प्रतिनिधि बनते है उनसे निवेदन रचनेवाले यह आशा रखते हैं कि प्रतिनिधि उस आधारको स्वीकार करेगे — सिवा इसके कि मुख्य दल उसमें आवश्यक परिवर्तन करे।

यहा तक तो उनका निवेदन पूर्ण है। परन्तु घटको (यूनिट्स) के बारेमें क्या होगा? सिक्खोका तो एकमात्र वतन भारतमे पजाब ही है। क्या वे अपनी इच्छाके विरुद्ध अपने आपको उस विभागका अग समझे, जिसमे सिन्ध, बलूचिस्तान और सीमाप्रान्त शामिल है? मेरी रायमे निवेदनके ऐच्छिक स्वरूपका यह तकाजा है कि प्रत्येक घटककी स्वतत्रतामें कोई फर्क नही आना चाहिये। कोई भी घटक या विभाग उसमे शरीक होने या न होनेको स्वतत्र है। बाहर निकलनेकी स्वतत्रता एक अतिरिक्त सरक्षण है। वह पैरा १५ (५) में जो स्वतत्रता रखी गई है, उसका स्थान कभी नही ले सकता।[१३]

गाधीजीने कैबिनेट-मिशनके वक्तव्य पर भी सत्यकी वही कठोर कसौटी लगाई, जो वे अपने जीवनके प्रत्येक कार्य पर लगाते थे। क्या मिशनके

अर्थ हो सकता है कि यदि कोई **प्रान्त** यह चाहे कि समूहका कोई सविधान न वनाया जाय, तो उसके प्रतिनिधियोकी इच्छाके विरुद्ध उस मामलेमें उस विभागके दूसरे प्रान्त या प्रान्तोके प्रतिनिधियोके वहुमतसे कोई निर्णय उस पर लादा नही जायगा। अन्यथा प्रान्तोको दी गई स्वतत्रताका कोई अर्थ नही है। मौलाना आजादने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सके नाम लिखे अपने २० मईके पत्रमे लिखा: "वुनियादी व्यवस्था (वक्तव्यके पैरा १५ के अनुसार) किसी प्रान्तको जैसा वह चाहे वैसा करनेकी पूरी स्वतंत्रता देती है और वादमे इस मामलेमे कुछ अनिवार्यता दिखाई देती है, जिससे उस स्वतत्रताका स्पष्ट भग होता है। . . . यह वात स्पष्ट नही है कि किसी प्रान्तको या उसके प्रतिनिधियोको कोई ऐसी वात करनेके लिए, जिसे वे नही करना चाहते, कैसे मजवूर किया जा सकता है।" इस प्रकार, "कोई प्रान्तीय विधान-सभा अपने प्रतिनिधियोको आदेश दे सकती है कि वे किसी भी समूहमे या किसी विशेप समूह अथवा विभागमे शामिल न हो।" गाधीजीने वताया कि किसी प्रान्तकी इच्छाओको निश्चित रूपमे जाननेका सवसे सीधा उपाय यह है कि सविधान-सभाका सभापति सभाकी पहली वैठकमे प्रान्तोके प्रतिनिधियोसे यह पूछ ले कि उनके प्रान्तको जिस समूह या विभागमें जुडनेके लिए कहा गया है उसमे जुडना उन्हे मान्य है या नही। यदि किसी विशेप प्रान्तके प्रतिनिधि वैसा करनेसे इनकार कर दे, तो उस प्रान्तको विभाग द्वारा वनाये जानेवाले समूहसे वाहर रहनेकी स्वतत्रता होगी और उसके लिए उस विभागमें अधिक वैठनेकी जरूरत नही रहेगी।[१७]

तदनुसार २४ मईके काग्रेस कार्यसमितिके प्रस्तावमे यह कहा गया था: "कैविनेट-मिशनके वक्तव्यमे प्रान्तीय स्वशासनके और शेप सत्ताए प्रान्तोके पास रहनेके मूलभूत सिद्धान्तका समर्थन किया गया है। उसमे यह भी कहा गया है कि **प्रान्तोंको** समूह वनानेकी स्वतत्रता होनी चाहिये। परन्तु वादमें यह सिफारिश की गई है कि प्रान्तीय प्रतिनिधि **विभागोंमें वंट** जायगे और ये विभाग 'प्रत्येक विभागके प्रान्तोके लिए प्रान्तीय सविधान वनानेका काम हाथमें लेगे तथा यह **भी निर्णय करेंगे कि उन प्रान्तोके लिए कोई समूह-संविधान रचा जायगा या नहीं।**' इन दो अलग अलग व्यवस्थाओमे स्पष्ट विसगति है। . . . वक्तव्यके सिफारिशी स्वरूपको कायम रखने और धाराओको एक-दूसरेके साथ युक्तिसगत वनानेके लिए समितिने पैरा १५ का यह अर्थ समझा है कि सवसे पहला मौका मिलते ही सम्वन्धित **प्रान्त** इस वारेमे अपना चुनाव कर लेंगे कि उन्हे जिस **विभागमें** रखा गया है उसमे वे रहेंगे या नही रहेंगे।" (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

किन्तु कबिनेट मिशनकी यह राय थी कि काग्रेसने जो यह अथ लगाया है कि प्रान्त मौका मिलते ही पहले यह चुनाव कर सकते ह कि जिस विभागमें उन्हे रखा गया है उसमें वे रहेंगे या नही ' वह अथ कबिनेट मिशनके 'आशाया'के अनुरूप नहीं है विभाग और समूह बनानेकी व्यवस्था जिन विचारोके कारण की गई व सबको विदित" थे। जाहिर है कि मिशनका मतलब इस प्रश्न पर मुस्लिम लीगके कड़े रुखस था और 'यह उस योजनाका आवश्यक पहलू है", जो एक सम्पूण वस्तु थी।[१८]

इसने विभिन्न दलोके सामने यह प्रश्न खडा कर दिया कि क्या किसी राज्य-पत्रमें उसे बनानवालाके 'आशयो की बात दलोको बाधनवाली मानी जा सकती है। एक बार जब कोई फसला किसी कानूनी अथवा राजनीतिक दस्तावजमें शामिल कर लिया जाता है, तो उसके आशय'का अनुमान कानून शास्त्रके माने हुए नियमोके अनुसार असली दस्तावजके मूल पाठसे ही करना पडता है। ससदीय कानूनोका अथ करनेमें कानूनके पास होनेके दौरान चर्चामें दिये गये प्रस्तावकके भाषणोका भी प्रमाण नही दिया जा सकता। इसलिए यदि कबिनेट मिशनकी १६ मईवाली योजनाका काग्रेसने एक तरहसे अथ लगाया मुस्लिम लीगने दूसरी तरहसे लगाया और कबिनट मिशनने तीसरी तरहसे लगाया तो उचित माग यही था कि किसी न्यायपचको सौंपकर इस मतभेदका समाधान करा लिया जाता।

गाधीजीके साथ हुई एक मुलाकातमें लदनके न्यूज क्रानिकल के प्रतिनिधि नामन क्लिफने पूछा इसका वही अथ क्यो न लगाया जाय जो वे लगाते ह ? उनका आशय क्या था इसका निणय वे ही उत्तम रूपसे कर सकते ह।

जो कुछ मूल पाठमें लिखा हो उसके बाहर बनानवालेके आशयको कानून नही मानता और यह ठीक ही है।

क्या दस्तावजको फिरसे लिखकर आशयको स्पष्ट नही किया जा सकता ?

यह असभव है। इसका अथ होगा उसमें हमेशा परिवतन और काटछाट करते रहना।

क्या भावनाके अनुसार अथ लगाना शब्दाथसे बेहतर नही होगा ?

इन सब प्रश्नोका निणय करना अदालतका काम है।

क्या आत्मोत्सग आपकी एक बुनियादी मान्यता नही है ?'

गाधीजी जोरसे हसकर बोले शतान भी धमकी दुहाई दे सकता है।'

५

२४ मईको पास हुए कांग्रेस कार्यसमितिके प्रस्तावमे १६ मईकी कैबिनेट-मिशनकी योजना पर कोई अन्तिम मत नही दिया गया था। समितिको लगा कि वह तब तक ऐसा नही कर सकती जब तक उसके सामने कामचलाऊ राष्ट्रीय सरकार और सविधान-सभा स्थापित करनेसे सबधित समस्याओका सपूर्ण चित्र न हो, क्योकि दोनो पर एक साथ विचार करना आवश्यक है। जब समूह-रचनाके बारेमे विवाद चल रहा था, तब कार्यसमिति उन प्रश्नो ('आन्तरिक कसौटियो') की बारीकीसे जाच करनेमे लग गई। पहला प्रश्न था ब्रिटिश सेनाको भारतसे हटा लेनेका। २० मईको गाधीजीने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको १८ और १९ मईकी कैबिनेट-मिशनके साथ हुई अपनी बातचीतका सार बताते हुए लिखा "मै आपकी और सर स्टैफर्डकी स्पष्टवादिताकी प्रशसा करता हू, परन्तु मैं अपना यह दृढ विश्वास लेखबद्ध कर देना चाहता हू कि स्वाधीनता वास्तवमे मजाक हो जायगी, यदि भीतरी शान्ति और व्यवस्थाके लिए अथवा बाहरी खतरेसे देशकी रक्षा करनेके लिए भी ब्रिटिश सेना भारतमे रही। सविधान-सभाका काम पूरा होनेके बाद भी इस मामलेमें भारतकी दशा आजसे अच्छी नही होगी। यदि सेनाके सम्बन्धमे आजकी स्थिति बनी रही, तो 'अगले महीने स्वाधीनता' की बात या तो झूठी है या एक विचारहीन नारा है। अंग्रेजोको 'भारत छोडो' की बात बिना किसी शर्तके स्वीकार करनी है, चाहे सविधान-सभाको सविधान बनानेमे सफलता मिले या न मिले। हर बातमे अंग्रेजोके रुखमे क्रातिकारी परिवर्तन होना आवश्यक है। . . अन्तमे, **यह किसी तरह भी नहीं कहा जा सकता कि ब्रिटिश सेनाके भारतमें रहते हुए सविधान-सभामें स्वाभाविक व्यवहार होगा।**" (मोटे टाइप मैंने किये है।)

दूसरा प्रश्न था सार्वभौम सत्ता (पैरेमाउन्टसी) का। भारतमें छह सौसे अधिक देशी राज्य थे। उनका प्रदेश ७ लाख १२ हजार वर्गमीलमे फैला हुआ था --- अर्थात् देशके कुल क्षेत्रफलका वह लगभग एक-तिहाई भाग था। और भारतकी कुल आबादीका चौथाई भाग इन राज्योमे बसा था। इन देशी राज्यो पर ब्रिटिश सत्ता सार्वभौम अधिकारका दावा करती थी तथा इस पर वह अमल भी करती थी। वे ज्यादातर अंग्रेजोकी ही सृष्टि थे। "कुछ राज्योको अंग्रेजोने बचाया था, औरोको उन्होने पैदा किया था।"[१९] लॉर्ड कैनिंगके शब्दोमें कहें तो १८५७ के सिपाही-विद्रोहके दिनोमें "उन्होने (देशी राज्योने) ऐसे तूफानको रोका, जो अन्यथा एक प्रचण्ड लहरमें हमे बहा ले जाता। शान्तिकालमे उनके कई उपयोग है।"[२०] जैसा श्री वेजवुड बेनने ब्रिटिश लोकसभाकी सयुक्त प्रवर-समितिमें बताया था, १९३५ के रिफार्म्स एक्टमें

देशी राज्य संघ शासनमें केन्द्रको अनुदार और अंग्रेजोंका हिमायती"[11] बनानेके लिए लाये गये थे। इन देशी रियासतोंको भारत सरकारका पोलिटिकल विभाग अपने सुरक्षित स्थान समझता था। भारत सरकारकी बराबर यह नीति बनी रही कि उन्हें ब्रिटिश साम्राज्यवादकी आज्ञाकारिणी कठपुतलियोंके रूपमें बढ़ने दिया जाय। जैसा कि सर जान माल्कमने कहा था, 'किसी भी तरहकी राजनीतिक सत्ताके बिना शाही हथियारों'[12] का पाट अदा करनेके लिए ये राज्य गौरव अनुभव करते थे।

राजाओं और उनकी प्रजाके आपसी सम्बन्धोंके बारेमें ब्रिटिश नीतिका सार लार्ड एल्गिनके १८६२ के इस रहस्यपूर्ण उद्गारमें आ गया था: "सिंधिया और होल्कर हमारे प्रति उतने ही वफादार हैं जितने वे कमजोर हैं और यह जानते हैं कि उन्हें अपनी ही प्रजा और पड़ोसियोंके विरुद्ध हमारी सहायता और सहारेकी जरूरत है।"[13] तदनुसार पोलिटिकल विभाग देशी राज्योंके भीतर जन-आन्दोलनोंको निरुत्साहित करता था और राष्ट्रवादी भारतके साथ देशी राज्योंकी प्रजाका सम्पर्क स्थापित होने पर नाराज होता था।

यद्यपि कानूनन देशी रियासतोंके सम्बन्ध ब्रिटिश सम्राटके साथ थे, फिर भी ब्रिटिश शासन विधान और उसकी भारतीय शाखाकी रचना ऐसी थी कि सम्राटके साथके सम्बन्धोंका सिद्धान्त व्यवहारमें भारत सरकारके साथके सम्बन्धोंमें ही प्रगट होता था अन्य किसी मार्गसे नहीं। ब्रिटिश सरकार अपनी सार्वभौम सत्ताके अनेक लक्षणोंमें से एक लक्षणके रूपमें सार्वभौम सत्ताका अर्थ करने तथा अपने कार्योंका क्षेत्र निश्चित करनेके अबाधित अधिकारका दावा करती थी। देशी राज्योंके भविष्यके बारेमें कोई भी व्यवस्था करते समय उनकी सलाह लेना उसका फर्ज है ऐसा ब्रिटिश सरकारने कभी नहीं माना। जब उसने १८६० में सार्वभौम सत्ताकी पहली घोषणा की अथवा जान कम्पनीके हाथसे भारतके शासनकी बागडोर संभाली तब भी उसने देशी राज्योंकी सलाह नहीं ली थी। जब १८७६ के रायल टाइटल्स एक्टके अनुसार ब्रिटेनकी महारानीको भारतकी सम्राज्ञी घोषित किया गया तब भी उसने उनकी सलाह नहीं ली। और न उस समय उनकी सलाह ली जब सार्वभौम सत्ताका कानूनी आधार स्थापित करनेवाला १८८९ का इंटरप्रिटेशन एक्ट पास किया गया।

भारत-मंत्री सर सेम्युअल होरने ब्रिटिश लोकसभामें भारत शासन-विधानके मसविदे (१९३५) सम्बन्धी बहसके दौरान यह घोषणा की थी कि राजाओंको दोमें से किसी एक बातका चुनाव करना है: या तो वे सम्राटकी सार्वभौम सत्ताके अधीन सामन्त बने रहें या संघ शासन (फेडरेशन) में आ जायं। देशी राज्योंमें जितना ही अधिक संघ शासन होगा और जितनी अधिक प्रतिनिधित्ववाली सरकार होगी उतनी ही उनकी सम्राटकी सार्वभौम सत्ताकी

मातहती कम होगी। सार्वभौम सत्ताके अनन्त चक्रसे बचनेका और कोई मार्ग नहीं है, क्योंकि सार्वभौम सत्ता किसी प्रकारकी व्याख्या ही स्वीकार नही करती हे और इसलिए उसका कार्यक्षेत्र अनन्त और अपार है।

इसलिए सत्ताके हस्तान्तरित होने पर स्वाभाविक घटनाक्रम तो यह था कि अनुगामी सरकार या सरकारोको उत्तराधिकारमें सार्वभौम सत्ता सहित वे सब विशेष अधिकार मिल जाते और वह या वे सरकारे उन सब कामोको करती, जो सम्राट्के प्रतिनिधिको अपनी ही सत्तासे अथवा सम्राट्की दी हुई सत्तासे प्राप्त थे या करने होते थे। परन्तु १६ मईकी अपनी योजनामें कैबिनेट-मिशनने यह घोषित कर दिया कि भारतीय हाथोमे सत्ताके हस्तान्तरित होने पर सार्वभौम सत्ता 'विलीन' हो जायगी। वह न तो ब्रिटिश सम्राट्के पास रहेगी और न उत्तराधिकारी सरकारको सौंपी जायगी। इसका परिणाम यह होता कि भारतको विरासतमे छह सौसे अधिक ऐसे राजाओसे निबटनेकी समस्या मिलती, जिन्हे ब्रिटिश साम्राज्यवादकी परम्पराकी तालीम मिली थी और जिनमें से प्रत्येक अपने लिए 'स्वाधीन' होनेका दावा करता था। जब भारतकी छाती पर छह सौसे अधिक साम्राज्यवादी मनोवृत्तिके राज्य हो और उन्हे सरकारी तौर पर हिन्दू और मुस्लिम राज्योके रूपमें विभाजित किया गया हो, तब तो भारतको राजनीतिक दृष्टिसे सुदृढ करनेका कार्य लगभग असभव ही था और भारतको मजबूर होकर इस समस्याको हल करनेके लिए अंग्रेजोकी मदद लेनी ही पडती। इस प्रकार ब्रिटिश सत्ताके हट जानेके बाद भी अंग्रेजोकी पराधीनता लम्बे समय तक देशमे बनी ही रहती। गाधीजीने कैबिनेट-मिशनके सदस्योको सुझाया कि अगर सार्वभौम सत्ताका अत करना है, तो जब सविधान-सभा सविधान तैयार करनेके कार्यमें लगी हुई हो और "कानूनसे न सही परन्तु वास्तवमे" स्वाधीनता कार्य करने लगी हो, तभी सार्वभौम सत्ताका अन्त हो जाना चाहिये

> सर स्टैफर्ड क्रिप्सको मेरे सुझाव पर अमल करनेमे खतरा दिखाई दिया। परन्तु मेरा विचार इसके विपरीत था। मेरे प्रस्तावको माननेसे कलमके एक ही झटकेमें राज्योके लोगोमे जान आ जाती। अन्तरिम सरकार राजाओके लिए भी वरदान सिद्ध होती। क्योंकि राजा लोग वैसे तो सार्वभौम सत्ताके ही पैदा किये हुए हे और अपनी हस्ती कायम रखनेके लिए उसी पर अवलम्बित हैं, परन्तु उसके भारी बोझके नीचे वे दबे रहते हैं। सार्वभौम सत्ताके तत्काल समाप्त होनेसे राजाओ और सार्वभौम सत्ताकी सचाईकी परीक्षा हो जायगी।[२८]

गाधीजीने यह भी सुझाया कि यदि इस भारतीय भावनाकी राजाओके दयोमें प्रतिध्वनि न हो, तो मै स्वय तो "सर स्टैफर्ड क्रिप्सके विचार" से

सन्तुष्ट हो जाऊगा। सर स्टफड्का विचार यह था कि सावभौम सत्ताका उपयोग अब तक तो निश्चित रूपसे प्रजाके विरुद्ध राजाआकी रक्षा करनेमें और प्रजाका स्वतन्त्रता और प्रगतिका दमन करनेमें हुआ है। लेकिन अब वह राज्याकी प्रजाकी रक्षा और प्रगतिके लिए कुछ समय तक बनी रहनी चाहिये। यदि देशी राज्याके लोग पिछडे हुए ह ता इसका कारण यह नही है कि सीधे ब्रिटिश राज्यके अधीन रहनेवाले भारतके दूसरे भागाके लोगासे वे भिन्न प्रकारके ह बल्कि इसका कारण यह है कि वे दोहरी गुलामीमें कराहते रहे ह। मने इस सुझावका भी समथन किया कि सावभौम सत्ताका उपयोग राष्ट्रीय सरकारके परामशसे होना चाहिये।

तीसरे काग्रसका कहना था कि अगर सविधान-सभाको असमान तत्त्वोकी नही बनाना है, तो सविधान-सभामें जानेवाले देशी राज्याके प्रतिनिधि लगभग उसी तरह जाने चाहिये जिस तरह प्रान्तोके प्रतिनिधि जाने चाहिये, और यह हेतु सिद्ध करनेके लिए भारतीय प्रजाको राजाओसे यह आग्रह करनेकी आजादी होनी चाहिये कि वे ब्रिटिश भारतमें जो राजनीतिक स्थिति है वसी हा स्थिति अपने राज्यामें पदा करे।

चौथे, यूरोपियनाके मतका प्रश्न था। श्री एटलीकी घाषणाके अनुसार भारतके सविधानका निणय भारतीयोको करना था। इसलिए यूरोपियनाका सविधान सभाके चुनावमें खडे होनेका या मत देनेका कोई अधिकार नही हो सकता था। १६ मईके वक्तव्यमें यह व्यवस्था की गई थी कि दस लाखकी आबादीके प्रतिनिधिके रूपमें सविधान-सभाका एक सदस्य चुना जाय। इस आधार पर भी यूरोपियनोको सविधान-सभामें जानेका अधिकार मिलता नही था। परन्तु १९३५ के भारत शासन विधानके अनुसार बगाल और आसामके २१००० यूरोपियनोको इन दो प्रान्तामें जो विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया था उसके अनुसार उन्हे ६० लाखकी आबादीके बराबर प्रतिनिधित्व मिला हुआ था। बगाल और आसामको कुल मिलाकर जो ३४ सामान्य बठकें दी गयी थी उनमें से ये लोग ६ सदस्य सविधान-सभाके लिए भेज सकते थे। विभाग 'क' में इससे एक तरहस सतुलन शक्ति उनके हाथमें आ जाती थी और यह अत्यन्त महत्त्वपूण प्रश्न हल करनेके लिए उनको सत्ता मिल जाती थी कि उत्तर-पूर्वी भारतमें कोई समूह बनाया जाय या नही।

आखिरी प्रश्न था केन्द्रमें राष्ट्रीय सरकार और सविधान-सभाके अधिकाराका। यदि सविधान-सभाका ऐसा सावभौम सत्ता धारण करनवाली सस्थाके रूपमें काम करना हो जो उसके सामने आनेवाले मामलेमें जसा चाहे वसा निणय कर सके और अपने निणयो पर अमल करा सके तब तो वह सच्चे अर्थमें अतरिम राष्ट्रीय सरकारके द्वारा बुलाई जानी चाहिये। इसके साथ यह

मर्यादा लगी हुई थी — और उसे कांग्रेसने स्वेच्छापूर्वक मान लिया था — कि कुछ बडे साम्प्रदायिक प्रश्नोके बारेमें दोनो बडी कोमोके बहुमतसे निर्णय होना चाहिये। गाधीजीने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको लिखा · "मै जितना ही सोचता हू और देखता हू उतना ही मेरा यह मत दृढ होता जा रहा है कि सविधान-सभाके सदस्योके चुनावका आदेश जारी होनेसे पहले उचित स्वरूपवाली राष्ट्रीय सरकार, **जो कानूनकी दृष्टिसे न सही परन्तु वास्तवमें** केन्द्रीय विधान-सभाके चुने हुए सदस्योके प्रति **जिम्मेदार** हो, स्थापित हो जानी चाहिये। तभी — उससे पहले नही — आनेवाली घटनाओकी सही तसवीर पेश की जा सकती है।"[२५] (मोटे टाइप मैने किये है।)

पहले मुद्दे पर कैबिनेट-मिशनका उत्तर स्पष्ट 'नही' था। यह मुद्दा था भारतसे ब्रिटिश सेनाए हटा लेनेका। "नये सविधानके मातहत स्वाधीन भारतकी इच्छाके विरुद्ध भारतमे ब्रिटिश सेनाए रखनेका तो कोई इरादा नही है . . . परन्तु अतरिम कालमे . . . भारतकी सुरक्षाकी आखिरी जिम्मेदारी . . ब्रिटिश पार्लियामेन्टकी है और इसलिए ब्रिटिश सेनाए (यहा) रहनी चाहिये।"[२६] परन्तु इसके साथ ही खुश करनेके लिए यह आश्वासन दिया गया कि सम्राट्की सरकार इस बातके लिए "अत्यत उत्सुक है कि यह अतरिम काल छोटेसे छोटा हो।"[२७]

सार्वभौम सत्ता (पैरेमाउन्टसी) के अमलके प्रश्नका उत्तर भी कैबिनेट-मिशनकी तरफसे उतना ही स्पष्ट था। सत्ता हस्तान्तरित होने तक उसका प्रयोग सम्राट्का प्रतिनिधि करता रहेगा और वह प्रयोग राष्ट्रीय सरकारके परामर्शसे नही होगा। हा, समान आर्थिक हितके मामलोमे अतरिम सरकार और देशी राज्योके बीच सलाह-मशविरा हो सकता है। लेकिन यह भी कह दिया गया कि अतरिम कालमे सम्राट्का प्रतिनिधि देशी राज्योके लोकतान्त्रिक आन्दोलनको बढानेमें स्वाभाविक रूपमे सहायता देना चाहेगा, जिससे उनके लिए सघ-सरकारमे शामिल होना आसान हो जाय।

सविधान-सभाके कार्यमें यूरोपियनोके भाग लेनेके बारेमे भी कैबिनेट-मिशन इसके सिवा कोई आश्वासन नही दे सका कि वह अपने प्रभावका उपयोग करके यूरोपियनोको समझायेगा कि १६ मईकी योजनाके अनुसार उन्हे जो अधिकार दिया गया है उसका प्रयोग वे न करे। परन्तु सिद्धान्तत इसका निर्णय यूरोपियनोको ही करना है।

सविधान-सभाके अधिकारोके बारेमे कैबिनेट-मिशनका कहना था कि एक बार सविधान-सभाके बन जाने और कार्यारभ कर देनेके बाद "उसके अधिकारोमें हस्तक्षेप करने या उसके निर्णयो पर प्रश्न उठानेका कोई इरादा नही है।"

सन्तुष्ट हो जाऊगा। सर स्टफडका विचार यह था कि 'सावभौम सत्ताका उपयोग जब तक तो निश्चित रूपसे प्रजाके विरुद्ध राजाओंकी रक्षा करनेमें और प्रजाकी स्वतत्रता और प्रगतिका दमन करनेमें हुआ है। लेकिन अब वह राज्योंकी प्रजाकी रक्षा और प्रगतिके लिए कुछ समय तक बना रहनी चाहिये। यदि देशी राज्योंके लोग पिछडे हुए हैं तो इसका कारण यह नही है कि सीधे ब्रिटिश राज्यके अधीन रहनेवाले भारतके दूसरे भागोंके लोगोंसे वे भिन्न प्रकारके हैं बल्कि इसका कारण यह है कि वे दोहरी गुलामीमें कराहते रहे हैं। मैने इस सुझावका भी समथन किया कि सावभौम सत्ताका उपयोग राष्ट्रीय सरकारके परामशसे होना चाहिये।'

तीसरे काग्रेसका कहना था कि अगर सविधान-सभाको असमान तत्त्वोंकी नही बनाना है, तो सविधान-सभामें जानेवाले देशी राज्योंके प्रतिनिधि लगभग उसी तरह जाने चाहिये जिस तरह प्रान्तोंके प्रतिनिधि जाने चाहिये और यह हेतु सिद्ध करनेके लिए भारतीय प्रजाको राजाओंसे यह आग्रह करनेकी आजादी होनी चाहिये कि वे ब्रिटिश भारतमें जो राजनीतिक स्थिति है वसी ही स्थिति अपने राज्योंमें पदा करे।

चौथे यूरोपियनोंके मतका प्रश्न था। श्री एटलीकी घोषणाके अनुसार भारतके सविधानका निणय भारतीयोंको करना था। इसलिए यूरोपियनोंका सविधान-सभाके चुनावमें खडे होनेका या मत देनेका कोई अधिकार नही हो सकता था। १६ मईके वक्तव्यमें यह व्यवस्था की गई थी कि दस लाखकी आबादीके प्रतिनिधिके रूपमें सविधान-सभाका एक सदस्य चुना जाय। इस आधार पर भी यूरोपियनोंको सविधान-सभामें जानेका अधिकार मिलता नही था। परन्तु १९३५ के भारत शासन विधानके अनुसार बगाल और आसामके २१००० यूरोपियनोंको इन दो प्रान्तोंमें जो विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया था उसके अनुसार उन्हें ६० लाखकी आबादीके बराबर प्रतिनिधित्व मिला हुआ था। बगाल और आसामकी कुल मिलाकर जो ३४ सामान्य बठकें दी गयी थीं उनमें से ये लोग ६ सदस्य सविधान-सभाके लिए भेज सकते थे। विभाग 'क' में इससे एक तरहसे सतुलन शक्ति उनके हाथमें आ जाती थी और यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न हल करनेके लिए उनको सत्ता मिल जाती थी कि उत्तर-पूर्वी भारतमें कोई समूह बनाया जाय या नही।

आखिरी प्रश्न था केन्द्रमें राष्ट्रीय सरकार और सविधान-सभाके अधिकारोंका। यदि सविधान-सभाको ऐसी सावभौम सत्ता धारण करनेवाली सस्थाके रूपमें काम करना हो जो उसके सामने आनेवाले मामलेमें जसा चाहे वसा निणय कर सके और अपने निणयों पर अमल करा सके तब तो वह सच्चे अथमें अतरिम राष्ट्रीय सरकारके द्वारा बुलाई जानी चाहिये। इसके साथ यह

मर्यादा लगी हुई थी — और उसे कांग्रेसने स्वेच्छापूर्वक मान लिया था — कि कुछ बडे साम्प्रदायिक प्रश्नोके बारेमे दोनो बडी कौमोके बहुमतसे निर्णय होना चाहिये। गाधीजीने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको लिखा: "मै जितना ही सोचता हू और देखता हू उतना ही मेरा यह मत दृढ होता जा रहा है कि संविधान-सभाके सदस्योके चुनावका आदेश जारी होनेसे पहले उचित स्वरूपवाली राष्ट्रीय सरकार, जो **कानूनकी दृष्टिसे न सही परन्तु वास्तवमें** केन्द्रीय विधान-सभाके चुने हुए सदस्योके प्रति **जिम्मेदार** हो, स्थापित हो जानी चाहिये। तभी — उससे पहले नही — आनेवाली घटनाओकी सही तसवीर पेश की जा सकती है।"[२५] (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

पहले मुद्दे पर कैबिनेट-मिशनका उत्तर स्पष्ट 'नही' था। यह मुद्दा था भारतसे ब्रिटिश सेनाए हटा लेनेका। "नये सविधानके मातहत स्वाधीन भारतकी इच्छाके विरुद्ध भारतमे ब्रिटिश सेनाए रखनेका तो कोई इरादा नही है . . . परन्तु अतरिम कालमें . . . भारतकी सुरक्षाकी आखिरी जिम्मेदारी . . . ब्रिटिश पार्लियामेन्टकी है और इसलिए ब्रिटिश सेनाए (यहा) रहनी चाहिये।"[२६] परन्तु इसके साथ ही खुश करनेके लिए यह आश्वासन दिया गया कि सम्राट्की सरकार इस बातके लिए "अत्यत उत्सुक है कि यह अंतरिम काल छोटेसे छोटा हो।"[२७]

सार्वभौम सत्ता (पैरेमाउन्टसी) के अमलके प्रश्नका उत्तर भी कैबिनेट-मिशनकी तरफसे उतना ही स्पष्ट था। सत्ता हस्तान्तरित होने तक उसका प्रयोग सम्राट्का प्रतिनिधि करता रहेगा और वह प्रयोग राष्ट्रीय सरकारके परामर्शसे नहीं होगा। हा, समान आर्थिक हितके मामलोमे अतरिम सरकार और देशी राज्योके बीच सलाह-मशविरा हो सकता है। लेकिन यह भी कह दिया गया कि अतरिम कालमें सम्राट्का प्रतिनिधि देशी राज्योके लोकतान्त्रिक आन्दोलनको बढानेमे स्वाभाविक रूपमे सहायता देना चाहेगा, जिससे उनके लिए सघ-सरकारमे शामिल होना आसान हो जाय।

सविधान-सभाके कार्यमे यूरोपियनोके भाग लेनेके बारेमें भी कैबिनेट-मिशन इसके सिवा कोई आश्वासन नही दे सका कि वह अपने प्रभावका उपयोग करके यूरोपियनोको समझायेगा कि १६ मईकी योजनाके अनुसार उन्हे जो अधिकार दिया गया है उसका प्रयोग वे न करे। परन्तु सिद्धान्तत इसका निर्णय यूरोपियनोको ही करना है।

सविधान-सभाके अधिकारोके बारेमें कैबिनेट-मिशनका कहना था कि एक बार सविधान-सभाके बन जाने और कार्यारंभ कर देनेके बाद "उसके अधिकारोमें हस्तक्षेप करने या उसके निर्णयो पर प्रश्न उठानेका कोई इरादा नही है।"

अन्तमें कबिनेट मिशन केन्द्रीय विधान-सभाके प्रति कानूनी तौर पर जिम्मेदार अन्तरिम सरकार बनानेका प्रस्ताव माननेको तैयार नहीं हुआ परन्तु उसने यह आश्वासन दिया कि 'सम्राटकी सरकार उन परिवर्तनोंके परिणामको स्वीकार कर लेगी' जो केन्द्रमें करने हैं और उनको पूरा महत्त्व देगी तथा भारतके दैनिक प्रशासन-कार्यमें भारतीय सरकारको अधिकसे अधिक स्वतंत्रता देगी। "

*

ये बातें और दूसरी सम्बन्धित कुछ बातें, जिनकी चर्चा गांधीजीने कबिनेट मिशनके साथ १८ और १९ मईको की थी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी इसलिए गांधीजीने उनके साथ हुई अपनी बातचीतका सार लिखकर जांचके लिए लार्ड पेथिक-लॉरेन्सके पास भेज दिया। लार्ड पेथिक-लॉरेन्सने उत्तरमें लिख भेजा कि आपके पत्रके कुछ अंश कबिनेट मिशनके स्मरणोंके साथ मेल नहीं खाते। उन्होंने साथमें एक नोट भेजा जिसमें मतभेदके मुद्दे लिख दिये और इस बातसे साफ इनकार किया कि सर स्टफर्ड क्रिप्सने कभी यह 'स्वीकार किया था कि भूतकालमें सार्वभौम सत्ताका उपयोग देशी राज्योंकी प्रजाकी स्वतंत्रता और प्रगतिका दमन करके राजाओंकी रक्षाके लिए किया गया था सर स्टफर्डने जो कुछ कहा था उसका आप गलत अर्थ लगा रहे हैं। उन्होंने यह कहा था कि उन्हें इस प्रचलित मान्यताका पता है कि भूतकालमें सार्वभौम सत्ताका कुछ मामलोंमें प्रजाके विरुद्ध राजाओंका समर्थन करनेके लिए उपयोग किया गया था।

और मुद्दे भी ऐसे थे जिन पर कबिनेट मिशनके स्मरणमें फर्क था। लार्ड पेथिक लॉरेंसके पत्रमें आखिरी बात यह कही गई थी कि कबिनेट मिशन चाहता है कि मैं यह बात विशेष रूपसे स्पष्ट कर दूं कि स्वाधीनता नये संविधानके अमलमें आनेके बाद आयेगी, न कि उसके पहले।'

गांधीजीने दूसरे दिन उत्तर दिया मैं तुरन्त उत्तर देनेके लिए तो आपका आभारी हूं परन्तु यह जरूर कहूंगा कि यह उत्तर दुर्भाग्यपूर्ण है। इसमें वही सत्ताधारियोंकी पुरानी मनोवृत्तिकी गंध आती है। क्या 'व्यवहारमें स्वाधीनता' के सूत्रकी कोई बुनियाद ही नहीं है? मैंने अपने पत्रमें जो कुछ कहा है उस सब पर मैं अडिग हूं। मैं तो समझा था कि साम्राज्यवाद भारतसे हमेशाके लिए चला गया है। लेकिन आपका पत्र साम्राज्यवादका उत्तम नमूना है। यह बात आपका एक पुराना मित्र लिख रहा है।'

परन्तु यह सब "गर्जना और प्रति-गर्जना" ही सिद्ध हुआ। दोनो एक-दूसरेको वहुत अच्छी तरह समझते थे। वादमे 'प्रेमपत्रो' का आदान-प्रदान हुआ और सारा झगडा गायव हो गया।

२४ मई, १९४६

गांधीजी द्वारा लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको:

प्रिय लॉर्ड: ... आशा है, आपके परिश्रमका आप पर वहुत ज्यादा वोझ नही पड़ रहा होगा। आपका सच्चा, मो० क० गाधी

२५ मई, १९४६

लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स द्वारा गाधीजीको:

प्रिय गाधीजी: ... मै यहा भारतको सार्वभौम सत्ता और स्वाधीनताके पथ पर अग्रसर करनेके विशेप हेतुसे आया हू और मुझे आपके सहयोगकी वडी जरूरत है। आपका सच्चा, पेथिक-लॉरेन्स

२७ मई, १९४६

गांधीजी द्वारा लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको:

प्रिय लॉर्ड: ... आशा है, मिशनका सव काम अच्छी तरह पूरा हो जायगा। आपका सच्चा, मो० क० गाधी

६

२८ मईको काग्रेस कार्यसमितिके सारे सदस्य विखर गये और गांधीजी थोड़ेसे आरामके लिए उनमे से कुछके साथ मसूरी चले गये। जव तक १६ मईवाली योजना पर मुस्लिम लीगका निर्णय मालूम न हो जाय तव तक दिल्लीमे उनके लिए और कुछ काम न था। और मुस्लिम लीग कौसिलकी वैठक ६ जूनसे पहले नही हो सकती थी, क्योकि जिन्ना कौसिलकी वैठक वुलानेके लिए हमेशाकी तरह १५ दिनका नोटिस चाहते थे।

दिल्लीकी झुलसानेवाली गर्मी और आंधियोका अनुभव लेनेके वाद महात्माजी मसूरी पहुचे, तव हवाखोरीके पहाडी स्थलोकी महारानीके समान मसूरीने अपनी ठडी और देवदारकी सुगधसे सुगंधित हवाओ, वृक्षोकी घनी छायावाले मार्गों तथा घने जगलोवाली पहाडियो तथा दर्रोसे उन्हे थोडा स्वागतयोग्य आराम दिया। परन्तु गाधीजीको मसूरीके फैशन-परस्त लोगोके वैभव-विलास और सुख-चैनको देखकर वेचैनी होती थी। वे लोग मसूरीमें आनद भोगते थे, जव कि उनका भारी सामान पीठ पर उठा कर और सीधी चढाई चढ कर उसे तडक-भडकवाले होटलोमें ले जानेवाले चिथडोमें लिपटे मजदूरकी कमर उनके खातिर

झुककर दुहरी हो जाती थी, और रिक्शा खीचनवालाका दम भर जाता था और रिक्शा खाचनेक अपार श्रमस व हृदय या फेफडक रोगाके शिकार हो जाते थे और असमय ही मृत्युकी गोदमें सा जाते थ। अपनी प्रार्थना-सभाओमें आनेवाले इन फॅशन-परस्तोको इन बाताका स्मरण कराकर गाधीजीन उनकी अन्तरात्माको जाग्रत किया। गाधाजीको इतनस ही सतोप नहा हुआ। इसलिए उन्होने अपनी मडलीके दो सदस्योको उन गरीबोके गदे, अधेरे तथा हवा प्रकाशसे वचित झोपडोको देखनके लिए भेजा और उनकी रिपोर्ट हरिजन में प्रकाशित की। उन्होन धनवान लोगोको समझाया कि कोई ऐसी धर्मशाला या मुसाफिरखाना बना दिया जाय जहा गरीब लाग ठहर सकें और पहाडके ठडे जलवायुका लाभ उठा सकें यह बडे दुखकी बात है कि इस गरीब देशमें जहा धर्मग्रथोके अनुसार दरिद्रताको कुछ गौरव प्राप्त है, सार्वजनिक स्थानोमें गरीबोके साथ लगभग तिरस्कारका व्यवहार किया जाता है और उस तिरस्कारको ग्रहण करनेके लिए उन्हे कीमत भी चुकानी पडती है।"[1]

गाधीजीने मसूरीके निवास-कालमें एक विदेशी पत्र प्रतिनिधिने उनसे पूछा अगर आपको एक दिनके लिए भारतका तानाशाह बना दिया जाय तो आप क्या करेगे?

गाधीजीनें उत्तर दिया प्रथम तो मै उसे स्वीकार ही नहा करूगा। परन्तु यदि मै एक दिनके लिए तानाशाह बन ही गया, तो दिल्लीके हरिजनाके झोपडे जो वाइसराय भवनके अस्तबल जसे है साफ करनेमे वह दिन बिताऊगा।[2]

मान लीजिये कि लोग आपकी तानाशाही दूसरे दिन भी जारी रखें?"

तो दूसरे दिन भी वही पहले दिनका काम जारी रहेगा।

एक और मित्र बोले आपने हमें स्वाधीनताके द्वार तक पहुचा दिया है। आप तो इसका श्रेय अहिसाको ही देगे। परन्तु हम मानते है कि हम आपकी अहिसाकी अपेक्षा सत्यसे अधिक बल मिला है।"

गाधीजीने उत्तरमे कहा आपका यह खयाल गलत है कि देशको अहिंसाकी अपेक्षा सत्यसे अधिक बल मिला है। इसके विपरीत मेरा दृढ विश्वास है कि देशने जो कुछ प्रगति की है वह अहिसाका सग्रामकी पद्धति बनानेके कारण ही हुई है।[2]

मित्रने कहा मेरा मतलब यह है कि देशने आपकी अहिसाको तो नहा समझा परन्तु सत्यको समझ लिया और इसीसे उसका शक्ति बढ गई।

गाधीजीने जवाब दिया बात इसस बिल्कुल उल्टी है। देशमें इतना ज्यादा असत्य छाया हुआ है कि कभी कभी मेरा दम घुटने लगता है। इसलिए मेरा दृढ विश्वास है कि अहिसाके पालनसे ही हम यहा तक पहुचे है, चाहे

उस पालनमे कितनी ही त्रुटि रही हो। साथ ही, मैंने सत्यको गौण स्थान नही दिया है। "

"फिर भी आपका भार हमेशा अहिंसा पर रहता है। आपने अहिंसाके प्रचारको अपने जीवनका ध्येय बनाया है।"

"आपका यह खयाल भी गलत है। अहिंसा लक्ष्य नही है। लक्ष्य तो सत्य है। परन्तु हमारे पास अहिंसा-पालनके सिवा मानव-सम्बन्धोमे सत्यकी साधनाका कोई और उपाय नही है। . . क्योकि अहिंसा साधन है, इस-लिए स्वाभाविक रूपमे हमारे दैनिक जीवनमे अहिंसाका ज्यादा सम्बन्ध रहता है। इस कारण हमें अपने यहाके आम लोगोको अहिंसाकी ही शिक्षा देनी पडेगी। सत्यकी शिक्षा तो अहिंसाकी शिक्षासे अन्तमे उन्हे मिल ही जायगी।"

७ जूनको गाधीजी लगभग १७५ मील मोटरमे यात्रा करके आधी रातको दिल्ली लौटे। यमुना-पुल पर उनकी गाडीको सन्तरीने रोक दिया। सन्तरीने गाड़ीकी खिडकीमे अपना सिर डाल कर पूछा, "गाडीमे कौन है?" सिक्ख ड्राइवरने उत्तर दिया, "भारतके गरीबोके राजा है!" सतरीने श्रद्धासे सिर झुका कर कहा, "गाड़ी आगे जाने दो।"

*

जब ८ जूनको काग्रेस कार्यसमितिकी बैठक हुई, तो मालूम हुआ कि सर स्टैफर्ड क्रिप्स जिन्नासे मिले थे और जिन्नाने स्वीकार कर लिया था कि केन्द्रमे मिश्र अन्तरिम सरकार रची जाय, जिसमें समान सख्याका विचार किये बिना सबसे योग्य व्यक्तियोको लिया जाय। ११ जूनको गाधीजीके साथ हुई एक मुलाकातमे वाइसरॉयने सुझाया कि काग्रेस और मुस्लिम लीग मिल कर इस आधार पर केन्द्रमे मिश्र सरकार बनानेके लिए नाम निश्चित कर ले। गाधीजीने वाइसरॉयके प्रस्तावका स्वागत किया। उन्होने कहा कि वे लोग "प्रमाणित योग्यता और शुद्धता" वाले व्यक्ति होने चाहिये,[३४] किसीको भी समान सख्याकी बात नही करनी चाहिये। वे एक बन्द कमरेमें बैठ जाय और जब तक समझौता न हो जाय तब तक कोई बाहर न निकले। अगर तमाम कोशिशोके बावजूद दोनो पक्षोमे समझौता न हो, तो दोनो पक्षोकी अलग अलग सूचियोके गुण-दोषकी जाच वाइसरॉयको करनी चाहिये और दोनोमें से किसी एक सूचीको, "न कि दोनोकी मिलावटको", स्वीकार कर लेना चाहिये।

परन्तु अब एक और कठिनाई पैदा हो गई। जिन्ना काग्रेस-अध्यक्ष मौलाना आजादके साथ एक ही टेबल पर बैठनेको तैयार नही थे, क्योकि वे गैर-लीगी मुसलमान थे। हिन्दू 'शत्रु' थे, परन्तु गैर-लीगी मुसलमान गद्दार थे, जिन्ना ऐसे 'गद्दारो' से कोई वास्ता नही रख सकते थे। लेकिन अपनी तरफसे काग्रेस इन शर्तों पर जिन्नाके साथ कोई संधि-वार्ता करनेको

तैयार नहीं थी। वाइसरायने एक उपाय सुझाया कि प्रस्तावित सम्मेलनमें कांग्रेसके अध्यक्ष मौलाना साहबका प्रतिनिधित्व पंडित नेहरू करें। गांधीजीने कांग्रेसको सलाह दी कि निबटारेके खातिर यह बात मान ली जाय बशर्ते कि यह स्पष्ट कर दिया जाय कि पंडित नेहरू वहां केवल मौलाना साहबके प्रतिनिधि बन कर ही जायंगे।

१२ जूनको दोपहरमें पंडित नेहरू प्रस्तावित सम्मेलनके लिए वाइसराय भवन गये। परन्तु जिन्ना नहीं आये। पंडित नेहरूने वाइसरायको अन्तरिम सरकारके लिए कांग्रेस द्वारा प्रस्तावित नामोंकी सूची दिखाई। परन्तु जो बातचीत हुई उसमें पंडित नेहरूको यह देखकर आश्चर्य हुआ कि एक तरहसे वाइसरायने फिर वही समान संख्याकी बात निकाली। दूसरे दिन गांधीजीने लार्ड वेवलको एक पत्रमें लिखा "आप एक महान योद्धा हैं—साहसी सैनिक हैं। आप सही बात करनेकी हिम्मत दिखाइये। आपको एक या दूसरा घोड़ा चुन लेना होगा। जहां तक मैं समझता हूं, आप दोनों घोड़ों पर एक साथ सवारी करनेमें कभी सफल नहीं होंगे। कांग्रेस या लीगके दिये हुए नामोंमें से किसी एकके नाम आप पसन्द कर लीजिये। ईश्वरके लिए नामोंका बेमेल मिश्रण न कीजिये और ऐसा करनेके प्रयत्नमें भयंकर विस्फोट न कीजिये।

परन्तु लार्ड वेवेल उस मिट्टीके नहीं बने थे। शिमलामें १९४५ में हुई पहली मुलाकातमें गांधीजीने उनके सामने यह आशा प्रकट की थी कि सैनिक वाइसरायमें उन्हें कवि वर्डसवर्थके सुखी योद्धा के दर्शन होंगे

> वीर यह उसका विधान विवेक है
> मित्र-सा जिसका लिए आधार दृढ़—
>> क्योंकि जब बचने जघन्य अनिष्ट से
>> मनुज धरता छोर अन्य अनिष्ट का
>> और जो कुछ सगुण सुकृत कि भव्य है
>> क्वचित हो होता प्रतिष्ठित सत्य पर
> —हर विजय है निहित मानव की सदा
> स्वयं अपने ही सु-आत्मचरित्र में,
> जान इतना मर्म भर यह वीरवर
> सत्य पर निवकी प्रतिष्ठा कर रहा।

मुलाकातके अन्तमें लार्ड वेवेलने अपनी ही संग्रह की हुई एक काव्यमाला 'अदर मेन्स फ्लावर्स' की एक प्रति गांधीजीको भेंट की। गांधीजीने घर लौट कर उत्सुकतापूर्वक उसके पन्ने पलटे तो देखा (क्या यह केवल संयोग ही था?) कि उसमें उनकी प्रिय कविता 'कैरेक्टर आफ दि हैप्पी वारियर' नहीं थी।

गाधीजीने एक अत्यन्त व्यक्तिगत पत्रमे सर स्टैफर्ड क्रिप्सको लिखा .

आप अपने जीवनका सबसे कठिन कार्य हाथमे ले रहे हैं। मुझे तो ऐसा दीखता है कि कैबिनेट-मिशन आगके साथ खेल रहा है। अगर आपमे साहस हो तो आप वही करेगे, जो मैंने आरम्भमे ही सुझाया था। . . आप रोटीको रख भी ले और उसे खा भी ले, ये दोनो बाते एक साथ नही कर सकेंगे। आपको मुस्लिम लीग और काग्रेस दोनोमे से एकका चुनाव करना पडेगा। दोनो सस्थाए आपकी ही कृतिया हैं। . . . कभी काग्रेसको, कभी लीगको और फिर काग्रेसको मनानेका प्रयत्न करनेसे आप अपनेको थका लेंगे, परन्तु इससे काम नही बनेगा। आप या तो जो सही है उस पर कायम रहिये अथवा ब्रिटिश नीतिकी दृष्टिसे आपको जो ठीक लगे वह कीजिये। दोनो ही सूरतमे बहादुरीकी जरूरत है। इतना ही है कि कार्यक्रम पर आप स्थिर रहिये। आकाश टूट पडे तो भी अपनी तारीखो पर अटल रहिये। १६ (जून) को आप चले जाइये, भले ही आप काग्रेसको मिश्र सरकार बनाने दे या लीगको बनाने दे। अगर आपका यह विचार हो कि आपकी पैदा की हुई इन दोनो सस्थाओसे सचित ब्रिटिश सयानपन अधिक ज्ञानवान है, तो मुझे और कुछ नही कहना है। परन्तु मेरी कल्पना यह है कि आप उस ढाचेमे नही ढले है।"[५]

पत्रके अन्तमे यह सलाह दी गई थी "यदि वीरोचित ब्रिटिश घोषणा पर भारतकी आशाओके अनुसार अमल न हो, तब तो आप निजी जीवनमें डूब जाइये। बुद्धिमानको इशारा काफी है।"

सर स्टैफर्डने उत्तर दिया "मैं आपको विश्वास दिला सकता हू कि न तो मुझमे और न मेरे साथियोमे ही साहसकी कमी है, परन्तु **हम विवेकके द्वारा उस साहसको तीव्रताको कम करना चाहते हैं।**"[३६] (मोटे टाइप मैंने किये हैं।) गाधीजीने विभिन्न अवसरो पर उन्हे "इन कठिन प्रश्नोका निबटारा करते समय अपार धैर्य दिखानेकी" सलाह दी थी। उसका उल्लेख करते हुए सर स्टैफर्डने आगे लिखा · "अवश्य ही मैं घर लौट कर आराम करनेकी अपनी इच्छाको अपने इस निश्चयके सामने हरगिज महत्त्व नही दूगा कि कोई ऐसा प्रयत्न न छोडा जाय, जिससे भारतकी कठिन समस्याओको हल करनेमे सहायता मिलती हो। मुझे बडी आशा है कि भारतसे जानेके पहले हम इस समस्याको हल करनेमे सहायक हो सकेंगे।"

गाधीजीका मन अनेक अशुभ आशकाओसे भरा था। वस्तुस्थिति बिगडती जा रही थी। क्या इसका कारण यह था कि सदाकी भाति सिविल सर्विसकी गुप्त शक्ति कैबिनेट-मिशनके इरादोको निष्फल बनानेका काम कर रही थी?

१९४५ के शिमला-सम्मेलनमें वाइसरायने यह स्वीकार किया था कि काग्रेसने प्रामाणिकतासे काय किया है। उस समय तमाम अल्पसख्यकोका स्वर काग्रेसके साथ मिला हुआ था। गाधीजीने उस समय सलाह दी थी कि यदि लीग जिम्मेदारीका भार उठानेको तयार न हो, तो वह काग्रसको सौप दिया जाय। परन्तु ऐसा नही किया गया और सम्मेलनको निष्फल हो जाने दिया गया। और अब फिर कबिनेट मिशन लीग और काग्रसको साथ लानेकी कोशिश करके व्यथ ही पीडाका समय बढा रहा था। यह काम उसके बूतेके बाहर था।

आजाद हिन्द फौजको इस बातकी प्रतीति हो गई थी कि स्वतत्रताकी परिस्थितियोमें वास्तविकताका सामना करते हुए वह जिस प्रकार सोचती और करती थी वह उससे सवथा भिन्न था जिसके भारतीय चरित्रमें जम सिद्ध होनेकी बात उसे सिखाई गइ थी। आजाद हिद फौजमें साम्प्रदायिक समस्या पूरी तरह हल हो गई थी। कबिनेट मिशनके व्यथ परिश्रमसे इसकी उल्टी बात साबित हुई। क्या गाधीजी बार बार यह नही लिख चुक थे कि जब तक तीसरा पक्ष भारतमें मौजूद है तब तक सच्ची हिन्दू-मुस्लिम एकताकी आशा नही रखी जा सकती? उन्हाने अपने एक प्राथना प्रवचनमें कहा गुलाम और उनके मालिक दोना अस्वाभाविक स्थितिमें रहते ह। वे स्वाभाविक ढगसे सोच और काम कर नही सकते। ' एक मित्रके साथ बातचीत करते करते गाधीजीने उनसे कहा मुझ पर एक अज्ञात भय सवार हो गया है। इसके परिणाम-स्वरूप मुझे पक्षाघात-सा महसूस होता है। परन्तु म अपना निराधार स देह आपको बता कर आपका मन नही बिगाडूगा। ' उन्होने कबिनेट मिशनको एक ऐसी माताकी उपमा दी जो यह देखती है कि उसका बच्चा मर रहा है। फिर भी वह आशा नही छोडती। वह डाक्टरा, वद्यो और नीम हकीमोके नुस्खे आजमाती रहती है। कभी एकका नुस्खा फिर दूसरेका और फिर तीसरेका। वह आखिरी दम तक इलाज करती ही रहती है। " इसी तरह कबिनेट मिशन भी आशा नही छाडना चाहता।

१३ जूनको यूरोपियन एसोसियशनके अध्यक्षके वक्तव्यसे सामने खडी चट्टानोकी पहली चेतावनी मिली। उस वक्तव्यमें यूरापियनाका यह विश्वास व्यक्त किया गया था कि सविधान बनानेमें उन्हें भी अपना कतव्य पूरा करना और योगदान देना है और व अपने अधिकारका उपयोग करगे। परन्तु यदि काग्रेस और लीग मिल कर उनसे अपाल करे ता वे अपनी बठकें घटा सकत ह!

गाधीजीने हरिजन में इसकी आलोचना की, यूरापियन एसासियेशनके अध्यक्षने शेरका पजा दिखा दिया है। ' उन्हाने १४ जूनका प्राथना सभामें कहा हमें यह समझ लना चाहिये कि उनक सामने भिखारी बन कर

जानेका कोई प्रश्न नही है।" यूरोपियनोका पिछला इतिहास भी ऐसा नही था, जिससे जनतामे विश्वास पैदा होता। उन्होने सदा ही अपने मतका उपयोग ब्रिटिश सत्ताको भारतमे कायम रखनेमे किया था। और उन्होने हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच फूट डालनेका ही काम किया था। कानूनी प्रश्नको छोड भी दे तो शिष्टता और सद्भावका यह तकाजा था कि वे भारतवासियोके मामलोमे दखल न दें और न तो संविधान-सभाके उम्मीदवारोके चुनावमे मतदान करे और न उम्मीदवार बन कर खडे हो। कैबिनेट-मिशनकी इस दलीलके बारेमे कि यूरोपियनो पर उसका कोई नियत्रण नही है, गाधीजीने लिखा .

> भारतमे ब्रिटिश सत्ताकी चार भुजाए हैं—सरकारी सेना, सरकारी मुल्की कर्मचारी, गैर-सरकारी मुल्की कर्मचारी और गैर-सरकारी सेना। इसलिए जब शासक-वर्ग यह कहता है कि गैर-सरकारी यूरोपियन उसके नियत्रणमे नही है, तो यह बेहूदा बात मालूम होती है। सरकारी कर्मचारियोका अस्तित्व गैर-सरकारी लोगोके लिए ही है। अगर गैर-सरकारी लोग न हो, तो सरकारी कर्मचारियोका कोई काम ही नही रहेगा। ब्रिटिश झडा ब्रिटिश व्यापारके पीछे पीछे यहा आया। सारा भारत ब्रिटिश सेनाके आधिपत्यके नीचे है। . . . तिनकेसे ही पता चलता है कि हवा किस तरफ बह रही है। . . यूरोपियन एसोसियेशनका यह अविवेकपूर्ण कृत्य . . . मिशनके कार्यकी वास्तविकतामे रहे विश्वासको हिला देनेवाला सबसे बडा अशान्तिकारक तत्त्व है। . . क्या ब्रिटिश बन्दूकोकी रक्षामे रहनेवाले भारतके यूरोपियन लोग अपनी बन्दूके बन्द करके अपने भविष्यको भारतकी आम जनताके सद्भाव पर ही सुरक्षित नही समझ सकते? . . . उन्होने अपने हालके वक्तव्यमे यहा तक कहनेकी मूर्खता दिखाई है कि वे स्वय अपने लिए तो मत नही देंगे, परन्तु भारतीय चमडीवाले अपने पिट्ठुओको चुनवानेके लिए अपने मताधिकारका प्रयोग करेंगे! सभव हुआ तो यह चालाकी वे बार बार करेंगे, जिससे वे अब तक मुट्ठीभर होते हुए भी भारतके करोडों मूक लोगोका गला घोट सके है। यह पीडा कब तक बनी रहेगी![४३]

अपनी आदतके अनुसार उन्होने मामलेको यही लाकर नही छोड दिया। उन्होने सविधान बनानेके कार्यमे यूरोपियनोके भाग लेनेके वैधानिक अनौचित्य पर कानूनी मत एकत्र करना और उन्हें प्रकाशित करना शुरू कर दिया। पहला मत दिल्लीके एडवोकेट श्री शिवनारायणसे मिला। वे उस समय तक ऊंचे कानूनी क्षेत्रोमें अज्ञात-से ही थे। राजधानीके वाक्पटु राजनीतिज्ञ अपनी अपनी भौहें तान कर एक-दूसरेसे कहने लगे, "यह शिवनारायण कौन है?

हमने तो कभी उसका नाम सुना नहीं!" गांधीजी मन ही मन हंस दिये। वे कौन हैं, इससे क्या बनता बिगड़ता था? महत्त्व तो उनकी कानूनी रायका था और इस बातका था कि उनकी राय सबसे पहले आई। उसके तुरंत बाद डी० एन० बहादुरजी, सर अल्लादि कृष्णस्वामी कन्हैयालाल मुंशी और बख्शी टेकचंदकी कानूनी रायें भी एकके बाद एक मिली और प्रकाशित की गई। ये सब प्रथम श्रेणीके प्रसिद्ध वकील थे। इससे यूरोपियन एसोसियेशनका अहंकारपूर्ण दावा तो पूरी तरह दब गया। परन्तु उसे विधिवत वापस नहीं लिया गया और न कैबिनेट मिशनकी ओरसे ही जितना आश्वासन वह पहले दे चुका था उससे अधिक कोई निश्चित आश्वासन दिया गया। अन्तमें १४ जूनको कांग्रेसके अध्यक्षने वाइसरायको लिखा: जहां अधिकारोंका सम्बन्ध है वहां हम कृपा या सद्भावना पर अवलम्बित नहीं रह सकते। और बात यहीं रुक गई।

अब समान संख्याकी कठिनाई बाकी रही। मुसलमान भारतकी सारी आबादीके चौथे भागसे कुछ अधिक थे। लोकतांत्रिक सिद्धान्तके अनुसार वे कुल प्रतिनिधित्वके एक तिहाईसे कमका दावा कर सकते थे। परन्तु मुस्लिम लीगका तर्क यह था कि मुसलमान कोई अल्पसंख्यक जाति नहीं हैं, परन्तु एक राष्ट्र हैं और एक राष्ट्रके नाते उनकी संख्या चाहे जितनी हो तो भी किसी रची जानेवाली सरकारमें बहुमतवाले समुदायके साथ उन्हें समान प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये। मुस्लिम लीगकी समान संख्यावाली मांग लीगके दो राष्ट्रके सिद्धान्त का स्वाभाविक परिणाम था। इस सिद्धान्तको कांग्रेसने पूरी तरह अस्वीकार कर दिया था। संविधानकी दृष्टिसे यह किसी लोकतांत्रिक व्यवस्थामें बहुमतको समान कक्षामें खड़े होनेके अल्पमतके अनुचित दावको उचित और तर्कशुद्ध दिखानेकी तरकीब था। १९४५ में शिमला-सम्मेलनमें रखे गये प्रस्तावके अनुसार सवर्ण हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच समान संख्याकी बात शुरू की गई थी। अब मुस्लिम लीग और कांग्रेसके बीच समान संख्याकी बात सामने आई। लेकिन दोनोंमें एक महत्त्वपूर्ण अन्तर यह था कि जहां पहले मुसलमानोंके ५ सदस्योंके हिस्सेमें एक गैर-लीगी मुसलमान शामिल किया जानेवाला था वहां अब सारे ही मुसलमान मुस्लिम लीगके सदस्य रहनेवाले थे। इसके अलावा एक राष्ट्रवादी संस्थाकी हैसियतसे कांग्रेसको अपने छह सदस्योंके हिस्सेमें से एक जगह किसी राष्ट्रवादी मुसलमानके लिए और एक जगह परिगणित जातियोंके प्रतिनिधिके लिए सुरक्षित रखना था इसलिए दोनोंमें जो कौम बहुमतवाली थी उसे १३ सदस्योंकी बनी अन्तरिम सरकारमें ४ के अल्पमतमें रह जाना पड़ता! कांग्रेसके अध्यक्षने १६ जूनको वाइसरायको लिखा "हम इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं कर सकते। यदि

यूरोपियन मतदान और 'समान सख्या' के बारेमें यही स्थिति रहती है, तो मेरी समितिके लिए अनिच्छापूर्वक आपको यह बताना जरूरी हो जाता है कि आपके सामने जो कठिन काम है उसमें समिति आपकी कोई मदद नही कर सकेगी।"

७

वाइसरॉयके नाम काग्रेस-अध्यक्षके १४ जूनके इस पत्रसे अन्तरिम सरकार रचनेके बारेमें कैबिनेट-मिशनकी बातचीतका अन्त आ गया। कुछ समयसे गाधीजीको फिर बेचैनी रहने लगी थी। उन घटनापूर्ण दिनोकी मेरी डायरीके पन्ने पलटने पर मुझे १५ जूनकी तारीखमे यह चीज लिखी मिलती है:

> बापू फिर अपनी 'अन्त प्रेरणा' के प्रभावमे है। पिछले तीन दिनसे उन्हे ऐसा लग रहा है कि बात बिगड रही है। वाइसरॉय सहित सभी लोग जिन्नासे भयभीत मालूम होते हैं और किसी भी कीमत पर उन्हे राजी करनेकी व्यर्थ कोशिश कर रहे हैं। वे मानते हैं कि जिन्नाका रवैया अनुचित है, फिर भी दोष सारा काग्रेसके मत्थे ही मढा जाता है। क्रिप्स अपने साथियोसे अलग पडे हुए दिखाई देते हैं।

यह गाधीजीकी उस अज्ञेय अन्त.स्फूर्तिका उल्लेख है, जिससे उन्हे सभी बाहरी सकेतोके विपरीत भावी घटनाओका प्राय. पहलेसे आभास मिल जाता था।

१६ जूनको वाइसरॉय और कैबिनेट-मिशनने एक वक्तव्य निकाल कर अधिक बातचीत बन्द कर दी और अन्तरिम सरकार बनानेके लिए अपना ही प्रस्ताव प्रस्तुत किया। तदनुसार १४ व्यक्तियोको निमत्रण-पत्र भेजे गये, जिनमे छह काग्रेसके हिन्दू सदस्य थे (इनमे से एक परिगणित जातिका सदस्य था), ५ मुस्लिम लीगके मुसलमान थे और ३ अल्पसख्यक जातियोके प्रतिनिधि थे — अर्थात् १ सिक्ख, १ भारतीय ईसाई और १ पारसी।

लॉर्ड वेवेलने वक्तव्यकी एक प्रति गाधीजीके पास पहलेसे ही भेज दी। नामोकी सूचीमे पाचो मुस्लिम नाम वही थे, जो लीग द्वारा दिये गये थे। परन्तु काग्रेसके दिये हुए नामोमें उसकी सलाह लिये बिना परिवर्तन कर दिये गये थे। शरत्चन्द्र बोसका नाम हटा दिया गया था और उनके स्थान पर हरेकृष्ण मेहताबका नाम रख दिया गया था, जो काग्रेसके अनुशासनमे थे। काग्रेसने अपनी सूचीमे काग्रेसकी एक महिला-सदस्यका नाम शामिल किया था। वे थी राजकुमारी अमृतकौर, जो भारतीय ईसाई भी थी। परन्तु उनका नाम भी नही रहा। डॉ० जाकिरहुसैनको एक राष्ट्रवादी मुसलमानकी हैसियतसे काग्रेस अपने मनोनीत व्यक्तिके नाते सरकारमे रखना चाहती थी। लेकिन उन्हे भी

नहा लिया गया। काग्रेसने लीगकी ५ नामाकी सूचीमें अब्दुरव निश्तरको शामिल करने पर गुरुस आपत्ति उठाई थी क्याकि व १९४६ क चुनावमें हार गये थे। परन्तु वाइसरायने इस आपत्तिकी परवाह नहा की। काग्रेसके आग्रह पर १३ की मूल सख्याका बढा कर १४ कर दिया गया, परन्तु वाइसरायकी सूचीमें १४ वा नाम एक सरकारी अधिकारीका था। ये थे एन० पी० इजीनियर —एडवोकेट जनरल जिन्हाने आजाद हिन्द फौजके मुकदमामें सरकारी वकीलके तौर पर काम किया था। यह नाम भी काग्रेससे किसी तरहका विचार विमर्श किये बिना सम्मिलित कर दिया गया था।

१६ जूनको गाधीजीने अपने प्राथना प्रवचनमें जनताको धीरज रखनेकी सलाह दी। वे बोले किसी चित्रको देखनेके दो तरीके हं। या तो हम चित्रके उज्ज्वल पक्षको देख सकते ह या कृष्ण पक्षको। म खुद तो उज्ज्वल पक्षको देखनेमें ही विश्वास करता हू। इस दृष्टिसे वाइसरायकी घोषणामें जो दोष दिखाइ देते ह व असलमें उसकी खूबिया दिखाई देंगी। आपको कबिनेट मिशनको भी सहन करना चाहिये। उन्ह साम्राज्यवादका उत्तराधिकार मिला है। वे उन सस्कारोको एकदम नही छोड सकते। वे एक दिनमें उन्हें तिलाजलि न द तो हमें उन्हें दोष नही देना चाहिये। हम उनकी नेकनीयता पर विश्वास रखें। हमें कबल सन्देहके आधार पर कोइ काम नही करना चाहिये।'

रातको गाधाजी १॥ बजे उठ गये और कायसमितिके लिए वाइसरायके नाम भेजे जानवाले एक पत्रका मसौदा लिखवाया। उसमें उन्हाने खास तौर पर चार बाता पर जोर दिया (१) मुस्लिम लीग चूकि मानी हुई मुस्लिम सस्था है इसलिए वह अपनी सूचीमें किसी गर-मुस्लिम प्रतिनिधिको सम्मिलित नही कर सकती (२) काग्रसके राष्ट्रवादी सस्था होनेके नाते अपनी सूचीमें किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको सम्मिलित करनेका अधिकार उस होना ही चाहिये (३) अपने ५ मुसलमानाक हिस्सेके सिवा मुस्लिम लीग और किसी भी नामके चुनावमें कुछ नहा कह सकती। इसका अथ यह होगा कि अल्पसख्यकाको दिये गये स्थानामें से कोइ स्थान खाली हो तो उसे भरनेके लिए नाम चुननेका अधिकार काग्रेसको हा होगा क्याकि वह अपने सबाके अधिकारस सब वर्गाका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है और (४) व्यवहारमें अन्तरिम सरकारको विधान-सभाक चुने हुए प्रतिनिधियाके प्रति जिम्मेदार माना जाना चाहिये।

किन्तु कायसमितिने दूसरे दिन अपना तासरे पहरका बठकमें गाधीजाके मसौदेको लगभग खटाइमें डाल दिया। वाइसरायक प्रस्ताव पर ता समिति भी मोहित नहा थी परन्तु वह उसके सम्बन्धमें 'ना' नहा कहना चाहती थी। शरत् बाबूको जगह हरेकृष्ण महताबका नाम रख देनसे पदा होनेवाली कठिनाई आसानीसे दूर का जा सकती थी क्याकि महताब काग्रसी थे और काग्रेसकी

सलाहको स्वीकार कर लेनेवाले थे। इसी तरह किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको सम्मिलित न करनेकी भूलको कांग्रेसकी सूचीमे एक हिन्दू सदस्यके स्थान पर एक राष्ट्रवादी मुसलमानको रख देनेसे दूर किया जा सकता था, यद्यपि इससे अन्तरिम सरकारमे वहुमतवाली जाति अल्पसख्यक वन जाती। यूरोपियनोके मतसे सम्वन्धित कठिनाई भी कुछ अशमे दूर हो गई, जव यूरोपियन एसो-सियेशननें घोपणा कर दी कि वह सविधान-सभाके चुनावोमे भाग नही लेगा। अन्तरिम सरकारकी सत्ताके सम्वन्धमे लॉर्ड वेवेलने कांग्रेस-अध्यक्षके नाम लिखे अपने ३० मईके पत्रमें इससे इनकार कर दिया कि उन्होने किसी भी समय वार्ताओके दौरान यह कहा था कि अन्तरिम सरकारकी वही सत्ता होगी, जो औपनिवेशिक मन्त्रि-मडल (डोमिनियन कैविनेट) की होती है। परन्तु उसी पत्रमे उन्होने यह आश्वासन दिया था कि, "सम्राट्की सरकार नई अन्तरिम सरकारके साथ वैसा ही व्यवहार करेगी, जैसा किसी औपनिवेशिक सरकारके साथ करती है":

> अत्यन्त उदार आशय जव किसी विधिवत् तैयार किये दस्तावेजमें प्रकट करने पडते है तव लगभग वे ऐसा रूप ग्रहण कर लेते है कि उन्हे पहचानना कठिन होता है। मुझे कोई शक नही कि अगर आप मेरा विश्वास करनेको तैयार हो, तो हम इस ढगसे सहयोग सिद्ध कर सकेंगे जिससे भारतको वाहरी नियत्रणसे मुक्त होनेकी प्रतीति हो जाय और नया सविधान वनते ही वह पूर्ण स्वाधीनताके लिए तैयार हो जाय।

वाइसरॉयकी अपीलके मैत्रीपूर्ण स्वरको और आनेवाले सकट — अन्नका सकट और रेलवे हडतालकी सभावना — को देखते हुए कार्यसमितिने वाकीके मुद्दोको इतना खीचना उचित नही समझा कि वात टूट जाय। इसलिए अन्तरिम सरकारकी योजना उस समय जिस रूपमे सामने आई उस रूपमे उसे स्वीकार करनेका अस्थायी निर्णय कार्यसमितिकी १८ जूनकी वैठकमे किया गया और उस आशयके प्रस्तावका मसौदा तैयार कर लिया गया। परन्तु वाइसरॉयको उसकी सूचना नही की गयी, क्योकि कार्यसमिति खान अव्दुल गफ्फारखासे सलाह-मशविरा करना चाहती थी। दूसरे दिन उनके आनेकी सभावना थी। उनसे परामर्श विशेष रूपसे मुस्लिम लीगकी सूचीमे अव्दुर्रव निश्तरका नाम शामिल करनेके वारेमें करना था। परन्तु दूसरे दिन पडित नेहरू काश्मीर चले गये। वहा शेख अव्दुल्ला पर मुकदमा चल रहा था। शेख अव्दुल्ला काश्मीर नेशनल कान्फरेन्सके अध्यक्ष थे। यह राष्ट्रीय सस्था अखिल भारत देशी राज्य लोक-परिपद्से सम्वद्ध थी, जिसके अध्यक्ष पडित नेहरू थे। कार्यसमितिके कुछ सदस्य भी उसी दिन दिल्लीसे चले गये, क्योकि उन्होने समझा कि दिल्लीमें उनका काम लगभग पूरा हो गया है। परन्तु उसी समय अचानक एक नाटकीय

घटना हो गई। 'दि स्टेटसमन'ने लार्ड वेवेलको लिखे जिन्नाके एक पत्रका सार छाप दिया। उसमें अन्तरिम सरकारके बारेमें कुछ आश्वासन मांगे गये थे, जिनमें से कुछ बिलकुल नये थे और जिनसे कांग्रेस कभी भी सहमत नहीं हो सकती थी। इस पर कांग्रेस-अध्यक्षने वाइसरायको लिखा कि उन्हें जिन्नाके मूल पत्र और वाइसरायके उत्तरकी नकल दी जाय। वाइसरायने अपने २० जून १९४६ के पत्रमें जिन्नाको जो आश्वासन दिये उनमें से एक इस आशयका था कि दोनों बड़े दलोंकी स्वीकृतिके बिना नामोंकी सूचीमें सिद्धान्त रूपसे कोई परिवर्तन नहीं किया जायगा। इसका अर्थ यह था कि लीगकी अनुमतिके बिना अपने हिस्सेके भीतर भी कांग्रेस किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको नामजद नहीं कर सकती थी। वाइसरायने जिन्नाको दूसरा आश्वासन यह दिया था कि अल्पसंख्यकोंकी जगहोंमें (परिगणित जातियां सहित) से कोई जगह खाली हुई तो उसे भरनेके पहले दोनों बड़े दलोंसे सलाह ली जायगी। इससे मुस्लिम लीगको परिगणित जातियोंका प्रतिनिधि चुननेमें भी वस्तुतः निषेधाधिकार (वीटो) मिल जाता था। ये जातियां हिन्दू समाजका अविभाज्य अंग थीं और वाइसराय उन्हें ऐसा ही समझते थे। उन्होंने कांग्रेसके साथ उन जातियोंको जोड़ भी दिया था, जब कांग्रेसके अध्यक्षने नाम लिखे अपने १५ जूनके पत्रमें उन्होंने इस बातसे इनकार कर दिया कि ब्रिटिश कैबिनेट मिशन और उनके द्वारा प्रस्तावित अन्तरिम सरकारकी बुनियादमें लीग और कांग्रेसकी अथवा हिन्दुओं और मुसलमानोंकी समान संख्या है क्योंकि उस सरकारमें ६ कांग्रेसी (एक परिगणित जातिके प्रतिनिधि सहित) और ५ मुस्लिम लीगके प्रतिनिधि होंगे और ६ हिन्दू (५ सवर्ण हिन्दू और एक परिगणित जातिका प्रतिनिधि) और ५ मुसलमान होंगे। परन्तु अब समान संख्या पिछले दरवाजेसे फिर वापस लाई जा रही थी यद्यपि उसका सिद्धान्त रूपसे स्पष्टतः अस्वीकार कर दिया गया था। वर्ना जिन्नाके साथ हुए समझौतेके अनुसार ऐसा मालूम होता था कि परिगणित जातिका प्रतिनिधि हिन्दुओंके हिस्से और कांग्रेसी हिस्सेसे बाहर माना गया था अन्यथा उसके चुनावमें मुस्लिम लीगकी कोई आवाज क्यों होनी चाहिये थी? इसका यह परिणाम होता कि न सिर्फ कांग्रेस और लीगके बीच बल्कि सवर्ण हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच भी समान संख्या स्थापित हो जाती और कांग्रेसको हिन्दू संगठनका भी नहीं परन्तु 'सवर्ण हिन्दू संगठनका दर्जा मिल जाता।'

इससे कार्यसमितिके मनमें यह भावना पैदा हुई कि वाइसराय लीगके साथ मिले न भी हों तो भी उसके साथ पक्षपात जरूर कर रहे हैं। जब २२ जूनको वाइसरायने कांग्रेस-अध्यक्षके नाम लिखे अपने एक पत्रमें कहा कि कांग्रेस अपने प्रतिनिधियोंमें अपना चाहे एक मुसलमानको शामिल करनेका अपना

मागका आग्रह न रखे, तब तो कार्यसमितिकी यह भावना और भी दृढ हो गई : "कैबिनेट-मिशनके या मेरे लिए यह अनुरोध स्वीकार करना सभव नही है। इसके कारण आप भलीभाति जानते हैं।" यह उस जवाबसे स्पष्टत उल्टा था, जो कि वाइसरॉयने १५ जूनको काग्रेस-अध्यक्षको दिया था, जब काग्रेसने अन्तरिम सरकारके लिए लीगके एक मनोनीत सदस्यके विषयमें आपत्ति की थी . "मैं काग्रेसका यह अधिकार स्वीकार नहीं कर सकता कि वह मुस्लिम लीग द्वारा रखे हुए नामो पर आपत्ति उठाये। इसी तरह लीग द्वारा उठाई गई आपत्तियोको भी मैं स्वीकार नही करूगा।"

गाधीजी शक्तिके सन्तुलनकी दृष्टिसे इस प्रश्न पर नहीं सोचते थे। उनके लिए यह एक बुनियादी प्रश्न था। काग्रेसने सदा एक राष्ट्रीय सगठन होनेका दावा किया था। राजनीतिक आत्महत्या किये बिना वह समूची जातियोका प्रतिनिधित्व करनेके अपने अधिकार और कर्तव्यका सौदा किसी भी प्रकारके व्यूहात्मक कारणोसे नही कर सकती थी। इसी तरह वह राजनीतिक लाभके लिए अपने परखे हुए और वफादार मित्रोको भी धता नही बता सकती थी। ऐसी अवसरवादिता उसके नैतिक जीवनको नष्ट कर देती और अन्तमे उसके लिए घातक सिद्ध होती । यह तो अपनी आत्माको बेच कर सारी दुनिया पाने जैसा घाटेका सौदा होता। परन्तु कार्यसमितिकी अपनी कठिनाइया थी। पुन. अपनी डायरीका एक उद्धरण यहा देता हू .

नई दिल्ली, १९ जून, १९४६

मत्रि-मडलमे किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको शामिल करनेके लिए काग्रेस-को एक हिन्दू नाम छोड देना होगा। यदि मौलाना साहब जैसे किसी प्रसिद्ध व्यक्तिको वहा रख दिया जाय, तो किसीको आपत्ति नहीं होगी, भले ही इससे हिन्दुओका हिस्सा कम हो जाय। परन्तु मौलानाको यह स्थिति बडी नाजुक लगती है और बापूके खुद समझाने पर भी उन्होने बिलकुल इनकार कर दिया है।

बापूने आज कार्यसमितिको अन्तिम सूचना दे दी कि यदि उसने किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको न लेनेकी बात और वाइसरॉयके थोपे हुए एन० पी० इजीनियरका नाम मत्रि-मडलमे शामिल करनेकी बात स्वीकार कर ली, तो उनका सारे मामलेसे कोई सम्बन्ध नही रहेगा और वे दिल्लीसे चले जायगे।

८

१६ जूनका वाइसरॉयका वक्तव्य प्रकाशित होनेके बादके सप्ताहमें राजधानीमें अटकलो और अफवाहोका बाजार खूब गरम रहा। अन्तिम दिनोमे चिन्ता चरम सीमाको पहुच गई और आशा तथा भयकी लहरे बारी बारीसे

उठती रही। मेरी डायरीमें लिखी नीचेकी बातोंसे बाकीकी कहानी मालूम हो जायगी

नई दिल्ली २० जून, १९४६

कार्यसमितिमें बापूने फिर अपना रवैया किसी राष्ट्रवादी मुसलमानके लेनेके बारेमें दोहराया। सरदारने उनका जोरदार समर्थन किया और सदस्योंसे कहा कि बापूको छोड़कर हम आग कबिनेट मिशनके साथ समझौता करनेकी हिम्मत नहीं कर सकते। अन्तमें बापूका तयार किया हुआ पत्रका मसौदा कबिनेट मिशनको भजनेका निश्चय किया गया। इसी बीच खबर आई कि काश्मीर सरकारने पंडित नेहरूको गिरफ्तार कर लिया है। शंकरराव देव गोविंदवल्लभ पंत और नरेन्द्रदेव आदि अनुपस्थित सदस्योंको वापस बुलानेके लिए तार भेज दिये गये।

दोपहरके बाद १।। और २।।। बजेके बीच क्रिप्स आये और बापूसे मिले। बापूने फिर आग्रहपूर्वक उनसे कहा कि कबिनेट मिशनको दोनोंमें से किसी एक दलको चुन लेना चाहिये। दोनोंका मिश्रण करनेकी कोशिश नहीं की जाय कबिनेट मिशन गलत मार्ग पर चल रहा है। क्रिप्स अपना बचाव कर रहे थे। इतनी दूर आ जानेके बाद फिर नये सिरेसे बातचीत आरम्भ करना कठिन होगा जिन्ना नहीं मानेंगे इत्यादि। अन्तमें बापूने उनसे कहा कि तब तो कबिनेट मिशन जो चाहे सो कर सकता है। मेरा उससे कोई सम्बन्ध नहीं होगा।

नई दिल्ली, २१ जून, १९४६

बापूके मसौदे पर कार्यसमितिमें फिर चर्चा की गई। बापूने सदस्योंको चेतावनी दी कि घुटने टेक कर नया साहस करनेसे उनको कोई लाभ नहीं होगा। उन्होंने अपनी यह राय दोहराई कि यदि कबिनेट मिशन उनकी शर्तें न माने तो बेहतर होगा कि अन्तरिम कालमें मुस्लिम लीगको केन्द्रमें राष्ट्रीय सरकार रचने दी जाय।

मौलाना साहबने काश्मीर सरकारको तार किया कि जवाहरलालजीकी उपस्थिति कार्यसमितिके विचार विमर्शमें बहुत आवश्यक है। उन्होंने वाइसराय को भी यह संदेश भेजा कि जवाहरलालजीके दिल्ली लौटनेके लिए सवारीकी उचित व्यवस्था की जाय।

तदनुसार वाइसरायने रेसिडेन्टको जरूरी हिदायतें भेज दी हैं। बादमें समाचार आया कि काश्मीर दरबारने जवाहरलालजीके लौटनेके लिए हवाई जहाज और मोटरकी व्यवस्था कर दी है।

शामको बापूने सरदारसे कहा कि मंत्रि मण्डलमें किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको लेनेकी बातचीत मौलाना साहबको न करके किसी औरको करना

चाहिये, क्योकि मौलाना साहब खुद एक राष्ट्रवादी मुसलमान होनेके कारण आग्रहको ठेठ तक चालू रखनेमें सकोच अनुभव कर सकते हैं।

नई दिल्ली, २२ जून, १९४६

सुधीर घोष क्रिप्ससे मिले। उन्होंने बताया कि क्रिप्सने उनसे यह कहा था कि किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको लेनेके बारेमे काग्रेसका रवैया बिलकुल तर्कसगत है और उचित है, परन्तु क्या कार्यसमिति इसे छोड नही सकती? उन्होंने मौलाना साहबकी ओरसे मिले हुए इस लिखित आश्वासनके आधार पर काम किया था कि कार्यसमिति इस बात पर अडेगी नही। और अब वे अपने आपको बडी विषम स्थितिमें पाते है। सुधीरके यह पूछने पर कि काग्रेस कैबिनेट-मिशनकी शर्तो पर यदि सत्ता स्वीकार नही करती, तो वह लीगको सत्ता क्यो नही सौंप देता? क्रिप्सने उत्तर दिया कि उन्हे ऐसा नही लगता कि अकेली लीगको सत्ता सौंपी जा सकती है।

"तो फिर काग्रेसको क्यो नही सौंपते?"

"इसके लिए हमें सम्राट्की सरकारकी सत्ताकी आवश्यकता होगी।"

"क्या यह काम यहासे नही किया जा सकता?"

"नही, इसके लिए व्यक्तिगत चर्चाकी जरूरत होगी।"

दोपहरको वाइसरॉयकी ओरसे एक पत्र मिला, जिसमें काग्रेसके अध्यक्षसे अनुरोध किया गया था कि अन्तरिम सरकारमे काग्रेसके प्रतिनिधियोंमे अपनी पसन्दका कोई मुसलमान शामिल करनेकी माग पर जोर न दिया जाय। इस पत्रने वह काम कर दिया, जो बापूके समझाने-बुझानेसे अब तक नही हो सका था। कार्यसमितिमें जब इस प्रश्न पर मत लिये गये तो उन शर्तो पर सत्ता स्वीकार करनेका एकके सिवा सबने विरोध किया।

नई दिल्ली, २३ जून, १९४६

तीसरे पहर कार्यसमितिकी बैठकमे बापूने अपना यह विचार दृढतासे रखा कि काग्रेसको अन्तरिम सरकारसे बाहर रहना चाहिये, परन्तु सविधान-सभामें जाना चाहिये, क्योकि वह एक विशुद्ध निर्वाचित संस्था है और उसके प्रतिनिधि-स्वरूपको ब्रिटिश सरकार भी स्वीकार करती है। वाइसरॉय उसके कार्यमें हस्तक्षेप नही कर सकता। वह अधिकारपूर्वक उसमे बैठ भी नही सकता। और यदि बुरीसे बुरी बात हुई, तो उसे एक विद्रोही सस्थामे भी बदला जा सकता है। . . . अन्यथा मुझे लडाईकी कोई सभावना नही दिखाई देती, क्योकि अहिसाका आवश्यक वातावरण देशमे नही है। मैं खुद तो सविनय अवज्ञा आदि छेडनेका विचार तक नही कर सकता।

जब बापूजी इस प्रकार बोल रहे थे तब राजेन्द्रबाबूने एक तार पढ़ कर सुनाया। यह उनके नाम आसामसे आया था और उसमें उस फार्मकी तरफ ध्यान आकर्षित किया गया था जो वाइसरायने दिल्लीसे आसामके संविधान सभाके सदस्योंके चुनावके लिए अलग अलग प्रान्तीय विधान-सभाओंके अध्यक्षोंके नाम भेजा था। उस तारके साथ साथ उस फार्ममें यह बताया गया था कि उम्मीदवारोंको यह घोषणा करनी होगी कि ब्रिटिश कैबिनेट मिशनके १६ मईके वक्तव्यके १९ वें पैरेके हुआरे लिए प्रान्तीय प्रतिनिधियोंके रूपमें हम सेवा करनेको तैयार होंगे। १९ वें पैरेमें समूहोंके निर्माण-सम्बन्धी विवादास्पद धाराएं थीं। सरदार पटेलको भी बम्बईके मुख्यमंत्री बी० जी० खेरसे ऐसा ही सन्देश मिला था। यदि कांग्रेसी उम्मीदवार इस घोषणा पर हस्ताक्षर करें तो क्या वे पैरा १९के अनुसार समूह रचनाएं और विभाग (सेक्शन) में मतदान करनेके सिद्धान्तसे बंध नहीं जायेंगे? बापू तारका मूल पाठ पढ़ कर बोल उठे — अब तो संविधान-सभाकी योजनामें भी दुर्गंध आ रही है। मुझे लगता है कि हम उसे छू नहीं सकते।

शामको प्रार्थना प्रवचनमें इस नई रुकावटका उल्लेख करते हुए बापू बोले — विषकी एक ही बूंदसे अमृतका सारा घड़ा घातक विषमें बदल सकता है। मुझे यह देख कर दुःख होता है कि जिन लोगोंने संविधान-सभाको जन्म दिया उन्हींके मातहत काम करनेवाले लोग उसकी हत्या कर रहे हैं। बापूने राज्य-पत्रके निर्माताओंको निर्दोष बताया। लेकिन साथमें यह कहा कि आगे चलकर यह पता चला कि उन्हें इस तरहकी सूचनाओंका ज्ञान था तो मैं उन्हें दोषी घोषित करूंगा। उनके मनमें अभी भी यह आशा थी कि यह एक भूल ही है और जल्दी ही सुधार ली जायगी।

शामको राजकुमारी अमृतकौर वाइसरायके निजी सचिव एबेलसे मिलने गई। एबेलने कहा कि जिन्ना बड़े दुराग्रही हैं। परन्तु हम क्या कर सकते हैं! हमें जिन्नाके साथ चलना पड़ता है। एबेलने राजकुमारीको कांग्रेसका वह पत्र दिखाया जो कार्यसमितिको बताये बिना लिखा गया मालूम होता था। एबेलने कहा, उस पत्रके मिलनेके बाद ही समझौता करनेके हेतुसे हमने जिन्नाकी मांगें स्वीकार की थीं। इसके लिए हमें कैसे दोष दिया जा सकता है? एबेलने यह आशा प्रगट की कि कांग्रेस बात टूटनेकी हद तक अपने आग्रहको नहीं ले जायगी।

नई दिल्ली, २४ जून, १९४६

मालूम होता है भाग्य चक्र कल तेजीसे घूमता रहा। प्रातःकाल मौन-प्रार्थना सभासे बिड़ला भवन लौटते हुए, बापूको भंगीबस्तीमें छोड़नेके बाद, सरदारकी मोटर सामनेकी दिशासे आती हुई लार्ड पेथिक-लॉरेन्सकी मोटरके

सामनेसे गुजरी। लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स मौन-प्रार्थनासे सीधे सरदारसे मिलने विड़ला-भवन गये थे। परन्तु वहा सरदार उन्हे नही मिले। उन्होने सरदारकी कार पहचान ली, सरदारको अपनी कारमें विठा लिया और उन्हें अपने निवास-स्थान पर ले गये। वहा आध घटे तक दोनोकी वातचीत हुई।

दोपहरको लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स और श्री ए० वी० एलेक्जेडरने विडला-भवनमे सरदारके साथ खाना खाया। राजाजी भी उपस्थित थे। तीसरे पहर सरदार, मौलाना, पडित नेहरू और राजेन्द्रवावू कैविनेट-मिशन और वाइसरॉयसे मिले।

आज सुवह जव सुधीर वापूसे मिलने आये, तो उन्होने कहा कि रातको वे क्रिप्ससे मिले थे। क्रिप्सने उनसे कहा था कि हमने निर्णय कर लिया है कि यदि काग्रेस दीर्घकालीन योजनाको स्वीकार करे और अल्पकालीन प्रस्तावको अस्वीकार कर दे, तो कैविनेट-मिशनने १६ जूनवाली अपनी घोपणाके अनुसार अन्तरिम सरकार वनानेके लिए जो कुछ किया था उसे रद्द कर दिया जायगा और उसके लिए फिर नये सिरेसे प्रयत्न किया जायगा। उन्होने वापू और सरदारको मिलनेके लिए वुलाया। मालूम होता है कि लॉर्ड वेवेलकी तरफसे जिन्नाको दिये गये आश्वासनोसे पैदा हुई गडवडीको दूर करनेका उन्होने निश्चय कर लिया है।

७ वजे सुवह वापू सरदार और सुधीरको साथ लेकर कैविनेट-मिशनसे मिलने गये। आज वापूका मौन-दिवस था, इसलिए उनकी ओरसे वातचीत छोटी छोटी पर्चियो पर लिख कर की गई। वह इस प्रकार थी·

> मैं समझा हू कि अन्तरिम सरकारकी रचनाकी योजनाके वारेमें अव तक जो कुछ किया गया है, उसे आप खतम कर देना चाहते हैं और सारी परिस्थिति पर नये सिरेसे विचार करना चाहते हैं।
>
> तव अगर आप यह कहते हैं कि जो लोग आपकी वात स्वीकार करेंगे उनको लेकर आप सरकार वनायेंगे, तो जहा तक मुझे दिखाई देता है गाड़ी चलेगी नही। यदि आपको वहुत ही जल्दी न हो और आप मुझसे इस वातकी चर्चा करना चाहें, तो मेरा मौन टूट जानेके वाद अर्थात् रातके ८ वजे वाद मैं खुशीसे आपके साथ वात करूगा। इस वीच, आपको आपत्ति न हो तो, आप २२ ता० के वाइसरॉयके पत्रमें रखे गये प्रस्तावको अस्वीकार करनेवाले कार्यसमितिके पत्र पर विचार करे। मेरी रायमें उस पत्रसे अन्तरिम सरकारको एक नया स्वरूप मिलता है। जहा तक मैं जानता हू, कार्यसमितिका उद्देश्य कैविनेट-मिशनको सहायता देना है, न कि उसके कार्यमें वाधा पहुचाना। सिवा इसके कि उसकी योजना कार्यसमितिकी आत्महत्या करनेवाली सिद्ध हो।

सुधीरकी बातचीतसे मुझे व्यापक अंधकारमें प्रकाशके दर्शन हुए थे। परन्तु क्या सचमुच प्रकाश है?

जहां तक संविधान-सभाकी बात है कल तीसरे पहर तक मेरा विचार बिलकुल स्पष्ट था कि कांग्रेसको यथाशक्ति उत्तम रूपमें संविधान सभाका कार्य पार लगाना चाहिये। परन्तु कल मैंने जो नियम पढ़े, उनसे मेरी मन स्थितिमें कायापलट हो गया है। उनमें एक गम्भीर दोष है। मैं किसी पर आक्षेप नहीं लगाता, परन्तु दोष तो आखिर दोष ही है। तीन दल यदि तीन दिशाओंमें काम करें तो उन्हें सफलताकी आशा नहीं रखनी चाहिये।

इसके सिवा आपको किसी एक धाराको सम्पूर्ण योजनासे अलग करके नहीं देखना चाहिये। आप यह क्यों नहीं कहते कि समूचे राज्य पत्रके अनुसार?

किन्तु शामको मैं आपके साथ इस प्रश्नकी भी चर्चा खुशीसे करूंगा। आप सबको यह कष्ट देनेका मुझे दुःख है। मैं इतनी ही आशा रखता हूं कि इस सारे प्रयत्नमें आप मेरा हेतु समझ रहे होंगे।

इस मुलाकातके बाद सरदारने अपनेको मौलानाकी कोठी पर उतार देनेको कहा। रास्तेमें उन्होंने बापूसे पूछा कार्यसमितिकी बैठक चल रही है, तो उन लोगोंसे मैं क्या कहूं? बापूने उत्तर दिया कि कैबिनेट मिशनके साथ बात करके मुझे सन्तोष नहीं हुआ। इस पर सरदार चिढ़ गये 'आपने १९ वें पैरेके बारेमें शंकाएं उठाईं। उस पर उन्होंने स्पष्ट आश्वासन दे दिया है। अब आपको और क्या चाहिये? बापूने यह उत्तर लिखा 'हमारी मुलाकातके दौरान जब क्रिप्सने मुझसे कहा कि अगर हम लोगोंको रिफार्म्स आफिसकी जारी हुई सूचनाओंकी धाराओंके बारेमें आशंका हो तो वे १९ वें पैरेका उल्लेख निकाल सकते हैं और उसके बजाय १६ मईकी घोषणाके हेतुके लिए शब्द रख सकते हैं तब लार्ड पैथिक-लॉरेन्सने तुरन्त हस्तक्षेप करके कहा नहीं, इससे कठिनाई पैदा होती है।' सरदार इससे सहमत नहीं थे। बापूने सुधीरसे पूछा। सुधीरने बापूके कथनका समर्थन किया परन्तु यह भी कहा कि मेरा अपना खयाल यह बना था कि वे बापूकी मांग स्वीकार करनेको तैयार थे।

कैबिनेट मिशनकी मुलाकातका विवरण सुननेके बाद मौलाना साहब बापू और सरदार दोनोंको कार्यसमितिमें ले गये। वहां लम्बी चर्चा हुई। सरदारने कहा कि हमने आज तीसरे पहर कैबिनेट मिशनको अपना निर्णय बता देनेका वचन दे रखा है। बापू इससे सहमत नहीं थे। कई पर्चियां पर लिख लिख कर उन्होंने यह सुझाया कि जब तक शामको मैं कैबिनेट मिशनसे न मिल लूं और उनसे अधिक स्पष्टीकरण न करा लूं तब तक आपको अपना निर्णय

कांग्रेस कार्यसमितिको गांधीजीका मौन-दिवसका सन्देश

"कैबिनेट डेलिगेशन जो कुछ भी कहे या लिखे भी, वह उनकी जबानमें या उनके खतमें र

गांधीजी सरदार पटेल और लेखकके साथ।

मैं देखता हूँ कि हम भिन्न दिशाओंमें बहे जा रहे हैं। (पृ० ३०९)

स्थगित रखना चाहिये। अन्तमें उन्होने यह लिख कर दिया : "मेरी भावनाओको ठेस पहुचनेका कोई प्रश्न नही है। मै इस प्रश्नका निर्णय आज करनेके विरुद्ध हू। परन्तु आप जैसा चाहे वैसा निर्णय करनेको स्वतन्त्र है।"

कैबिनेट-मिशनने कहा था कि उसके प्रस्तावो पर काग्रेस और लीगका अन्तिम निर्णय दो बजे तक उसके पास पहुचा दिया जाय। दोपहरको वाइसरॉय-भवनसे किसीने पडित नेहरूको टेलिफोन पर यह कहा कि कार्यसमितिका उत्तर तुरन्त भेज दिया जाय। पडित नेहरूने सरदारको टेलिफोन किया। उन्होने उत्तर दिया कि मुझे जल्दीका कोई कारण दिखाई नही देता। फिर उन्होने सुधीरसे कहा कि वे कैबिनेट-मिशनके स्टाफमे काम करनेवाले श्री ब्लेकरसे सम्पर्क स्थापित करके कह दे कि ऐसी अधीरता और आग्रहसे बात अकारण बिगड़ जायगी। बापूको इसकी सूचना मिलने पर उन्होने एक छोटा-सा अन्तरिम उत्तर तुरन्त भेज देनेके लिए तैयार कर दिया और कहा कि कैबिनेट-मिशनको यह सूचना दे दी जाय कि विस्तृत पत्र बादमे भेजा जायगा। ऐसा ही किया गया। बादमे मालूम हुआ कि जिस अति-उत्साही कर्मचारीने टेलिफोनसे सन्देश भेजा था वह शायद मुस्लिम लीग — जो काग्रेसके निर्णयकी प्रतीक्षा कर रही थी (देखिये अध्याय ९, विभाग २) — की मदद करना चाहता था; इसीलिए उसने यह अनधिकार चेष्टा की थी और इसके लिए उसे फटकारा गया था।

कार्यसमितिकी तीसरे पहरकी बैठकमे बापूने मुझे एक टिप्पणी पढ कर सुनानेको कहा, जो उन्होने कार्यसमितिके लिए लिखी थी। उस टिप्पणीमे उन्होने बताया कि सविधान-सभाके पास कोई कानूनी (डी जूरे) सत्ता नही है, क्योकि उस पर ब्रिटिश पार्लियामेंटकी मुहर नही लगी हुई है। वह केवल कैबिनेट-मिशनकी सिफारिश पर आधारित है। "उसकी सिफारिश या तो उसके मुहमें रह जायगी या छपे हुए कागज पर। यदि सविधान-सभामें कोई झगडा हुआ, तो हमारे पास किसी पुलिसके सिपाहीको हुक्म देनेकी भी सत्ता नही होगी। यह एक खतरनाक स्थिति है। उसके पीछे पार्लियामेटकी मुहरका पृष्ठबल होना चाहिये और केन्द्रीय सरकारके पास वास्तविक सत्ता होनी चाहिये, तभी सविधान-सभा हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है। पार्लियामेंटकी मुहर लग जानेसे सविधान-सभाके सभापतिका रास्ता साफ हो जायगा और जरूरत होने पर वे बडे महत्त्वके किसी मुद्देको (उस मुद्देको न्यायालयके निर्णयके योग्य ठहराकर) निर्णयके लिए फेडरल कोर्टके पास भेज सकेंगे।"

बादमें जो चर्चा हुई उसमें सरदारने अपना यह मत अत्यन्त दृढतापूर्वक रखा कि रिफार्म्स ऑफिस द्वारा निकाले गये फार्मके विषयमे कैबिनेट-मिशनका स्पष्टीकरण बिलकुल पर्याप्त है; और काग्रेस यदि तुरन्त अपना निर्णय देना स्थगित करेगी, तो उसकी प्रतिष्ठाको हानि पहुचेगी। बापूने लिख कर दिया : "मेरा दिमाग

साफ नहीं है। वह १९ वें परेके उल्लेखकी बात जोड़ने पर और (अन्तरिम सरकारकी) 'सारी योजनाको रद्द कर देने' के अर्थ पर केंद्रित है।' सरदारका धीरज टूट गया। बापूने शरत बोस और राजेंद्रबाबूसे इस प्रश्न पर अपना कानूनी मत देनेको कहा कि जो घोषणा विधान-सभाके अध्यक्षको भेजी गई थी उस पर हस्ताक्षर करके जो सदस्य संविधान-सभामें जायेंगे, उन्हें १६ मईकी योजनाके १९ वें परेके सम्बन्धमें कार्यकी स्वतंत्रता रहेगी या नहीं। शरत् बोसका मत यह था कि उस घोषणाकी सूचनाओंमें १९ वें परेका उल्लेख होनेसे सदस्योंकी कार्यकी स्वतंत्रता छिन नहीं जाती, क्योंकि राज्य-पत्र (स्टेट-पेपर) की उनकी स्वीकृति विवादास्पद धाराओंके कानूनी अर्थ पर आधार रखती है। राजेंद्रबाबूका मत यह था कि १९ वां परा समूह रचनाको अनिवार्य नहीं बनाता। वह केवल प्रान्तोंको समूह बनानेकी स्वतंत्रता देता है, जैसा कि दस्तावेजकी भाषासे ही स्पष्ट है। राज्य-पत्र पर पार्लियामेंटकी मुहर लगवानेके बारेमें पंडित नेहरूका मत था कि वह 'मर्यादा बांधनेवाली प्रक्रिया' होगी और उससे अर्थ लगानेका क्षेत्र सीमित हो जायगा। (इसके लिए कांग्रेसको भारी कीमत चुकानी पड़ी। देखिये खण्ड २ अध्याय ६)

*

एक बार तो यह डर झूठा साबित हुआ। कैबिनेट मिशनने शामको यह स्पष्टीकरण निकाला कि जिस फार्म पर संविधान-सभाके सदस्योंको हस्ताक्षर करने हैं उससे वे १९ वें परेके अनुसार संविधान बनानेके लिए बंध नहीं जाते। जिस प्रतिज्ञा पर उन्हें हस्ताक्षर करने हैं उसमें यही अपेक्षा रखी गई है कि वे भारतके लिए नया संविधान बनानेमें सहयोग दें।

*

८ बजे शामको जब बापूका मौन टूटा, तो वे और सरदार वाइसराय भवनमें वाइसराय और कैबिनेट मिशनके सदस्योंसे मिले। वहांसे लौटने पर सरदारने बापूसे पूछा 'आपको सन्तोष हुआ?" बापूने उत्तर दिया "उल्टे मेरा सन्देह गहरा हो गया है। मेरा सुझाव है कि अब आप कार्यसमितिका मार्गदर्शन करें।" सरदारने उत्तर दिया बिल्कुल नहीं। मैं एक शब्द भी नहीं कहनेवाला हूं। आप स्वयं जो कुछ चाहें उससे कह दें।

*

रातके १० बजे बापूने क्रिप्सको एक पत्र लिखा मैं चाहता तो यही था कि यह पत्र न लिखूं। कांग्रेस कार्यसमितिको संविधान-सभामें जानेकी तैयारी होने पर भी मैं अंधेरेमें कूदनेकी उसे सलाह नहीं दे सकूंगा।

अगर आपका सचमुच अब तकके दिये हुए वचनोंको रद्द कर देनेका इरादा हो, तो उसके बाद शून्यके सिवा दूसरा कुछ नहीं रह जाता।

गवर्नरोके नाम (रिफार्म्स ऑफिस द्वारा निकाली गई) सूचनायें निर्दोष सिद्ध हुईं, परन्तु उन्होने एक भयानक मार्ग खोल दिया है। इसलिए मैं कार्य-समितिको सलाह देना चाहता हू कि वह दीर्घकालीन प्रस्तावको अन्तरिम सरकारके साथ सम्बद्ध किये विना उसे स्वीकार न करे। मुझे अपनी अन्त प्रेरणाके विरुद्ध काम नही करना चाहिये। . . ."

नई दिल्ली, २५ जून, १९४६

८ बजे प्रातःकाल बापू कार्यसमितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए गये। उन्होने रात क्रिप्सके नाम जो पत्र लिखा था, उसे पढ कर सुनानेके लिए मुझसे कहा। फिर उन्होने बहुत छोटा-सा भाषण दिया· "मैं हार स्वीकार करता हू। आप मेरे निराधार सन्देहके अनुसार चलनेके लिए बधे हुए नही हैं। आपको मेरी अन्त प्रेरणाका अनुसरण तभी करना चाहिये जब वह आपकी बुद्धिको जचे। नही तो आपको स्वतन्त्र मार्ग अपनाना चाहिये। अब मैं आपकी अनुमतिसे चला जाऊगा। आपको अपनी बुद्धिके आदेश पर चलना चाहिये।"

सभामें सन्नाटा छा गया। कुछ समय तक कोई नही बोला। मौलाना साहबने अपनी अचूक जागरूकतासे तुरन्त स्थितिको सभाल लिया। उन्होने पूछा, "आप लोग क्या चाहते है? क्या बापूको और अधिक रोकनेकी कोई जरूरत है?" सब शान्त रहे। सबने समझ लिया कि निर्णयकी इस घडीमें बापूका उनके लिए कोई उपयोग नही है। उन्होनें कर्णधारको छोड़ देनेंका निर्णय किया। बापू अपने निवास-स्थानको लौट आये।

कार्यसमितिकी बैठक दोपहरको फिर हुई। उसने कैबिनेट-मिशनको एक पत्र लिख कर केन्द्रमें अन्तरिम सरकार बनानेका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया और दीर्घकालीन योजनाको विवादग्रस्त धाराओके अपने (कार्यसमितिके) ही अर्थ-सहित स्वीकार किया। इसके बावजूद बापूसे कार्यसमितिने अपनी तीसरे पहरकी बैठकमें उपस्थित रहनेका आग्रह किया। दोपहरको कैबिनेट-मिशनने कार्यसमितिके सदस्योको मिलनेके लिए बुलाया। बापू सदस्य नही थे इसलिए बुलाये नही गये, और वे नही गये। लौट कर किसीने बापूको एक शब्द भी नही बताया कि मुलाकातमें क्या हुआ!

९

कैबिनेट-मिशनके साथकी वार्ताओके आखिरी दौरके साथ गांधीजी और उनके कुछ अत्यन्त घनिष्ठ साथियोके बीच मतभेद प्रारम्भ हुआ। सत्ताके हस्तातरणकी अन्तिम स्थितिमें दोनोकी दिशाए बिलकुल भिन्न हो गईं। वार्ताओके प्रारम्भिक कालमें दोनो एक-दूसरेके बहुत निकट आ गये थे। कार्य-समितिके करीब करीब सारे महत्त्वपूर्ण प्रस्तावो और मसौदोकी कल्पना पहले-

पहले गांधीजीके दिमागमें उत्पन्न होती थी और बादमें कार्यसमिति उन्हें मूल रूपमें अपना लेती थी या कुछ सुधारोंके बाद स्वीकार कर लेती थी। ऐसी सम्पूर्ण सहमति फिर कभी नहीं हुई। आंतरिक व्यवस्था बनाये रखनेके लिए ब्रिटिश सेनाके उपयोगके बारेमें गांधीजीका रुख ब्रिटिश लोगोंके साथ चाहे जितना लाभदायक राजनीतिक सौदा करनेकी अपेक्षा उनके भारत छोड़कर चले जानेके बाद गृह-युद्धका खतरा उठाकर भी मुस्लिम लीगके साथ सीधी मंत्रणा करके समझौता करनेका उनका आग्रह, अंग्रेजोंके शस्त्रोंके बलसे लादी गई शान्तिकी अपेक्षा अराजकता और अंधाधुंधीका सामना करनेकी उनकी तैयारी — इन सब बातोंमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ बल्कि समयके साथ ये सब अधिक दृढ़ होती गईं। कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्योंकी दृष्टि शुद्ध राजनीतिक थी, इसलिए वे इस अनजाने समुद्रमें जहाज चलानेकी हिम्मत न कर सके।

छोटे छोटे कुछ और भी मतभेदके मुद्दे थे। गांधीजी इस बातके विरुद्ध थे कि आजाद हिन्द फौजके सैनिकोंको पैसेसे खुश रखा जाय। उनकी इच्छा थी कि वे लोग क्रामवेलकी बिखेरी हुई सेनाके लौहसैनिकों (आयरनसाइड्स) की तरह आदर्श नागरिकों और राष्ट्रसेवकोंमें बदल जायं। "क्रामवेलकी उस सेनाके लिए यह कहा जाता है कि उसके तोड़ दिये जानेके बाद कुछ ही मासमें ५० हजार सैनिकोंमें से एक भी सैनिकका कोई निशान बाकी नहीं रहा था और दुनियाकी सबसे शक्तिशाली सेना समाजमें बिलकुल समा गई थी। 'राजावादियोंने स्वयं यह स्वीकार किया था कि प्रामाणिक उद्योगके हर विभागमें ये अस्वीकृत योद्धा दूसरे लोगोंकी अपेक्षा अधिक सम्पन्न बन गये।

किसी पर भी चोरीका अथवा कोई डाकेका अभियोग नहीं लगा। किसीको भीख मांगते नहीं सुना गया। (और) यदि कोई भटियारा, कोई राज अथवा गाड़ीवाला अपनी परिश्रमशीलता और सौम्यतासे लोगोंका ध्यान आकर्षित करता था, तो अधिकतर वह क्रामवेलके पुराने सैनिकोंमें से ही होता था।'"[५]

गांधीजी इस बातके विरुद्ध थे कि कांग्रेस रुपयेके जोरसे चुनाव लड़े। पर उनकी राय नहीं मानी गई। बादमें आजाद हिन्द फौजके सवाल पर कई पेचीदगियां पैदा हुईं। आजाद हिन्द फौजके कुछ लोगोंने हिंसाकी भी धमकी दी। इसी तरह कुछ उम्मीदवार, जिन्हें कांग्रेसने नामजद किया था अथवा जिनका कांग्रेसने समर्थन किया था या जिनकी कांग्रेसने रुपयेसे मदद की थी चुनावमें हार गये और मुस्लिम लीगमें शरीक हो गये। उनमें से एकने मियां गुलाम सरवरने, बादमें नोआखालीके दंगे संगठित किये।

दिल्लीमें अन्तिम दिन कार्यसमितिकी बैठकमें एक घटना घटी थी और उसके सम्बन्धमें गांधीजीकी सरदारसे बादमें बात भी हुई थी। दोनोंके विषयमें

गाधीजीने सरदारको पूनासे १ जुलाई, १९४६ को लिखा: "हमारी आजकी बातचीत मुझे पसन्द नही आई। इसमें किसीका दोष नही है। अगर दोष है तो परिस्थितियोका है। इसके लिए मै और आप क्या कर सकते है? आप अपने अनुभवसे चलते है; मै अपने अनुभवसे चलता हू। आप जानते है कि कई बातोको, जो आपने की है, मै समझ नही सका हू। . . . आप समितिमे बहुत गरम होकर बोलते है। मुझे यह अच्छा नही लगता। इतने पर आज सविधान-सभाका प्रश्न आया। . . . यह सब मै शिकायतके तौर पर नही कह रहा हू। परन्तु मै देखता हू कि हम भिन्न दिशाओमे बहे जा रहे है।"

इसका उत्तर सरदारने यह दिया: "आपके पत्रके बाद मै क्या कह सकता हू। मेरा ही दोष होगा। इतना ही है कि मुझे वह दोष अभी तक दिखाई नही देता और इससे मुझे दु.ख होता है। मै भिन्न मार्ग ग्रहण करना नही चाहता। . . . मेरी अन्त प्रेरणा तो दूसरी ही थी। परन्तु जो कुछ मैने किया वह मै न करता, तो बादमें काग्रेसको दोषी ठहराया जाता। . . . जब मै समितिमे बोलता हू, तो मुझमे जरूर कुछ गर्मी आ जाती है। . . . यह स्वभावका दोष है। . . . परन्तु इसके भीतर दूसरा कुछ नही है।"

इस तरह अपने मतभेद रखते हुए भी दोनो एकता कायम रखते थे। दोनो अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार काम करते थे और इस कारण एक-दूसरेका और भी अधिक आदर करते थे।

१०

कार्यसमितिके २५ जूनके निर्णयसे कठिनाई हल नही हुई, क्योकि कैबिनेट-मिशन विवादग्रस्त धाराओके अपने ही अर्थ पर अडा रहा; परन्तु उससे कुछ समयके लिए कठिनाई टल गई। कैबिनेट-मिशनने अपनी बैठकमे 'निश्चय किया' कि काग्रेसका निर्णय उनकी १६ मईवाली योजनाको स्वीकार करता है और इसलिए काग्रेस और मुस्लिम लीग दोनो अन्तरिम सरकारमे जानेके योग्य हो गई है। इसलिए उन्होने कुछ समयके लिए अन्तरिम सरकार बनानेकी अधिक बातचीत मुलतवी कर दी और वे २९ जूनको दिल्लीसे लन्दनके लिए रवाना हो गये।

जो लोग गाधीजी और कार्यसमितिके बीच मतभेदके नामसे पुकारी जानेवाली वस्तुसे समयके पहले ही खुश हो रहे थे, उन्हे निराशा होनी ही थी। वे समझ नही पाये कि अहिसा कैसे काम करती है। गाधीजीने कार्यसमितिके अपनी बुद्धि और सूझके अनुसार काम करनेका जोरदार बचाव किया। उन्होने कहा, मेरा अपना अन्धकार ईश्वरके प्रति मेरी श्रद्धामें कमी बताता है। "जिसका सपूर्ण व्यक्तित्व ईश्वरसे ओतप्रोत है, उसे कभी अन्धकारका अनुभव नही होना चाहिये।"[४४] बडी बात तो यह है कि मै अपने डरका कोई कारण

भी नही बता सकता। 'जिनका काम देशका नेतृत्व करना है, वे दूसरकी तकहीन अन्त प्रेरणाके अनुसार नही चल सकते। वे देशके भाग्यका निणय नहा कर सकते यदि उनमें स्वय सोचने और दूसराका अपनी बातका विश्वास करानेकी क्षमता न हो। कायसमितिके सदस्य राष्ट्रके सवक हं। जिस जनताकी सेवा करनेका व्रत उन्होने लिया है उसकी स्वच्छापूण अनुमतिके सिवा उनक पास दूसरा कोई बल नहा है। लोगोको कायसमितिके नतृत्वका अनुगमन करना चाहिये।' "

तो वह सन्देह किस प्रकारका था, जिसका वे कोई ठास कारण नहा बता सके और फिर भी जिसे व अपने साथियोके सामने और कबिनेट मिशनके सदस्याके सामने रखने जितना महत्त्वपूण समझते थे? उसके लिए उनका बुनियादी कारण क्या था? इसका कुछ सकेत गाधीजीकी एक मुलाकातमें मिला जो अमरीकी पत्रकार और लेखक लुई फिशरसे १८ जुलाईको हुई था

'यदि कायसमिति आपके अधरेमें टटोलने' की बात पर अमल करती, तो क्या वह कबिनेट मिशनकी योजनाको अस्वीकार कर देती?"

हा, परन्तु मने उसे ऐसा करने नही दिया।"

"आपका मतलब यह कि आपने आग्रह नही किया।"

'इतना ही नही मने उसे अपनी अन्त प्रेरणा पर चलनेसे रोक दिया जब तक वह भी मेरी तरह ही अनुभव न करे। डा० राजेन्द्रप्रसादने मुझसे पूछा क्या आपकी अन्त प्रेरणा यहा तक जाती है कि आप हमें दीघकालीन प्रस्तावोको स्वीकार करनेसे रोक दें, भले ही आपकी बात हमारी समझमें आये या न आये? मने कहा 'नही आप अपनी बुद्धिके अनुसार चलिये क्योकि मेरी अपनी बुद्धि भी तो मेरी अन्त प्रेरणाका समथन नही करती।' जब तक मेरी बुद्धिने समथन नही किया तब तक मने स्वय कभी अपनी अन्त प्रेरणाका अनुसरण नही किया है।"

परन्तु आपने कहा है कि जब कुछ अवसरो पर आपको अन्त प्रेरणा आपसे कहती है तब आप उसका अनुसरण करते ह।

हा परन्तु उन मामलोमें भी मेरी बुद्धि मेरी अन्त प्रेरणाका अनुगमन कर सकी थी। कबिनेट मिशनके दीघकालीन प्रस्ताव पर मेरी बुद्धिने मेरी अन्त प्रेरणाका साथ नही दिया।'

"तब आप राजनीतिक परिस्थितिमें अपनी अन्त प्रेरणाको क्यो बीचमें लाये?'

क्योकि म अपने मित्रोके प्रति वफादार था क्योकि म कबिनेट मिशनकी नेकनीयतीमें भी अपनी श्रद्धाको टिकाये रखना चाहता था। इसलिए मने अपनी शकाए कबिनेट मिशनको बता दी। मने अपने मनमें कहा मान लो कि उनका

इरादा अच्छा नही है, तो उन्हें शर्म मालूम होगी। वे कहेंगे, 'गांधी कहते है कि उनकी अन्तःप्रेरणा उनसे ऐसा कहती है, परन्तु हम कारण जानते है।' उनकी अपराधी अन्तरात्मा उन्हे कचोटेगी।"

"उसने नही कचोटा। . . . या आपके कहनेका यह मतलव है कि कोई वुराई थी ही नही?"

"मेरी अन्त प्रेरणा सच्ची सिद्ध हुई। आपको वादका इतिहास मालूम नही है। वह विनाशकारी सिद्ध होता, यदि (वम्वईके मुख्यमत्री) खेरने यह आग्रह न किया होता कि सविधान-सभाके उम्मीदवारोके हस्ताक्षर करनेके फार्ममे से १९ वे पैरेका सारा उल्लेख विलकुल निकाल दिया जाय।"

२९ जूनको एक व्यक्तिगत स्वरूपकी भेंटमें गाधीजीने नॉर्मन क्लिफको समझाया कि, मुझे कैविनेट-मिशनके सदस्यो अथवा वाइसरॉयके प्रति अविश्वास नही था। परन्तु "जिस ढगसे वाते हुई है" उस पर भरोसा नही था। मैंने कैविनेट-मिशनको उसका कार्य आरम्भ करते समय ही जो कुछ कहा था वह सच निकला। उन्हे इसका पता नही था कि उनके सामने क्या क्या कठिनाइया आनेवाली है। "उन्हें तो आज भी उनका पता नही है। . . . उनका एक विशेष विचारवारामे पालन हुआ है। प्रामाणिकताके विचारको अधिकसे अधिक खीचनेके वावजूद वे दूसरी तरहसे नही सोच सकते।"

उन्होने (कैविनेट-मिशनने) स्वीकार किया था कि किसी एक दलको सत्ता सौंप देनेके लोकतात्रिक सिद्धान्तका अनुसरण करना ही एक आदर्श मार्ग है। वे सिद्धान्तत इस वातमे गाधीजीसे सहमत थे कि यदि लीग पर वे विश्वास नही कर सकते, तो उन्हे ईमानदारीसे काग्रेसके कंधो पर वोझा रख देना चाहिये और यह विश्वास करना चाहिये कि वह समूचे भारतके साथ न्याय करेगी। परन्तु जैसा सर स्टैफर्डने गाधीजीके नाम २० जुलाईके अपने पत्रमें लिखा था, हमारा खयाल है कि जिस परिस्थितिमें हम पड़ गये है, उसमें हमें "दोनो पक्षोके सहयोगके लिए" प्रयत्न करना ही चाहिये, किसी और समय "जव भीतरी सघर्ष कम हो" कोई दूसरा मार्ग संभव हो सकता है। इसलिए हमें उत्तम या आदर्श मार्गके वजाय मध्यम मार्गका अनुसरण करना पडता है, "क्योकि सिद्धान्त रूपमे उत्तम मार्ग व्यावहारिक नही हो सकता।"

जिस धारणा पर उनके इस अनुमानका आधार था उसे स्वीकार कर लिया जाता, तो उनका यह अनुमान निर्विवाद था। उनके रवैयेके मूलमें यह धारणा थी कि सत्ता छोड़नेसे पहले वे ऐसा कोई हल खोज निकालनेकी 'नैतिक जिम्मेदारी' से मुक्त नही हो सकते, जो दोनो दलोको स्वीकार हो। गाधीजीकी दृष्टिसे अल्पसख्यकोके लिए कैविनेट-मिशनकी यह चिन्ता साम्राज्यवादका अवशेष थी। ब्रिटेनकी मजदूर सरकार अपने वामपक्षी दावोके

बावजूद चाहे अनजानमें ही सही' उससे मुक्त नही हो सकी। मजदूर सरकारको तो उसे फेंक देना चाहिय था और कुछ लोगोको नाराज करके भी सही काम करनेका साहस दिखाना चाहिये था।" यह काम साम्राज्यवादी ढगसे नही किया जा सकता था।"

गाधीजीको वह सकोच भी बडा अथपूर्ण मालूम हुआ, जो उन्होने २४ जूनको प्रात काल कबिनेट मिशनके साथ अपनी मौन भटक समय लाड पेथिक-लॉरेंसमें देखा था। क्या वह सकोच मिशनके मनमें रही इस चोरीका सूचक था कि १६ मईके उसके वक्तव्यकी विवादास्पद धाराओके उसी अथसे मिशन किसी भी तरह चिपटा रहेगा, जो वह करता है — और जसा कि अन्तमें किया गया था? क्या उसमें कोई अवरोध था और कबिनेट मिशन जान-बूझकर काग्रेसको अधरेमें कूद पडनकी गलती करन दे रहा था? यदि एसी बात थी तो वह खतरनाक थी। कबिनट मिशनके २६ जूनके निणयके बाद यह प्रश्न सचमुच अप्रस्तुत बन गया था कि १६ मईके राज्य पत्र (स्टट पेपर)को ब्रिटिश पालियामेंटके कानूनोका अथवा सरकारी दस्तावेजा (स्टेट डाक्युमेन्टस) का अथ करनवाल सिद्धान्त लागू होते ह — जिसमें दस्तावेज या कानूनके मल पाठ (टक्स्ट) परसे आशयका अनुमान लगाया जाता है — अथवा वह राज्य-पत्र करारो और समझौतोकी श्रेणीमें आता है जहा पक्षोका आशय मूल पाठका अथ निश्चित करता है? कबिनेट मिशनके निणयके साथ उस अथकी स्वीकृति गर्भित रूपमें जुडी हुई थी, जिस अथके साथ काग्रेस कायसमितिने १६ मईके वक्तव्यको स्वीकार किया था। गाधीजीको अस्पष्ट रूपम ऐसा लगा करता था कि मिशनके सदस्य कोई बात मनमें छिपाये हुए ह जिसे उन्होने सामने नही रखा है और जिसे वे बादमें सामने रखेंगे। वे घुटे हुए ब्रिटिश कूटनीतिज्ञोके साथ इस प्रकारका खेल खेलना बहुत नापसद करते थ। कूटनीतिके बल पर भारत १०० वषका रास्ता एक ही पीढीमें तय नही कर पाया था और न कूटनीतिने भारतको १५० वषकी गुलामीसे छुडा कर उसे स्वतत्रताके द्वार पर पहुचाया था। गाधीजीका बल कूटनीतिमें नही परन्तु सत्याग्रहमें था।

आखिरी बात यह थी कि जिस ढगसे वाइसरायका रिफार्म्स आफिस सारा काम चलानेका प्रयत्न कर रहा था उसे गाधीजी अपशकुन मानते थ। वे बार बार अपना यह दृढ विश्वास प्रगट कर चुके थे कि जब तक भारतीय फौलादी ढाचे का हृदय-परिवतन नही हो जाता तब तक भारतको आजादी नहा मिलेगी। जसा श्रीनिवास शास्त्रीने लन्दनकी दूसरी गोलमेज परिषदके अन्तमें कहा था पहले भी व्हाइट हालके बहुतसे शुभ आशयोकी नई दिल्लीके सचिवालयकी अधेरी गलियोमें हत्या हो चुकी थी। क्या पुराना इतिहास फिर दोहराया जायगा? क्या कबिनेट मिशन अपने समयसे पहले आ गया है?

गाधीजी तो अदम्य आशावादी ठहरे। वे निराशाओके वावजूद आशा रखते रहे और अपनी शकाओ और मिशनकी कार्रवाइयोके वावजूद उसकी सफलताके लिए काम करते रहे। साथ ही उन्होने अपने प्रामाणिक सन्देहको उनसे या जनतासे छिपाया भी नही। उन्होने २७ मईको सर स्टैफर्डको लिखा, "विश्वासका दिखावा तो व्यर्थसे भी वुरा होता है। हृदयमे विश्वास हो तभी उसका मूल्य है। . . . (मिशनकी ओरसे) विश्वसनीय कार्य होने पर सारा अविश्वास या गलत विश्वास उसी तरह विलीन हो जायगा, जैसे सूर्यके निकलने पर प्रात.कालका कोहरा विलीन हो जाता है।"

११

२८ जूनको गाधीजी दिल्लीसे पूनाके लिए रवाना हुए। पिछली रात जव गाधीजीको ले जानेवाली विशेष रेलगाडी नेरल और करजतके वीच पूरी रफ्तारसे जा रही थी, तव वह कुछ पत्थरोसे टकरा गई। ये पत्थर गाडीको पटरी परसे उतार देनेके लिए जान-वूझकर पटरी पर रखे गये मालूम होते थे। पीछेके डिब्वेका डायनेमा नष्ट हो गया और इजिनके नीचेके लोहेके ढाचेको नुकसान पहुचा। इजिन-ड्राइवर श्री पेरेरा यदि सावधान न रहते और वे समय पर गाडीको रोक न देते, तो भयकर दुर्घटना हो जाती। यात्रिकोका दल रातको दो घटेसे अधिक समय तक काम करता रहा और नष्ट हुए फौलादी कल-पुर्जोको खोलता और हटाता रहा, उस वीच हथौड़ोकी चोटोकी आवाजमे गाधीजी न्यायपरायण और निर्दोष' व्यक्तिकी नीद सोते रहे। जव दूसरे दिन उनसे पूछा गया कि रातकी घटनाका उन्हें पता है या नही, तो वे वोल उठे, "अरे, मुझे तो कुछ मालूम ही नही हुआ!" नॉर्मन क्लिफने, जो उसी गाडीसे यात्रा कर रहे थे और दुर्घटनासे पहले रास्तेमें किसी स्टेशन पर उतर गये थे, गाधीजीको लिखा. "मै आपको विश्वास दिलाता हू कि जव मैंने आधी रातको आपकी गाडी छोडी, तो आगे जाकर पटरी पर मैंने पत्थर नही रखे थे! ससारको मेरी तरह, जो उसका एक छोटासा अग है, आपकी रक्षाके लिए परमात्माका आभारी होना चाहिये।"[४७]

जव ७ जुलाईको वम्वईमे काग्रेस महासमितिकी वैठक हुई तव तक अधकार मिटा नही था, शायद कुछ गहरा ही हुआ होगा। काग्रेसने दीर्घकालीन योजनाको स्वीकार कर लिया, इसका विरोध ज्यादातर समाजवादियो तथा दूसरे वामपक्षी दलोकी ओरसे हुआ। अत महासमितिमें गाधीजीके उद्‌गार अधिकतर उन्ही लोगोके लिए थे' "कार्यसमितिके सदस्योके साथ मेरे सम्वन्ध आपको मालूम है। . . मै उन्हे सविधान-सभा सम्वन्धी प्रस्तावको ठुकरा देनेके लिए कह सकता था। . . . परन्तु इसके लिए मैं कोई कारण नही

बता सकता था। उनका निणय, जो सब सम्मत है, आपके सामने है। कायसमितिके सदस्य आपके वफादार और परखे हुए सेवक हं, आपको उनका प्रस्ताव हलके मनसे अस्वीकार नही कर देना चाहिये।"
समाजवादियोके इस भयको कि सविधान-सभा एक जाल और फन्दा साबित हो सकती है, पराजयवादी वत्ति बताते हुए गाधीजीने आगे कहा

> म यह स्वीकार करनेको तयार हू कि प्रस्तावित सविधान-सभा जनताकी पार्लियामेन्ट या ससद नही है। उसमें अनेक दोप हू। परन्तु आप सब अनुभवी और महारथी योद्धा हू। सनिक खतरेसे कभी नही डरता। खतरेमें उसको आनन्द आता है। यदि प्रस्तावित सविधान-सभा में त्रुटिया हू, तो उन्हें दूर कराना आपका काम है। वह तो लडाईकी चुनौती होना चाहिये, न कि इनकारका एक कारण। मुझे आश्चय होता है कि श्री जयप्रकाशनारायणने कल यह कहा कि प्रस्तावित सविधान-सभाम भाग लेना खतरनाक होगा और इसलिए कायसमितिका प्रस्ताव अस्वीकार कर देना चाहिये। जयप्रकाश जसे परखे हुए योद्धाके मुहसे ऐसी हारकी भाषा सुननेके लिए म तयार नही था। सत्याग्रही तो पराजयको जानता ही नही।
>
> एक सत्याग्रहीस म यह बात सुननेकी भी आशा नही रखता कि अंग्रेज जो कुछ करगे वह बुरा ही होगा। यह जरूरी नही कि अंग्रेज बुरे ही हो। अन्य प्रजाओकी तरह अंग्रेज प्रजामें भी भले और बुरे आदमी हू। अंग्रेजोकी आजकी शक्ति बन नही सकती थी, अगर उनमें कोइ अच्छाई न होती। हम स्वय दोपोसे मुक्त नही हू। कुछ लोग यह कहते हू कि जिस मनुष्यमे नतिक भावना नही होती, उसके सामने सत्याग्रह व्यय है। म इस कथनका विरोध करता हू। अगर हम सच्चे हू और हममें काफी धीरज है तो पत्थरके दिलवालेको भी पिघलना पडेगा। सत्याग्रही अपने प्राण दे देता है, परन्तु अपनी बात कभी नहा छोडता। 'करो या मरो' का यही अथ है।
>
> विलास या आरामके लिए समय नहा है। सविधान-सभा आप लोगोके लिए कोई फूलोकी शय्या सिद्ध नही होगा, बल्कि काटोकी शय्या होगी। आप उसस बच नहा सकत।
>
> अगर आप मुझस यह पूछें कि आप प्रस्तावित सविधान-सभाको रद्द कर दें अथवा सविधान-सभा अस्तित्वमें आये ही नहा, तो क्या म आगाका सविनय अवज्ञा—व्यक्तिगत या सामूहिक रूपमें—छेड देनकी सलाह दूगा अथवा म स्वय उपवास करूगा? तो मेरा उत्तर होगा नहा। म तो अन्त हो चलनेमें विश्वास करता हू। म इस

> दुनियामे अकेला ही आया था, मृत्युकी छायामें अकेला ही चला हूं और समय आने पर अकेला ही चला जाऊंगा। मै जानता हू कि अकेला होने पर भी मुझमे सत्याग्रह छेडनेकी पूरी क्षमता है। मैंने इसके पहले भी ऐसा किया हे। परन्तु यह अवसर उपवास या सविनय अवज्ञाका नही है। मै सविधान-सभाको सत्याग्रहका स्थानापन्न मानता हू। वह रचनात्मक सत्याग्रह है।
>
> इसका विकल्प वह रचनात्मक कार्यक्रम है, जिसके साथ आपने कभी न्याय नही किया। . . परन्तु सत्याग्रही कार्य करनेमे देर नही कर सकता और पूर्णतया अनुकूल परिस्थितिया उत्पन्न होने तक प्रतीक्षा नही कर सकता। उसके पास जो भी सामग्री है उसीको लेकर वह काम आरम्भ कर देगा। उसका मैल साफ करके वह उसे शुद्ध सोना वना लेगा। .
>
> हमें अपने दृष्टिकोणमे कायर नही होना चाहिये, वल्कि अपने कामको विश्वास और साहसके साथ हाथमें लेना चाहिये। वचनाके डरसे हमें हताश नही होना चाहिये। सत्याग्रहीको कोई धोखा नही दे सकता। मेरे मनमें जो अधकार भरा हुआ हे, उसकी आप विलकुल परवाह न कीजिये। ईश्वर उसे प्रकाशमें वदल देगा।

मत लिये जाने पर कैविनेट-मिशनकी १६ मईवाली योजनाको स्वीकार करनेका काग्रेस कार्यसमितिका प्रस्ताव पास हो गया। २०४ मत उसके पक्षमे और ५१ मत उसके विरुद्ध थे।

इसके छह महीने वाद भी गाधीजीकी यह राय वदली नही थी कि उनकी ‘अन्त प्रेरणा’ सच्ची थी और उसे अस्वीकार कर देनेवाली कार्यसमिति भी सच्ची थी।

नवा अध्याय

सीधी कार्रवाई

१

जुलाईके दूसरे सप्ताहमें बम्बईमें महासमितिके अधिवेशनके बाद गांधीजी गर्मियोंके दिन बिताने पचगनी चले गये। उनके जीवनके पिछले वर्षोंमें वर्षमें दो महीने पहाड़की हवा उनके शरीरका स्वास्थ्य बनाये रखनेके लिए जरूरी हो गई थी। जब गांधीजीकी मंडली पचगनी पहुंची तब वहांका मौसम सुहावना और ठंडा था और कभी धूप तो कभी बादल दिखाई देते थे। हवा सौम्य और सुगंधित थी और आसपासकी एकाकी पहाड़ियों पर स्वप्न-संसारका सा मौन सतत छाया रहता था। अंधेरा होने पर पहाड़के ढालू जंगलों और कोहरेसे आच्छादित घाटियोंके घने अंधकारको असंख्य जुगनू प्रकाशित करते रहते थे और ये ढालू जंगल तथा घाटियां तारोंसे जड़े आकाशके चंदोवाकी प्रतिछाया जैसे दिखाई देते थे। गांधीजीको इन सब चीजोंका ध्यान नहीं था। उनको तो सिर्फ चावलकी फसलकी ही चिंता थी, जिसके समय पर वर्षा न होनेसे बिगड़ जानेका डर था। अंतमें वर्षा हुई और अपने साथ वह कठिन बाड़ी ठंडी हवा भी ले आई जो हड्डियोंकी मज्जा तकको जमा देती थी। और इस खराब मौसमके कारण सभी अपने घरोंमें बन्द हो गये। परन्तु गांधीजीको इस बातकी खुशी थी कि योग्य समय पर बढ़िया फसल होगी और गरीब किसानोंके खलिहान धानसे भर जायंगे।

है, न और किसीको। और ईश्वर भी ऐसे गरीवोका मित्र और सहायक नही होगा। परन्तु भारतमे एक ऐसे प्रकारके भी लोग है, जिन्हे कमसे कम आवश्यकताएं रखनेमे आनन्द आता है। ऐसे आदमीके पास थोड़ासा आटा, चुटकीभर नमक और मिर्चे अगोछेमे वधी होती है। उसके पास कुएसे पानी निकालनेके लिए एक लोटा और डोर होती है। उसे और किसी चीजकी जरूरत नही होती। वह १०–१२ मील रोज पैदल चल लेता है। वह अपने अगोछेमे आटा गूद लेता है और इधर-उधरसे जलानेकी कुछ लकड़िया वीन लेता है और उसी आग पर अपनी वाटिया सेंक लेता है। ऐसे आदमीका साथी और मित्र भगवान होता है और वह अपने आपको राजा या सम्राट्से भी अधिक सपन्न और समृद्ध समझता है।[१]

*

दक्षिण अफ्रीकाकी यूनियन सरकारने जमीन पर भारतीयोके अधिकारका विरोध करनेवाला कानून जारी किया था। उसके विरुद्ध दक्षिण अफ्रीकाके भारतीय समाजने वीरोचित सग्राम छेड रखा था और दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रह-सग्रामके महारथी योद्धा पारसी रुस्तमजीके पुत्र सोहरावजी रुस्तमजीके नेतृत्वमे कई नौजवानोका एक शिष्ट-मडल उसी सिलसिलेमें भारत आया था। इन नौजवानोको दक्षिण अफ्रीकामे सत्याग्रहकी तालीम गाधीजीसे मिली थी। ये लोग गाधीजीसे कई वार मिले। उन्होने स्वीकार किया कि उनके वीच फूट है। गाधीजीने उन्हे याद दिलाया कि जव वे ५० वर्ष पहले वहा थे तव भी दक्षिण अफ्रीकाके भारतीय समाजमें धोखेवाजोकी कमी नही थी, परन्तु दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहके आखिरी दौरमें वे सव एक व्यक्तिकी तरह खडे हो गये थे। "उस इतिहासको आज फिर आप दोहरा दे तो आपकी जीत होगी; और नही दोहरायेंगे तो आपकी हार होगी।"[२]

उनमें से एक सदस्य वोले, "कभी कभी हमारा समाज कठिन वन जाता है"। "और झगडालू भी," दूसरे सदस्यने कहा। उन्होने यह भी शिकायत की कि व्यापारी समुदाय उनका साथ नही देता।

गाधीजीने उत्तर दिया, "यदि एक भी व्यापारी सामने नही आता, तो समूचे व्यापारी समुदायका सफाया हो जायगा। परन्तु आपको निराश नही होना चाहिये। फिर तो सत्याग्रह दूसरा ही रूप धारण करेगा। मुझे याद है कि किस प्रकार 'इडियन ओपीनियन' के पहले ही लेखमें मैंने यह कहा था कि दक्षिण अफ्रीकामें अन्तमे एक आदमी भी सच्चा होगा, तो सव लोग उसमें समा जायेंगे। उस लेखमें मैंने यह भी लिखा था कि 'खोटे सिक्कोके पूरे ढेरमें यदि एक भी सच्ची मोहर हुई, तो उस ढेरकी कीमत उस एक मोहरके वरावर होगी। . . . यदि आप एक [illegible]

आपको नया पार लगा देगा। जब तक एसा सत्याग्रही आपके पास न हो तब तक आप लडाई शुरू न कीजिये।''

शिष्ट-मडलके एक सदस्यने गाधीजीसे पूछा कि, जूलू और बन्टू लोगोके साथ मिलकर गोरा विरोधी मोर्चा बनानेके बारेमे आपकी क्या राय है? गाधाजी पूरी तरह इसके पक्षमें थे। परन्तु उन्होने चेतावनी दी कि यदि गोरा विरोधी समान मोर्चा रचनेके प्रयत्नमें उन्होने अपना मूल वस्तुको छोड दिया, तो यह विनाशकारी सिद्ध होगा। यदि किसीने काले लोगोको सत्याग्रहका शस्त्र नही बताया तो एक दिन काली जातिया रौद्र रूप धारण करके अपने गोरे अत्याचारियोके विरुद्ध बदला लेनेके लिए उठ खडी होगी। अगर आप उनमें अहिंसाकी भावना जाग्रत कर दें तो अच्छा हो। तब आप उनके उद्धारक बन जायगे। परन्तु यदि आप जोशमें आकर भान भूल जायगे और अपना मूल आधार छोड देंगे, तो आपका और उनका सर्वनाश निश्चित है।'

एक और सदस्यने गोरोकी फूट फलानेवाली चालका जिक्र किया हम भारतीय बन्टू लोगोसे लाभ उठाते हैं। हमें अपने आपको देशी (नेटिव) कहलानेमें शर्म आती है। हमारे खिलाफ उनमें क्रोधकी भावना बढ़ती जाती है और गोरे उस भावनाको प्रोत्साहन देते हैं ताकि हमारे और बन्टुओके बीचकी खाई चौडी होती जाय।'

गाधीजीने उत्तर दिया गोरे इस प्रयत्नमें सफल हो गये, तो आपके लिए वह बुरा दिन होगा।

शिष्ट-मडलने उनसे पूछा, क्या हमारा सगठन और नेतृत्व करनेके लिए भारतसे कोई नेता नही भेजा जा सकता?

गाधीजीने उनसे कहा नेता आपमें से ही निकलना चाहिये। मुझे आशा है कि समय पाकर ऐसा नेता पैदा हो जायगा। इस सबधमें उन्होने बताया कि कैसे वे अपने पुत्र मणिलाल गाधी पर जोर डालते रहे हैं कि वह इस कामके लिए अपने बच्चोको तयार करे और कैसे उस सिद्धान्तके अनुसार उन्होने अपने बच्चोको लवडेल और फोर्ट हेयर जसी शिक्षा-संस्थाओमें पढ़ने भेजनेसे इनकार कर दिया था। इसलिए आज मणिलाल और उनका सारा परिवार सग्राममें भारतीय समाजके साथ है।

दक्षिण अफ्रीकाकी सरकारके भारतीय विरोधी कानूनके विरोधमें भारत सरकारने बदलेमें वसा ही व्यवहार करनेकी नीति अपना ली थी। गाधीजीके साथ हुई बातचीतमें सुई क्रिशरने उनसे कहा कि बबईके ताजमहल होटलमें प्रबंधकोने एक सूचना ऐसी लगा रखी है दक्षिण अफ्रीकावालोंके लिए प्रवेश बद है। क्रिशर बोले मुझे यह पसन्द नही है। आपको अहिंसाका आदर्श अधिक ऊचा रखना चाहिये।

गाधीजीने उत्तर दिया, "यह अहिंसा नही होगी। आज तो भारतमें गोरोका राज्य है। इसलिए यदि ताजमहल होटलने ऐसी सूचना लगानेकी हिम्मत दिखाई है, तो यह उसके लिए शोभाकी वात है।"[३]

"कोई भी राष्ट्रवादी यही कहेगा। किन्तु आपको तो इससे कुछ ज्यादा अच्छी वात कहनी चाहिये।"

"तव एक वार तो मै राष्ट्रवादी वन ही जाऊगा।"

लुई फिशर वोले, "आज गोरा-विरोधी भावनाका कोई पार नही है। यूरोप वुरी तरह थक गया है। परन्तु अणुवमके आ जानेसे मानव-प्राणियोका अव उतना महत्त्व नही रहा। . . . इसीलिए गोरो और कालोके वीचका युद्ध अतिशय खतरनाक हो गया है।"

गाधीजीने उत्तर दिया, "कायरतासे कोई भी चीज अच्छी है; कायरता दोहरी हिंसा है।" अपने अर्थको स्पष्ट करनेके लिए उन्होने दक्षिण अफ्रीकाके एक भीमकाय हवशी पादरीका किस्सा सुनाया। जव इस काले पादरीका एक गोरेने रेलमे अपमान किया, तो उसने कहा, "भाई, माफ कीजिये।" और वह चुपकेसे रगीन लोगोके डिव्वेमें चला गया। "यह अहिंसा नही है। यह ईसाकी शिक्षाका विपर्यास है। इसके वदले अपमान करनेवाले गोरेका अपमान करना उसके लिए अविक पुरुपोचित होता।"

४

काग्रेसियोमे एक वर्ग ऐसा था, जिसकी यह राय थी कि काग्रेस सविधान-सभाका उत्तम उपयोग यही कर सकती है कि उस पर अधिकार कर ले, उसे प्रभुसत्ताधारी (सार्वभौम) सस्था घोपित कर दे और फ्रासके 'स्टेट्स जनरल' के ढग पर उसे क्रातिकारी सस्थाका रूप दे दे। गाधीजीने इस प्रकारके विचारोकी प्रवल भर्त्सना की। वे वोले, "मेरे जीते जी ऐसा नही हो सकता।" मेरी रायमें काग्रेसके लिए इस तरहके झूठे वहानेसे सविधान-सभामे चुपकेसे घुस जाना असम्मानपूर्ण होगा। मै प्रस्तावित सविधान-सभाको अक्रान्तिकारी नही समझता। कोई भी सस्था केवल कहने मात्रसे प्रभुसत्ताधारी सस्था नही वन जाती। "प्रभुसत्ताधारी वननेके लिए आपको उसी तरहका व्यवहार करना होगा।"[४] दृष्टान्तके रूपमें उन्होने जोहानिसवर्गके टूली स्ट्रीटके तीन दर्जियोकी कहानी सुनाई, जिन्होने अपने आपको एक प्रभुसत्ताधारी सस्था घोपित कर दिया था। "उसका कुछ भी फल नही निकला। वह सिर्फ मजाक वनकर रह गया।"

लुई फिशरने गाधीजीसे पूछा, "क्या वैधानिक पद्धतिके विकल्प, हिंसाके डरसे ही आप प्रवल सविधानवादी वन गये है?" गाधीजीने उत्तर दिया, यदि भारतके भाग्यमें रक्तस्नान करना ही लिखा है, तो वह करेगा। मुझे

हिंसाका डर नहा है। "मुझे अपनी ही कायरता या बेईमानीका डर है।"[१] मने देशको सविधान-सभामें जानेकी सलाह दी है क्योंकि यह बात अहिंसक वत्तिके विरुद्ध है कि सविनय विद्रोहके स्थान पर कोई सम्मानपूर्ण उपाय स्वीकार न किया जाय।'[१]

आजाद हिन्द फौजके एक कप्टनने आकर गाधीजीसे पूछा, "हमें एक मौका दीजिये, अब आप हमसे क्या कराना चाहते है?"

गाधीजीने उत्तर दिया 'आजाद हिन्द फौजमें पूरी एकता थी। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख और पारसी सभी कौमोके लोग सगे भाइयाकी तरह रहते थे। उस एकताका प्रत्यक्ष प्रमाण आप यहा दीजिये।"[*]

लेकिन कप्टनका उद्देश्य यह नही था। उन्होने अपने प्रश्नको और स्पष्ट करनेके लिए पूछा, स्वाधीनताके भावी सग्राममें हमारा क्या योगदान होना चाहिये?

गाधीजीने जवाब दिया "स्वाधीनताका सग्राम आज भी चालू है, वह कभी बन्द नही हुआ। लेकिन मेरा बस चले तो वह अहिंसक सग्राम होगा।

*

लेकिन न तो आसपासकी हरी पहाडियोंसे आनेवाली ताजी भीनी ओज़ोनसे भरी वायु और न मनुष्यके रोम रोममें व्याप्त होनेवाली उस स्थानकी प्राणदायक शान्ति ही गाधीजीको पचगनीमें आवश्यकतासे एक क्षण भी अधिक रोक सकती थी। वे आध्यात्मिक दृष्टिसे पचगनीमें ऊब गये और अगस्तक दूसरे सप्ताहमें उन्होने सेवाग्राम और धूमधाम तथा शोरगुलसे भरे मदानोमें लौट जानेका निश्चय कर लिया। पचगनीसे नीचे उतरते समय नीचेकी तलेटियामें शातिसे फले हुए सुन्दर आकृतिवाले खेत तथा छोटे छोटे सुन्दर गाव ऐसे मालूम होते थे मानो गहरे नीले और सुनहरे रगकी भूमितिकी सुरेख आकृतियावाले मखमलके कीमती गालीचे बिछे हुए हो, तथा अस्ताचलकी दिशामें जानेवाले सूर्यक घने प्रकाशको प्रतिबिम्बित करनेवाले झरनो और पानीसे भरी धानकी क्यारियाके कारण वे छोटे छोटे असख्य आइना और चादीकी टेढी तिरछी रेखाओ जसे चमकते मालूम होते थे। मार्गमें गाधीजी दो दिनके लिए उरुळीकाचन ठहरे। वहाके कार्यक्रमका बोझ आशासे अधिक भारी साबित हुआ। एक दिन इस भारसे दबकर वे बोले "देखना है सेवाग्राम मेरे लिए क्या कर सकता है। उन्होने यह भी कहा 'लेकिन भारकी इतनी परवाह नहा जितना अनासक्तिके अभावकी है। अभी तक मने ईश्वर पर सब-कुछ छोड देनेकी पर्याप्त शिक्षा नही ली है। लेकिन जिसकी ईश्वरमें सजीव श्रद्धा हो, उसके लिए यह चिंताका अतिरिक्त कारण नहा बनना चाहिये।'[२]

२

जूनके चौथे सप्ताहमें काग्रेस कार्यसमिति जब अपने विचार-विमर्शमें दिल्लीमे व्यस्त थी, जिसके परिणाम-स्वरूप उसने कैबिनेट-मिशनके दीर्घकालीन प्रस्तावको स्वीकार तथा अल्पकालीन प्रस्तावको अस्वीकार करनेका निश्चय किया था, उस समय मुस्लिम लीगकी कार्यसमितिकी बैठकें लगातार नगरके दूसरे भागमे हो रही थी और वहा काग्रेसके निर्णयके समाचारकी अधीरतासे प्रतीक्षा की जा रही थी। लीगने कैबिनेट-मिशनकी १६ मईवाली योजनाको स्वीकार करके अपने लिए एक अनुकूल स्थिति प्राप्त कर ली थी। उसने समूह-रचनाके बारेमे अपना ही अर्थ लगाया था और कैबिनेट-मिशनने उसका समर्थन किया था तथा बादमे लॉर्ड वेवेलने अपने २० जूनके पत्रमें उसको और भी आश्वासन दे दिये थे (देखिये पृष्ठ २९८)। इन आश्वासनोको काग्रेस राजनीतिक आत्महत्या किये बिना चुपचाप स्वीकार नही कर सकती थी। इसलिए लीगको यह विश्वास हो गया था कि काग्रेसका तो पत्ता कट गया है, अब अकेली लीगको ही अन्तरिम सरकार बनानेके लिए कहा जायगा। परन्तु वह अपने शिकारके बारेमे पहले निश्चिन्त हो जाना चाहती थी।

काग्रेस अपना निर्णय घोषित करे तब तक अपनी बाजी न खोलने तथा काग्रेसका निर्णय जाननेके बाद अपनी कार्यदिशा निश्चित करनेकी पद्धति जिन्नाने लम्बे समयसे अपना रखी थी। इसमे उन्हे अच्छी सफलता मिली थी। परन्तु इस बार वे गलती करके जल्दी कर बैठे। काग्रेसका उत्तर मिलनेके बाद २५ जूनकी शामको वाइसरॉय और कैबिनेट-मिशनने जिन्नाको बुलाया। परन्तु जैसी उन्हे आशा थी, काग्रेसके बिना अन्तरिम सरकार बनानेका निमत्रण देनेके बजाय कैबिनेट-मिशनने उन्हे सूचना दी कि हमारे विचारके अनुसार काग्रेस और मुस्लिम लीग दोनोने १६ मईवाली योजनाको स्वीकार कर लिया है, इसलिए अन्तरिम सरकारमे भाग लेनेके लिए दोनो ही सस्थायें पात्र हो गयी हैं। किन्तु मिशनके १६ जूनके वक्तव्यमे प्रस्तावित अन्तरिम सरकार बनानेमें सहयोग देनेसे काग्रेसने असमर्थता प्रगट कर दी, इसलिए ऐसी स्थिति पैदा हो गई जिसमें उस वक्तव्यका ८वा पैरा लागू होता था। उस पैरेमें यह कहा गया था कि यदि दोनो बड़े दलोमे से कोई एक दल उस वक्तव्यमे उल्लिखित ढंग पर मिश्र-सरकार रचनेमें सम्मिलित होनेको तैयार न हो, तो वाइसरॉय ऐसी अन्तरिम सरकार रचनेका काम शुरू कर देंगे (स्पष्टत किसी नये आधार पर तथा आवश्यक रूपमे मिश्र-सरकार नही), जो १६ मईके वक्तव्यको स्वीकार करनेवाले दलोका अधिकसे अधिक प्रतिनिधित्व करनेवाली हो। जिन्नाकी इस बारेमें क्या राय थी?

जिन्नाने इस विचारसे प्रबल असहमति प्रगट की। उन्होने कैबिनेट-मिशनसे कहा कि जो कुछ वह करना चाहता है वह लिखित रूपमें दे। परन्तु वे अपनी

हिंसाका डर नही है। "मुझे अपनी ही कायरता या बेईमानीका डर है।"[५] मने देशको सविधान-सभामें जानेकी सलाह दी है, क्योकि 'यह बात अहिंसक वत्तिके विरुद्ध है कि सविनय विद्रोहके स्थान पर कोई सम्मानपूर्ण उपाय स्वीकार न किया जाय।'[६]

आजाद हिंद फौजके एक कप्टनने आकर गाधीजीसे पूछा, 'हमें एक मौका दीजिये जब आप हमसे क्या कराना चाहते ह ?'

गाधीजीने उत्तर दिया 'आजाद हिन्द फौजमें पूरी एकता थी। हिंदू, मुसलमान सिक्ख और पारसी सभी कौमोके लोग सगे भाइयोकी तरह रहते थे। उस एकताका प्रत्यक्ष प्रमाण आप यहा दीजिये।"

लेकिन कप्टनका उद्देश्य यह नही था। उन्होने अपने प्रश्नको और स्पष्ट करनेके लिए पूछा, 'स्वाधीनताके भावी सग्राममें हमारा क्या योगदान होना चाहिये ?

गाधीजीने जवाब दिया, 'स्वाधीनताका सग्राम आज भी चालू है, वह कभी बन्द नही हुआ। लेकिन मेरा बस चले तो वह अहिंसक सग्राम होगा।"

*

लेकिन न तो आसपासकी हरी पहाडियोसे आनेवाली ताजी भीनी आघ्राणसे भरी वायु और न मनुष्यके रोम रोममें व्याप्त होनेवाली उस स्थानकी प्राणदायक शान्ति ही गाधीजीको पचगनीमें आवश्यकतासे एक क्षण भी अधिक रोक सकती थी। वे आध्यात्मिक दृष्टिसे पचगनामें ऊब गये और अगस्तके दूसरे सप्ताहमें उन्होने सेवाग्राम और धूमधाम तथा शोरगुलसे भरे मदानोंमें लौट जानेका निश्चय कर लिया। पचगनीसे नीचे उतरते समय नीचेकी तलेटियोंमें शान्तिसे फले हुए सुन्दर आकृतिवाले खेत तथा छोटे छोटे सुन्दर गाव एसे मालूम होते थे मानो गहरे नाले और सुनहरे रगकी भूमिकिरी सुरख आकृतियोवाले मखमलके कीमती गालीचे बिछे हुए हो तथा अस्ताचलकी दिशामें जानेवाले सूर्यके घन प्रकाशको प्रतिबिम्बित करनेवाले झरने और पानीसे भरी धानकी क्यारियोके कारण वे छोटे छोटे असख्य आइने और चमकीली टेढ़ी-तिरछी रेखाओ जसे चमकते मालूम होते थे। मार्गमें गाधीजी दो दिनके लिए उरुलीकाचन ठहरे। वहाके कार्यक्रमका बोझ आशाले अधिक भारी साबित हुआ। एक दिन इस भारसे दबकर वे बोले "इतना है सेवाग्राम मेरे लिए क्या कर सकता है। उन्होने यह भी कहा लेकिन भारकी इतनी परवाह नही जितना अनासक्ति अभावकी है। अभी तक मन ईश्वर पर सब-कुछ छोड देनेकी पर्याप्त शिक्षा नहीं ले सका है। लेकिन जिसको ईश्वरमें सवार श्रद्धा हो, उसके लिए यह चिताकी अतिरिक्त कारण नही बनना चाहिये।"[७]

स्थितिके बारेमें (अथवा अपनी शक्तिके बारेमें?) इतने निश्चिन्त मालूम होते थे कि वाइसराय भवनसे साथ मुस्लिम लीगकी कार्यसमितिमें गये और कैबिनेट मिशनके पत्रकी प्रतीक्षा किये बगैर उन्होंने लीगसे यह प्रस्ताव पास करा लिया कि उसे अन्तरिम सरकार बनानेका १६ जूनवाला प्रस्ताव स्वीकार है। उनका कहना था कि मिशनके १६ जूनके प्रस्तावके ८ वें परेके अनुसार कांग्रेस द्वारा १६ मईवाली योजनाका स्वीकार और १६ जूनके वक्तव्यका अस्वीकार उसमें उल्लिखित आधार और सिद्धान्तको नहीं बदल सकते और इसलिए वाइसराय कांग्रेसके बिना सरकार रचनेकी दिशामें आगे बढ़नेके लिए वचन-बद्ध हैं। परन्तु कैबिनेट मिशन इस राय पर आया कि, "यदि कांग्रेस या मुस्लिम लीग मिश्र-सरकारमें आनेको तैयार नहीं होती तो मिश्र-सरकारकी योजनाका अन्त हो जाता है क्योंकि वह मिश्र-सरकार नहीं होगी, और हमें कोई और *अन्तरिम सरकार* उन लोगोंकी बनानी होगी, जिन्हें १६ मईकी योजना स्वीकार हो।"[१] (मोटे टाइप हमने किये हैं।) उसकी रायमें चूंकि कांग्रेसने १६ मईके वक्तव्यको स्वीकार कर लिया था इसलिए देशकी सबसे बड़ी राजनीतिक संस्थाके नाते उसे अन्तरिम सरकार रचनेके लिए निमंत्रण पानेका अधिकार है। तदनुसार २६ जूनको मिशनने इस आशयका वक्तव्य जारी किया कि १६ जूनके प्रस्तावके आधार पर कोई अन्तरिम मिश्र-सरकार रचना संभव नहीं है इसलिए उस प्रस्तावके ८ वें परेके अनुसार थोड़े दिनके लिए काम बन्द कर देनेके बाद अन्तरिम सरकार रचनेके प्रयत्न फिरसे शुरू किये जायंगे और उस बीच संविधान-सभाके चुनाव होते रहेंगे।

इससे मुस्लिम लीगको गुस्सा आया। लीगको लगा कि उसे उसीकी चालमें ठगाया गया है, नीचे गिराया गया है और उसके साथ धोखा किया गया है। जिन्नाने यह मांग की कि अन्तरिम सरकार बनानेका मामला खटाईमें डाल दिया गया है, इसलिए संविधान-सभाका चुनाव भी स्थगित रहना चाहिये, और जब मिशनने उनकी यह मांग ठुकरा दी तो उन्होंने मिशन पर घोर 'विश्वासघात' का दोष लगाया तथा मिशनने ८ वें पैरेका जो अर्थ लगाया उसे अत्यन्त मनमाना और अप्रामाणिक बताया।

जिन्नाकी इस किरकिरी पर किसीको भी सहानुभूति नहीं हुई। सबके मुखसे यही स्वर निकला कि 'पापीने अपने ही गलेमें फन्दा डाल लिया।' परन्तु गांधीजीके दिलको इससे चोट लगी और अपमान भी अनुभव हुआ। उन्होंने कहा, "कैबिनेट मिशनको जिन्नाके साथ इस तरह निरे कानूनी ढंगसे व्यवहार नहीं करना चाहिये था। वे एक महान भारतीय हैं और एक बड़े संगठनके माने हुए नेता हैं।"

लीगकी कौंसिलकी बैठक हुई और २९ जुलाईको उसने मिशनकी १६ मईकी योजनाकी अपनी पूर्व-स्वीकृति वापस ले ली। उसने यह भी निश्चय किया

कि पाकिस्तान प्राप्त करनेके लिए 'सीधी कार्रवाई' छेड़ दी जाय और "मुसलमानोंको आगामी सग्रामके लिए सगठित किया जाय तथा वह संग्राम जैसे और जब जरूरी हो छेडा जाय।" १६ अगस्त, १९४६ का दिन 'सीधी कार्रवाई' का दिन घोषित कर दिया गया, जो भारत भरमें विरोध-दिवसके रूपमें मनाया जानेवाला था।

'सीधी कार्रवाई' का प्रस्ताव पास होनेके तुरन्त बाद जिन्नाने मुस्लिम लीग कौंसिलके अन्तिम अधिवेशनमें तालियोंकी गड़गडाहटके बीच यह घोषणा की · "आजसे हम वैधानिक पद्धतियोंको अलविदा कहते हैं।" और फिर कहा : "हमने भी एक पिस्तौल तैयार कर ली है और हम उसका उपयोग करनेकी स्थितिमे हैं।"

३१ जुलाईको एक पत्रकार-सम्मेलनमें इसका अर्थ और भी स्पष्ट करते हुए जिन्नाने कहा कि जब ब्रिटिश सरकार और काग्रेसके पास अपने अपने ढगके हथियार हैं, एकके पास तोप-बन्दूक हैं और दूसरीके पास सामूहिक सग्रामकी धमकी है, तब मुस्लिम लीगको लगता है कि उसके लिए भी अपना बल तैयार करनेका और पाकिस्तानकी अपनी माग मनवानेके लिए युद्धकी तैयारी करनेका समय आ पहुचा है।[१०] उन्होंने प्रस्तावित 'सीधी कार्रवाई' के ब्योरेकी चर्चा करनेसे इनकार कर दिया और कहा, "मैं अभी आपको यह बतानेके लिए तैयार नही हू।" यह पूछने पर कि वह हिंसक होगी अथवा अहिंसक, उन्होंने उत्तर दिया कि, "मैं नीतिशास्त्रकी चर्चा नही करूंगा।"

परन्तु बगालके लीगी नेता ख्वाजा नजीमुद्दीन इतने अस्पष्ट नही रहे। जब उनसे एक पत्र-प्रतिनिधिने मुस्लिम लीगके 'सीधी कार्रवाई' के निर्णयके फलितार्थ समझानेको कहा, तो वे बोले · "हम सैकडो तरहसे कठिनाइया पैदा कर सकते है, खास तौर पर जब हम पर अहिंसाकी कोई पाबन्दी नही है। बगालकी मुसलमान जनता अच्छी तरह जानती है कि सीधी कार्रवाईका क्या मतलब होगा। इसलिए हमें उसकी रहनुमाई करनेकी चिन्तामें पड़नेकी जरूरत नही?"[११]

जिन्नाके दाहिने हाथ नवाबजादा लियाकतअली खाने एसोसियेटेड प्रेस ऑफ अमेरिकाको समझाया कि, 'सीधी कार्रवाई' का अर्थ है "अवैधानिक कार्य-पद्धतियोंका आश्रय लेना और जिन परिस्थितियोंमें हम रहते हैं उनके अनुकूल वे पद्धतिया कोई भी रूप धारण कर सकती हैं।"[१२] उन्होंने यह भी कहा : "हम किसी भी कार्य-पद्धतिको छोड नही सकते। 'सीधी कार्रवाई' का अर्थ है कानूनके विरुद्ध कार्रवाई करना।"

उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तके लीगी नेता सरदार अब्दुर्रब निश्तरने विवेककी मर्यादाका उल्लघन करके स्पष्ट बातें कह डाली। उन्होंने यह कहा बताते हैं

कि, पाकिस्तान खून बहाकर ही लिया जा सकता है और अगर मौका आया तो गैर-मुस्लिमोंका खून बहाना ही पड़ेगा क्योंकि मुसलमान अहिंसाको नहीं मानते।'"

तो क्या यही वह 'पिस्तौल' थी जिसके लिए जिन्नाने घोषणा की थी कि उन्होंने पिस्तौल तैयार कर ली है और जिसका 'उपयोग करनेकी स्थितिमें वे हैं'? अगर ऐसी बात थी तो वह पिस्तौल तो तभीसे न सिर्फ मौजूद था, बल्कि बहुत कुछ काममें भी लायी जा रही थी, जब कैबिनेट मिशनने २६ जूनको अकेली मुस्लिम लीगके हाथोंमें केन्द्रकी अन्तरिम सरकार सौंप देनेसे या जिन्नाकी मांगके अनुसार संविधान-सभाके चुनाव स्थगित करनेसे इनकार कर दिया था। अहमदाबाद बंबई इलाहाबाद, अलीगढ़ ढाका और दूसरे स्थानों पर साम्प्रदायिक उपद्रव और योजना-बद्ध तूफान हुए थे। अज्ञात गुंडों द्वारा छुरे भोंकनेकी घटनायें और निर्दोष, बेकसूर राहगीरों पर अमानुषिक आक्रमण संक्रामक हो गये थे। जब कैबिनेट मिशनकी वार्ताएं हो रही थीं तब भी हिंदुस्तान भरमें भिन्न भिन्न स्थानों पर पुलिसको छुरियों, कटारों और दूसरे घातक हथियारोंके गुप्त पार्सलोंके बारेमें समाचार मिले थे और उन्हें बीचमें ही पुलिसने जब्त कर लिया था।

मुस्लिम लीगने २९ जुलाईके अपने प्रस्तावके अनुसार एक कारवाई समिति नियुक्त की। उसने बन्द कमरेमें अपनी बैठकें कीं। परन्तु कारवाईका जो कार्यक्रम उसने तैयार किया था और जिसे बादमें मुस्लिम लीगी अखबारोंने विस्तारपूर्वक छापा था, वह बहुत स्पष्ट था। उसमें मुसलमानोंको याद दिलाया गया था कि रमजानके महीनेमें ही अरबके ३१३ मुसलमानोंने 'इस्लाम और कुफ्रकी पहली खुली लड़ाई' लड़ी थी और जीती थी। इस धर्मयुद्धके लिए जिस पत्रिकामें खास प्रार्थना की गई थी उसमें घोषणा की गई थी कि १० करोड़ हिंदुस्तानी मुसलमान, जो 'बदकिस्मतीसे हिंदुओं और अंग्रेजोंके गुलाम हो गये थे', रमजानके इसी महीनेमें जिहाद' शुरू करेंगे। एक और पत्रिकामें तलवार हाथमें लिये हुए जिन्नाकी तसवीर थी और उसमें कहा गया था "हम मुसलमानोंके पास ताज रहा है और हमने हुकूमत की है। सब तैयार हो जाओ और अपनी तलवारें संभाल लो। ... ऐ काफिर! तुम्हारी कयामत दूर नहीं है और कत्लेआम आनेवाला है!"

*

बंगालमें मुस्लिम लीगी सरकार सत्तारूढ़ थी। शहीद सुहरावर्दी उसके मुख्यमंत्री थे। लीग और कैबिनेट मिशनकी बात टूट जानेके बाद सुहरावर्दीने यह घोषणा की थी कि यदि केन्द्रमें कांग्रेसको सत्तारूढ़ किया गया तो बंगाल विद्रोहका झंडा खड़ा करेगा। प्रान्तीय आयका कोई भाग केन्द्रको नहीं दिया

जायगा और वगाल अपना एक स्वाधीन राज्य स्थापित कर लेगा, जिसकी केन्द्रीय सरकारके प्रति कोई वफादारी नही होगी।

कलकत्तेमें सीधी कार्रवाईके लिए पहलेसे ही लम्बी-चौडी तैयारिया की गई थी। कानून और व्यवस्था-विभागके मत्री होनेके नाते सुहरावर्दीने महत्त्व-पूर्ण जगहोसे हिन्दू पुलिस अफसरोको व्यवस्थित रूपमें अन्यत्र हटाना शुरू कर दिया था। इस प्रकार १६ अगस्तको कलकत्तेके २४ मे से २२ थाने मुसलमान अफसरोके अधीन थे और वाकी दो पर एग्लो-इडियनोका नियत्रण था। प्रान्तीय विधान-सभामें विरोधी दलकी चेतावनियो और विरोधके वावजूद वगाल सरकारने प्रान्तभरमे १६ अगस्तके दिन सरकारी छुट्टी घोषित कर दी थी। लाठिया, भाले, कुल्हाडे, छुरिया और दूसरे घातक हथियार, जिनमें वन्दूके और पिस्तौले भी शामिल थी, वड़ी सख्यामे पहलेसे ही मुसलमानोको वाट दिये गये थे। लीगके स्वयसेवको और मुस्लिम गुडोके लिए सवारीका वन्दोवस्त कर दिया गया था। सीधी कार्रवाईके दिनसे ठीक पहले मत्रियोको सैकडो गैलन पैट्रोलकी अतिरिक्त चिट्ठिया देकर और खुद भी लेकर मुख्य-मत्रीने पैट्रोलके राशनकी कठिनाई दूर कर दी थी। सीधी कार्रवाईके दिन जिनके हताहत होनेकी आशा रखी गई थी, उनके इलाजके लिए पूरा, व्यव-स्थित और व्यापक प्रवध कर दिया गया था। कलकत्ता मैदानमें जहा सीधी कार्रवाईके दिन मुसलमानोकी विराट सभा होनेवाली थी उस स्थानसे दिखाई पडनेवाला एक प्राथमिक सहायता-केन्द्र स्थापित कर दिया गया था। यह भी वन्दोवस्त कर दिया गया था कि हर वड़े जुलूसके साथ उसका अपना प्राथमिक सहायताका सामान रहे।

कहा जाता है कि हावडामें शरीफखा नामक विधान-सभाके एक मुसल-मान सदस्यने गुडोको हथियार वाटे। शरीफखा उस मोहल्लेके गुडो पर नियत्रण रखता था और सुहरावर्दीका पिट्ठू माना जाता था। मोहम्मद उस्मान उस समय कलकत्तेका मुस्लिम लीगी मेयर और कलकत्ता मुस्लिम लीगका मत्री था। वह खुद शरीफखाके साथ हावड़ा क्षेत्रमे गया था और कहा जाता है कि उसने गुडोको हिंसाके लिए उभाडा था।

सीधी कार्रवाईके कार्यक्रमकी चरम सीमा १६, १७ और १८ अगस्तको कलकत्तेके भीषण नर-सहारमे हुई। १५ अगस्तकी आधी रातसे मुसलमानोकी सगठित टोलिया तरह तरहके हथियार लिये कलकत्तेके मार्गो पर घूमती दिखाई दी। उनके लडाईके नारोसे रातकी शान्ति भग हो रही थी। १६ अगस्तके प्रभातका उदय वादलोसे छाये हुए आकाशमे हुआ। लगता था कि मूसलाधार वरसात होगी। परन्तु वरसात शाम तक रुकी रही। १६ को तडकेसे ही मुस्लिम गुडे अपने काममें लग गये। दोपहर तक शहरके अनेक भागोमें साधारण

कामकाज ठप हो गया। लाठियाँ, भाले और छुरे लिये हुए मुसलमानोंका एक बहुत बड़ा जुलूस उस सामूहिक प्रदर्शनमें भाग लेनेके लिए हावड़ासे कलकत्तेके लिए रवाना हुआ। हावड़ा पुल पर एक यूरोपियन सार्जेन्टने उसे रोक लिया। जुलूसवालोंके हथियार छीन लिये गये। जो घातक शस्त्र और आग लगानेकी सामग्री उनसे छीनी गई, उससे दो ट्रकें भर गईं।

शाम तक यह दावानल सब जगह फैल गया और सारे शहरमें हाहाकार मच गया जब उस विराट सभाके बाद — जिसके अध्यक्ष सुहरावर्दी थे — बढ़ती हुई निरंकुश भीड़ मैदानसे लौटते समय उन लोगोंके काममें हस्तक्षेप करने लगी, जो हड़तालमें शामिल नहीं हुए थे। उनकी दुकानें लूट ली गईं और दुकानोंका माल रास्तोंमें फेंक दिया गया। निजी मोटर-कारों और ट्रामोंको जला दिया गया। इक्के-दुक्के राहगीरों पर हमले किये गये और उन्हें छुरे मारे गये। तमाम सवारियोंका आना-जाना और आवश्यक सेवाओंका कार्य रोक दिया गया। रास्तों पर सिर्फ मुस्लिम लीगकी मोटर-लॉरियाँ और जीपें ही घूमती दिखाई देती थीं जिनमें मुस्लिम गुंडे लदे हुए थे और वे पाकिस्तानके नारे लगा लगा कर लोगोंको हिंसाके लिए उत्तेजित कर रहे थे।

अगले तीन दिनोंमें शहरको मथकर नरकमें बदल दिया गया और वह एक बड़ा कब्रस्तान बन गया। क्या अप्रैल १९४६ में मुस्लिम लीगी धारासभाइयोंके सम्मेलनमें बोलते हुए वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषद्के भूतपूर्व सदस्य सर फीरोजखाँ नूनने यह घोषणा नहीं की थी कि हमें एक केन्द्रीय सरकारके अधीन रखे [illegible]

करके अपने निर्णय चलाते थे तथा उनके काममें हस्तक्षेप करते थे। इन्स्पेक्टर वेडने १६ अगस्तकी शामको लूटे हुए मालकी लारीके साथ ८ मुसलमानोको रगे हाथो पकडा और उन्हे गिरफ्तार करके थाने पर भेज दिया। थोडी ही देर बाद सुहरावर्दी वहा आ धमके और "अपनी निजी जिम्मेदारी" पर उन्हे फौरन छोड देनेका हुक्म दे दिया। नियत्रण-कक्षमे उनके आचरणके बारेमे गवर्नरसे शिकायत की गई और यह प्रार्थना की गई कि मुख्यमत्रीको नियत्रण-कक्षसे दूर रहना चाहिये।

कुछ मोहल्लोमे लगातार ४० घटे तक लूटपाट और मारकाट होती रही। सड़को पर जहा तहा लाशे बिछ गईं तथा सडी हुई और सडनेवाली लाशोकी बदबू हवामे भर गई, क्योकि कई दिन तक वे यो ही पडी रही। लाशोको गटरोके ढक्कन खोलकर अदर ढकेल दिया गया। नतीजा यह हुआ कि गटरोका मार्ग रुध गया। गलियोमें लाशोके ढेर लग गये और आवारा कुत्तो, गीदडो और गिद्धोकी भयावनी दावत होती रही। लाशे नदीमे भी तैरती हुई देखी गई। बच्चोको घरोकी छतोसे नीचे फेंक देने या जीवित जला देनेकी कहानिया भी सुनी गईं। स्त्रियो पर बलात्कार करके उनका अगभग करने और फिर मार दिये जानेके किस्से भी सुने गये।

किम क्रिस्टिनने 'दि स्टेट्समैन' में लिखा "लडाईके अस्पतालका अनुभव करके मेरा हृदय कठिन बन गया है। लेकिन लड़ाईमे कभी ऐसी बातें नही हुई।"[१४] 'दि स्टेट्समैन' ने सम्पादकीय टिप्पणी लिखी, "यह दगा नही है। इसके लिए मध्यकालीन इतिहासमे पाया जानेवाला एक शब्द चाहिये, जिसे 'जनून' कह सकते हैं। परन्तु 'जनून' मे सहजताकी ध्वनि मालूम होती है, जब कि इस जनूनको आगे बढानेके लिए कोई निश्चित हेतु और सगठन जरूर रहा होगा। जो झुड ८ फुट लबी लाठियोसे लोगोको पीटते और मारते थे, उन्हे या तो ये लाठिया इधर उधर पडी हुई मिल गई होगी या ये लाठिया गुडोने अपने पैसेसे खरीदी होगी। परन्तु यह मानने लायक बात नही। हम पहले ही टीका कर चुके है कि इन टोलियोको आसानीसे पैट्रोल और गाडिया मिल गईं, जब कि दूसरे लोगोको सड़को पर जानेकी भी इजाजत नही थी। यह निरी कल्पना नहीं है कि धाक जमानेमे मदद करनेके लिए लोगोको कलकत्तेमे बाहरसे लाया गया था।"[१५]

उसी अंकके एक सम्पादकीय लेखमे, जिसका शीर्षक था 'अधमताकी पराकाष्ठा', उस पत्रने आलोचना की:

> एक महान प्रान्तकी राजधानीमें जो भयकर रक्तपात और बरबादी हुई, उसका मूल मुस्लिम लीगका राजनीतिक प्रदर्शन था। हम यह मानते हैं कि भारतके इतिहासमें यह सबसे बुरा साम्प्रदायिक दगा

था। दगसे पहलेके लीगके आचरणका यदि सिंहावलोकन कर, तो उससे यह अनुमान निकाला जा सकता है—और वह राजनीतिक विरोधियोके द्वारा ही नहीं—कि उसके मनमें यह दुविधा थी कि अमुक प्रकारका दगा फसाद अच्छा होगा या खराब। इस देशका सबसे बडा शहर भयकर हत्याकाडका स्थल बन गया, यह अधमताकी पराकाष्ठा है। बगालका मत्रि-मडल मुख्यत लीगी मत्रि-मडल होनेके कारण इससे स्वय लीगकी अखिल भारतीय ख्याति पर गम्भीर कलक लग गया है।

लीगके सीधी कारवाईके कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेके लिए बगालके मुख्यमत्रीसे अधिक योग्य साधन दूसरा कोई नही हो सकता था। वे कार्यक्षम बुद्धिशाली और क्रियाशील व्यक्ति थे। उन्हें एक और सुविधा यह भी थी कि सुसगतताका जो "भूत छोटे दिमागोको' सताया करता है उससे वे बिलकुल अछूते थे। कलकत्तेके महान हत्याकाडके बाद २१ अगस्तको एक रेडियो भाषणमें उन्होने अत्यन्त उदात्त भावनाए प्रगट की और लोगोंसे शान्ति तथा भ्रातृस्नेहकी भावनासे रहनेका अनुरोध किया। साथ ही उन्होंने विदेशी पत्रकारोके समक्ष एक बिलकुल दूसरे ही ढगका वक्तव्य" दिया, जिससे विवश होकर 'दि स्टेटसमन'को ये सम्पादकीय उद्गार प्रगट करने पडे 'बगालके मुख्यमत्रीने विदेशी समाचार-सस्थाओके समक्ष स्पष्टत केवल विदेशोंमें उपयोग करनेके लिए जो वक्तव्य दिया वह शायद ही प्रामाणिक कहा जा सकता है। वह वक्तव्य सूचित करता है कि अपनी पसन्दके अलग अलग श्रोतावर्गोके सामने उन्ही घटनाओको लगभग उसी समय सर्वथा विसगत रूपमें रखनेमें उस मत्रीको जरा भी सकोच नही होता।'' १६ अगस्तकी शामको जब उपद्रव चरम सीमा पर पहुच गया था और सारे शहरमें स्थिति तेजीसे बिगडती जा रही थी उन्होने एसोसियेटेड प्रेस आफ इडियाको यह बताया कि परिस्थिति सुधरती जा रही है। बादमें उन्होने इनकार कर दिया कि ऐसा कोई वक्तव्य उन्होने दिया था। आगे चल कर इस अभियोगका कि उन्होने पहलेसे उपद्रवोको रोकनेके पर्याप्त उपाय जान-बूझ कर नही किये उत्तर देते हुए उन्होने इस बातको अस्वीकार कर दिया कि 'हिन्दुओ या मुसलमानोकी ओरसे तैयारिया होनेका सत्ताधारियोको पहलेसे कोई पता चल गया था। लेकिन बादमें पुलिस-कमिश्नरकी कलकत्तेके दगो पर प्रकाशित रिपोर्टसे साफ मालूम हो गया कि जासूसी विभागको और बातोके साथ साथ यह निश्चित जानकारी प्राप्त हुई थी कि (१) 'यदि गैर-मुस्लिम हडताल नही करेंगे तो मुसलमानोके गुडा-तत्त्व उपद्रव कर सकते है" और (२) यह कि 'कई मुस्लिम छात्रालयोको सूचनायें दे दी गई थी कि

१६ अगस्तको ट्रामगाडियो और फौजी लॉरियोको आग लगा देनेकी तैयारिया की जाय।" ऐसा नही मालूम होता कि सेना भी इन तैयारियोसे सर्वथा अनभिज्ञ थी, क्योकि कलकत्तेके दगो पर स्पेन्स जाच-कमीशनके सामने गवाही देते हुए ब्रिगेडियर सिक्सस्मिथने कहा था कि १० अगस्तको जनरल बुशेरने उन्हे बुला कर यह चेतावनी दी थी कि मुस्लिम लीगकी सीधी कार्रवाईके दिन उपद्रवकी सभावना है।

यह अनुमान लगाया गया था कि कलकत्तेके भीषण हत्याकाडमे ५ हजारसे अधिक व्यक्ति मारे गये और १५ हजारसे ज्यादा घायल हुए। जिन्नाने इसे लीग और बगालके लीगी मत्रि-मंडलको बदनाम करनेका हिन्दुओका एक सगठित षड्यत्र बताया और सारा दोष कैबिनेट-मिशन, कांग्रेस और गाधीजी पर थोप दिया!

३

जब कलकत्तेके भयकर हत्याकाडके समाचार पहुचे तब गाधीजी सेवाग्राम आश्रममे थे। २४ अगस्तको शामकी सामूहिक प्रार्थनाके बाद उन्होने आश्रम-वासियोको सबोधित करते हुए कहा, देश जिस दावानलमे फस गया है उसे देखते हुए हम लोग अपने कर्तव्यका विचार करे। "हम नम्र बने और यह स्वीकार करे कि लोग हमसे जो आशाए रखते हैं, उन सबको पूरा करनेकी आज हममें शक्ति नही है।" यदि उन सिद्धान्तोको हमने पूरी तरह समझ लिया होता जिन्हें आश्रमने अपनाया है, तो हम इस भीषण दावानलमें कूद पडते और वह विशुद्ध बलिदान करते जो "सभवत दावानलको बुझा देता।" शुद्ध बलिदानका यह अर्थ नही है कि "दीपकमे पतगेकी तरह विचारहीन आत्मनाश किया जाय। त्याग सफल तभी होता है जब वह . . . स्वेच्छासे और . श्रद्धासे तथा आशाके साथ किया जाय और उसे करते समय हृदयमे जरा भी दुर्भाव अथवा द्वेष न हो। . ऐसे बलिदानसे हर वस्तु सिद्ध की जा सकती है।" अन्तमें उन्होने प्रार्थना की कि ईश्वर हमे पवित्र बलिवेदीके योग्य बलिदान करनेके लिए आवश्यक पवित्रता और निर्भयता प्रदान करे।[८]

गाधीजीको कलकत्तेके भीषण हत्याकाड और उसके बादकी बुरी घटनाओमें भारतके लोगोके लिए स्वतत्रताकी चुनौती दिखाई दी। उनकी पारदर्शी दृष्टिने आनेवाली घटनाओका स्वरूप देख लिया। उन्होने 'हरिजन' में लिखा, "अभी तक हम गृह-युद्धके बीचमे नही फसे हैं। परन्तु हम उसके पास जा रहे हैं। अभी तो हम उसके साथ खिलवाड कर रहे है। . . यदि अग्रेज बुद्धिमान हैं, तो वे उससे दूर रहेंगे। परन्तु आसार तो उलटे ही दिखाई दे रहे हैं।"[९] ऐसा मालूम होता है कि ईश्वर अपने "भयानक प्रकाश और गर्जनाके साथ" हमे ऐसे समय पर जगाने आया है जब हमारे मन "भ्रम

और तूफानका धूलसे अंधे हो गये हैं।"[१] लोगोंके लिए ब्रिटिश राज्यकी शान्ति और आजादीके बीच अन्तिम चुनाव करनेकी घड़ी आ पहुंची है। उन्होंने भविष्य-वाणी की कि ब्रिटिश सत्ताने भारत छोड़ कर जानेका निश्चय कर लिया है, इसलिए वह अधिकाधिक कमजोरियां और दोष प्रगट करेगी। 'अब दलोंको यह पता चल जायगा कि उसका आधार पोला है।"

उन्होंने चेतावनी दी कि यदि भाई भाईकी हत्याका खेल सारे भारतमें फैल गया और ब्रिटिश बन्दूक दोनोंको आपसमें छुरे भोंकनेसे बचाती रही तो उसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि ब्रिटिश सत्ता अथवा उसका स्थान लेने वाली कोई अन्य सत्ता बहुत समय तक भारत पर अधिकार जमाये रहेगी। यह अधिकार तब तक बना रहेगा जब तक दोनों पक्षोंमें सयानापन नहीं आयेगा। वह जायगा या तो विदेशी तत्वोंसे स्वतंत्र होकर लड़ी जानेवाली आपसकी लड़ाईसे दोनों पक्षोंके थकनेके बाद अथवा तब जब कोई एक पक्ष भारीसे भारी कठिनाइयोंके बावजूद हिंसाका सर्वथा त्याग करेगा।"[२]

गांधीजीने कहा: "कुछ लोग शंका प्रगट करते हैं कि आम जनता तो क्या परन्तु छोटे समूहोंके द्वारा भी अहिंसाका पालन संभव नहीं है। वे तो उसका पालन विरले व्यक्तियों तक ही सीमित मानते हैं। बात इतनी ही है कि यदि अहिंसा व्यक्तियोंके लिए ही सदा सुरक्षित रहता है, तो मानव जातिके लिए उसका कोई उपयोग नहीं हो सकता।"[३] कुछ भी हो, यदि लोग वीरोंकी अहिंसाका पालन करनेके लिए तैयार नहीं हैं तो उन्हें आत्मरक्षाके लिए बल-प्रयोग करनेको तैयार रहना चाहिये। परन्तु उस सूरतमें आत्मरक्षा एक साफ-सुथरा और सीधा-सादा काम होगा। जो कुछ इस समय हो रहा है — मार कर भाग जाना — उसमें नीचता और गंवारपन दोनों हैं। हम निहत्थे लोग हैं और हम शस्त्र-प्रयोगकी तालीम नहीं मिली यह अच्छा है या बुरा — इस विषयमें मतभेद रहेगा ही। परन्तु इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि आत्मरक्षाके लिए शस्त्र-प्रयोगकी तालीमकी किसीको जरूरत नहीं होती। इस कामके लिए तो बलशाली भुजाएं और उनसे भी अधिक बलशाली संकल्प चाहिये।[४]

यद्यपि स्वतंत्रता स्वतंत्रता चिल्लाते तो बहुत लोग थे परन्तु थोड़े ही लोग उसे इस कीमत पर खरीदनेको पूरी तरह तैयार थे। उन लोगोंको गांधीजीकी वीरतापूर्ण सलाह पर विश्वास ही नहीं हुआ — लगभग वे गांधीजीकी सलाहसे चकित हो गये। ऐसे ही एक परेशान पत्र-लेखकने कलकत्तेकी घटनाओंका उल्लेख करते हुए गांधीजीको लिखा: 'दूसरे अहिंसाके उपदेश देना बेकार है। अहिंसक प्रतिकारका परिणाम यह होता कि सारी सम्पत्ति नष्ट होने दी जाती और प्रत्येक हिंदूको मरने दिया जाता। ऐसी

परिस्थितियोमे हमारा क्या कर्तव्य है ?" गाधीजीने भी तुरन्त उत्तर दिया : "काग्रेस कार्यसमितिने अधिकसे अधिक स्पष्ट नेतृत्व किया है। . . . डराने-धमकाने और हिसा करनेसे भाई-भाईका यह हत्याकाड शान्त नही होगा। . . . **यदि जान-बूझ कर साहसपूर्वक हिन्दुओंका एक एक आदमी मर जाता, तो इससे हिन्दुत्वका और भारतका उद्धार हो जाता और इस देशमे इस्लाम धर्मकी शुद्धि हो जाती। पर हुआ यह कि तीसरे पक्षको हस्तक्षेप करना पड़ा। . . . इस हस्तक्षेपसे न तो मुसलमानोका लाभ हुआ और न हिन्दुओंका हुआ।**"[२५] (मोटे टाइप मैंने किये है।) गाधीजीने यह भी लिखा · "हिन्दू और मुसलमान दोनो . . . अच्छी तरह समझ लें कि यदि भारतको स्वाधीन राष्ट्र वनना है, तो एकको या दोनोको रक्षाके लिए ब्रिटिश सत्ताकी ओर देखना विचारपूर्वक वन्द कर देना पडेगा। . . . मेरी सलाह तो शुरूमे भी सत्याग्रहकी और आखिरमे भी सत्याग्रहकी ही है। . जो भी कोई स्वतन्त्रताकी प्राणवायुमे सास लेना चाहता है, उसे अपना दिल फौलादकी तरह कडा करके निश्चय कर लेना चाहिये कि फौज या पुलिसकी मदद नही ली जायगी। उसे या उन्हे अपने ही वाहुवल पर और उससे भी कही अच्छा यह होगा कि अपने शक्तिशाली मन और दृढ सकल्प पर सदा विश्वास रखना चाहिये। ये दोनो वस्तुए अपने या दूसरोके शस्त्रोसे विलकुल स्वतत्र है।"[२६]

४

जव मुस्लिम लीगने १६ मई, १९४६ वाली कैविनेट-मिशनकी योजनाकी अपनी स्वीकृति वापस ले ली और सीधी कार्रवाईका मार्ग अपना लिया तव वाइसरॉयके लिए काग्रेसको अन्तरिम सरकार वनानेका निमत्रण देनेके सिवा अन्य कोई मार्ग न रह गया। उन्होने ६ अगस्तको यह निमत्रण दिया। २ सितम्वरको पडित नेहरूके मनोनीत सदस्योकी एक अन्तरिम सरकार सत्तारूढ कर दी गई। वाइसरॉयके सामने अपने मंत्रि-मडलके सदस्योकी सूची पेश करनेसे पहले पडित नेहरूने एक वार फिर जिन्नाको यह समझानेकी कोशिश की कि वे केन्द्रमे अन्तरिम सरकार वनानेमें काग्रेसके साथ सहयोग करे। परन्तु उन्होने यह निमत्रण अस्वीकार कर दिया और मुस्लिम लीगने २ सितम्वरका दिन नई दिल्लीमें सचिवालयके सामने काले झडोका प्रदर्शन करके मनाया।

साथ ही साथ कई जगहो पर छुरा भोकनेकी छुटपुट वारदातें फिर होने लगी। सर शफात अहमद खा एक गैर-लीगी मुसलमान थे, जिन्होने पडित नेहरूकी सरकारमें शरीक होना मजूर कर लिया था। उनकी हत्या करनेकी शिमलामें शायद किसी कट्टर मुस्लिम लीगीने कोशिश की। उनके शरीर पर छुरेके सख्त घाव करके आक्रमणकारी उन्हें मुर्दा समझ कर सडक पर छोड कर भाग गया। उत्तरप्रदेशके राष्ट्रीय मुसलमान मंत्री रफी अहमद

बिदपइव भाइ शफी अहमद किदवईकी मसूरीमें हत्या कर दी गई। अगस्त, सितम्बर और अक्तूबरके महीनोंमें कलकत्ता खुद डाइनकी कड़ाहीकी तरह उबलता और खदबदाता रहा। सीधी कारवाईके पहले आघातके बाद कल कत्तेकी गैर-मुस्लिम आबादीने अपना संगठन करके उतने ही जोरके साथ बदलेमें मुसलमानों पर आक्रमण किया। प्रारम्भिक बर्बरता भयंकर थी, परन्तु प्रतिशोध भी कठोर और अतिरेकी सीमाको पहुंच गया था, और नितान्त बर्बरतामें अन्तमें दोनों दलोंके बीच कोई फर्क नहीं रह गया था।

साम्प्रदायिक तनाव कलकत्तेसे बंगालके गांवोंमें फैलने लगा। मुस्लिम लीगने हिंदुओंको 'दुश्मन' बताने और पाकिस्तानको बलसे लेनेका उत्तेजक प्रचार जारी रखा। गांधीजीको एक गुमनाम पत्र मिला जिसमें हत्यारेकी कटारसे टपकते खूनका चित्र दिया गया था। एक नक्शा छाप कर व्यापक रूपमें प्रसारित किया गया जिसमें भारतको पाकिस्तान बना दिया गया और उसका नाम दीनिया (ईमानवालोंका देश) रख दिया गया। उसे लगभग आधे दर्जन स्तानों (फारुकिस्तान उस्मानिस्तान बंगिस्तान इत्यादि) में बांट दिया गया। पाकिस्तानको पूर्व पश्चिम और दक्षिणमें फैला हुआ दिखाया गया। हिन्दुस्तानको उत्तरप्रदेशमें एक छोटेसे भूखंडके रूपमें बताया गया और शेष भारतको पाकिस्तानके विविध घटकोंको जोड़नेवाला एक बीचका सकरा रास्ता (कॉरीडार) बना दिया गया। समुद्रों और जलडमरूमध्योंका भी पाकिस्तानीकरण कर दिया गया और पाकिस्तानको भूस्तरशास्त्रके युगोंको भेद कर ठेठ अटलांटिसकी पौराणिक कथा तक पहुंचा दिया गया। यह सब इतनी धर्मांधतासे और कल्पना तथा सत्यके बीचके भेदको मिटा कर किया गया था कि गोबल्स या रोजनबर्गको भी ईर्ष्या होती। मौलवियों और आग उगलनेवाले कट्टरपंथी प्रचारकोंको दावानलकी भांति गांवोंमें प्रचारके लिए भेजा गया। मुस्लिम नेशनल गार्डका फिरसे संगठन किया गया। 'कलकत्तेका बदला लेनेकी' अनाप-शनाप बातें होने लगीं।

गांवोंसे असन्तोष और अराजकताके अशान्तिकारक समाचार आने लगे। ३० सितम्बरके 'दि स्टेट्समैन' में एक संवाददाताने लिखा : पूर्वी बंगालमें लोगोंका जान-माल सुरक्षित नहीं है। बदमाश लोग रेल पर अपनी कारवाइयां करते हैं, अपनी पसन्दके स्थानों पर गाड़ियां रोक लेते हैं, लूट-खसोट करते हैं और बाहर स्टेशन तक समाचार पहुंचनेसे पहले ही भाग जाते हैं। बैलगाड़ियोंमें लूटका माल लेकर चम्पत हो जाते हैं।

१२ सितम्बरके 'दि स्टेट्समैन' में एक मुस्लिम सज्जनका यह पत्र छपा था : "मैं १८ अगस्तके दिन (सीधी कारवाईके दिनसे दो दिन पहले) शंकर कर रहा था। तब मुझे लगा कि कुछ मुसलमान रेलवे स्टेशनों पर सबको

लम्बी छुरिया खुलेआम वेच रहे हैं। जव कलकत्तेकी घटनाओके वाद २६ अगस्तको मैं फिर गाडीसे सफर कर रहा था, तो एक मुसलमान महाशय मेरे दूसरे दर्जेके पासवाले पहले दर्जेके डिब्बेमें वैठे हुए थे। हर स्टेशन पर वे मुसलमानोको भडकाते थे कि 'मीर जाफरी' गैर-लीगी मुसलमान और हिन्दू दोनोको कत्ल कर दिया जाय और इस सलाहके साथ वे क्रूरताके हावभाव भी दिखाते जाते थे। (इन सज्जनका नाम और प्रभावशाली पद मैं आपको सिर्फ आपकी जानकारीके लिए पत्रके अन्तमें वता रहा हू।)।"

कुमिल्ला (पूर्व वगाल) के कामिनीकुमार दत्तने, जो वगाल विधान-सभाके सदस्य थे, एक वक्तव्यमे तिपराके गावोंकी दस घटनाओका विस्तृत वर्णन किया। इनमें हिन्दुओकी दुकानो पर और अमीरोके घरो पर तथा कैवर्तो (परिगणित जातियो)के घरो पर किये गये आक्रमण शामिल थे। अनेक कैवर्तोके घर सगठित भीडने लूट कर दिन-दहाडे जला दिये। उनके कीमती सामानको नुकसान पहुचाया गया और उनकी मछली पकडनेकी नावें और जाल जवरन् छीन लिये गये।[२७] कामिनीकुमार दत्तका एक और अखवारी वक्तव्य यों था: "पूर्व वगालमें हमें और अल्पसख्यक जातिको इस वातने भयभीत कर दिया है कि अव व्यवस्था और अराजकतामें भयकर रूपसे थोड़ा ही अन्तर रह गया है। मुस्लिम लीगी प्रचारक वढा-चढा कर ये कहानिया फैला रहे हैं कि कलकत्तेमें हिन्दुओने मुसलमानो पर वर्वर अत्याचार किये; और यह प्रचार . . कानून और व्यवस्थाको टिकाये रखनेके लिए परिस्थितिको गम्भीर वना रहा है। हमारी जानकारीमें एक वहुत वडे मुस्लिम कर्मचारीको यह घोषणा करते सुना गया कि जल्दी ही देशमें हजारो लाशे विछी हुई दिखाई देंगी। एक वार पूर्व वगालके किसी भागमें कोई वडा उपद्रव यदि फट पडा, तो फिर वह आग सव जगह फैल जायगी।"[२८]

जो स्थिति पैदा हो रही थी उससे वगाल सरकार अनभिज्ञ नही थी। यह उस वक्तव्यसे स्पष्ट हो जाता है जिसमें वगालके मुख्यमत्री सुहरावर्दीने कहा था · "हा, मैंने पूर्व वगालमें फैले हुए इस दुर्भाग्यपूर्ण साम्प्रदायिक तनावके समाचार देखे हैं। हम सवको इसका दु ख होना चाहिये।" फिर भी साम्प्रदायिक अराजकताके वढते हुए ज्वारको रोकनेके लिए कुछ नही किया गया। सम्प्रदायवादका राक्षस अपनी सीमाए तोड चुका था। परन्तु उसके पालकको इस वातकी चिन्ता नही थी कि वह वधन तोड कर निकल गया, वल्कि इस वातकी चिन्ता थी कि उसने अपने प्रथम कृत्यमें उनकी आशा पूरी नही की।

दसवा अध्याय

अन्तिम घडी

१

भारतीय स्वाधीनताकी लडाइकी आखिरी मजिलम तीन प्रमुख दल थे काग्रेस, मुस्लिम लीग और ब्रिटिश सत्ता। ब्रिटिश सत्ताके प्रतिनिधि थे वाइस रॉय और बडे बडे अग्रेज अधिकारी। सत्ता सौपनेकी अन्तिम घडी समीप आई तब प्रत्येक दलने अपने विशिष्ट ढगसे आचरण किया।

काग्रेसके लिए वह विजयी राष्ट्रवादका सपना सिद्ध और साकार होनेकी परम घडी थी। इसके लिए भारतके उत्तमसे उत्तम सपूतोने तीन पीढिया तक सतत घोर परिश्रम किया था और बड बडे बलिदान दिये थे। काग्रेस जनताकी सबसे पुरानी और व्यापक सस्था थी। अपने जन्मसे ही उसन सारे अलग अलग धर्मों प्रान्तो और समूहाका प्रतिनिधित्व किया था। उसकी स्थापना एक अग्रेजकी प्रेरणासे हुई थी जो लम्बे समय तक उसके मत्री रहे थे। व थे स्व० एलन आक्टवियन ह्यूम। हिन्दू, मुसल्मान पारसी और अग्रेज उसके अध्यक्ष रह चुके थे। इनमें दो महिलाए थी — एक अग्रेज और एक भारतीय। भारतकी एक सबसे छोटी अल्पसख्यक जाति — पारसी कौम — का प्रतिनिधित्व करनेवाले दादाभाई नौरोजी उसके निर्माताआम स थे। भारत उन्हें अपना पितामह कहनेमें गव और आनन्द अनुभव करता है। एक और पारसी फिरोज शाह महताको भारतका बेताजका बादशाह कहा गया था। काग्रेसने अपन अभी तकके जीवन-कालमें अपना उदार और राष्ट्रीय स्वरूप निरन्तर बनाये रखा था। कबिनेट मिशनकी वार्ताओंके समय उसकी कायसमितिने १५ सदस्यामें से ३ सदस्य मुसलमान थे और एक समय तो उनकी सख्या ५ तक पहुचा थी। उसने धम निरपक्ष राज्यके अपने आदशके विषयमें कभी समझौता नहा किया ऐसा धम निरपक्ष राज्य जिसमें भारतको अपना घर समझनेवाले सभी लोगोको जाति धम अथवा रगके भेदभावके बिना, समान अधिकार और कतव्य प्राप्त होग।

गाधीजी इस सस्थाके प्राण और अन्तरात्मा थ और उसकी आशाआ और आकाक्षाआके प्रतीक थे। गाधीजाकी ७७ वी वषगाठके अवसर पर पडित नेहरूने कहा था महात्मा गाधी ऐसे प्रहरी रह है, जो हमार गलत रास्त जाने पर हमें रोक कर सीधे रास्त लगा दत ह। हमें भारतीय स्वत त्रता और मानव-उद्धारके उस महान कायके लिए, जो महात्माजीको प्रिय रहा

है, फिरसे अपने आपको समर्पित करना चाहिये और यह कार्य हमें महात्माजीकी प्रियतम पद्धतिसे करना चाहिये। . इसके लिए हमें उनके अत्यन्त प्रिय रचनात्मक कार्यको निष्ठासे आगे बढानेकी कोशिश करनी चाहिये। . . अवश्य ही उनके ज्ञानपूर्ण मार्गदर्शनमे हम अन्तिम कदम (स्वतत्रताकी ओर) उठायेंगे।"[1] गाधीजीकी यह हार्दिक आशा थी कि स्वतत्र भारत सारे ससारको शान्ति और अहिंसाका मार्ग दिखायेगा। यह आशा उनके प्रार्थना-प्रवचनोमे और अन्तरिम सरकारके सदस्योको दिये गये निर्देशोके रूपमे प्रगट होती थी।

एक प्राणवान जन-सगठनके रूपमे काग्रेसका रुझान सदा ही क्रान्तिकारी और समतावादी आदर्शकी ओर बना रहा था और गाधीजीके नेतृत्वमे उस आदर्शने वर्तमान समाज-व्यवस्थाके अहिंसक कायापलटके आन्दोलनका रूप ग्रहण कर लिया था। औरोके साथ साथ तथाकथित परिगणित जातियोकी जागृतिके लिए भी काग्रेस ही जिम्मेदार थी, क्योकि वह कानून और हकीकत दोनोमें हर प्रकारकी 'अस्पृश्यता' के सम्पूर्ण उन्मूलनके लिए तथा सवर्ण-अवर्णका सारा भेदभाव मिटा देनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध थी।

काग्रेसके विरुद्ध मुस्लिम लीग, जैसा कि उसके नामसे प्रगट होता है, आरम्भसे ही एक राजनीतिक-धार्मिक सस्था थी। वह हिन्दू महासभाकी प्रतिस्पर्धी थी। लीग खुले तौर पर यह दावा करती थी कि वह केवल भारतीय मुसलमानोके हितोका ही प्रतिनिधित्व करती है। कुछ समयसे उसने भारतीय मुसलमानोको हिन्दू कहे जानेवाले भारतके दूसरे 'राष्ट्र' से भिन्न 'राष्ट्र' कहनेका फैशन अपना लिया था। इस तर्कके अनुसार उसने सिक्खो और ईसाइयो जैसे अन्य धार्मिक समूहोको भी 'राष्ट्र' बतानेमें सकोच नही किया। लीग कष्ट-सहन और अनुशासनकी उन परीक्षाओमे से नही गुजरी थी, जिनमे से काग्रेस गुजरी थी। जैसा हम देख चुके है, वह 'भारत छोड़ो' सग्रामसे अलग रही थी जिस संग्रामके लिए जिन्नाने यह कहा था कि वह "लीगकी उपेक्षा करनेका प्रयत्न" था। भारतकी स्वतत्रताके आगमनको लीग एक ऐसा दुर्भाग्यपूर्ण दिवस मानती थी, जिससे वह लम्बे समयसे डरती चली आ रही थी; क्योकि भारतकी स्वतत्रताको वह जिन्नाके शब्दोमे 'हिन्दू काग्रेस' का प्रभुत्व मानती थी और उसे टालनेके अनेक प्रयत्न करने पर भी यह सकट उस पर आ पडा था। काग्रेसके 'भारत छोड़ो' के नारेके विपरीत लीगने "विभाजन करो और छोड़ो" का नारा अपनाया था। परन्तु जिन्नाको इतनेसे सन्तोष नही हुआ। "विभाजन करो और छोडो" से आगे बढ कर वे "विभाजन करो और अवश्य छोड़ो" तक पहुच गये (अर्थात् आपको जाना ही पडे तो जरूर जाइये, परन्तु पहले बटवारा कर दीजिये)। अन्तमें "बटवारा कीजिये और ठहरिये" की नौबत आ गई। उन्होने इस बातको

सरकारकी अपनी योजना रखी। उसमें यह आश्वासन दोहराया गया था कि 'सम्राट्की सरकार नई अन्तरिम सरकारके साथ वैसा ही विचार विमर्शका व्यवहार रखेगी तथा उसका वैसा ही आदर करेगी, जैसा किसी औपनिवेशिक सरकारके साथ वह करती है और दैनिक प्रशासन-कार्यमें भारतीय सरकारको अधिकसे अधिक स्वतंत्रता देगी।' उस पत्रमें यह भी कहा गया था कि कांग्रेस या मुस्लिम लीगको दूसरे पक्ष द्वारा दिये हुए नामों पर आपत्ति उठानेका अधिकार नहीं होगा बशर्ते कि वे नाम वाइसरायको स्वीकार हों। इसका अर्थ यह हुआ कि कांग्रेस अब अन्तरिम सरकारके लिए एक या अधिक राष्ट्रवादी मुसलमान मनोनीत कर सकती थी। इसी प्रश्न पर जूनमें समझौतेकी वार्ता भंग हो गयी थी। अन्य सब बातोंमें वाइसरायका प्रस्ताव पहले जैसा ही था।

उत्तरमें पंडित नेहरूने वाइसरायको सूचित किया कि इस रूपमें आपका प्रस्ताव कांग्रेसको स्वीकार नहीं है। पिछली बातचीतके अनुभवने हमें बता दिया है कि पुराने तरीके पर चल कर सफलताकी कोई आशा नहीं रखी जा सकती। हम जिसे अंतरिम सरकारका 'व्यवहारमें स्वाधीनता' कहते हैं, उसे हम सदा अधिकतम महत्त्व देते रहे हैं। 'व्यवहारमें स्वाधीनता' के आधार पर ही समस्याको सुलझानेका संतोषजनक प्रयत्न किया जा सकता है। इसलिए कामचलाऊ अन्तरिम सरकारके दर्जे और सत्ताके प्रश्नका निर्णय पहले स्पष्ट शब्दोंमें होना जरूरी है। अन्तमें पंडित नेहरूने लिखा कि इन सब बातोंको देखते हुए वाइसरायके सुझावके अनुसार सरकार रचनेमें अपना सहयोग देनेमें मैं सर्वथा असमर्थ हूं।'

इसके बाद एक पखवाड़े तक वाइसरायकी ओरसे कोई भी प्रयत्न नहीं हुआ। परन्तु इस बीच मुस्लिम लीगने सीधी कारवाई वाला प्रस्ताव पास कर दिया और कैबिनेट मिशनकी योजनाको दी हुई अपनी स्वीकृति वापस ले ली। इससे वह काम हो गया, जो कांग्रेस अब तक नहीं कर सकी थी। ब्रिटिश मंत्रि-मंडलकी प्रतिक्रियाके समाचार गांधीजीको लंदनसे एक मित्रने अपने पत्रमें अगस्तके पहले सप्ताहमें इस प्रकार दिये:

> जिनाकी (सीधी कारवाईकी) धमकीके बाद ब्रिटिश मंत्रि-मंडलने वाइसरायसे कहा कि वे जिनाको बुला कर ऐसा कह दें कि यदि वे खेलमें भाग लेनेको तैयार नहीं हैं तो ब्रिटिश मंत्रि-मंडलने कांग्रेसको और अन्य ऐसे लोगोंको — जो उसके साथ काम करनेको तैयार हों — जिम्मेदारी सौंप देनेका तथा जिनाके बिना ही आगे बढ़नेका निश्चय कर लिया है। वाइसरायने कहा कि सीधी कारवाईकी धमकीके बाद तुरन्त जिनाको बुलानेसे यह छाप पड़ेगी कि अंग्रेज उनकी धमकीसे

डर गये है। अतः वाइसरॉयने यह सुझाया कि जिन्नासे न मिला जाय। मत्रि-मडल उनकी इस बातसे सहमत हो गया।

जिन्नाके विस्फोटने . . ब्रिटिश मत्रियोको और यहाके तथा भारतके प्रशासन-तत्रको अच्छी तरह झझोड दिया है। इसकी बडी जरूरत थी। मत्रि-मडलने निर्णय किया है कि शीघ्र ही जिम्मेदारी काग्रेसको सौंप दी जाय। उन्होने अपने प्रतिनिधिको आवश्यक सूचनायें दे दी हैं। परन्तु वे हृदयसे चाहते है कि न्यायपूर्ण और उचित शर्तों पर यदि सभव हो, तो लीगको सरकारमें लानेका अन्तिम प्रयत्न आपको करना चाहिये। वे अनुभव करते हैं कि इस सम्बन्धमें वाइसरॉयका कोई भी प्रयत्न व्यर्थ है। उनका यह सुझाव है कि किसी निमत्रणकी प्रतीक्षा किये बिना और किसी शिष्टाचारकी परवाह किये बिना काग्रेस-अध्यक्षको यह काम वाइसरॉयके हाथसे अपने हाथमे ले लेना चाहिये। . . . यदि जिन्ना सहयोग देनेसे इनकार करते हो और ऐसी शर्ते चाहते हो जिन्हें काग्रेस-अध्यक्ष मान ही नही सकते, तो अध्यक्ष वाइसरॉयको सूचित कर दे कि उन्होने पूरा प्रयत्न कर लिया है और सचमुच जिन्नाके साथ काम करना उनके लिए सभव नही है। . . . यदि अध्यक्ष सफल न हो तो वाइसरॉयको आदेश दे दिये गये हैं कि वे काग्रेस-अध्यक्षको बुलाये और उनसे कहे कि वे काग्रेसके और दूसरी अल्पसख्यक जातियोके प्रतिनिधियोकी सरकार रचनेमे वाइसरॉयकी सहायता करे। . . . इस तरह जो सरकार अस्तित्वमें आयेगी वह — कानूनकी दृष्टिसे — तो वाइसरॉयकी सरकार ही होगी, परन्तु सरकारका वास्तविक मुखिया काग्रेसका अध्यक्ष होगा। और वाइसरॉयको आदेश दे दिया गया है कि वे कोई हस्तक्षेप न करे। . . .

तदनुसार ६ अगस्तको लन्दनके आदेशानुसार वाइसरॉयने काग्रेस-अध्यक्ष पडित नेहरूको अन्तरिम सरकारकी रचनाका प्रस्ताव पेश करनेके लिए निमन्त्रित किया :

अन्तरिम सरकारके बारेमे आपके २३ जुलाईके पत्रका उत्तर मैंने नही भेजा है। बादकी घटनाओसे इस समस्याके हलके लिए नया दृष्टिकोण आवश्यक हो गया है। . . . सम्राट्की सरकारकी सहमतिसे मैंने निश्चय किया है कि काग्रेस-अध्यक्षकी हैसियतसे अन्तरिम सरकार रचनेका प्रस्ताव मेरे समक्ष रखनेके लिए आपको निमन्त्रित करूं। . . . यह सोचना आपका काम होगा कि मि० जिन्नाके साथ आपको पहले उसकी चर्चा करनी चाहिये अथवा नही; यदि आप उनके साथ समझौता कर सके, तो मुझे स्वाभाविक रूपमे आनन्द होगा।

इससे निमंत्रण स्वीकार करनेके लिए कांग्रेसका रास्ता साफ हो गया। १० अगस्तको पंडित नेहरूने वाइसरॉयको लिखा "मुस्लिम लीगके साथ मिश्र सरकार रचनेका हम स्वागत करते। परन्तु मुस्लिम लीगने जो प्रस्ताव पास किया है और उसकी तरफसे हालमें जो वक्तव्य निकाले गये हैं, उनको देखते हुए *यह आशा नहीं रखी जा सकती कि आजकी स्थितिमें लीग सहयोग देना स्वीकार करेगी।* उसे ऐसा करनेके लिए समझानेकी कोशिश समयसे पहले करनेका शायद उल्टा ही नतीजा निकले। ऐसे प्रयत्नका अनिवार्य रूपसे सबको पता चल जायगा और उसका परिणाम साम्प्रदायिक विवाद तथा अधिक विलम्बमें आयगा जिसे आप उचित रूपमें नापसन्द करते हैं। इसलिए पंडित नेहरूने सुझाया कि वाइसरायके लिए उत्तम मार्ग यह होगा कि वे इस आशयकी सार्वजनिक घोषणा कर दें कि उन्होंने कांग्रेस-अध्यक्षको कामचलाऊ सरकार रचनेका निमंत्रण दिया है और उन्होंने निमंत्रण स्वीकार कर लिया है। "तब हमारे लिए मुस्लिम लीगके पास जाना और उसका सहयोग मांगना संभव होगा। हम उसके सहयोगका स्वागत करेंगे। लेकिन यदि वह न मिला, तो हम उसके बिना आगे बढ़नेको तैयार होंगे।'

वाइसरायने पंडित नेहरूका सुझाव मान लिया और १२ अगस्तको आवश्यक घोषणा कर दी। घोषणाके बाद पंडित नेहरूने जिन्नाको मनानेका एक और प्रयत्न किया। परन्तु जिन्नाने पंडित नेहरूका ठंडा स्वागत किया। कायदे आजमका उत्तर उनकी लाक्षणिक शैलीमें था

प० नेहरूको जिनाका पत्र १५ अगस्त, १९४६

मैं नहीं जानता कि आपके और वाइसरायके बीच क्या क्या हुआ और न मुझे इसकी कोई कल्पना है कि आप दोनोंके बीच क्या व्यवस्था हुई है। मुझे तो इतना ही मालूम है कि वाइसरायने कांग्रेसके अध्यक्षकी हैसियतसे आपको तुरन्त अन्तरिम सरकार रचनेका प्रस्ताव उनके सामने पेश करनेका निमंत्रण दिया है और आपने वह निमंत्रण स्वीकार कर लिया है।

यदि इसका यह मतलब हो कि वाइसरायने आपको गवर्नर जनरलकी कार्यकारिणी परिषदकी रचनाका अधिकार दे दिया है और पहलेसे यह स्वीकार कर लिया है कि आपकी सलाहको मान कर उसके अनुसार वे अपनी कार्यकारिणी रचनेकी दिशामें आगे बढ़ेंगे तो मेरे लिए उस आधार पर ऐसी स्थितिको स्वीकार करना संभव नहीं है।

३

मालूम होता है कि पंडित नेहरूके नामका निमंत्रण-पत्र वाइसरॉयकी मेजसे निकला ही होगा कि उन्हें अपने किये पर पछतावा शुरू हो गया। उन्होंने अपना पत्र वापस मंगानेकी भी कोशिश की, परन्तु उन्हें सूचना दी गई कि तीर हाथसे निकल चुका है। उसके बाद उनका अपना प्रयत्न तो लीगको किसी तरह अन्तरिम सरकारमें लाकर अपने कदमका असर मिटाने पर केन्द्रित हो गया। इसके कुछ दिन बाद कलकत्तेके हत्याकांडने उनको संपूर्णतः नीतिशून्य बना दिया। सरकारके लिए पंडित नेहरू नामोंकी अपनी सूची पेश करें, इससे पहले ही उन्होंने अपनी जिम्मेदारी पर जिन्नाको बुला कर अन्तरिम सरकारमें आनेके लिए उन्हें राजी करना चाहा। इससे परेशान होकर पंडित नेहरूने १९ अगस्तको उन्हें लिखा:

> जब आपने मुझे यह लिखा था कि ब्रिटिश सरकारकी सहमतिसे आपने मुझे कांग्रेसके अध्यक्षके नाते अन्तरिम सरकार रचनेका प्रस्ताव रखनेको निमंत्रित करनेका निर्णय किया है, तो हमने इस शर्त पर आपका निमंत्रण स्वीकार किया था कि सरकार रचनेकी जिम्मेदारी हमारी होगी। . . . मैंने मि० मोहम्मद अली जिन्नासे सम्पर्क स्थापित किया और मुस्लिम लीगका सहयोग चाहा। लेकिन मि० जिन्ना हमारे साथ सहयोग करनेको तैयार न हुए। . . . तब हमें उनके और लीगके बिना आगे बढ़ना पड़ा। . .
>
> आपके नये प्रस्तावसे समस्याको हाथमें लेनेकी सारी दृष्टि बदल जाती है और वह जिम्मेदारी खतम हो जाती है, जो आपके कहनेसे हमने ली थी। अब हमसे पूर्वस्थितिमें लौट जानेको कहा जाता है, जिसके लिए हमने माना था कि वह महीनोंके व्यर्थ प्रयत्नके बाद अन्तिम रूपमें समाप्त हो गई है। . . .

लॉर्ड वेवेलने कुछ समयके लिए हार मान ली, जब जिन्नाने खुद ही अपने १८ अगस्तके वक्तव्यसे यह बात काट दी। "मैंने आजके अखबारमें मि० जिन्नाका वक्तव्य पढ़ा और आजकी स्थितिमें मैं इससे सहमत हूं कि मेरा उन्हें बुलाना बेकार होगा।"[३]

अन्तरिम सरकार रचनेके लिए अपना प्रस्ताव रखते हुए पंडित नेहरूने इस बात पर जोर दिया कि राज्यका कामकाज अच्छी तरह चलाने और एंग्लो-इंडियन समुदायके एक प्रतिनिधिको सरकारमें सम्मिलित कर सकनेके लिए नये मंत्रि-मंडलके सदस्योंकी संख्या बढ़ा कर १५ कर दी जाय। वाइसरॉयको "कार्यकारिणी परिषद्में एक एंग्लो-इंडियन प्रतिनिधि रखनेका लाभ" तो नजर

आया परन्तु उन्होंने पुन इस बिना पर उसका विरोध किया कि इससे लीगका सरकारमें सम्मिलित होना और भी कठिन हो जायगा और कहा कि "सर्वोपरि महत्त्वकी बात तो यह है कि मुस्लिम लीगको कार्यकारिणी परिषदमें लानेके लिए कोई प्रयत्न उठा न रखा जाय।' पंडित नेहरूने इस बातका और अन्तरिम सरकारको कार्यकारिणी परिषद कहनेका सख्त विरोध किया। यह बात अच्छी तरह मान ली गयी थी कि नई सरकार वर्तमान कानूनकी मर्यादाओंमें रहकर बने तो भी वह अपनेसे पहलेकी सरकारोंसे अपने स्वरूप और रचनामें भिन्न होगी। इसके अतिरिक्त कांग्रेसको भेजे गये निमन्त्रणमें तथा इस सम्बन्धमें की गई सरकारी घोषणामें इसका उल्लेख 'अन्तरिम सरकार' के रूपमें किया गया था। तब फिर उसके पुराने नामकी ओर क्यों लौटा गया? क्या यह भी जिन्नाको खुश करनेके लिए ही किया गया था?

लॉर्ड वेवेलको पं० नेहरूका पत्र २२ अगस्त १९४६

मुझे पता नहीं कि प्रस्तावित कामचलाऊ सरकारकी आपकी कल्पना क्या है। क्या यह भी कोई निरी रक्षक सरकार होगी जो इस बातकी प्रतीक्षा और आशा करेगी कि मुस्लिम लीग जब चाहे तब आकर उसमें शामिल हो जाय? इसका मतलब तो इतना ही होगा कि यह एक अपरिणामकारी और अस्थिर सरकार होगी जिसका अस्तित्व थोड़ा-बहुत दूसरोंकी मेहरबानी पर आधार रखेगा।

इससे स्थिति और भी खराब हो सकती है और सम्भव है कि इससे कलकत्तेकी भयंकर घटनाओंकी पुनरावृत्ति भी हो। हम इसके लिए कामचलाऊ सरकारमें सम्मिलित नहीं होना चाहते।

हम नहीं मानते कि अन्याय-अत्याचार करनेवालोंको राजी रखनेसे उनका सहयोग मिलेगा। ऐसा समय जरूर आयेगा जब हम सब या अधिकांश लोग आपसमें सहयोग करेंगे। गलत कार्य-पद्धति तथा गलत प्रयत्नोंसे सहयोगमें बाधा पहुंचेगी। भविष्यमें हमें तूफानका सामना करना पड़ सकता है। यदि हमें उसका सामना विश्वासके साथ करना है तो हमारा जहाज मजबूत और स्थिर होना चाहिये।

कलकत्तेके भीषण हत्याकाण्डके बाद लॉर्ड वेवेलने प्रान्तीय स्वराज्यके बहाने बंगालके मंत्रि-मंडलके बारेमें हस्तक्षेप न करनेकी केन्द्रीय सरकारकी नीतिको उचित बताया। २४ अगस्तके अन्तरिम सरकार-सम्बन्धी अपने रेडियो भाषणमें उन्होंने अपनी मर्यादाका उल्लंघन करके ना यह आश्वासन दिया कि प्रान्तीय शासनके क्षेत्रमें हस्तक्षेप करनेका न तो उनकी सरकारके पास सत्ता है, न

इच्छा। अव उन्होने काग्रेसके नेताओसे कहा कि "साम्प्रदायिक एकरागताके हितमे" काग्रेसको प्रान्तो द्वारा समूहो (ग्रूप्स) तथा विभागो (सेक्शन्स) मे जुडनेके सम्वन्धमे उपयोग किये जानेवाले विकल्पके वारेमे अपना पहला निर्णय वदलनेके लिए तथा १६ मईके वक्तव्यके 'आशय' को स्वीकार करनेके लिए तैयार रहना चाहिये। इतना ही नही, काग्रेसके नेताओके साथ हुई अपनी वातचीतमे उन्होने यह धमकी भी दी कि यदि काग्रेस उनका प्रस्ताव स्वीकार नही करेगी, तो सविधान-सभा नही भी वुलाई जाय। और यह सव 'न्याय्य व्यवहार' के नाम पर किया गया। यह सिद्धान्त वना लिया गया था और ब्रिटिश उच्चाधिकारियोकी व्यक्तिगत वातचीतमे उसकी खुली चर्चा भी होती थी कि चूकि मुस्लिम लीग "राजनीतिक दृष्टिसे पीड़ित पक्ष" है, इसलिए उसका अराजकता उत्पन्न करना न केवल 'स्वाभाविक' और 'क्षम्य' ही है, वल्कि 'प्राथमिक न्याय' की दृष्टिसे उचित भी है!

लॉर्ड वेवेलकी योजना यह थी

> साम्प्रदायिक एकरागताके हितमे काग्रेस १६ मईके वक्तव्यका आशय स्वीकार करनेको तैयार है। वह आशय यह है कि १६ मईके वक्तव्यके पैरा १९ (८) मे कल्पित निर्णय नई विधान-सभा — नई वैधानिक व्यवस्था अमलमे आने तथा प्रथम सामान्य चुनाव हो जानेके वाद — करे, तव तक प्रान्त विभागो और समूहोकी रचना होनेकी स्थितिमे अपनी सदस्यता पर असर डालनेवाले किसी भी विकल्पका अमल नही कर सकेंगे।

२८ अगस्तको पडित नेहरूने लॉर्ड वेवेलको लिखा:

> आपने २४ अगस्तके अपने वायु-प्रवचनमें सविधान-सभा और समूह-रचनाके प्रश्नका इस प्रकार उल्लेख किया है. "मैं मुस्लिम लीगको यह विश्वास दिला सकता हूं कि प्रान्तीय और समूह-सम्वन्धी सविधान वनानेके वारेमे १६ मईके वक्तव्यमें जो कार्यविधि निश्चित की गई है, उसका सचाईके साथ पालन किया जायगा . और काग्रेस यह स्वीकार करनेको तैयार है कि अर्थके सम्वन्धमें यदि कोई झगड़ा होगा, तो वह सघ-न्यायालय (फेडरल कोर्ट) के सामने रखा जा सकता है।"
>
> इस प्रकार इस वारेमें आपने अपने वायु-प्रवचनमें जो कुछ कहा था, वह हमने जो कहा हे उसके अनुरूप ही था। अव आप जो सुझा रहे हैं . . . उसका अर्थ यह है कि इस विशेष प्रश्नको संघ-न्यायालयके सामने नही रखना चाहिये और हमें इसका वह अर्थ स्वीकार कर लेना चाहिये जो कैविनेट-मिशन और आप करे, भले ही वह उस कानूनी अर्थसे

भिन्न हो जो सघ-न्यायालय करे। आपने इस पर और साम्प्रदायिक एक रागताकी आवश्यकता पर शायद कलकत्तेकी घटनाओंके कारण जोर दिया है। यह दृष्टि नई है। कलकत्तेकी घटनाए आपके उस वायु प्रवचनसे पहले हुई था जिसमें आपने अथ घटानसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नोंका निर्णय सघ-न्यायालय द्वारा होनेका उल्लेख किया है।

हम सब साम्प्रदायिक एकरागता बढानेके लिए यथाशक्ति सब कुछ करनेको अत्यत उत्सुक है। परन्तु जो माग आप सुझाते हैं उसका हमारे विचारसे विपरीत परिणाम निकलेगा। हमारी घोषित नीति सामान्यत न्यायपूर्ण मानी जाती है। उसे डराने धमकानेसे बदलना अवश्य ही शान्तिका माग नही है।

आपका सुझाया हुआ माग यदि हम लोग न अपनायें तो सविधान सभा नही बुलाई जायगी, आपका यह कथन हमें आश्चयजनक लगता है। जब सविधान-सभाकी दिशामें आगे बढ़ना कानूनी और नैतिक दोनो दृष्टियासे हमारा कर्तव्य है। उसे इसीलिए नही रोका जा सकता कि कुछ लोग उसमें सम्मिलित होना पसन्द नही करते और देशमें उपद्रव होते हैं। यदि वे सम्मिलित होनेसे इनकार करते हैं तो सविधान-सभाको उनके बिना आगे बढना चाहिये।

परन्तु लार्ड वेवेल दुराग्रहपूर्वक यही मानते रहे कि समस्या "काननी नही बल्कि व्यावहारिक" है। रणक्षेत्रमें तो वे अपनी कलामें निपुण थे। लेकिन जब राजनीतिके क्षेत्रमें उन्हें रखा गया तब उन्होंने अपने-आपको उस शुभचिंतक क्रीडा शिक्षककी कोटिमें उतार दिया, जो बालको द्वारा खेले जानेवाले फौजी सिपाहियोके खेलके कृत्रिम रणक्षेत्र पर अध्यक्षता करता है। खेलके नियमोके अनुसार अधिक शक्तिशाली शस्त्रोंका उपयोग करनेवाला पक्ष रणक्षेत्रका स्वामी बनता है। इस सैनिक राजनीतिज्ञके दिमागमें कानून और सविधानका पहलू प्रवेश ही नही कर सका। मुस्लिम लीगके पास अधिक शक्तिशाली शस्त्र था। इसलिए वह रणक्षेत्रकी स्वामिनी बना। इस तथ्यको स्वीकार करके ही काग्रेसको खेल खेलना चाहिये

विभागो और समूह रचनाके विषयमें काग्रेसका विचार सघ-न्यायालयके समक्ष प्रस्तुत किया जाय और वह उसे मान ले तो भी काग्रेसको कोई लाभ नही होगा। मुस्लिम लीग भाग लेनेसे अनिवाय रूपमें इनकार करेगी और सविधान रचनाकी प्रगति रुक जायगी। उधर देशमें साम्प्रदायिक तनाव अधिकसे अधिक बढ़ते जायगे। मुझे विश्वास है कि जब तक समूह रचनाके प्रश्न पर कोई दृढ सव-सम्मत मत नही हो जाता, तब तक सविधान-सभाको बुलाना बुद्धिमानीकी बात नही होगी।'

पंडित नेहरूने उत्तर दिया, "मैं आपसे सहमत हूं कि समस्या केवल कानूनी ही नहीं, परन्तु व्यावहारिक भी है। हमने इसके समस्त व्यावहारिक पहलुओं पर विचार किया है। . . यदि कांग्रेस आपके वर्तमान सुझाव पर अमल करे, तो अनेक अल्पसंख्यक जातियोंको यह लगेगा कि हम उनके प्रति और उनके हितोंके प्रति किसी दिशासे दबाव पड़नेके कारण विश्वासघात करनेको तैयार हो गये हैं। . . यदि कोई परिवर्तन करना ही है, तो वह किसी स्वीकृत प्रणालीके द्वारा — हमने ऐसी एक प्रणाली बतायी है — होना चाहिये, न कि मनमाने ढंगसे और असंख्य सम्बन्धित लोगोंका ध्यान रखे बिना। रही बात संविधान-सभाकी। . उसे अनिश्चित काल तक स्थगित कर देना न सिर्फ सिद्धान्तकी दृष्टिसे गलत होगा, परन्तु मुस्लिम लीगका जो सहयोग हम चाहते हैं उसे प्राप्त करनेकी दृष्टिसे भी उसके व्यावहारिक परिणाम हानिकारक होंगे।"[७]

गांधीजीको इन घटनाओंमें खतरेका संकेत दिखाई दिया और वाइसरॉयसे भेंट करनेके बाद २७ अगस्तको उन्होंने समुद्री तार द्वारा सम्राट्की सरकारको यह सन्देश भेजा कि "बंगालकी करुण घटनाके कारण वाइसरॉयकी हिम्मत टूट गई है" और उन्हें किसी "अधिक योग्य और कानूनी ज्ञान रखनेवाले आदमी" की मददकी जरूरत है, अन्यथा "बंगालकी करुण घटना अवश्य दोहराई जायगी।" और वाइसरॉयको उन्होंने एक मित्रतापूर्ण पत्रमें लिखा :

> कल शामको आपने कई बार यह दोहराया कि आप एक "सीधे-सादे आदमी और सैनिक" हैं और आप कानून नहीं जानते। हम सब सीधे-सादे आदमी हैं, भले ही हम सब सैनिक न हों और भले ही हममें से कुछ लोग कानून भी जानते हों। मैं यह मान लेता हूं कि हमारा ध्येय ऐसे उपाय ढूंढ निकालना है, जिनसे कलकत्तेकी हालकी भयंकर घटनाओंकी पुनरावृत्ति न हो। हमारे सामने प्रश्न यह है कि इसका उत्तम उपाय क्या है?
>
> कल शाम आपकी भाषा धमकीसे भरी थी। सम्राट्के प्रतिनिधिके नाते आपका कार्य केवल सैनिक पुरुष होनेसे ही नहीं चल सकता और न कानूनकी अवहेलना करनेसे ही चल सकता है। तब आपके अपने ही बनाये हुए कानूनकी उपेक्षा तो आप कर ही कैसे सकते हैं? जरूरी हो तो आपको अपने पूरे भरोसेके किसी कानूनी ज्ञान रखने-वाले आदमीकी सहायता लेनी चाहिये। आपने यह धमकी दी है कि जो प्रस्ताव आपने पंडित नेहरूके और मेरे सामने रखा उस पर कांग्रेस यदि अमल नहीं करेगी, तो संविधान-सभा नहीं बुलाई जायगी। यदि सचमुच यही बात हो तो आपने १२ अगस्तको जो घोषणा की थी,

वह आपको नहीं करनी चाहिये थी (उसमें आपने कांग्रेसके अध्यक्षको तुरन्त अन्तरिम सरकार बनानेके लिए अपने प्रस्ताव रखनेका निमंत्रण दिया था)। परन्तु जब आप वह घोषणा कर चुके हैं तो आपको अपना वह कदम वापिस लेना चाहिये और अपने पूरे विश्वासका दूसरा मंत्रिमंडल बनाना चाहिये।

वाइसरायने यह तक किया था कि यदि संविधान-सभा मुस्लिम लीगके विरोधके बावजूद बुलाई गई, तो उससे साम्प्रदायिक झगड़े अधिक बढ़ेंगे और उन्हें दबानेके लिए ब्रिटिश सेनाकी आवश्यकता होगी। परन्तु सम्राटकी सरकार इससे बचना चाहती है। इस तर्कका उल्लेख करते हुए गांधीजीने स्पष्ट कर दिया कि भारत ब्रिटिश सेनाके बिना अपना काम अच्छी तरह चला सकता है बशर्ते कि अंग्रेज लोग भारतको अपनी व्यवस्था खुद करनेके लिए स्वतंत्र छोड़ दें :

> यदि ब्रिटिश सेना भीतरी शांति और व्यवस्थाके लिए यहां रखी जाती है तो आपकी अन्तरिम सरकार एक मजाक बन कर रह जायगी। कांग्रेसको ब्रिटिश शस्त्रोंके प्रयोगसे भारतके आपसमें लड़नेवाले तत्त्वों पर अपनी मर्जी लादना पुसा नहीं सकता। कांग्रेससे यह आशा भी नहीं रखी जा सकती कि बंगालमें हालमें हुए पशुताके प्रदर्शनसे हार कर वह जिस रास्तेको गलत समझती है उसे अपनाये। इस तरह झुक जानेसे ऐसी करुण घटनाओंको प्रोत्साहन मिलेगा और उनकी पुनरावृत्ति होगी। **दोनों ओर प्रतिशोधकी भावना गहरी होगी और जब अवसर आयेगा तब उसका अधिक भयंकर और उग्र रूपमें प्रदर्शन होगा, और यह सब मुख्यतया इसलिए होगा कि अपने शस्त्र-बल पर गर्व करनेवाली विदेशी सत्ता भारतमें बराबर बनी रहेगी।** (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

गांधीजीने वाइसरायसे अनुरोध किया कि उनके पत्रका सारा पाठ ब्रिटिश मंत्रि-मंडलको समुद्री तार द्वारा भेज दिया जाय। वाइसरायने वैसा ही किया।

गांधीजीकी चेतावनीका पूरा महत्त्व उस समय न तो ब्रिटिश प्रधान मंत्रीने अनुभव किया और न भारत-मंत्रीने अनुभव किया। परन्तु श्री एटली गांधीजीकी चेतावनीसे बेचैन हो उठे थे। एक मित्रसे जो उनसे मिले थे, उन्होंने यह कहा बताते हैं कि "यदि गांधीजीकी रायमें स्थिति ऐसी है कि वाइसरायको उनके अपने दिमागसे अधिक योग्य दिमागवाले व्यक्तिकी सहायताकी आवश्यकता है और यदि गांधीजी यह सोचते हैं कि अन्यथा कलकत्तेकी करुण घटनाकी पुनरावृत्ति संभव ही नहीं परन्तु निश्चित है, तब तो यह एक ऐसी बात है जिस पर गंभीरतासे ध्यान देना पड़ेगा।" किन्तु श्री एटलीकी आशा

थी कि गांधीजीने जिस "अधिक योग्य और कानूनका ज्ञान रखनेवाले" की सिफारिश की थी, उसे शायद पंडित नेहरू पूरा कर देंगे। लेकिन जब उनसे यह पूछा गया कि क्या इसका यह अर्थ है कि अन्तरिम सरकारके उपाध्यक्षके नाते पंडित नेहरू वाइसरॉयको जो भी सलाह देंगे उसे लॉर्ड वेवेल मानेंगे, तो उन्होंने किसी वचनमें बंधनेसे इनकार कर दिया। उन्होंने यह तो स्वीकार किया कि नये वाइसरॉयकी नियुक्तिके लिए पर्याप्त कारण हैं। परन्तु उनकी कठिनाई लॉर्ड वेवेलके स्थान पर अधिक योग्य वाइसरॉय खोजनेकी थी।

दूसरी ओर लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सने यह रवैया अपनाया कि झगड़ेकी जड़ मुस्लिम लीगका असन्तोष है और उसका एकमात्र उपाय यह है कि कांग्रेस "जो इस समय सबल स्थितिमें है" कुछ और रियायत दे, "जिससे मि० जिन्ना सरकारमें आनेके लिए आकर्षित हों।" लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सने कहा कि कांग्रेसके लोग दोनों हाथोंमें लड्डू नहीं रख सकते। एक ओर तो वे वाइसरॉय ओर प्रान्तीय गवर्नरोंके सुरक्षित अधिकारोंके प्रयोगसे अधिकसे अधिक मुक्ति पानेका दावा करते हैं और दूसरी ओर प्रान्तीय मामलोंमें अपने असाधारण अधिकारोंका उपयोग करनेका अनुरोध भी उनसे करते हैं, ब्रिटिश सेनाओंसे भारत छोड़ कर चले जानेके लिए भी कहते हैं और साथ ही यह शिकायत भी करते हैं कि दंगोंका दमन करनेके लिए सेनाओंका कारगर उपयोग नहीं किया गया।

यह बिलकुल तर्कसंगत स्थिति होती और गांधीजी स्वयं तो इसे बहुत न्यायपूर्ण चुनौती समझ कर इसका स्वागत करते, बशर्ते कि ब्रिटिश सरकार भारतीय हाथोंमें पूरी सत्ता सौंपनेको तथा शालीनता और सद्भावके साथ भारतकी भूमिसे अपनी सेनाएं हटा लेनेको तैयार होती। परन्तु ब्रिटिश सरकार भारतमें भारतके खर्चसे अपनी सेना रखे हुए थी और वाइसरॉय तथा गवर्नर अपनी विशाल और असाधारण सत्ताओंको अपने हाथमें रखे हुए थे, इन सत्ताओंका उपयोग वे ज्यादातर देशके जिन भागोंमें कानून और न्यायका तंत्र भंग हो गया था वहां प्रचलित स्थितिको जैसीकी वैसी कायम रखनेके लिए करते थे।

इसके कुछ उदाहरण लीजिये. नवम्बर १९४६ के पहले सप्ताहमें सरदार पटेल और लियाकतअली खां बिहारके उपद्रव-ग्रस्त भागोंके लिए सेनाकी कुछ अधिक सहायता प्राप्त करनेके लिए साथ साथ वाइसरॉयसे मिले। उन्हें सहायता तो बहुत नहीं मिली, परन्तु उसके बजाय बिनमांगा उपदेश जरूर मिला। अन्तरिम सरकार लाचारी महसूस करने लगी। प्रान्तीय गवर्नरोंने भी वही बात कही, जो कि वाइसरॉयने कही थी — अर्थात् भारतवासियोंको एक-दूसरेसे प्रेम करना चाहिये। बम्बईके मुख्यमंत्री बी० जी० खेरने सरदार पटेलको टेलिफोन

पर एक अत्यन्त महत्त्वका सन्देश भेजा जिसका अर्थ लगभग यह था कि बम्बईके गवर्नरने यह नोटिस दे दिया है कि प्रान्तमें यदि गम्भीर साम्प्रदायिक उपद्रव हुआ, तो आपको सैनिक सहायता नहीं मिलेगी, और इसलिए आपको शान्तिसे रहना हो तो लीगके साथ मित्रता करनी चाहिये। जब लार्ड वेवेल बिहारके दंगोंके बाद वहां गये तब उन्होंने भी बिहारके मुख्यमंत्री श्रीकृष्णसिंहसे इसी तरह कहा बताते हैं कि सैनिक सहायताके मामलेमें वाइसरायको बिहारका ही नहीं बल्कि सारे भारतकी आवश्यकताओंका विचार करना पड़ता है। व्यवहारमें इसका अर्थ यह हुआ कि भारतमें शान्ति और व्यवस्था स्थापित करनेका एकमात्र उपाय मुस्लिम लीगकी मांगको मान लेना है, फिर चाहे वह न्यायपूर्ण हो या अन्यायपूर्ण हो।

इस नीतिका कुल मिलाकर यह नतीजा आया। एक तरफ तो संगठित गुंडागीरीको उसने राजनीतिक दबाव डालनेकी एक स्वीकृत पद्धति मानकर उसे प्रोत्साहन दिया और दूसरी तरफ जो लोग गुंडागीरीके शिकार हो सकते थे उनमें यह भावना पैदा की कि उनके जान मालको और उनकी स्त्रियोंकी आबरूको बचानेका एकमात्र उपाय कानूनको अपने हाथमें लेना है। और जब तक ब्रिटिश शान्ति की बेड़ियोंसे वे जकड़े हुए थे तब तक यह उपाय सफल नहीं हो सकता था इसलिए कायर रोषका आवेग भीतर ही भीतर बढ़ता गया और अनुकूल समयकी प्रतीक्षा करता रहा और आखिरमें बाहरी दबावके दूर होते ही वह एक भयानक विस्फोटके साथ एकाएक फूट पड़ा।

४

नवनिर्मित अन्तरिम सरकार एक दल (टीम) की तरह मिल-जुल कर कुशलतापूर्वक काम करने लग गई थी। मंत्री लोग प्रतिदिन अनौपचारिक रूपमें मिलते थे। सारे महत्त्वपूर्ण निर्णय आपसके विचार विमर्शके बाद किये जाते थे और सर्व-सम्मत निर्णय वाइसरायके सामने रखे जाते थे। वाइसराय, स्थायी अधिकारियों तथा विशेष रूपमें पॉलिटिकल विभागको नये राजनीतिक वातावरणके अनुकूल बननेमें बड़ी कठिनाई मालूम हुई।

दो सदस्य — सर शफात अहमद खां और राजगोपालाचार्य — आरंभमें अपने विभागोंका काम नहीं संभाल सके थे। पहले सदस्य पर तो घातक आक्रमण हुआ था और दूसरे सदस्यका स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। इसी प्रकार कुछ और सदस्य भी भिन्न भिन्न कारणोंसे तुरन्त अपना काम नहीं संभाल सके थे। वाइसरायका कहना था कि उनके विभाग या तो खाली रहने चाहिये या गवर्नर-जनरलके पास चले जाने चाहिये। पंडित नेहरूने इसका विरोध किया

मैं पूरी तरह समझ नही पाता कि किसी सदस्यके कुछ अर्सेके लिए सयोगवश अनुपस्थित रहनेके कारण कोई विभाग खाली क्यो रहे या गवर्नर-जनरलके पास क्यो चला जाय? . . . समग्र मन्त्रि-मडल वडे वडे निश्चयोके लिए सम्मिलित रूपसे जिम्मेदार है। . यदि कोई सदस्य थोडे अर्सेके लिए अनुपस्थित हो, तो क्या उसका विभाग एकाएक गवर्नर-जनरलके पास चला जाता है और उसके वारेमे सम्मिलित जिम्मेदारीकी भावना खतम हो जाती है? . . ऐसे उदाहरणोमे स्पष्ट मार्ग यही मालूम होता है कि वह विभाग या तो किसी दूसरे सदस्यको सौंप दिया जाय या उपाध्यक्षके नाते वह मेरे पास रहे। . . .

जैसा आपने स्वय सूचित किया है, मौजूदा कार्यकारिणीका स्वरूप और रचना पहलेकी कार्यकारिणियोसे भिन्न है। इसके लिए भारतीय जनताका आधार है और इसीलिए आपने निर्णय किया कि विभागोके सचिव आपके पास सीधे न पहुच कर सदस्यके मार्फत ही पहुचे। . . . इसके विकल्पके रूपमे आपने जो वात रखी है उसका परिणाम यह होगा कि एक दो सदस्योके थोड़े समयके लिए अनुपस्थित होनेके कारण कुछ विभागोके सम्वन्धमे लोकप्रिय सरकारका काम एकाएक वन्द हो जायगा। . . . मुझे निश्चित ही ऐसा लगता है कि इस समस्याके प्रति दृष्टि वही होनी चाहिये, जो जिम्मेदार मन्त्रियोके मातहत चलनेवाली लोकप्रिय सरकारके विकासके अनुरूप हो।[८]

इसके अलावा, लॉर्ड वेवेलने उत्तरप्रदेशके मन्त्रि-मडलके निर्णयको रद्द कर दिया, जब मन्त्रि-मडलने अपने अग्रेज इन्स्पेक्टर-जनरल ऑफ पुलिसको हटाना चाहा। उसने मन्त्रि-मडलकी सत्ताकी अवगणना की थी और उसके आचरणको मन्त्रि-मडलने पसन्द नही किया था। लॉर्ड वेवेलने कलकत्तेके भीषण हत्याकाडके बाद जो कुछ किया था, उसके यह बिलकुल विरुद्ध था। स्पष्ट है कि बगालमे प्रान्तीय स्वराज्यका एक अर्थ था और उत्तरप्रदेशमे दूसरा। एक और मौके पर वाइसरॉयने एक ऐसे विभागमे, जो सरदार पटेलके अधीन था, अपने एक कृपापात्रके साथ विशेष व्यवहार करनेका आग्रह किया। और कारण यह वताया कि वह स्थान "आश्रयका स्थान" (पैट्रोनेज पोस्ट) है। सरदारको उन्हे यह याद दिलाना पडा कि आखिर आपको जाना तो है ही, इसलिए नई व्यवस्थामे ऐसा कदम अवसरके अनुरूप नही होगा।

जिस दिन अन्तरिम सरकार वनी उस दिन वाइसरॉयके निजी सचिवने यह आदेश जारी किया कि सरकारके जो सदस्य किसी देशी राज्यमे जाय, उनसे आशा रखी जायगी कि वे अपने जानेकी पूर्व-सूचना पोलिटिकल विभागको दे। उसमें यह भी कहा गया कि सदस्योको देशी राज्योमे "राजनीतिक

स्वरूप' के भाषण देनेसे बचना चाहिये। इससे पंडित नेहरूका धीरज चुक गया 'यह तो पुरानी प्रथा मालूम होती है। मैं तो बिल्कुल नहीं समझ पाता कि हमें किसी रियासतमें पोलिटिकल विभागके आश्रयमें क्या काम करना चाहिये। इसकी अपेक्षा अधिक उचित यह होगा कि पोलिटिकल विभाग वर्तमान सरकारके साथ साथ चले।'

पोलिटिकल विभागने इसका बदला पंडित नेहरूसे ले लिया, जब वे अक्तूबरके मध्यमें सीमाप्रान्त गये। पठानोंने तो उनका बिल्कुल शाही स्वागत किया, परन्तु मालकन्द पोलिटिकल एजन्सीमें कुछ कबाइलियोंने छिप कर उनकी गाडी पर हमला किया। इस मामलेमें पोलिटिकल विभागका हाथ होनेका सन्देह था और सम्बन्धित पोलिटिकल अधिकारीके विरुद्ध कर्तव्य विमुखताके लिए कारवाई करनी पडी थी।

लार्ड वेवेलने अन्तरिम सरकारको पल भर भी चैन नहीं लेने दिया। २६ सितम्बरके दिन उन्होंने गांधीजीको मिलने बुलाया। दोनोंकी बातचीतमें उन्होंने फिर अपना प्रिय विषय छेड़ा

वाइसराय लीगको किसी न किसी तरह अन्दर लेना ही चाहिये।

गांधीजी कांग्रेस तो तैयार है, यदि लीग सीधे ढंगसे आनेके लिए रजामन्द हो। जिन्ना पंडित नेहरूसे मिलें और उनसे सम्मानपूर्ण समझौता कर लें। वह तो एक महान दिन होगा जब कांग्रेस और लीग आपसमें समझौता करनेके बाद अन्तरिम सरकारमें एकसाथ हो जायगी। परन्तु उन्हें मनमें कोई बात छिपाकर नहीं रखनी चाहिये और न असहयोग करने तथा लड़नेके लिए सरकारमें आना चाहिये।

वाइसराय 'इसमें एकमात्र रुकावट अन्तरिम सरकारमें किसी राष्ट्रीय मुसलमानको सम्मिलित करनेकी है। कांग्रेसको निःसन्देह किसी राष्ट्रवादी मुसलमानको मनोनीत करनेका अधिकार है। परन्तु इस हकीकतको देखते हुए कि इस मामले पर जिन्नाने जिद पकड ली है उस अधिकारको छोड़ देनेमें क्या हानि है?

गांधीजी 'मनुष्य अधिकार तो छोड सकता है परन्तु कर्तव्य नहीं छोडा जा सकता।

वाइसराय लेकिन अगर लीग अन्दर आनेसे इनकार करती है तो संविधान-सभाका क्या होगा?

गांधीजी मैं यह स्वीकार करता हूं कि उस सूरतमें संविधान-सभा उचित रूपमें मिल नहीं सकती। लेकिन मैं यह स्पष्ट कर देता हूं कि इस मामलेमें मैं अपने सिवा और किसीका प्रतिनिधि नहीं हूं।

वाइसरॉय "इस विचारको हम जरा और आगे बढाये। यदि संविधान-सभा नही बुलाई जाती, तो फिर क्या होगा?"

गांधीजी: "राष्ट्रीय अन्तरिम सरकार जैसे अभी प्रशासन चला रही है वैसे ही वह आगे भी चलाती रहेगी। यदि आप उसे चालू नही रहने देंगे, तो आपकी नेकनीयती पर शंका होगी।"

वाइसरॉय: "ऐसा तो हम कैसे कर सकते है?"

गांधीजी: "तब क्या आप इस बहानेसे सत्ता अपने ही हाथमे रखना चाहते है? यदि आप ऐसा करेंगे, तो सारा संसार आपकी निन्दा करेगा। आप इतना ही आग्रह कर सकते हैं कि अन्तरिम सरकारमें मुस्लिम लीगके प्रतिनिधि होने चाहिये। कांग्रेस वैसा करनेके लिए तैयार है।"

वाइसरॉय: "इसके लिए मुझे ब्रिटिश मंत्रि-मंडलसे आदेश लेनेकी जरूरत होगी। मैं तो उसके आदेशोके अनुसार ही काम कर सकता हूं। मैं स्वीकार करता हू कि मेरी सहानुभूति लीगके साथ है। लीगको अन्तरिम सरकारमें लानेका मेरा प्रयत्न जारी रहेगा।"

दूसरे दिन गांधीजीने वाइसरॉयको एक पत्र लिखा, जिसमे उनके साथ हुई बातचीतका सार दिया गया था

> आपने कृपा करके मुझे विस्तारसे यह समझाया कि कांग्रेस और मुस्लिम लीगमें समझौता करानेके आपके आज तकके प्रयत्नोका क्या परिणाम निकला। हमारी बातचीतमें आपने मुझे यह बताया कि आपका झुकाव लीगकी ओर है। आपकी रायमे दोनो पक्षोके बीच मतभेदका मुद्दा एक ही रह गया है—अर्थात् कांग्रेसके हिस्सेकी संख्यामे एक गैर-लीगी मुसलमानके प्रतिनिधित्वका प्रश्न। आप कांग्रेसकी स्थितिको पूरी तरह उचित मानते है, परन्तु आपकी राय है कि यदि कांग्रेस शान्तिके खातिर अपने इस अधिकारको छोड दे, तो यह ऊंचे दर्जेकी राजनीतिज्ञताका काम होगा। मैंने कहा कि यदि किसी अधिकारको छोडनेका सवाल हो, तब तो यह सीधी-सादी बात होगी। परन्तु यह एक ऐसे कर्तव्यका पालन न करनेका प्रश्न है, जो कांग्रेस गैर-लीगी मुसलमानोके प्रति समझती है। मैं इस बातमे आपसे पूरी तरह सहमत हू कि यदि और जब कांग्रेस तथा मुस्लिम लीगमे कोई बात मनसे या अन्य किसी प्रकारसे छिपाये बिना आपसी समझौता हो जायगा, तो वह एक महान दिन होगा। और यदि दोनो एक-दूसरेके साथ लडनेको ही इकट्ठी हों, तो वह बहुत बुरी बात होगी। इसके सिवा, मैंने इस मुद्दे पर जोर दिया कि कायदे आज़म जिन्नाको पंडित नेहरूसे मिलना चाहिये और सम्मानपूर्ण समझौता करनेकी कोशिश करनी

चाहिये। किन्तु यदि दुराशा बुरी बात हुई और संविधान-सभाका मुस्लिम लीगका बहिष्कार बना रहा तथा ब्रिटिश सरकारने संविधान सभाको चालू न रखनेका निश्चय किया तो मैं इसे पूरी तरह सम्मानपूर्ण बात समझूंगा। कारण यद्यपि विभिन्न मित्रोंकी बातोंसे यह आशा पैदा हुई थी कि संविधान-सभा चालू रखी जायगी फिर भी मैंने यह आशा नहीं रखी थी कि बड़े दलोंमें से एकके सफल बहिष्कारके बावजूद उसे चालू रखा जायगा या चालू रखा जा सकेगा। तब आपने बीचमें यह उद्गार प्रगट किया कि भारतमें पक्ष दो ही नहीं, परन्तु तीन हैं। आपने यह भी कहा कि यदि मुस्लिम लीगका बहिष्कार जारी रहा, तो आपका गम्भीर मत है कि देशी राज्य संविधान-सभामें सम्मिलित नहीं होंगे।

भले ही यह विचार मैं अवश्य ही रखता हूं, तो भी मैंने आपसे कहा कि यदि दलोंमें से एक पक्ष सहयोग न दे और बहिष्कार करने वालोंको नियन्त्रणमें रखनेके लिए बल प्रयोग करना पड़े, तो मैं यह कल्पना नहीं कर सकता कि कोई व्यावहारिक संविधान बनाया जा सकता है।

तब आपने मुझसे यह अनुमान लगानेको कहा कि संविधान-सभाको जारी न रखनेका तर्कसंगत परिणाम क्या होगा और मुझसे पूछा कि अन्तरिम सरकारके बारेमें मेरा क्या विचार है। मैंने आपसे कहा कि इसमें कोई शंका नहीं कि चाहे कुछ भी हो जाय एक बार बुला ली जानेके बाद राष्ट्रीय सरकारको अपना काम करते रहना चाहिये। वे लोग स्वयं ही यह महसूस करें कि अपनी अयोग्यता अथवा असमर्थताके कारण वे काम नहीं कर सकते तो बात दूसरी है। मैंने आपसे यह भी कहा कि कांग्रेसने अपने उत्तम व्यक्तियोंको अन्तरिम सरकारमें अपने दलके लिए सत्ता हथियानेकी भावनासे नहीं परन्तु समग्र राष्ट्रकी निःस्वार्थ सेवाकी भावनासे प्रेरित होकर ही रखा है। वे आपका और लीगका इतना लिहाज रखते हैं कि लीग अन्तरिम सरकारमें शामिल होगा इस आशामें वे दोनों मुस्लिम स्थानोंको भरनेमें हिचकिचाते हैं। आपको इस बारेमें शंका थी कि अन्तरिम सरकारके जारी रहनेकी कल्पना की जा सकती है और आपने कहा कि हर हालतमें आप तो सम्राटके सेवक हैं और आपको सम्राटकी सरकारसे आदेश प्राप्त करने होंगे। मैंने आपकी स्थितिको तो समझ लिया लेकिन मैंने कहा कि केन्द्रमें एक सच्ची राष्ट्रीय सरकार काम करती रहे यह बड़ी महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है और इस मार्गसे हटने पर अंग्रेज लोगोंके प्रति भारतवासियोंके

मनमें गभीर शकाएं उत्पन्न होगी और यह एक अत्यन्त करुण घटना होगी।

वाइसरॉयने इससे इनकार कर दिया कि उन्होंने कभी भी मुस्लिम लीगकी ओर अपना झुकाव होनेकी बात कही है। कुछ और बातोमे भी उनकी स्मृति गाधीजीसे भिन्न थी। परन्तु आग्रह करने पर भी उन्होने दोनोकी बातचीतका अपना सार देनेसे इनकार कर दिया "मेरे विचारसे इस समय जैसी वार्ताए चल रही हैं उनके बीच बातचीतका स्वीकृत सार लिखवा लेनेकी कोशिश करना बुद्धिमानी नही होगी। कैबिनेट-मिशनकी वार्ताओके समय ऐसा न करनेका निर्णय हुआ था। . . . और भी कई बाते ऐसी हैं जिनके बारेमे यदि हमे लिखित सहमति प्राप्त करनी होती, तो मुझे परिवर्तन सुझाना पडता।"[१०] लॉर्ड वेवेलके पत्रके अन्तमें कहा गया था, "मुझे आशा है कि आप अपने प्रभावका उपयोग समझौता करानेमें करेगे।"

गाधीजीने वाइसरॉयका खंडन तो स्वीकार कर लिया। परन्तु वे वाइसरॉयकी इस आशाको कैसे पूरा करते कि उन्हें (गाधीजीको) "समझौतेके लिए अपने प्रभावका उपयोग करना चाहिये," यदि वाइसरॉय अपने मानसको पूरी तरह और ठीक ठीक समझनेमे उनकी मदद न करे?

गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलके नाम २८ सितम्बर, १९४६

मेरी समझके अनुसार हमारी बातचीत महत्त्वपूर्ण थी, इसलिए मैंने सोचा कि आपको यह बता दू कि मुझ पर क्या छाप पडी, ताकि मैंने भूल की हो तो आप उसे सुधार दे। कारण, मुझे हमारी बातचीतका सार पडित नेहरू और दूसरे मित्रोको बताना था। कैबिनेट-मिशनकी वार्ताओके दौरान भी मैंने लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको या सर स्टैफर्ड क्रिप्सको हमारी बातचीतका सार लिख भेजा था और उससे लाभ हुआ था। आपने जो सुधार सुझाये हैं, उन्हे मैं नि सकोच स्वीकार कर लेता हू। परन्तु आपके और कायदे आज़म जिन्नाके बीच जो कुछ विचार-विमर्श हुआ उसके आपके द्वारा किये गये वर्णनके आरम्भमे ही मैंने आपके कहनेका यह अर्थ समझा था कि यद्यपि उनकी (जिन्नाकी) कुछ बातें उचित नही थी, फिर भी आपका झुकाव मुस्लिम लीगकी ओर था। मेरे मन पर तो ऐसी निश्चित छाप पडी थी। परन्तु आपके द्वारा सूचित सुधारोके बाद मेरी छापका कोई मूल्य नही रह जाता।

आपके पास समय हो तो मैं चाहूगा कि आप दूसरे सुधार भी मुझे लिख भेजें। भले ही हमारी बातचीतका हम कभी सार्वजनिक उपयोग न करे, तो भी मैंने अपने ५५ वर्षके तूफानी सार्वजनिक

जीवनमें यह देखा है कि आपसी समझौतों और बातचीतमें आगे बढ़ानेकी दृष्टिसे लिखित प्रमाण बहुमूल्य सिद्ध होते हैं। परन्तु इस मामलेमें तो बेशक मैं आपके हाथोंमें हूं और आप जैसा चाहेंगे वैसा ही होगा, क्योंकि मैं आपकी यह आशा पूरी करना चाहता हूं कि मुझे 'समझौतेके' लिए अपने प्रभावका उपयोग करना चाहिये। इस कामके लिए, जो मुझे बहुत प्रिय है, मेरी यह इच्छा होना स्वाभाविक है कि मैं आपको सही रूपमें पूरी तरह समझ लूं, क्योंकि और कोई कारण न हो तो भी कमसे कम यह तो है ही कि भारतमें सब व्यक्तियोंमें आपकी स्थिति अनोखी है।

परन्तु लार्ड वेवल स्वीकृत विवरण न लिखवाकर अपने 'सिद्धान्त' को छोड़नेके लिए तैयार नहीं थे निश्चित विवरण लिखवानेके बारेमें आपकी दृष्टिको मैं पूरी तरह समझ रहा हूं। परन्तु मैं इसी सिद्धान्त पर स्थिर रहना पसन्द करूंगा कि इन वार्ताओंके दौरान जो व्यक्तिगत चर्चाएं हों उनका स्वीकृत विवरण न लिखवाया जाय और इसलिए मैं आपके पहले पत्रके बारेमें अधिक विवेचन नहीं करूंगा। मुझे यह जान कर बहुत खुशी हुई कि आप अपने महान प्रभावका उपयोग समझौतेके लिए करेंगे।"

बात यह थी कि अंग्रेज अधिकारियोंके लीग-पक्षी वर्गको ऐसा लगा कि उनकी कृपापात्र मुस्लिम लीगने अन्तरिम सरकारसे बाहर रह कर जरूरतसे ज्यादा हिम्मत की है। इसलिए उन्होंने निश्चय कर लिया था कि लीगको किसी भी कीमत पर अन्तरिम सरकारमें लाया जाय। इस उद्देश्यसे वाइसराय और उनकी मंडलीने अब अपनी ही ओरसे मुस्लिम लीगके साथ वार्ताएं आरम्भ कर दीं।

५

४ अक्तूबर, १९४६ को जिन्नाकी उन नौ मांगोंकी नकल जिनके आधार पर लीग अन्तरिम सरकारमें सम्मिलित हो सकती थी और लार्ड वेवलका उत्तर वाइसरायने पंडित नेहरूके हाथमें दिया। मुख्य मुद्दे ये थे :

(१) मुस्लिम लीगको यह तो मान्य है कि कांग्रेसका छठा मनोनीत सदस्य १४ सदस्योंकी अन्तरिम सरकारमें परिगणित जातियोंका कोई प्रतिनिधि हो। परन्तु उसका कहना है कि इस बारेमें अन्तिम दायित्व गवर्नर-जनरलका है और यह नहीं मान लेना चाहिये कि परिगणित जातिके प्रतिनिधिका जो चुनाव हुआ है उसे मुस्लिम लीगने स्वीकार कर लिया अथवा पसन्द कर लिया है। इस पर लार्ड वेवलकी

टिप्पणी यह थी : "आपका कहना मेरे ध्यानमे है और मैं स्वीकार करता हू कि अन्तिम दायित्व मेरा है।"

(२) मुस्लिम लीगने यह माग की कि उपाध्यक्ष दोनो बडी जातियोमे से वारी वारीसे अथवा विकल्पके रूपमे लिया जाय। वाइसरॉयने यह प्रस्ताव रखा कि इसकी व्यावहारिक कठिनाइयोको देखते हुए इसके वजाय वे "यह व्यवस्था कर देगे कि गवर्नर-जनरल और उपाध्यक्षकी अनुपस्थितिमे किसी मुस्लिम लीगी सदस्यको मत्रि-मडलकी अध्यक्षता करनेके लिए मनोनीत किया जाय।" उन्होने यह भी कहा कि वे मत्रि-मडलकी समन्वय समिति (को-ऑर्डिनेशन कमिटी) के उपसभापतिके रूपमे किसी मुस्लिम लीगी सदस्यको 'मनोनीत' कर देगे, "जो कि एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पद है। मै इस समितिका सभापति हू और भूतकालमे लगभग हमेशा मैने उसकी अध्यक्षता की है। परन्तु अव विशेष अवसरो पर ही मै उसकी अध्यक्षता करूगा।"

(३) मुस्लिम लीगने इस अधिकारका दावा किया कि सिक्ख, भारतीय ईसाई और पारसी आदि अल्पसख्यक जातियोके प्रतिनिधियोके चुनावमे लीगसे सलाह ली जाय और वाइसरॉयने इस सम्वन्धमे यह आश्वासन दिया कि इन स्थानोमे से कोई भी स्थान खाली होगा तव उसे भरनेसे पहले दोनो वडे दलोसे परामर्श किया जायगा।

(४) मुस्लिम लीगने अन्तरिम सरकारमे तमाम वडे साम्प्रदायिक प्रश्नोके निर्णय पर निषेधाधिकारका दावा किया। इस पर वाइसरॉयने यह जवाव दिया था कि मिश्र सरकार या तो "आपसी समझौतेकी प्रक्रिया द्वारा काम करती है या विलकुल काम नही करती," इसलिए सारे मतभेद "मित्रतापूर्ण चर्चाए करके मत्रि-मडलकी वैठकोसे पहले ही" दूर कर लिये जायगे।

वाइसरॉय मुस्लिम लीगकी इन मागोके वारेमे 'सम्मत' हो गये कि अन्तरिम सरकारमे सदस्योकी कुल सख्या १४ से अधिक नही होनी चाहिये, मुख्य मुख्य विभागोका वटवारा काग्रेस और लीगके वीच वरावर वरावर होना चाहिये; और प्रस्तावित व्यवस्थामे कोई परिवर्तन या सुधार दोनो मुख्य दलोकी स्वीकृतिके विना नही होना चाहिये। जिन्नाने यह भी माग की कि दीर्घकालीन योजनाके निवटारेका प्रश्न उस समय तक स्थगित रहना चाहिये "जव तक कि अधिक अच्छा और अधिक अनुकूल वातावरण" उत्पन्न न हो जाय और महत्त्वपूर्ण प्रश्नोका निवटारा करके अन्तरिम सरकार "सुधरे हुए और अन्तिम रूपमे स्थापित न कर ली जाय।" परन्तु इस विपयमे लॉर्ड वेवेलका उत्तर स्पष्ट और असदिग्ध था : "वेशक, मत्रि-मडलमे सम्मिलित होनेका आधार १६ मईके

वक्तव्यकी स्वीकृति है, इसलिए मं मान लेता हू कि लीगकी कौसिलकी बठक अपने बवईके प्रस्ताव पर फिरसे विचार करनेके लिए बहुत जल्दी होगी।" वाइसराय जिनाकी यह माग भी स्वीकार नही कर सके कि काग्रेसको 'अपने हिस्सेके शप पाच सदस्यामें अपनी पसदका कोई मुसल्मान सदस्य" शामिल नही करना चाहिये। परन्तु वाइसरायका अस्वीकृतिका कारण यह था कि 'प्रयक दलको अपने अपने प्रतिनिधि मनोनीत करनेकी समान स्वतत्रता होनी चाहिये। मुस्लिम लीगने इसका तुरत लाभ उठाकर अपने हिस्सेमे परिगणित जातियाका एक प्रतिनिधि रख दिया।

पडित नेहरूने उसी दिन वाइसरायको उत्तर भेज दिया और अपनी प्रतिक्रियाए बता दी

(१) मि० जिना कहते ह कि काग्रेसके छह मनोनीत सदस्यामें परिगणित जातियोका एक प्रतिनिधि भी शामिल होगा। फिर भी आगे चलकर वे कहते ह कि यह नही मान लेना चाहिये कि परिगणित जातिके प्रतिनिधिका चुनाव मुस्लिम लीगने स्वीकार कर लिया है अथवा पसन्द कर लिया है।" मेरी समझमें नही आता कि काग्रेसके सदस्याके बारेमें मुस्लिम लीगकी समति या पसन्दगीका प्रश्न कसे उठता है। यह सच है कि कानून और विधानकी दष्टिसे कहा जाय तो सदस्याकी नियुक्तिकी अन्तिम जिम्मेदारी गवनर-जनरलकी है। परन्तु यह समझा इन हो गई थी कि कानूनी जिम्मेदारीका अमल उसी व्यक्तिकी सलाहसे किया जायेगा जिसे सरकार रचनेका काम सौपा गया हो।

(२) म स्वय तो इससे सहमत हू कि मत्रि-मडलकी समन्वय समिति (को-आर्डिनेशन कमिटी) का उपसभापति कोई मुस्लिम लीगी सदस्य चुना जाय।

परन्तु मुझे लगता है कि इस प्रश्नके आपके दिये उत्तरसे एक नये तत्त्वका प्रवेश होता है जो कठिनाई पदा करता है। आप कहते ह कि गवनर-जनरल और उपाध्यक्षकी अनुपस्थितिमें मत्रि मडलकी अध्यक्षता करनके लिए आप किसी मुस्लिम लीगी सदस्यको मनोनीत करनेकी व्यवस्था करगे। मुझे लगता है कि आपके द्वारा की जानवाली ऐसी कोई नियुक्ति न तो वधानिक होगी और न अन्यथा वाछनीय होगा। किन्तु यह काम हमारे आपसके समझौतेसे किया जा सकता है। (मोटे टाइप मने किय ह।)

(३) यदि हम मत्रि मडलके रूपमें काम करते ह — जसा कि हमें करना चाहिये — तो कोई भी निणय करनसे पहले सारे मत्रि-मडलकी सलाह लेनी चाहिये। यह तो स्वाभाविक ही है कि मुख्य दल मिलकर

विचार करेंगे। . . . गवर्नर-जनरल प्रत्येक समूहसे अथवा अलग अलग सदस्योसे सलाह करके किसी मामलेका निर्णय स्वय कर लेगा, तो मत्रि-मडलकी प्रणालीमे और इस प्रथाके विकासमें कि मत्रि-मडलकी सलाह मानी जानी चाहिये, एक गभीर हस्तक्षेप होगा।

(४) मैंने जो कुछ ऊपर कहा है वह इस सिद्धान्तके स्वीकार कर लेनेसे फलित होता है कि जिम्मेदारी मत्रि-मडलकी होगी और गवर्नर-जनरल मत्रि-मडलकी सिफारिशोको मानेगा। . . हमारा सपूर्ण उद्देश्य आवश्यक रूपमे यह होना चाहिये कि मत्रि-मडल मिल-जुलकर काम करे और उसे अलग अलग गुटोका बना हुआ न समझा जाय, क्योकि गुटोकी अलग अलग सलाह लेनेसे मत्रि-मडलकी सयुक्त जिम्मेदारीकी भावना तथा एकताका अत आ जायगा। जैसा कि आपने बताया है, यह स्वाभाविक है कि . . . मिश्र सरकार या तो आपसके समझौतेकी प्रक्रियासे काम करती है या बिलकुल काम नही करती। . . . हमने मत्रि-मडलकी अनौपचारिक बैठके रोज करने और उनमे न सिर्फ मत्रि-मडलकी औपचारिक विषय-सूची पर बल्कि किसी भी विभाग-सबधी सारे महत्त्वपूर्ण मामलो पर भी विचार करनेकी प्रथा अपनाई है। इस प्रकार हमारे निर्णयका सबध किसी भी विभागसे क्यो न हो, प्रत्येक महत्त्वपूर्ण निर्णयका विचार हम मिल-जुलकर करते है और वस्तुत वह सम्मिलित निर्णय बन जाता है और उसकी जिम्मेदारी भी सयुक्त हो जाती है। इससे मत्रि-मडलके भीतर गुटबन्दी नही होती और साथ ही समग्र हल अथवा निर्णय करनेमे सहायता मिलती है। यदि कोई ऐसी कार्यविधि अपनाई जाय जिससे मत्रि-मडलके भीतर गुटबन्दीको उत्तेजन मिले और अलग अलग गुटोको अलग अलग काम करनेका प्रोत्साहन मिले, तो वह मत्रि-मडलीय सरकारकी सारी कल्पनाके लिए एक गम्भीर बाधा बन जायगी। हम इसी तरहकी प्रणालीका विकास करना चाहते है और पिछले महीनेमे इस तरहका बहुत-कुछ विकास हमने कर भी लिया है।

इसके उत्तरमे लॉर्ड वेवेल जो एकमात्र आश्वासन दे सके, वह उनके ५ अक्तूबरके छोटेसे पत्रमे इस प्रकार था. "जैसा आपको मालूम है, मै मत्रि-मडलमे हर प्रकारसे एकताको प्रोत्साहन देना चाहता हू। मेरी यह उत्कट इच्छा है कि मत्रि-मडल मिल-जुलकर काम करे और मुझे आशा है कि हमें इसमे सफलता मिलेगी।"

इस प्रकार काग्रेस इस बातको अधिकसे अधिक महत्त्व देती थी कि मत्रि-मंडल सम्मिलित जिम्मेदारीके साथ मिल-जुलकर एक दलकी तरह काम

करे और गवनर-जनरल मत्रि-मडलकी सलाहके अनुसार चले, जब कि वाइस राय वस्तुत अपनेको सरकारका सर्वोच्च अधिकारी समझते थे। और सर्वोच्च अधिकारीके नाते वे यह मानते थे कि सक्रांति-कालमें अंतरिम सरकारके विभिन्न दलोके बीच भी सतुलन बनाये रखनेके लिए मध्यस्थ (अम्पायर) के रूपमें और अपीलके अंतिम न्यायालयके रूपमें हस्तक्षेप करनेका उन्हे अधिकार है। इस धारणाको वे पूरी तरह कभी छोड नही सके। इसी बातसे उनके सारे मतभेद खडे हुए। इनीसे लीगको जिन्दा बढावा मिला और काग्रेसके साथ समझौता करनेकी उसकी सारी तत्परता खतम हो गया।

इस बीच भोपालके नवाब मैदानमें आये। बहुत समयसे गांधीजीके साथ उनके बडे हार्दिक सम्बन्ध रहे थे। १ अक्तूबरको वे गांधीजीसे मिले और उनसे एक योजनाकी चर्चा की। उस योजनाका सार यह था कि जहा तक मुस्लिम जगहोंका सबध है हालके चुनावोंमें मुस्लिम लीगकी भारी जीत हुई है, इसलिए काग्रेसको यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि वर्तमान परिस्थितियोंमें लोकतात्रिक सिद्धातके अनुसार अकेली मुस्लिम लीगको ही सामान्यत भारतके मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करनेका अधिकार है बशर्ते कि उसी दृष्टिसे लीग अन्य सब लोगोंका प्रतिनिधित्व करनेके काग्रेसके अधिकार पर आपत्ति न करे। अन्य सब लोगोंमें ऐसे मुसलमान भी शामिल हैं, जिन्होंने काग्रेसके साथ अपना भाग्य जोड लिया है। काग्रेसका यह भी अधिकार होगा कि इन लोगोंमें से वह जिन्हे ठीक समझे उन्हे सरकारके लिए प्रतिनिधि चुन ले। इसका सीधा अर्थ यह है कि काग्रेस तमाम अल्पसख्यक जातियोंकी जगहोंके लिए और राष्ट्रवादी मुसलमानोंके लिए भी अपने प्रतिनिधि नियुक्त कर सकती है, और लीग स्वय अपने हिस्सेसे बाहर अन्तरिम सरकारमें खाली होनेवाली जगहोंको भरनेके बारेमें कोई निषेधाधिकारकी माग नही कर सकती। बेशक, आपसके समझौतेसे तो हर बात सभव हो सकती है। यदि लीगके सदस्य एक दलकी तरह मिल-जुलकर काग्रेसके साथ काम करें जैसी कि स्पष्ट रूपमें कल्पना की गई है तो सारे निर्णय सयुक्त विचार विमर्शके बाद किये जायगे और कोई मतभेद बाकी नही रह जायगा।

ये सब बातें बहुत स्पष्ट कर दी गई थीं और भोपालके नवाबके साथ हुई बातचीतमें मान ली गई थीं और गांधीजीके मन पर यह छाप पडी थी कि जिस योजनाके सम्बन्धमें वे सहमत हुए हैं उसमें यह बात स्पष्ट रूपमें आ गई है। योजनाका अन्तिम मसौदा तैयार किया गया और ४ अक्तूबरको गांधीजीने उस पर हस्ताक्षर कर दिये। उन्होंने उस दस्तावेजको अन्तिम रूपमें नहीं देखा और यह समझ लिया कि जो बातें उनके मनमें थी वे सब लिखित रूपमें दस्तावेजमें आ गई हैं। परन्तु असलमें वे बातें उसमें आई नही थीं। राज

कुमारी अमृतकौरने और मैंने गाधीजीसे आग्रह किया कि हस्ताक्षर करनेसे पहले वे दस्तावेजको एक वार और देख ले। परन्तु समय थोडा था और गाधीजी थक कर चूर हो गये थे। उन्होने हमारे सुझावको हलके मनसे टाल दिया और कहा, मुझे भरोसा है कि मै अपने-आपको नवावके हाथोमे सुरक्षित छोड सकता हू। नवाव मुझे कभी धोखा नही देगे।

इस योजनाके दो भाग थे .

> १. मुस्लिम लीग अव भारतीय मुसलमानोके भारी वहुमतकी अधिकृत प्रतिनिधि हे। काग्रेस इस वातको चुनौती नही देती और मान लेती है। इस प्रकार और लोकतान्त्रिक सिद्धान्तोके अनुसार आज उसीको भारतके मुसलमानोका प्रतिनिधित्व करनेका निर्विवाद अधिकार है। परन्तु काग्रेस इस वातको स्वीकार नही कर सकती कि अपने सदस्योमे से वह जिन्हे पसन्द करे उन्हे अपने प्रतिनिधि चुननेके उसके अधिकार पर कोई नियत्रण या मर्यादा लगाई जाय।
>
> २ यह स्वीकार कर लिया गया हे कि अन्तरिम सरकारके सारे मत्री समग्र भारतके हितके लिए एक दलकी तरह मिल-जुल कर काम करेगे और किसी भी मामलेमें गवर्नर-जनरलके हस्तक्षेपकी कभी माग नही करेगे।

जिन्नाने योजनाके पहले भागको स्वीकार करते हुए कहा कि जहा तक उनका सवध है, दूसरे भागके लिए अधिक चर्चा और विचारकी जरूरत होगी। किन्तु गाधीजीकी दृष्टिमे इस योजनाका मूल्य दूसरे भागमे था, क्योकि उससे भारतीय प्रश्न तीसरे पक्षके हाथोसे पूरी तरह निकाला जा सकता था और भारतीय स्वय आपसके समझौतेसे उसे निवटा सकते थे। उन्होने भोपालके नवावसे यह कह दिया कि पहले भागकी मेरी स्वीकृति इस शर्त पर निर्भर होगी कि जिन्ना सारी योजनाको स्वीकार करे।

काग्रेस कार्यसमितिके सदस्योको प्रस्तावकी भापा पसन्द नही आई। उन्हे लगा कि जव तक कुछ वाते और स्पष्ट न कर दी जाय, तव तक वे योजनासे वध नही सकते। उन्होने सुझाया कि योजनाके पहले भागमें सुधार करके इतना ओर जोड़ दिया जाय "ऐसे ही कारणोसे लीग काग्रेसको तमाम गैर-मुसलमानोकी और जिन मुसलमानोने काग्रेसके साथ अपने भाग्यको मिला दिया है उनका प्रतिनिधित्व करनेवाली अधिकृत सस्था मानती हे।"

इससे गाधीजीके कान खडे हो गये। वे वोल उठे, "परन्तु यह सव तो योजनाके मसौदेमें लिखित रूपमे मौजूद है।" यह ४ अक्तूवरके तीसरे पहरकी वात थी। थोडी देर वाद कार्यसमिति विखर गई। प्रत्येक सदस्य किसी न किसी कारणसे जल्दीमे था। गाधीजीका शामका समय कार्यक्रमोसे खूव भरा था,

जिससे उन्हें एक क्षणकी भी फुरसत नहीं मिल पाई। ज्यों ही वे अकेले पड़े उन्होंने योजनाकी मूल प्रति मंगाई। तब उन्हें पता चला कि वे किस तरह भारी धोखेमें फंस गये हैं। उस समय रातके १० बजे थे। उन्होंने मुझे तुरन्त भोपालके नवाबके पास यह संदेश लेकर भेजा कि मुझे अपनी भूलका पता लग गया है और उसके लिए प्रारम्भिक और अन्तिम जिम्मेदारी मेरी ही समझी जानी चाहिये। मैं इसका दोष अपने ऊपर ले लूंगा और जरूरत हुई तो दंड-स्वरूप सार्वजनिक जीवनसे भी हट जाऊंगा। परन्तु योजना जैसी है उस रूपमें उसे माननेके लिए कार्यसमितिसे कह कर मैं कांग्रेसके साथ विश्वासघातका अपराधी नहीं बन सकता।

परन्तु कार्यसमितिने लीगके साथ समझौता करनेकी दृष्टिसे निर्णय किया कि गांधीजीकी योजना जैसी है उसी रूपमें उसके दोनों भाग मान लिये जायं और अपना यह निर्णय उसने जिन्नाको बता दिया। ५ अक्तूबरको पंडित नेहरूने भोपालके नवाबके निवास स्थान पर जिन्नासे अत्यंत विस्तृत और उनके खयालसे मित्रतापूर्ण चर्चा की। और ७ ता० को फिर दोनोंके बीच चर्चा हुई। परन्तु ७ अक्तूबरको उन्हें जिन्नाका एक पत्र पाकर आश्चर्य हुआ। वह पत्र न केवल दोनोंकी सारी बातचीतकी भावना और धाराके विरुद्ध था बल्कि उसके साथ जिन्नाने अपनी उन ९ मुद्दोंवाली मांगकी यथातथ प्रति भी भेजी थी — जो उन्होंने वाइसरायके सामने रखी थी और जिसे वाइसरायने अपने ४ अक्तूबरके पत्रमें आंशिक रूपमें स्वीकार कर लिया था। परन्तु कांग्रेस इस शर्त पर उन मुद्दोंको सार रूपमें स्वीकार करनेके लिए तैयार थी कि मुस्लिम लीग गांधीजीकी योजनाके दूसरे भागको मान ले और कांग्रेसके साथ समझौता कर ले, जब कि वाइसरायने उसी बातको ऐसी किसी शर्तके बिना मान लिया था।

गांधीजीने हमेशा इस बातकी तैयारी दिखाई थी कि लीगके साथ सीधा समझौता करके कम भी स्वीकार कर लिया जाय परन्तु ब्रिटिश सत्ताके हाथों अधिक भी न लिया जाय। जिन्नाने जब यह देखा कि कांग्रेससे और अधिक नहीं ऐंठा जा सकता तो उन्होंने कांग्रेसके साथ समझौता न करके वही चीज वाइसरायके हाथों पाना अधिक पसन्द किया। १५ अक्तूबरको यह घोषणा की गई कि वाइसरायके निमंत्रण पर लीगने अन्तरिम सरकारमें सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया है। उसके सदस्य पुनर्निर्मित अन्तरिम सरकारमें लगभग 'राजाका पक्ष' (किंग्स पार्टी) बन गये और वाइसराय उनके नेता बने।

इस प्रकार मुस्लिम लीगके साथ न्यायपूर्ण समझौता करनेका कांग्रेसका प्रयत्न विफल कर दिया गया। भारतवासियोंके लिए यह अनुभव कोई नया नहीं था। सर सेम्युअल होरने १९३२ में यही काम और भी लज्जापूर्ण ढंगसे किया

था (देखिये पृष्ठ १०४)। कांग्रेस कितनी ही उदार रहने और अनुकूल बननेकी कोशिश क्यों न करे, तीसरा पक्ष हमेशा भारतको हानि पहुंचा कर अधिक उदार हो सकता था।

६

गांधीजीकी बुरीसे बुरी शंकाएं लगभग तुरन्त सच्ची पड़ी। जब वाइसरॉयने मुस्लिम लीगके अन्तरिम सरकारमें आनेके निर्णयकी सूचना दी, तो पंडित नेहरूने १४ अक्तूबरको लॉर्ड वेवेलको लिखा :

> हमारे लिए निश्चित रूपमें यह समझ लेना महत्त्वपूर्ण है कि जिन्ना किस तरह सरकारमें सम्मिलित होना चाहते हैं। . . . आपने जो प्रस्ताव रखा था वह यह था कि ५ स्थान . मुस्लिम लीग ले सकती है (और) . . आपने यह स्पष्ट कर दिया था कि मिश्र सरकारको अवश्य एक दलकी तरह मिल-जुलकर काम करना चाहिये। मिश्र सरकार कोई ऐसे प्रतिस्पर्धी गुटोंको मिला देनेकी जगह नहीं हो सकती, जो किसी समान उद्देश्यके लिए सहयोग न दे (और) . . . **ब्रिटिश सरकारके कैबिनेट-मिशनके १६ मईके वक्तव्यकी स्वीकृति . . . मंत्रि-मंडलमें सम्मिलित होनेका आधार माना जाना चाहिये।** (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

जिन्नाके जिस पत्रमें अन्तरिम सरकारमें ५ स्थान देनेका वाइसरॉयका प्रस्ताव स्वीकार किया गया था वह भी ऐसी भाषामें लिखा गया था, जिसमें "अन्तरिम सरकारकी रचनाके आधार और उसकी योजनाको सामान्यतः नापसन्द किया गया था और किये हुए निर्णय" का खंडन किया गया था। "सहयोगके इरादेसे" सरकारमें शरीक होनेकी यह अनोखी प्रस्तावना थी! इससे भावी घटनाएं कैसी होंगी, इसका संकेत मिलता था। लीगने जो नाम पसन्द किये थे, उनसे भी यही सूचित होता था। वाइसरॉयको अपनी शंकायें बताते हुए पंडित नेहरूने लिखा :

> मुस्लिम लीगकी ओरसे प्रस्तावित नामों पर हमने कोई आपत्ति नहीं की है। . परन्तु मेरे खयालसे आपको व्यक्तिगत रूपमें और निजी तौर पर यह बता देना मेरा कर्तव्य है कि मुस्लिम लीगने जो चुनाव किया है, उस पर मुझे गहरा अफसोस है। इस चुनावसे ही पता चलता है कि लीगकी इच्छा सहयोगसे काम करनेकी अपेक्षा संघर्ष करनेकी अधिक है।[१२]

४ दिन बाद अन्तरिम सरकारके लिए मुस्लिम लीग द्वारा मनोनीत एक सदस्य गजनफर अली खाने लाहौरमें विद्यार्थियोंके सामने एक भाषण दिया।

उससे इस विषयमें कोई संदेह बाकी नहीं रह गया कि अन्तरिम सरकारमें मुस्लिम लीग किस आशयसे आना चाहती है। अन्तरिम सरकारको 'सीधी कारवाईकी मुहिमका एक मोर्चा' बताते हुए उन्होंने कहा 'हम पाकिस्तानके अपने प्रिय लक्ष्यके लिए लड़नेके खातिर पैर जमानेका स्थान बनानेको अंतरिम सरकारमें जा रहे हैं। ... अन्तरिम सरकार सीधी कारवाईकी मुहिमके हमारे मोर्चोंमें से एक है।' यह एक सर्वथा अनुचित रुख था। यदि पाकिस्तानका प्रश्न लड़कर हल करना भी था, तो उसके लिए उचित स्थान संविधान सभा थी न कि अन्तरिम सरकार। अन्तरिम सरकारका काम तो नया संविधान बने तब तक कार्यक्षमता, निष्पक्षता और सरलतासे देशका प्रशासन चलाना था।

थोड़े ही समय बाद पंडित नेहरू दिल्लीसे सीमाप्रान्तके दौरे पर चल गये। पंडित नेहरूकी अनुपस्थितिमें सरदार पटेलकी तरफसे वाइसरायके नाम एक पत्रका जो मसौदा गांधीजीने २० अक्तूबरको तैयार किया, वह इस प्रकार था

> क्या अंतरिम सरकारको राजनीतिक दलबंदी और षड्यंत्रोंका अखाड़ा और विभाजनकी वही मेख ठोकनेका साधन बनाना है, जिसे दीर्घकालीन व्यवस्थाने सदाके लिए वापस ले लिया है और उसके स्थान पर समूह रचना (ग्रूपिंग) की व्यवस्था की गई है?
>
> यह बिलकुल स्पष्ट मालूम होता है कि मिश्र सरकारके अस्तित्वमें आनेसे पहले और विभागोंके फिरसे बंटनेके पहले (गजनफर अलीका) भाषण तो वापस लिया ही जाना चाहिये। साथ ही लीगकी कौंसिलको स्पष्ट रूपसे घोषणा कर देनी चाहिये कि उसने दीर्घकालीन व्यवस्थाको स्वीकार कर लिया है तथा लीगकी कार्यसमितिका मूल प्रस्ताव मंत्रिमंडलके वर्तमान सदस्योंको दिया जाना चाहिये। (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)
>
> मुझे विश्वास है कि यदि अन्तरिम सरकारको कार्यक्षम रूपमें चलाना है और वर्तमान कठिनाइयोंको दूर करना है तो आप स्वयं उपरोक्त बातें पूरी होनेकी आवश्यकताको स्वीकार करेंगे।

परन्तु न तो गजनफर अलीका भाषण वापस लिया गया और न आगरा कौंसिलकी बैठकमें कैबिनेट मिशनकी योजना स्वीकार की गई। सरहदके दौरेसे लौटकर पंडित नेहरूने २३ अक्तूबरको वाइसरायको फिर लिखा और उन्हें याद दिलाया कि किस आधार पर कांग्रेसने मुस्लिम लीगको अन्तरिम सरकारमें आना स्वीकार किया था

> आप जानते हैं कि अस्पष्ट छोड़ गये किसी मामले पर भूतकालमें किस प्रकार झगड़े और कठिनाइयां पैदा हुई हैं। यह बहुत ही दुर्भाग्य

पूर्ण होगा, यदि हम इस नये प्रयोगको आरम्भ करनेसे पहले स्थितिको पूरी तरह स्पष्ट नही कर लेगे।

आपके साथ मेरे पत्र-व्यवहारमे तथा मुझे और मि० जिन्नाको लिखे गये आपके पत्रमे **यह स्पष्ट कर दिया गया था कि मुस्लिम लीगके अन्तरिम सरकारमे शरीक होनेका अर्थ यह है कि उसने दीर्घकालीन योजनाको अनिवार्य रूपमे स्वीकार कर लिया है।** मुस्लिम लीगने मूलत इस योजनाको अस्वीकार करनेका प्रस्ताव पास किया था, इसलिए मुस्लिम लीगकी कौसिल विधिपूर्वक उसके स्वीकारका निर्णय करे यह जरूरी है। फिर भी यह स्पष्टता की गई थी कि लीगकी कार्यकारिणी समिति स्वय इस योजनाकी स्वीकृतिकी सिफारिश करेगी और वादमे तुरन्त विधिवत् निर्णय कर लिया जायगा। इसी आधार पर हम आगे वढे थे। (मोटे टाइप मैने किये है।)

अव यह किसी भी तरह स्पष्ट नही है कि दीर्घकालीन व्यवस्थाके वारेमे मुस्लिम लीगकी क्या स्थिति है। जहा तक हम जानते है, मुस्लिम लीगकी कौसिलकी वैठक नही वुलाई गई है। मुझे (पिछले दिनकी वातचीतमे वाइसरॉयने) कहा था कि मि० जिन्ना कुछेक आश्वासन चाहते है। इसका अर्थ यह हुआ कि मि० जिन्ना और उनकी कार्यसमितिको भी उस समय तक १६ मईका वक्तव्य स्वीकार नही है जव तक कि कोई और वात न हो जाय।

पडित नेहरूने माग की कि विभागोका वटवारा होनेसे पहले दो वाते स्पष्ट हो जानी चाहिये। दूसरा कदम पहले कदमसे पहले नही उठाया जा सकता था, क्योकि दूसरा पहलेका अनुगामी था। वे दो वाते ये थी (१) लीगको दीर्घकालीन योजना स्वीकार करनी चाहिये और लीगकी कौसिलकी वैठकके लिए कोई तारीख निश्चित हो जानी चाहिये; और (२) यह भी स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये कि क्या अन्तरिम सरकारके प्रति लीगका दृष्टिकोण वही है जो गजनफर अली खा और लियाकत अली खाके भाषणोमे व्यक्त हुआ है "यह और भी ज्यादा जरूरी है, क्योकि मुस्लिम लीग काग्रेसके साथ समझौता करनेके वाद अतरिम सरकारमें सम्मिलित नही हो रही है। . . हम कमसे कम यह आशा अवश्य रख सकते है कि मुस्लिम लीगकी ओरसे एक स्पष्ट वक्तव्य दे दिया जाय कि अन्तरिम सरकारमे सम्मिलित होनेके पीछे उसका क्या आशय है और यह कि दीर्घकालीन योजनाको उसने स्वीकार कर लिया है।"[११]

यह विचित्र मालूम होता है कि काग्रेसके नेताओने जितनी वार वाइसरॉयसे यह माग की कि अतरिम सरकारमे सम्मिलित होनेसे पहले लीगको ऐसा

स्पष्ट वक्तव्य देना चाहिये कि उसने दीर्घकालीन योजना स्वीकार कर ली है उतनी बार वाइसरायने इसके बदलेमें लीगकी ओरसे बिना हस्ताक्षरका एक चेक कांग्रेसके पास भेज दिया और कांग्रेस इस बातकी परीक्षा किये बिना कि चेक पर उचित ढंगसे हस्ताक्षर किये गये हैं या नहीं उसे स्वीकार करके सन्तोष मानती रही।

पंडित नेहरूके नाम लॉर्ड वेवेलका पत्र २३ अक्तूबर, १९४६

मैंने मि० जिन्नाको स्पष्ट कर दिया है कि मुस्लिम लीगका अन्तरिम सरकारमें प्रवेश इस शर्त पर आधार रखता है कि उसने केबिनेट-मिशनकी १६ मईकी योजनाको स्वीकार कर लिया है और यह भी कह दिया है कि इस स्वीकृतिके लिए उन्हें अपनी कौंसिलकी बैठक जल्दी ही बुलानी होगी।

जैसा मैंने आपको बता दिया है, मि० जिन्नाने मुझे इसका विश्वास दिलाया है कि मुस्लिम लीग अन्तरिम सरकारमें और संविधान-सभामें सहयोग देनेके इरादेसे जायेगी।

उत्तरमें पंडित नेहरूने लिखा "मुझे इस बातका प्रसन्नता है कि मि० जिन्नाने आपको यह विश्वास दिला दिया है कि मुस्लिम लीग सहयोगके इरादेसे अन्तरिम सरकार और संविधान-सभामें आ रही है और यह भी कि मुस्लिम लीग अन्तरिम सरकारमें इस शर्त पर आयेगी कि उसने केबिनेट मिशनकी १६ मईकी योजनाको स्वीकार कर लिया है। आपने तो मि० जिन्नाके सामने यह स्पष्ट कर दिया है, परन्तु उतना ही स्पष्ट यह नहीं है कि इस विषयमें मुस्लिम लीगका क्या मत है।'' (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

सीमाप्रान्तके दौरे पर रवाना होनेसे पहले पंडित नेहरू १५ अक्तूबरको वाइसरायसे मिले थे। ऐसा लगता था कि वाइसरायकी मुख्य चिन्ता कांग्रेस और लीगके बीच विभागोंके न्यायपूर्ण बंटवारेकी थी। पंडित नेहरूने विभागोंकी पुनर्व्यवस्थाके सम्बन्धमें वाइसरायका प्रस्ताव माननेमें कांग्रेसकी जो कठिनाइयां थीं उन पर प्रकाश डालनेवाला एक पत्र उसी दिन वाइसरायको लिखा। उन्होंने अपने पत्रमें वाइसरायको यह भी बताया कि कांग्रेसके तीन सदस्य लीगके सदस्योंके लिए जगह खाली करनेके खातिर इस्तीफे दे देंगे (कांग्रेसने लीगके लिए दो मुस्लिम स्थान तो पहलेसे ही रिक्त रखे थे) और इस आशयकी घोषणा भी तुरन्त की जा सकती है परन्तु वास्तविक पुनर्व्यवस्था और बंटवारेकी तफसील तब तक मुलतवी रखी जाय जब तक कि वे अपने सीमाप्रान्तके दौरेसे लौट न आयें।

परन्तु लॉर्ड वेवेल अन्तरिम सरकारमें लीगके प्रवेशके साथ लगी हुई शर्तें पूरी करानेके मामलेमे नरम रुख दिखाते थे, जब कि विभागोके बटवारेके सम्बन्धमें उनका आग्रह अपने साथियोके प्रति अशिष्टताकी सीमा तक पहुच जाता था। उन्होने २३ अक्तूबरको एक पत्रमे पडित नेहरूको लिखा . "जैसा मैंने आपको बताया है, मेरा विचार है कि विदेशी मामलोका विभाग, गृह-विभाग और प्रतिरक्षा-विभाग — इन तीन विभागोमे से किसी एकको मुस्लिम लीग अधिकारी है। यदि आप मुझे बता दे कि आपकी रायमे इनमे से कौनसा विभाग मुस्लिम लीगको देना चाहिये, तो मै आपका आभारी हूगा।" पडित नेहरूके यह कह देनेके बावजूद कि "इन तीनो विभागोमे परिवर्तन करना अनुचित होगा," इस तरहका आग्रह करके तो वाइसरॉयने हद ही कर दी। पडित नेहरूने उसी दिन उत्तर दिया, "हमारा विचार है कि यह एक बिलकुल गलत कदम होगा और उसके अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम होगे, यदि प्रतिरक्षा और गृह-विभागोमे कोई परिवर्तन किया जायगा।" वास्तवमें पडित नेहरूने वाइसरॉयसे कह भी दिया कि सरदारके विभागको छेडा गया, तो मन्त्रिमडलमे रहनेकी अपेक्षा वे त्यागपत्र दे देंगे: "यदि मुस्लिम लीग सरकारकी रचनाके समय शामिल हो जाती, तो उस समय कुछ भी कर लिया जाता। परन्तु इस समय सरदार पटेलको अपना विभाग छोड़नेके लिए कहना उनके प्रति अत्यन्त अशिष्टताका कार्य होगा। मुस्लिम लीगके अधिकृत मुखपत्रने उन्हे अपने आक्रमणका विशेष लक्ष्य बनाया है, इसलिए यह और भी अशोभनीय हो जाता है कि हम उन्हे यह विभाग छोडनेको कहे। सच तो यह है कि यदि उनसे ऐसा करनेको कहा जायगा, तो वे सरकारमें रहनेकी भी परवाह नही करेगे।"[१५]

कलकत्ता और पूर्व बगालमें जो घटनाए हो चुकी थीं उन सबके बाद (देखिये अध्याय ११) तथा लियाकत अली खा और गजनफर अलीके भाषणोके बाद तो उपरोक्त दोनो विभागोमें से कोई भी एक विभाग मुस्लिम लीगको सौंप देनेसे देशभरमें एक मनोवैज्ञानिक उल्कापात हो जाता. "विदेशी मामलोके विभागके बारेमें भी ऐसे ही विचार उत्पन्न होते हैं, खास तौर पर कबाइली इलाकेमे मेरे हालके दौरेके बाद और वहाके मेरे अनुभवके बाद — जिसका सारे देशमें लोगो पर बडा जबरदस्त असर हुआ है।"[१६] साथ ही, "यह हमें अत्यावश्यक प्रतीत होता है कि विभागोके प्रश्नका विचार करनेसे भी पहले दूसरी बातोका स्पष्टीकरण हो जाना चाहिये।"[१७] अन्तमें २४ अक्तूबरको पडित नेहरूने वाइसरॉयको लिखा .

> मैंने अपने साथियोंसे परामर्श किया है। . . . यदि हमारी इच्छाके विरुद्ध हम पर कोई निर्णय लादा जायगा, तो हम सरकारम

नहा रह सकत । यदि व गूढ़ाथ और परिस्थितिया न होती, जिनका मन पहले ही उल्लेख कर दिया है और जिन्होने हमें विवश कर दिया है तो हम विभागोंके बटवारेको महत्त्व न देते।

दो महीने पहले मुझे अन्तरिम सरकार बनानेको कहा गया था और मने वह जिम्मेदारी ले ली थी। यह उन सारी चर्चाओं और वार्ताओके परिणाम-स्वरूप किया गया था जो सम्राटकी सरकारकी सहमतिसे पहले हुई थी। अब एक ऐसा सकट उपस्थित हो गया है जिसके कारण हमारा त्यागपत्र और इस सरकारका अन्त हो रहा है। इसलिए मेरे विचारसे सम्राटकी सरकारको सारी घटनाओंकी जानकारी दे देनी चाहिए।

लार्ड वेवेल इसके लिए तैयार नही थे। उनकी एकमात्र इच्छा लीगको अन्तरिम सरकारमें लानेकी थी। इसलिए विभागोंके प्रश्न पर उन्होंने हार मान ली और कांग्रेस पदारूढ बनी रही। परन्तु दूसरे मुद्दे पर कांग्रेस अपने आग्रहको ठेठ तक पूरा नही करा सकी। सत्ताकी राजनीतिकी दृष्टिसे शायद यह कांग्रेसकी जीत थी। कांग्रेसी नेताओंका खयाल था कि कुछ विभागोंके उनके पास रह जानेसे उन्हे ऐसा राजनीतिक लाभ होता है जिसे वे छोड नही सकते। किन्तु यह सौदा उन्हे महगा पडा। गाधीजीके लिए बात दूसरी ही थी। वे बुनियादी सिद्धान्तोको पहला स्थान देते थे। दूसरे मुद्दे पर जिनका सम्बन्ध एक बुनियादी सिद्धान्तसे था त्यागपत्र देनेके लिए कही अधिक बलवान कारण था। यदि वे ऐसा करते तो वाइसरायको झुकना पडता और लीग कांग्रेसके साथ समझौता करके ही अन्तरिम सरकारमें आती। अन्यथा भी अन्तमें कांग्रेसका लाभ ही होता। खैर लीग अन्तरिम सरकारमें आ गई और इस बातका स्पष्ट वचन दिये बिना ही वहा रही कि उसने दीर्घकालीन योजनाको स्वीकार कर लिया है। इसका परिणाम अत्यन्त दुखद हुआ।

७

वस्तुत तो लीगके अन्तरिम सरकारमें प्रवेशका करनेका वैसा ही स्वागत किया जाता जैसा कहावतके अनुसार काले बादलोंमें विद्युत रेखाका होता है। परन्तु उसके प्रवेशके ढगने अच्छाईकी सारी सभावनाओको नष्ट कर दिया और उस प्रवेशको शकास्पद नीतिमत्ताकी पद्धतिमें बदल दिया। जैसा हम देख चुके है गाधीजी बराबर लीगके इस अधिकारको अस्वीकार करते रहे थे कि उसके सदस्योंकी सूचीमें मुसलमानोंके सिवा अन्य किसीको सम्मिलित किया जाय, क्योकि उसके द्वार सभी गैर मुस्लिमोंके लिए बद थे। परन्तु ऐसा लगता है कि कांग्रेसके नेताओंने अपने शुद्ध राजनीतिक दृष्टिकोणसे इस केवल

व्योरेकी वात समझ लिया । गाधीजीका आग्रह था और कार्यसमितिमे यह स्वीकार कर लिया गया था कि इस वातको अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जायगा। परन्तु काग्रेसके नेताओने इस मुद्दे पर काफी जोर नही दिया। नतीजा यह हुआ कि जिन्नाने लॉर्ड वेवेलसे लिखित आश्वासन प्राप्त कर लिया कि लीग अपने हिस्सेके स्थानोमे जिसे चाहे उसे मनोनीत करनेके लिए स्वतत्र है। उसके मनोनीत सदस्योमे चार मुसलमान थे और एक परिगणित जातिके वगाली सदस्य श्री जोगेन्द्रनाथ मडल थे। इससे सवको आश्चर्य हुआ।

१६ अक्तूवरके अपने प्रार्थना-प्रवचनमे गाधीजीने यह कहा . "मैने ऐसी आशा रखी थी कि अन्तरिम सरकारमे मुस्लिम लीगका प्रवेश एक शुभ शकुन होगा।" आप कह सकते है कि मेरे जैसे आदमीको प्रसन्न होना चाहिये कि एक और जगह किसी हरिजनको मिल गई। परन्तु यदि मै ऐसा कहू तो अपने आपको धोखा दूगा और जिन्ना साहवको भी धोखा दूगा । उन्होने यह कह दिया है कि मुसलमान और हिन्दू दो राष्ट्र है, और लीग एक शुद्ध मुस्लिम साम्प्रदायिक सस्था है। "तव वह किसी हरिजनको अपना प्रतिनिधि कैसे मनोनीत कर सकती है?" मुझे भय है कि मन्त्रि-मडलमे आनेका लीगका सारा तरीका सीधा नही रहा।

राजनीतिक आधारके लिए नैतिक आधारका सौदा करके काग्रेसके नेताओने अपनी एकमात्र शक्ति — नैतिक शक्ति — गुमा दी। उसके वाद काग्रेसको एकके वाद एक प्रश्न पर हार खानी पडी और अन्तमे अखड भारतके प्रश्न पर भी उसे हार स्वीकार करनी पडी। लीग जोगेन्द्रनाथ मडलका काग्रेसके विरुद्ध और वादमे गाधीजीकी नोआखालीकी शान्ति-यात्राके विरुद्ध उपयोग करती रही। अन्तमे ४ वर्ष वाद अल्पसख्यकोके प्रति अपने नये स्वामियोके व्यवहारसे अपमानित होकर उनकी आखे खुली और पाकिस्तानमे अपने ही समुदायके प्रति उन स्वामियोका व्यवहार देख कर उन्हे खुद भी अन्य हजारो लोगोके साथ भाग कर भारतीय सघमे शरण लेनी पडी।

इस सारे प्रकरणका सवसे विस्मयकारी भाग यह था कि मुस्लिम लीगसे उसका सीधी कार्रवाई सम्वन्धी निर्णय वदलनेके विषयमे तथा १६ मईकी योजनाकी स्वीकृतिके विषयमे पहलेसे विधिवत् लिखित गारटी लिये विना ही वाइसरॉय उसे अन्तरिम सरकारमे लाये थे। इसके वजाय वाइसरॉयने मौखिक वचन पर ही भरोसा कर लिया, जो उनके कथनानुसार जिन्नासे उन्हे मिला था और जिससे वादमे जिन्नाने साफ इनकार कर दिया। ब्रिटिश लोकसभामे मार्च १९४७ मे इस अटपटे घोटालेका सर स्टैफर्ड क्रिप्सने जो स्पष्टीकरण किया, वह यह था कि मुस्लिम लीगके प्रतिनिधियोको वाइसरॉयकी कार्यकारिणीमें सम्मिलित होनेका निमत्रण लीगके सविधान-सभामें भाग लेनेके

आधार पर दिया गया था, 'इसलिए सम्बन्धित अधिकारियोंने यह मान लिया था कि चूंकि उसने (मुस्लिम लीगने) इसका खंडन नहीं किया है इसलिए वह इससे बंधी हुई रहेगी।" परन्तु ऐसा मालूम होता है कि जिन्ना सर ह्युडिब्रासके इस कथनसे सहमत थे

जो दिलाता है शपथ लेता वही,
वह न सुविधा वश कि जिसने ली यही
दोष उसके माथ फिर कैसे मढ़ें
वह स्वयं जिसने शपथ ली ही नहीं?

यदि सम्बन्धित लोगोंने अंध विश्वास करके धोखा खाया तो दोष उन्हींका था। खरीदारको सावधान रहना चाहिये। अन्तमें जिन्नाने मिशनके साथ सदाके लिए अपना सम्बन्ध तोड़ लिया। २१ नवम्बर १९४६को उन्होंने एक आदेश निकाला कि मुस्लिम लीगका कोई प्रतिनिधि संविधान-सभामें भाग नहीं लेगा और मुस्लिम लीगकी कौंसिलका २९ जुलाईका (कैबिनेट मिशनकी योजनाकी स्वीकृति वापस लेनेवाला) बम्बईवाला प्रस्ताव वैसा ही कायम है।'

यह सबको विदित था कि सम्राटकी सरकार यह चाहती थी कि नेहरू मंत्रि-मंडलको वास्तविक मंत्रि-मंडलके रूपमें काम करने दिया जाय। यदि मुस्लिम लीग पंडित नेहरूके निमंत्रण पर अन्तरिम सरकारमें आती, जैसा कि सामान्यतः होना चाहिये था तो वह कांग्रेसके साथ सन्तोषजनक समझौता करके आती और उसका परिणाम यह होता कि मिश्र सरकार एकरागत और सफलतापूर्वक काम करती। तीसरे पक्षके हस्तक्षेपसे अन्तरिम सरकारमें एक ऐसा दल आ गया, जिसका तोड़फोड़का इरादा जग-जाहिर था। इन लोगोंने आते ही सम्मिलित जिम्मेदारीके सिद्धान्तका खुल्लमखुल्ला खंडन शुरू कर दिया। लीगी मंत्री अपने विभागों-सम्बन्धी सारे मामले पंडित नेहरूको एक ओर रख कर सीधे वाइसरायके पास ले जाने लगे और अन्तरिम सरकारको उन्होंने साम्प्रदायिक संघर्षका अखाड़ा बना दिया। जिन्नाके निजी राजदूत इस्पहानीने अमरीकामें फोरमके समक्ष दिये गये एक वायु-प्रवचनमें कहा '[illegible] सरकारमें मुख्यतया इसलिए आई है कि सरकारी तंत्रको कमसे कम [illegible] रूपमें अपने राजनीतिक विरोधियोंके एकाधिकारसे बचाये। लीगके [illegible] सरकारमें भाग लेनेका [illegible] अर्थ यही है कि पाकिस्तानकी लड़ाई अब [illegible] सरकारके भीतर और बाहर दोनों जगह लड़ी जायगी।' " जिन्नाने कहा कि [illegible] यहां एकमात्र मुस्लिम हितोंके 'प्रहरी' बन कर रहें। गवर्नर [illegible] आने तो दंगोंमें जिस हिंसाकांडका श्रीगणेश हो गया था उस पर [illegible] प्रकट कर दिया [illegible] गृहयुद्ध कांग्रेसी सरकारके स्थापित होनेके

बाद देशके अनेक भागोमे जो उपद्रव हुए है, उनसे यह बात सिद्ध हो गई है . . कि १० करोड़ भारतीय मुसलमान किसी ऐसी सरकारको नही मानेगे, जिसमे उनके सच्चे प्रतिनिधि न हो।"[११] और इस प्रकार जिन्होने खुले तौर पर देशमे हिसाका साम्राज्य फैलानेका इरादा जाहिर किया था, उन्ही लोगोके हाथोमें अन्तरिम सरकारमे सत्ताकी बागडोर आ गई।

जिस दिन लीग वाइसरॉयकी प्रेरणा और आमत्रण पर अन्तरिम सरकारमे प्रविष्ट हुई, उसी दिन अखड भारतकी लडाई हमेशाके लिए हाथोसे निकल गई। सम्राट्की सरकारने स्पष्ट सूचनाये दे दी थी कि पडित नेहरूको अन्तरिम सरकार बनानेके लिए कहा गया है, इसलिए मन्त्रि-मडल प्रणालीके अनुसार लीगको सरकारमे सम्मिलित करनेकी आगेकी कार्रवाई सर्वथा उन्ही पर छोड देनी चाहिये। कैबिनेट-मिशनके कुछ सदस्योने बादमे आश्चर्य प्रगट किया बताते है जब उन्हें यह मालूम हुआ कि लीग तो वाइसरॉयके द्वारा अन्तरिम सरकारमे लाई गई थी। यह उस समय कैसे हुआ और इस तरहकी कार्रवाईमे काग्रेस चुपचाप कैसे सहमत हुई—ये ऐसे प्रश्न है, जिन पर भावी इतिहासकार प्रकाश डालेगे।

"सरकारके भीतर रहकर सीधी कार्रवाई" के अगके रूपमे मुस्लिम लीगके प्रतिनिधियोने अपने अधीन विभागोमे तमाम महत्त्वपूर्ण पदो पर अपनी पसन्दके मुसलमान रखनेका काम व्यवस्थित रूपमे आरम्भ कर दिया और मन्त्रि-मडलके सचिवालयमें जगह जगह 'अन्दरकी बात जाननेवाले' (सेल्स) बैठा दिये गये। सरकारमे मुस्लिम लीगसे सहानुभूति रखनेवाले और उसके एजेन्ट 'पाचवी कतार' का काम करने लगे और प्रशासनकी एकता तथा कार्यक्षमतामे बाधा डालने लगे। इस प्रकार जिस विपत्तिके विरुद्ध गाधीजीने कैबिनेट-मिशनको चेतावनी दी थी और जिस विपत्ति—अपनी पसन्दकी सरकार देश पर जबरदस्ती थोपकर बेमेल मिश्रण उत्पन्न करने—से बचनेका अन्तमे मिशनने भी निश्चय कर लिया था, वह वाइसरॉय और ब्रिटिश कर्मचारियोकी चलाई हुई नीतिके कारण देश पर आखिर आ गई।

८

'भारतकी स्वाधीनता' ब्रिटिश पक्षके प्रतिनिधि वाइसरॉयके, काग्रेसके और मुस्लिम लीगके बीच एक समान शब्द-प्रयोग था। परन्तु प्रत्येकके लिए उसका अर्थ अलग अलग था और इसलिए वह अतिशय सदिग्ध शब्द-प्रयोग बन गया। अग्रेजोके लिए उसका यह अर्थ था कि कानूनी स्वाधीनता उनकी लगाई हुई कुछ शर्तोंके पूरा होनेके बाद आयेगी। तब तक ब्रिटिश सेनाए भारत पर अधिकार जमाये रहेंगी और दोनो दलो पर अग्रेजोकी इच्छा लादी जाती रहेगी। मुस्लिम लीगके लिए स्वाधीनताका अर्थ यह था कि

देशका विभाजन पहले हो और दोनों भागों तथा दोनों 'भारतीय राष्ट्रों' के लिए स्वाधीनता बादमें हो। कांग्रेसके लिए स्वाधीनताका अभिप्राय यह था कि समस्त भारतके लिए बिना किसी शर्तके स्वतंत्रता हो — जिसमें राजाओं द्वारा शासित देशी राज्य भी सम्मिलित हों।

लार्ड वेवेलकी तरफसे यह दलील दी गई है कि वे भारतकी एकताके पक्षमें थे और इस कारण जिन्ना उनका तिरस्कार करते थे। यह हो सकता है। इसी प्रकार लार्ड लिनलिथगो भी भारतकी भौगोलिक एकता की बातें कहते थे और सर सेम्युअल होर तथा ब्रिटिश अनुदार दलके लोग उनसे भी पहले यही बात कहते थे। परंतु उनका भारत वह भारत था, जो ब्रिटिश स्वार्थोंके लिए अंग्रेजोंके पिट्ठुओंके लिए और ब्रिटिश राष्ट्र-मंडलके लिए सुरक्षित कर दिया गया हो। यदि इन शर्तों पर सारा भारत प्राप्त न किया जा सकता हो तो भारतके टुकड़े करनेके लिए वे कृतनिश्चय थे।

२५ अप्रैल १९४६ को भारतीय नेताओंके साथ कैबिनेट मिशनकी पहली भेंटके बाद श्री ए० वी० एलेक्जेंडरने मिशनके प्रतिनिधियोंके अनौपचारिक सम्मेलनमें यह भय प्रगट किया था कि अखंड भारतमें मुसलमानोंके लिए पर्याप्त संरक्षण प्राप्त करना कठिन होगा। इस पर सर स्टेफर्ड क्रिप्सने सुझाव दिया था कि मौजूदा संविधानके अधीन यदि कांग्रेस अन्तरिम सरकारकी रचनाके बारेमें सम्मत न हो, तो जिन्ना जिसकी मांग करते हैं उसमें से केवल पंजाबके अम्बाला विभाग और पश्चिम बंगालको छोड़कर ब्रिटिश सरकारको मध्यम आकारका पाकिस्तान बना देना चाहिये। अंग्रेजोंको शेष भारत खाली कर देना चाहिये और करार करके पाकिस्तानमें रहना चाहिये। ऐसा मालूम होता है कि वाइसराय ऐसी सम्भावनाको बिल्कुल अस्वीकार नहीं करते थे।

जिन्ना कभी कभी कैबिनेट मिशनके सदस्योंको घबराहटमें डाल देते थे। वे उनके उद्धत शिशु थे। वे कई बार उन्हें सिरदर्द पैदा करा देते थे। फिर भी वे उनके लाडले थे। जिन्नाके प्रति उनका रवैया ऐसा था जैसा माता-पिताका अपने बिगड़े हुए बच्चेके प्रति होता है। लार्ड वेवलने अपने मनमें समझ लिया था कि न्याय लीगके पक्षमें है और यदि लीगको सरकारमें लाया जा सके — फिर वह किसी भी तरह और किसी भी शासन पर क्यों न हो — तो उससे भारत रक्तपातसे बच जायगा। इस नीतिकी कीमत भारतको एक गृह युद्धकी अपेक्षा भी अधिक मारकाट रक्तपात और अमानुषिकताके अनुभवके रूपमें चुकानी पड़ी। नवम्बर १९४६ में भारतके उपसचिवने ब्रिटिश लोकसभामें यह घोषणा की कि १ जुलाईसे ३० अक्तूबर४६ तक भारतमें साम्प्रदायिक लड़ाइयोंके कारण — सरकारी रिपोर्टोंके अनुसार कम-से-कम ५०१८ आदमी मारे गये और १३३२० घायल हुए। इस

संख्यामें पूर्व बगाल और बादमें विहारकी मारकाटमे मारे गये अथवा घायल हुए लोगोकी सख्या शामिल नही थी।

लॉर्ड वेवेल बडे गौरवशाली पुरुष थे। वे मितभाषी थे। उनका हृदय शुद्ध था और वे प्रेमालु थे। उनका व्यक्तित्व सर्वथा प्रीतिपात्र था। उनकी सचाई असदिग्ध थी। नि सन्देह वे भी अपने ढगसे भारतको स्वतत्रताके मार्ग पर अग्रसर होनेमे सहायता देना चाहते थे। उनमे अद्भुत वफादारी थी, जिसके कारण कई बार वे दूसरे लोगोका दोप अपने कधो पर उठा लेते थे। उनका व्यवहार एक योद्धाको शोभा देनेवाला था, जो बहुत प्यारा लगता था। परन्तु उनमे ऐतिहासिक दृष्टि और कल्पनाका सर्वथा अभाव था और उनका एक ही दिशामे चलनेवाला योद्धाका मस्तिष्क कानूनी और वैधानिक औचित्यकी बाते कम समझता था तथा उनकी परवाह तो वह और भी कम करता था। ऐसा लगता था कि इन बातोसे वे घबरा उठते थे और कभी कभी चिढ भी जाते थे। भारतके अग्रेज कर्मचारियोने उनकी भलमनसाहत और मर्यादाओका भी अपनी योजनाए पूरी करनेमे पूरा उपयोग किया। नतीजा यह हुआ कि भारतको एक अभूतपूर्व करुण घटनाका शिकार होना पडा और अन्तमे यहासे उन्हे वापिस बुला लेना जरूरी हो गया।

ग्यारहवां अध्याय

तूफान फट पड़ा

१

मुस्लिम लीगका कलकत्तेवाला 'सीधी कार्रवाई' का कार्यक्रम सोचा हुआ परिणाम न ला सका। उसने पलट कर उन्हीं लोगोंको अपना शिकार बनाया जिन्होंने उसको आरम्भ किया था। अब यह नारा उठा कि कलकत्तेका बदला लिया जाना चाहिये। १० अक्तूबर १९४६ को नोआखालीमें नरककी पाशविक लीलाका ताण्डव नृत्य हुआ। परन्तु लगभग १ सप्ताह तक बाहरकी दुनियाको उसका कुछ भी पता नहीं चलने दिया गया।

भूगर्भ शास्त्रकी दृष्टिसे गंगाके मुहानेमें बसा सबसे तरुण जिला नोआखाली है और वह पूर्व बंगालके चटगांव विभागका दक्षिणी-पश्चिमी भाग है। वहांकी मुख्य उपज चावल सन नारियल और सुपारी है। वहां भारी वर्षा होती है। सारे जिलेमें खालों या नहरोंका उलझा हुआ जाल बिछा हुआ है जिससे खालोंमें छह महीने परिवहनका सस्ता साधन मिल जाता है। संचारके दूसरे साधन अच्छी दशामें नहीं हैं। रेलवे सम्बन्ध कहीं कहीं है और मोटरकी अच्छी सड़कें क्वचित ही पाई जाती हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य अद्भुत है। सारा प्राकृतिक दृश्य एक मुस्कुराता हुआ उद्यान दिखाई देता है। नारियल और सुपारीके आकाशको छूनेवाले घने झाड़ोंके सिरे आपसमें मिल कर एक हो जाते हैं और उनकी एक कुदरती छत्री-सी बन जाती है। इस घनी छत्रीको मध्याह्नका सूर्य भी कठिनाईसे भेद सकता है। घनी अमराइयोंमें छिपी कोयल अपनी आवेगपूर्ण और शोकपूर्ण कूकोंसे उनके भयंकर मौनको भर देती है। केले और पपीते लीची और अनन्नास अत्यन्त मीठे कटहल और आम तथा स्फूर्तिदायक दूधसे भरे नारियल — खट्टे फलोंका तो कोई पार ही नहीं है — आदि फल विपुल मात्रामें वहां पैदा होते हैं। और ये फल लगभग प्रत्येक व्यक्तिके लिए सुलभ हैं। सुगंधित वनस्पतियों तथा सागभाजीकी विविधताका कोई अन्त नहीं है। उनका सौरभ और उनका आकार अद्वितीय होते हैं और वे कमसे कम मेहनतसे उत्पन्न की जा सकती हैं। लगभग आधे दर्जन प्रकारके कन्द-मूल वहां विपुल मात्रामें होते हैं। मछलियों और रंग बिरंगे कमलोंसे भरे तालाब पानीसे भरे सनके खेतोंके तरल आईनेमें प्रतिबिम्बित उज्ज्वल आकाशके खण्ड तथा उनके आसपास — शरद ऋतुके निरभ्र आकाशके नीचे — सीधे खड़े सनके पौधोंकी हरित छायाएं ऐसा अद्भुत

सौन्दर्य प्रस्तुत करती है, जिसे एक बार देखनेके वाद कभी भुलाया नही जा सकता।

परन्तु प्रकृतिके इस मोहक चित्रके पीछे खतरा छिपा हुआ है। गाव दूर दूर विखरे हुए होते हैं। घने जगल, ऊचे ऊचे सनके खेत और पानीकी वेशुमार नहरे इन गावोको एक-दूसरेसे विलकुल अलग कर देते हैं। उन गावोके चारो ओर जो घने जगल है, उनके अभेद्य एकान्तमे सकट और दु.खकी पुकार दिनमें भी विलीन हो जाती है। और घनी तथा ताने-वानेकी तरह गावोको अपने वीच गूथ लेनेवाली वनस्पति तथा अनगिनत तालाव और जलमे वढनेवाली लताओसे भरीपूरी खालें (नहरे) कालेसे काले कृत्योको छिपानेके लिए आदर्श स्थान सिद्ध होती हैं।

१४ अक्तूवरको अर्थात् अन्तरिम सरकारमे मुस्लिम लीगके प्रवेशकी घोषणासे एक दिन पहले वगालकी प्रेस एडवाइजरी कमिटीने यह विज्ञप्ति प्रकाशित की थी

> नोआखाली जिलेमे सगठित दगा-फसाद होनेके समाचार कलकत्ते पहुचे हैं। १० अक्तूवरसे तूफानी टोलिया घातक हथियार लेकर गावों पर धावे कर रही हैं और वहा वहुत वड़े पैमाने पर लूटमार, हत्या और आगजनी हो रही है। जवरदस्ती वडी सख्यामे लोगोका धर्म-परिवर्तन करने, स्त्रियोको भगा ले जाने और पूजाके स्थानोको भ्रष्ट तथा अपवित्र करनेके समाचार भी मिले हैं।
>
> अव तक सदर और फेनी तालुकोके २०० वर्गमीलसे अधिकके प्रदेशमे ये उपद्रव हो रहे हैं। उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोके मार्गो पर सशस्त्र गुडे पहरा लगा रहे हैं।
>
> वहुत वडी सख्यामें लोगोकी हत्या होनेके या जिन्दा जला दिये जानेके समाचार मिले हैं। उनमें जिला वकील मडलके अध्यक्ष और उनका परिवार तथा जिलेके एक प्रमुख जमीदार भी शामिल हैं।
>
> कलकत्तेके सरकारी क्षेत्रोमे पूछताछ करनेसे पता चलता है कि सेना और सशस्त्र पुलिस उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोमें भेज दी गई है। इन क्षेत्रोमें सपूर्ण रामगज, वेगमगजके कुछ भागो, लक्ष्मीपुर, रायपुर, सेन-वाग, फेनी, चागलानैया और सद्वीप थानोका समावेश होता है।

एक और सन्देशके अनुसार उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोसे पीड़ित लोगोके आवा-गमनके तमाम मार्ग वन्द कर दिये गये थे, और उन पर "घातक शस्त्रोसे सुसज्जित गुडे" कडा पहरा लगा रहे थे। इस तारमे यह भी उल्लेख किया गया था कि "इस भयकर मारकाट, आगजनी और लूटपाटके पीछे योजनावद्ध सगठन था।"[१]

१६ अक्तूबरको कलकत्तेमें एक पत्रकार-सम्मेलनमें बगालके मुख्यमत्री शहीद सुहरावर्दीने नोआखालीक 'अत्यन्त गम्भीर अत्याचार' की बात स्वीकार करते हुए कहा कि उपद्रव-ग्रस्त प्रदेशमें सेनाओका आना-जाना" कुछ मुश्किल हो गया है क्योकि "नहराके बाध बाध दिये गये ह, पुलाको तोड-फोड दिया गया है और सडको पर रुकावटें डाल दी गई ह।" इसी कारण 'एक बहुत ऊचे दर्जेका" सैनिक अधिकारी वहा भेजा गया था। उन्होने कहा कि अधिक सेनाए आवश्यकतानुसार उपद्रव-ग्रस्त प्रदेशमें भेजनेके अलावा यह विचार किया गया है कि ये उपद्रव बन्द कर देनेकी बात लोगोको समझानेके लिए उनके नाम छपी हुई अपील और चेतावनी" आकाशसे गिराई जाय। मुख्य मत्रीने यह भी कहा कि नोआखालीमें स्थिति अत्यन्त खराब है और वहा जबर दस्ती धर्म-परिवर्तन लूटपाट और डाकेजनी हुई है। लेकिन उन्हें इसकी बिलकुल कल्पना नही है कि ये उपद्रव वहा क्यो हुए। उन्होने यह भी कहा कि तुरन्त नोआखाली जानेका उनका विचार नहीं है। उसी दिन व दार्जिलिंग चले गये जहा गवर्नर मत्रि-मडलकी बैठक करनेवाले थे।

१८ अक्तूबरको 'दि स्टेटसमन' ने अपनी सपादकीय टिप्पणीमें लिखा "यह अजीब बात लगती है कि प्रान्तके एक भागमें इस प्रकारकी भयकर आपत्तिका खतरा हफ्तासे लोगोके सिर पर मण्डरा रहा था और वहाका प्रशासनिक तत्र टूटनेके प्रमाण भी मिलने लगे थे फिर भी उस भयकर आपत्तिके स्थान पर पहुचनेकी गवर्नर या मुख्यमत्रीको कोई प्रवत्ति अभी तक दिखाई नही देती। एक दार्जिलिंगमें बैठे ह, दूसरे उनसे मिलनेके लिए दार्जिलिंग गये ह।"

इसके बाद उपद्रवोका दावानल उत्तरकी ओर फैला। जो उन्मत्त भीड *रामगज बेगमगज रायपुर लक्ष्मीपुर और सेनबाग थानोमें* दस दिनसे उत्पात मचा रही थी, उसका बडा भाग तिपरा जिलेके फरीदगज थाने और हैमचर चादपुर क्षेत्रमें जा पहुचा। भीडका एक भाग 'अधिकृत' प्रदेशोका पहरा लगानेके लिए पीछे छोड दिया गया। २२ अक्तूबरको नोआखालीसे लिखते हुए 'दि स्टेटसमन' के कार्यालय प्रतिनिधिने प्रगट किया कि १३ वें दिन भी "नोआखाली जिलेमें रामगज लक्ष्मीपुर, बेगमगज और सेनबाग थानाके लगभग १२० गाव गुडासे घिरे हुए रहे जिनमें ९० हजारकी हिंदू आबादी थी। यही हाल तिपरा जिलेमें चादपुर और फरीदगज थानोमें लगभग ४० हजारकी हिन्दू आबादीवाले कोई ७० गावाका हुआ।''

इन्स्पेक्टर-जनरल आफ पुलिस मि० टेलरके कथनानुसार गुडे "बन्दूको और तरह तरहके दूसरे हथियारोसे सुसज्जित थे तथा अभी तक कानूनकी

लगता था।" जैसे जैसे भीड़ आगे वढती थी "वह तार काटती जाती थी, पुलोको तोडती जाती थी, नहरोके वाध लगा देती थी और सडकोको नुकसान पहुचा कर वहा रुकावटें खडी कर देती थी और इस प्रकार जिन स्थानो पर आक्रमण हुआ था वहा आवागमनको असम्भव (अथवा कठिन) वना देती थी।"[३]

काग्रेसके निर्वाचित अध्यक्ष आचार्य कृपालानीने शरत्चन्द्र वोस और दूसरे काग्रेसी नेताओको साथ लेकर उपद्रव-ग्रस्त प्रदेश पर १९ अक्तूवरको विमानी यात्रा की। विमान वहुत नीचा उड रहा था और उस मडलीको सारा उपद्रव-ग्रस्त प्रदेश साफ दिखाई देता था। कुछ गावोमें वहुतसे घर अव तक जल रहे थे और एक उत्तेजित भीड एक विशेप क्षेत्रमें एक पुलको नप्ट कर रही थी तथा लोगोके समूह जव विमान ऊपर उड़ रहा था तव अलग अलग स्थानो पर जमा हुए दिखाई देते थे। लौटते समय मुख्यमत्रीने भी उसी विमानसे यात्रा की और वे जलते हुए गावोके चित्र लेते दिखाई दिये। सैनिक गुप्तचर-विभागकी जो रिपोर्टें नई दिल्ली पहुची, उनमे वगाल विधान-सभाके एक भूतपूर्व सदस्य (मिया गुलाम सरवर) का उल्लेख किया गया था। वे १० अक्तूवरसे वहुत पहले साम्प्रदायिक भावनाओको भड़कानेका विपैला प्रचार कर रहे थे और उसीका परिणाम नोआखालीके भयकर हत्याकाडमें आया था। वे अभी तक स्वतत्रतासे घूमते थे। जव यह वात अधिकारियोकी जानकारीमे लाई गई तो उन्होने कहा कि उनके खिलाफ वारन्ट जारी किया गया है, परन्तु उनका पता नही लगता। किन्तु कहा यह जाता था कि वे खुले तौर पर घूम रहे थे और अपना काम कर रहे थे।

अव कुल उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्र ५०० वर्गमीलसे ज्यादा वढ गया। जिन स्थानोसे आशा नही थी वहासे भी इस तरहके समाचार मिलने लगे कि गुडे कप्ट-निवारण कार्यमे वाधा पहुचा रहे हैं। लेफ्टिनेन्ट जनरल एफ० आर० आर० वुशेर, जी० ओ० सी०, ईस्टर्न कमाण्डने २६ अक्तूवरको कलकत्तेमे वताया, "यह अनुमान लगाना असम्भव है कि उपद्रव-ग्रस्त प्रदेशोमें फिरसे विश्वास स्थापित करनेमे कितना समय लगेगा।"[४]

उपद्रव-ग्रस्त प्रदेशसे लोगोका वाहर निकलना वन्द करनेकी गुडोकी कोशिशोके वावजूद वहुत लोग वाहर भाग निकले थे। ज्यो ज्यो समय वीतता गया उपद्रव-ग्रस्त प्रदेशो और तूफानकी सभावनाओवाले प्रदेशोसे आनेवाले शरणार्थियोकी सख्या उत्तरोत्तर वढने लगी। वगाल सरकारके सिविल रिलीफ कमिश्नर सर वाल्टर गुर्नरके कथनानुसार लगभग १२०० शरणार्थी नोआखाली और तिपरासे रोज कलकत्ता आ रहे थे। आचार्य कृपालानीने **वताया कि**

तिपरा जिले और त्रिपुरा राज्यमें शरणार्थियोंकी संख्या ४० हजारसे कम नहीं हो सकती।

ये शरणार्थी भारतके आधुनिक इतिहासमें जिसका दूसरा उदाहरण न मिल सके इतने बड़े पैमाने पर हुई क्रूर और भयंकर घटनाओंकी कहानियां अपने साथ लेकर आये। लगभग सभी सम्पन्न और प्रतिष्ठित हिन्दू परिवारोंके घर जला दिये गये थे, रक्षाके झूठे आश्वासन देकर व्यवस्थित रूपमें रुपया ऐंठा गया था, हत्यायें की गई थीं और सैकड़ों निर्दोष लोगों पर पाशविक आक्रमण हुए थे। परिवारके परिवार जबरदस्ती धर्मभ्रष्ट कर दिये गये थे। अविवाहित कन्याओंके विवाह और विवाहित स्त्रियोंके पुनर्विवाह मुसलमानोंके साथ उनके निकटतम और प्रियतम जनोंके सामने जबरदस्ती कर दिये गये थे। जिन लोगोंका धर्म-परिवर्तन कर दिया गया था और जिन्हें तरह तरहसे सताया गया था, वे अब मुस्लिम पोशाक पहने हुए दिखाई देते थे। उन्हें बलात् निषिद्ध आहार कराया गया था और बलात् उनसे मुस्लिम धार्मिक कर्मकांड कराये गये थे।

रामगंज पुलिस थानेमें नोआखाली गांवके एक प्रसिद्ध घरानेके नौजवान लड़केने जो बर्बरताएं की गई थीं उनका विशिष्ट विवरण दिया। ११ अक्तूबरको प्रातःकाल गांवके लोगोंकी एक मंडली उनके घर पर आई। उसने धमकी दी कि यदि उन्होंने तुरन्त एक स्थानीय संस्था (मुस्लिम लीग) के कोषमें ५०० रुपयेका दान नहीं दिया, तो वे सब मार दिये जायेंगे, उनकी सम्पत्ति लूट ली जायगी और उनके घर जला दिये जायेंगे। यह रुपया तुरन्त चुका दिया गया। थोड़ी देर बाद एक बहुत बड़ा खतरनाक भीड़ घरके चारों तरफ जमा हो गया। परिवारके एक सदस्यने भीड़को शान्त करनेकी कोशिश की। उसके मुंहसे एक शब्द भी मुश्किलसे निकला होगा कि गुंडोंने एक दावसे (एक भारी टेढ़ा छुरा) उसका सिर धड़से उड़ा दिया। फिर उन्होंने परिवारके सबसे बूढ़े आदमी पर हमला किया। उसकी निर्दय हत्या करनेके बाद उन्होंने उसके दूसरे लड़केकी पत्नी और उसके पिताकी लाश पर जबरन् रख दिया। मां अपने बेटे पर गिर पड़ी और उसे न मारनेकी याचना की। इस हस्तक्षेपसे क्रुद्ध होकर उन्होंने मां पर लाठीका भारी वार किया और मूर्छित अवस्थामें उसे दूसरे स्थान पर हटा दिया। अपने शिकारके साथ पट्टे जमा करनेके बाद उन्होंने (लड़केके) पिताकी तरफ ध्यान दिया। लड़का घरमें छिपा हुआ था। वह बाहर निकल आया और अपने पिताके प्राण बचानेकी कामनासे उसने उनसे पिताके बदले हत्यारोंको कुछ गहने और ६०० रुपये नकद दे दिये। उसे आश्वासन दिया और गहने बायें हाथमें ले लिये और दाहिने हाथसे उसके पिता पर घातक प्रहार किया।

वादमे पता चला कि मारे गये आदमियोकी सख्या (५ हजार) के वारेमे जो पहले समाचार थे, वे विलकुल घवराहटमे दिये गये थे। दुर्भाग्यसे विना जाच-पडताल किये यह वक्तव्य एक वहुत ही जिम्मेदार व्यक्तिने, जिन्हे अधिक सजग रहना चाहिये था, दिया था। इस वक्तव्यकी व्यापक प्रसिद्धि हुई ओर उसने अपार हानि की।

अधिकारियोके सामने लोगोरे। शिकायते दर्ज करवाना कठिन था। नोआखालीकी उद्धार, कष्ट-निवारण और पुनर्वास समितिकी ओरसे समितिके वकीलोकी मददसे हत्याके २५० मामले दर्ज कराये गये। परन्तु यह सूची किसी भी तरह पूरी नही कही जा सकती। स्त्रियो पर हुए वलात्कारके सम्वन्धमे लोग जानकारी देनेको तैयार नही थे। परन्तु वादकी जाच-पडतालसे सिद्ध हुआ कि वलात्कारके मामले जितने अधिकारियोने स्वीकार किये उनसे कही अधिक थे।

नोआखालीके उत्पातका पहला परिणाम तो यह हुआ कि लोग स्तव्ध हो गये। उसके वाद देशभरमे रोप और क्रोधकी भावना भडक उठी। लोकमत हत्याओ और मारकाटकी अपेक्षा स्त्रियोके प्रति किये गये अत्याचारोसे, उन्हें जवरदस्ती भगा ले जानेसे, जवरदस्ती उनका धर्म-परिवर्तन करनेसे और वलात् उनसे विवाह कर लेनेके प्रमाणोसे अधिक क्षुव्ध हो गया। यह क्रोध वगालके वाहर भी दूर दूर तक फैल गया।

२५ अक्तूवरको 'दि स्टेट्समैन' ने यह सपादकीय टिप्पणी लिखी, "आग लगाना, लूटमार करना, हत्या करना, स्त्रियोको भगा ले जाना, बलात् उनका धर्म-परिवर्तन करना और उनसे विवाह कर लेना आदि घटनाये हर जगह हुई हैं। और जाच करनेवाले प्रत्येक व्यक्तिने वताया है कि नोआखालीके तूफानोकी यह विशेपता रही है। सवको स्त्रियो-सम्वन्धी इन अपराधोका वहुत अधिक प्रमाण मिला है, जो जनसाधारणको मालूम नही होने दिया गया है। अगस्तमे हुई कलकत्तेकी भयकर घटनाओके वाद खास तौर पर उसी भागमें, जहा ये भीपण घटनाए अव दुवारा हुई हैं, कडी सावधानिया रखनेका पर्याप्त कारण था। गुडोकी गिरफ्तारिया वहुत कम हुई मालूम होती हैं। मालूम होता है, कही न कही कार्यशक्तिका सर्वथा अभाव रहा है।" यह जो दलील दी गई थी कि अपूर्ण यातायात व सचार-व्यवस्थाके कारण एक वडे प्रशासनिक पक्षाघातको नही सभाला जा सका, उसके वारेमे 'दि स्टेट्समैन' आगे चल कर कहता है "सार्वजनिक मानसके लिए यह स्पष्टीकरण पर्याप्त नही है। वह प्रदेश खराव है, परन्तु गुडे भी तो किसी तरह इधर-उधर चल फिर लेते हैं। और फिर पुलिसको तो आम जनता जानकारी देकर मदद भी करती है, वह युद्धकालमे जापानियो द्वारा अधिकृत किसी देशमे तो काम नही कर **रही है**।"

अग्रज शान्तिवादी और विग्यल हॉलकी प्रसिद्ध समाजसेविका कुमारी म्यूरिअल लेस्टर उन दिनों सयोगवश भारतमें ही थीं। नोआखालीकी घटनाओं का समाचार सुन कर वे सीधी वहां पहुंचीं। नोआखालीके एक कष्ट निवारण केन्द्रसे अपनी रिपोर्टमें उन्होंने नवम्बरके पहले सप्ताहमें लिखा

> सबसे बुरी स्थिति स्त्रियोंकी हुई। उनमें से कइयोंको अपने पतियोंकी हत्या अपनी आंखोंके सामने होते देखनी पड़ी। फिर उनका बलात् धर्म-परिवर्तन किया गया और जो लोग उन हत्याओंके लिए जिम्मेदार थे उन्होंके साथ उनकी शादियां कर दी गई। ये स्त्रियां मृत्युकी जीवित प्रतिमाओं जैसी दिखाई देती थीं। यह कोई निराशाकी भावना नहीं थी ऐसी कोई सक्रियता उनमें थी ही नहीं। वह तो निरा शून्य भाव था। हजारोंको लाचारीसे गांवोंसे भाग कर और इस्लामके प्रति वफादारी घोषित करके अपने प्राणोंका मूल्य चुकाना पड़ा। इस आगजनी और हत्याकांडके बारेमें कोई बात बिलकुल निश्चित रूपमें और भार पूर्वक कदाचित् कही जा सके तो वह यह है कि यह कोई ग्रामवासियों का स्वाभाविक उत्पात नहीं था। बंगालमें कितने ही गुंडे क्यों न रहते हों, वे स्वयं अपने बल पर ऐसे तूफानको संगठित करनेमें असमर्थ हैं। घरों पर पेट्रोल छिड़क कर उन्हें जला दिया गया। यह पेट्रोलवाला इंधन उन्हें किसने दिया? इस ग्रामीण प्रदेशमें पेट्रोल छांटनेकी पिच कारियां कौन लाया? उन्हें हथियार किसने दिये? गुंडे यह समझते मालूम होते हैं कि बंगालके इस सुन्दर आवश्यक प्रदेशके शासक वास्तवमें वे ही हैं। जिन लोगोंने विनाश, अत्याचार और आक्रमण किया और जो लोग उसे देखते रहे, उनमें कोई भयका लक्षण दिखाई नहीं देता। उन्हें भावी दंडकी कोई चिन्ता हो, ऐसा मालूम नहीं होता।"[1] (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

२

नोआखालीके उपद्रव न तो संयोगवश हुए थे और न वे अप्रत्याशित थे। कलकत्तेमें सीधी कारवाईकी असफलताका कारण उसके जन्मदाताओंने दूसरे समुदायकी अपेक्षा कलकत्तेमें मुसलमानोंकी कम संख्याको बताया। यदि उस असफलताकी क्षतिपूर्ति करनी हो तो वार वहां करना चाहिये जहां मुसलमानोंकी प्रधानता है। नोआखालीमें इसकी असाधारण सुविधाएं थीं।

नोआखालीकी कुल २२ लाखकी आबादीमें १८ लाख अथवा ८१.३३ प्रतिशत मुसलमान थे और ४ लाख हिन्दू थे। जिलेका कुल क्षेत्रफल १६५८ वर्गमील था। धंधेकी दृष्टिसे ७५ प्रतिशत आबादी काश्तकारों जमींदारों और

तालुकदारोकी थी। मध्यम वर्गके लोग १७ प्रतिशत और दस्तकार ७ प्रतिशत थे। यद्यपि हिन्दुओकी आवादी १८.६७ प्रतिशत ही थी, फिर भी वे ६४ प्रतिशत जमीदारीके स्वामी थे। लेकिन वस्तुत जमीनमे खेती किसान करते थे, जो वहुत अधिक सख्यामे मुसलमान थे। जहा हिन्दू मालिक अपनी जमीनमे खेती करता था वहा भी उसे मुसलमान मजदूरो पर निर्भर रहना पडता था। कुछ समय पहले तक अधिकाश व्यवसाय हिन्दुओके हाथमे था और अधिक शिक्षित होनेके कारण शिक्षित धन्धोमे भी उन्हीकी प्रधानता थी। एक वर्गके रूपमे नोआखालीके हिन्दू जमीदारोमे पतनशील सामन्तोके समग्र लक्षण दिखाई देते थे। मूलत वे अगुआ वन कर नोआखाली आये थे। अपनी लगन, साहस, शक्ति और सगठन-कौशलसे उन्होने जगलोको साफ किया, वहा तालाव, सड़के और नहरे वनाईं, ग्रामीण प्रदेशमे खेती की और कई तरहसे उसका विकास किया। परन्तु उनकी वादकी सतानोने अनुपार्जित आयके नैतिक पतन करनेवाले प्रभाव तथा वगालके निष्क्रिय वनानेवाले जलवायुके कारण ये सव गुण गवा दिये और वे परोपजीवियोका-सा जीवन व्यतीत करने लगे। किसी समय उन्होने ऐतिहासिक महत्त्वका कार्य किया था। लेकिन अव वे पिछली पूजी पर जी रहे थे। उनमे से वहुतसे अन्य जमीदारोकी तरह अनुपस्थित भूस्वामी हो गये थे। उनकी जमीन-जायदादो पर भारी कर्ज हो गया था और हालमे जो ऋण-निवारण कानून वना था उसने उनको और भी कमजोर कर दिया था। एक ऐसे क्षेत्रमे — जहा वे ९ · २ के अल्पमतमे थे — वे अभी तक भी अस्पृश्यताकी अमानुपिक प्रथासे चिपटे रह कर अपने ही घरमे फूट वनाये रखने पर तुले हुए थे।

नोआखालीके अधिकाश मुसलमान हिन्दूसे मुसलमान वने हुए है। सामान्यत. वे निरक्षर और पिछडे हुए, स्वभावसे सीधे-सादे, प्रेमी और शान्तिप्रिय है। उन्हे भीरु भी कहा जा सकता है। डव्ल्यू० एच० थॉम्सनके शव्दोमें कहें तो, "उनके आपसके झगडे लाठिया चलवानेके वजाय उन्हे अदालतोमें ले जाते है।"[७] परन्तु वे निरे अज्ञान है, उन्हे आसानीसे उत्तेजित किया जा सकता है और विशेपत. उनकी धर्मान्धताको अपील करके उन्हे आसानीसे गुमराह किया जा सकता है। तव उनमे सगठित सामूहिक कार्यकी असाधारण क्षमता प्रगट होती है। एक छोटासा उदाहरण यहा दू। असहयोग आन्दोलनके दिनोमें उन्होने चटगावसे चादपुर तक 'अल्लाहो अकवर' का एक अखड नारा सगठित किया था। यह अन्तर १०० मीलसे ज्यादाका है। जव हम नोआखालीमे थे तव हमें विश्वास न हो सके इतने अल्प समयमें इतनी दूर उस नारेके फैल जानेकी वात भी कही गई थी। इस प्रकार वटन दवाते ही चलने लगनेवाले यत्रकी तरह नोआखालीके मुसलमान तत्काल सामूहिक हिसाको जन्म देनेकी आदर्श सामग्री प्रस्तुत करते हैं।

यह बात सामान्यत लोगोंको मालूम नहीं है कि नोआखालीकी एक विशेष उपज और निर्यात की जानेवाली एक मुख्य वस्तु वहांके मौलाना और मुल्ला हैं। नोआखालीमें जितने मौलाना और मुल्ला हैं उतने भारतके और किसी भागमें नहीं हैं। हरएक बडे गांवमें एक या दो हाजी होते हैं। हाजी वह भक्त मुसलमान होता है जिसने मक्काकी यात्रा की हो और इस कारण जिसका आदर होता हो। मि० थाम्सन लिखते हैं मौलवियों और हाफिजोंकी संख्या बहुत बडी है। (हाफिज वे होते हैं जिन्हें पूरा कुरान कंठस्थ होता है)। फिर भी बन्दोबस्तके तमाम कर्मचारियोंकी एक यही शिकायत थी कि दूसरी जगहोंकी अपेक्षा यहांके लोगोंमें ईमानदारी और सचाईका अन्दर कम है। ' उत्तर प्रदेशके देवबन्द और आजमगढ़के मजहबी मदरसोंमें ज्यादातर विद्यार्थी नोआखालीसे आते हैं। पश्चिम बंगालकी अधिकांश मस्जिदोंमें इमाम नोआखाली देता है और बंबई तथा मद्रास तकके दूर दूरके स्थानोंमें भी यहांसे इमाम जाते हैं।

इस सदीके बीसोंके अर्सेमें असहयोग तथा खिलाफत आन्दोलनके दिनोंमें नोआखालीके मुस्लिम कार्यकर्ता — जिनमें पीर मौलवी और मौलाना भी थे — बडी संख्यामें कांग्रेसके आन्दोलनमें शरीक हुए थे। कांग्रेसवालोंने हिन्दू मुस्लिम एकताके प्रारंभिक उत्साहकी बाढमें उनकी प्रतिष्ठा बढा दी। बारडोलीमें १९२२ में सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनके स्थगित हो जानेके बाद और कमाल अतातुर्क द्वारा खिलाफतका अन्त कर देने पर खिलाफत आन्दोलनके टूट जानेके बाद इनमें से ज्यादातर लोग पीछे हट गये और १९३० के सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें उन्होंने बहुत थोडा हिस्सा लिया। १९३१ के गांधी इरविन समझौतेने उनके गिरते हुए जोशको फिर बढा दिया। नोआखाली जिला नमक पैदा करनेवाला प्रदेश है। गांधी इरविन समझौते के अनुसार नमकके संबंधमें जो रियायत मिली उससे कृषक वर्ग व्यापक रूपसे नमक बनाने लगा। करमुक्त नमकका उत्पादन और बिक्री ५ लाख रुपये वार्षिकसे कम नहीं थी। फिर १९३२ में सविनय अवज्ञा आन्दोलन आया। उसने सारे जिलेमें उथल-पुथल मचा दी और एक समय तो जिलेमें ब्रिटिश प्रशासनके लगभग ठप हो जानेकी नौबत आ गई। नौकरशाहीने इस चुनौतीका तुरन्त उत्तर दिया। वह भूली नहीं थी कि किस प्रकार १९२१ में एक निरक्षर हिन्दू चमार और दो निरक्षर मुस्लिम भटियारोंने कांग्रेस टिकट पर खडे होकर चुनावमें एक सरकारी वकीलको जो रायबहादुर था और दो खानबहादुरोंको बुरी तरह हराया था। इन तीनों पदवीधारी उम्मीदवारोंकी जमानतें जब्त हो गई थी। जब अन्य सब उपाय आजमा लिये गये तो साम्प्रदायिक फूटके प्रिय शस्त्रका आश्रय लिया गया। जिला अधिकारियोंने अपने इर्द गिर्द उन तमाम पीरों मौलवियों और मुल्लाओंको

इकट्ठा कर लिया, जो कांग्रेसको छोड चुके थे। एक कृपक-समितिका आन्दोलन कुछ समय पहलेसे चल रहा था। आरभमे वह किसानोका आन्दोलन था। नये रूपमे उसे बिलकुल साम्प्रदायिक और प्रतिगामी रग दे दिया गया। उसके प्रचारको बढानेके लिए सरकारके 'ऐच्छिक कोप' का खुलकर उपयोग किया गया। नोआखालीका तत्कालीन जिला-मजिस्ट्रेट इस नये आन्दोलनके साथ बिलकुल घुल-मिल गया था और खुद कृपक-समितिकी सभाओमे भापण दिया करता था। इन सभाओमे जो भापण दिये जाते थे और जुलूसोमे जो नारे लगाये जाते थे, वे कांग्रेस-विरोधी, घोर साम्प्रदायिक और प्रत्येक वर्ग तथा समूहके हिन्दुओके लिए — जिनमे हिन्दू स्त्रिया भी शामिल थी — अपमानजनक होते थे।

नौकरशाहीके रवैयेका एक उदाहरण बगाल सरकारके मुख्य सचिवके मुहसे निकले हुए एक उद्‌गारसे मिलता है। एक प्रसिद्ध पत्र-प्रतिनिधिके साथ बात-चीत करते हुए उन्होंने यह कहा बताया जाता है "तुम हिन्दू क्रान्तिकारी हो। तुम असहयोग करते हो। तुम सविनय अवज्ञा द्वारा हमारा विरोध करते हो। हमें कमसे कम एक दलको अपने पक्षमे रखना पडता है, इसलिए हमने मुस्लिम लीगको अपने साथ ले लिया है। यदि तुम हमसे सहयोग करो, तो हम उन्हे लात मार देंगे (और उन्होंने शब्दोके अनुरूप अभिनय करके भी बता दिया)।" जिस विशेप सिविल अधिकारीके हाथमे उन दिनो नोआखाली जिलेका कामकाज था, उसके बारेमे मुख्य सचिव बोले . "हम तो अपने पास जो रिपोर्टें आती है, उनके आधार पर शासन चलाते हैं। और मि डी० (विभागीय कमिश्नर) की रिपोर्ट यह थी कि मि एन० (जिला मजिस्ट्रेट) ने नोआखालीमे सविनय अवज्ञा आन्दोलनको सफलतापूर्वक मार दिया है। हम उसे कैसे हटा सकते है?"

नोआखालीमे खेतीके सब तरहके मजदूर मुसलमानोमे से मिलते है — धान बोना और काटना, नारियल और सुपारिया पेडो परसे उतारना और जमीन खोदना वगैरा सब काम वे करते है। कृपक-समितिवालोने दूसरी एक युक्ति आजमाई। उन्होने हिन्दुओका आर्थिक बहिप्कार करनेका निर्णय किया और मुसलमानोसे कहा कि वे हिन्दुओके यहा किसी भी तरहकी मजदूरी न करे। इस धमकीके पीछे समितिवालोका हेतु यह था कि इससे हिन्दू कृपक-समितिको पैसा देकर शांति खरीदनेके लिए मजबूर होगे। जो हिन्दू इस बहिप्कारसे डरे नही उन्हे सताया गया और उनके लिए जीना दूभर कर दिया गया। यह त्रास कई प्रकारका था। उदाहरणके लिए, बर्गदार (फसलके हिस्सेदार) हिन्दू भूस्वामियोको उनके हिस्सेकी उपज देनेसे या उनकी जमीनका कब्जा छोडनेसे इनकार कर देते थे, उनके मवेशी चुरा लिये जाते थे, घासकी गंजियोको तथा बगीचोकी बाडको आग लगा दी जाती थी, खडी फसले चुरा ली जाती थी या जबरदस्ती उठा ली जाती थी, सशस्त्र दलो द्वारा हिन्दू घरोमें डाके डाले जाते थे, हिन्दू

स्त्रियो पर अक्सर बलात्कार किया जाता था और उसका कोई उपाय नहीं था मन्दिरोसे मूर्तियां और सोनेके आभूषणोंकी चोरी कर ली जाती थी और मन्दिरोको भ्रष्ट किया जाता था। अधिकाश मंडियां और साप्ताहिक हाटोंकी व्यवस्था हिन्दुओने अपनी ही जमीन पर की थी। उन मंडियोसे हिन्दुओको निकाल देनेके लिए कृषक-समितिने वहां गोमांस बेचनेकी चतुराईभरी युक्तिका आश्रय लिया। जब हिन्दुओने इस पर आपत्ति की, तो उनका बहिष्कार कर दिया गया और मुस्लिम जमीनो पर दूसरी मंडियां शुरू कर दी गई। इस प्रकार रायपुर दत्तपारा नन्दीग्राम, करपारा, लामचर आदि कई फलती-फूलती मंडियोका सफल बहिष्कार करके उनका नाश कर दिया गया। उनमें से कुछ मंडियां तो ५० वर्षसे भी अधिक पुरानी थी।

इस संगठित धाक धमकी अराजकता और जुल्मके आन्दोलनके पीछे बंगालकी विधान सभाके एक मुस्लिम सदस्यका दिमाग काम कर रहा था। वह अपने अनुयायियोंमें शाह सयद गुलाम सरवर हुसनी, नोआखाली जिलेके शामपुर गांवके दरा शरीफके पीरसाहब के नामसे मशहूर था। वह नोआखालीका स्थानीय हिटलर बन गया था। उसने एक ओर कानून तथा प्रशासनके स्थानीय तंत्र पर नियंत्रण रखने तथा दूसरा पर अपना प्रभाव डालनेके लिए उसका उपयोग करनेकी तथा दूसरी ओर नीचेसे दबाव डालकर सत्ताधारियोसे अपना मनचाहा काम करानेकी चतुराईभरी कार्य-पद्धति अपनाई थी। साथ ही, अनजान ग्रामवासियो पर अपना प्रभाव डालनेके लिए ऊपरसे वह सत्ताधारियोके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध भी बनाये रखता था।

यह सब १९३२ से १९३९ तक चलता रहा। फिर दूसरा महायुद्ध आ गया। उसके बाद ही लगातार खेतीकी दृष्टिसे तीन कमजोर वर्ष (१९४० १९४२) आये। उनके बाद बाढ आ गई, जिससे १६५ वर्गमीलसे अधिक भूभागमें फसल बरबाद हो गई। साधारण समयमें भी नोआखाली जिलेमें अनाजकी तंगी रहती है। अनाज प्राप्त करनेकी और कंट्रोलकी सरकारी युद्धकालीन नीतिने इस संकटको और भी तीव्र कर दिया। १९४२ के आरभमें चावलका भाव ६ रुपये मन था जो बढकर मार्चमें १५ रुपये तक और जुलाई १९४३ में ६० रुपये तक चला गया। १९४२–४३ के अकालमें लगभग ५० हजार लोग भूखसे मर गये और करीब करीब २५ हजार पश्चिम बंगालमें चले गये। १९११ में जिलेका क्षेत्र-फल १ ६४४ वर्गमील और आबादी १ १७४ ७२८ कूती गई थी। इस हिसाबसे प्रति वर्गमील ७१४ व्यक्तियोकी घनी आबादी हुई। १९४६ में जिलेका क्षेत्रफल १ ६५८ वर्गमील और आबादी २ २१७ ४०२ हो गई। इस हिसाबसे आबादीकी घनता प्रति वर्गमील १ ३३७ आदमियोकी हुई। द्वितीय विश्वयुद्धसे पहले भूमिहीन मजदूरोका अनुपात ३६ प्रतिशत था और युद्धके अन्तमें बढ कर वह ६०

प्रतिशत हो गया। जीवन-निर्वाहका खर्च दुगना हो गया, चोरबाजारीका बोल-बाला हो गया और अपराधोमे उल्लेखनीय वृद्धि हो गई। और सयोगवश हुआ यह कि जल्दी धनवान बन जानेवाले अधिकाश लोग हिन्दू थे, इसलिए वे सम्प्रदायवादियोके आक्रमणके आसान लक्ष्य बन गये।

इस प्रकार कैबिनेट-मिशनके आनेसे ठीक पहले नोआखाली सचमुच एक बारूदखानेकी तरह दिखाई देता था। उसे सुलगानेके लिए एक चिनगारीकी ही जरूरत थी। और वह चिनगारी मुस्लिम लीगके 'सीधी कार्रवाई' वाले प्रस्तावसे मिल गई। कलकत्तेकी गोदियोमें, कारखानोमे और विविध व्यवसायोमे नोआखालीके बहुतसे मुसलमान नौकरी करते थे। कलकत्तेके भीषण हत्याकाण्डके बाद उनमे से बहुतसे नोआखाली लौट गये और उन्होने कलकत्तेके दगोकी भयकर बाते फैलानेमे मदद की। इससे वहाकी मुस्लिम जनता भडक उठी।

इसमे एक और उत्तेजनाका कारण मिल गया। मुस्लिम लीगने पाकिस्तानके लिए सारे बगाल पर दावा किया, क्योकि उसका कहना था कि वहा मुसल-मानोका बहुमत है। विरोधी पक्ष इस दावेको नही मानता था। लीगके दावेका अधिकसे अधिक आधार एक थोडेसे फर्क पर था, क्योकि मुसलमान बगालकी सारी आबादीके ५४.७३ प्रतिशत ही थे। यदि पूर्वमे एक मुस्लिम राज्यकी स्थापना हिन्दुओ और मुसलमानोके सिर गिनने पर आधारित हो, तो 'सीधी कार्रवाई' से उसका जल्दीका रास्ता आसानीसे मिल गया था, क्योकि अज्ञान और कट्टर लोगोने 'सीधी कार्रवाई' का अर्थ लगाया था बडे पैमाने पर हिन्दुओका धर्म-परिवर्तन और उनकी हत्या। और यदि नोआखालीमे उसे सफल बनाया जा सकता है, तो बगालके अन्य भागोमे और अन्तमे समूचे भारतमे क्यो नही बनाया जा सकता? धर्मान्ध लोगोकी यही दलील थी। क्या भारतके अधिकाश मुसलमान हिन्दूसे मुसलमान नही हुए थे या ऐसे लोगोकी सन्तान नही थे? यह पागलपनका विचार दिखाई दे सकता है, परन्तु वे दिन ही रोमाचकारी उन्मादके थे।

*

२९ अगस्त, १९४६ को नोआखाली शहरमे अचानक आग भडक उठी। वह मुसलमानोके ईद-उल्-फित्रके त्योहारका दिन था। यह अफवाह फैला दी गई कि हिन्दुओके भाडेके टट्टू सिक्ख सामूहिक रूपमे मुसलमानोको कत्ल कर रहे हैं। मुसलमानोकी उत्तेजित भीड उपनगरकी मस्जिदोमे से शहरमे उमड पडी। जो भी हथियार हाथ लगा उसे लेकर लोग शहरमे चले आये। कुछ हिन्दू मछुओके साथ मारपीट की गई। दूसरे दिन समाचार मिले कि इसी तरहकी अफवाहोसे जिले भरमें दगे-तूफान हुए और उनसे बडी हानि हुई। बाबूपुर गावके एक महत्त्वपूर्ण काग्रेसीका पुत्र दिन दहाड़े मार डाला गया और वहाके

कांग्रेस भवनको आग लगा दी गई। आम रास्ता पर, गावोंकी गलियोंमें और नालों (नहरों) पर हिंदुओंको लूटने और मार डालनेकी छुटपुट घटनाओंके समाचार गावोंसे मिले।

६ सितम्बरको ढोल बजाकर मियां गुलाम सरवरने घोषणा करायी कि 'कलकत्तेके भीषण हत्याकांडका बदला लेनेके उपाय सोचनेके लिए उलेमाओं और मुस्लिम लीगकी संयुक्त सभा होगी। उस सभामें भडकानेवाले भाषण दिये गये और श्रोताओं पर यह असर डाला गया कि अब हथियार बनाने और हिंदुओंके विरुद्ध उनका उपयोग करनेका समय आ गया है। यह सभा ७ सितम्बरको शाहपुरमें हुई।

दूसरे दिन एक और सभा दसघरिया गांवमें हुई और लोगोंकी भीडसे कहा गया कि वह नोआखालीके हिंदुओंके विरुद्ध सीधी कारवाई शुरू करनेसे पहले वरिष्ठ नेताओं (हाई कमांड) के आदेशोंकी प्रतीक्षा करें। इस सभामें मंदिरोंकी मूर्तियां तोडने और हिंदुओंके पूजास्थानोंको भ्रष्ट करनेकी खुली घोषणा की गई। सभासे लौटते हुए भीड शाहपुरके एक प्रसिद्ध हिंदूके कुल मंदिरमें से मूर्तियां उठा ले गई और मंदिरको भ्रष्ट कर दिया। दूसरे दिन लगभग १ हजार आदमियोंने तीन दल बनाकर और हाथमें मुस्लिम लीगके झंडे लेकर शाहपुरके बाजारमें मछली, पान और गुडके हिंदू व्यापारियोंको लूट लिया।

कुछ दिन बाद पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट शाहपुर, करपारा, लामचर और आसपासके गांवोंके मुस्लिम लीगी नेताओंसे एक विशाल सभामें मिले। लोगोंके प्रतिनिधियोंका रुख विरोधी था। स्थानीय हिंदुओंने हाटके दिनोंमें सशस्त्र पुलिसके पहरेकी मांग की। परन्तु उनके अनुरोधका कोई फल नहीं निकला। दूसरे दिनसे उपद्रवियोंके नेताओंकी ओरसे यह बात फैलाई जाने लगी कि हफ्तेभर तक मुसलमान हिंदुओंके प्राणों और सम्पत्तिके साथ जो चाहें सो कर सकते हैं, सरकार इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगी।

नोआखालीके अधिकतर बुद्धिशाली और सम्पन्न लोग या तो कलकत्तेमें नौकरी अथवा व्यापार करते थे या शिक्षाके लिए अपने बालकोंको वहां भेजते थे। अक्तूबरके महानेमें पूजाकी छुट्टियोंमें जो लोग कलकत्तेसे नोआखालीके गावोंमें अपने घरोंको लौट रहे थे उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि प्रत्येक पुल पर और खाल (नहर) के हर मोड पर अपनेको लीगके स्वयंसेवक, मुस्लिम नेशनल गार्ड्स आदि बतानेवाले लोग नावोंकी तलाशी ले रहे हैं। नोआखालीमें नाव चलानेवाले ज्यादातर मुसलमान हैं। वह उपद्रवी नेताओंके आदेश पर ऐसा था कि वे हिन्दू यात्रियोंको न ले जायं। कभी कभी हिन्दू यात्रियोंके साथ मारपीट की जाती थी और उनका सामान छीन लिया जाता था। गांवोंके मुसलमानोंकी गुप्त सभाएं होती थीं और उनमें हिंदुओंको बिलकुल नहीं

आने दिया जाता था। किसी मोहल्लेमें पहुचने पर तमाम हिन्दू नवागन्तुकोसे पूछताछ की जाती थी, उनके आने-जाने पर गुप्त निगरानी रखी जाती थी और उनकी घूमने-फिरनेकी स्वतत्रता पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता था। उनके मुसलमान पडोसी उन्हे एक-दूसरेसे मिलने या अन्य लोगोसे मिलने जानेसे रोकते थे। हवामे किसी अपशकुनकी, किसी अनिष्टकी गध आ रही थी। निराश होकर नोआखालीकी हिन्दू महासभाके अध्यक्ष और नोआखाली नगरपालिकाके कार्यवाहक सभापतिने जिला मुस्लिम लीगके नेताओके पास जाकर शान्ति और सुरक्षाकी अपील की। लीगके नेताओके उत्तर अस्पष्ट थे। शिष्ट-मडलने उन्हे जिलेका साथ साथ दौरा करनेका निमत्रण दिया· "मै उनसे कहता हू कि जिला मजिस्ट्रेटने आखिर एक जीपकी मंजूरी दे दी है, और हम साम्प्रदायिक मेलजोलके लिए जिलेका एक सिरेसे दूसरे सिरे तक दौरा कर सकते है। परन्तु वे हिचकिचा कर कहते है कि . . . निश्चित उत्तर वे दूसरे दिन देंगे। परन्तु दूसरे दिन वे हमारे साथ चलकर सयुक्त सभाओमें भाषण देनेसे साफ इनकार कर देते है। . . . मै घबरा जाता हू। . . . मै जिला मजिस्ट्रेट और पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्टसे मिलकर उन्हे समझानेकी कोशिश करता हू कि आनेवाली विपत्ति . . . (कितनी भारी) और किस स्वरूपकी है। परन्तु पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट इतना ही कहता है कि हमने जिन घटनाओका उल्लेख किया है वे निराधार और झूठी है ओर किसी भी ऐसी घटनाके होनेका खतरा नही है जिसे मेरी पुलिस काबूमे न कर सके। उसका खयाल है कि सेना या अधिक सशस्त्र पुलिसकी जरूरत नही है।"[१०] जिला मजिस्ट्रेट एन० जी० राय तबादलेकी आज्ञाके अनुसार १२ अक्तूबरको नोआखालीसे चले जानेवाले थे। "मै उनसे ठहरनेके लिए अपील करता हू। वे स्थितिकी गभीरता और आनेवाले खतरेको समझते है। परन्तु उनका कहना है कि उन्हे जाना पडेगा। फिर भी वे अल्पसख्यकोको बचानेके लिए जो कुछ कर सकते है करेगे।"[११]

और जिला मजिस्ट्रेट १२ अक्तूबरके बजाय १० अक्तूबरको ही चले गये —उसी दिन नोआखालीमे भयकर हत्याकाड हुआ।

३

१० अक्तूबर अर्थात् लक्ष्मीपूजाके दिन भयकर हत्याकाड आरम्भ हो गया। वर्षाऋतु कभीकी शुरू हो गई थी। खाले (नहरे) पानीसे उमड़ पड़ी थी। चावलके खेतोमे बाढ-सी आई हुई थी। जिला बोर्डकी सडक भारी बरसातके कारण टूट गई थी। छोटी सडके जलमग्न हो गई थी। शको (बासके सारे पुलो) पर गुडोका पहरा लग गया था।

करपाराकी चौधरीबाडीवाले रायसाहब राजेन्द्रलाल चौधरी, जो नोआखाली वकील-मडलके अध्यक्ष थे, स्थानीय हिटलरकी आंखोकी किरकिरी बने

हुए थे, क्योंकि उन्होंने बढती हुई अराजकताके विरुद्ध रक्षात्मक सगठन खडा किया था। उन दिनों उनकी वाडीमें त्र्यम्बकानन्द नामक भारत सेवाश्रमके एक साधु रहा करते थे। वे हिन्दू वाडियोंमें शीतला-पूजाकी परम्पराको फिरसे जारी करनेका कुछ हद तक सफल प्रयत्न कर रहे थे। चारों ओर यह अफवाह फैली हुई थी कि साधुने डीग हाकते हुए यह कहा है कि पूजाके आगामी अवसर पर वे बकरेके साधारण रक्तके स्थान पर मुसलमानोंके रक्तसे पूजा करेंगे। करपारासे हिटलर गुलाम सरवरका मुख्यकेन्द्र शाहपुर थोडी ही दूर था। यह समाचार सुनकर वह आग बबूला हो गया और उसने धमकी दी कि वह उस साधुका और रायसाहब राजेन्द्रलाल चौधरीका सिर उडा देगा। १० अक्तूबरको प्रातःकाल उसने एक चौकीदारको पत्र देकर उन दोनोंको शाहपुर बाजारमें मिलनेके लिए बुलाया। रायसाहबको शका हुई कि दालमें कुछ काला है इसलिए उन्होंने जानेसे इनकार कर दिया। इससे हिटलर उत्तेजित हो गया। ८ बजे सुबह उसने शाहपुर बाजारमें कई हजार लोगोंकी सभामें भाषण दिया। कहा जाता है कि उसने राजेन्द्रलालका और साधुका सिर काट कर लानेको कहा और भीडको आगजनी और लूटपाटके लिए उत्तेजित किया। रामगजका एक मुसलमान थाना-अफसर वहीं मौजूद था। हिटलरने उसे आज्ञा दी कि वह अपने आदमियोंके साथ उस नावके पास चला जाय जो नीचे खालमें लगर डाले हुए है और वहा ठहरे। अफसरने भेडकी तरह कायर बनकर उसकी आज्ञा मान ली। फिर भीडने बाजारके काली मन्दिरको आग लगा दी और पवित्र वटवृक्ष (काली गाछ) को थाना अफसरकी आखोंके सामने ही काट डाला। बाजारकी सारी हिन्दू दुकानें लूट ली गईं और जला दी गईं।

शाहपुर बाजारको खतम करनेके बाद भीड तीन भागोंमें बट गई। एक भाग उत्तर-पश्चिममें रामगज बाजारकी तरफ बढा दूसरेने दसघरिया बाजारमें हिन्दू दुकानें लूटीं और वहाके ठाकुर मन्दिरको जला दिया। और तीसरेने नारायणपुराके जमींदार सुरेन बोसकी कचहरी पर हमला कर दिया। सुरेन बासको एक हिन्दू पुलिस अफसरने उसी दिन प्रातःकाल आनेवाले खतरेकी चेतावनी देकर भाग जानेकी सलाह दी थी। परतु उन्होंने यह कहकर इनकार कर दिया, मैं अपने भाइयोंको पीछे छोडकर जाना नहीं चाहता। मुझे उनके साथ ही मौतका सामना करना चाहिये। जब हमला हुआ तो उन्होंने दगाइयो पर गोली चलाई। भीड उन पर टूट पडी। उन्हें मार डाला गया कचहरीको आग लगा दी गई और उनकी लाशको आगमें फेंक दिया गया। इसी तरह घरके ५ और आदमी भी मार दिये गये।

११ अक्तूबरको प्रातःकाल ८ बजेके करीब चौधरीवाडी पर आक्रमण किया गया। पहले ३०–४० दगाइयोंकी एक छोटीसी टोली 'अल्लाहो अकबर'

'हिन्दुर रक्त चाई' (हमे हिन्दुओका रक्त चाहिये) चिल्लाती हुई आई। राजेन्द्रलाल चौधरी और उनके पुत्रने कुछ नौजवानोके साथ मुख्य मकानसे थोड़ी दूर उसका सामना किया। आक्रमणकारियोके तीन आदमी मारे गये। तब भीड़ पीछे हट गई और लगभग तीन घटे बाद कमसे कम १० हजार आदमियोकी कुमुक लेकर वापस आई। इस बीच राजेन्द्रलालके परिवारके लोगोने और आस-पासकी बाडियोके पुरुषो, स्त्रियो और बच्चोने रायसाहबके मकानकी छत पर शरण ली और अपने सामने रक्षाके लिए आड खडी कर ली। वहासे कालीप्रसन्न राउत नामक एक व्यक्तिने अपनी तोडेदार बन्दूकसे कुशलतापूर्वक गोलिया चलाई और कई घटे तक दगाइयोको रोके रखा। अन्तमे उसका गोला-बारूद खतम हो गया। तब उसने अपने पैरोसे बन्दूकको तोड कर मकानमे फेक दिया। कहा जाता है कि आक्रमणकारियोके ३०–४० आदमी मारे गये और कई सौ घायल हुए।

जब गोली चलना बन्द हो गया तब दगाई लौट आये और लकडी, बास तथा बाडके टुकडे वगैरा मकानके सहारे इकट्ठे करके उन्होने पेट्रोल और घास-लेटकी मददसे आग लगा दी। "आग तुरन्त भडक उठी और स्त्रिया, बच्चे और बूढे डरके मारे निराश होकर चीखने लगे।"[१२] कुछ दगाइयोने नीचेसे पत्थर फेके। इससे एक आदमी मारा गया। जिनके चोटे नही आई थी, उन्होने छत पर लेटकर अपनेको बचानेकी कोशिश की। परन्तु उन पर नीचेसे ईंटो, पत्थरो, बोतलो वगैराकी भयकर वर्षा की गई। तब आगसे जली हुई इमारतका एक हिस्सा बैठ गया। उससे नीचे आश्रय लिये हुए अनेक लोग तथा ऊपर छत परके कुछ आदमी दबकर मर गये। जब आग बहुत भयकर हो गई तो छत परके लोगोने दयाजनक ढगसे नीचेवाली भीडसे बचानेकी याचना की। हिटलर दूर खडा देखता रहा। उसकी आज्ञासे नारियलके एक पेडको गिराकर मकानकी दीवारके सहारे एक सीढ़ी बना ली गई और मकानमे से सारे पुरुषोको एक एक करके नीचे लाया गया, नगा किया गया, पेडोसे बाधा गया और उनकी स्त्रियोके सामने 'दावो'से उनके सिर धडसे अलग कर दिये गये। रायसाहब राजेन्द्रलाल चौधरीको अन्य लोगोसे अलग ले जाकर लकडीके लट्ठेसे बाधकर उनका सिर उडा दिया गया। कटा हुआ सिर जुलूस निकालकर हिटलरको भेट किया गया—"उन्मत्त भीड भयकर रूपमे शोरगुल मचा रही थी।"[१३]

इस बीच आसपासके तमाम घर पहले लूट लिये गये और फिर जला दिये गये। कालीप्रसन्न राउतने पासके एक पोखरमें कूदकर बच निकलनेकी कोशिश की, परन्तु दगाइयोको पता चल जानेसे उसे एक 'टेटा' की नोकसे तालाबसे बाहर खींच लिया गया और मार दिया गया (टेटा तेज आकड़ोवाला मछली पकडनेका कई दातोका भाला होता है)। स्त्रियोको अलग अलग स्थानो पर ले

जाया गया। "उनके आगे भी भीड चलती थी और पीछे भी चलती थी।"[१६]
उन पर व्यंग, कटाक्ष और कई अवर्णनीय अपमानोंकी वर्षा की गई। रातको
देरसे उनमें से कुछको वापस लाकर एक पडोसकी वाडीमें छोड दिया गया।
रायसाहब राजेन्द्रलालकी पत्नी और कुछ दूसरी महिलाओंने राजेन्द्रलालके एक
मुसलमान नौकरकी वाडीमें शरण ली। वहांसे एक सप्ताह बाद १८ अक्तूबरको
रसद-मंत्री अब्दुल गोफरानने उनका उद्धार किया। उस परिवारकी दो लडकियोंको
बदमाशोंकी एक टोली शाहपुर हाईस्कूलमें ले गई जहां उन पर बलात्कार किया
गया। फिर एकको शाहपुर बाजारमें ले जाकर मार डाला गया। दूसरी भाग
निकली अपना रास्ता भूल गई और एक दयालु मुस्लिम दुकानदारने उसकी
दशा पर रहम खाकर शाहपुरकी राजवाडीमें उसे पहुंचा दिया। उसने वहां
शरण ली। पर गुंडोंको उसका पता लग गया। उन्होंने धमकियां देकर उसे सौंप
देनेकी मांग की। बेचारी लडकी रोती हुई अपने हिन्दू यजमानोंसे प्रार्थना करती
थी कि उसे जहर देकर उसका प्राणान्त कर दिया जाय। परन्तु डरके मारे
उन्होंने उसे अंधेरी रातमें बाहर निकाल दिया। आकाशमें बादल छाये हुए थे
और सब जगह गहरा कीचड था। निराश होकर वह अत्याचारियोंमें से एक
दूसरी तरफ मुडी और अन्तमें उसने एक शिक्षकसे रक्षाकी प्रार्थना की। उसने
उसे आश्वासन दिया, उसे बहन कहा बादमें उसके साथ विश्वासघात किया और
कुछ दिन तक उसे अपने घरमें बन्द रखा और फिर उसे जगह जगह घुमाता
रहा। अन्तमें एक नाव द्वारा उसे पानीसे भरे हुए चावलके खेतोंमें ले जाकर
सादिरपारा गांवके निकट — यह गांव शाहपुर राजवाडीसे कोई आध मील
दूर था — मार डाला गया और उसकी लाश पानीमें फेंक दी गई।

दूसरे दिन रातके अंधेरेमें दंगाइयोंने लाशोंके सिर काट दिये। १२ अक्तूबर
को बिना सिरवाले धड भी वहांसे हटा कर थैलोंमें भर दिये गये और लामचर
गांवके पास एक तालाबमें फेंक दिये गये। १३ जनवरी, १९४७ को जब गांधीजी
उस स्थान पर गये तो इस लेखकके नाववालेने १३ लाशें भर थैले बाहर
निकाले। डॉ० गुणाल नम्बरने पोस्टमार्टमका जो रिपोर्ट दी, उससे प्रगट हुआ
कि उन लाशोंमें से दो लडकी स्त्रियोंकी थीं। उस दिन चौधरीवाडीके हताहतोंकी
संख्या इस प्रकार थी मारे गये २४, घायल हुए ६९ और लापता ९३।

वह रहस्यमय साधु त्र्यम्बकानन्द उसके अपने ही विवरणके अनुसार
दंगाइयोंके पहले आक्रमणके बाद चौधरीवाडीसे निकल गया। जब वह लौटा
तो उसने देखा कि मकान जल रहा है और उसके निवासियोंकी तथा उसमें
शरण लेनेवालोंकी लाशें सब जगह छितरी हुई हैं। तब वह जल्दी ही वहांसे
चल दिया, जंगलमें छिप गया और अधरातके बाद जल्दी ही पासवाला नाला
(नहर) को तैर कर पार कर गया। उस समय भारी वर्षा हो रही थी।

वह धानके खेतो और जगलोको पार करता हुआ किसी तरह रामगंज पहुचा। वहासे सशस्त्र पुलिसके पहरेमें उसे नोआखाली ले जाया गया और अन्तमें वह कलकत्ते पहुच गया। वहा जाकर उसने अपने साहसी कार्योका अखवारोको रग-विरगा विवरण दिया।

जव गाधीजी दत्तापारा शरणार्थी-छावनीमें ठहरे थे तव चौधरी परिवारकी एक ५ वर्षकी वच्ची — जो उस भीषण हत्याकाडसे वच गई थी — गाधीजीके सामने लाई गई। वह सरकारी अफसरो सहित सारे शिविरके लिए शुभ शकुनकी प्रतीक वन गई। वह जव चौधरीवाड़ीकी भयकर घटनाओका आखो देखा वर्णन अपनी निर्दोष तोतली वोलीमे करती थी, तव अनेक लोगोकी आखोमें आसू आ जाते थे।

एक दगाईने तोड़फोडके सामानमें से कालीप्रसन्न राउतकी अधजली वन्दूकका जला हुआ दस्ता उठा लिया था और दो वर्ष वाद उसका विचित्र इतिहास वन गया था। " महीनो वाद तक काली पडी और मुडी हुई टीनकी चादरोके ढेरके ढेर सव जगह विखरे दिखाई देते रहे। ऐसा मालूम होता था कि हवाई जहाजोसे वम गिरा कर नष्ट किया हुआ कोई नगर हो। जहा किसी समय मकान खडे थे ऐसी वीसियो जगह राख, अधजली लकडियो और घरके जले हुए सामानके ढेर लगे हुए थे। जहा तहा राखके ढेरोके वीच अचानक मानवोकी अधजली हड्डिया देखी जा सकती थी। एक जले हुए झोपडेमें गाधीजीको एक वच्चेकी खोपडी और एक छोटे शिशुकी उगलियो और वाहके अवशेष देखनेको मिले थे।

शाहपुर वाजारके भीषण विनाशके वाद हिटलरने अधिकारियोको सूचना भेजी कि 'वाहरके गुडो' ने आकर यह सव किया है और उसकी अपनी और स्थानीय लोगोकी जान खतरेमें है। उसने लूटके मालसे उन लोगोको सहायता देना भी शुरू कर दिया जो उसके शिकार हुए थे और मुसलमान वना लिये जानेके वाद अव जो उसके अपने ही आदमी हो गये थे। २२ अक्तूवरको सैनिक पुलिसने गिरफ्तार करके उसे हवालातमें ले लिया।

४

१० अक्तूवरको शाहपुरमें जो उपद्रव हुआ, उसके साथ ही साथ १३ मीलकी लम्वाईमें सोनापुरसे पचगाव तकके लगभग सभी वाजार लूट लिये गये। पचगावमें ५०० मुसलमानोकी भीडने, जो घातक शस्त्रोसे सुसज्जित थी, ११ अक्तूवरको पुलिस सुपरिंटेंडेंटके आज्ञा देने पर विखरनेसे इनकार कर दिया। विखरनेके वजाय उन्होने उसे एक अस्सी वरसके स्थानीय हिन्दू जमीदारके धर्म-परिवर्तन सस्कारमें शरीक होनेका निमत्रण दिया। १२ अक्तूवरको नोआखोलाके किसी दक्षिणी वावूका अत्यन्त जरूरी सन्देश मिला कि

उसकी जान खतरेमें है और उसकी रक्षा की जाय। पुलिस सुपरिटेंडटके पास पहुच कर उससे विनती की गई परन्तु वह अधिक सशस्त्र पुलिस अथवा सेनाकी सहायता मगानेको तयार न हुआ। नोआखाली नगरपालिकाके कायवाहक सभापतिने अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेटके साथ १३ अक्तूबरको उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रमें जानेकी कोशिश का। व नावदाना गाव तक पहुच गये। दूर उन्हें पश्चिमी मोहल्ला आगमें जलता हुआ दिखाई दिया। परन्तु वे पश्चिमकी आर अधिक बढ नही सके क्योकि सडक जलमग्न थी। और उन्हें मजबूर होकर लौट आना पडा। दक्षिणी बाबूकी १२ अक्तूबरको शामको हत्या कर दी गयी।

और इस प्रकार विनाश-लीला एक गावसे दूसरे गाव और एक थानसे दूसरे थाने तक फलती गई। गावा पर होनवाले नये नये आक्रमणा, सपूर्ण परिवाराकी हत्याओ सामूहिक धर्म-परिवर्तन आगजनी और लूटपाटकी भयकर महानिया गोपायरबाग नोआखोला चडीपुर आमिशपारा, दलालबाजार रायपुर नाआरी बडा गाविन्दपुर और हैमचरसे आती रही। सद्वीप नामक द्वीपमें उपद्रव १९ या २० अक्तूबरको शुरू हुआ और बादमें देर तक उसका असर बना रहा। मुख्य भूभागसे कट कर वह 'भयका द्वीप'[11] बन गया।

दगाई सब जगह अच्छी तरह तयार होकर आते थे। उनमें ऊच दर्जेका सगठन दिखाई देता था। व नताओंके अधीन काम करते थे और उनकी अलग अलग टोलियाके नाम उन गावा पर रखे जाते थे, जहासे उन्हें भरती किया जाता था। उनके लगभग सारे अपराध दिन-दहाडे होते थे। रात पडनेके बाद व बहुत हा कम काम करते थे। दगाई हमेशा बडी सख्यामें

सारे परिवारके लिए तात्कालिक प्राणदण्ड होती थी। इसके वाद जो भी चीज ले जाई जा सकती थी वह लूट ली जाती थी और घासलेट तथा पेट्रोलसे घरोको आग लगा दी जाती थी। स्थानीय लोगोने वताया था कि दगोके एक महीने पहलेसे उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रमे राशनकी दुकानो पर प्रेमके मार्गसे या रुपयेसे भी मिट्टीका तेल नही मिल सकता था।

आगजनीके वाद फिरसे लूटपाट होती थी। जो भी चीज आगसे वच जाती थी या पूरी तरह जल नही पाती थी — जैसे किवाड, खिडकियोकी चौखटे, लोहेकी चादरे वगैरा — वह लूट ली जाती थी। कई दिनो तक यह चलता रहा। जो लोग जीवित वच जाते उनसे कहा जाता था कि जीना चाहते हो तो इस्लामको स्वीकार करो। दगोके शिकार वने हुए लोगोसे कभी कभी धर्म-परिवर्तनकी सचाईके प्रमाणस्वरूप यह चाहा जाता था कि वे अपनी कुवारी, विधवा और कभी कभी विवाहिता पुत्रियोका भी 'विवाह' भीड द्वारा चुने हुए मुसलमानोके साथ पुन कर दे। इन सव मामलोमे गावके मौलवी, जो भीडके साथ होते थे, अपनी सेवाए देनेको तैयार रहते थे। इस प्रकार ये मौलवी एक ही साथ गुडो और धर्मगुरु दोनोका काम करते थे।

धर्म-परिवर्तनके वाद जो लोग दगोके शिकार होते थे उनके मकानो पर पहरे लगा दिये जाते थे। ऊपरसे तो यह उनकी रक्षाके लिए होता था, परन्तु इसका मूल उद्देश्य यह होता था कि वे भाग कर निकल न जाय और उनका धर्म-परिवर्तन स्थायी हो जाय। यह वात स्वय कुछ 'पहरेदारो' ने वादमे हमारे सामने स्वीकार की। कुछ स्थानो पर तो उपद्रवोके शिकार वने हुए लोगोके परिवारोको घेरे हुए क्षेत्रोसे वाहर जानेके 'परवानो' के रूपमे टोलियोके सरदार 'धर्म-परिवर्तन' के प्रमाणपत्र देनेकी धृष्टता भी करते थे।[१७]

वुद्धिशाली लोगो और सम्पन्न घरानोके तमाम पुरुष उत्तराधिकारियोका नाश करनेका व्यवस्थित प्रयत्न किया गया था। जिन लोगोने उपद्रवोमे भाग लिया उनमे यूनियन वोर्डों और मुस्लिम नेशनल गार्डोंके अध्यक्ष और सदस्य थे, मुस्लिम शिक्षक ओर स्कूल-कॉलेजोके छात्र थे तथा कौमके स्थानीय अपराधी तत्त्व और स्त्रियो तथा वच्चो सहित थोडी सख्यामे साधारण मुस्लिम ग्रामीण भी होते थे। वादमे गुडे लूटके मालके वटवारे पर आपसमे झगडते थे और कभी कभी एक-दूसरेके खिलाफ जानकारी दे देते थे। उपद्रवोके दिनोमें एक यूनियन वोर्डके भूतपूर्व अध्यक्षने किसी स्थानीय हिन्दू व्यापारीकी नाव चुरा ली। उसके पदके प्रतिस्पर्धी द्वारा दी हुई जानकारीके आधार पर इस ग्रन्थके लेखकने तत्कालीन जिला-मजिस्ट्रेट मि० मैक्इनर्नीकी मददसे नावका पता लगा कर उसके मालिकको वापस दिलवा दी थी। परन्तु अपराधी 'प्रमाणाभाव' मे साफ छोड दिया गया, क्योकि उसने तमाम गवाहोको डरा-धमका

दिया था। मुकदमेके दौरान सरकारी वकील और मजिस्ट्रेट अन्यान्तर कमरेमें मुद्दईके गवाहोंको 'गद्दार' बता कर धमकाते और कलंकित करते सुने गये थे क्योंकि वे गवाह अपने ही मुसलमान भाइयोंके खिलाफ 'काफिरों'की मदद दे रहे थे।

दूसरे महायुद्धके फलस्वरूप सेनासे हटाये हुए भूतपूर्व सैनिकोंकी एक बड़ी संख्या नोआखालीमें थी। उनकी संख्या सारे जिलेमें लगभग ५६,००० गिनी गई थी। उन्होंने सैनिक व्यूह रचनाका लाभ उपद्रवोंके समय लिया — सड़कें तोड़ दीं, नहरोंमें बांध बना दिये, टेलिग्राफके तार काट दिये और पुलिसको इधर-उधर बिखेर देने तथा गलत रास्ते लगा देने और प्रशासनको ठप कर देनेकी चालें चली गई थीं। बादमें कलकत्ता विश्वविद्यालयके डॉ० अमिय चक्रवर्तीने रिपोर्ट दी कि ये लोग समानान्तर पुलिस, जासूसी और सूचनाके संगठनकी व्यवस्थाके काममें लगे हुए थे। [१]

तिपरा जिलेके चार-पांचको कुछ थानोंमें सबसे अधिक हानि पहुंची। भारतीय सिविल सर्विसवाले श्री आर० गुप्ताको बंगाल सरकारने विशेष अधिकारी नियुक्त करके पीड़ित प्रदेशकी सच्ची परिस्थितियोंकी जांच करवाई थी। उन्होंने रायपुर थानेके दौरेके बाद ४ नवम्बर १९४६ को यह रिपोर्ट दी कि ८० से ९० प्रतिशत हिन्दू घरोंको आग लगाई गई थी और ९९ प्रतिशत घर लूट लिये गये थे। धर्म-परिवर्तन लक्ष्मीपुर और बेगमगंजमें भी बड़े पैमाने पर हुआ था। थानेके मुख्य केन्द्रों पर भी अभी तक बहुतसे धर्म-परिवर्तन करानेवालोंको विवश होकर मुस्लिम लिबास पहनना पड़ता था।'

धर्म-परिवर्तनका एक उल्लेखनीय उदाहरण रायपुर कांग्रेस कमेटीके मंत्री हरेन घोषका था। रायपुर थानेमें आगजनी १३ अक्तूबरको शुरू हुई। दस गुंडे रायपुर आये और बोले कि यदि सारे हिन्दू इस्लामको स्वीकार कर लें तो ६ नामोंकी सूचीवाले व्यक्तियोंके सिवा बाकीको बचा दिया जायगा। इन छहमें से तीनकी बादमें हत्या कर दी गई। १४ अक्तूबरको ५०० गुंडोंकी एक भीड़ने छुरा, लाठियां, बल्लम, रामदाओ, मिट्टीके तेल और पेट्रोलके साथ 'अल्लाहो अकबर तथा पाकिस्तान जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुए रायपुर पर हमला किया। वे लोग पहले तो सारी चल सम्पत्ति लूट ले गये फिर हिन्दू मन्दिरों और मूर्तियोंको नष्ट कर दिया गया और अन्तमें घासलेट और पेट्रोलसे सारे गांवको आग लगा दी गई। हरेन घोष भाग कर दिनमें जंगलों, पोखरों और धानके खेतोंमें छिपे रहे और रातको दो मुस्लिम कार्यकर्ताओंके घर पहुंचे। उन्होंने कहा कि आनेवाले नाजुक समयमें आप केवल धर्म-परिवर्तन करके ही बच सकते हैं। हरेन घोषको सहमत होना पड़ा। तदनुसार उन कार्यकर्ताओंने एक 'परिपत्र नं० १' लिख डाला और उसके ऊपर उनके हस्ताक्षर करा लिये।

१५ अक्तूबरको वे लोग हरेन घोषको रायपुरकी मस्जिदमें ले गये और वहा उन्हे बन्द रखा। यहा एक और 'परिपत्र न० २' लिखा गया, घोषके हस्ताक्षरोके साथ हजारोकी सख्यामें छपवाया गया और पहले परिपत्रकी तरह वहाके हिन्दुओ और मुसलमानोमें बाटा गया। यहा उन्हे १२ दिन तक बन्द रखा गया। "मेरा दैनिक भोजन चावल और गोमास था, जो मुझे जबरन् खिलाया जाता था। मुझे नमाज सिखाई गई और शुक्रवारको हजारो मुसलमानोके सामने मुझे इस्लाम धर्म और इस्लामी सस्कृति पर व्याख्यान देने पडते थे। इस बर्बरतामे जो नेता भाग लेते थे और सुबह-शाम रोज सूचनाये देनेके लिए मस्जिदमें इकट्ठे होते थे, उनमे एक विधान-सभाका सदस्य—थाना मुस्लिम लीगका मत्री, यूनियन शान्ति-समितिके दो मत्री, यूनियन बोर्डोके दो अध्यक्ष और एक जमीदार था।"[१९]

हैमचरके क्षेत्रमें श्री आर० गुप्ताको मालूम हुआ कि "सैकड़ो नामशूद्रो (परिगणित जातियो)के परिवार — जिन्हे बलात् मुसलमान बना लिया गया था — पूरी तरह अन्य लोगोसे अलग कर दिये गये थे और लगभग कैदियोकी स्थितिमें थे।" हैमचर प्रदेशमे तिपरा जिलेके चादपुर उप-विभागकी तीन यूनियने थीं। हैमचर बाजार इस क्षेत्रका शक्ति-केन्द्र था। बिलकुल उससे लगा हुआ उत्तरमे चरसोलादी ग्राम-समूह था और दक्षिण-पूर्वमे लगभग दो मील पर चारभगा नामक ग्रामक्षेत्र था। हैमचरमे एक अच्छा फलता-फूलता बाजार था। वह कोई ५० वर्ष पहले स्थापित हुआ था। वहाका व्यवसाय लगभग सारा हिन्दुओके हाथमे था। उस प्रदेशकी सामान्य सम्पन्नतामे मुसलमानोका बहुत थोडा भाग था। मुसलमानोके प्रति हिन्दुओका रवैया सब मिला कर घमडी और उद्धततापूर्ण था।

१४ अक्तूबरको जो हिन्दू रायपुर थानेके हैदरगज बाजारमे गये थे, वे बेचैन बनानेवाले समाचार लेकर वहासे लौटे। उनके पीछे पीछे ही लूट, आगजनी और हत्याकी भयानक कहानिया लेकर नोआखालीके शरणार्थी आये। सीमावर्ती गावोमें दिन भर आग जलती दिखाई देती थी और भयकर अफवाहें घटे घटे पर आती रहती थीं। एक अफवाह यह थी कि ४० हजारसे १ लाख तक मुसलमान बन्दूकें, तलवारे और भाले लेकर हिन्दुओ पर हमला करने आ रहे हैं। १४ अक्तूबरकी रातको चारभंगाके हिन्दुओने पडोसी गाव गडामाराके मुसलमानोके पास एक शिष्ट-मडल भेजनेका निश्चय किया। उनसे कहा गया कि तुम्हे इस्लाम स्वीकार करना होगा और मुस्लिम लीगको एक बडी रकम देनी होगी। वे सहमत हो गये। १५ अक्तूबरको सुबह पचास पचास और दो दो सौकी टोलियोमें मुसलमान लूटने और धर्म-परिवर्तन करनेके लिए आये। धर्म-परिवर्तन तो नामका ही हुआ, परन्तु लूट पूरी तरह

हुई। इसके विपरीत, चारगोलादामें हिन्दुओंने मुकाबला किया, परन्तु उसे धोखेबाजीसे बेकार बना दिया गया। फिर सारे हैमचर बाजारमें तीन दिन तक आगजनी और लूटका बाजार गर्म रहा।' भारतीय सिविल सर्विसवाले श्री सिम्पसनने जो नवम्बरके पहले सप्ताहमें इस क्षेत्रका दौरा करनेके लिए बंगाल सरकार द्वारा नियुक्त किये गये थे, अपनी रिपोर्टमें कहा 'पाइकपारा और हैमचर जैसे गांवोंमें मैंने जो कुछ देखा उससे मैं भयभीत हो गया। उपद्रव ग्रस्त सभी गांवोंमें किये गये विनाशका पूरा तरह वर्णन नहीं किया जा सकता। बड़े बड़े मकानोंका अस्तित्व मिट गया है। हैमचर बाजारकी स्थितिका कोई भी वर्णन तादृश चित्रण नहीं कर सकता। उसकी तो देखनेसे ही कल्पना की जा सकती है। लगभग सभी दुकानें आगमें नष्ट हो गई हैं और वहांका मलबा भयंकर दृश्य उपस्थित करता है। जब ३० अक्तूबरको मैं बाजार देखने गया तब एक स्थान पर आग जल रही थी। ऐसा लगता था मानो हवाई जहाजसे फेंके गये अतिशय स्फोटक बमोंसे सारे बाजारका नाश किया गया हो।

*

सर्वनाश, अंधकार और निराशाकी इस सामान्य भूमिकाके विपरीत व्यक्तिगत साहस और शौर्य तथा निष्ठा और अटल श्रद्धाके उदाहरण भी थे। वे इस बातकी याद दिलाते थे कि मानव हृदयकी दिव्य ज्योति राखसे ढक तो सकती है परन्तु कभी बुझती नहीं और मारकाटके बीच भी अहिंसाका नियम काम करता रहता है। ऐसे हिन्दुओंकी मिसालें मौजूद थीं, जिन्होंने धर्म-परिवर्तनसे मौतको ज्यादा अच्छा समझा। रायपुरके नवद्वीप पंडितका एक उदात्त दृष्टान्त था। उन्होंने थाना-अफसरके निमंत्रण पर रायपुर थानेमें अपने पास २० हजार नकद रख कर शरण ली थी। जब भीड़ थानेके पास पहुंची तो थाना-अफसरने उन्हें बाहर ढकेल दिया। भीड़ने उनका सारा नकद रुपया छीन लिया और उनके सामने धर्म-परिवर्तनकी मांग रखी। उन्होंने इनकार कर दिया और भगवानका नाम लेते लेते मरना पसन्द किया।

ऐसे भले मुसलमानोंके जिन्होंने अपने पड़ोसी हिन्दुओंको बचानेके खातिर अपनी जानको खतरेमें डाल दिया था कई उदात्त उदाहरण पतनके अंधकारमें चमकते हुए तारों दिया रहे प्रकाशमें आये थे। हसनाबाद गांवमें हिन्दू और मुसलमान दोनोंने ... की थी कि वे अपने यहांकी शान्तिको भंग नहीं होने देंगे। यह मालूम होने पर कि गुंडोंकी एक टोली एक खास जगह पर आक्रमणकी अपनी योजना निश्चित करनेके लिए इकट्ठा होगी मुसलमानोंने स्थानीय पुलिस थानेदारको उसकी सूचना कर दी जिसने उनके मिलनेकी जगह पर गुप्त चौकी रखी और सारे गुंडोंको गिरफ्तार कर लिया।

भटियालपुरमे, जहा वादमे मुझे रखा गया था, एक ईश्वर-भीरु मुसलमानने वहाके भले डॉक्टर चन्द्रशेखर भौमिकको न मारनेके लिए दगाइयोकी भीडसे वहुत अनुनय-विनय की। ये डॉक्टर गाधीजीके नोआखाली पहुचनेके वाद मेरे साथी और वगालीके दुभापिया वन गये थे। भीडमे से किसीने उन पर छुरीका घातक वार किया। परन्तु इस भले मुसलमानने उसे अपने ही हाथ पर झेल लिया, जिससे उसके हाथमे गहरा घाव हो गया। नवम्वर १९४६ मे जव मै शान्तिका कार्य कर रहा था, मै अनजाने ही खतरेकी जगह जा पहुचा था — जहा मै मौतसे वाल-वाल वचा था। परन्तु इस भले मुसलमानने एक और स्थानीय मुसलमानके साथ मेरे लिए रक्षा करनेवाले देवदूतका काम किया (देखिये खण्ड २, अध्याय ५, विभाग २)। वादमें हम कोई साल भर तक फिर नही मिले। एक दिन अधेरी रातमें उसने सुनसान पगडण्डी पर मुझे पुकारा · "मुझे पहचानते है?" मै उसे पहचान नही सका। वह हसा · "मै वही हू जो आपके और आपको मारना चाहनेवालोके वीच पडा था, जव आप हमारे वीच रहनेके लिए नये ही नये आये थे। मैने ही दगाइयोसे डॉ० शेखरकी रक्षा की थी, जव उनमें से एकने उन पर छुरीका वार किया था। मैंने तूफानके शान्त होने तक उनका सामान अपने घरमें छिपा कर सुरक्षित रखा था।"

जव उस वाडी पर, जहा मै वादमें भटियालपुरमें ठहरा था हमला हुआ, तो हिटलरने वाडीसे ५ नरमुडोका हिस्सा मागा। पर कुछ दगाई इस हद तक नही जाना चाहते थे। मामला फिर हिटलरके पास भेजा गया। तव उसने समझौतेके तौर पर यह प्रस्ताव रखा कि जिनकी अन्तरात्मा मेरी मागका विरोध करती हो, वे उन व्यक्तियोकी 'नेकचलनी' की जमानत दे जिन्हें वे वचाना चाहते है। तदनुसार चार मुसलमानोने तैयार होकर कहा कि यदि पसन्द किये हुए व्यक्ति कोई गलत व्यवहार करे तो हमारे प्राण ले लिये जाय। इस प्रकार उन्होने अपने हिन्दू पडोसियोके प्राण वचा लिये।

पडोसके करतखिल नामक गावमें एक अकेला मुसलमान साहसपूर्वक अपनी वात पर डटा रहा और उसने दगाइयोमें शामिल होनेसे इनकार कर दिया। उसके इस अपरावके लिए गुडोने उसकी गायका वध करके दावत की। हिटलरका भाई, जो आसपासके क्षेत्रमे धर्मगुरुके नाते प्रसिद्ध था, उपद्रवोमे होनेवाली घटनाओका खुले तौर पर विरोध करता था। जव पडोसके एक गावके हिन्दुओने, जिन पर खतरेके वादल मडरा रहे थे, उससे सलाह मागी कि क्या उन्हे धर्म-परिवर्तन करके सुरक्षित हो जाना चाहिये, तो उसने उनसे कहा कि जव तक इस्लाम अपने गुणोके आधार पर उन्हें अच्छा न लगे

और इस्लामका स्वीकार करनेकी उन्हें भीतरसे प्रेरणा न हो तब तक उन्हें अपना धर्म नहीं बदलना चाहिये।

एक और गावमें एक स्थानीय हिंदू डाक्टरके प्राण उसके मुसलमान पडोसियोंकी वफादारीसे बचे। उन्होंने कहा कि जो कोई हमारे डाक्टरके घर पर हमला करेगा उसे हम मार डालेंगे। और उन्होंने उसके घरकी रक्षाके लिए पहरा लगा दिया। चगीरगावमें जहा बादमें गाधीजीके दलकी एक और सदस्या डाक्टर सुशीला नय्यर रखी गई थी लुटेरोकी टोली एक हिंदू कम्पाउडरके घर पर पहुची। उसने घरमें लूटपाट करना और धार्मिक चित्रोको तोडना शुरू कर दिया। एक चित्रसे काचका टुकडा उड कर उस टोलीके नेताके परमें घुस गया। उसके परसे खूनकी धार बहने लगी। इस पर बूढा कम्पाउडर अपने दुर्भाग्यको भूल गया। वह उस आदमीको अपने आधे नष्ट किये हुए दवाखानेमें ले गया और अधिकसे अधिक सावधानी और ध्यानके साथ उसके परकी मरहमपट्टी की। गुडे बुराईके बदले भलाईके इस आशातीत चमत्कारको देख कर स्तब्ध हो गये। मुखियाने अपने आदमियोको वहासे हट जानेका हुक्म दिया और वह घर आगसे बच गया। उस स्थान पर वही एक घर आगकी बरबादीसे बचा था।

बेगमगज पुलिस थानेके रजाकपुर गावमें एक महत्त्वपूर्ण स्थानीय हिन्दू सज्जनको जो हिंदू और मुसलमान दोनोमें बहुत लोकप्रिय थे, मार डालनेकी योजना बनाई गई। इस पर विधान-सभाके एक स्थानीय मुस्लिम सदस्य और एक मुसलमान वकीलने उन्हें गुप्त चेतावनी भेज दी। एक मौलवीने उनके लिए अपना नाव और एक खेवट भेज दिया ताकि वे बच निकलें, और उसने खुद आकर उन्हें चादपुरकी गाडी पकडनेमें मदद दी और अश्रुपूर्ण नेत्रोसे उन्हें विदा किया। कुछ महीने बाद वह मौलवी मर गया तब उस निर्वासित शरणार्थीने भी उसकी मृत्यु पर आसू बहाये।

५

कलकत्तेके भीषण हत्याकाडके बाद ही होनेके कारण नोआखालीकी करुण घटनाके समाचार अखबारोमें बडे बडे शीर्षकोंसे प्रकाशित हुए। उससे मुस्लिम लीगकी और खास तौर पर बगालकी मुस्लिम लीगी सरकारकी प्रतिष्ठाको बहुत बडा धक्का पहुचा। सरकार उन घटनाओकी जिम्मेदारीसे बचनेके लिए तो बहुत उत्सुक था लेकिन कोई सख्त कारवाई करनेके लिए तैयार नहीं था।

१६ अक्तूबरको चटगाव विभागके कमिश्नरसे सम्पर्क साधा गया। उसने स्थितिकी गम्भीरताके बारेमें गृह विभागके अतिरिक्त-सचिवसे टेलिफोन पर बात की। १९ अक्तूबरको सारी घटनाका विवरण बगालके गवनरको बताया

गया और यह अपील की गई कि हिन्दू आवादीवाले जो क्षेत्र अन्य भागोसे अलग पड गये है, उनमे तत्काल प्रवेश करके उनको मदद दी जाय। इस समय तक दगाइयोने सारे रामगज और रायपुर थानोमें और वेगमगज तथा लक्ष्मीपुर थानोके कुछ भागोमे विनाशका अपना कृत्य पूरा कर लिया था और सारे प्रदेशमे गुडाराज स्थापित कर दिया था। यह प्रदेश शेप ससारसे विलकुल कट गया था। परन्तु मुख्यमत्रीने गवर्नरको यह विश्वास दिला देनेकी कोशिश की कि सारी वात 'अतिशय अतिशयोक्तिपूर्ण' है।

अन्तमे जव सेनाको भीतरी प्रदेशोमें प्रवेश करनेका हुक्म दिया गया, तो कुछ कटे हुए प्रदेशोमे इसका बहुत ही करुण और अकल्पित परिणाम हुआ। यह मालूम होने पर कि सेनाकी दो अधिक बेटालियने आकर पुन व्यवस्था स्थापित करनेका काम शुरू करनेवाली है, गुडे फिर अपने काममे लग गये। २२ अक्तूवरको 'दि स्टेट्समैन' के कार्यालय-प्रतिनिधिने समाचार भेजा कि एक थानेमे, जहा वह गया था, दर्ज की गई जानकारीके अनुसार पहले दिन २२ आदमियोका क्रूरतासे वध किया गया था। उनके शरीर आधे जला कर वेलोसे छाई हुई नहरोमें फेक दिये गये थे, ताकि लाशोका न तो पता लग सके और न उन्हे पहचाना जा सके। उसने लिखा था: "एक एक क्षणका मूल्य है और सेनाकी ओरसे तुरन्त कार्रवाई हो तो ही हजारो लोगोके प्राण वच सकते है।"[२१]

वेगमगज और रामगज थानोके एक सीमावर्ती गाव पचगावका चित्र देते हुए उसी सवाददाताने आगे लिखा . "पचगाव किसी समय सम्पन्न ग्राम था। परन्तु अव वह एक सुनसान उजाड स्थल वन गया है। वहाके जले हुए घर गुडोकी विनाश-लीलाकी मूक साक्षी दे रहे है। . एक और थानेमे, जिसका कुल क्षेत्रफल १५९ वर्गमील है और जहाकी हिन्दू आवादी १२७,००० है, दूसरे गावोकी भी लगभग ऐसी ही दुर्दशा है। . थानेकी रिपोर्टके अनुसार पिछले कुछ दिनोमे यहा ४९ मनुष्योका सहार किया गया है।"

सेनाकी भी अपनी कठिनाइया थी। जनरल वुशेरने कलकत्तेमे एक पत्रकार-सम्मेलनमे वताया कि धर्मांध गुडोकी टोलियोने, "जिन्होने अपना सगठन एक विशेष योजनाके अनुसार किया था," अपना काम आवागमनके साधनोसे दूर दूरके स्थानोमे आरम्भ किया था और जब पुलिस और सेना उनके समीप पहुच जाती थी तव वे और भी अन्दरके भागमे चले जाते थे। यह पूछने पर कि उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोमे फौजी कानून क्यो नही घोपित कर दिया गया, उन्होने उत्तर दिया कि जव तक सैनिकोके प्राणोकी रक्षाके लिए मै जरूरी न समझू तव तक फौजी कानून घोपित करनेकी सत्ता मेरे पास नही है। अन्य

अवसरा पर यह काम पदारूढ सरकारसे सलाह करके करना होता है। मेरे विचारसे उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोंमें सैनिकोंका जीवन खतरेमें नहीं था।"

जहां तक पदारूढ सरकारका सम्बन्ध था उसे तो इसी बातकी चिन्ता थी कि घटनाओंकी गम्भीरताको कमसे कम बताया जाय और दुनियाके सामने यही कहा जाय कि कोई बहुत गम्भीर बात नहीं हुई है। मुल्की रसद-मंत्री अब्दुल गफ्फरान २० अक्तूबरको उपद्रव ग्रस्त क्षेत्रमें गये। वे दोपहरसे पहले रामगंज पहुंच गये थे, परन्तु उन्हें शरणार्थी शिविरमें जानेका समय नहीं मिला। इसके बजाय वे २ मील दूर एक गांवमें चले गये। वहां जाकर उन्होंने एक ऐसे मुसलमानके यहां नाश्ता किया, जो उपद्रवियोंका एक सरदार बताया जाता था। वे बराबर यही बताते रहे कि उपद्रवकी जिम्मेदारी 'बाहरवालों' की थी और स्थानीय मुसलमान सदा उसका विरोध करते रहे थे।

२५ अक्तूबरको बंगाल प्रांतीय मुस्लिम लीगकी कार्यसमितिके कुछ सदस्योंने नोआखालीके उपद्रव ग्रस्त क्षेत्रोंके दौरेमें अपने मन पर पडी छापका वर्णन करते हुए कहा "घटनाओंको जितना गम्भीर बताया गया है उतना गम्भीर वे थीं नहीं। स्त्रियों पर बलात्कारकी अथवा स्त्रियोंको भगानेकी कोई घटना नहीं हुई और आगजनी तथा सम्पत्तिके विनाशका कोई बड़ा सबूत हमें नहीं मिला।"[१] (मोटे टाइप मेंने किये हैं।) उसी दिन बंगालके मुख्य मंत्रीने अखबारोंको एक वक्तव्य दिया और उसमें कहा कि 'स्थिति निश्चित रूपसे काबूमें है और अधिकांश समाचार सत्यके बजाय भयको अधिक प्रगट करते हैं।'[२]

जनरल बुशेरके कथनानुसार उस समय आसपासके उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोंमें सेनाके १५०० सैनिक काम कर रहे थे। उनके अलावा, इन्स्पेक्टर जनरल आफ पुलिस श्री टेलरके कथनानुसार प्रान्तके सभी जिलोंसे बुलाये हुए ४४० सशस्त्र पुलिसके सिपाही तथा बहुतसे अफसर थे। एक सरकारी वक्तव्यमें कहा गया था कि सेना जो शस्त्र काममें ले रही थी 'उनमें मशीनगन ब्रेनगनें, बन्दूकें और पिस्तौलें भी थीं। उसके पास गोले फेंकनेवाली छोटी तोपों और दूसरे शस्त्रास्त्रका भंडार भी था।'[३]

परन्तु शक्तिकी इस सारी शस्त्र-सामग्रीसे जो संरक्षण मिल सकता था वह बंगाल सरकारके रवैये और नीतिके कारण लगभग हास्यास्पद-सा हो गया था। इससे पहले ब्रिगेडियर पी० एन० थापरने एक वक्तव्यमें कहा था कि छिछले पानीकी नावें — जो मंगाई गई हैं — पहुंच जायगी त्यों ही 'वे उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोंके हर गांव और घरमें पहुंच जायंगे ... जो गुंडे अराजकताके लिए जिम्मेदार हैं उनकी तलाशमें सारे स्थान छान लिये जायंगे और उन लोगोंको हटानेके लिए कष्ट निवारण संगठन बना दिये जायंगे, जो अपने घरोंको छोड कर

उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोसे वाहर जाना चाहेगे।"[२६] परन्तु वगाल सरकारकी निश्चित की हुई नीतिके अनुसार जनरल बुशेरने ब्रिगेडियर थापरके वक्तव्यका खडन करते हुए यह कहा कि, 'स्पष्टतः' ब्रिगेडियर थापरका वक्तव्य सही रूपमें अखवारोको नही भेजा गया। "समग्र नीति यह है कि लोगोको अपने गावोमे रहनेके लिए समझानेकी कोशिश की जाय, जव तक वे वहा रहे उन्हे सुरक्षा प्रदान की जाय और जो लोग चले गये है उन्हे अपने गावोमे वापस लानेकी कोशिश की जाय।"[२७]

इस प्रकार "सेना और सशस्त्र पुलिसकी रक्षा" की आड़मे गुडोके नाग-पाशमे लोग फसे रहे और एक तरहसे उसे नया जीवन प्राप्त हो गया। जव तक सेना पर आक्रमण न किया जाय तव तक अपनी तरफसे उसे कोई कार्र-वाई करनेका अधिकार न था। और कुछ भिडन्तोके वाद गुडोने सैनिकोसे दूर रहनेकी वुद्धिमानी सीख ली थी। वे सशस्त्र सैनिक पहरेदारोकी मारके वाहर रहते थे। परन्तु उनसे दूर रह कर भीतरी भागोमे वे अपना काम वहुत कुछ पहलेकी तरह करते रहे और अल्पसख्यक जाति पर आत्माका हनन करनेवाले गैर-कानूनी आतक, दमन और अत्याचारका ऐसा शासन जमाये रहे, जिसका इति-हासमें दूसरा उदाहरण मिलना कठिन है। दूसरोके सामने वे यह दिखावा करते रहे कि वास्तवमे वे अपने हिन्दू पडोसियोके सच्चे रक्षक है और विनाशका कार्य अनजान 'वाहरवालो' ने आकर किया है। और इस निर्दय झूठकी पीडितोको गुडोसे भयभीत होकर ताईद करनी पडती थी और उन लोगोके सामने उसे दोहराना पडता था, जो उनका उद्धार करने वहां आते थे। पीडितोको यह भी कहना पडता था कि वे अपने अत्याचारियोकी छत्रछायामे वहुत सुखी है और वलात् कहे जानेवाले धर्म-परिवर्तन और विवाह वास्तवमे स्वेच्छासे हुए है! वादमे स्थानीय अधिकारी इन निवेदनोको उन कष्ट-निवारक सस्थाओके सामने रख देते थे, जो उद्धार-कार्य करनेके लिए वहा भेजी जाती थी। इस वीच पीडितोकी लूट तो चलती ही रही और ऐसे उदाहरण भी सामने आये जिनमे पीडितोको ऐसी वाते स्वीकार करनेके लिए विवश किया जाता जिन्हे कहनेमे भी लज्जा आती।

जवरदस्ती शादी करा देनेका एक प्रसिद्ध उदाहरण पचघरिया गावकी आरती नामक लडकीका था। उसका विवाह एक स्थानीय यूनियन वोर्डके अध्यक्षके भतीजेसे जवरदस्ती कर दिया गया। उसे धमकी दी गई कि यदि उसने विवाहकी वात स्वीकार नही की, तो उसके परिवारका और गावकी समूची हिन्दू वस्तीका वहुत वुरा हाल कर दिया जायगा। वह सहमत हो गई और गुडोने गावको छोड दिया। वादमे जिला मजिस्ट्रेट मि० मैक्इनर्नी कलकत्तेके एक प्रसिद्ध पत्रकार माखनलाल सेनके साथ आरतीके भावी ससु-

उन्मत्त भीडके शासनमें जो जो भयकर नास हो सकते ह उन सबका शिकार उन्हें बनना पडा।

श्री सिम्पसनकी ५ नवम्बर १९४६ की रिपोर्ट अधिक विस्तत है। उसमें तिपरा जिलेकी स्थितिकी चर्चा की गई है। उन्होंने देखा कि गाववाले 'स्त्रियाको भगा ले जाने अथवा उन पर किये गये बलात्कारके बारेमे कुछ कहनेको तयार नही थे परन्तु बलात धम परिवतनकी जानकारी व तुरन्त देते थे। बहुतसे लोगोने उन्हे वे टोपिया दिखाइ जो 'धर्म-परिवतन करने-वालो' को इस्लाम स्वीकार करनेकी निशानीके तौर पर पहननी पडती थी। श्री सिम्पसनने इस दलीलको नही माना कि धम-परिवतन स्वेच्छासे हुए थे। मने निश्चित रूपसे पता लगाया कि कुछ मामलोमें जिन हिदुआकी स्त्रियोको अस्थायी रूपसे बधनम रखा गया था उन्होने स्वेच्छासे इस्लाम स्वीकार किया ताकि स्त्रियोको गुडोसे छुडाया जा सके। परन्तु जाचके परिणामसे मालूम हुआ कि लोगोको मौत और दूसरी हानिकी धमकिया देकर मुसलमान बननेके लिए विवश किया गया था।' उन हिदुओके लिए, जिनकी स्त्रियाको अस्थायी रूपसे बधनम रखा गया था मत्युसे अधिक दूसरी हानि क्या हो सकती थी इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है।

लूटपाटके बारेम उन्हे कोइ शका नही थी कि लूटपाट बहुत व्यापक पमाने पर हुइ और जहा कहा मकान आगसे नष्ट नहा किये गये वहा भी सम्पूण रूपमें और कुशलतापूवक लूट मचाई गई।"

श्री सिम्पसनने गावामें जाकर यह पता लगानेकी कोशिश की कि आक्रमणकारी गावके जाने हुए लाग थे अथवा और कहासे आये हुए अनात तूफानी या गुडे थे। मुझे लगभग हर जगह यह कहा गया कि सम्बधित व्यक्ति या तो उन्ही गावाके रहनेवाले मुसलमान थे या पडोसके गावाके। जब मने उनके नाम पूछे तो तुरत मुझे उनके नाम दिये गये। **मुझे बताया गया कि ये व्यक्ति मामूली ग्रामीण थे, जो उपद्रवसे पहले शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे और उनके हिंदू भाई उनका आदर करते थे।"** (मोटे टाइप मने किये ह।)

फरीदगज और चान्दपुरके उपद्रव ग्रस्त क्षेत्रोमें लोगोका नतिक साहस बहुत कम हो गया था। फरीदगज चादपुर और कुमिल्लामें शरणार्थियोकी बडी सख्या थी। २ नवम्बरको फरीदगजमें लगभग ६ हजार शरणार्थी थे, जिन्हें नावामें भर दिया गया था और किनारे पर बनी झापडियामें शरण दी गई थी। बहुतोको सग्रन पचिश और दूसरी बीमारिया हो रही थी।"

गुडाके टोलोके सरदाराने कह दिया था कि वे जो कुछ करगे उस पर सरकार कोई कारवाइ नहा करेगी क्योकि सरकार उनकी पीठ पर है।

इसलिए उन्हे वडा आघात लगा जव वादमें पुलिस और सेना वहा आ पहुची और उन्होने कड़ी कार्रवाई करनेका सकेत दिया। उनसे पिंड छुडानेके लिए उनके खिलाफ 'अत्याचारो' का नारा सगठित किया गया और मुस्लिम स्त्रियोकी लाज लूटनेकी वात भी पैदा कर ली गई। पुलिसके आदमियोके विरुद्ध झूठे मुकदमे दायर कर दिये गये। यह सशस्त्र पुलिस और सेनाको वहासे हटवानेके सामान्य आन्दोलनका एक भाग था। मुस्लिम लीगकी पदारूढ सरकारकी मन स्थिति और नीतिको अपनी अपनी समझके अनुसार प्रतिविम्बित करनेवाले मजिस्ट्रेटोने इस वातको नही छिपाया कि उनकी सहानुभूति किधर है। श्री सिम्प्सनने अपनी रिपोर्टमें कहा कि, "मुझे मालूम हुआ है कि वहुत थोडी जमानतो पर अभियुक्तोके छोड़ दिये जाने पर पुलिस अधिकारियोको गम्भीर चिन्ता हो रही है। . . . पुलिसकी जाच करनेवाले अधिक कर्मचारी होने चाहिये और झूठे मुकदमे दायर करनेकी वातसे पुलिसके अधिकारियोको वचानेका कोई उपाय ढूढना चाहिये। मुझे पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्टने सूचना दी कि पुलिसके आदमियोके खिलाफ २०१ मामले दायर किये गये है और जिला मजिस्ट्रेटने मुझे हाजीगजमें कहा कि उस थानेके गावोमे सेनाके आदमियोके दुराचरणकी १०० से अधिक रिपोर्टे उन्हे वताई गई है। . . . पुलिस अधिकारियोकी यह राय है कि पुलिस और सेना दोनोके आदमियोके विरुद्ध झूठे मामले पेश किये जा रहे हैं और इसका तथा अभियुक्तोको जमानतो पर छोडनेका ऐसा निराशाजनक परिणाम होगा कि पुलिस दलके छोटे अधिकारियोका नैतिक साहस और कार्यनिष्ठा मन्द पड़ जायगे।"

विनष्ट प्रदेशोका एक सामान्य चित्र देते हुए श्री सिम्प्सनने लिखा :

> पीडित गावोमे अव्यवस्था फैली हुई है। मकान सब नष्ट कर दिये गये है। चल सम्पत्तिके कोई चिह्न दिखाई नही देते। चारो ओर निराशा और भय छाया हुआ है। जो थोड़ेसे लोग रह गये है, वे भी जानेको आतुर है। विनाश इतना सम्पूर्ण है कि लोहेकी चद्दरोके सिवा — जिनका लूटना इस समय भी जारी है — मकानोके मलवेमे कुछ भी शेष नही रह गया है। ईंटके वने हुए मकानोके भीतरी हिस्से जल गये हैं और दरवाजे और खिडकियोकी चौखटे आगमें नष्ट हो गई है। छोटे छोटे निजी मदिर वड़ी सख्यामे जला दिये गये है, मूर्तियां नष्ट-भ्रष्ट कर दी गई है और कमसे कम एक वडा और पुराना ईंटोका वना हुआ मन्दिर लूट लिया गया है और भ्रष्ट कर दिया गया है। कुछ गांवोमें — जहा मैं गया — थोडेसे वचे हुए हिन्दू निवासी डाव (नारियल), केले — जहां कही मिल जाय, और जिसे 'काचू' कहते है उस पर गुजर कर रहे है। फरीदगज जैसे शरणार्थी केन्द्रोका दृश्य आसानीसे भुलाया नही जा

सकता। लोग नावोमें भर दिये गये ह। उनमें पुरुष, स्त्रिया और बच्चे सभी ह। किनारो पर बने हुए झापडे खचाखच भरे हुए ह। बीमारी और निराशा फली हुई है। उन लोगाके विचारामें और काममें भविष्यके लिए कोई विश्वास, सुरक्षा और आशाका चिह्न दिखाई नही देता।

अन्तमें श्री सिम्प्सनने लिखा है कि इस परिस्थितिमें मेरी रायमें उपद्रव ग्रस्त गावोमे तुरन्त वापस लौटनेकी कोई बात नही हो सकती, जब तक कि मेरी बताई कुछ महत्त्वपूर्ण बाते अथवा 'उसी तरहके' अय उपाय न किये जाय। *दुर्भाग्यसे श्री सिम्प्सनकी अधिकाश सिफारिशें खटाईमें डाल दी* गइ और वे बगाल सरकारके सचिवालयकी अलमारियासे कभी बाहर नही निकली।[२८]

*

गाधीजीके मित्र बेचन हो उठे। एक ओर नितान्त निराशा और साहस हीनताके नरकका और दूसरी ओर जान-बूझकर चलाये जानेवाले झूठ और धोखेबाजीका गाधीजी पर क्या असर हागा? शायद इसके उत्तरम व आमरण अनशन आरभ कर दें। कुमारी म्यूरिअल लेस्टरने नोआखालीसे गाधीजीको एक पत्रमें लिखा केवल नोआखालीकी घटनाआने ही उहे (नोआखालीके उपद्रव ग्रस्त क्षेत्राके लोगाको) वह आघात नही लगाया है जिसे वे बरदाश्त कर रहे ह किन्तु इस प्रतीतिने भी उहे वह आघात पहुचाया है कि यहा उनके लिए काई सलामती नही है, कोई सरक्षण नही है ऐसा कोई नतिक नियम नही है जो उनसे अधिक शक्तिशाली हो। हम अहिंसक लोग जानते ह कि पुलिस और सेना हमें नही बचा सकती। उह इसका पता अभी लगा है। यह हिम्मत तोड देनेवाली प्रतीति है और एक महान अवसर भी है। उह शान्त, सबल आत्म विश्वासकी जरूरत है। "

कुमारी लेस्टरने अपने पत्रमें "नात हिटलरी पद्धतिसे आम लागाको सुसज्ज करनेका उल्लेख किया। इहा लोगोने यह आन्दोलन सगठित किया था और व "अभी भी जेलसे उसका सगठन करते मालूम होते ह।" (मोटे टाइप मने किये ह।) व लोग तो गाधीजीकी मत्युसे प्रसन्न ही होगे। कुमारी लेस्टरने गाधीजासे प्राथना की कि वे उपवास आरभ न करे — न केवल अपने मित्राके खातिर परन्तु उन गुडाके खातिर भी जिह अपने बीच गाधीजीकी उद्धारक उप स्थितिकी कहा अधिक आवश्यकता है। "(मुस्लिम) लडका और बालकाके समुदायाको नी आजकी उनकी जीवन-दृष्टिसे उबारनेके लिए एक जीवन्त अनुभवकी आवश्यकता है। उन्हाने नोआखालीक इन दगामें बहुत बडा भाग लिया है।

बारहवां अध्याय

प्रसव-वेदना

१

भगीबस्तीके अपने सादे, सफेदी किये हुए और फर्नीचरसे रहित छोटेसे कमरेमे एक पतली-सी सफेद गद्दी पर गाधीजी पलथी लगाये बैठे थे। वे कलकत्तेके भीषण हत्याकाड और उसके बादकी घटनाओको ध्यानमे रखकर पडित नेहरूके साथ अपने भावी कार्यक्रमकी चर्चा कर रहे थे। उनका विचार सेवाग्राम आश्रमको लौट जानेका था। मुस्लिम लीगके अन्तरिम सरकारमे आ जानेसे फिलहाल दिल्लीमे उनका काम समाप्त हुआ दीखता था। पडित नेहरू पर कलकत्तेकी करुण घटनाका और उसने लोगोकी मनोवृत्ति पर जो असर डाला था उसका बडा गहरा प्रभाव पडा था। उनकी सवेदनशील और सुसस्कृत आत्मा सम्प्रदायवादकी कल्पनासे ही काप उठती थी। प्राण-हानिसे भी अधिक उन्हे जिस बातकी पीड़ा हुई वह उस घटनासे होनेवाला मानव-आत्माका अध पतन था। उन्होने दु.खपूर्वक कहा, "जो लोग कभी सम्प्रदायवादकी दृष्टिसे सोचते तक नही थे, वे भी आज सम्प्रदायवादी बन रहे हैं। सर्वत्र पागलपन फैल गया है।"

दो दिन बाद नोआखालीके समाचार आये। जो बातें दिल्ली पहुंची थी उन्हे बैठकर सुनते सुनते ही गाधीजीने मनमे सकल्प कर लिया। "अगर मै दिल्ली छोडूगा तो सेवाग्राम लौटनेके लिए नही, परन्तु बगाल जानेके लिए ही। नही तो यहा रहकर ही कुढता रहूगा।"[1] इस प्रकार सेवाग्राम लौटनेका कार्यक्रम स्थगित हो गया।

बगालके दो मित्र सतीशचन्द्र दासगुप्त और सतीन सेन उस दिन शामको पूर्व बगालके उपद्रवोके सबंधमे गाधीजीसे मिले। सतीशबाबू महान वैज्ञानिक सर प्रफुल्लचन्द्र रायके प्रसिद्ध शिष्य थे। उन्होने बगाल केमिकल एण्ड फार्मास्यूटिकल वर्क्स (कलकत्ता) के व्यवस्थापककी ऊची नौकरी छोड़ दी थी और अपनी निष्ठावान पत्नी हेमप्रभा देवीके साथ सन् १९२० के आस-पास असहयोग-आन्दोलनके आरम्भमें त्याग और सेवाका जीवन स्वीकार कर लिया था। सतीन सेन बगालके एक महारथी नेता थे। गाधीजीने उन्हें बताया कि उनके मनमे क्या चल रहा है। बगाली मित्रोने उनसे प्रार्थना की "पहले हमे नोआखाली जाने दीजिये। हमे यथाशक्ति प्रयत्न करनेका अवसर दीजिये, उसके बाद जरूरत हो तो आप वहा जा सकते हैं।"

अन्तरिम सरकारके एक सदस्य शरत्‌चन्द्र बोस कुछ समय बाद इस मडलीमें शामिल हो गये। मडलीके एक सदस्यने गाधीजीसे पूछा कि क्या आप बगालमें साम्प्रदायिक पागलपनका जो ताडव चल रहा है उसे रोकनेके लिए उपवासकी पद्धतिकी सिफारिश करेंगे? गाधीजीने उत्तर दिया "नही।" अहमदाबादसे एक आदरणीय साथीने उन्हें सुझाया कि वे आमरण उपवास करके शहीद हो जाय "हममें अहिंसक मार्गका विश्वास तो है परन्तु उस पर चलनेका बल नही है। आपके उदाहरणसे हमारी डगमगाती श्रद्धा स्थिर हो जायगी और हम बलवान बना देगी।"

तर्क सम्पूर्ण था और प्रलोभन बहुत बडा था। परन्तु मैंने उसका विरोध किया और कहा 'नही। भीतरसे ऐसा कोई आदेश मुझे नही मिल रहा है। उपवास यात्रिक रूपमें नही किया जा सकता। यह शक्तिशाली वस्तु है लेकिन इसे अकुशल ढगसे किया जाय तो यह खतरनाक भी है। इसके लिए पूरी आत्मशुद्धि चाहिये। बदलेकी भावनासे मृत्युका सामना करनेमें जितनी चाहिये उससे कही अधिक आत्मशुद्धिकी जरूरत उपवासमें है। सम्पूर्ण त्यागका ऐसा एक कार्य भी सारी दुनियाके लिए पर्याप्त होगा। ईसाका उदाहरण ऐसा ही माना जाता है। एक व्यक्तिने, जो पूरी तरह निर्दोष था दूसरोंकी भलाईके लिए अपना बलिदान कर दिया। इन दूसरोंमें उसके शत्रु भी सम्मिलित थे और वह ससारका उद्धारक बन गया। यह एक सम्पूर्ण कार्य था। ईसाके अन्तिम शब्द ये थे 'कार्य सपूर्ण हुआ।' और उसके प्रमाणभूत होनेका प्रमाण हमें ईसाके चार शिष्योंसे मिलता है। परन्तु परम्परागत ईसा इतिहासकी दृष्टिसे सच्चा है या नही, इसकी मुझे परवाह नही है। मेरे लिए यह वस्तु इतिहाससे भी अधिक सच्ची है, क्योंकि मैं उसे सभव मानता हू और उसमें एक शाश्वत धर्म निहित है। वह धर्म सच्चे अर्थमें दूसरोंके लिए निर्दोष कष्ट-सहनका धर्म है।'

हालके साम्प्रदायिक उपद्रवोंमें एक हिन्दू और एक मुसलमानने बबईमें पागल बनी हुई भीडके कोपका बहादुरीसे सामना किया था और दोनो बाहुपाशमें बध कर मर गये परन्तु एक-दूसरेका साथ उन्होने नही छोडा। अहमदाबादमें रजबअली और वसन्तराव हेंगिष्टे शाहरमें शाति स्थापित करनेके प्रयत्नमें मारे गये। लोग पूछ सकते है, इससे क्या हुआ? आग तो अभी तक धधक रही है। मैं क्षणभरके लिए भी नही सोच सकता कि यह सब व्यर्थ गया। आज भले हमें उसका असर दिखाई न देता हो। हमारी अहिंसा अभी तक पूर्ण शुद्ध वस्तु नही है। यह खोटी है। फिर भी वह है और मौन व अदृश्य रूपमें खमीरकी तरह काम कर रही है, जिसे अधिकाश लोग नही समझते। परन्तु यही एक मार्ग है।

अन्तमे गाधीजीने कहा "इसलिए जाओ। मेरा आशीर्वाद है। और मैं यह भी कह दू कि कल ही मुझे आप तीनोके मरनेके समाचार मिले, तो मै आसू न बहाकर प्रसन्न ही होऊगा।"

वे बोले, "इस तरह मारा जाना हमारे लिए शुद्ध आनन्दकी बात होगी।"

"परन्तु मेरे शब्दोका ध्यान रखना। इसमे किसी प्रकारकी मूर्खता नही होनी चाहिये। आपको इसलिए जाना चाहिये कि वहा जाना आप अपना धर्म समझते हैं, इसलिए नही कि मै कहता हू।"

"यह कहनेकी जरूरत नही है," साम्प्रदायिक आगका सामना करने जानेवाले तीनो मित्रोने गाधीजीसे विदा लेते हुए एकसाथ उत्तर दिया।

परन्तु उनमे से कोई भी गाधीजीसे पहले नोआखाली नही जा सका। शरत् बोसने स्थितिकी गभीरताको समझनेके लिए उपद्रव-ग्रस्त प्रदेशका तेजीसे दौरा किया। सतीशचद्र दासगुप्तने कलकत्ते लौटकर अहिंसाकी प्रतिज्ञावाले कार्यकर्ताओका दल सगठित करके उसे उपद्रव-ग्रस्त प्रदेशमे पहलेसे भेजनेका काम शुरू कर दिया। उनमें से दो — विश्वरजन सेन और भूपालचन्द्र कामर — दो अन्य स्थानीय कार्यकर्ताओके साथ ३० अक्तूबरको उपद्रवके केन्द्र शाहपुर बाजार पहुचे। उन्हे चेतावनी दी गई कि यदि वे पुलिसके सरक्षणके बिना गये तो जरूर मारे जायगे। रास्तेमे दो स्थानीय कार्यकर्ताओमे से एक डरके मारे रुक गया। शाहपुरके नजदीक इस दलको मुसलमानोकी एक टोलीने रोक कर उनसे अशिष्टतापूर्ण प्रश्न किये और उनके सामानकी तलाशी ली। टोलीमे से कुछ लोगोने सुझाया कि उन्हे जबरदस्ती रोक लिया जाय। शाहपुर बाजारमे एक मुस्लिम भीडने उन्हे घेर लिया। उसकी सख्या बढते बढते ४ या ५ सौ तक पहुच गई। यहा भी एक घटेसे अधिक उनके थैलोकी तलाशी ली गई। इस बीच उस प्रदेशका थाना-अधिकारी आ पहुचा। विश्वरजनने उसे सुझाया कि अपने साथ हम कुछ स्थानीय मुस्लिम नेताओको भी ले चले और दगोके शिकार बने कुछ हिन्दुओसे मिले, जिन्हे जबरदस्ती मुसलमान बना लिया गया है और जो भयभीत होकर जी रहे हैं। अफसरने कहा, मेरे पास समय नही है। "भीड़मे से किसीने एक छुरी निकाल कर थाना-अधिकारीके सामने पेश की। उसने कहा कि यह उसे तलाशीके दौरान मेरे साथीके थैलेमे मिली है। मैंने आपत्ति की कि यह सफेद झूठ है। अधिकारीने मुस्करा कर टोलीके सरदारोको बताया कि हमारे छोटेसे थैलेमे से इतनी बडी छुरी नही निकल सकती। चुपकेसे उसने मुझसे कहा कि खुद उसे भी इस टोलीका डर है।"[३]

ये दोनो कार्यकर्ता नोआखालीमे ही रहे। जब गाधीजीके नोआखाली पहुचनेके बाद वहा उनकी छावनी कायम हुई, तब वे उसके सदस्य बनकर उसमे जुड गये। उनमे से एक भूपालने मेरे बगला दुभापियेका काम किया, जब

बादमें गाधीजीने मुझे उनकी "करो या मरो"की योजनाके अनुसार एक गावमें नियुक्त कर दिया। दूसरे साथी विश्वरजन १० वर्षके बाद भी आज नोआखालीमें रहते है और अपने गुरुकी भावनाके अनुसार अपने सुन्दर कार्यमें लगे हुए है।

*

१५ अक्तूबरकी शामको गाधीजीने सरदारसे कहा, "मै यह जाननेका प्रयत्न कर रहा हू कि आज मेरा धर्म क्या है।' उस दिनके प्रार्थना प्रवचनमें उन्होंने कहा आपका स्नेह और आदर खो देनेका खतरा उठाकर भी मै आपसे कह देना चाहता हू कि आपकी अहिंसा एक कायरकी युक्ति मानी जायगी यदि वह सबल अग्रेजोके विरुद्ध ही प्रयोग करनेकी वस्तु हो और आपके अपने भाइयोके खिलाफ आप खुलकर हिंसाका उपयोग करे। हिन्दुओके साथ नोआखालीमें मुसलमानोने जो कुछ किया उसका बदला लेनेका कोई विचार मनमें नही रखना चाहिये। मै मुस्लिम लीगसे अपील करता हू कि वह आत्म निरीक्षण करे। जिन्नाने घोषणा की थी कि पाकिस्तानमें अल्पसख्यकोकी पूरी तरह रक्षा की जायगी और हर नागरिकको न्याय मिलेगा। यदि जो कुछ पूर्व बगालमें हो रहा है वह भविष्यका सूचक हो, तो वह पाकिस्तानके लिए अशुभका द्योतक है।

१८ अक्तूबरकी प्रार्थना-सभामें गाधीजीने बहुतसे तारोका जिक्र किया, जो उन्हे मिले थे और जिनमें बगालकी भयकर आगको शान्त करनेके लिए वहा जानेकी उनसे विनती की गयी थी। उन्होने कहा मै वहा जानेको उत्सुक हू। मै ज्यो ही दिल्लीके कामोसे मुक्त हूगा, त्यो ही पूर्व बगालके उपद्रव ग्रस्त क्षेत्रको देखने जाना चाहता हू। लेकिन मैने पूरी तरह अपने आपको ईश्वरके हाथोमें रख दिया है।

एसोसियेटेड प्रेस आफ अमेरिकाके प्रेस्टन ग्रोवरने एक भेटमें गाधीजीसे पूछा क्या मुसलमान आपकी बात सुनेंगे?

गाधीजीने उत्तर दिया मुझे पता नही। मै कोई आशा लेकर नही जाता हू। परन्तु मुझे आशा रखनेका अधिकार है। जो आदमी अपना कर्तव्य करनेके लिए जाता है, वह केवल यही आशा रख सकता है कि ईश्वर उसे कर्तव्य-पालनकी शक्ति देगा।

आपके खयालसे इस प्रकारके उपद्रव भारतमें कब खतम होगे?'

आप विश्वास रखिये कि वे खतम होगे। यदि ब्रिटिश प्रभाव यहासे हटा लिया जाय तो वे बहुत जल्दी खतम हो जायगे। जब तक ब्रिटिश प्रभाव यहा रहेगा तब तक मुझे दु खके साथ स्वीकार करना पडता है कि दोनो पक्ष सहायताके लिए ब्रिटिश सत्ताकी तरफ देखते रहेंगे।

दीवालीका महान हिन्दू त्योहार उस समय आया जब सारा राष्ट्र शोकमग्न
यह रामके अपनी राजधानी अयोध्यापुरी लौटनेकी याद दिलानेवाला
त्र है। उस दिन राम अपने पिताके वचन-पालनके खातिर १४ वर्षका
ास पूरा करके अयोध्या लौटे थे। उस समय बगालके हजारो घरोमे और
त्र भी लूटमार, आगजनी, प्रियजनोकी मृत्यु और उससे भी बुरी आपत्तियोके
ग अधकार छाया हुआ था। धर्मके नाम पर ऐसे ऐसे भयकर कृत्य किये गये
जनसे शर्मके मारे मनुष्यका सिर झुक जाय और मानव-स्वभावमे विश्वास
ग डिग जाय। देशमे भुखमरी और नग्नताका बोलबाला था। इस पर हिन्दू
मुसलमान आपसमे लड रहे थे। २१ अक्तूबरको अपने प्रार्थना-प्रवचनमें
ाजी बोले, अवसरकी माग है कि जो लोग शुद्ध हो वे अधिक शुद्ध बने,
ोने अपराध किये है वे अपने पापोको धोकर शुद्ध बने। "हमे यह स्पष्ट
त लेना चाहिये कि यह समय उत्सव मनाने या आनद भोगनेका नही है।"
इसके बाद २५ अक्तूबरको — हिन्दू पचागके अनुसार नये दिनके अवसर
— उन्होने एक सन्देश भेजा "भारत आज अत्यन्त कठिन समयमे से गुजर
है। असलमे तो सारा ससार ही सकटमे से गुजरा रहा है। इस सकटका
ना करनेके लिए हमे कैसी सहायताकी आवश्यकता है? . आध्यात्मिक
न बितानेके लिए पहली आवश्यकता निर्भयताकी है। आज हम सब
रका भय छोडनेका निश्चय कर ले। निर्भयताके बिना अन्य सब गुण
मे मिल जाते है। भय छोडे बिना सत्य या अहिसाका पालन असभव है।"
तु निर्भयताका अर्थ घमड या आक्रमणकी वृत्ति नही होता। "वह स्वय ही
का चिह्न है।" निर्भयताके लिए मानसिक शान्ति, स्थिरता और सन्तुलन
हिये। "इसके लिए ईश्वरमे सजीव श्रद्धा होनी चाहिये।"

२

गाधीजीको आगजनी, हत्या और लूटकी अपेक्षा अधिक गहरा आघात तो
ात्कारकी शिकार बनी हुई स्त्रियोकी करुण पुकारसे लगा था। अपनी एक
ना-सभामें उन्होने कहा "मृत्युका महत्त्व नही है। महत्त्व इस बातका
कि मृत्युका आप किस तरह आलिगन करते है। यदि आप बहादुरीसे मरें, तो
ने भाईके हाथो मरना सौभाग्यकी बात है। परन्तु उन स्त्रियोके लिए क्या
ा जाय, जो भगा कर ले जाई जाती है और बलात् धर्मभ्रष्ट की जाती
भारतीय नारियोको इतनी लाचारी क्यो महसूस करनी चाहिये? क्या
ताका ठेका पुरुपोने ही लिया है?"[5]

स्त्रियोके सतीत्व पर आक्रमण हो तो उनको अहिसाकी दृष्टिसे कैसे
ाया जाय, इस प्रश्न पर गाधीजी बहुत समयसे ध्यान दे रहे थे। वे इस
ाय पर पहुचे थे कि अतमें देखा जाय तो स्त्रियोकी शारीरिक निर्बलता नही

परन्तु गुंडोंका सामना करनेके संकल्पका अभाव उन पर होनेवाले अत्याचारोंको प्रोत्साहन देता है अथवा उन्हें ऐसे अत्याचारोंका शिकार बनाता है। जब कोई व्यक्ति हिंसा करना चाहता है, तो शारीरिक दुर्बलता अधिक शरीर-बलवाले विरोधीके खिलाफ हिंसाके सफल उपयोगमें बाधक नहीं होती। सच बात यह है कि हमें मृत्युका डर सबसे अधिक होता है और इसलिए हम अन्तमें श्रेष्ठ पशुबलके सामने झुक जाते हैं। कुछ लोग रिश्वतका आश्रय लेते हैं, कुछ पेटके बल रेंगनेको तैयार हो जाते हैं या अन्य प्रकारके अपमान सहन कर लेते हैं और कुछ स्त्रियां मरनेकी अपेक्षा अपने शरीर तकको अर्पण कर देती हैं। चाहे हम पेटके बल रेंगें या कोई स्त्री किसी पुरुषकी वासनाके सामने झुक जाय, यह जीवनके उसी मोहकी — जिजीविषाकी — निशानी है जो हमसे कुछ भी करा लेता है। इसलिए जो अपने जीवनकी आहुति देनेको तैयार हो वही उसकी रक्षा कर सकता है। जीवनका आनन्द लेनेके लिए मनुष्यको जीवनका लोभ छोड़ना चाहिये।'

परन्तु गांधीजीको यह भय था कि, "आधुनिक लड़की अनेक प्रेमियोंकी प्रेमिका बनना चाहती है। वह साहससे प्रेम करती है। वह सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करनेके लिए कपड़े पहनती है। वह पाउडर वगैरा लगाकर और असाधारण दिखाई देकर अपने कुदरती रूपको अधिक आकर्षक बना लेती है। अहिंसक मार्ग ऐसी लड़कियोंके लिए नहीं होता। हममें अहिंसक भावनाका विकास हो, इसके कुछ निश्चित नियम हैं। उससे विचार करने और जीवन जीनेकी पद्धतिमें क्रान्ति होती है।'

जीवन जीने और विचार करनेकी यह पद्धति क्या है इसका संकेत गांधीजीने एक लेखमें दिया था। उसमें उन्होंने 'बीसवीं शताब्दीकी सती' का आदर्श इस प्रकार बताया था: "वह प्रत्येक श्वासके साथ अपने त्याग, वैराग्य और आत्मोत्सर्गके द्वारा तथा अपने पति, परिवार और देशकी सेवाके लिए किये गये समर्पणके द्वारा अपना सतीत्व सिद्ध करेगी। वह परिवारकी संकीर्ण चिन्ताओं और उसके स्वार्थोंकी दासी बननेसे इनकार करेगी। परन्तु अपना ज्ञान भंडार बढ़ाने और सेवाके सामर्थ्यमें वृद्धि करनेके प्रत्येक अवसरका वह उपयोग करेगी। इसके लिए वह अधिकाधिक **आत्म-संयमकी साधना करेगी और अपने पतिके साथ सम्पूर्ण तादात्म्य साधकर सारे जगतके साथ तादात्म्य साधना सीखेगी।**"' (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

ऐसी सती सदा 'अपने पतिके आदर्शों और गुणोंको (उसकी मृत्युके बाद) अपने कार्यों द्वारा सजीव रखने और उसके लिए अमरत्वका मुकुट प्राप्त करनेकी' कोशिश करेगी। साधारण पत्नी — जो सतीके आदर्शको प्राप्त करनेकी चेष्टा करती है — माता भी होगी; इसलिए उसे अपने अनेक

गुणोमें वच्चोके लालन-पालनका ज्ञान और जोड लेना चाहिये, जिससे वे वडे होकर मानव-जातिके सच्चे सेवक वनें। . सतीत्व पवित्रताकी चरम सीमा है। यह पवित्रता . . केवल सतत प्रयत्न और नित्य प्रति किये जानेवाले आत्मोत्सर्गके द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।"

कोई गुडा किसी सती पर कुदृष्टि डालनेका साहस ही नही कर सकता। "पुरुप कितना ही पशु क्यो न वन जाय, वह उस स्त्रीकी चकित करनेवाली शुद्धताके सामने लज्जाके मारे झुक जायगा।"[९] गाधीजीने कहा कि स्त्रियोकी दुविधाका उत्तर पश्चिमके रग-ढगकी नकल करनेमे नही है, परन्तु भारतकी सस्कृतिमे जो कुछ उत्तम वाते है उनकी रक्षा करनेमे और जो कुछ हीन और पतनकारी तत्त्व हैं उन्हे निःसकोच छोड देनेमे है। "यह कार्य सीता, द्रौपदी, सावित्री और दमयन्तीका है, न कि तडक-भडक पसन्द करनेवाली आकर्पक स्त्रियोका।"[१०]

रामायण कहती है कि सीताकी शुद्धता इतनी प्रचड थी कि उसे भगाकर ले जानेवाला महावली रावण भी उसका सतीत्व भग करनेका साहस नही कर सका, यद्यपि सीता पूरी तरह उसके अधिकारमे थी। इसी प्रकार महाभारतमे वताया गया है कि दुष्ट राजा दुर्योधनने द्रौपदीको अपमानित करनेका प्रयत्न किया। उसने अपने सारे दरवारियोके सामने उसे नग्न करनेका आदेश दिया। वह अकेली और निस्सहाय थी। ऐसी स्थितिमे वह कृष्ण भगवानसे प्रार्थना करती है .

गोविन्द द्वारिकावासिन् कृष्ण गोपीजन-प्रिय।
कौरवैः परिभूता मा किं न जानासि केशव॥
हे नाथ हे रमानाथ व्रजनाथार्तिनाशन।
कौरवार्णवमग्ना मा उद्धरस्व जनार्दन॥
कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वभावन।
प्रपन्ना पाहि गोविन्द कुरुमध्येऽवसीदतीम्॥

[हे द्वारिकावासी गोविन्द, हे गोपियोके प्रिय कृष्ण, दुष्ट कौरवोसे घिरी हुई मुझे तू क्यो नही वचाता?

हे नाथ, हे रमानाथ, हे व्रजनाथ, दु खोका नाश करनेवाले जनार्दन, मै कौरवरूपी समुद्रमे डूव रही हू। तू मेरी रक्षा कर।

हे कृष्ण, कृष्ण, महायोगी विश्वात्मा, विश्वको उत्पन्न करनेवाले महायोगी कृष्ण, हे गोविन्द, कौरवोके वीच हताश होकर मै तेरी शरणमे आई हू। तू मेरी रक्षा कर।]

कथा यह है कि द्रौपदीकी प्रार्थना हृदयकी श्रद्धा और आत्म-समर्पणकी भावनासे निकली थी, इसलिए कृष्ण भगवानने सुदूर द्वारिकामे उसे सुन लिया

और वे द्रौपदीकी रक्षाके लिए दौड कर आये। भगवानने उसका चीर अनन्त कर दिया और जिस दुष्ट राजाने उसे नग्न करना चाहा उसे हार कर अपना यह दुष्ट प्रयत्न छोड देना पडा। और पश्चिमके इतिहासमें क्या देवी गादीवाकी ऐसी ही लोककथा नहीं है?

भारतके प्राचीन नारीत्वका यही आदर्श था। गांधीजीने उसीको अपने आश्रमकी स्त्रियाके सामने और उनके द्वारा भारतकी स्त्रियाके सामने उस उपस्थित करनेका प्रयत्न किया था। उन्होंने आश्रममें सामान्य प्रार्थनाके अलावा स्त्रियोकी अलग प्रार्थना आरंभ की और महाभारतके उन श्लोकोको — जिनमें द्रौपदीकी संकटकालीन प्रार्थना शामिल थी — उस प्रार्थनाका अविभाज्य अंग बना दिया। बादमें गांधीजीने इन स्त्रियोको केवल आश्रमके मूलभूत आध्यात्मिक व्रतोसे सुसज्ज बनाकर भारतकी स्वतंत्रताकी अहिंसक लडाईमें अपना उचित भाग लेनेके लिए भेज दिया। दक्षिण अफ्रीकाकी तरह यहा भी परिणाम आशातीत हुआ। स्त्रियोने स्वाधीनता-संग्राममें पुरुषोसे अधिक नहीं तो उनके बराबर का भाग तो लिया ही, इसके सिवा उन्होंने अपने लिए किसी विशेष प्रयत्नके बिना पुरुषोके बराबर राजनीतिक अधिकार और दर्जा भी प्राप्त कर लिया।

परन्तु कुछ समयसे एक और आदर्श भारतके इस प्राचीन आदर्शके साथ स्पर्धा करने लगा। वह आदर्श था झासीकी रानी लक्ष्मीबाईका जिन्हें कभी कभी भारतकी जोन आफ आर्क भी कहा जाता है। इस वीरांगनाने तलवारके शौर्यमें अपने समस्त समकालीनोको मात कर दिया था। भारतके अन्य लोगोकी तरह भारतीय स्त्रियोके सामने भी स्वाधीनताके ठीक पहले दो विभिन्न मार्ग प्रस्तुत हुए। उनके लिए एक ओर लक्ष्मीबाईके और दूसरी ओर सीता और द्रौपदीके आदर्शोंमें से अंतिम चुनाव करनेका समय आ पहुंचा था।

गांधीजी ऐसा मानते थे कि भारतकी स्त्रियोके सामने जो दुविधा है वह एक बडे प्रश्नका भाग है। युग युगसे पुरुष स्त्री पर प्रभुत्व भोगता आया है। कानूनसे कानूनी असमानताएं तो दूर हो सकती है परंतु वह बुराईकी जडको नहीं छू सकता। और बुराईकी जड तो इस बातमें है कि पुरुष सत्ता और ख्यातिका लोभी है और उससे भी गहरी जड दोनोकी वासनामें है।' " कानून स्त्रीके विरुद्ध है तो भी स्त्री अपने पतिकी सत्ता और विशेषाधिकारोंमें बराबरकी हिस्सेदार रही है। परिग्रहकी वृत्ति उसके लिए स्वाभाविक बन गयी है। इसके कारण उसका दृष्टिकोण और व्यक्तित्व कुंठित हो गया है और उसकी संकीर्ण पारिवारिक चिन्ताओं और स्वार्थोंने उसे लगभग बंदी जैसा बना दिया है। इसका क्या कारण है कि अक्सर स्त्रीका समय आवश्यक पारिवारिक कर्तव्योंके पालनमें न लग कर अपने पति और स्वामीके अहंकारपूर्ण भोग विलासमें और अपने मिथ्याभिमानकी

तुष्टिमे खर्च होता है?"[१२] गाधीजीकी दृष्टिसे स्त्रीकी यह पारिवारिक दासता "मुख्यत. वर्बरताका प्रतीक . . . अथवा उसका अवशेष है।"

अनादि कालसे स्त्रीने "नाना प्रकारसे अपनी अज्ञात और सूक्ष्म रीतियो द्वारा पुरुपसे उसकी सत्ता अपने हाथमे लेनेका प्रयत्न किया है" और पुरुप "अपने पर स्त्रीका आधिपत्य स्थापित न होने देनेके लिए व्यर्थ और अनजाने ही सघर्प करता रहा है।"[१३] परिणाम यह हुआ कि दोनोकी प्रगति रुक गई। शरीर-वलमे स्त्री पुरुपकी वरावरी नही कर सकती। परन्तु अहिसाके पालनमे वह आसानीसे पुरुपसे आगे वढ सकती है। परन्तु "पुरुपकी स्वार्थपूर्ण शिक्षाके भुलावेमे आकर" वह अपने प्रति पुरुपका अधिकाधिक ध्यान खीचनेके लोभमे फस गई। परन्तु इसका अर्थ आवश्यक रूपमे यह नही है कि पुरुप उसका अधिक आदर करता है। यह तो स्त्रीके भीतरकी हीनता-ग्रथिकी निशानी है, जो उसमे अपनी दासताके कारण पैदा हो गई है। "क्या मै आपसे पूछू कि स्त्री पुरुपसे अधिक शृगार क्यो करती है? . . यदि आप ससारके कार्योमे हाथ वटाना चाहती है, तो पुरुपको प्रसन्न करनेके लिए शृगार करनेसे आपको इनकार कर देना चाहिये। यदि मै स्त्री होता तो मै पुरुपके इस दावेके खिलाफ विद्रोह करता कि स्त्रीका जन्म पुरुपका खिलौना वननेके लिए हुआ है।"[१४]

यदि केवल स्त्री अपने भ्रमजालको तोड कर अहिसाकी शक्तिको पहचान ले, तो वह अपनी न्यूनताको लाभमे वदल सकती है "क्या स्त्रीमे अधिक अन्त-स्फूर्ति नही है? क्या वह अधिक आत्मत्याग नही करती? क्या उसमे पुरुपसे अधिक सहन-शक्ति नही है? क्या उसमे साहस नही है? उसके विना जगतमे पुरुपका अस्तित्व सभव ही नही होता? यदि अहिसा हमारे जीवनका धर्म है, तो भविष्य स्त्रीके हाथमे है।"[१५] फिर "प्रसव-पीडासे अधिक कष्ट दूसरा क्या हो सकता है? परन्तु सृजनके आनन्दमे वह इस कष्टको भूल जाती है। ओर वालकके जन्मके वाद भी दिन-रात उसका पोपण हो, उसकी रक्षा हो, और वह वडा हो, इसके लिए प्रतिदिन उसकी धात्री वनकर अपार कष्ट दूसरा कौन भोगता है?"[१६]

वरसो पहले जव गाधीजी अपने एपेंडिसाइटीसके ऑपरेशनके वाद पूनाके सासून अस्पतालमे स्वास्थ्य-लाभ कर रहे थे तब उन्हे उनकी भली अग्रेज नर्सने एक स्त्रीका किस्सा सुनाया था। उस स्त्रीने क्लोरोफार्म (वेहोशीकी दवा) सूघनेसे इनकार कर दिया था, क्योकि वह अपने पेटके वच्चेकी जानको खतरेमे नही डालना चाहती थी। वादमे गाधीजीने लिखा था कि "उस वीरांगनाका स्मरण करके मुझे कितनी ही वार स्त्रीके दरजेसे ईर्ष्या हुई है—लेकिन उसे अपने इस दरजेका भान नही है।"[१७]

स्त्रियाके उद्धार-कायमें गाधीजीका अपना योगदान यह रहा है कि उन्होने जीवनके हर क्षेत्रमें सत्य और अहिंसाको स्वीकार करनेकी हिमायत की। इस क्षेत्रमें स्त्री निर्विवाद रूपसे नेतत्व कर सकती है। उसे केवल अपने प्रेमका विस्तार सारी मानव-जातिके लिए कर लेना होगा और यह भूल जाना होगा कि वह कभी पुरुषकी काम-वासनाकी तप्तिका साधन थी अथवा बन सकती है। और उसे पुरुषके साथ साथ उसकी माता निर्माता और मौन नेताके रूपमें अपना गौरवपूण पद प्राप्त हो जायगा।'[१४] कुदरतने यह काम उसीको सौंपा है कि वह "युद्धग्रस्त ससारको—जो शान्तिके अमृतके लिए तरस रहा है—शान्तिकी कला सिखाये।'[१५]

अपना ऊचा जीवन धम भूल कर और पुरुषकी नकल करनेका प्रयत्न करके स्त्रीने वास्तवमें अपनेको और पुरुषको भी नीचे गिरा दिया है। 'बेशक कुछ बातामें स्त्री और पुरुषके कायक्षेत्र भिन्न हो जाते ह। दोनाकी रचनामें आकाश-पातालका अन्तर है इसलिए दोनोके काय भी भिन्न रहगे। अधिकाश स्त्रिया सदा मातत्वका धम पालन करेंगी। उसके लिए जो गुण जरूरी ह, उनका पुरुषमें होना जरूरी नही है। पुरुष प्रवत्ति-परायण है स्त्री निवत्ति-परायण है। पुरुष रोटी कमाता है, स्त्री रोटीको सभालने और बाटनेवाली है। उसकी देखभालके बिना मानव-जातिका अस्तित्व ससारसे मिट जायगा।'[१] गाधीजी कहते थे 'यह बात पुरुषो और स्त्रिया दोनोके लिए पतनकारी है कि स्त्रियाको घरबार छोडकर घर और परिवारकी रक्षाके लिए बाहर निकलने और बन्दूक धारण करनेके लिए कहा जाय या ललचाया जाय। "यह तो फिरसे बबरताकी दिशामें लौटने और विनाशकी ओर जानेकी बात हुई।" यह बार बार देखा जाता है कि शरीर-बलके अभिमानसे उन्मत्त होकर सनिक लोग स्त्रियाके साथ छेडछाड करनेमें भी लज्जित नही होते। प्रशासन चलानेवाले अधिकारी ऐसी घटनाओको रोकनेमें असमथ मालूम होते ह। सेना उनकी प्राथमिक आवश्यकता पूरी कर देती है और अधिकारी उसके दुष्कृत्या पर आखें मूद लेते हैं।'[३] गाधीजी दृढताके साथ कहते थे कि सनिक व्यवस्थाका स्त्रिया तक विस्तार करनेसे नारीका घोर पतन हो जायगा। जहा सारा राष्ट्र सनिक पद्धतिसे सगठित किया जाता है वहा सनिक जीवनकी प्रणाली उसकी सभ्यताका अविभाज्य अग बन जाती है।"

इसके अलावा सभी स्त्रिया झासीकी रानीकी तरह वीरागनाए नही बन सकती। परन्तु सब स्त्रिया सीताके उदाहरणका अनुकरण कर सकती ह। महाबली रावण भी सीतासे अपनी इच्छा पूरी नही करा सका। रामको रावणसे हराया जा सकता था सीताको नही। इस विचारसे कि कोई सीताके दृष्टान्तको पौराणिक कह कर अस्वीकार न कर दे, गाधीजीने कुमारी आलिव

डोकका दृष्टान्त दिया। वह दक्षिण अफ्रीकाके पादरी डोककी वीर पुत्री थी। उसे गाधीजी स्वय जानते थे। वह अफ्रीकाके भीतरी प्रदेशमे नगे आदिवासी हवशी कबीलोमे जाकर रही थी। उसे हवशियोकी छेड़छाड़का कोई डर नही था। गाधीजी चाहते थे कि भारतीय स्त्रियोमें ऐसा ही ऊचे दर्जेका शौर्य पैदा हो।[२४]

भारतकी स्त्री पर बचपनसे यही सस्कार डाला जाता है कि, "वह या तो अपने पतिके साथ सुरक्षित है या चिता पर।"[२५] गाधीजीकी समूची आत्मा इस विचारके खिलाफ विद्रोह करती थी। उन्होने लुई फिशरसे कहा कि, "कोई भी स्त्री अपनी लाज बचानेवाले पुरुष या स्त्रीके लिए गौरव अनुभव करती है। मै स्त्री होता तो ऐसा नही करता। मै कहता . 'यदि मै अपनी लाज नही बचा सकती, तो तुम मेरी लाज बचानेवाले कौन हो? मेरे लिए उसकी रक्षा करनेवाले तुम कौन होते हो?' सीताने ऐसा ही किया था। उन्होने हनुमानको भी अपनी लाज नही बचाने दी। उनकी शुद्धता स्वय एक बड़ी शक्ति थी, उनका मुख्य शस्त्र थी।"[२६]

परन्तु अहिंसामें सजीव श्रद्धा न होनेसे कोई व्यक्ति अपनी लाज बचानेके लिए मृत्युपर्यंत प्रतिकार करनेके धर्मसे बच नही सकता। "जब किसी स्त्री पर आक्रमण हो तब वह हिंसा-अहिंसाका विचार करनेके लिए ठहर नही सकती। उसका प्रथम धर्म आत्मरक्षाका है। अपनी लाज बचानेके लिए जो भी उपाय सूझे वही काममे लेनेकी उसे स्वतत्रता है। उसे भगवानने नख और दात दिये है। उसे अपनी पूरी शक्तिके साथ इनका उपयोग करना चाहिये और जरूरत हो तो इस प्रयत्नमे मर जाना चाहिये। जिस पुरुष या स्त्रीने मृत्युका सारा डर छोड दिया है, वह अपने प्राण देकर न केवल अपनी ही रक्षा कर सकेगी, बल्कि दूसरोकी भी कर लेगी।"[२७]

यही बात उस पुरुषकी है, जो ऐसे अपराधोका साक्षी होता है· "उसे पुलिसकी सहायता लेने नही दौड़ना चाहिये और न रेलगाड़ीमे खतरेकी जजीर खीच कर ही सन्तोप मान लेना चाहिये। यदि वह अहिंसाका पालन कर सके, तो उसका पालन करते हुए मर जायगा और इस प्रकार खतरेमें पडी हुई स्त्रीको बचा लेगा। यदि अहिंसामें उसका विश्वास नही है या वह उसका पालन नही कर सकता, तो उसमे जो भी शक्ति हो उसका पूरा उपयोग करके उसे स्त्रीको बचानेका प्रयत्न करना चाहिये।"[२८]

दोनो ही सूरतोमें अपने प्राण देनेकी तैयारी अवश्य होनी चाहिये। "यदि बूढा, दुर्बल और दन्तहीन होनेके कारण — जैसा कि मै हूं — मै अहिंसाकी हिमायत करू और किसी बहनकी लाज पर होनेवाले हमलेको लाचार होकर देखता रहू, तो मेरे महात्मापनकी खिल्ली उड़ाई जायगी, उसका

अपमान होगा और उसका अन्त हो जायगा।' इसके विपरीत, 'यदि मैं अथवा मेरे जैसे लोग बीचमें पड़कर हिंसासे या अहिंसासे किसी भी तरह अपने प्राण दे देंगे, तो हम बलात्कारका शिकार बनी हुई स्त्रीको अवश्य बचा लेंगे और कमसे कम उसके अपमानके जीवित साक्षी तो नहीं रहेंगे।'"

गांधीजीने कहा: "भारतकी स्त्रियां अपनी आबरूको बचानेवाले किसी व्यक्तिके अभावमें लाचारी महसूस करें, इसके बजाय मैं चाहूंगा कि वे हथियारोंका उपयोग करना सीखें। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि मैं यह चाहता हूं कि स्त्रियां हथियारोंके उपयोगकी तालीम लें अथवा उन्हें ऐसी तालीम दी जाय। 'मेरी दृष्टिसे हिंसाके लिए कोई तैयारी नहीं हो सकती। यदि हम उच्चतम साहसका विकास करना चाहते हैं, तो सारी तैयारी अहिंसाके लिए होनी चाहिये। ... जो स्त्रियां गुंडोंके आक्रमण करने पर हथियारोंके बिना उनका सामना नहीं कर सकतीं, उन्हें साथमें हथियार रखनेकी सलाह देना जरूरी नहीं है। वे ऐसा ही करेंगी। सतत यह प्रश्न करनेमें कि हथियार रखे जायें या नहीं, कोई न कोई दोष है। लोगोंको स्वाभाविक रूपमें स्वाधीन बनना सीखना पड़ेगा। यदि वे इस केन्द्रीय शिक्षाको याद रखें कि सच्चा और सफल प्रतिकार अहिंसासे ही हो सकता है, तो वे अपना आचरण वैसा ही बना लेंगे। संसार अनजानमें ऐसा ही करता आया है। चूंकि उसमें सर्वोच्च साहस अर्थात् अहिंसासे उत्पन्न होनेवाला साहस नहीं है, इसलिए वह अणुबमकी सीमा तक अपने आपको शस्त्र-सज्जित करता है। जिनको इसमें हिंसाकी व्यर्थता दिखाई नहीं देती, वे स्वभावतः यथाशक्ति हथियार रखेंगे।' (मोटे टाइप मैंने किये हैं।)

यदि कोई गुंडा किसी स्त्रीको या उसके रक्षकको विवश कर दे और फिर अपना दुष्कृत्य करे तो? गांधीजीका उत्तर यह था कि जिस लड़कीमें प्रतिकारका दृढ़ संकल्प हो, वह अपनेको असहाय बनानेवाले सारे बंधनोंको तोड़ सकती है। जो स्त्री मरनेकी कला जानती है, उसे कभी अपनी लाज जानेका डर रखनेकी जरूरत नहीं।

आत्म-समर्पण करनेके बजाय क्या किसी स्त्रीको आत्महत्या करनेकी सलाह दी जा सकती है?

अवश्य ही आत्म-समर्पण करनेके बजाय कोई स्त्री आत्महत्या करे।'"

यदि अपनी हत्या और आक्रमणकारीकी हत्याके बीच चुनाव करना पड़े तो आपकी क्या सलाह होगी?

जब अपनी हत्या अथवा आक्रमणकारीकी हत्याके बीच चुनाव करनेका प्रश्न हो, तो मेरे मनमें कोई शंका नहीं कि अपनी हत्याका चुनाव करना चाहिये।'

नोआखालीके सदर्भमे गाधीजी यह जो आग्रह करते थे कि स्त्रियोको हथियारोके वजाय — चाहे वे अपने ही हो अथवा पुलिस और सेनाके हो — अपने आतमवल पर ही निर्भर रहना सिखाया जाय, उसका एक दूसरा प्रवल कारण था। सेना ओर पुलिस स्त्रियोको भगा ले जानेसे शायद वचा सकती है। परन्तु उन स्त्रियोका क्या हो, जो पहले ही भगा ली गई है अथवा जो पुलिस और सेनाके मौजूद होते हुए भी भगा ली जाय? उन्हे अपना वाल भी वाका हो इससे पहले मरना सीखना चाहिये। वस्तुत गाधीजी तो यहा तक कहते थे कि यदि किसी स्त्रीका सतीत्व खतरेमे हो, तो सतीत्व-भग होने देनेके वजाय उसे जहर खा लेना चाहिये। परन्तु उन्होने उसी प्रवचनमे कहा था कि योगका अभ्यास करनेवालोसे उन्होने सुना है कि योगकी किसी क्रियासे अपने जीवनका तत्काल अन्त किया जा सकता हे।"[३२]

यह कोई आत्महत्याका उपदेश नही था। गाधीजीकी इस सलाहके पीछे कि ऐसी परिस्थितिमे समर्पण करनेके वजाय स्त्रियोको जहर खा लेना चाहिये, यह विश्वास था कि "जिसका मन आत्मघातके लिए भी तैयार हो उसमे ऐसे मानसिक प्रतिकारका साहस होगा और इतनी आन्तरिक शुद्धता होगी कि उसका आक्रमणकारी हथियार डाल देगा।"[३३]

एक और समस्या, जो नोआखालीकी घटनाओने उत्पन्न कर दी थी, उन लडकियोके भविष्यकी थी, जो भगा ली गई थी, जिन पर वलात्कार हुआ था या जिन्हें जवरदस्ती मुसलमान वना लिया गया था और जिनकी इच्छाके विरुद्ध विवाह कर दिया गया था। उनके वारेमे क्या किया जाय? गाधीजीने कहा, इस तरहके अत्याचारकी शिकार होनेवाली स्त्रियोको समाजसे वहिष्कृत समझना नारीकी शुद्धताके आदर्शका विपर्यास है। भगा ले जाये जानेके कारण या वलात् धर्म-परिवर्तन कर दिये जानेके कारण भगाई हुई लडकीके वापस घर आनेमे कोई रुकावट नही होनी चाहिये। ऐसे मामलोमे कोई शुद्धि अथवा प्रायश्चित्त आवश्यक नही है। ऐसी लडकियो पर प्रायश्चित्त लाद कर हिन्दू समाज गलती करता है। ऐसी लडकियोने कोई गलती नही की है। वे प्रत्येक विचारशील मनुष्यकी दया और सक्रिय सहायताकी पात्र है। ऐसी लडकियोका उदारता और स्नेहके साथ अपने घरोमे स्वागत होना चाहिये और योग्य व्यक्तिके साथ उनका विवाह होनेमें कोई कठिनाई नही होनी चाहिये।[३४]

भगाई हुई अथवा जवरदस्ती मुसलमान वनाई हुई स्त्रियो और लडकियोके वारेमे गाधीजीके मजवूत रवैयेका वाछित परिणाम हुआ। इन अभागी वहनोको किसी कठिनाईके विना सामान्यत अपने परिवारोमे वापस ले लिया गया, और देशभरसे ऐसे नौजवानोके वहुतसे प्रस्ताव आये, जो सारे पूर्वाग्रह छोड कर औरोकी अपेक्षा ऐसी लडकियोके साथ विवाह करनेको तैयार थे।

गाधीजीको इस सलाह पर गलतफहमी बनी रही कि स्त्रिया अपना शील भग होने देनेकी अपेक्षा आत्महत्या कर लें। कुछ लोगोंको इसमें बदमाशोंके लिए प्रोत्साहन दिखाई दिया। इस गलतफहमीको दूर करनेके लिए गाधीजीने फिर कहा कि स्त्रिया यदि चाहें तो आत्मरक्षाके लिए कोई भी हथियार रख सकती है। आत्मरक्षाके दो मार्ग हैं मार कर मारा जाना या बिना मारे मर जाना। स्त्रियां दोनोंमें से कोई भी मार्ग पसन्द कर सकती है। परन्तु मैं तो उन्हें दूसरे ही मार्गकी शिक्षा दे सकता हूं। शस्त्रास्त्र मनुष्यकी लाचारीके प्रतीक है, न कि उसकी शक्तिके। शस्त्रास्त्र उस समय रक्षा नही होती, जब अपनसे कही बडी शक्तिके सामने अपनी लाज बचानेकी नौबत आ जाय, और जब शस्त्र छीन लिये जाते है तब तो आत्म-समर्पणके सिवा सामान्यत दूसरा कोई उपाय ही नही रह जाता। इज्जत तो दुनियाकी किसी भी शक्तिके सामने आत्म-समर्पणको सहन नही कर सकती। जो स्त्री मत्युसे नही डरती, उसकी लाज कोई नही लूट सकता।

इससे भी अधिक गम्भीर खतरा इस बातका था कि प्रतिशोध बर्बरता दिखानेमें स्पर्धाका रूप धारण न कर ले और उस बदमाशीका बहाना न बना लिया जाय — जैसा कि आतरिक उपद्रवोंमें अकसर होता है। जहा गाधीजीने अपने सहधर्मियोंको इसके विरुद्ध कडी चेतावनी दी वहा उन्होंने सयाने मुसलमानोंसे भी अपील की कि वे मैदानमें आकर उस चुनौतीको स्वीकार करें जो नोआखालीकी घटनाओंने भारतकी मानवताको दी है। गाधीजीने कहा कि यदि ऐसा नही हुआ तो मेरे सारे उपदेश व्यर्थ हो जायगे और प्रतिशोधके नाम पर पाशविकताका ज्वार भारतकी मानवताको सदाके लिए डुबा देगा और भारतके नाम पर सदाके लिए कलक लग जायगा। गाधीजीने अनुरोध किया कि यदि इस बुराईको सफलतापूर्वक रोकना है तो समझदार मुसलमानोंको न सिर्फ अपने मनकी बात खुल कर कहना चाहिये बल्कि वैसा ही आचरण भी करना चाहिये और अपनी बातका आग्रह रखना चाहिये। गाधीजीकी इस चेतावनी पर ध्यान नही दिया गया। नतीजा यह हुआ कि इस उपेक्षाकी भयकर कीमत चुकानी पडी और भारतका नाम ससारमें कलकित हो गया।

२४ अक्तूबरकी प्रार्थना-सभासे ठीक पहले एक घटना हुई जिसने यह सिद्ध किया कि जब भावुकताको हमारी सयत बुद्धि पर हावी हो जाने दिया जाता है तब वह अपना ही विरोध करने लगती है और अपने ही उद्देश्यको विफल बना देती है। उत्तेजित नौजवानोंकी एक भीड हाथोंमें लिखे हुए तख्ते लिये और नारे लगाते हुए प्रार्थना भूमि पर आ धमकी। वे चाहते थे कि पूर्व बगालकी घटनाओंके सम्बन्धमें न्याय हो और उनकी 'आवाज' काग्रेस

कार्यसमितिके सदस्यो तक पहुचे। समितिकी बैठक गाधीजीके कमरेमे हो रही थी। गाधीजीने उनसे कहा कि यदि उनका उद्देश्य अपनी आवाज पहुचाना ही हो, तो वह तो कार्यसमितिके सदस्यो तक पहुच ही चुकी है, और उनके कामकाजमे वह बाधा भी डाल चुकी है! भीड़मे से कोई चिल्लाया कि जब हमारा घर जल रहा हो तब हम प्रार्थना नही कर सकते। गाधीजीने उत्तर दिया कि जब घर जल रहा हो तब घरके मालिकका या उसके नौकरका धर्म यह है कि वह अपने दिमागको ठडा रखे और सारा ध्यान आगको बुझाने पर लगाये। तुम लोगोने प्रार्थना-भूमि पर आक्रमण करके स्त्रियोको डरा कर भगा दिया है और प्रार्थना-भूमिमे उनके लिए सुरक्षित स्थान पर अपना अधिकार कर लिया है। तुम दावा तो यह करते हो कि पूर्व बगालमे स्त्रियोके कष्टोसे तुम्हे आघात पहुचा है, परन्तु उत्तेजनामें तुम सारा विवेक खो बैठे हो और प्रार्थनामे आई हुई स्त्रियोके प्रति सहानुभूति रखनेका कर्तव्य स्वय भूल गये हो! पूर्व बगालकी अत्याचार-पीड़ित नारियोके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करनेका यह विचित्र ढग है!

२७ अक्तूबरकी शामको गाधीजीने घोषणा की कि, कल प्रात काल मै नोआखाली जानेके लिए कलकत्ता रवाना हो जाऊगा। स्त्रियोके कष्टसे मेरे हृदयको गभीर आघात लगता है। मै उनके आसू पोछने और उन्हे ढाढस बधानेके लिए बगाल जाना चाहता हू।

३

गाधीजीके व्यक्तित्वमें पैगम्बर और व्यावहारिक राजनीतिज्ञका समन्वय सिद्ध हो गया था। पैगम्बरकी दृष्टि सदा अन्तिम ध्येय पर रहती है; व्यावहारिक राजनीतिज्ञकी दृष्टि तात्कालिक परिस्थिति पर। जब दूसरे गुणकी गाधीजीमे प्रधानता होती थी तब वे मनुष्योके नेता बन जाते थे और अनन्य सेनानायकके रूपमे अपनी सेनाको विजयी बनाते थे। जब पहले गुणकी प्रधानता होती थी तब वे एकाकी अपने पथ पर अडिग गतिसे चलते थे और योग्य अवसरकी प्रतीक्षामें रहते थे। कभी कभी, किसी समय अथवा कोई घटना होने पर, ये दोनो स्वरूप मिल जाते थे। उस समय गाधीजी अकेले ही 'चमत्कार' दिखाते थे, जैसा कि उन्होने हरिजनोके पृथक् निर्वाचन-मडलके विरुद्ध यरवडा जेलमें किये उपवासके समय कर दिखाया था। नोआखालीके अवसर पर ये दो स्वरूप आशिक रूपमें ही मिल पाये थे। उनका 'मिशन' कुछ तो अन्तिम लक्ष्यके अनुरूप था और कुछ उस तात्कालिक चुनौतीका उत्तर था, जो केन्द्रकी अन्तरिम सरकारके सामने खडी थी।

भारतके अहिसक स्वातन्त्र्य-सग्रामके इतिहासमे १९३७ में प्रान्तोमे काग्रेसी मत्रियो द्वारा पद-ग्रहण करना एक महत्त्वपूर्ण सीमाचिह्न था। गाधीजीको लगा

था कि कांग्रेसी मत्री उसे अपना अवसर बना सकते ह। उन्हें आम जनताके अभूतपूर्व समथन और उत्साहके कारण विजय प्राप्त हुई थी। कांग्रेसी मत्रियोको अपने सत्तारूढ होनेके चिह्नके रूपमें कुछ ऐसे साहसपूर्ण काय करने चाहिये जिनसे आम लोगो पर चमत्कारी प्रभाव पडे और वे समझे कि पुराने युगके विपरीत नवयुगका आरम्भ हो गया है। इन कार्योंमें सरकारी कमचारियोका वेतन और सनिक खच तथा जमीनका लगान और सामान्यत कर भार कम करना सबके लिए करमुक्त नमक बुनियादी पद्धतिकी निशुल्क और अनिवाय शिक्षा, सम्पूर्ण मद्य निषेध खादी और ग्रामोद्योगोका सवत्र प्रचार लाल फीता शाहीको खतम करके प्रशासनको सरल बनाना, सामान्य लोगोको अपने भाग्यका विधाता बनानेके लिए सामूहिक प्रयत्न और सामूहिक सहयोगको सगठित करना और उन्हे यह अनुभव कराना कि व अपने भविष्यका निर्माण जसा चाहें वसा कर सकते ह—आदि बात सम्मिलित थी।

इतना करनेके बाद लोकप्रिय मत्रियोके लिए दूसरे कदमके रूपम यह घोषणा करना आसान होता कि वे भीतरी व्यवस्था बनाये रखनेके लिए पुलिस और सेनाका उपयोग न करके समाज विरोधी तत्त्वोके सगठनको तोडने और बेकार बना देनेके लिए जनताके सक्रिय सहयोग पर निभर रहेंगे। यह कस किया जा सकता है इसका सकेत गाधीजीने बम्बईके मुख्यमत्री बाल गगाधर खेरको दिया था। अगस्त १९४६ के दूसरे सप्ताहम पचगनीसे सेवा ग्राम लौटते समय जब गाधीजी थोडे समयक लिए उरुलीकाचनमें ठहर थे तब श्री खेर इस बारेम गाधीजीसे सलाह करनेके लिए वहा आये थे। उस समय अखिल भारतीय डाक हडताल हो रही थी और उसके कोई भद्दा स्वरूप ग्रहण करनेका भय था। उससे कांग्रेस सरकारको बहुत चिता हो रही थी।

गाधीजीने खेरसे पूछा क्या इसका यह अथ है कि लोगो पर कांग्रेसका प्रभाव नही रहा है?"

मुख्यमत्रीने उत्तर दिया, 'नही एसा तो नही है परन्तु कांग्रेस एक आवाजसे नही बोलती इसस जनतामें बुद्धिभेद पदा हो गया है।

मडलीमें से कोई बोला कि हडतालकी गर्मीके पीछे कोइ दुष्ट प्रभाव काम कर रहा है और उसका हेतु आर्थिक न होकर राजनीतिक है।

गाधीजीने सुझाया, 'आपको हडतालियोको और लोगोको समझाना चाहिये। आप उन्हें खतरेकी चेतावनी दे दीजिये निर्वाचकोसे कह दीजिये कि वे या तो अपना फज अदा कर या दूसरे प्रतिनिधि चुन लें, और यदि व अथवा आम लोग आपकी बात न सुनें तो आप त्यागपत्र दे दीजिये।'

श्री खेरने आपत्ति की। उन्होने कहा "हमारी देशके प्रति जो जिम्मे दारी है उसे क्या हम छोड दें? और दगाको ऐसे दुष्ट बलोके हाथमें छोड

दे, जो सचमुच यह चाहते हैं कि काग्रेस सरकारे शासन न चलाये और देशमे अव्यवस्था पैदा हो जाय ?"

गाधीजीने उत्तर दिया, "लोकतत्र इसी ढगसे काम कर सकता है। इससे जनताको शिक्षा मिलेगी। एक बार लोगोको विश्वास हो जायगा कि काग्रेस ताकतके जोरसे राज्य नही करेगी, तो वे विचारहीन अथवा गैरजिम्मेदार ढगसे काम करना बन्द कर देगे और दुष्ट शक्तिया वेकार हो जायंगी।"

गाधीजीको पक्का विश्वास था कि यदि मत्रीगण अपना फर्ज अदा करे, तो लोगोकी ओरसे अनुकूल उत्तर मिले विना नही रहेगा और साम्प्रदायिक हिंसाके उस खतरेका उपाय मिल जायगा, जो न केवल भारतकी स्वाधीनताके लिए वल्कि अखड भारतकी कल्पनाके लिए भी विद्यमान था।

अन्तरिम सरकार वनानेके लिए अकेली मुस्लिम लीगको निमत्रण देनेसे कैविनेट-मिशनके इनकार कर देने पर अहमदावादमे फिरसे साम्प्रदायिक दगे भयकर रूपमे आरम्भ हो गये। जव वम्वईके गृहमन्त्री मोरारजी देसाई उपद्रवके स्थान पर जानेसे पहले गाधीजीकी सलाह लेने आये, तो उन्होने यह सलाह दी, "आपको पुलिस या सेनाके वजाय ईश्वरको एकमात्र अपना रक्षक बना कर कौमी आगका सामना करनेके लिए जाना चाहिये।"[३५] जरूरत हो तो आगको वुझानेकी कोशिशमे "आपको ज्वालाओमे जल मरना चाहिये," जैसे कानपुरके राष्ट्रवादी दैनिक 'प्रताप' के युवा सम्पादक स्वर्गीय गणेशशकर विद्यार्थीने किया था। वे १९३१ मे हुए कानपुरके हिन्दू-मुस्लिम दगोमे शान्तिदूतका काम करते-करते मारे गये थे।

अन्तमे जव सितम्बर १९४६ मे काग्रेसी मन्त्रियोने केन्द्रीय अन्तरिम सरकारमे पद-ग्रहण किया तव गाधीजीने पुन उनसे यह आग्रह किया, "नये मन्त्रियोको निश्चय कर लेना चाहिये कि वे कभी ब्रिटिश सेनाओका उपयोग नही करेगे, चाहे उनका रग कैसा ही हो, और उनकी सिखाई हुई पुलिसका भी उपयोग नही करेगे। सेना और पुलिस हमारे शत्रु नही हैं, परन्तु अब तक लोगोको सहायता देनेके वजाय उन्हे विदेशी जुएके नीचे रखनेके लिए उस पुलिस और सेनाका उपयोग किया गया है। अव उन्हे रचनात्मक कार्योमे लगाना चाहिये और दोनोका उपयोग इन कार्योमे हो सकता है।"[३६]

स्थिति वहुत ही पेचीदा थी। काग्रेसी होनेके नाते जिन काग्रेसी नेताओने केन्द्र और प्रान्तोमे शासनकी जिम्मेदारी ले ली थी, वे काग्रेसकी अहिंसा-नीतिसे वधे हुए थे। परन्तु जिस शासन-तत्रका काम उन्होने अपने हाथोमे लिया था, उसके पीछे मुख्य शक्ति पशुवलकी थी, और उसका वे सफलतापूर्वक उपयोग नही कर सकते थे, क्योकि केन्द्रीय मत्रि-मडलमे एकताका अभाव था और ब्रिटिश सरकारका यह निर्णय था कि गवर्नरो और वाइसरॉयके विशेष अधि-

कार सुरक्षित रखे जायें और सत्ताके हस्तांतरित होने तक सेना पर उनका नियंत्रण रहे। परन्तु यदि वाइसराय और गवर्नरोंके हाथमें सुरक्षित समस्त असाधारण अधिकार भारतवासियोंके हाथमें दे दिये जाते, तो भी उनमें से कुछकी मान्यता यह थी कि वे बहुत दूर तक उनका प्रयोग नहीं कर सकते, क्योंकि गांधीजीका जीवन और कार्य उनके समक्ष था और २५ वर्षसे अधिक समय तक उन्होंने गांधीजीका अनुगमन किया था। गांधीजीने स्पष्ट समझ लिया कि यदि यही स्थिति बनी रही तो उन लोगोंकी शक्तिके कुंठित होनेका गम्भीर खतरा पैदा हो जायगा। वे निष्क्रिय बन गये थे और सत्ताके अपने स्थानों पर चिपक गये थे। इसलिए उन्हें धर्म-संकटमें डाले बिना गांधीजीने उनके लिए और अपने आदर्शोंके लिए मार्ग साफ करनेको नोआखालीकी दिशामें प्रस्थान किया।

४

इस प्रकार गांधीजीके लिए नोआखाली सारे भारतकी भावी घटनाओंके संचालनका केन्द्र बिंदु बन गया। उन्हें यह विश्वास हो गया था कि भारतकी राजनीतिक गुलामी जल्दी ही समाप्त होने जा रही है। परन्तु क्या विदेशी जुएके भारतसे हट जानेसे सच्चे अर्थमें लोगोंको स्वतंत्रता मिल जायगी? गांधीजीको सूर्यकी तरह स्पष्ट दिखाई देता था कि इसका उत्तर इस बात पर निर्भर करेगा कि सत्ताका परिवर्तन कैसे होगा और उस परिवर्तनका आधार इस बात पर रहेगा कि उनकी अहिंसा नोआखालीकी चुनौतीका कैसा उत्तर दे सकेगी।

मान लीजिये कि भारत काफी शस्त्रास्त्र उत्पन्न कर लेता है और मशीनें चलाना भी जानता है, तब जो लोग हथियार नहीं धारण कर सकते उनकी स्वातन्त्र्य-संग्राममें क्या भाग या स्थिति होगी? क्या विदेशी ब्रिटिश सेनाके स्थान पर राष्ट्रीय सेनाके आ जानेसे जन-साधारणको स्वतंत्रता मिल जायगी? गांधीजीका उत्तर था — नहीं मिलेगी। जो देश अपनी राष्ट्रीय सेना द्वारा भी शासित होता है, वह कभी नैतिक स्वाधीनता प्राप्त नहीं कर सकता और इसलिए उसका सबसे कमजोर नागरिक कभी अपना पूरा नैतिक ऊंचाईको प्राप्त नहीं कर सकता। ' मैं वह स्वराज्य चाहता हूं जिसमें स्वतंत्रताके फल सबको बराबर बराबर मिलें। परन्तु यदि सबसे निर्बल लोग स्वतंत्रताकी प्राप्ति और रक्षामें सबसे बलवान लोगोंके साथ समान भाग न ले सकें तो यह संभव नहीं होगा। "यह तो अहिंसक व्यवस्थामें ही हो सकता है। इसलिए मैं अकेला रह जाऊं तो भी भारतकी स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए अहिंसाको ही एकमात्र साधन समझकर उसका समर्थन करूंगा।"

भारत चौराहे पर खडा था। अहिंसाने उसे स्वाधीनताके द्वार तक पहुचा दिया था। क्या उस द्वारमे प्रवेश करनेके बाद वह अहिंसाको त्याग देगा? यह समझनेके लिए बहुत बडी कल्पना-शक्तिकी आवश्यकता नही है कि प्रथम श्रेणीकी सैनिक शक्ति बननेके लिए भारतको लम्बे अर्से तक ठहरना पडेगा। "और इसके लिए उसे किसी न किसी पाश्चात्य सत्ताको अपना गुरु बनाना पडेगा।"[३९] इसलिए महत्त्वपूर्ण प्रश्न तो यह है कि कैबिनेट-मिशनके भारतके हाथमें सत्ता सौप देनेकी सूरतमे भारत एक सैनिक शक्ति बननेके प्रयत्नमें कमसे कम कुछ वर्षोंके लिए "अपने किसी विशिष्ट सन्देशके बिना ससारमे पाचवे दर्जेकी एक शक्ति" बन कर ही सन्तोप कर लेगा अथवा "अपनी अहिंसक नीतिको अधिक विशुद्ध बना कर और उस पर अडिग रह कर दुनियाका ऐसा सर्व-प्रथम राष्ट्र होनेकी योग्यता सिद्ध करेगा, जो महाप्रयत्नसे प्राप्त हुई अपनी स्वतन्त्रताका उपयोग — तथाकथित विजयके बावजूद भी — दासताके भारसे कराह रही धरतीको भारमुक्त करनेमे करेगा?"[४०] गाधीजीका यह दृढ विश्वास था कि वीरोकी जिस अहिंसाकी उन्होने कल्पना की थी, वह विदेशी आक्रमण और भीतरी अव्यवस्थाका उतना ही निश्चित और सफल उपाय है, जितना निश्चित और सफल वह स्वाधीनता-प्राप्तिके लिए प्रमाणित हो चुका है।

कैबिनेट-मिशनके साथ हुई अपनी समझौतेकी वार्ताओमे गाधीजीने इस बात पर आपत्ति उठाई थी कि अन्तरिम कालमें बाहरी आक्रमणसे देशकी रक्षा करनेके लिए और भीतरी शान्तिकी रक्षाके लिए भी ब्रिटिश सेनाए यहां रहे। इसे उन्होने मिशनकी १६ मईवाली योजनाका "अत्यन्त गम्भीर दोप" बताया था। उनका तर्क यह था कि दोनोमे से किसी भी कामके लिए ब्रिटिश सेना यहा रही, तो उससे सविधान-सभाका उत्साह मद पड जायगा और उसके कार्यमें अवास्तविकता आ जायगी। इसके सिवा, यदि अन्तरिम कालमे ऐसे उपयोगके लिए ब्रिटिश सेना भारतमें रखी गई, तो "स्वाधीनताकी स्थापनाके बाद भी उसकी जरूरत महसूस होगी।"[४१] सेनाको तुरन्त भारतसे हटा लेनेकी मागको मिशनने अस्वीकार कर दिया। उसे विश्वास नही हुआ कि सारे भारतवासी सचमुच ऐसा चाहते हैं। गाधीजीने अपने देशवासियोसे कह दिया कि तुरन्त और पूर्ण स्वाधीनताकी आपकी मागको गम्भीर नही समझा जायगा, यदि साथ ही साथ आप साम्प्रदायिक उपद्रवोको दबानेके लिए ब्रिटिश सेनाके उपयोगकी माग करेंगे। "जो राष्ट्र अपनी भीतरी या बाहरी सुरक्षाके लिए विदेशी सेना रखना चाहता है अथवा ऐसी सेना जिस राष्ट्र पर लादी जाती है, वह किसी भी अर्थमे कभी स्वाधीन नही कहा जा सकता। वह राष्ट्र कायर है और स्वराज्य पानेके लिए अयोग्य है। सच्ची कसौटी यह है कि वह अकेला,

सीधा और अटल खडा रहे। यदि स्वतंत्र होने पर हमें स्थिर गतिसे चलना है, तो अंतरिम कालमें हमें किसीकी सहायताके बिना चलना सीखना होगा। हमें दूसरों पर आधार रखना अभीसे बन्द कर देना होगा।' [1] भारत विभाजित होगा या अखंड रहेगा इस प्रश्नका आधार भी, ब्रिटिश सत्ताके भारतसे हट जाने पर अराजकता और अव्यवस्थाके खतरेका सामना अंग्रेजोंकी सिखाई हुई सेना और पुलिसकी मदद्के बिना केवल अहिंसाकी शक्तिसे करनेकी हमारी क्षमता पर होगा। अन्यथा अव्यवस्था फैल जानेके डरके मारे हम मजबूर होकर या तो अंग्रेजोंसे भारतमें ठहरनेकी विनती करेंगे या सुरक्षाकी कीमतके रूपमें देशके विभाजनको स्वीकार कर लेंगे।

इस प्रकार जब साम्प्रदायिक पागलपनको जैसा कुछ समय पूर्व कलकत्ता और नोआखालीमें देखा गया था, दबानेके लिए ब्रिटिश सत्ता पर निर्भर रहनेकी बात पूर्ण स्वाधीनताके अनुकूल न होनेके कारण छोड दी जाती है, तब एक यही विकल्प रह जाता है कि 'विदेशी तत्त्वोंसे स्वतंत्र होकर हम आपसमें लडते लडते थक जायं।" [1] परन्तु यह स्पष्ट है कि आपसकी लडाई सफल नहीं हो सकती क्योंकि प्रथम तो अंग्रेज हमें उसमें सफल नहीं होने देंगे, और दूसरे न तो हम आधुनिक हथियारोंके प्रयोगको जानते हैं और न वे हथियार हमें मिल सकते हैं। हममें तो आवश्यक अनुशासनका भी अभाव है। " इसके विपरीत अहिंसाके लिए न तो किसी बाहरी प्रशिक्षण अथवा शस्त्रास्त्रकी जरूरत है और न किसी बाहरी सत्ता पर निर्भर रहनेकी जरूरत है। इसलिए अहिंसाका सहारा लिये सिवा और कोई मार्ग बाकी नहीं रह जाता। यह कोई अहिंसाका उपदेश नहीं है। परन्तु केवल तर्कशुद्ध बात है और एक विश्वव्यापी नियमका कथन है। इस नियममें हमारी अटल श्रद्धा हो तो बडीसे बडी उत्तेजनाके समय भी सहनशीलताका पालन किया जा सकता है। इसीको मैंने वीरोंकी अहिंसा बताया है। "

गांधीजीको इस विषयमें कोई भ्रम नहीं था कि ब्रिटिश सेनाको भारतसे हटाते ही तुरन्त साम्प्रदायिक उपद्रव बन्द हो जायंगे। इतना ही है कि वे स्वयंसिद्ध सत्यके रूपमें यह मानते थे कि वे बहुत जल्दी बंद होने चाहिये। जब ब्रिटिश सेना भारतसे चली जायगी तो बहुसंख्यक लोगोंको मालूम हो जायगा कि अल्पसंख्यकोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये। "आज तो बहुसंख्यकोंके उत्तम व्यवहारका भी पूरा मूल्य नहीं आंका जाता क्योंकि ब्रिटिश सेना पर आधार रखनेका प्रलोभन बना हुआ है।'' [1] (मोटे टाइप मैंने किये हैं।) ब्रिटिश सेनासे उनका अभिप्राय सिर्फ गोरे सैनिकोंसे ही नहीं था, परन्तु उन सब सैनिकोंसे था जो ब्रिटिश अफसरोंके सिखाये हुए थे और जिन्हें भारतमें अंग्रेजोंके वफादार रहनेकी तालीम

दी गई थी तथा जिनका लोगोकी स्वतत्रताको कुचलनेके लिए ही अकसर उपयोग किया गया था।

इसलिए लोगोको साम्प्रदायिक उपद्रवोके समय सेना और पुलिस दोनोके सरक्षणके विना अपना काम चलाना सीखना पडेगा। गाधीजीने कहा, राजनीतिक असन्तोप अथवा साम्प्रदायिक उपद्रवको दवानेके लिए पुलिसका उपयोग करना उसका दुरुपयोग करना है। "जिस देशकी प्रजा अहिंसाकी अद्वितीय वीरता सीखी न हो वहा पुलिसका काम चोर-डाकुओसे नागरिकोकी रक्षा करना है और सेनाका काम सामान्यत विदेशी आक्रमणकारीसे देशकी रक्षा करना है।"

५

तो क्या देशको 'निश्चित अराजकताकी' अथवा जगलके कानूनकी स्थितिमे छोड दिया जाय? गाधीजीका उत्तर था 'नही।' वे इस मान्यताको एक अधविश्वास मानते थे, ओर उसके लिए विदेशी राज्यके इन्द्रजालको जिम्मेदार समझते थे, कि अग्रेजोकी सेना और पुलिसकी शक्तिने ही भारतको भीतरी शान्ति प्रदान की है। उन्होने कहा कि देश भरमे वार वार यात्रा करनेसे उनकी यह पक्की राय हो गई है कि, "७ लाख गांवोको न तो पुलिसका सरक्षण मिलता है और न वे पुलिसका सरक्षण चाहते हैं। गावमें अकेले पटेलका वडा आतक होता है। गावो पर उसका प्रभुत्व होता है। और वह इसीलिए रखा जाता है कि मा-वाप सरकारके लिए लगान वसूल करनेमे पटवारीकी मदद करे। मैं नही जानता कि पुलिसके जवानोने मनुष्य ओर हिंस्र पशुओके आक्रमणसे गाववालोकी सपत्ति और मवेशीकी रक्षा करनेमे कभी मदद दी हो?"[८७]

गाधीजी निश्चित रूपसे मानते थे कि भारत उस समय तक अपनी मूल स्थितिको प्राप्त नही कर सकता, जव तक भारतकी प्रत्येक स्त्री और पुरुप स्वय अपना पुलिस नही वन जाता और "भारतका प्रत्येक घर अपना किला नही वन जाता — यहा 'किला' शव्दका प्रयोग मैंने उसके अधकार-युगमे प्रचलित अर्थमे नही किया है, वल्कि प्राचीन कालमे प्रचलित उसके सच्चे अर्थमें किया है। वह यह कि प्रत्येक व्यक्ति मनमे वैरभाव रखे विना अथवा ऐसी इच्छा तक रखे विना कि वह स्वय न कर सके तो कोई दूसरा उसके भावी हत्यारेका अन्त कर दे, मृत्युका आलिगन करनेकी कला सीखे। . . . यदि दुर्भाग्यवश राजनीतिक विचारके लोग यहा सूचित सीमा तक न जायं या न जा सकें, तो उन्हे कमसे कम सव प्रकारका डर तो छोड ही देना चाहिये और दृढतापूर्वक सेना या पुलिससे मिलनेवाला संरक्षण विलकुल अस्वीकार कर देना चाहिये।"[८८]

सविधान-सभाका भाग्य अभी तक अधरमे लटक रहा था। प्रश्न यह था कि वह बुलाई भी जायगी या नही। लार्ड वेवेल पहले ही अंतिम चुनौती दे चुके थे (देखिये पृष्ठ ३४३–४४)। १४ जुलाई १९४६ को ही गाधीजीने यह चेतावनी दे दी थी "यदि सविधान-सभा निष्फल हो जाता है तो इसका कारण यह नही होगा कि अंग्रेज ही हर बार दुष्टता करते है, बल्कि यह होगा कि हम लोग मूर्ख है अथवा मैं तो यह भी कहूगा कि हम दुष्ट है।' 'यदि लोग अपने तुच्छ झगडे और वैरभाव छोड दें और साम्प्रदायिक मतभेदो तथा छोटे छोटे ऊच-नीचके भेदोको भूल जाय तो ब्रिटिश सेनाका भारतमें काम ही नही रहेगा और फिर हमें कोई गुलाम नही रख सकेगा। "हम अपने इतिहासके एक सकट कालमे से गुजर रहे है। चारो ओर खतरेके बादल मडरा रहे है। परन्तु हम खतरेको अपना अवसर बना लेंगे यदि हम सत्याग्रहकी शक्तिको पहचान ले, क्योकि इस पृथ्वी पर सत्याग्रहसे अधिक शक्तिशाली अन्य कोई वस्तु नही है।"[५]

ऐसे आलोचकोकी कमी नही थी, जो यह पूछते थे कि जिन लोगोको कभी शस्त्र प्रयोगकी तालीम ही नही मिली हो उनसे अहिंसाकी बात करनेसे क्या लाभ? यह बात 'नरम दिलवाले' हिंदू पर विशेष रूपसे लागू होती है क्योकि वह स्वभाव और परम्परासे अनाक्रमणकारी है। गाधीजीका उत्तर यह था यह समझना घोर आत्म वचना है कि मारनेकी कला सीखने और उसका अभ्यास करनेसे ही मनुष्य मौतका खतरा उठा सकता है अन्यथा नही उठा सकता। 'असत्यको बार बार दोहरानेसे जो सम्मोहन उत्पन्न हो जाता है वह न हो तो हम इस प्रकार अपने आपको बुरी तरह धोखा नही दे सकते।[५१] आज अहिंसाको गगन विहार कह कर उसकी हसी उडाना एक फैशन हो गया है। फिर भी मेरी राय है कि हिंदू धर्मको जीवित रखने और भारतको अखड रखनेका यही एकमात्र उपाय है। यदि काग्रेसकी अहिंसाके पिछले २५ वर्षके इतिहासने हमें यह बात नही सिखाई, तो उसने हमें कुछ भी नही सिखाया।[५२]

गाधीजी इस बातसे भी सहमत नही थे कि किसी विशेष जातिके कुछ लोगोने अमानुषिक कृत्य किये इसलिए सारी जातिको बदनाम कर दिया जाय और उन्हें अछूत बना दिया जाय।' मुस्लिम लीग चाहे तो हिंदुओको गालिया दे सकती है और भारतको दारुल-हब (शत्रु-देश) घोषित कर सकती है— जहा जिहादका कानून लागू होता हो और ऐसे तमाम मुसलमान जो काग्रेससे सहयोग कर गद्दार और नष्ट कर देनेके काबिल समझे जाय।' परन्तु तमाम मुसलमान मुस्लिम लीगी नही है। 'इस सारी बकवासके बावजूद

हमे सारे मुसलमानोको अपने मित्र वनाने और उन्हे अपने प्रेमपाशमे बाधनेकी आशा कभी छोडनी नही चाहिये।"[५३]

यद्यपि साम्प्रदायिक एकता गाधीजीको प्राणोसे भी प्यारी थी, फिर भी जिस चीजको वे सचमुच तत्त्वत गलत समझते थे उसे स्वीकार करके अथवा उसका समर्थन करके वे उस एकताको खरीदनेके लिए तैयार नही थे। दो राष्ट्रोके जिस सिद्धान्तको मुस्लिम लीग अपनी पाकिस्तानकी मागका आधार मानती थी, वह गाधीजीकी दृष्टिमे ऐसी ही एक गलत चीज थी। यदि इस सिद्धान्तके अनुसार, जहा तक कमसे कम मुसलमानोका सम्वन्ध है, धर्म ही राष्ट्रत्वकी एकमात्र कसौटी हो, तब तो कोई मनुष्य अपना धर्म वदल लेने पर अपने आप एक भिन्न राष्ट्रीयताको प्राप्त कर लेता है। यह तो विचित्र वात कही जायगी और इसे स्वीकार कर लेनेसे बहुत ही विलक्षण परिणाम पैदा होगे। देशके अलग अलग भागोके लोग दूसरी अधिकाश वातोमे एक-दूसरेसे सहमत हो, परन्तु विभिन्न धर्मोको मानते हो, तो वे अलग राष्ट्र हो जायेगे। इस प्रकार तो प्रत्येक गावमे और प्रत्येक गलीमे दो या अधिक 'राष्ट्र' हो जायगे, जो एक-दूसरेके विरुद्ध होगे। इसके अलावा, यदि भारतके किसी भागका कोई मुसलमान अपने धर्मके कारण किसी ऐसे राष्ट्रका अग वनता हो जिसमे भारतके प्रत्येक भागके मुसलमान शामिल हो और सारे गैर-मुस्लिमोसे और अपने निकटके पडोसियोसे भी अलग होता हो, तो —— जैसा डॉ० राजेन्द्रप्रसादने बहुत प्रभावशाली ढगसे वताया है, यह प्रश्न स्वभावत उठेगा . "वह मुसलमान किस राज्यका वफादार नागरिक होगा? क्या उस राज्यका जिसके भीतर वह रहता है और चलता-फिरता है और जो मुस्लिम राज्य न हो —— पाकिस्तानके भीतर न होनेके कारण —— अथवा उस दूरवर्ती मुस्लिम राज्यका जिसके साथ उसका इसके सिवा और कोई सम्वन्ध न हो कि उसमे रहनेवाले अधिकाश लोग उसी धर्मको मानते है जिसे वह मानता है?"[५४] अलवत्ता, यही सवाल किसी मुस्लिम राज्यमे रहनेवाले गैर-मुस्लिमके वारेमे भी पैदा होगा।

इसके सिवा, यदि मनुष्यके राष्ट्रका निश्चय उसके धर्मसे होता हो, तो ऐसे गैर-मुस्लिम वहुमतवाले प्रदेशोमे —— जो पाकिस्तानमे शामिल न हो —— रहनेवाले मुसलमानोका और पाकिस्तानमे आनेवाले प्रदेशोमे रहनेवाले गैर-मुस्लिमोका दर्जा और उनके राजनीतिक अधिकार क्या होगे? क्या वे विदेशी समझे जायगे या पाकिस्तानमे गैर-मुस्लिमोको रक्षित अल्पसख्यकोका दर्जा पाकर सन्तोष कर लेना पड़ेगा? और यदि एक धर्म छोड कर दूसरे धर्ममे चले जानेसे राष्ट्रीयता पर असर पडता हो और इसलिए व्यक्तिकी राजनीतिक निष्ठा वदल जाती हो, तो क्या राज्यके लिए उसके निवासियोके धर्म-परिवर्तनके किसी आन्दोलनको राज्यकी स्थिरताके लिए खतरा मान लेना और राजद्रोह

समझकर दबा देना उचित नहीं होगा? इससे तो राज्यके किसी महत्त्वाकांक्षी अध्यक्षको बलात् लोगोंका धर्म-परिवर्तन करनेके लिए एक तर्क भी मिल सकता है और फिर तो धार्मिक स्वतन्त्रताके और धार्मिक सहिष्णुताके सिद्धान्तको नमस्कार ही कर लेना पड़ेगा।

गांधीजीने पूछा, यदि इस्लामको स्वीकार करते ही किसी व्यक्तिकी राष्ट्रीयता अपने आप बदल जाय तो क्या मेरे सबसे बड़े लड़केका — जिसने अपने बहुरंगी जीवनके चन्द वर्षोंमें ही दो तीन बार अपना धर्म बदला है — भिन्न राष्ट्रीयता प्राप्त हो जाती है अथवा हिन्दू धर्म और इस्लामके बीच टक्कर खाते हुए हर बार उसे राष्ट्रत्वके नये लक्षण प्राप्त हो जाते हैं? यह सुझाव ही बेहूदा है। हरिलाल अपना धार्मिक लेबल बदलनेके बाद जैसा था और जहां था वैसा ही है और वहीं है। मैं यह भी माननेको तैयार नहीं हूं कि हिन्दू और मुसलमान अलग अलग धर्मोंको माननेके कारण ही भाई भाईकी तरह शांतिपूर्वक साथ नहीं रह सकते। मेरे लिए यह बात निरा अधर्म अथवा धर्मद्रोह है। यह मेरी सम्पूर्ण जीवन-दृष्टिके विरुद्ध है। दुनियाकी किसी भी चीजके लिए मैं असत्यका साक्षी नहीं बन सकता।

इसलिए गांधीजी दो राष्ट्रोंके उस सिद्धान्तको माननेसे इनकार करते थे जिसे मुस्लिम लीगने किसी भी समझौतेकी पहली शर्तके रूपमें पेश किया था। इसका कारण यह नहीं था कि गांधीजी — जैसा कि कुछ लोगोंने सुझाया था" — इसे 'ईश्वरकी ऐसी इच्छा' मानते थे जो बुद्धि और सामान्य ज्ञानके क्षेत्रसे बाहर थी बल्कि इसका कारण यह था कि वह मांग असत्यकी नींव पर खड़ी थी और पशुबलकी धमकीके साथ प्रस्तुत की गई अनुचित और विवेकहीन मांग थी। उसके लिए इतिहासमें कोई आधार नहीं मिलता था और वह किसी राजनीतिक सिद्धान्तके आधार पर नहीं रची गई थी। उन्होंने हरिजन में लिखा मुझे पाकिस्तानकी मांग स्वीकार करनेमें कोई संकोच नहीं होगा यदि मुझे यह विश्वास करा दिया जाय कि वह उचित है अथवा इस्लामके लिए हितकारी है। परन्तु मेरा दृढ़ विश्वास है कि मुस्लिम लीग द्वारा पेश की हुई पाकिस्तानकी मांग इस्लाम-विरुद्ध है और मुझे उसे पापपूर्ण कहनेमें भी कोई संकोच नहीं है। इस्लाम संपूर्ण मानव-जातिकी एकता और भाईचारेका हिमायती है न कि मानव-परिवारकी एकताको छिन्न भिन्न करनेका। इसलिए जो लोग भारतको परस्पर लड़नेवाले समूहोंमें बांट देना चाहते हैं वे भारत और इस्लाम दोनोंके शत्रु हैं। वे चाहें तो मेरे टुकड़े टुकड़े कर सकते हैं परन्तु मुझसे कोई ऐसी बात नहीं मनवा सकते जिसे मैं अनुचित और गलत समझता हूं।[1]

६

गाधीजीकी दृष्टिमे अहिसा केवल एक दर्शन नही थी, परन्तु कार्य करनेकी एक पद्धति थी, हृदय-परिवर्तनका एक साधन थी। उन्होंने साम्प्रदायिक दगोमे उसका प्रयोग करके काफी विस्तारसे उसके रहस्यकी चर्चा की है।

दगा करना एक विशेष व्याधि है, एक रोग है। साम्प्रदायिक दगोकी तहमे डरकी वह मनोवृत्ति रहती है, जिसका नैतिकताका विचार न रखनेवाले अखबार दुरुपयोग करते है और जिसे भडका कर वे आम लोगोमें पागलपन पैदा करते है। "एक अखबार भविष्य-वाणी कर देता है कि दगे होनेवाले है, दिल्लीमे सारी लाठिया ओर छुरिया बिक गई है और इस समाचारसे हर आदमी घबरा जाता है। दूसरा अखबार यहा-वहा दगे होनेकी खबर देता है और पुलिस पर दोषारोपण करता है कि एक जगह उसने हिन्दुओका पक्ष लिया ओर दूसरी जगह मुसलमानोका। सामान्य लोग इससे भी परेशान हो जाते है।"[५७] ऐसा क्यो होना चाहिये? "अगर कही सचमुच दगा हो भी जाय और कुछ आदमी उसमे मारे भी जाये, तो उससे क्या हुआ? किसी दिन तो हरएकको मरना ही होगा।"[५८] बुद्धिसगत उपाय तो यह है कि शान्त चित्तसे दगोके बीचमे जाकर दगाइयोको समझदार बननेके लिए कहा जाय। "छोटी-सी लडकी भी दगाइयोके पास जाकर उन्हे दगा न करनेके लिए समझा सकती है। बहुत सभव तो यह है कि वे मान जायगे। परन्तु मान लीजिये कि वे नही मानते और उस लडकीको मार डालते है, तब भी उसका तो कल्याण ही होगा। जो ईश्वर पर भरोसा करते है और यथाशक्ति उसकी इच्छानुसार चलनेका प्रयत्न करते है, उनका तो सदा कल्याण ही होता है।"[५९]

द्वेषका मूल भय है। ये दोनो एक ही सिक्केके सीधे और उलटे पहलू है। इसलिए मारनेकी जितनी इच्छा होती है "उतनी ही मरनेकी तैयारी कम होती है।"[६०] विरोधीके भयने ही हममे द्वेष उत्पन्न होता है। परन्तु अहिसाके शब्दकोषमें "बाहरी शत्रु जैसा कोई शब्द ही नही है।"[६१] जब यह चीज समझमे आ जाती है तब मनुष्यका भय भाग जाता है और उसके साथ ही द्वेषका भी अपने-आप अन्त हो जाता है। "इस प्रकार उसके (विरोधीके) हृदय-परिवर्तनका अर्थ हमारा हृदय-परिवर्तन भी है।"[६२]

भयकी भावनाको जीतनेका मार्ग शुतुरमुर्गकी तरह रेतमें सिर छिपा लेना नही है, परन्तु अपने भीतर ऐसी श्रद्धा पैदा करना है जो कभी विचलित नहीं होती। "खतरेको स्पष्ट रूपमें देख कर भी उसके सामने शान्त और स्वस्थ बने रहना और ईश्वरकी भलाई पर विश्वास रखना ही सच्ची बुद्धिमत्ता है।"[६३]

इस प्रकार हम सत्याग्रहकी गहरीसे गहरी बुनियाद — प्रार्थना पर आ जाते हैं। सत्याग्रही पशुबलके अत्याचारसे अपनी रक्षा करनेके लिए ईश्वर पर भरोसा करता है। 'जीवनके विविध क्षेत्रोंमें आत्म समर्पणकी उदात्त और वीरतापूर्ण कला सीखनेमें प्रार्थना प्रथम और अन्तिम पाठ है। प्रार्थना किसी बुढ़ियाका फुरसतके समयका मनोरंजन नहीं है। प्रार्थनाको अच्छी तरह समझा जाय और उचित रूपमें उसका उपयोग किया जाय तो वह कार्यका अत्यन्त शक्तिशाली साधन है।'[६]

अवश्य ही प्रार्थनाके लिए ईश्वरमें सजीव श्रद्धा होनी चाहिये। ऐसी श्रद्धाके बिना सफल सत्याग्रहकी कल्पना नहीं की जा सकती। ईश्वरको किसी भी नामसे पुकारा जा सकता है जब तक कि उसका अर्थ जीवनका सजीव धर्म है — दूसरे शब्दोंमें नियम और नियमका निर्माता ईश्वर एक ही है।'[७] इसके अभावमें सत्याग्रहीमें क्रोध, भय और प्रतिशोधके बिना मरनेका साहस नहीं पैदा होगा। 'यह साहस इस विश्वाससे पैदा होता है कि ईश्वर सबके हृदयोंमें विराजमान है और ईश्वरकी उपस्थितिमें कोई भय नहीं होना चाहिये। ईश्वरकी सर्वव्यापकताके ज्ञानका अर्थ विरोधी कहलानेवाले लोगोंके प्राणोंके लिए भी आदर होता है।'[८] जब आवेगोंका जोर होता है और भय तथा सामूहिक उन्माद लोगों पर छा जाता है तब प्रार्थनामें श्रद्धा रखनेवाले मनुष्यको तूफानमें भी अपना मस्तिष्क ठंडा रखना चाहिये और पशुके स्तर पर उतर जानेसे इनकार करना चाहिये। "क्रोध और द्वेष तथा दूसरे सब हीन भावनाओं पर विजय पानेकी शक्ति प्रार्थनासे आती है।"[९]

दंगोंमें भी प्रेम धर्मकी विजयके दृष्टान्त मिलते हैं। बम्बईके उपद्रवों और कलकत्तेके रक्तस्नानके दिनोंमें अनेक ऐसी कहानियां सामने आईं जिनमें मुसलमानोंने अपने प्राणोंकी बाजी लगा कर अपने हिन्दू मित्रोंको शरण दी और हिन्दुओंने मुसलमानोंको शरण दी। मानव-जाति मर जाती यदि समय समय पर मनुष्यमें दैवी गुणोंका प्रकटीकरण इस प्रकार न होता।[१०]

अहिंसा अथवा प्रेमकी सच्ची कसौटी निर्भयता है। सम्पूर्ण प्रेमसे सारा भय दूर हो जाता है। इसके विपरीत, भय इस बातको सूचित करता है कि जिससे हम डरते हैं उसके प्रति हममें प्रेम या अहिंसाका अभाव है। परन्तु जब हृदयमें डर हो तब बहादुरीका दिखावा करनेमें कोई लाभ नहीं होता। उससे काम नहीं चलता। ऐसे दृष्टान्त भी मिले हैं जब बालक निर्भय होकर सांपके साथ खेलता रहा है और उसको काटा नहीं गया है। परन्तु यदि कोई प्रौढ़ व्यक्ति जो सांपसे डरता हो सांपके साथ खेलनेकी कोशिश करे तो उसके मनमें हो सांपका भय पैदा हो जायगा और कदाचित् सांप उसे काट खाय।[११] यही बात मानवके बारेमें भी सच है।

जो आदमी डरता है और भयसे मुक्त होना चाहता है, उसके लिए पहला कदम यह है कि वह हथियार रखना बन्द कर दे। हमे ईश्वरमें पूरी श्रद्धा रखनी चाहिये और अपनी रक्षाके लिए उस पर आधार रखना चाहिये। "ईश्वरमे विश्वास रखो और अपने हथियार तैयार रखो" — यह तो श्रद्धाके आधारसे ही इनकार करना है और इसलिए यह परस्पर विरोधी वात है। "जो मनुष्य डरता है और हथियार रखता है, वह ईश्वरसे इनकार करता है और हथियारोको अपना ईश्वर वनाता है।"[७०]

लेकिन जव कोई मनुष्य आत्मवलकी पद्धतिको दगेकी वास्तविक स्थितिमें आजमाता है, तो कई समस्याये सामने आती है। उदाहरणके लिए, वास्तविक हत्यारा वहुत वार एक अज्ञान साधन — दुष्टतापूर्ण प्रचारका शिकार होता है। यदि हम जहरीले प्रचारको रोकनेके लिए कुछ नही कर सकते, तो हत्यारेको उसके पागलपनसे हम कैसे रोक सकते है? दूसरे, जो लोगोको पीछेसे अचानक छुरा मारते है, उनसे हम कैसे लड सकते है? अन्तमे, हम हिंसाके दावानलका सामना कैसे कर सकते हैं, जव सारे देशमे उसके व्यापक वन जानेका खतरा हो — क्योंकि हम एक ही समयमे सव जगह नही पहुच सकते?

गाधीजीके पास इन सव समस्याओका उत्तर था। यह सच है कि हत्यारा दुष्ट प्रचारका शिकार हो जाता है। परन्तु ऐसा प्रचार भी दूषित वातावरणमे ही असरकारी हो सकता है। यदि वातावरणमे से जहरको निकाल दिया जाय, तो सिद्धान्तहीन प्रचार व्यर्थ हो जायगा। सही उपाय यह है कि आरम्भ अपने आपसे किया जाय। असत्य पर आधारित भारी भरकम प्रचारकी अपेक्षा एक व्यक्तिके सजीव उदाहरण द्वारा प्रगट होनेवाला सत्य कही अधिक शक्तिशाली होता है। "प्रार्थनामे श्रद्धा रखनेवाला मनुष्य जानता ही नही कि डर क्या होता है। आपकी प्रार्थना एक व्यर्थका रटन है, यदि वह डर, घवराहट और सामान्य लोगोके उन्मादके वातावरणको साफ नही करती।"[७१] रही वात उस गुडेकी जो निर्दोष शिकारको पीछेसे अचानक आकर छुरा मारता है, ऐसी छुरेवाजियोको पूरी तरह रोक सकना शायद सम्भव नही है। "परन्तु यदि दर्शक लोग वुरा काम करनेवालेसे मिले हुए न हो और उनमे साहसका अभाव न हो, तो वे अपराधीको पकड़ कर या तो पुलिसके हवाले कर देगे या जिस समुदायका वह होगा उसे सौंप देगे।"[७२] अन्तमे, यह स्पष्ट है कि जहा जहा दंगे छिडे उन सव स्थानो पर एक ही समयमें कोई नही पहुच सकता। "परन्तु मन, वचन और कर्मसे हम उन्हे प्रोत्साहन देनेसे इनकार कर सकते है। यदि हमारी आखोके सामने ही दगे छिड जाय, तो अपने प्राणोको खतरेमे डाल कर भी उन्हे रोकनेका प्रयत्न हमें करना चाहिये। परन्तु दूसरोके प्राण लेकर ऐसा कभी न किया जाय। . . .

शब्दसे भी अधिक शक्तिशाली शुद्ध विचार होता है।"" प्रश्न यह है कि क्या हमारा इसमें विश्वास है? और यदि ऐसा हो तो क्या हम अपने विश्वासके अनुसार आचरण करेंगे?

वीरोकी अहिंसाकी साधनाके लिए हमें अपने दैनिक जीवनमें क्या करना चाहिये? अहिंसाका साहस घरमें रहनेसे पैदा नहीं किया जा सकता। उसके लिए साहसके कामोंकी जरूरत होती है। जो मनुष्य दो आदमियोंको लडता देख कर काप जाता हो और भाग खडा हो वह अहिंसक नहीं परन्तु कायर है। अपनी परीक्षाके लिए हमें खतरे और मौतका सामना करना सीखना चाहिये हम इंद्रियोंका दमन करना चाहिये और सब प्रकारके कष्ट सहन करनेकी शक्ति प्राप्त करनी चाहिये।'

जो व्यक्ति वीरोकी अहिंसाकी साधना करना चाहता है उसके लिए कमसे कम आवश्यकता इस बातकी है कि पहले वह अपने विचारोंको कायरतासे मुक्त कर दे और विचारोंकी स्वच्छताके आधार पर छोटे बडे सभी कार्योंमें अपने आचरणका नियमन करे। इस प्रकार अहिंसाके साधकको क्रोध किये बिना अपनेसे अधिक बलवानके आगे दबनेसे इनकार कर देना चाहिये। मान लीजिये कि एक सन्यासी मेरे लडके पर आक्रमण करनेकी धमकी देता है और जब मैं उस भावी आक्रमणकारीको समझाता हू तो वह मुझ पर टूट पडता है। उस समय यदि मैं उसके वारको शालीनता और गौरवके साथ झेल लेता हू और उसके विरुद्ध अपने मनमें कोई दुर्भाव नहीं रखता, तो मैं वीरोकी अहिंसा प्रदर्शित करता हू। यदि हर बार मैं अपने क्रोधको दबा लेता हू और वारके बदले वार करनेकी शक्ति रखते हुए भी मैं वार नहीं करता, तो मैं अपने भीतर वीरोकी अहिंसाका विकास कर लूगा और वह मुझे कभी धोखा नहीं देगी।"

यह सन्देश कोई नया नहीं था। गाधीजी पहले भी उसे दोहराते रहे थे और जब उन्होंने पहले-पहल यह सन्देश दिया था तब भी वह अति प्राचीन था। इतनी ही बात थी कि वे कोई पुस्तकीय शिक्षा नहीं दे रहे थे परन्तु जो बात उनके रोम रोममें बसी हुई थी उसीकी घोषणा कर रहे थे। इसे उन्होंने वैज्ञानिक प्रयोगका विषय बना लिया था।

७

सत्य शब्द सस्कृतके 'सत' शब्दसे निकला है—यह 'अस' धातुका वर्तमान कृदन्त है जिसका अर्थ 'होना' 'अस्तित्व रखना' अथवा 'जाना' है। सत्यके सिवा वास्तवमें दूसरा कुछ नहीं है इसलिए सतका (नपुसक सज्ञाके रूपमें) प्रयोग अन्तिम सत्य आदि कारण विश्वका नियन्त्रण करनेवाला नियम आदिके अर्थमें होता है। इसलिए गाधीजीने कहा सत्य ही ईश्वर

परमात्मा और नियम तथा नियम-निर्माता सब कुछ है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जहा कही सत्य है वहा ज्ञान (चित्) है और जहा ज्ञान है वहा आनन्द है। वह ऐसी स्थिति है, जिसमे मनुष्य दु ख और सुख दोनोको पार कर जाता है। "इसीलिए हम ईश्वरको सत्-चित्-आनन्दके रूपमे जानते है।"[७६]

सत्याग्रहका शब्दार्थ है सत्य पर अटल रहना। इसलिए सत्याग्रहकी शक्ति, आत्मबल अथवा सत्यबल हमारे भीतर बसे ईश्वरकी ही शक्ति है। "ईश्वर व्यक्ति नही है। वह सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान परमात्मा है। जो मनुष्य उसे अपने हृदयमे स्थापित कर लेता है, उसे ऐसी अद्भुत शक्ति प्राप्त हो जाती है, जो परिणाममें तो भाप और बिजली जैसी भौतिक शक्तियोके ही समान है, परन्तु इनसे कही अधिक सूक्ष्म है।"[७७]

विश्वात्माको मनुष्यकी सीमित बुद्धि नही समझ सकती। परन्तु जैसे महासागरमें गिर कर पानीकी बूद महासागरके साथ एकरूप हो जाती है, वैसे ही इस विश्वात्माके साथ एकरूप होकर इसका अनुभव किया जा सकता है। इसका साक्षात्कार करनेके लिए प्राणिमात्रके साथ तादात्म्य साधना पडता है, "सृष्टिके छोटेसे छोटे जीवके साथ आत्मवत् प्रेम करना पडता है।"[७८] "ईश्वरकी भाति सत्य भी अज्ञेय है। परन्तु जब मनुष्यके सामने सत्य प्रगट होता है तब वह अहिंसाका वेश धारण करके आता है। अज्ञेय सत्य अहिंसाके रूपमे ज्ञेय बन जाता है।"[७९]

इसलिए सत्याग्रहका अर्थ अहिंसाकी अथवा प्रेमकी शक्ति भी है। सत्याग्रहके पालनमे बुनियादी जरूरत सम्यक् विचारकी है। "जब मनको सम्यक् विचार करनेका अभ्यास हो जाता है तब सम्यक् कर्म अपने आप होने लगता है। परन्तु . . . यदि मनको गलत विचार करनेकी आदत हो गई हो, तो सम्यक् कर्मके पीछे कोई बल नही होगा और सम्यक् कर्मके जितने फल कर्ताको मिलने चाहिये वे भी उसे नही मिलेगे।"[८०] सम्यक् विचारके बिना सत्याग्रहके भीतर "श्रद्धाकी प्राणदायक शक्ति" कभी नही रहेगी। जो मनुष्य सम्यक् विचारका आदी नही है, "वह किसी निश्चित समय (वह चाहे तो भी) सम्यक् कर्म करनेके लिए अपने पर निर्भर नही रह सकेगा।"[८१]

सत्याग्रहके नेताको स्पष्ट अन्तर्दृष्टिसे, सत्यासत्यका विवेक करनेकी शक्तिसे, 'शुद्ध बुद्धिकी', 'अन्तरात्माकी', 'दैवी वाणीकी'—इसे आप चाहे जिस नामसे पुकारे—आवाज सुननेकी शक्तिसे अचूक मार्गदर्शन प्राप्त होता है। "दैवी सगीत हमारे भीतर सतत चलता ही रहता है, परन्तु इन्द्रियोके कोलाहलमे वह कोमल सगीत डूब जाता है।"[८२] "सत्यके दर्शन . . .

शुद्ध अनासक्तिवाले मनुष्यको ही हो सकते है। क्रोध, लोभ, अहंकार भय आदिसे साधककी आंखो पर पर्दा पड जाता है।' ⁴¹

गीताके दूसरे अध्यायके अन्तिम श्लोकोंमें, जिन्हे गांधीजी अपना 'कामधेनु शब्दकोष' कहते थे स्थितप्रज्ञके आदर्शका वर्णन किया गया है। स्थितप्रज्ञका चित्त इन्द्रियोंके विषयों द्वारा इन्द्रियों पर होनेवाले असरसे क्षुब्ध नहीं होता। सरोवरके पूर्णत स्थिर जलके समान उसका चित्त सदा निर्मल और शान्त रहता है — ऐसा सरोवर जिसके शान्त और गहरे जलमें उसके पदेका छोटेसे छोटा कण भी हम स्थिरता और स्पष्टतासे देख सकते है। ऐसे चित्त पर सुख और दुःखका हर्ष और शोकका, राग और द्वेषका कोई भी प्रभाव नहीं होता। इनसे वह अक्षुब्ध तथा अलिप्त रहता है। उसका निर्णय सदा स्पष्ट होगा, और उसका हेतु दृढ और अचल होगा। हमने जिस सरोवरकी उपमा दी है उसमें गडबड पैदा करनेवाली जरासी लहर भी उठ जाती है, तो दृष्टि स्वच्छ नहीं रहती और उसके भीतरके पदार्थ तरने और नाचने लगते है। वे अपने सच्चे रूपमें दिखाई नहीं देते निर्णय स्पष्ट नहीं होता और हेतु अचल नहीं रहता।

यही हाल उस मनुष्यका होता है जिसकी असयत इन्द्रियां उसके चित्त पर शासन करती है और आज्ञाकारी बनकर उसके पहरेदारों और सन्देश-वाहकोंका काम नहीं करतीं। इन्द्रियोंके विषयोंका इन्द्रियों पर असर पडनेसे चित्तमें ऐसे उपद्रव पैदा होते है जो छोटे छोटे गडहोंसे लेकर भयंकर तूफानों तकका रूप धारण कर लेते है। ऐसे तूफानोंके समय मनुष्यकी आध्यात्मिक दृष्टि मन्द हो जाती है और श्रेय प्रेय सत्य असत्य शाश्वत-अशाश्वतका भेद करनेवाली उसकी विवेक शक्ति नष्ट हो जाती है। इस एक शक्तिके नष्ट हो जानेसे ही सारे दोष सारे पाप और सारे दुःख उत्पन्न होते है।

इसके विपरीत, जो मनुष्य सतत और प्रार्थनापूर्ण आत्म-सयमके द्वारा पूर्ण अनासक्ति तथा शान्तिकी अवस्थाको प्राप्त कर लेता है वह मनुष्य उस नियमके साथ एकरूप हो जाता है जो मार्ग है सत्य है और जीवन है, और इसके फलस्वरूप वह नियम जिस शक्तिका आविष्कार है और जो उस नियमसे बाहर और उससे भिन्न नहीं है ऐसी शक्तिका वह साधन बन जाता है।

> इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
> तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि॥
> तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
> इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥

या निशा सर्वभूतानाम् तस्या जागर्ति सयमी।
यस्या जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुने.।।

आपूर्यमाणम् अचलप्रतिष्ठम्
समुद्रमापः प्रविशति यद्वत्।
तद्वत् कामा य प्रविशति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी।।

विहाय कामान् य सर्वान् पुमाश्चरति नि स्पृह.।
निर्ममो निरहकार स शान्तिमधिगच्छति।।
एपा ब्राह्मी स्थिति· पार्थ नैना प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वाऽस्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति।।"[८८]

इसका अर्थ 'इन्द्रियोका नाश' नही है, परन्तु लाओत्सेके स्वय 'ताओ' से जो सूचित होता है वह इसका अर्थ है। अर्थात् "किसी व्यक्तिगत हेतुसे काम नही करना, व्यवहारोका कष्ट अनुभव किये विना व्यवहार चलाना और सुगध जाने विना आस्वाद लेना।"[८९]

गाधीजी कहते थे कि सत्याग्रहकी शक्तिका नियत्रण करनेवाले नियम भौतिक नियमोकी तरह ही वस्तुलक्षी और ठोस होते हैं। परन्तु सत्याग्रहके नियमो और भौतिक विज्ञानके नियमोमें एक महत्त्वपूर्ण अन्तर है। भौतिक विज्ञानके नियम निर्जीव और जड नियम हैं, सत्याग्रहके नियम सजीव नियम हैं और उन पर वृद्धि, विकास तथा परिवर्तनका सिद्धान्त लागू होता है। वे परिस्थितिके साथ सुमेल साधनेवाले भी होते हैं। भौतिक विज्ञानका शास्त्री जिन साधनोका उपयोग करता है, वे जड पदार्थोके वने होते हैं। सत्याग्रहमें साधन सजीव और सवेदनशील मानव होते हैं, जिनमे अपनी स्वयकी सकल्प-शक्ति, विवेक-शक्ति और निर्णयकी शक्ति होती है, और जिन लोगो पर सत्याग्रह आजमाया जाता है, वे भी ऐसे ही सजीव प्राणी होते हैं। इसलिए सत्याग्रहके शास्त्रमें कठोर और निर्जीव नियमोके लिए या निश्चित सिद्धान्तोके लिए कोई गुजाइश नही होती। सत्याग्रहके नियम और सिद्धान्त निरन्तर बदलते रहते हैं। सत्याग्रहके पालनमें विधि-निषेध भी निश्चित नही किये जा सकते और न ही किसी निश्चित प्रकारके आचरणको यात्रिक रूपमें दोहराया जा सकता है। इसलिए सत्याग्रही प्राय अपने सामनेके अगले कदमसे अधिक नही देख पाता। वह पहलेसे घटनाओकी कोई योजना नही वनाता। वह हर प्रकारकी घटनाओके लिए तैयार रहता है, क्योकि कठोर आत्म-सयम, आत्म-निरीक्षण और सत्य तथा अहिंसाकी दृष्टिसे सतत किये जानेवाले सदाचरणके द्वारा वह अपने आपको सत्याग्रहके नियमोके अनुकूल वना लेता है।

सत्याग्रह शास्त्रके अनुसंधानमें भक्त जैसे स्वाप उदाग और शून्यवत् बननेकी शक्ति चाहिये। 'सत्यशोधकको रजकणसे भी नम्र बन जाना चाहिये। सारी दुनिया रजकणको अपने पैरों तले कुचलती है। परन्तु सत्यके शोधकको इतना नम्र बनना चाहिये कि रजकण भी उसे कुचल दे। तभी उसे स्वतंत्र सत्यकी झांकी मिलेगी।' 'सत्याग्रहके अभ्यासमें नम्रताका वही स्थान है जो भौतिक विज्ञानके अनुसंधानमें तटस्थताका है।

सत्याग्रहकी प्रयोगशाला उसकी अपनी आत्मा अथवा अन्तरात्मा है। सत्याग्रहका प्रयोगकर्ता अपने अनुसंधानमें जिन साधनोंका उपयोग करता है वे एस व्रत या यम नियम हैं जिनका वह वैज्ञानिक निश्चितताके साथ अपने ही जीवनमें पालन करता है। उनमें से अधिक महत्त्वपूर्ण व्रत हैं सत्य अहिंसा, अस्तेय अपरिग्रह अभय अस्वाद और ब्रह्मचर्य। वे जितने सीधे-सादे हैं उतने ही आचरणमें कठिन हैं। वे एक अहंकारी मनुष्यको बिलकुल असंभव प्रतीत हो सकते हैं और एक निर्दोष बालकको बिलकुल संभव लग सकते हैं। '

इनमें से अन्तिम व्रत अथवा ब्रह्मचर्य-व्रतकी चर्चा अन्यत्र की जायगी। (देखिये खण्ड २ अध्याय ११) इन व्रतोंमें से सत्यका स्थान सर्वप्रथम और प्रमुख है। सापेक्ष सत्यमें अर्थात् साधन-स्वरूप सत्यमें और शुद्ध सत्यमें स्पष्ट भेद है। सापेक्ष सत्य वह सत्य है, जिसे हम किन्हीं विशेष परिस्थितियोंके सम्बन्धमें देखते हैं। वह संपूर्ण सत्य नहीं होता। जो एक प्रकारकी परिस्थितियोंमें सत्य हो सकता है संभव है वह भिन्न प्रकारकी परिस्थितियोंमें सत्य न हो। इसका एक बहुत सादा दृष्टान्त लीजिये। गुनगुना पानी ठंडे पानीकी तुलनामें गरम होता है और गरम पानीकी तुलनामें ठंडा होता है। इसी प्रकार सापेक्ष सत्य और शुद्ध सत्यकी बात है। शुद्ध सत्य अन्तिम सत्य है—वही है वही था और वही सदा रहेगा। सत्यके शुद्ध अर्थमें गांधीजी सत्य और ईश्वरको एक ही मानते थे। वे ईश्वरकी पूजा सत्यके रूपमें करते थे। इस अर्थमें सत्य मानव-जीवनका लक्ष्य—परम श्रेय है।

अपूर्ण मनुष्य सम्पूर्ण सत्यको ग्रहण नहीं कर सकता, सापेक्ष सत्यको भी ग्रहण नहीं कर सकता। इसलिए एक व्यक्तिको जो सत्य दिखाई दे, वह दूसरेको भूल मालूम हो सकता है। फिर भी दोनों अपने अपने सापेक्ष दृष्टि कोणसे सच्चे हो सकते हैं — जिस प्रकार कहानीके सात अंधे अपने अपने ढंगसे हाथीका वर्णन करनेमें सच्चे थे। इस तर्कके अनुसार गांधीजी शुरूमें ही इस निर्णय पर पहुंच गये थे कि सत्यके पालनमें अपने विरोधीके प्रति हिंसाकी गुंजाइश नहीं है, इसलिए इसमें धीरजकी आवश्यकता है और धीरजका अर्थ है स्वयं कष्ट सहना। इस प्रकार सत्यके जिस सिद्धान्तका गांधीजीने सत्याग्रह शब्द द्वारा वर्णन किया उसका अर्थ यह होने लगा कि स्वयं कष्ट उठा

कर अथवा प्रेमके द्वारा सत्यकी रक्षा की जाय। हम यदि ईश्वरके सत्यकी ही खोज करना चाहते है, तव तो क्योकि ईश्वर ही है और अन्य कुछ नही है, इसलिए "ईश्वरको हम सव वस्तुओमे और सव वस्तुओको ईश्वरमे देखेंगे।" फिर हम किसीसे द्वेप नही रखेंगे, किसीको भी पहुची हुई चोट हमे पहुची हुई चोटके समान हो जायगी। इस प्रकार अहिंसा जहा साधकके लिए एक साधन है, वहा वह सफल साधनाका अन्तिम फल और परिणाम भी है।

अपरिग्रहका आदर्श सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तसे ही फलित होता है। यदि हम अपने पडोसियोसे अपने ही जैसा प्रेम करते है, तो हम अनावश्यक वस्तुओका न तो लोभ कर सकते है, न उन्हे रख सकते है, जव कि दूसरोको जीवनकी अत्यत आवश्यक वस्तुए भी नही मिलती। और जिन वस्तुओकी दूसरोको वहुत जरूरत हो उन्हे हम जरूरतसे ज्यादा खर्च भी नही कर सकते। यदि हम किसी वस्तुको अपनी समझ कर रखते है, तो उस स्थितिमे हमें वलपूर्वक सारी दुनियाके विरुद्ध उसकी रक्षा करनी होगी, जब कोई भूखा या मोहताज आदमी हमसे वह वस्तु छीनना चाहेगा। गाधीजीने इग्लैडमे अपने एक सार्वजनिक भापणमें वताया था कि अपरिग्रहका आदर्श उन्हें किस तरह मालूम हुआ, कैसे उन्होने उसे अपनाया और उसके पालनका उनका अपना अनुभव क्या है। उन्होने कहा था: "जव मैंने देखा कि मै राजनीतिक भवरमें फस गया हू, तो मैंने अपने आपसे पूछा कि अनैतिकता, असत्य और जिसे राजनीतिक लाभ कहा जाता है उससे सर्वथा अछूता रहनेके लिए मुझे क्या करना चाहिये। . . . मै निश्चित रूपमें इस परिणाम पर पहुचा कि यदि मुझे उन लोगोकी सेवा करनी है जिनके वीच मै रहता हू और जिनकी कठिनाइया मै दिन-प्रतिदिन देखता हू, तो मुझे सव प्रकारकी सम्पत्तिका, हर प्रकारके परिग्रहका त्याग कर देना चाहिये। . . एक समय ऐसा आया जव इन चीजोका त्याग कर देना मेरे लिए वडे भारी आनन्दका विषय हो गया। . . और तव मैंने अपने मनमे कहा· "परिग्रह मुझे पाप मालूम होता है। मै अमुक वस्तुओको तभी अपने पास रख सकता हू जव मै यह जान लू कि दूसरे लोग भी—जो ऐसी ही वस्तुएं रखना चाहते है—उन्हे रख सकते है। परन्तु . . . जो वस्तु सव कोई रख सकते है, वह तो केवल अपरिग्रह ही है। . ."[८८]

शुद्ध सत्यकी दृष्टिसे तो हमारा शरीर भी आत्माका एक परिग्रह ही है। भोगकी इच्छासे हमने शरीरका आवरण खडा किया है और उसे हम टिकाये रखते है। "जव यह भोगेच्छा मिट जाती है, तो फिर शरीरकी जरूरत नही रह जाती और मनुष्य जीवन-मरणके कुचक्रसे मुक्त हो जाता है।"[८९] इस प्रकार अपरिग्रहके आदर्शका यह तकाजा है कि हमे कलके लिए कुछ

भी जमा करके नही रखना चाहिये। और अपने भौतिक शरीर तया शक्तियोका स्वार्थकी पूर्ति अथवा भोगके लिए उपयोग न करके सेवाके लिए ही उपयोग करना चाहिये। अपरिग्रहके आदर्शके पूर्ण पालनसे जो परिणाम निकलते है उनका वर्णन करते हुए गांधीजीने कहा 'जिन्होंने स्वेच्छापूर्ण दरिद्रताके इस आदर्शका सचमुच पूरी तरह पालन किया है वे इस बातका प्रमाण देते है कि जब आप अपना सर्वस्व छोड देते है तब आपके पास सचमुच दुनियाकी सारी सम्पत्ति आ जाती है। दूसरे शब्दोमें, जो कुछ आपके लिए वास्तवमें आवश्यक है वह सब आप सचमुच प्राप्त कर लेते है। यदि आपको अन्नकी जरूरत है तो अन्न आपके पास चला आयेगा। मैने बहुतसे ईसाई लोगोसे यह सुना है कि प्रार्थना करने पर उन्हें आहार मिल गया। मै इसमें विश्वास करता हू। परन्तु मै आपको एक कदम और आगे ले जाना चाहता हू और यह विश्वास कराना चाहता हू कि जो लोग स्वेच्छासे सब कुछ छोड देते है उन्हे सचमुच यह अनुभव होगा कि उनको कभी किसी चीजका अभाव नही होता। ' परन्तु इसमें एक शर्त है और वह यह कि श्रद्धापूर्वक सम्पूर्ण आत्म-समर्पण किया जाय "ईश्वरके जैसा कठोर स्वामी मैने इस पृथ्वी पर दूसरा नही देखा और वह आपकी पूरी पूरी परीक्षा लेता रहता है। और जब आपको मालूम हो कि आपकी श्रद्धा काम नही दे रही है या आपका शरीर आपका साथ नही दे रहा है तब वह किसी न किसी तरह आपकी सहायताके लिए आ पहुचता है और यह सिद्ध कर देता है कि आपको अपनी श्रद्धा छोडनी नही चाहिये, और ईश्वर सदा आपकी पुकार पर उपस्थित रहता है, परन्तु अपनी ही शर्तों पर न कि आपकी शर्तों पर। मुझे सचमुच ऐसा एक भी अवसर याद नही आता जब ऐन मौके पर उसने मुझे छोड दिया हो।"

अस्तेय चौथा मूलभूत व्रत है। जैसे सत्य और अहिंसाकी परस्पर प्रतिक्रियासे अपरिग्रह उत्पन्न होता है वैसे ही सत्य और अपरिग्रहकी परस्पर प्रतिक्रियासे अस्तेय जन्म लेता है। कारण स्तेय अपरिग्रह और सत्य दोनोका भंग है। जो मनुष्य काम नही करता और खाता है, वह चोरी करता है। जो मनुष्य ऐसी वस्तु लेता है जिसकी उसे अपने तात्कालिक उपयोगके लिए आवश्यकता नही है और उस वस्तुको अपने पास रखता है, वह भी चोरी करता है। "मै कहता हू कि एक तरहसे हम सभी चोर है। यदि मै कोई ऐसी वस्तु लेता हू जिसकी मुझे अपने ही तात्कालिक उपयोगके लिए जरूरत नही है और उसे मै रखता हू तो मै उसे किसी न किसीके पाससे चुराता हू। यह प्रकृतिका मूलभूत नियम है कि प्रकृति हमारी प्रतिदिनकी जरूरतोंके लिए काफी उत्पन्न करता है और यदि प्रत्येक मनुष्य अपने लिए

जितना पर्याप्त है उतना ही ले और उससे अधिक न ले, तो इस दुनियामे गरीबी नही रह पायेगी और कोई भूखसे नही मरेगा।"[१२] इसलिए गाधीजीने कहा कि तर्ककी दृष्टिसे देखे तो जो मनुष्य अपने दिमागमे व्यर्थका ज्ञान भर लेता है वह भी चोरी करता है और जो अपने समयका एक क्षण भी आलस्यमे गवाता है वह भी चोरी करता है। जो व्यक्ति इस आदर्शकी पूर्ण प्राप्तिकी आकाक्षा रखता है, वह अपने शरीर और बुद्धिका सेवाके लिए ही सदा उपयोग करेगा — यहा तक कि सेवा, न कि रोटी, उसके जीवनका आधार बन जायगी। वह "सेवाके लिए ही खायेगा, पियेगा, सोयेगा और जागेगा।"[१३]

एक वेदमत्र है जो इस प्रकार है

मोघमन्न विन्दते अप्रचेत ।
सत्य ब्रवीमि वध इत्स तस्य।
नार्यमण पुष्यति नो सखायम्।
केवलाघो भवति केवलादी।
अह मेघ स्तनयन्वर्पन्नस्मि।
मामदन्ति अहमद्म्यन्यान्।
अह सदमृतो भवामि।
मदादित्या अधि सर्वे तपन्ति।

डॉक्टर जिमरकी टिप्पणी यह है· "जो व्यक्ति इस रहस्यको जान लेता है, वह लोभी नही हो सकता। . . . वह इसे (अन्नको) अपने साथियोमे (स्वेच्छासे) वाट कर खायेगा। वह अन्नका सग्रह करके नैसर्गिक चक्रका भग नही करना चाहेगा। जो कोई अन्नको रखता है वह जीवन-शक्तिकी प्राण-दायक गतिसे अपने आपको अलग कर लेता है; क्योकि वह शक्ति ही शेप विश्वका पालन करती है। ऐसा कृपण परिग्रही सजीव ससारकी जीवन-प्रद दिव्य प्रक्रियासे अलग हो जाता है। उसका अन्न उसे कुछ लाभ नही पहुचाता। जब वह खाता है तव अपनी मृत्युको ही खाता है।"[१४]

सत्याग्रहकी साधनाके रूपमे अपरिग्रह और अस्तेयके पालनका अपना एक अलग ही महत्त्व है। विशेष रूपसे "धनकी पूजा करनेवाले मनुष्य" के वर्तमान युगमे वह पालन व्यापक अर्थमें सत्य और अहिसाके पालनकी सच्ची कसौटी और परीक्षा वन जाता है।

अस्वादका अर्थ यह है कि हमे खानेके लिए नही जीना चाहिये, परन्तु भगवानकी सृष्टिकी सेवाके लिए जीनेको खाना चाहिये। स्वादेन्द्रियका काम यह है कि वह स्वास्थ्य विगाडनेवाले और स्वास्थ्य वढानेवाले आहारमे विवेक करे। जिह्वाके सयमका अर्थ स्वादको नष्ट कर देना नही है, परन्तु उसे

परिष्कृत और सुसस्कृत बनाकर उसका सदुपयोग करना है। हम सामान्यत करते यह है कि जिह्वाको भोगका साधन बना कर उसे जड कर देते है और ऐसा करके मृत्युको निमत्रण देते है। जिह्वाके दास बन कर हम दूसरे व्रतोंका भी भग करते है — विशेषत ब्रह्मचर्यका।

अभय पच महाव्रतोंमें मूर्त स्वरूप ग्रहण करनेवाले आदर्शोंके पालनका अन्तिम फल और माप है। अभय इन महाव्रतोंकी साधना करनेवाले साधककी सफल साधनाका आधार भी है। अभयका अर्थ होता है भौतिक शरीरके प्रति और उसके साथ जुडी हुई सब चीजोंके प्रति पूर्ण उदासीनता और उनकी हानि तथा उनके नाशका सामना करनेकी तैयारी। जो ईश्वरकी शरणमें जाना चाहता है उसे शरीरसे परे आत्माकी झाकी होनी चाहिये, और जिस क्षण मनुष्यको अविनाशी आत्माकी झाकी हो जाती है उसी क्षण नाशवान शरीरका प्रेम छूट जाता है। "

गाधीजी द्वारा प्रतिपादित इन यम नियमों अथवा व्रतोंकी नीवमें रहे कष्ट-सहन अथवा देह-दमनका अपने आपमें कोई महत्त्व नही है। इसमें किसी प्रकारके सौदेके लिए भी अवकाश नही है। यह चीज जिराल्ड हर्डके शब्दोंमें, पारसी धर्ममें और यहूदी धर्ममें भी मौजूद है और उसका ईसाई धर्म पर अत्यन्त विघातक असर हुआ है।' "

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि इन व्रतों या यम नियमोंके स्वरूपके बारेमें ऐसी किसी पवित्रताकी कल्पना नही है जिसे स्पर्श न किया जा सके या जिसमें कोई परिवर्तन न किया जा सके। सत्याग्रहकी शक्तिके विकासके लिए आधारभूत बात तो सत्य जैसा दिखाई दे उसी रूपमें उसका पालन करनेका सिद्धान्त है। इसलिए यद्यपि इन यम नियमों अथवा व्रतोंका स्वरूप समाजकी विभिन्न रचनाओंमें प्रचलित स्तरों, सामाजिक व्यवहारों स्थानीय रीति रिवाजो परम्पराओ, धार्मिक भूमिका, अनुभव तथा सम्बन्धित व्यक्तियों और समाजके विकासके अनुसार बदल सकता है परन्तु एक वस्तु स्थिर और अपरिवर्तनीय रहेगी — वह यह कि मनुष्यका आचरण उसके विश्वासके अनुरूप होना चाहिये। उसके विचारों शब्दों और कार्योंमें सम्पूर्ण सुमेल होना चाहिये।

इस प्रकार ये सब व्रत सत्य अथवा विश्वप्रेमके धर्मसे सबद्ध है और वही उन सबकी जड है। (खण्ड २ का ११ वा अध्याय भी देखिये)। सत्यकी साधनाका अर्थ है हमें जो सत्य दिखाई दे उसका समस्त गूढार्थोंके साथ सच्चे हृदयसे सम्पूर्ण पालन। सत्यके दूसरे पहलू — अहिंसाकी तरह सत्य केवल एक तात्त्विक आदर्श या एकातमें आचरणीय गुण नही है उसे तो जीवनमें उतारना पडता है। गाधीजी इस बातका सतत प्रयत्न करते थे कि वे जिन

आदर्शोंको माननेका दावा करते है, उनका अपने जीवनमे पूरी तरह पालन करे। यही उनकी सत्यकी साधना थी। इससे उनके जीवनने सत्यरूपी ईश्वरके मन्दिरमे निरन्तर चलनेवाली आराधनाका रूप ले लिया था।

८

गाधीजीने एक वार एक मिशनरी मित्रसे कहा था, "आपको मेरा जीवन ध्यानसे देखना चाहिये — मै कैसे रहता हू, कैसे खाता हू, कैसे वैठता हू, कैसे वोलता हू और सामान्यत कैसे व्यवहार करता हू। इन सब वातोका कुल जोड ही मेरा धर्म है।" आत्म-निरीक्षण तथा आत्मशुद्धिका सतत प्रयत्न करते करते उन्होने अपने आप पर प्रतिक्षण चौकी करनेकी आदत वना ली थी। उनके लिए सत्यका अर्थ मौखिक सत्य ही नही था, परन्तु सत्यपूर्ण जीवन — कहने और करनेमे, मन-वचन-कर्ममे सम्पूर्ण एकरूपता था।

वे प्रतिदिन अन्तरात्माकी अदालतके समक्ष अपनेको खडा करते थे और अपने छोटेसे छोटे कार्योंके लिए अपने आपसे उत्तर मागते थे। इस जाच-पडतालसे कोई भी चीज वचती नही थी। वे अपनेको विलकुल माफ नही करते थे। असलमें कभी कभी देखनेवालोको ऐसा लगता था कि वे आत्म-परीक्षण और आत्मनिन्दाको इस हद तक ले जाते है कि स्वय उनके प्रति और उनके निकटतम साथियोके प्रति अन्याय हो जाता है। उदाहरणके लिए, उनका यह पुराना रिवाज था कि साय-प्रार्थनाके वाद उन्हे हरिजन-कोषके लिए जो आभूषण भेंट किये जाते थे उन्हें नीलाम कर दिया जाय। समय वचानेके लिए उन्होने यह रिवाज वन्द कर दिया था, लेकिन उन्हे यह सोच कर दुख होता था कि वे हरिजनोको हानि पहुचाकर अपना समय वचा रहे है, यद्यपि वे हरिजनोके सरक्षक वननेका दावा करते है। इसलिए उन्होने वह रिवाज फिरसे चालू कर दिया। एक दिन वर्षा-ऋतुके शनिवारकी शामको पानीसे टपकते हुए शामियानेमे प्रार्थना हुई और भीड रोजसे वहुत कम थी इसलिए आभूषणोंका नीलाम नही किया गया। वादमें इसके लिए उन्होने अपने आपको दोषित ठहराया क्या मेरा यह भय श्रद्धाका अभाव प्रगट नही करता कि लोगोके कम होनेके कारण वोली कम लगेगी? उनके दक्षिण अफ्रीकाके एक मित्र डाउनेस ७ वजे शामको डरवनके गिरजेमें धर्मोपदेश करनेवाले थे। उन्होने सात वजते ही केवल एक श्रोताके सामने अपना भाषण शुरू कर दिया। भाषण पूरा होनेसे पहले हॉल खचाखच भर गया था। इसे श्रद्धा कहते है।

गाधीजीके ७७ वें जन्म-दिवसके अवसर पर, जो भारतीय पचागके अनुसार २२ सितम्वर १९४६ को पडता था, एक साथीने विना विचारे अन्तरिम सरकारके तत्कालीन खाद्य-मत्री डॉ० राजेन्द्रप्रसादके हाथो हरिजन वच्चोको

मिठाई बटवा दी। जब दगा सामने अराल मुह बाये खडा हो एस समय गाधीजीको यह अन्नकी भयकर बरबादी मालूम हुई। उनका पुण्य प्रकोप भडक उठा और उन्होंने अपने ग्लिया गुबार निकाला। इसके लिए बादमें उन्होंने दुगना प्रायश्चित्त किया — अपने साथीको भूलके लिए और अपने दिमागका सन्तुलन खो देनेके लिए। उनके प्रत्येक भोजनमें क्या क्या चीजें रहें इसके बारेमें वे हमेशा सूचना देते थे। उनके भोजनकी वस्तुए उनकी अपनी शारीरिक स्थिति भावी काय और विश्रामकी स्थिति मानसिक तनाव और ऐसी अन्य बातो पर पूरी तरह आधार रखती थी। उस दिन शामको उन्होंने अपनी सूचनाओंमें यह लिखा कि हमेशा दिये जानेवाले सतरेके रसके बजाय खट्टे नीबूका रस बकरीके दूधके साथ परोसा जाय। जब उनका काम खट्टे नीबू और गुडसे ही चल सकता हो तो उन्हें सतरेका उपयोग करनेका क्या अधिकार है? और अपनी डायरीमें उन्होंने लिखा आज मुझे क्रोध आ गया था। मुझे सोचना होगा कि ऐसी परिस्थितिमें मेरा क्या कर्तव्य है। इस धधकती हुई आगके बीच मानसिक सन्तुलन रखना बहुत कठिन मालूम होता है। मेरा आत्म निरीक्षण चल रहा है।' एक घनिष्ठ मित्रसे उन्होंने कहा मेरे भीतर अशान्ति है म अकुला उठा हू। म इस भीतरी पीडाको शान्त चित्तसे क्यो नही सहन कर सका? मुझे डर है कि १२५ वष तक जीनेके लिए आवश्यक अनासक्ति मुझमें नही है। चरखे और खादीकी इतनी धीमी प्रगतिका भी यही कारण है। अनन्त धयके बिना खादीकी सफलता असम्भव है। तीव्र लगन और सम्पूण अनासक्ति सारी सफलताकी कुजी है।' '

अमरीकी प्रेस-सवाददाता प्रेस्टन ग्रोवरको एक भटमें गाधीजीने समझाया कि १२५ वष तक जीनेका उन्होंने बार बार जो विश्वास दोहराया था वह क्यो हिल गया है इसका यह कारण नही है कि मेरा विश्वास अनुचित है। परन्तु इस इच्छाकी पूर्तिके लिए सुनिश्चित मर्यादाए हैं। यह तभी सभव है जब हर परिस्थितिमें मानसिक सन्तुलन रखा जा सके। मनुष्यको किसी बातसे विक्षुब्ध नही होना चाहिये। म क्रोधसे भडक उठा। मने अपना मानसिक सन्तुलन खो दिया। आप इसका वणन करनेके लिए कोई भी क्रिया विशेषण या कोई भी विशेषण लगा सकते हैं। तब मुझे अपनी असफलताका पता लगा। इस प्रकार सयम खो देनेसे मेरे जीवनके कुछ वष घट गये। वे फिर प्राप्त किये जा सकते हैं यदि म चित्तकी स्थिरता फिरसे प्राप्त कर सकू।' [१८]

एक और अवसर पर नवाब भोपालके साथ हुई बातचीतमें गाधीजीसे एक भूल हो गई थी (देखिये पृष्ठ ३५८ ६०)। इससे उन्हें गहरा आघात लगा वे जडसे हिल उठे। उन्होंने अपनी अन्तरात्माके न्यायालयमें अपने पर घोर लापरवाहीका दोष लगाया जो एक सार्वजनिक कार्यकर्ताके लिए अपराध है।

इतनेसे सन्तोप न करके उन्होने शामकी प्रार्थना-सभामें अपनी उस भूलको स्वीकार किया, "मेरे मित्र कह सकते है कि वह कोई पाप नही था, केवल एक भूल थी — एक तुच्छ-सी गलती थी। परन्तु मै भूल और पापमें कोई भेद नही करता। यदि कोई मनुष्य प्रामाणिक भूल करता है और अपने प्रभुके सामने सच्चे हृदयसे उसे स्वीकार कर लेता है, तो दयालु प्रभु उसके कारण कोई हानि नही होने देते।"[९९] और आत्म-निरीक्षणमे सहायक हो इसलिए उन्होंने सारे सामान्य कामोके लिए अनिश्चित कालका मौन ले लिया, जो केवल साय-प्रार्थनामे प्रवचन करनेके लिए और जिस मिशनके लिए वे आये थे उसके लिए जरूरी होने पर ही तोडा जाता था।

इस प्रकार दिन-प्रतिदिन कठोर और जाग्रत आत्म-सयम द्वारा अपनेको अनुशासनवद्ध वनाकर वे अपने मौनकी गहराईमें डूवते गये, ताकि नोआखालीने उन्हें जो चुनौती दी थी उसका उत्तर देनेके लिए वे अन्तरात्माका मार्गदर्शन प्राप्त कर सके। मौनके नादने उन्हें जो कुछ कहा वह प्रार्थना-सभाको उन्होंने सुना दिया: "मनुष्यको परमात्माकी सम्पूर्ण सृष्टिका हित हृदयसे चाहना चाहिये और प्रार्थना करनी चाहिये कि भगवान उसे ऐसा करनेका वल दे। सवके कल्याणकी इच्छामे ही उसका अपना कल्याण भी समाया हुआ है। जो मानव केवल अपना या अपनी जातिका ही कल्याण चाहता है, वह स्वार्थी है और उसका कभी कल्याण नही हो सकता। . . . मनुष्यके लिए यह विवेक रखना अत्यावश्यक है कि जिसे वह स्वय अच्छा समझता है वह क्या है और जो उसके लिए सचमुच अच्छा है वह क्या है।"[१००]

कुछ लोगोको यह सव गगन-विहार जैसा प्रतीत होता था। एक ऐसे ही शकाशील व्यक्तिने गाधीजीसे पूछा, "दुनियामे जहा भी नजर डालिये वही हिंसा और सत्ताकी राजनीतिके सिवा दूसरा कुछ दिखाई नही देता। क्या आपने यह सोचा है कि ऐसी परिस्थितियोमे आपकी अहिंसा क्या कर सकती है?" गाधीजीने उत्तर दिया, "मेरी अहिंसा न तो पगु है, और न दुर्वल है। वह सर्वशक्तिमान है। जहा अहिंसा है वहा सत्य है; और सत्य ईश्वर है। मै कह नही सकता कि ईश्वर अपने आपको किस रूपमें प्रगट करता है। मै केवल इतना ही जानता हूं कि ईश्वर सर्वव्यापक है और जहा वह है वहा सव कुशल ही है। इसलिए सवके लिए एक ही नियम है। ससारमे जहा भी सत्य और अहिंसाका साम्राज्य है, वहा शान्ति और आनन्द है। आज ये वस्तुए कही भी नही हैं, इससे यह सिद्ध होता है कि वे तत्काल तो मनुष्यसे छिपी हुई हैं। परन्तु सदाके लिए उनका लोप नही हो सकता। श्रद्धावानको इसी श्रद्धाके वल पर अविचल रहना चाहिये।"[१०१]

इस दर्शन और इस श्रद्धाकी स्वय परीक्षा करनेके लिए गाधीजी अव नोआखालीकी दिशामे प्रस्थान कर रहे थे।

टिप्पणियां : सूची

टिप्पणियां

प्रथम खंड

पहला भाग

अध्याय–१

१. हरिजन, ११ मार्च १९३९, पृष्ठ ४४।

२ अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज्य' मे, जो १९०९ मे लिखी गई थी, गाधीजीने सचमुच चरखेका करघेके रूपमे उल्लेख किया था।

३. उपनिषदोके अध्ययनके आधार पर गाधीजीने एक सिद्धान्त वनाया था कि मनुष्यकी स्वाभाविक आयु १२५ वर्षकी होती है और प्रत्येक मानव उसे प्राप्त कर सकता है और उसे प्राप्त करना चाहिये। परन्तु यह सम्पूर्ण निर्विकार अवस्था प्राप्त करनेसे और रामनामकी सव रोगोको दूर करनेकी शक्तिमें विश्वास होनेसे ही सभव है। देखिये अध्याय ६, विभाग २।

अध्याय–२

१ 'भारत छोडो' (क्विट इडिया) शव्द-प्रयोग गलतीसे गाधीजीके नामके साथ जोड दिया गया था और इस सम्वन्धमें वडी गलतफहमी पैदा हुई थी। वास्तवमे तो गाधीजीके साथ हुई एक भेटमें एक अमरीकी सवाद-दाताने इसका प्रयोग किया था और फिर वह सर्वत्र प्रचलित हो गया था। गाधीजीने तो वास्तवमे "व्यवस्थित रूपसे अग्रेजोके भारतसे हट जाने" की वात कही थी।

"दिवालिया होने जा रही वैंकके नाम लिखा भविष्यकी तारीखका चैक" — यह शव्द-प्रयोग भी गाधीजी पर गलतीसे थोप दिया गया था। इसका सवध मार्च १९४२ के क्रिप्स-प्रस्तावोसे था। गाधीजीने इस रूपमे या इस अर्थमे भी यह शव्द-प्रयोग कभी नही किया था।

'भारत छोडो' की मागका अर्थ गाधीजीने अपने एक क्वेकर मित्र हॉरेस एलेक्ज़ेडरके साथ हुई अपनी वातचीतमें इस तरह समझाया था: "मेरा दृढ मत है कि अग्रेजोको अव व्यवस्थित ढगसे भारत छोड़ कर चले जाना चाहिये और जो खतरा उन्होने सिंगापुर, मलाया और वर्मामें उठाया उसे यहा नही उठाना चाहिये। इस कदमका अर्थ होगा उच्च प्रकारका साहस, मानव-

२१ गाधीजीका समुद्री तार 'न्यूज क्रानिकल'का २३ जुलाई १९४४।
२२ गाधीजीका अखबारी वक्तव्य २० जुलाई १९४४।
२३ गाधीजीकी अखबारी मुलाकात, २८ जुलाई १९४४।
२४ गाधीजीकी अखबारी मुलाकात, २१ जुलाई १९४४।
२५ गाधीजीका समुद्री तार 'केवलकेड' का २० जुलाइ १९४४।
२६ गाधीजीका अखबारी वक्तव्य, २० जुलाई १९४४।
२७ गाधीजीका अखबारी वक्तव्य, १३ जुलाई १९४४।
२८ वही।
२९ यू० पी० आइ० लन्दन, द्वारा पूछे गये प्रश्नोका गाधीजी द्वारा दिया गया उत्तर १५ जुलाई १९४४।

३० भारतमे डेप्युटी चीफ आफ जनरल स्टाफका सैनिक पद भोग रहे जनरल मोलेसवर्थने अप्रैल १९४२ में रोटरी क्लबके एक भाषणमे ये उद्गार प्रगट किये थे भारतमें सब कोई यह पूछते है कि जापानियोको भारतमें न आने देनेके लिए हम क्या करनेवाले है। सेनाकी दृष्टिसे युद्धके इस विशाल मोर्चे पर हम ऐसे अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थानोको — जिन्हें अपने हाथमें रखना जरूरी है — भारतकी सुरक्षाके लिए अपने हाथमें रखेंगे। परन्तु हम प्रत्येक स्थानको हाथमें नही रख सकते। इसलिए शेष भारतके लिए क्या किया जाय जहा हम जल स्थल और वायुसेना नही रख सकते? हम सबको हथियार नही दे सकते। परन्तु हम जापानियोको खूब तग करनेके लिए जन-साधारणको शिक्षा देनेका बहुत काम कर सकते है। सेना यह काम नही कर सकती। — हरिजन १२ अप्रैल १९४२ पृ० १०९।

३१ गाधीजीका अखबारी वक्तव्य, १० जुलाई १९४४।
३२ वही।
३३ ग्रेग पावर आफ नान-वायोलेन्स अहमदाबाद १९३३, पृ० ६१।
३४ कुमारमगलमका समुद्री तार डेली वर्कर का १ अगस्त १९४४।
३५ गाधीजीका पत्र लार्ड ववेलको १५ जुलाइ १९४४।
३६ प्रेसपोर्ट मक्जेक्ट इण्डिया बम्बई १९४६ पृ० २०२।
३७ गाधीजीका पत्र लार्ड ववेलको २७ जुलाई १९४४।
३८ लार्ड ववेलका पत्र गाधीजीको १५ अगस्त १९४४।
३९ गाधीजीका अखबारी वक्तव्य, १८ अगस्त १९४४।

अध्याय–३

१ प्यारेलाल मशरूवालाने मध्यप्रान्त और बरार सरकारके मुख्य सचिवको अपनी भूल मालूम होते ही एक पत्रमें लिखा था 'यदि मुझे किसी मानवी न्यायालयके ही सामने अपनी स्थिति स्पष्ट करनेकी इच्छा होती,

तो मैं कई तर्क प्रस्तुत कर सकता था। उदाहरणार्थ, मैं यह तथ्य वताता कि स्वय मि० एमेरी जैसे व्यक्तिने मुझे गुमराह कर दिया। ९ अगस्त १९४२ को नेताओकी गिरफ्तारीके थोड़े ही समय वाद उन्होने जो भाषण दिया, उससे मुझे पहले-पहल यह पता चला कि सभाव्य कार्यक्रमके क्या क्या अग हो सकते है। उसके वाद मुझे पता चला है कि कई और लोगोकी भी यही स्थिति थी। मि० एमेरीने खास तौर पर यह भी कहा था कि आन्दोलनके माने हुए सचालकोकी इच्छा उसे अहिंसक ढगसे चलानेकी थी। इसलिए मुझसे उस कार्यक्रमकी जाच करनेकी विनती की गई। मैंने स्पष्ट शब्दोमे उसके कई अगोको अस्वीकार कर दिया — जैसे दफ्तरो, वैंको वगैराको लूटना और जलाना। दो अगोके वारेमे (अर्थात् तार और रेलकी पटरिया उखाडनेके वारेमे) मेरा उत्तर कमजोर था। जहा तक मुझे याद है, मेरे उत्तरकी वादकी कडिकाओसे (जो सरकारी पुस्तिका 'काग्रेस रिस्पोन्सिबिलिटी फॉर दि डिस्टर्वन्सेज़' में नही छापी गयी है) पहली कडिकामे वहुत कुछ सुधार हो जाता है और उन अगो पर भी मेरी असहमति प्रगट होती है, जो पहली कडिकामे उचित वताये गये थे। . . .

"परन्तु मैं अपना वचाव नही करना चाहता। अपनी ही अन्तरात्माको शुद्ध करनेके लिए मुझे यह कहना चाहिये कि मि० एमेरी द्वारा प्रसिद्ध किये गये कार्यक्रमका केवल वौद्धिक प्रक्रियासे विश्लेषण करनेके वजाय मुझे अपने अन्तर्यामी पथ-प्रदर्शकसे प्रकाश मागना चाहिये था। मुझे तार काटने, रेलकी पटरिया उखाडने, पुल नष्ट करने और आवागमन तथा सचारके साधनोको इस प्रकार अस्तव्यस्त करनेके कार्योका उतने ही स्पष्ट शब्दोमे विरोध करना चाहिये था, जितना मैंने दफ्तरो वगैराको लूटने और जलानेके कार्यक्रमोका किया।"

जेलसे रिहा होनेके वाद इस पत्रको समाचारपत्रोमे प्रकाशित कराते समय किशोरलाल मशरूवालाने यह निजी टिप्पणी उसके साथ जोडी थी "यद्यपि जो कुछ हो गया उसे तो मैं सुधार नही सकता, फिर भी मुझे इस वातके लिए पश्चात्ताप हुए विना नही रह सकता कि मैंने मि० एमेरीके रेडियो-भाषण पर विश्वास करके अहिंसक दृष्टिकोणसे उसके किसी भागको उचित वताया। इसलिए मुझे इस वातका खेद है कि मैं स्वय गुमराह हो गया और दूसरोको गुमराह करनेका साधन वन गया।"

२. गाधीजीका अखवारी वक्तव्य, २८ जुलाई १९४४।

३. गाधीजीका पत्र जी० रामचन्द्रन्‌को, ९ जुलाई १९४४।

४. गाधीजीका पत्र अरुणा आसफअलीको, ९ जून १९४४।

५ गाधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, ९ मार्च १९४४।

६ गाधीजीका अखबारी वक्तव्य २८ जुलाई १९४४।

७ गाधीजीका पत्र भुसावलके पुलिस सब इन्स्पेक्टरको, ४ फरवरी १९४५।

८ गाधीजीका पत्र अरुणा आसफअलीको, ३० जून १९४४।

९ ८ अगस्त १९४२ का कांग्रेस महासमितिकी बैठकमें अपने अन्तिम भाषणमें गाधीजीने कहा था "लीजिये, आपको मै एक छोटा-सा मन्त्र देता हू। वह मन्त्र है—'करो या मरो।' या तो हम भारतको आजाद करेंगे या इस प्रयत्नमें हम मर जायगे। पत्रकार खुले तौर पर यह घोषणा कर दें कि वे पूरे दिलसे कांग्रेसके साथ है।" उन्हें स्टैंडिंग प्रेस एडवाइजरी कमिटी (स्थायी प्रेस सलाहकार समिति) का अन्त करके यह घोषणा कर देनी चाहिये कि वर्तमान प्रतिबन्धोके मातहत वे लिखना छोड देंगे और सरकार उनसे कुछ भी करानेकी आशा नही रख सकती। उन्हें सरकारी वक्तव्योको, जो झूठसे भरे होते है छापनेसे इनकार कर देना चाहिये। राजा-महाराजा पॉलिटिकल डिपार्टमेंटको लिख दें "हम आजसे अपनी प्रजाके बन कर रहेंगे और उसीके साथ डूबेंगे या तिरेंगे। देशी राज्योकी प्रजाको घोषणा कर देनी है कि वह राजाओंका नेतृत्व तभी मानेगी जब वे अपना भाग्य प्रजाके साथ मिला देंगे, अन्यथा नही। सरकारी कर्मचारी अपने पदोंसे इस्तीफा दें या न दें, परन्तु उन्हें खुली घोषणा कर देनी चाहिये कि वे कांग्रेसके प्रति वफादार है। सैनिकोको सरकारसे कह देना चाहिये "हमारे हृदय कांग्रेसके साथ है। हम आपके न्यायपूर्ण आदेश मानेंगे, परन्तु हम अपने ही लोगो पर गोली नही चलायेंगे।" विद्यार्थियोको अपने अध्यापकोंसे कह देना चाहिये "हम सब कांग्रेसी है। यदि आप भी कांग्रेसी है तो आपको अपनी जगह खाली करनेकी जरूरत नही है। परन्तु आप हमें स्वतन्त्रताकी शिक्षा दें और स्वाधीनताका मार्ग दिखायें।'

१० गाधीजीका अखबारी वक्तव्य, ८ अगस्त १९४४।

११ सन १९२९ में कांग्रेसने औपनिवेशिक स्वराज्यके बजाय पूर्ण स्वाधीनताको अपना ध्येय बनाया था। तबसे २६ जनवरीका दिन प्रतिवर्ष स्वाधीनता दिवसके रूपमें मनाया जाता था।

१२ गाधीजीने पी० सी० जोशीसे (११ जून १९४४ के) अपने पत्रमें ये प्रश्न पूछे थे (१) जनताके युद्ध में जनता का क्या अर्थ है? क्या इसका अर्थ भारतके करोडो लोगोंके पक्षमें युद्ध है अथवा पूर्वी रूस या पश्चिमी यूरोपके हितोंके पक्षमें है या अमरिकाके हितोंके पक्षमें है अथवा इन सबके पक्षमें है? क्या मित्रराष्ट्र एक ही युद्धमें लगे हुए है? (२) जिन साम्यवादी लोगोंके आप प्रतिनिधि है उनके पक्षका क्या सार्वजनिक

जाच होती है? यदि होती है तो क्या मैं उसे देख सकता हू? (३) यह कहा जाता है कि साम्यवादी दलने पिछले दो वर्षोमे मजदूर-हड़तालोके सगठनकर्ताओ और नेताओको गिरफ्तार करनेमें अधिकारियोकी सक्रिय सहायता की है। (४) कहा जाता है कि साम्यवादी दलने शत्रुताकी भावनासे काग्रेस संगठनके भीतर घुसनेकी नीति अपनाई है। (५) क्या साम्यवादी दलकी नीतिका निर्देशन वाहरसे होता है?

१३. गाधीजीका पत्र पी० सी० जोशीको, ३० जुलाई १९४४।

१४. वही।

१५. पी० सी० जोशीका पत्र गाधीजीको, १४ जून १९४४।

१६ गाधीजीका पत्र पी० सी० जोशीको, ३० जुलाई १९४४।

१७ पी० सी० जोशीका पत्र गाधीजीको, १२ सितम्वर १९४४।

१८ भारतीय साम्यवादी दलकी स्थितिके वचावमें सोवियटका समान उदाहरण दिया जा सकता है। "सोवियट राज्य अनेक राष्ट्रोका वना राज्य है।" (स्टालिन) उसमें १८० राष्ट्रीय जातिया, १५७ भापाए, ११ राष्ट्रीय गणराज्य ओर २२ स्वशासनभोगी गणराज्य हैं। . . .

किन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अन्तर यह था कि रूसमें कोई वाहरकी तीसरी सत्ता नहीं थी। तीसरी सत्ताके हट जानेके वाद वहा सव कुछ हुआ। जो कुछ हुआ वह तीसरी सत्ताके द्वारा नहीं हुआ और न तीसरी सत्ताके वहा रहते हुआ।

१९. गाधीजीका पत्र पी० सी० जोशीको, १५ सितम्वर १९४४।

२०. गाधीजीका पत्र साम्यवादियोको, २४ मई १९४५।

२१. जून १९४२ को समाप्त होनेवाले १८ महीनोके उत्पादनके आकड़े।

२२. स्वराज थ्रू चरखा, सग्राहक. कनु गाधी।

२३. वही।

२४ वही।

२५. वही।

२६. वही।

२७. वही।

२८. वही।

२९ रचनात्मक कार्यक्रममें ये प्रवृत्तियां सम्मिलित थीं: (१) साम्प्रदायिक एकता, (२) अस्पृश्यता-निवारण, (३) शरावबन्दी, (४) खादी, (५) दूसरे ग्रामोद्योग, (६) ग्राम-सफाई, (७) वुनियादी शिक्षा, (८) प्रौढ-शिक्षा, (९) स्त्रिया, (१०) स्वास्थ्य और स्वास्थ्य-विज्ञानकी शिक्षा, (११) प्रान्तीय भापाएं, (१२) राष्ट्रभापा, (१३) आर्थिक समानता, (१४) किसान, (१५)

मजदूर, (१६) आदिवासी (१७) कोढी, और (१८) विद्यार्थी। यह सूची मार्गदर्शक थी।

३० गांधीजीका पत्र जे० आर० डी० टाटाको, ७ अक्तूबर १९४४।

३१ नार्मन क्लिफके साथ गांधीजीकी भेंट, मसूरी, ३१ मई १९४६।

३२ ११ अप्रैल १९४५ को बोरीवली शिविरमें कस्तूरबा सेविकाओंके समक्ष गांधीजीका भाषण और प्रार्थना प्रवचन।

अध्याय–४

१ लीग कौंसिलकी बैठक, ३० जुलाई १९४४।

२ गांधीजीका पत्र जिन्नाको, ४ मई १९४३।

३ जिन्नाका अखबारी वक्तव्य २८ मई १९४३।

४ प्रो० डब्ल्यू० सी० स्मिथ सम्प्रदायवादकी व्याख्या यों करते हैं "भारतमें सम्प्रदायवाद प्रत्येक धर्मके माननेवालोंके समूहको सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक घटकके रूपमें महत्त्व देता है और ऐसे समूहोंके बीच जो भेद और जो शत्रुता है, उस पर भी जोर देता है। " — मॉडर्न इस्लाम इन इंडिया लाहौर १९४३, पृ० १८५।

५ केसी 'एन ऑस्ट्रेलियन इन इंडिया' लन्दन, १९४७ पृ० ७५।

६ दत्त कृत 'इंडिया टुडे' में दिया गया उद्धरण पृ० ३८९।

७ ग्रेहाम 'लाइफ एंड वर्क ऑफ सर सैयद अहमद खां', पृ० ४०।

८ हंटर, दि इंडियन मुसलमान्स, पृ० १७३।

९ स्मिथ कृत 'मार्डन इस्लाम इन इंडिया' में दिया गया हंटरका उद्धरण, लाहौर १९४३ पृ० १९१।

१० मेहता और पटवर्धन दि कम्यूनल ट्रॅंगल, इलाहाबाद, १९४२, पृ० ८८।

११ मार्लेज़ रिक्लेक्शन्स, भाग–२ पृ० १७०–७१।

१२ लेडी मिंटोज डायरी पृ० २८–२९।

१३ माडर्न इस्लाम इन इंडिया, लाहौर (१९४३ पृ० २१२) में स्मिथ द्वारा मांटेग्यू तथा चेम्सफोर्ड कृत 'प्रपोज़ल्स फार इंडियन कान्स्टिटयूशनल रिफार्म्स' से उद्धृत उद्धरण।

१४ तुर्कीके सुलतानको मुस्लिम जगत अपना खलीफा अथवा आध्यात्मिक मुखिया माना करता था। प्रथम महायुद्धके समय ब्रिटिश प्रधानमंत्री लायड जार्जने यह वचन दिया था कि तुर्कीकी एकता कायम रखी जायगी और इस्लामके पवित्र स्थान मुस्लिम धर्मके सर्वमान्य मुखियाके पास रहने दिये जायेंगे। परन्तु युद्धके बाद तुर्की साम्राज्यको तोड़ दिया गया और उसके अरबी प्रान्त उससे छीन लिये गये। इसका अर्थ यह हुआ कि खिलाफत

तोड़ दी गई, क्योंकि इस्लामी कानूनके अनुसार 'अरवस्तानके द्वीप' पर खलीफाका भौतिक अधिकार रहना चाहिये, ताकि वह इस्लामके पवित्र स्थानोंकी रक्षा कर सके। इसे भारतीय मुसलमानोंने वचन-भग समझा और यह 'खिलाफतका अन्याय' वन गया। गाधीजीने उनके इस रोपको 'तीन अन्याय' दूर करानेके लिए अहिंसक असहयोग आन्दोलनकी तरफ मोड दिया। ये तीन अन्याय थे (१) खिलाफत, (२) अमृतसरका हत्याकाड (यह हत्याकाड १९१९ मे जलियावाला वागमे हुआ था। इससे पहले जनरल डायरने फौजी कानूनकी घोपणा कर दी थी। इस घटनामे ६०० से अधिक निहत्थे लोग एक वन्द जगहमे फसा कर गोलियोसे मार दिये गये थे और इससे तिगुने घायल कर दिये गये थे। जनरल डायरकी सेनाने उस जगहका एकमात्र वाहर निकलनेका रास्ता भी रोक दिया था और गोली चलाना तभी वन्द हुआ था जव सेनाके पास गोलिया चुक गयी), और (३) स्वराज्यका निपेध।

१५ लॉर्ड ओलिवियरका पत्र 'दि टाइम्स' में, लन्दन, १० जुलाई १९२६।

१६ वर्कनहैड: दि लास्ट फेज, भाग–२, पृ० २४५–४६।

१७. वही, पृ० २५०।

१८ वही, पृ० २५४।

१९. वही, पृ० २५५।

२०. जव लीगके एक सदस्य सर सुलतान अहमद वाइसरॉयकी कार्यकारिणी परिपद्में शरीक हुए, तो सितम्वर १९४१ में मुस्लिम लीगने उन्हें अपनी सदस्यतासे निकाल दिया, और तीन लीगियोंने प्रान्तीय मुख्यमत्रीकी हैसियतसे सब्सिडियरी नेशनल डिफेन्स कौंसिलमे शरीक होनेके वाद मुसलमानोंके नाते उस कौंसिलसे इस्तीफे दे दिये।

२१ स्मिथ, 'मॉडर्न इस्लाम इन इडिया', लाहौर, १९४३, पृ० २९४।

२२. वही।

२३. वही, पृ० २९२।

२४. आर० एन० खन्ना कृत 'गाधीजीज फाइट फॉर फ्रीडम', लाहौर, १९४४ (पृ० ३१) में आर्थर मूरके 'ट्रिब्यून' मे प्रकाशित लेखसे उद्धृत।

२५. जिन्नाका अखवारी वक्तव्य, ५ अगस्त १९४४।

२६. लॉर्ड वेवेलका पत्र गाधीजीको, १५ अगस्त १९४४।

२७. नई दिल्लीके 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में प्रकाशित 'गाधी-जिन्ना टॉक्स' नामक लेखमें लन्दनके 'दि टाइम्स' पत्रसे दिया गया उद्धरण, १९४४, पृ० ५८।

२८ धरना देनेवालोंके नेताने बाम्बे पुलिसके सामने यह स्पष्टीकरण किया कि छुरा खाकसारोंसे अपनी रक्षा करनेके लिए रखा गया था, क्योंकि उन्होंने धमकी दी थी कि वे उसी समय सेवाग्राममें प्रदर्शन करेंगे।

२९ गांधीजीका पत्र जिन्नाको, ११ सितम्बर १९४४।

३० जिन्नाका पत्र गांधीजीको, ११ सितम्बर १९४४।

३१ गांधीजीका पत्र जिन्नाको, १४ सितम्बर १९४४।

३२ जिन्नाका पत्र गांधीजीको, १० सितम्बर १९४४।

३३ गांधीजीका पत्र जिन्नाको, १५ सितम्बर १९४४।

३४ जिन्नाका पत्र गांधीजीको १० सितम्बर १९४४।

३५ गांधीजीका पत्र जिन्नाको १४ सितम्बर १९४४।

३६ जिन्नाका पत्र गांधीजीको, १० सितम्बर १९४४।

३७ गांधीजीका पत्र जिन्नाको, ११ सितम्बर और १४ सितम्बर १९४४।

३८ जिन्नाका पत्र गांधीजीको १४ सितम्बर १९४४।

३९ गांधीजीका पत्र जिन्नाको १५ सितम्बर १९४४।

४० गांधीजीका पत्र जिन्नाको ११ सितम्बर और १५ सितम्बर १९४४।

४१ पाकिस्तान' शब्दमें इन प्रदेशोंका समावेश माना गया था 'पी' (पंजाबके लिए) 'ए' (अफगान प्रान्त—सीमाप्रान्तके लिए) 'के' (काश्मीरके लिए), एस (सिंधके लिए) और 'स्तान' (बलूचिस्तानके लिए)।

४२ जिन्नाका पत्र गांधीजीको १७ सितम्बर १९४४।

४३ गांधीजीका पत्र जिन्नाको २२ सितम्बर १९४४।

४४ वही।

४५ गांधीजीका पत्र जिन्नाको, १५ सितम्बर १९४४।

४६ जिन्नाका पत्र गांधीजीको २१ सितम्बर १९४४।

४७ गांधीजीका पत्र जिन्नाको १५ सितम्बर १९४४।

४८ जिन्नाका पत्र गांधीजीको १७ सितम्बर १९४४।

४९ गांधीजीका पत्र जिन्नाको १५ सितम्बर १९४४।

५० जिन्नाका पत्र गांधीजीको १७ सितम्बर १९४४।

५१ गांधीजीका पत्र जिन्नाको १५ सितम्बर १९४४।

५२ जिन्नाका पत्र गांधीजीको १७ सितम्बर १९४४।

५३ गांधीजीका पत्र जिन्नाको १९ सितम्बर १९४४।

५४ गांधीजीका पत्र जिन्नाको २४ सितम्बर और २६ सितम्बर १९४४।

५५. गाधीजीका पत्र जिन्नाको, १९ सितम्बर १९४४।

५६ वही।

५७. गाधीजीका पत्रकार-सम्मेलन, १८ सितम्बर १९४४।

५८. गाधीजीका पत्र जिन्नाको, २४ सितम्बर १९४४।

५९ जिन्नाका पत्र गाधीजीको, २१ सितम्बर १९४४।

६०. जिन्नाका पत्र गाधीजीको, २१ सितम्बर १९४४।

६१. गाधीजीका पत्र सर तेजबहादुर सप्रूको, २५ फरवरी १९४५।

६२ वही।

६३. जिन्नाका पत्र गाधीजीको, २६ सितम्बर १९४४।

६४. जिन्नाका पत्र गाधीजीको, १७ सितम्बर १९४४।

६५. जिन्नाका पत्र गाधीजीको, २५ सितम्बर १९४४।

६६. गाधीजीका पत्र जिन्नाको, २६ सितम्बर १९४४।

६७. गाधीजीका पत्र जिन्नाको, २५ सितम्बर १९४४।

६८. जिन्नाका पत्र गाधीजीको, २६ सितम्बर १९४४।

६९. २ अप्रैल १९४२ के काग्रेस कार्यसमितिके प्रस्तावका प्रस्तुत अश यह है

"समिति इस दृष्टिसे नही सोच सकती कि किसी प्रादेशिक घटकके लोगोको उनकी घोषित और स्थापित इच्छाके विरुद्ध भारतीय सघमे रहनेको वाध्य किया जाय। इस सिद्धान्तको स्वीकार करते हुए भी समिति यह मानती है कि ऐसी परिस्थिति पैदा करनेका पूरा प्रयत्न किया जाय, जिससे एक सामान्य और सहयोगी राष्ट्रीय जीवनका विकास करनेमे विभिन्न घटकोको सहायता मिले।"

७० डॉ० जयकरका पत्र गाधीजीको, २९ सितम्बर १९४४।

अध्याय–५

१. गाधीजीका अखवारी वक्तव्य, २८ सितम्बर १९४४।

२. वगालके 'प्रशासनिक सुधार' के लिए रॉलैन्ड्स कमिटीकी रिपोर्टमें यह टिप्पणी की गई थी · "भ्रष्टाचार इतना व्यापक हो गया है और उसके प्रति इतना निराशापूर्ण रुख दिखाया जाता है कि हमारे मतसे इस वुराईको मिटानेके लिए अत्यन्त कठोर और उग्र उपाय किये जाने चाहिये; क्योकि इसने सरकारी नौकरो और जनताके सदाचारको भ्रष्ट कर दिया है। इससे कम कुछ भी किया जायगा तो वह प्रान्तके गरीव लोगोको न्यायसे वचित करनेके वरावर होगा। . "—इडियन एन्युअल रजिस्टर, १९४४, भाग–१, पृ० ९४ से यह उद्धरण दिया गया है।

३. गाधीजीका पत्र कार्ल हीयको, १३ नवम्बर १९४४।

४ गांधीजीका अखबारी वक्तव्य, १० जनवरी १९४५।

५ गांधीजीका अखबारी वक्तव्य, २१ अक्तूबर १९४४।

६ ५ सितम्बर १९४७ को मुडीने जिन्नाको लिखा 'हमारी अपनी दृष्टिसे नेहरू पटेल और उनकी मंडलीसे सफल भेंट हुई। पटेलने पहले तीन घंटे तो चुप्पी साधी और फिर कहा कि हम सब अपना समय बरबाद कर रहे हैं। और इस बात पर उन्होंने एक भाषण दिया कि महीनों पहले किस तरह काम होना चाहिये था। असलमें वे नेहरू पर वार कर रहे थे। नेहरू आंख बंद किये तन्द्रामें बैठे रहे। भेंटके बाद जब मेरा ए० डी० सी० त्रिवेदी और पटेलको उनकी गाडीमें बिठानेके लिए खड़ा था तब उसने यह बातचीत सुनी

त्रिवेदी पंडितजी बिलकुल थके हुए दिखाई देते हैं।'

पटेल वे इसीके योग्य हैं। देशभरमें उड़ते फिरते हैं और हम सबको बेवकूफ बनाते हैं।'

'मुझे तो आशा है कि इस प्रान्तमें नेहरू और उनके साथी राजनीतिज्ञोंका आवागमन अब समाप्त हो गया है।"—खोसला, स्टर्न रेकनिंग', मद्रास, पृ० ३१५–१६।

७ गांधीजीका अखबारी वक्तव्य, ६ मई १९४५।

८ जी० डी० बिड़लाका पत्र गांधीजीको, ७ मई १९४५।

९ गांधीजीका पत्र जी० डी० बिड़लाको, ८ मई १९४५।

१० गांधीजीका पत्र जे० आर० डी० टाटाको, १० मई १९४५।

११ गांधीजी अविनाशलिंगम् चेट्टियारके साथ हुई भेंटमें, २४ अप्रल १९४५।

१२ गांधीजीका अखबारी वक्तव्य ३१ मार्च १९४५।

१३ गांधीजीका पत्र डा० सुब्बारायनको, २१ मई १९४५।

१४ गांधीजीका पत्र डॉ० सुब्बारायनको ३१ मई १९४५।

१५ गांधीजीका पत्र मोहन कुमारमंगलम्को २ जून १९४५।

१६ गांधीजीका पत्र डा० सैयद महमूदको १ जनवरी १९४५।

१७ गांधीजीका पत्र राजाजीको ६ जून १९४५।

१८ गांधीजीका पत्र सरोजिनी नायडूको ९ जून १९४५।

१९ गांधीजीका पत्र सरोजिनी नायडूको १६ जून १९४५।

२० गांधीजीका पत्र लीलामणि नायडूको १६ जून १९४५।

२१ गांधीजीका पत्र श्रीरामुलूको २९ मई १९४५।

२२ गांधीजीका पत्र, ३० अक्तूबर १९४४।

२३ गांधीजीका पत्र रिचर्ड सायमंडसको १२ जनवरी १९४५।

२४. सन् १९१९ से भारत ६ अप्रैलसे १३ अप्रैल तकका सप्ताह राष्ट्रीय सप्ताहके रूपमें मनाता आया था। इसमें प्रथम और अन्तिम दिन उपवास रखा जाता था और सप्ताह भर जोरोंसे रचनात्मक कार्य किया जाता था। १९१९ में ६ अप्रैलका दिन विरोध-दिवसके रूपमें मनाया गया था। उस दिन रौलट कानूनके नामसे प्रसिद्ध 'राजद्रोही अपराधों' सम्बन्धी दमनात्मक कानूनके विरुद्ध अखिल भारतीय सत्याग्रह छेड़ा गया था और उपवास तथा प्रार्थना करके हड़ताल रखी गई थी। १३ अप्रैलके 'काले शुक्रवार' के दिन जलियाँवाला बागका हत्याकाण्ड हुआ था।

२५. २९ अप्रैल १९४५ को बम्बई-स्थित अमेरिकन कौंसल मि० हॉवर्ड डोनोवनके द्वारा श्रीमती रूजवेल्टका उत्तर।

२६. गांधीजीका पत्र मॉरिस फ्रिडमैनको, २८ जुलाई १९४२।

२७ गांधीजीका अखबारी वक्तव्य, १७ अप्रैल १९४५।

२८. भूलाभाई देसाईका अखबारी वक्तव्य, १६ सितम्बर १९४६।

२९. गांधीजीका पत्र भूलाभाई देसाईको, ५ जनवरी १९४५।

३०. भूलाभाई देसाईका पत्र गांधीजीको, १ फरवरी १९४५।

३१. लियाकतअली खांका अखबारी वक्तव्य, १८ सितम्बर १९४५।

३२. वही।

३३. गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १५ जून १९४५।

३४ गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १६ जून १९४५।

३५. वही।

३६. गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १७ जून १९४५।

३७ गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १८ जून १९४५।

३८. गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, ८ जुलाई १९४५।

३९ जिन्नाका पत्र लॉर्ड वेवेलको, ७ जुलाई १९४५।

४०. जिन्नाका पत्र लॉर्ड वेवेलको, ९ जुलाई १९४५।

४१. गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १५ जुलाई १९४५।

४२. जिन्नाकी अखबारी मुलाकात, १४ जुलाई १९४५।

४३ डॉ० जयकरका पत्र गांधीजीको, १९ जुलाई १९४५।

४४. फ्रांसिस सेयरसे गांधीजीकी भेंट, १४ जुलाई १९४५।

अध्याय–६

१. गांधीजीका अखबारी वक्तव्य, ४ अगस्त १९४५।

२. अखिल भारत चरखा-संघकी कार्यकारिणी समितिकी बैठकमें गांधीजीका भाषण, २७ और २८ नवम्बर १९४५।

३ सवाग्रामके प्रशिक्षणार्थियोके सामने गांधीजीका भाषण, २२ नवम्बर १९४५।

४ हरिजन १७ मार्च १९४६, पृ० ४४।

५ वही।

६ वही।

७ राजाजीका पत्र गांधीजीको, ३१ मार्च १९४६।

८ हरिजन ७ अप्रल १९४६ पृ० ६९।

९ वही।

१० वही, पृ० ६८।

११ वही।

१२ वही।

१३ गांधीजी, की टु हेल्थ', अहमदाबाद, १९४८, पृ० ७५।

१४ वही प० ७७।

१५ हरिजन, ७ अप्रल १९४६, पृ० ६८।

१६ हरिजन २४ फरवरी १९४६, पृ० १९।

१७ हरिजन ७ अप्रल १९४६ पृ० ७२।

१८ हरिजन १ सितम्बर १९४६, पृ० २८६।

१९ वही, पृ० २९२।

२० हरिजन ११ अगस्त १९४६, पृ० २५५।

२१ गांधीजीका पत्र मणिभाईको, १२ नवम्बर १९४७।

२२ गांधीजीका पत्र लाड पेथिक-लॉरेन्सको, ४ अगस्त १९४५।

२३ लाड पेथिक लारेन्सका पत्र गांधीजीको १४ अगस्त १९४५।

२४ केसी, एन आस्ट्रेलियन इन इंडिया', लन्दन, १९४७ पृ० ६१।

२५ वही पृ० ६१।

२६ वही पृ० ६०–६२।

२७ गांधीजीका पत्र केसीको ८ दिसम्बर १९४५।

२८ केसीका रेडियो भाषण, ८ दिसम्बर १९४५।

२९ केसीका पत्र गांधीजीको, ९ दिसम्बर १९४५।

३० गांधीजीका पत्र केसीको ८ दिसम्बर १९४५।

३१ गांधीजीका पत्र केसीको, १२ दिसम्बर १९४५।

३२ केसी एन आस्ट्रेलियन इन इंडिया' लन्दन १९४७ प० ६१।

३३ गांधीजीका पत्र रथीन्द्रनाथ टागोरको, २२ दिसम्बर १९४५।

३४ प्रार्थना प्रवचन, २४ दिसम्बर १९४५।

३५ गांधीजीका अखबारी वक्तव्य, १८ जुलाई १९४५।

३६. हरिजन, ३ मार्च १९४६, पृ० २६।
३७ वही, पृ० २९।
३८ गाधीजीका पत्र सरदार पटेलको, १ जनवरी १९४६।
३९ हरिजन, १० फरवरी १९४६, पृ० ५।
४० वही।
४१ वही, पृ० ४।
४२. वही।
४३ राजाजीका पत्र गाधीजीको, ३ मार्च १९४६।
४४ गाधीजीका पत्र राजाजीको, ११ मार्च १९४६।
४५ राजाजीका पत्र गाधीजीको, १३ मार्च १९४६।
४६ जॉर्ज एवेलका पत्र राजकुमारी अमृतकौरको, १५ फरवरी १९४६।
४७ लॉर्ड वेवेलका पत्र गाधीजीको, १३ मार्च १९४६।
४८ गाधीजीका पत्र जॉर्ज एवेलको, १४ मार्च १९४६।
४९ हरिजन, ३ मार्च १९४६, पृ० २५।
५० हरिजन, १० फरवरी १९४६, पृ० ११।
५१ वही।
५२ वही।
५३ सर स्टैफर्ड क्रिप्सका पत्र गाधीजीको, १९ दिसम्बर १९४५।
५४ गाधीजीका पत्र सर स्टैफर्ड क्रिप्सको, १२ जनवरी १९४६।
५५ प्रार्थना-प्रवचन, ११ मार्च १९४६।
५६ हरिजन, ३१ मार्च १९४६, पृ० ६१।
५७ हरिजन, ३ मार्च १९४६, पृ० ३१।
५८ वही, पृ० ३०।
५९ वही, पृ० ३१।
६० वही।
६१ वही।
६२ वही।
६३ हरिजन, १४ अप्रैल १९४६, पृ० ८०।
६४ हरिजन, ७ अप्रैल १९४६, पृ० ७५।
६५ वही।
६६. वही।

दूसरा भाग

अध्याय–७

१ सर स्टैफर्ड क्रिप्सका पत्र गाधीजीको, ५ मई १९४६।
२ मर स्टैफर्ड क्रिप्सका पत्र गाधीजीको, २८ मार्च १९४६।

३ सर स्टफर्ड क्रिप्सका पत्र गांधीजीको, २८ अगस्त १९४६।

४ यंग इंडिया, ६ अगस्त १९२५, पृ० २७४–७५।

५ प्रभु और राव द्वारा 'दि माइंड आफ महात्मा गांधी' (१९४६) में दिया गया गांधीजीका उद्धरण पृ० ३८।

६ हरिजन २४ जून १९३३ पृ० ५।

७ हरिजन २८ अप्रल १९४६, पृ० १०९।

८ वही पृ० ११०।

९ गांधीजीका पत्र वाइसरायके प्राइवेट सेक्रेटरीको, २९ अक्तूबर १९४५।

१० कांग्रेस कार्यकारिणीका प्रस्ताव, ११ दिसम्बर १९४५।

११ हरिजन, १० मार्च १९४६ पृ० ३६।

१२ हरिजन, २८ अप्रल १९४६, पृ० १०२–०३।

१३ हरिजन ५ मई १९४६, पृ० ११६।

१४ एक गुंडी ८४० गज तारके बराबर होती है।

१५ 'टु ए गांधियन केपिटलिस्ट' पुस्तकका पंडित नेहरू द्वारा लिखा प्राक्कथन बम्बई १९५१। यह सेठ जमनालाल बजाजको लिखे गांधीजीके पत्रोंका संग्रह है।

१६ यंग इंडिया, २० जनवरी १९२७, पृ० २१।

१७ हरिजन १६ जून १९४६।

१८ लार्ड पेथिक-लॉरेंसका पत्र गांधीजीको, १० जून १९४६।

अध्याय–८

१ सर स्टफर्ड क्रिप्सके साथ गोपालस्वामी आयंगरकी भेंटके आयंगर द्वारा लिखे नोटस।

२ मौलाना आजादका पत्र लार्ड पेथिक-लॉरेन्सको, २८ अप्रल १९४६।

३ गांधीजीका पत्र सर स्टफर्ड क्रिप्सको, २९ अप्रल १९४६।

४ मौलाना आजादका पत्र लार्ड पेथिक-लॉरेन्सको ६ मई १९४६।

५ मौलाना आजादका अखबारी वक्तव्य, १४ जुलाई १९४५।

६ मौलाना आजादका पत्र लार्ड पेथिक लॉरेंसको ६ मई १९४६।

७ राम्से मेकडोनल्ड गवर्नमेंट आफ इंडिया, पृ० १२६–२७।

८ जार्ज एबेल्का पत्र राजकुमारी अमृतकौरको १ अप्रल १९४६।

९ गांधीजीका पत्र लार्ड पेथिक-लॉरेन्सको २ अप्रल १९४६।

१० गांधीजीका पत्र जार्ज एबेलको ३ मई १९४६।

११ गांधीजीका पत्र लार्ड वेवेलको ११ मई १९४६।

१२ मौलाना आजादका पत्र लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको, २० मई १९४६।

१३ हरिजन, २६ मई १९४६, पृ० १५२।

१४. वही।

१५ गांधीजीका पत्र लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको, १९ मई १९४६।

१६. लॉर्ड वेवेलका पत्र मौलाना आजादको, १५ जून १९४६।

१७. हरिजन, २६ मई १९४६, पृ० १५२।

१८. कैबिनेट-मिशनका वक्तव्य, २५ मई १९४६।

१९. प्यारेलाल कृत 'स्टेटस ऑफ इन्डियन प्रिंसेज़', अहमदाबाद, १९४१, पृ० ३३, मे दिया गया बटलर कमिटीकी रिपोर्टका उद्धरण।

२०. वही, पृ० ३८।

२१. वही, पृ० ४२।

२२. वही, पृ० ३९।

२३. वही, पृ० ४१।

२४ गांधीजीका पत्र लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सको, २० मई १९४६।

२५. वही।

२६ कैबिनेट-मिशनका वक्तव्य, २५ मई १९४६।

२७ लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सका पत्र मौलाना आजादको, २२ मई १९४६।

२८. कैबिनेट-मिशनका वक्तव्य, २५ मई १९४६।

२९ वही।

३०. लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्सका पत्र गांधीजीको, २१ मई १९४६।

३१. हरिजन, १६ जून १९४६, पृ० १८४।

३२ हरिजन, २३ जून १९४६, पृ० १९९।

३३. वही।

३४ गांधीजीका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १२ जून १९४६।

३५ गांधीजीका पत्र सर स्टैफर्ड क्रिप्सको, १३ जून १९४६।

३६ सर स्टैफर्ड क्रिप्सका पत्र गांधीजीको, १३ जून १९४६।

३७. हरिजन, २३ जून १९४६, पृ० १८६।

३८. वही।

३९. प्रार्थना-प्रवचन, १४ जून १९४६।

४०. दि स्टेट्समैन, १३ जून १९४६।

४१. हरिजन, २३ जून १९४६, पृ० १८८।

४२. वही।

४३. मेकॉले, 'हिस्टरी ऑफ इंग्लैंड'।

४४. प्रार्थना-प्रवचन, २५ जून १९४६।

४५. वही।

४६ गांधीजीकी नामन क्लिफसे भेंट, २९ जून १९४६।

४७ नामन क्लिफका पत्र गांधीजीको ४ जुलाई १९४६।

अध्याय–९

१ हरिजन २१ जुलाई १९४६ पृ० २३२।

२ हरिजन १९ मई १९४६ पृ० १३४।

३ हरिजन, ४ अगस्त १९४६, पृ० २४७।

४ वही पृ० २४५।

५ वही पृ० २४७।

६ वही।

७ हरिजन ११ अगस्त १९४६ पृ० २५३।

८ हरिजन १८ अगस्त १९४६ पृ० २६३।

९ पार्लियामेंटमें सर स्टैफर्ड क्रिप्सका भाषण, १८ जुलाई १९४६।

१० हिन्दुस्तान स्टैंडर्ड १ अगस्त १९४६।

११ इंडियन एनुअल रजिस्टर भाग–२ १९४६, पृ० ६९।

१२ लीडर ५ अगस्त १९४६।

१३ तासला स्टन रर्निंग मद्रास पृ० ८३।

१४ दि स्टेट्समैन २४ अगस्त १९४६।

१५ दि स्टेट्समैन २० अगस्त १९४६।

१६ २४ अगस्तको कलकत्तासे डेली एक्सप्रेस (लन्दन) के प्रतिनिधिने जो तार भेजा था उसका प्रस्तुत अंश यह है: सुहरावर्दी परस्पर विरोधी बातें करते हैं: मुझे कैबिनेट मिशनकी सचाईमें विश्वास है। मुझे आराम नहीं होगा कि अंग्रेजोंको कभी भी भारतसे निकल जाना पड़ता है। अब तो उन्हें यहां रहना ही होगा। यदि ब्रिटिश सेना हटा ली जाय तो यहां हत्याकांड मच जायगा। सुहरावर्दी आग्रहपूर्वक कहते हैं कि दंगा हिन्दुओंने शुरू किया। मुसलमानोंका विचार केवल शान्तिपूर्ण प्रदर्शन करनेका था। वे लड़नेके लिए तैयार नहीं थे। हिन्दुओंके पास तो बन्दूकें, लाठियां, पत्थर, सोडा पानी और तलवारें, चाकू आदि हथियार थे जो उन्होंने छतोंसे मुसलमानों पर फेंके। उनके पास पड़ाव और परिवहनकी व्यवस्था भी थी।

१७ दि स्टेट्समैन २७ अगस्त १९४६।

१८ हरिजन ८ सितम्बर १९४६ पृ० ३०५।

१९ हरिजन १५ सितम्बर १९४६ पृ० ३१२।

२० हरिजन १३ अक्तूबर १९४६ पृ० ३४६।

२१ हरिजन १ सितम्बर १९४६ पृ० ३१२।

२२ हरिजन, ८ सितम्वर १९४६, पृ० ३९६।
२३. वही।
२४. वही।
२५ वही।
२६ हरिजन, १५ सितम्वर १९४६, पृ० ३१२।
२७ अमृतवाजार पत्रिका, १२ सितम्वर १९४६।
२८. अमृतवाजार पत्रिका, १९ सितम्वर १९४६।

अध्याय–१०

१. पडित नेहरूका काग्रेसियोको आदेश, १८ सितम्वर १९४६।
२. पंडित नेहरूका पत्र लॉर्ड वेवेलको, २३ जुलाई १९४६।
३. लॉर्ड वेवेलका पत्र पडित नेहरूको, १९ अगस्त १९४६।
४ लॉर्ड वेवेलका पत्र पडित नेहरूको, २२ अगस्त १९४६।
५. लॉर्ड वेवेलका पत्र पडित नेहरूको, २९ अगस्त १९४६।
६. वही।
७. पडित नेहरूका पत्र लॉर्ड वेवेलको, २९ अगस्त १९४६।
८ पडित नेहरूका पत्र लॉर्ड वेवेलको, ४ सितम्वर १९४६।
९. वही।
१०. लॉर्ड वेवेलका पत्र गाधीजीको, २७ सितम्वर १९४६।
११. लॉर्ड वेवेलका पत्र गाधीजीको, २९ सितम्वर १९४६।
१२. पडित नेहरूका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १५ अक्तूवर १९४६।
१३ पडित नेहरूका पत्र लॉर्ड वेवेलको, २३ अक्तूवर १९४६।
१४. वही।
१५ पडित नेहरूका पत्र लॉर्ड वेवेलको, १५ अक्तूवर १९४६।
१६ पडित नेहरूका पत्र लॉर्ड वेवेलको, २३ अक्तूवर १९४६।
१७. वही।
१८. न्यूयॉर्क हेराल्ड ट्रिव्यून, २९ अक्तूवर १९४६।
१९. लाहौरमें गजनफर अलीका भाषण, १९ अक्तूवर १९४६।

अध्याय–११

१ वेगाल प्रेस एडवाइज़री वोर्ड द्वारा प्रकाशित किया गया तार, १६ अक्तूवर १९४६।

२. दि स्टेट्समैन, २४ अक्तूवर १९४६।
३ दि स्टेट्समैन, २० अक्तूवर १९४६।
४ हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड, २७ अक्तूवर १९४६।

५ दि स्टेटसमन, २७ अक्तूबर १९४६।

६ हिन्दुस्तान स्टण्डर्ड, ८ नवम्बर १९४६।

७ थाम्सन फाइनल रिपोर्ट आन दि सर्वे एण्ड सेटलमेंट आपरेशन्स इन दि डिस्ट्रिक्ट आफ नोआखाली, १९१४–१९१९।

८ वही।

९ गांधी इरविन समझौतेकी मानवतावादी धाराके अनुसार व्यक्तियों और परिवारोंको यह छूट दी गई थी कि वे कोई कर चुकाये बिना अपने उपयोगके लिए नमक बना लें, बशर्ते कि वे उसे सिर पर रख कर ले जायें और किसी सवारीका उपयोग न करें।

१० नोआखाली नगरपालिकाके उपसभापति और कार्यवाहक सभापति क्षितीशचन्द्र रायचौधरीका ७ नवम्बर १९४६का वक्तव्य।

११ वही।

१२ २८ अक्तूबर १९४६ को दिये गये चित्तरंजन रायचौधरीके वक्तव्यमें आंखों देखा वर्णन।

१३ वही।

१४ वही।

१५ सन १९४८ में गांधीजीकी मृत्युके बाद नोआखालीसे गांधी शान्ति-मिशनको निकाल देनेके षड्यन्त्रके अंगस्वरूप गुलाम सरवरके एक आदमीने मेरे शिविरमें एक तोड़ेदार बन्दूक रख दी थी। उसके नंबरसे पहचान लिया गया कि यह वही बन्दूक थी, जिसे चौधरीबाड़ीकी रक्षामें कालीप्रसन्न राउतने उपयोगमें लिया था। बादमें पूर्व बंगाल सरकारके एक मंत्रीने इस घटनाकी जांच की थी। उस समय एक स्थानीय मुसलमानने मंत्रीको षड्यन्त्रकी सारी कहानी बताई थी। उस मुसलमानने यह कहानी सीधे उसी व्यक्तिसे सुनी थी जिसने बन्दूक षड्यन्त्रकारियोंको दी थी।

१६ सद्वीप द्वीप सम्बन्धी वक्तव्य १५ दिसम्बर १९४६ को डा० अमिय चक्रवर्तीकी रिपोर्ट पर आधारित है। यह रिपोर्ट उन्होंने उस द्वीपमें हो आनेके बाद गांधीजीके समक्ष पेश की थी।

१७ धर्म-परिवर्तनके एक मूल प्रमाणपत्रका अनुवाद, जो गांधीजीको नोआखाली पहुंचने पर दिया गया था इस प्रकार है : गुलाम रहमान *बापका नाम अब्दुर्रहमान। इस व्यक्तिने १५–१०–'४६ को पाक इस्लाम कबूल* कर लिया है। इसका पहलेका नाम सत्येन्द्रकुमार मजूमदार था। इसका वर्तमान नाम गुलाम रहमान है। विदित हो कि इसके सारे परिवारने इस्लाम कबूल कर लिया है। हस्ताक्षर : मुहम्मद हमीदुल्ला गांव अयूबपुर।

१८ डा० अमिय चक्रवर्तीका पत्र प्यारेलालको नवम्बर १९४६।

१९. हरेन घोषका लिखित वक्तव्य गाधीजीको, ७ नवम्वर १९४६।

२०. हीरेन्द्रनाथ नन्दी द्वारा गाधीजीको दी गई रिपोर्ट, २ फरवरी १९४७।

२१. दि स्टेट्समैन, २४ अक्तूवर १९४६।

२२. दि स्टेट्समैन, २७ अक्तूवर १९४६।

२३. दि स्टेट्समैन, २६ अक्तूवर १९४६।

२४ वही।

२५ दि स्टेट्समैन, २१ अक्तूवर १९४६।

२६. दि स्टेट्समैन, २५ अक्तूवर १९४६।

२७ दि स्टेट्समैन, २७ अक्तूवर १९४६।

२८ मि० सिम्प्सनने ये कदम उठानेका सुझाव दिया था (क) विश्वास स्थापित करनेके लिए जिले भरमे सैनिक चौकिया कायम की जाय, (ख) कड़ी सूचनाये दी जाय कि कानूनमे अन्य कोई व्यवस्था न हो तो दंगोके सम्बन्धमे गिरफ्तार किये गये व्यक्ति जमानत पर न छोडे जाय, क्योकि गावोमे और शरणार्थी-छावनियोमे इस वातका वडा भय है कि अभियुक्त जमानत पर छूट कर "गावोमे वापस जायगे और शिकायत करनेवालो और जानकारी देनेवालोकी हत्या कर देंगे," (ग) प्रत्येक थानेमे जाच-कर्मचारियो-की सख्या तुरन्त वढाई जाय, उसके लिए दूसरे जिलोसे सावधानीके साथ कर्मचारी चुने जाय और विश्वस्त व्यक्ति ही लिये जाय, क्योकि गावोमे यह शिकायत है कि मामलोकी तुरन्त जाच न होने और तुरन्त गिरफ्तारिया न होनेसे अपराधियोको प्रोत्साहन मिलता है और दुवारा होनेवाले उत्पात पहलेके उत्पातोसे अवश्य ही ज्यादा वुरे होते हैं, (घ) न्यायतत्रको यथासभव जल्दीसे जल्दी अपना कार्य आरम्भ कर देना चाहिये। मुकदमोका जल्दी निर्णय करनेके लिए विशेप कार्यविधिकी व्यवस्था की जानी चाहिये, (ङ) यूनियन वोर्डोके उन्ही अध्यक्षोको वितरण-कार्य सौपा जाय, जिन्होने उप-द्रवोके समय अपने आचरणसे यह सिद्ध कर दिया है कि जाति या कौमका लिहाज किये विना वे सवकी मदद करनेको तैयार हैं, और यह भी होना चाहिये कि यूनियनोके जिन अध्यक्षोने "दंगोंके समय लोगोकी कुछ भी सहायता नही की उन्हे हटा दिया जाय।" अन्तमे यह भी सुझाया गया कि मुल्की अधि-कारियोको व्यापक दौरे करने चाहिये। "गावोमे और शरणार्थी-छावनियोमें लोगोको मालूम नही होता कि जिलेमे कहा क्या हो रहा हे और आक्रमण वन्द हुए हैं या नही। अफवाहे दूर दूर तक फैली हुई हैं। . लोग समझदार और सहानुभूतिवाले अधिकारियोसे परामर्श ओर आश्वासन चाहते हैं।"

अध्याय–१२

१ हरिजन २७ अक्तूबर १९४६ पृ० ३७२।

२ वही पृ० ३७२–७३।

३ दंगोंसे पीड़ित क्षत्रोंमें विश्वरंजन सेनके दौरेकी रिपोर्ट, २ नवम्बर १९४६।

४ हरिजन ३ नवम्बर १९४६ पृ० ३८२।

५ प्रार्थना प्रवचन, १७ अक्तूबर १९४६।

६ हरिजन १ मार्च १९४२ पृ० ६०।

७ हरिजन ३१ दिसम्बर १९३८ पृ० ४०८।

८ *यंग इंडिया* २१ मई १९३१ पृ० ११५।

९ हरिजन १ मार्च १९४२, पृ० ६०।

१० यंग इंडिया १७ अक्तूबर १९२९ पृ० ३४०।

११ वही।

१२ गांधीजी 'विमेन एण्ड सोशियल इन्जस्टिस' अहमदाबाद, १९४७, पृ० १८७।

१३ यंग इंडिया १७ अक्तूबर १९२९, पृ० ३४०।

१४ यंग इंडिया, ८ दिसम्बर १९२७ पृ० ४०६।

१५ यंग इंडिया १० अप्रैल १९३० पृ० १२१।

१६ हरिजन २४ फरवरी १९४० पृ० १३–१४।

१७ वही पृ० १४।

१८ वही।

१९ वही।

२० वही पृ० १३।

२१ वही।

२२ हरिजन १ मार्च १९४२ पृ० ६०।

२३ वही।

२४ प्रार्थना प्रवचन १७ अक्तूबर १९४६।

२५ प्रार्थना प्रवचन १८ अक्तूबर १९४६।

२६ लॉर्ड पिंथिक-लारेन्सकी गांधीजीसे भेंट १८ जुलाई १९४६।

२७ हरिजन १ मार्च १९४२ पृ० ६०।

२८ वही पृ० ६१।

२९ वही।

३० हरिजन, ९ फरवरी १९४७ पृ० १३।

३१ वही।

३२ प्रार्थना-प्रवचन, १८ अक्तूबर १९४६।
३३. हरिजन, ९ फरवरी १९४७, पृ० १३।
३४. हरिजन, ३ नवम्बर १९४६, पृ० ३८७।
३५. हरिजन, १४ जुलाई १९४६, पृ० २१९।
३६. हरिजन, ८ सितम्बर १९४६, पृ० २९६।
३७. हरिजन, ५ मई १९४६, पृ० ११६।
३८. हरिजन, ३ मार्च १९४६, पृ० २७।
३९ हरिजन, २१ अप्रैल १९४६, पृ० ९५।
४०. हरिजन, ५ मई १९४६, पृ० ११६।
४१. हरिजन, २ जून १९४६, पृ० १६०।
४२. वही।
४३. हरिजन, ८ सितम्बर १९४६, पृ० २९६।
४४. हरिजन, १४ अप्रैल १९४६, पृ० ८०।
४५. हरिजन ८ सितम्बर १९४६, पृ० २९६।
४६. यूनाइटेड प्रेस ऑफ इडिया द्वारा पूछे गये प्रश्नोके गाधीजी द्वारा दिये गये उत्तर, ६ नवम्बर १९४६।
४७. हरिजन, २० अक्तूबर १९४६, पृ० ३६४।
४८. वही।
४९ हरिजन, १४ जुलाई १९४६, पृ० २२०।
५०. हरिजन, ७ अप्रैल १९४६, पृ० ७४।
५१. हरिजन, १४ अप्रैल १९४६, पृ० ८०।
५२. हरिजन, ६ अक्तूबर १९४६, पृ० ३३८।
५३. वही।
५४. डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, 'इडिया डिवाइडेड', बम्बई, १९४७, पृ० २१६।
५५. महात्मा गाधी, लन्दन, १९४९, मे लॉर्ड पेथिक-लॉरेन्स, सपा० — पोलक, ब्रेल्सफोर्ड और पेथिक-लॉरेन्स, पृ० ३१३।
५६ हरिजन, ६ अक्तूबर १९४६, पृ० ३३९।
५७. हरिजन, २८ अप्रैल १९४६, पृ० १०१।
५८. वही।
५९. वही।
६०. यग इडिया, २३ जनवरी १९३०, पृ० २७।
६१. हरिजन, १३ अक्तूबर १९४०, पृ० ३१८।
६२. हरिजन, ७ अप्रैल १९४६, पृ० ७०।

६३ वही, पृ० ७३।
६४ हरिजन, १४ अप्रल १९४६, पृ० ८०।
६५ वही।
६६ हरिजन, १८ जून १९३८, पृ० १५२।
६७ हरिजन, ५ मई १९४६ पृ० ११४।
६८ हरिजन, २० अक्तूबर १९४६, पृ० ३६८।
६९ हरिजन, ५ मई १९४६, पृ० ११४।
७० वही।
७१ वही।
७२ हरिजन, २८ जुलाइ १९४६, पृ० २४४।
७३ हरिजन ९ जून १९४६, पृ० १६९।
७४ हरिजन, १ सितम्बर १९४०, पृ० २६८।
७५ हरिजन, १७ नवम्बर १९४६, पृ० ४०४।
७६ गाधीजी, फ्रॉम यरवडा मदिर', अहमदाबाद, १९३५, पृ० २।
७७ हरिजन, १४ जुलाई १९४६, पृ० २१७।
७८ गाधीजी, एन आटोवायोग्राफी' अहमदाबाद १९२९ भाग–२, प० ५९१।
७९ मीराबहन कृत 'ग्लीनिंग्स' अहमदाबाद १९४९, में दिया गया गाधीजीका उद्धरण, पृ० १९।
८० वही पृ० २४।
८१ वही।
८२ हरिजन १३ जून १९३६ प० १४१।
८३ मीराबहन कृत 'ग्लीनिंग्स', अहमदाबाद १९४९ में दिया गया गाधीजीका उद्धरण पृ० १९।
८४ भगवद्गीता अध्याय २, श्लोक ६७–७२।
८५ जी० टी० रेच, 'दि रेस्टारेशन आफ पेजेंट्रीज़ ल्दन, १९३९ पृ० १८।
८६ गाधीजी, 'एन आटोवायोग्राफी', अहमदाबाद, १९२७ भाग–१, पृ० ७।
८७ वही।
८८ स्वेच्छापूवक स्वीकार की गई दरिद्रता पर माड रॉयडन्स चर्चमें गाधीजीका भाषण, लन्दन, १९३१।—स्पेट 'इडियन मास्टर्स आफ इग्लिश', कलकत्ता, १९३४।
८९ गाधीजी, 'फ्राम यरवडा मदिर', अहमदाबाद, १९३५, पृ० ३७।

९०. ऊपर वताये ८८ के अनुसार।

९१. वही।

९२. प्रभु और राव, 'दि माइन्ड ऑफ महात्मा गाधी', मद्रास, १९४६, पृ० १८२।

९३. गाधीजी, 'फ्रॉम यरवडा मदिर', अहमदाबाद, १९३५, पृ० ३८।

९४. जिमर, 'फिलॉसफीज ऑफ इडिया', लन्दन, १९५२, पृ० ३४७–४८।

९५. हरिजन, १ सितम्बर १९४०, पृ० २६८।

९६. जिराल्ड हर्डका पत्र प्यारेलालको, ३ मार्च १९४९।

९७. हरिजन, २९ सितम्बर १९४६, पृ० ३३६।

९८. हरिजन, ३ नवम्बर १९४६, पृ० ३८३।

९९. हरिजन, २० अक्तूबर १९४६, पृ० ३६७।

१००. वही।

१०१. हरिजन, २९ सितम्बर १९४६, पृ० ३३२।

सूची